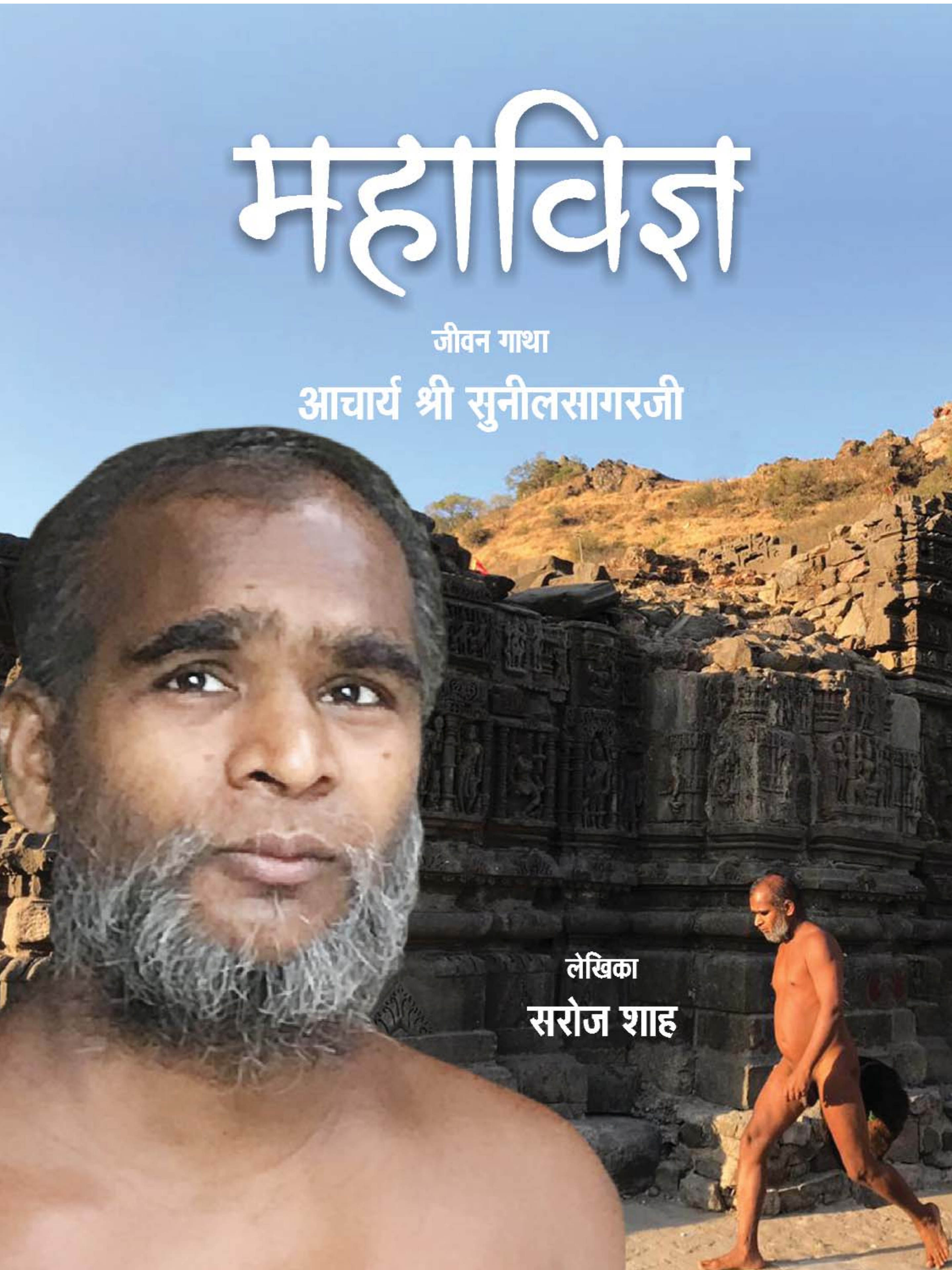
महाविज्ञ

जीवन गाथा

आचार्य श्री सुनीलसागरजी



लेखिका

सरोज शाह

तिगोड़ा सेठ परिवार का मंदिर

दर्शनं देवदेवस्य, दर्शनं पापनाशनम् ।
दर्शनं स्वर्गसोपानं, दर्शनं मोक्षसाधनम् ।।
दर्शनेन जिनेन्द्राणां, साधूनां वंदनेन च ।
न चिरं तिष्ठते पापं, छिद्रहस्ते यथोदकम् ।।







उदगाँव कुंजवन



पार्श्वनाथ भगवान



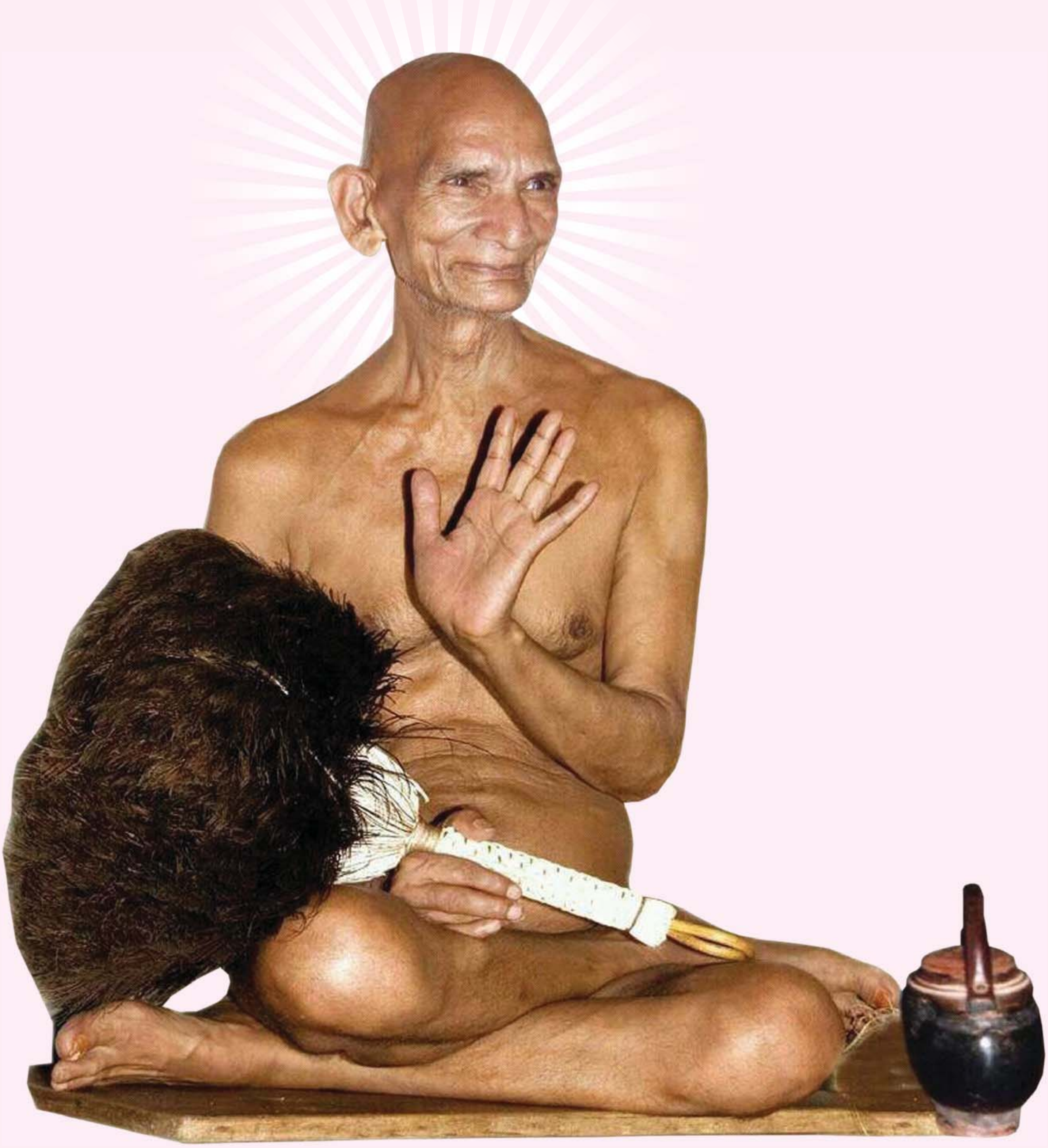
43 फुट ऊँचे अनन्तवीर्य भगवान

मग्गग्गणिं णाम–जिदोवसग्गं, तं कम्मभेत्तारमणंतणाणिं।
जीवाण दुक्खाणि हत्तारमीसं, विग्घावहारिं पणमामि पासं।।

अर्थ : उपसर्ग विजेता, मोक्ष मार्ग के नेता, कर्मों को भेदने वाले, अनंतज्ञानी और जीवों के दु:खों को नष्ट करने वाले विघ्नहारी महान पार्श्वनाथ भगवान को मैं प्रणाम करता हूँ।

– आचार्य श्री सुनीलसागर

परम पूज्य गुरुवर



आचार्य आदिसागर अंकलीकर परम्परा के तृतीय पट्टाचार्य
तपस्वी सम्राट गुरुणांगुरु आचार्यश्री सन्मतिसागरजी महाराज

श्रमण परम्परा के मुकुटमणि



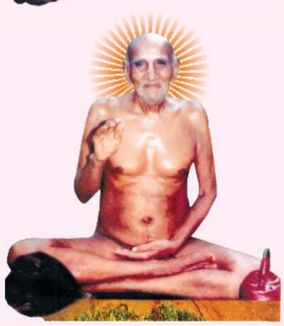
प.पू. मुनिकुंजर आचार्यश्री आदिसागरजी महाराज

जन्म : भाद्रपद शुक्ल 4, सन् 1866, अंकली गाँव, महाराष्ट्र
दीक्षा : मार्गशीर्ष शुक्ल 2, सन् 1913, सिद्धक्षेत्र कुंथलगिरि
आचार्य पद : ज्येष्ठ शुक्ल 5, सन् 1915, काडगेमळा जयसिंहपुर, महाराष्ट्र
समाधि : फाल्गुन कृष्ण 13, सन् 1944, कुंजवन उदगाँव
विशेषता : श्रमण परम्परा के मुकुटमणि, सात दिन बाद आहार करने वाले



अष्टादश भाषाभाषी आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी महाराज

जन्म : वैशाख कृष्ण 9, सन् 1910, फिरोजाबाद (उ.प्र.)
दीक्षा : फाल्गुन शुक्ल 11, सन् 1943, उदगाँव, कोल्हापुर (महाराष्ट्र)
आचार्य पद : अश्विन शुक्ल 10, सन् 1943, उदगाँव (महाराष्ट्र)
समाधि : माघ कृष्ण 6, सन् 1972, मेहसाणा, गुजरात
विशेषता : अष्टादश भाषाभाषी, तीर्थ भक्त शिरोमणि, मंत्र शास्त्र के ज्ञाता



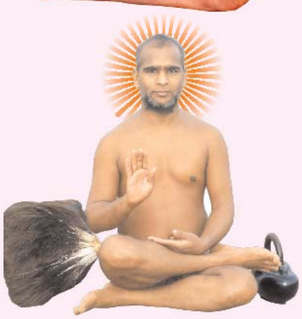
वात्सल्य रत्नाकर आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज

जन्म : अश्विन कृष्ण 7, सन् 1915, कोसमां, जिला एटा (उ.प्र.)
दीक्षा : फाल्गुन शुक्ल 13, सन् 1952, सिद्ध क्षेत्र सोनागिरि
आचार्य पद : मार्गशीर्ष कृष्ण 2, सन् 1960, टुंडला (उ.प्र.)
समाधि : पौष कृष्ण 12, सन् 1994, श्री सम्मेदशिखरजी
विशेषता : पराविद्या के माध्यम से लोगों का उपकार करने वाले निमित्तज्ञानी संत



तपस्वी सम्राट आचार्यश्री सन्मतिसागरजी महाराज

जन्म : माघ शुक्ल 7, सन् 1938, फफोतू, एटा (उ.प्र.)
दीक्षा : कार्तिक शुक्ल 12, सन् 1962, श्री सम्मेदशिखरजी
आचार्य पद : माघ कृष्ण 3, सन् 1972, मेहसाणा
समाधि : पौष कृष्ण 4, सन् 2010, कुंजवन, उदगाँव, कोल्हापुर (महाराष्ट्र)
विशेषता : 35 वर्ष तक अन्न, नमक, शकर, घी, तेल का त्याग, अंतिम दस वर्ष केवल मट्ठा जल 48 घंटे में एक बार, दस हजार निर्जल उपवास



चतुर्थ पट्टाधीश प्राकृताचार्य श्री सुनीलसागरजी महाराज

जन्म : अश्विन कृष्ण 10 (7 अक्टूबर 1977), तिगोड़ा (सागर)
दीक्षा : 20 अप्रैल 1997, महावीर जयंती, बरुआ सागर (उ.प्र.)
आचार्य पद : माघ शुक्ल 7, सन् 2007, औरंगाबाद (महाराष्ट्र)
पट्टाचार्य : 26 दिसंबर 2010, कुंजवन में घोषणा, मुंबई में स्वीकार
विशेषता : प्राकृत भाषा के उद्भट विद्वान, समन्वयी संत, त्रिभाषा कवि, कठोर साधक, अभीक्षण ज्ञानोपयोगी, मौनप्रिय

मंगल आशीर्वाद



चर्या चक्रवर्ती आचार्यश्री आदिसागरजी अंकलीकर परम्परा के चतुर्थ पट्टाचार्य

राष्ट्रसंत प्राकृताचार्य आचार्यश्री सुनीलसागरजी महाराज

जिनालय




जन्मभूमि तिगोड़ा (म.प्र.)



किशुनगंज ननिहाल (म.प्र.)



गणेशप्रसाद वर्णी विद्यालय, मोराजी (सागर) : आचार्यश्री की शिक्षा भूमि एवं कर्म भूमि।



जिनालय





उदगाँव (कुंजवन) गुरु मंदिर (महा.)




सिमरियागिरि : पुरखों द्वारा स्थापित मंदिर

महाविज्ञ

जीवन गाथा

आचार्य श्री सुनीलसागरजी

लेखिका

सरोज शाह

पुण्यार्जक

वोरा अशोक सोमेश्वरी जैन

वागड़ इंफ्राप्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड

बाँसवाड़ा (राजस्थान)

Email : admin@wagadinfra.com

मुद्रक

SHREE PARASHNATH PACKAGING

Commercial & Offset Printing - Specialist in Carton

Gola No. 14/15, Bldg. No. 2, Shivshankar Industrial Complex 2

Village Waliv Vasai, Distt. Thane (Maharashtra)

Email : parashnathpackaging@gmail.com, Mob. : 9892699936

आशीर्वाद : **प.पू. समाधिस्थ आचार्य श्री सन्मतिसागरजी महाराज एवं आचार्यश्री सुनीलसागरजी महाराज**

प्रेरणा एवं मार्गदर्शन : **सौम्यमूर्ति मुनि श्री 108 सुश्रुतसागरजी**

मार्गदर्शन : **आर्यिका श्रुतमति माताजी, आर्यिका सुस्वरमति माताजी, आर्यिका सुदृढ़मति माताजी**

नाम कृति : **महाविज्ञ**
आचार्य श्री सुनीलसागरजी : जीवन गाथा
(आचार्य आदिसागर अंकलीकर परम्परा के चतुर्थ पट्टाचार्य)

लेखिका एवं संपादिका : **सरोज शाह**
पति स्व. श्री गेंदालालजी शाह
एफ-132, एम.आई.जी. कॉलोनी, इंदौर (म.प्र.)
मो.: 9425480974, 916355776321

संस्करण : **प्रथम (अक्टूबर 2019)**
प्रथम विमोचन 6 अक्टूबर 2019 को राजस्थान के मुख्यमंत्री माननीय श्री अशोकजी गेहलोत के करकमलों द्वारा
द्वितीय (7 अक्टूबर 2020)

प्रतियाँ : **2000**

मूल्य : **रु. 1000/-** (पुनः प्रकाशन के लिए)

प्राप्ति स्थान : **(1) लेखिका सरोज शाह**
(2) श्री महावीर दिगंबर जैन अतिशय क्षेत्र कुंजवन उदगाँव
जिला सांगली (महाराष्ट्र)

पुण्यार्जक : **वोरा अशोक सोमेश्वरी जैन**
वागड इंफ्राप्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड, बाँसवाड़ा (राजस्थान)

प्रकाशक : **आचार्य आदिसागर (अंकलीकर) अंतरराष्ट्रीय जागृति मंच,मुंबई (रजि.)**
108/ए.एस. डायस बिल्डिंग, पहला माला, 268/272, डॉ. सी.एच. मार्ग,
मरीन लाइन, मुंबई-2 (महाराष्ट्र) (फोन : 2209614)

अक्षर संयोजन : **नितिन पंजाबी, वी.एम. ग्राफिक्स,** इंदौर (मो. 9893126800)

MAHAVIGYA
(Jeevangatha : Acharya Shri Sunil Sagarji)
By- Saroj Shah

अर्पण

जो सन्मति (महावीर) के
पथ संचालक हैं
श्रमण संस्कृति के उन्नायक व आचार्य आदिसागर अंकलीकर परम्परा के पट्टनायक हैं
जो मन से मनस्वी, तप से तेजस्वी
तथा
वाणी (वचन) के वाचस्पति
मुक्तिमार्ग के पथ प्रदर्शक, आध्यात्म जगत के प्रखर सूर्य
मोहांधकार में दीपक, आत्मदर्शन के दर्पण
जग दुःखों से दग्ध ह्दयों की दाह हरने वाले
मेघदूत
सुख शान्ति प्रदाता
शान्तिदूत
हिंसा तथा हाहाकार मिटाने वाले
अहिंसादूत
कुमति को सुमति करने वाले
सन्मति
है
ऐसे मेरे प्रेरणा स्त्रोत, जगत हितकारी, संसार सागर के थपेड़ों से हिचकोले खाती जीवन नैया के महासंबल
प.पू. गुरुवर आचार्य श्री सन्मतिसागरजी
के चरणकमलों में शत् शत् नमन करते हुए उनके बताए मुक्तिपथ पर अग्रसर
*उनके प्रिय पट्ट शिष्य **आचार्य श्री सुनीलसागरजी** की जीवन गाथा*
मुझ अज्ञ द्वारा सृजित यह
कृति
महाविज्ञ
हर्ष विभोर हो 'तेरा तुझको अर्पण' की
भावना के साथ उन्हें अर्पित है।

● **सरोज शाह**

परिचय के गवाक्ष

आचार्यश्री सुनीलसागरजी महाराज

आचार्य आदिसागर अंकलीकर परम्परा के चतुर्थ पट्टाचार्य

(1) **पूर्व नाम :** संदीप

(2) **जन्म तिथि :** 7 अक्टूबर 1977, अश्विन कृष्ण दशमी, वि.सं. 2034

(3) **जन्म स्थान :** तिगोड़ा (हीरापुर के पास), जिला सागर (म.प्र.)

(4) **माता-पिता :** श्राविका श्रेष्ठ श्रीमती मुन्नीदेवीजी, श्रावक श्रेष्ठ श्री भागचंदजी जैन (सम्प्रति : क्षु. सुखदसागर)

(1) माताजी : समाधिस्थ सात प्रतिमाधारी श्राविका

(2) पिताजी : आचार्य संघ में क्षुल्लक सुखदसागरजी

(5) **भाई-बहन :** स्वयं सबसे बड़े, डॉ. संजय, प्रदीप, ब्र. विनय, बहन- अर्चना

(6) **प्रारंभिक शिक्षा :** तिगोड़ा, के.जी. स्तर की पाठशाला जिसे दादाजी मदरसा कहते थे।

(7) **प्राथमिक व माध्यमिक शिक्षा :** कक्षा 1ली से 6टी तक किशुनगंज, जि. दमोह (म.प्र.)

(8) **माध्यमिक व उ.मा. शिक्षा :** श्री गणेशप्रसाद वर्णी संस्कृत महाविद्यालय, मोराजी, सागर (म.प्र.)

(9) **ग्रेज्युएशन :** बी.काम. में अध्ययनरत रहते हुए ही वैराग्योन्मुख

(10) **अभिरुचि :** (1) स्कूल जीवन से ही कविता, गीत, लेख लेखन, भाषण, वाद-विवाद, कार्यक्रम आयोजन-संयोजन आदि में विशेष रुचि, नेतृत्व। इन सबमें आज भी महारत हासिल है।

(2) खेल : टेनिस, क्रिकेट, फुटबॉल के अच्छे खिलाड़ी रहे हैं। आप अच्छे धावक भी रहे।

(11) **धार्मिक शिक्षा :** शास्त्री द्वितीय वर्ष के बाद वैराग्योन्मुख संसार की अनित्यता देख (सत्संगति एवं आध्यात्म ज्ञान वशात्)

(12) **ब्रह्मचर्य व्रत :** आचार्य श्री विद्यासागरजी से बीना बारहा में सन् 1995

(13) **दीक्षा :** 20 अप्रैल 1997 महावीर जयंति के दिन करीब 20 वर्ष की वय में चैत्र शुक्ल, त्रयोदशी वि.सं. 2054 स्थान- बरुआ सागर झांसी (म.प्र.)

(14) **दीक्षा गुरु :** अंकलीकर परम्परा के तृतीय पट्टाचार्य तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी

(15) **दीक्षा नाम :** मुनि सुनीलसागर

(16) **आचार्य पद :** (1) 25 जनवरी सन् 2007, माघ शुक्ल सप्तमी संवत 2064 औरंगाबाद में स्वयं गुरु आचार्य श्री सन्मतिसागरजी द्वारा आचार्य पद पदारोहण

(2) कुंजवन में अनंतवीर्य भगवान को गुरु आज्ञा से सूरिमंत्र देना। परम्परा के महान आचार्य संघों की 80 पिच्छी धारक साधुओं में से आचार्य गुरु ने उम्र व दीक्षा में छोटे होने के बावजूद भी आप ही के हाथों यह महान कार्य संपन्न करा भविष्य के उत्तराधिकारी का संकेत दे दिया था।

(17) **पट्टाचार्य पद :** (1) 24.12.2010 आचार्य गुरु की समाधि पश्चात 26 दिसंबर 2010 को कुंजवन में, आचार्य श्री के समाधि पूर्व लिखित आदेशानुसार विधिवत आपके लिए पट्टाचार्य पद की घोषणा की गई।

(2) उसी दिन मुंबई- गुलालवाड़ी में विशाल विद्वत् एवं जनसभा के बीच आपका गरिमामय पदारोहण समारोह किया गया।

(3) आचार्य श्री सुनीलसागरजी को अंकलीकर परम्परा का चतुर्थ पट्टाचार्य घोषित किया गया।

(4) आचार्य गुरु श्री सन्मतिसागरजी ने समाधि पूर्व ही शिष्य आचार्य श्री सुनीलसागरजी को विलक्षण मेधा शक्ति, असाधारण प्रतिभा, मृदु भाषी, मित भाषी, मौन स्वभावी, उद्‌भट विद्वान, बहुभाषाविद्, प्राकृत के प्रकांड विद्वान, हिंदी भाषा व प्राकृत भाषा में समानाधिकार, अच्छे साहित्यकार, उत्कृष्ट साधक, गुरु के प्रति अगाध श्रद्धा भक्ति, सेवा व समर्पण, संघ के प्रति अप्रतिम वात्सल्य, कुशल नेतृत्व क्षमता जैसे अनेक गुणों का खजाना आप में भरा पा अपनी समाधि से पूर्व ही आपको पट्टाधीश पद लिखित में दे दिया था।

(17) प्रख्याति : मार्मिक एवं आध्यात्मिक प्रवचनकार, आबाल वृद्ध विशेषतः युवाओं के चहेते संत, सामाजिक संगठन व एकता के हिमायती। सच्चे समाज सुधारक, धर्म, जाति, सम्प्रदाय, ऊँच-नीच के भेदभाव से परे सबके हितचिंतक, महान साहित्यकार, प्राकृताचार्य, बहुभाषाविद्, जैन दर्शन चिंतन के गूढ़ ज्ञाता, आध्यात्म के कठिन से कठिन विषय का गहन ज्ञान।

(18) साहित्य सृजन मूर्धन्य साहित्यकार :

(1) हिंदी- गद्य, पद्य, उपन्यास, यात्रा वृतांत, जीवन गाथा, आध्यात्मिक ग्रंथ, प्रतिनिधि रचनाएँ- 1. अनूठा तपस्वी, विश्व का सूर्य, 2. कवि एवं लेखक- आपके द्वारा करीब अर्ध शतक पुस्तकें लिखी गई एवं प्रकाशित।

(2) प्राकृत- गद्य पद्य में लेखन, एक दर्जन ग्रंथ लेखन/ प्रकाशित, 'सुनील प्राकृत समग्र' (भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा प्रकाशित)

(3) अनुवाद- आचार्य श्री की कई पुस्तकों का कन्नड़, मराठी, अंग्रेजी, गुजराती व अन्य भाषाओं में अनुवाद हो चुका है।

(4) आपके करीब अर्द्ध शतक ग्रंथों का प्रकाशन हो चुका है।

(5) अनूठा तपस्वी एवं सुनील प्राकृत समग्र आपकी कालजयी रचनाएँ हैं।

(19) मुख पत्र : अंकलीकर वाणी व सन्मति एक्सप्रेस

(20) संगठन : (1) नाम- आचार्य आदिसागर अंकलीकर अंतरराष्ट्रीय जागृति मंच (रजि.)
केंद्रीय कार्यालय- मुंबई, एवं श्री सुनीलसागर युवा मंच भारत

(21) पट्टाचार्य पद के दायित्व :

(1) आचार्य गुरु संघ के 30 पिच्छीधारी साधु साध्वियों के संघ का नेतृत्व। संघानुशासन। तत्काल पट्टाचार्य पद प्राप्ति के बाद।

(2) स्वयं मुमुक्षुओं को दीक्षित कर श्रमण परम्परा को आगे बढ़ाने में योगदान दे रहे हैं।

(3) आपके द्वारा दीक्षित साधुगण- कुल 76, साधु 24, ऐलक 1, क्षुल्लक 11, आर्यिका साध्वियाँ 18, क्षुल्लिका 22

(4) समाधिस्थ साधुगण- साधु 11, साध्वियाँ 15 (कुल 26 साधु)

(5) वर्तमान में संघ में धर्माराधनारत साधुगण- कुल 59 साधु 34 साध्वियाँ 25

(6) (1) मुनिगण 20, एलकगण 1, क्षुल्लकगण 13, कुल 34

(2) साध्वियाँ : आर्यिका 12, क्षुल्लिका 13, कुल 25

(3) ब्रह्मचारीगण भैयाजी- 10 ब्रह्मचारिणी बहनें- 15

(22) विशिष्ट पहचान :

(1) महान चिंतक, दार्शनिक, आगम के गूढ़ गहन तत्त्वों के ज्ञाता, आध्यात्मिक संत

(2) प्राकृताचार्य- वर्तमान में प्राकृत में ग्रंथ प्रणयन के साथ प्राकृत भाषा में प्रवचन करने वाले आप एकमात्र साधु हैं।

(3) परमगुरु भक्त- विहार में कई जगह गुरु मंदिर का निर्माण

(4) विभिन्न धर्म ग्रंथों का विषद ज्ञान

(5) छात्र जीवन से मौन का नियम यथावत जारी

(6) संघ एवं समाज के प्रति अकूत प्रतिबद्धता, कटिबद्धता

(7) क्रमिक दीक्षाएँ प्रदान करना अर्थात् ब्रह्मचारी, क्षुल्लक, एलक फिर मुनि। विशिष्ट योग्यता में नियम में शिथिलता

(8) संघ पर इतना वात्सल्य कि सब स्वयं संघानुशासित रह धर्माराधना करते हैं।

(9) शासकीय नेता, अधिकारी, अभिनेता निरन्तर आशीर्वाद व मार्गदर्शन हेतु आचार्यश्री के चरणों में पधारते हैं।

(23) परिषह क्षमता : (1) लगातार 8 दिन तक अंतराय आने पर भी समता धारण

(2) अंतराय में भी विहार- करीब 30 कि.मी. की चलाई

(24) उपसर्ग विजेता : (1) नीरा (महा.) के पास गुंडों द्वारा उपसर्ग (2) प्रतापगढ़ के पास मधुमक्खियों द्वारा उपसर्ग

(25) उपाधियाँ : आचार्य श्री को करीब 17 उपाधियों से नवाजा गया है।

(26) ज्योतिषाचार्य :

(1) ज्योतिष के ज्ञाता

(2) वास्तु विज्ञान के ज्ञाता विशिष्ट रूप से मंदिर एवं मूर्ति निर्माण वास्तु की जानकारी

(3) हस्तरेखा विशेषज्ञ : आचार्य भगवन् सन्मतिसागरजी की हस्तरेखा देख सन् 1997 में आपने कहा था- अभी भी 10-12 वर्ष आपको कुछ नहीं होगा। जो बात सत्य निकली।

(27) वर्षायोग : (1) मुनि अवस्था में 10 वर्षायोग तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के संघानुशासन में सन् 1997 से सन् 2006 तक

(2) आचार्य अवस्था में स्वतंत्र रूप से 2007 से 2010 तक 4 वर्षा योग

(3) पट्टाचार्य पद पर ससंघ- 2011 से ससंघ पद विहार करते धर्म प्रभावना करते, श्रावकों को शिक्षा दीक्षा देते गति पथ पर अग्रसर 9 वर्षायोग।

(28) अन्य कार्य : विविध (1) अनेक विद्वत् गोष्ठियों का आयोजन, (2) संस्कार शिविर, (3) शिक्षण शिविर, (4) ग्रीष्मकालीन, वर्षाकालीन, शीतकालीन विशेष वाचना, श्रावकों के विशेष आग्रह पर आगम के महान ग्रंथों की। (5) सर्वधर्म सम्मेलन, (6) ब्राह्मी लिपि एवं प्राकृत भाषा गोष्ठियों का आयोजन, (7) पंचकल्याणक प्रतिष्ठाएँ करीब 25, (8) वेदी प्रतिष्ठाएँ, (9) मंदिर, संत निवास व स्कूल का भूमि पूजन।

(29) अतिशय : केशर की वर्षा होना, जमीन पर चरण चिह्न अंकित हो जाना, आशीर्वाद से बीमार व्यक्ति ठीक होना, आशीर्वाद से लोगों के बिगड़े काम बन जाना। अन्य अनेक असंभव कार्य आशीर्वाद से संभव हो जाना।

(30) जीवन लक्ष्य :

(1) साधना से सिद्धत्व प्राप्ति करना परम लक्ष्य

(2) संघस्थ साधुओं को आत्म साधनारत रहने में सहायता कर मुक्ति प्राप्ति के लक्ष्य की ओर उन्मुख करना

(3) वाचना, पढ़ाना व स्वाध्याय के लिए सबको प्रेरित करना

(4) आत्मकल्याण के साथ विश्व कल्याण करना

(5) प्रवचनों द्वारा समाज में नवोन्मेष भरना

(6) व्यक्तिशः सुधार, अहिंसा, शाकाहार, सदाचार का प्रचार-प्रसार

(7) नारी शक्ति को आगे लाना

(8) समाज में जीवन मूल्यों को स्थापित करना

(9) युवा पीढ़ी में संस्कार सिंचन



प्राक्कथन

भगवान महावीर स्वामी की श्रमण परम्परा में बीसवीं सदी के ज्येष्ठ आचार्य मुनिकुंजर श्री आदिसागरजी (अंकलीकर), आचार्य श्री महावीर कीर्तिजी तथा तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी की आन-बान-शान, परम्परा के चमकते सितारे, प्राकृत ज्ञान केशरी, राष्ट्र गौरव, चर्या चक्रवर्ती, चतुर्थ पट्टाधीश आचार्य श्री सुनीलसागरजी गुरुवर का जीवन चरित्र अत्यंत गंभीर आदर्शपूर्ण है। जिनकी दिव्य छवि हर मानस पर 'भक्तों के भगवान' के रूप में छाई हुई है। जिनकी तप-साधना कल्पवृक्ष सदृश जगत उजागर है। ज्ञान सूर्य की दिव्य प्रभा के समान भव्यों के अज्ञान तिमिर का ध्वंस कर साम्य-सम्यक् भाव भरने में कुशल हैं। चिंतामणी सम दिव्य आशीष की रश्मियाँ दुखियों के जीवन को सुखमय करने में सक्षम है। चुम्बकीय आकर्षण से युक्त ऐसे अतिशय तेजस्वी महानतम श्रमण साधक की अध्यात्म चारित्रमय साधना देख दुनिया अचंभित हो आश्चर्य कर रही है कि आज के इस कलयुग में ऐसे दिव्य, शक्तिमान पुरुष में क्या है जो जगत में प्रभाव सम्पन्न कीर्ति से युक्त है। विशुद्ध भावों से जगत-जीव का हित सोच उद्धार करने में तत्पर है। तब विचार आया कि दुनिया को अपनी साधना से आश्चर्यचकित करने वाले आचार्य शिरोमणि गुरुदेव का बाल्यकाल के संस्कार से लेकर युवावस्था, वैराग्य तथा गुरु सन्निधि में ज्ञान-ध्यान-तप, आराधना-साधना के आदर्श पूर्ण अमूल्य प्रेरक प्रसंग रूपी मणियों को एकत्रित कर देश-दुनिया के सामने पुस्तक रूपी हार में पिरोकर प्रकाशित होना चाहिए। तभी योग-संयोग वशात् सन् 2016 बांसवाड़ा चातुर्मास में सरोजजी शाह गुरु दर्शनार्थ पधारीं। तब मैंने आपसे गुरु चरित्र पर विचार-विमर्श कर लेखन का कार्य आपको सौंपा। आपने सहज भाव से अपने सौभाग्य की सराहना करते हुए कहा, अभी तक मैंने इनकी कीर्ति-महिमा सुनी थी, अब उसके सम्यक् लेखन का पुरुषार्थ जरूर करूँगी ।

उन्होंने भरपूर प्रयास किया 'सागर के मोतियों को पिरोने का'। बीच-बीच में मुझसे मार्गदर्शन भी लेती रहीं और मैंने भी 'बिखरे हुए प्रसंग रूपी प्रेरक मोतियों को' एकत्रित कर आपको भेजे और उनकी महान् महिमा का आकलन कर 'महाविज्ञ' पुस्तक रूपी माला में पिरोकर दुनिया के सामने प्रस्तुत किया।

जैसे समुद्र में बिखरी रत्न राशि तह से लाना, लाकर माला बनाना जितना कठिन कार्य है उतना ही कठिन दुरूहतम पुरुषार्थ सरोजजी शाह ने कृति 'महाविज्ञ'- आचार्यश्री सुनीलसागरजी की जीवन गाथा का सृजन कर सूर्य धरती पर उतारने जैसा कार्य किया है। गुरुवर के प्रति अगाध श्रद्धा, भक्ति व समर्पण से सभर, राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त लेखिका सरोजजी शाह को मेरा आशीष। ऐसे संतों-भगवंतों के चरित्र लेखांकन में उनकी लेखनी निर्बाध चलती रहे।

उनका ज्ञान निरंतर वृद्धिगत हो, केवलज्ञान लक्ष्मी को प्राप्त करे, सिद्धि को वरे, ऐसी उन्नत भावना है।

जिन्होंने इस महान जीवन चरित्र के प्रकाशन में सहयोग दिया, उन्हें आशीष।

'णमो सुणील सागराइरियस्स'

● मुनि सुश्रुतसागर

(संघस्थ : आचार्य श्री सुनीलसागरजी)

आभार

अतल, अतलांत, असीम, अपार, सिंधु की अपनी क्षमता है, वहीं ससीम बिंदु सी नन्हीं बूंद की भी अपनी क्षमता, जो सूरज की एक किरण के ताप के दाह से सूखकर मिट जाती है। फिर भी बूंद अपनी हैसियत भूल चल पड़ी अपनी नन्हीं सी अंजुरी में उस महासागर की क्षमता नापने, संजोने, समेटने! इसी से पता चलता है कि बूंद का यात्रापथ कितना कठिन व मुश्किलों भरा होगा। बस ऐसी ही एक नन्हीं सी बूंद की हैसियत से मैंने अंकलीकर परम्परा के चतुर्थ पट्टाचार्य संत श्री सुनीलसागरजी की जीवन गाथा के लेखन के मुश्किलों व जोखिमभरे दुरूह दुष्कर कार्य का श्रीगणेश किया। वैसे तो एक दिगम्बर संत की जीवनगाथा लिखना हिमालय की चढ़ाई सा कठिन व जोखिमभरा कार्य है तिस पर 'महाविज्ञ' आचार्य श्री सुनीलसागरजी जैसे महानतम संत की विलक्षण जीवन गाथा लिखना सहज तो कदापि नहीं है। पर उनके अप्रतिम जीवन को मर्यादाओं में रह कर मर्यादित सृजन करना, इस महासागर को बूँद रूप अपने अस्तित्व द्वारा सहेजना, लिपिबद्ध करना, मेरे लिए निश्चित ही अतिकठिन कार्य रहा।

तथापि जीवन की विषमतम परिस्थितियों व विसंगतियों की घड़ी में प्रारंभ यह लम्बी, वृहद व दुरूहतम सृजन यात्रा, प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष अनेकानेक लोगों की समय-समय पर दी गई सहयोग की मणिमुक्ताओं से भी अधिक अमूल्य भेंटों से सृजन पथ पर अग्रसर रह सहज, आसान व गति पकड़ती, कृति के पृष्ठों में अंकित होती रही। यह सहयोग मुझे, निमित्त, आशीर्वाद, प्रेरणा, आचार्य श्री के जीवन की अलभ्य जानकारियाँ जुटाने, उनसे संबंधित साहित्य प्राप्त करने आदि-आदि जैसे अनेक रूपों में प्राप्त होता रहा।

जीवन के हताशा, निराशा व घनीभूत पीड़ा के दुःखद कोहराछन्न वातावरण में मैंने सृजन-पथ पर अपना पहला पग रखा। फिर तो अपने आप हजारों पग व हजारों हाथ सहयोग के लिए उठ गए। मुझे एक बार फिर अनुभव हुआ कि आचार्य श्री जैसे महान साधकों तथा निष्काम योगियों के संतत्व व श्रेष्ठत्व का ही प्रभाव है कि कृति 'महाविज्ञ' लिपिबद्ध करते वक्त ये अनजान देवदूत से सहयोगी न जाने कहाँ-कहाँ से आकर मेरा सहयोग करके पथ की कठिन चलाई आसान करते रहे हैं। यह निश्चित ही आचार्य श्री के महान व्यक्तित्व, कृतित्व एवं आशीर्वाद का ही सुफल है।

सांसारिक जीवन में मैं मेरे पति श्री गेंदालालजी शाह के असामयिक निधन से आई दुःख की बाढ़ से जीवन के असहज पलों को सहज बनाने, शांति व सुकून की तलाश में मैं जा पहुँची आचार्य श्री सुनीलसागरजी गुरु चरणों में। संत दर्शन व आशीर्वाद से निश्चित ही मन का उद्वेग कुछ शांत हुआ। मैं आचार्य श्री के दर्शन कर वहीं गुरु निश्रा में खड़ी ही थी कि तभी गुरुदर्शन को मुनि श्री सुश्रुतसागरजी वहाँ आ पहुँचे। गुरुदर्शन कर ज्यों ही उनकी नजर मुझ पड़ी, उन्होंने मुझसे पूछ लिया- ''आप सरोजजी शाह हैं?'' उनके मधुर व वात्सल्यपूर्ण संबोधन से संतप्त मन पर चंदन लेप की शीतलता का आभास हुआ। मैंने धीरे से कहा ''जी।'' उन्होंने कहा- ''मुझे आपसे बहुत जरूरी बात करना है, आइये।'' फिर भी किंकर्तव्यविमूढ़ सी मैं यंत्रवत वहीं खड़ी रही। उन्होंने जाते-जाते मुड़कर देखा व पुनः अपनी बात दोहरा दी। संत आज्ञा सुन मैं उनके पीछे, उनके कक्ष में जा पहुँची। उन्होंने बिना किसी भूमिका के कहा, ''आचार्य श्री की जीवनगाथा लिखने का महद कार्य आपके हाथों ही संपादित होना है अतः आप आचार्य श्री की जीवनगाथा लिखने का आज ही संकल्प लें।''

सुनकर मैं हतप्रभ थी। अचानक मेरे मुख से निकल गया- मैं तो आचार्य श्री के दर्शन करने आई हूँ। इतने बड़े पट्टाचार्यश्री की जीवनगाथा लिखने की योग्यता मुझमें कहाँ? वे शिखर पुरुष और मैं उनके चरणों की धूलि भी नहीं।

वे कहाँ और मैं कहाँ?

मैंने काफी अनुनय, विनय व आग्रहपूर्वक अपनी असमर्थता व मजबूरी व्यक्त की व यह भी कहा कि ''मैंने अब लेखन कार्य बंद कर दिया है।'' पर मुनि श्री ने मेरी एक न सुनी। चंद शब्दों में जीवन बोध देते मंगल उद्‌बोधन से मुझे पुनः दुःखों के आवेग से उबारने का प्रयास किया व कहा कि ''निश्चित ही आपके दिवंगत पति ही आपको उनके वियोग के दुःख से उबारने के लिए यहाँ गुरु शरण में लाए हैं। आचार्य श्री की जीवनगाथा का लेखन ही आपकी उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी और उनके वियोग के दुःखों को काटने का महासंबल।'' और उन्होंने आचार्य श्री के पावन चरणों में श्रीफल अर्पित करवाकर इस 'महासृजन' का 'महासंकल्प' दिलवा दिया। इस प्रकार इस कृति के सृजन की नींव मेरे व्यक्तिगत जीवन के दुःखों व आँसुओं के कुदाल फावड़ों की खुदाई से शुरू हुई, कहना अतिशयोक्ति न होगी। अस्तु।

मैं सबसे पहले इस सृजन के निमित्त बने मेरे पति स्व. श्री गेंदालालजी शाह के प्रति हृदय से आभारी हूँ जो अपनी अनुपस्थिति में भी इति से लेकर अंत तक कदम-कदम पर मेरे लिए प्रेरक बने रहे। मैं प.पू. आचार्य श्री सुनीलसागरजी की हृदय के अंतरतम से आभारी हूँ जिनका दर्शन और आशीर्वाद मेरे इस सृजन के महा निमित्त बने। मैं किन शब्दों में आभार व धन्यवाद प.पू. मुनि श्री सुश्रुतसागरजी के प्रति अभिव्यक्त करूँ जिनके प्रेरक उद्‌बोधन व आशीर्वाद ने इस सृजन का बीड़ा उठाने के लिए मेरा मनोबल पुष्ट किया। यह उनकी बाल हठ सी जिद ही थी कि जिसने मेरी थमी कलम को पुनः गतिशील कर दिया। मुनिवर ने मुझे मात्र प्रोत्साहित ही नहीं किया अपितु आचार्य श्री के जीवन की अलभ्य जानकारियाँ भी सतत उपलब्ध करवाते रहे व कृति के आदि से लेकर अंत तक सृजन यात्रा के सहभागी बने रहे। उदारमना युवा मुनि श्री सुश्रुतसागरजी का ऋण आभार की औपचारिकता से कदापि नहीं चुका सकती हूँ। पुनः मैं मुनि श्री सुश्रुतसागरजी की वात्सल्य पूर्ण प्रेरणा व मार्गदर्शन के लिए हृदय से आभारी हूँ।

इसी तरह मैं आर्यिका श्रुतमति माताजी की हृदय से आभारी हूँ जिन्होंने स्वयं आचार्य गुरु की जीवनगाथा के लेखन के लिए जो सामग्री अपनी कड़ी मेहनत से संकलित की थी, वह सारी की सारी सामग्री मुझे सौंप दी। गुरु के प्रति समर्पित, ऐसी विशाल सहृदया माताजी के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने के लिए मेरे पास शब्द व भाव नहीं हैं। यदि माताजी की करुणा, कृपा मुझ पर न होती तो यह सृजन यात्रा मेरे लिए कदापि सरल व संभव नहीं हो सकती। मैं माताजी की वंदना करते हुए प्रणाम करती हूँ। इसी तरह 2012 के बाद के आचार्य श्री के जीवन की समग्र जानकारियाँ उपलब्ध करवाने के लिए मैं पू. आर्यिका सुस्वरमति माताजी की भी हृदय से आभारी हूँ। मैं पुनः मुनि श्री व दोनों माताजी द्वारा दिए गए सहयोग व मार्गदर्शन के प्रति नतमस्तक हूँ। इन संतों के अलावा क्षुल्लकश्री सुखदसागरजी (आचार्य श्री के गृहस्थ जीवन के पिता श्री भागचंदजी जैन) ने आचार्य श्री के जीवन की कई जानकारियाँ दी, मैं उनके प्रति भी कृतज्ञ हूँ।

इन संतों के अलावा कई गुरु भक्त श्रावकों ने आचार्य श्री के जीवन की जानकारियाँ व साहित्य मुझे घर तक लाकर उपलब्ध करवाए। इसके लिए सर्वप्रथम आभारी हूँ मैं आचार्य श्री के परम भक्त युवा शिष्य नमन जैन (दोसी) सागवाड़ा की जिन्होंने तन, मन, धन से जिस मनोयोग से इस सृजन पथ को आसान बनाने में मुझे अति आत्मीय सहयोग दिया, वह स्तुत्य, प्रशंसनीय व श्लाघ्य है। पुस्तक के लिए फोटो संकलन में भी नमन दोसी ने कड़ी मेहनत की व अपना अमूल्य समय देकर महत्वपूर्ण योगदान दिया। मैं हृदय से आभारी हूँ युवा, मुनिभक्त सनी जैन गाँधीनगर की जिसने मेरे सृजन का रास्ता सहज, सरल बनाने में हरसंभव सहयोग किया। इसी तरह के सहयोग के लिए मैं श्रीमती सज्जनदेवी ज्ञानचंद मिंडा (संघस्थ) व परिवारजन, मनोहरलालजी जैन, श्रीमती कुसुम जैन के साथ आचार्य श्री के गृहस्थ जीवन के भाई-बहन व अन्य परिवारजन व परिचित/ अपरिचितों के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करती हूँ जिनका आत्मीय सहयोग कदम-कदम पर मेरा संबल बना रहा। मैं हृदय से आभारी हूँ श्री कैलाशजी जैन काला इंदौर, प्रकाशजी खमेरा, स्वराजमलजी हूमड़ की, जिनका इस सृजन में बड़ा सहयोग रहा। आचार्यश्री की छाया की तरह साथ रहने वाले परम

मुनिभक्त श्री नवराजजी शर्मा के प्रति आभार व्यक्त करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं। कृति के आदि से अंत तक दिये गये उनके सहयोग के लिए मैं उन्हें धन्यवाद देती हूँ। कृति की पूर्णाहूति तक वे मेरे सम्बल बने रहे।

मुझे हर्ष है कि एक वर्ष के भीतर ही कृति 'महाविज्ञ' आचार्यश्री सुनीलसागरजी की जीवनगाथा का द्वितीय संस्करण प्रकाशित हो, लोकार्पित होने जा रहा है। इसका श्रेय आचार्यश्री के असाधारण व लोकप्रिय व्यक्तित्व व कृतित्व को ही जाता है जिसने इस कृति को इतनी ऊँचाइयाँ दी। इस नवीन संस्करण में मैंने आचार्यश्री के जीवन के कुछ महत्वपूर्ण संस्मरण व जानकारियाँ छूट गई थी, उनका भी समावेश किया है। इसके लिए मैं हृदय से आभारी हूँ वंदनीया आर्यिका श्री सुदृढ़मती माताजी की जिन्होंने इस कृति का आद्योपान्त सुरुचिपूर्वक, डूबकर अध्ययन किया व आचार्यश्री के जीवन संबंधी महत्वपूर्ण जानकारियाँ व घटनाएँ जो प्रथम संस्करण में छूट गई थी, संग्रहीत कर देने का कठिनतम पुरुषार्थ किया है। गुरुवर के प्रति समर्पित आर्यिका सुदृढ़मती माताजी ने अपने आत्मकल्याण, ध्यान, अध्ययन, मनन, चिन्तन के अमूल्य क्षणों को इस कृति के लिए अर्पित कर, अपने पवित्रतम पुरुषार्थ से मुझे उपकृत किया है, इसके लिए आभार प्रकट करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं। मैं आभारी हूँ संघस्थ ब्र. अमृता दीदी, ब्र. ऋतुजा दीदी व श्रीमती डिम्पल (इंदौर) की जो इस नवीन संस्करण की जानकारियाँ व फोटो आदि प्रदान करते रहने में सेतु बनी रही।

इसी तरह मैं हृदय से आभारी हूँ आचार्यश्री के गृहस्थ जीवन तिगोड़ा के समस्त परिजनों, विशिष्ट रूप से चाची, उनके भाई डॉ. संजय एवं प्रदीप, दोस्त कमलेश एवं सागर मोराजी वर्णी विद्यालय के प्राचार्य (आचार्यश्री के गुरु रहे) परम श्रद्धेय पं. ज्ञानचंदजी शास्त्री की, जिनके द्वारा मुझे दी गई अलभ्य जानकारियाँ भी इस कृति में संकलित है।

मैं आभारी हूँ पुण्यार्जक श्री अशोकजी बोहरा परिवार (बाँसवाड़ा) की, जिनके अर्थ सहयोग से एक वर्ष के भीतर अत्यल्प काल में इस कृति का द्वितीय संस्करण प्रकाशित होकर जन-जन के हाथों में पहुँच रही है। साथ ही मैं हृदय से आभारी हूँ प्रकाशक आचार्य आदिसागर अंकलीकर अंतरराष्ट्रीय जनजागृति मंच मुंबई की, जिनके सहयोग से यह पुस्तक प्रकाशित हुई है। मैं आभारी हूँ नितिन पंजाबी की जिन्होंने अक्षर संयोजन एवं साज-सज्जा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

अंत में मैं अपने पुत्र निलेश शाह व पुत्रवधु डॉ. अल्पना शाह के प्रति आत्मीय आभार प्रकट करती हूँ जिन्होंने प्रारंभ में गुरुदर्शन से लेकर बार-बार गुरुदर्शन के लिए जाने व हर प्रतिकूलता को अनुकूलता में बदलने के हरसंभव कर्तव्य निर्वहन द्वारा मेरे इस सृजन महायज्ञ को पूर्णाहुति तक पहुँचाने में सहयोग प्रदान किया। कदम-कदम पर उन्होंने अपने जीवन के अति व्यस्ततम क्षणों में से समय निकालकर जो सहयोग मुझे दिया, मैं इसके लिए उनके प्रति कृतज्ञ हूँ। साथ ही मैं अपनी दोनों पोतियों कु. ध्वनि शाह व तन्वी शाह के प्रति भी आभारी हूँ जो मोबाइल व कम्प्यूटर के माध्यम से जानकारियाँ प्राप्त कर मेरा रास्ता आसान करती रहीं।

आचार्य श्री के गृहस्थ जीवन से लेकर संत जीवन तक की जानकारियाँ एकत्रित करने में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष अनेकानेक लोगों, विद्वानों आदि से सहयोग व जानकारियाँ प्राप्त होती रही जिनके सबके नाम यहाँ उल्लेखित करना संभव नहीं है तथापि उन सबसे करबद्ध क्षमायाचना सहित मैं उनकी हृदय से आभारी हूँ। मैं उन कई महापुरुषों व आचार्यों, संतों, भगवंतों के प्रति भी हृदय से कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ जिनके श्रेष्ठ विचार जाने-अनजाने कृति में आए हों।

सृजन पथ पर अति आत्मीय, स्नेही इन अनजान, अपरिचितों के सहयोग से मेरे रास्ते के शूल फूल बनते रहे और ये गुरु 'गुण पुष्प' गुणमाला के रूप में कृति 'महाविज्ञ' के रूप में गुम्फित हो आज पाठकों के हाथों तक पहुँच सकी है। जिनके नाम मैं यहाँ उल्लेखित नहीं कर सकी हूँ, उन सबसे क्षमा याचना सहित मैं पुनः-पुनः समस्त सहयोगियों के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ।

● सरोज शाह



हृदयोद्‌गार

विश्व उसी के आगे नतमस्तक होता है जो आध्यात्म योग से सुसंपन्न, श्रुतसिद्धांतों में निष्णात व संयम की वल्गाओं से इंद्रिय समूह पर लगाम कसने में पारंगत हो। जिनके नेत्रों में दया की सजलता, हृदय में करूणा व वात्सल्य की आर्द्रता, स्वभाव में सरलता, मन में आत्मकल्याण की दृढ़ता तथा पावों में विश्वकल्याण की तूफानी गति हो, उस गतिमान 'दिनमान' के चरण अपने आप विश्व वंदनीय हो जाते हैं।

श्रमण परम्परा की सदानीरा सलिला को प्राण जल दे देकर सींचने वाले विश्व प्रेरणा मूर्ति, आचार्य आदिसागर अंकलीकर परम्परा के चतुर्थ पट्टाचार्य मुनि प्रवर श्री सुनीलसागरजी महाराज ऐसे ही नमनीय, पूजनीय, वंदनीय संत हैं जिनकी आध्यात्मपगी दिव्य देशना से शरद पूर्णिमा के शशि सुधा सी शुभ्र, धवल, स्निग्ध शीतलता, चाँदनी सी झरती है। जिनका विराट व्यक्तित्व दिव्य ज्ञान सूर्य की प्रखर ज्योतिप्रभा से आभामंडित है तथा जिनका अमूल्य जीवन कोष सदैव संयम, तप, त्याग, दया, क्षमा, सरलता, सहृदयता, सदाशयता, सुकोमलता, मृदुता, सत्य, शौच, ब्रह्मचर्यादि अकूत दिव्य गुण शक्तियों से आपूरित रहता है। यही कारण है कि ये आत्मान्वेषी, आत्मगुणों से युत आभा पुरुष आज जगत पूज्य हो गए हैं।

20 अप्रैल 1997 महावीर जयंति के दिन पुष्य नक्षत्र में आचार्य गुरु अंकलीकर परम्परा के तृतीय पट्टाचार्य तपस्वी सम्राट श्री सन्मतिसागरजी से दीक्षित, उनके प्रिय, कुशाग्र, कुशल, प्रज्ञ व पट्ट शिष्य आचार्य श्री सुनीलसागरजी तेजोमय ओजस व्यक्तित्व के धनी, श्रमण संस्कृति के उन्नायक युवा महाश्रमण हैं। उनका साधक जीवन ज्ञानमयी गंगा, योग साधिनी जमुना तथा ब्रह्म में लीन ब्रह्माभा की सरस्वती का 'त्रिवेणी संगम' है जिसमें निमज्जित होने वालों के तो वारे न्यारे हैं ही लेकिन इस त्रिवेणी संगम के तट पर कुछ देर आ बैठने वाले भी उनकी धन्यता से धन्य हो जाते हैं। यही नहीं इस विश्व विश्वसनीय महाविभूति के चरण सान्निध्य के पल-दो पल भी जीवन सार्थक कर लेने के लिए पर्याप्त है।

कहना न होगा सदाशयता युक्त उनका बहुआयामी व्यक्तित्व जितना प्रेरक व साधनामय है उतना ही वात्सल्य, अपनत्व व आत्मानुभूति के एहसासों से भरा है। उनमें बरगदी अनुभव, गंभीरता, सघनता, शीतलता व उदारता है। उनका मानना है कि सत्य की उपलब्धि ज्ञान की साधना से ही प्राप्त होती है। इस साधना का मूल प्रयोजन वर्तमान में आपके लिए आत्मोपलब्धि है। उनका तपःपूत कुंदन कांति सा दमकता, संयममय जीवन, मर्यादित आचरण, दृढ़शील, निस्पृह वृत्ति, अपार परिषह जय क्षमता तथा उनके हृदय में सागर सी हिलोरे लेती विश्व हितैषी भावनाओं ने हमें उनका गुणगान करने के लिए प्रेरित कर दिया।

असाधारण व विलक्षण प्रतिभा के धनी महापुरुषों के जीवन का भव्य प्रासाद उनकी आंतरिक भव्यता की मजबूत बुनियाद पर टिका होता है। उनके अनूठे व विलक्षण व्यक्तित्व के निर्माण में उनके जीवन की विशिष्ट विशेषताओं की मजबूत ईंटें लगी होती हैं। लेखिका के नाते मेरी भी उत्कंठा आचार्य श्री के जीवन के अतीत की उन तमाम घटनाओं, परिस्थितियों व संस्कारों के बारे में जानने की बढ़ती गई जिनके बूते आज ये महामनीषी इतनी ऊँचाइयाँ छू रहे हैं और जिनके बारे में जाने बिना मेरा लेखन कार्य भी आगे बढ़ना नितांत असंभव था। मेरी स्थिति सागर किनारे खड़े लहरे

गिनते साधारण से व्यक्ति जैसी थी जिसके लिए सागर की थाह मापना, उस पारावार का पार पाना तथा रत्नाकर के गर्भ में छुपी अमूल्य, अकूत रत्न निधि की टोह पाना बड़ा दुरूह, दुष्कर व दुर्लभ काम था। पग-पग पर जीवन की विषमताओं व प्रतिकूलताओं के हिमालयी व्यवधान खड़े थे। तथापि संत जीवन की कठोर साधना से पूरित इन तेजस्वी- ओजस्वी साधारण से दिखने वाले असाधारण व्यक्तित्व के चुम्बकीय आकर्षण की ओर खिंचती चली गई। मुझे कबीर की पंक्तियाँ बार-बार याद आती प्रेरित कर रही थीं।

जिन खोजा तिन पाइया, गहरे पानी पैठ।
हो बौरा डूबन डरा, रहा किनारे बैठ।

और साहस कर मैंने सागर में छलांग लगा दी। सच कहूँ तो यह अतिशयोक्ति है या हकीकत या मेरी गुरु भक्ति, श्रद्धा, समर्पण या आस्था का अतिरेक मुझे कुछ पता नहीं। अंततः गुरुदेव की जीवन यात्रा ही मेरी सृजन यात्रा बन गई। कब? कैसे? यह कहना तो मुश्किल है पर हाँ, साहित्य सृजन के माध्यम से ही सही मैं सहयात्री बन उनके साथ चलने लगी।

सागर की तह तक जाने की कोशिश में रिसती अंजुरी में मैं जो कुछ, जितना कुछ समेट-संभार पाई, उसमें मैंने पाया कि कैसे 'ज्ञानपिपासा' अदने से साधारण दिखने वाले असाधारण प्रतिभाशाली बालक संदीप को तिगोड़ा गाँव (सागर) से किशुनगंज होते हुए गणेश प्रसाद वर्णी संस्कृत महाविद्यालय मोराजी सागर (म.प्र.) तक पढ़ाई के लिए खींच लाई। माँ-पिता के संस्कारों की सीख उसके जेहन में रची पची थी कि 'तुझे पढ़-लिखकर बड़ा आदमी बनना है।' बड़ा आदमी क्या होता है? कैसे बना जाता है यह तो वह नहीं जानता था पर उसकी नन्ही आँखों में बड़ा आदमी बनने का यह सपना सदा तैरता रहता था कि पढ़-लिखकर आदमी बड़ा बनता है। लक्ष्मी तो बिन माँगे भी छप्पर फाड़कर बरस पड़ती है पर सरस्वती तो कठोर चट्टानी साधना से ही प्रसन्न होती है और वह बालक सरस्वती की साधना में तन-मन से जुट गया। स्वयं के साथ गणेप्रसाद वर्णी विद्यालय व वहाँ के महान शिक्षकगण इस साधक शिक्षार्थी को बड़ा आदमी बनाने के लिए योगदान देने में जुट गए। महान वर्णी विद्यालय इस साधक शिक्षार्थी के लिए इस युग का नालंदा विश्वविद्यालय बन गया जिसने देश ही नहीं विश्व को कई इतिहास पुरुष व महान विभूतियाँ दी हैं। अकलंक निकलंक की तरह इस वर्णी विद्यालयों में भी दो भाइयों, संदीप व संजय का भवितव्य गढ़ा जा रहा था। यद्यपि काल, परिस्थितियाँ व निमित्त अलग-अलग थे किंतु अकलंक देव की तरह संदीप भी आगे चलकर युग की छाती को चीरकर एक युग पुरुष के रूप में प्रभात के प्रभाकर की प्रभामंडलीय आभा के साथ धरती पर अवतरित हो आज अपनी प्रखर अध्यात्म ज्ञान ज्योति की किरणावलियाँ बिखेर रहा है।

वर्णी विद्यालय में कक्षा 7वीं में प्रवेश ले बारहवीं कक्षा तक के अध्ययन में प्रत्येक कक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त कर संदीप ने अपनी विशिष्ट विशेषताओं के 'डंके' बजा दिए। लौकिक शिक्षा के साथ शास्त्री की धार्मिक शिक्षा ने उसे सचमुच में आगम शास्त्रों का 'शास्त्री' बना दिया। शिक्षक से लेकर विद्वानगण भी उसकी प्रखर बुद्धि व स्मरण शक्ति का लोहा मानने लगे। शिक्षा प्राप्ति के साथ, भविष्य से अनजान उस बालक का भवितव्य करवटें बदलने लगा। कक्षा 9वीं की पढ़ाई के लिए संदीप अभी-अभी गाँव से आया था व अपने अभिन्न बाल सखा टेकचंद को ढूंढ रहा था, पता चला टेकचंद पेड़ से गिरकर अकाल काल कवलित हो गया। उसके बाल मन पर मित्र वियोग के दुःख का गहरा आघात लगा। इस दुश्वर पहलू से संदीप उबर भी नहीं पाया था कि अगली कक्षा के अपने प्रिय व योग्यतम शिक्षक पं. सुरेशचंद्रजी शास्त्री की अकाल मृत्यु ने संदीप का मन-मानस झकझोर दिया और यह सिलसिला चलता रहा फिर जिगरी दोस्त वीरेंद्र कारू, प्रहलाद, पुजारीजी की बहन व दो मासूम बच्चों की सड़क हादसे में दर्दनाक दुखद मौतों ने संदीप को मित्र वियोग तथा उनके परिजनों के विलाप ने, दुःखों के गहन गर्त में धकेल दिया। अपनों की अकाल मृत्युओं का यह महातांडव बचपन से ही उस नन्हें बालक के हृदय की गहन पीड़ा को दुःखों की उष्मा दे देकर पिघलाता रहा।

दुःखातिरेक से संदीप का हृदय हाहाकार कर उठता। वह स्वयं को संभाल नहीं पाता। अब उसके मनोमस्तिष्क में एक ही बात घर कर गई कि 'इन सबकी तरह किसी भी क्षण मैं भी क्रूर काल का शिकार हो जाऊँगा।' आँखों के सामने घटी घटनाओं से उपजे 'मृत्युबोध' ने बालक/किशोर संदीप के सुख-चैन-शांति सब कुछ छीन लिये।

अंततः महान गणेशप्रसाद वर्णी संस्कृत महाविद्यालय की उस महान ज्ञानशाला से प्राप्त ज्ञानांजन शलाकाओं ने संदीप के उन्मीलित अंतर्चक्षु खोल दिए। बारह अनुप्रेक्षाओं के अध्ययन ने संदीप की भावभूमि मजबूत करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। मृत्युवरण से पहले 'मृत्युंजयी' बनने की चाहत व सोच संदीप की असार संसार से विरक्ति की भावना को हवा दे दे सुलगाती रही। अब 'मृत्युंजयी' बनना ही संदीप के जीवन का 'परम लक्ष्य' बन गया। चट्टानी इरादों वाले युवा संदीप का यह 'परम लक्ष्य' उन्हें मुक्ति के द्वार तक खींच लाया और अंततः इस युवा मुमुक्षु ने एक दिन युग तपोधन, युगाचार्य प.पू. 108 आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के द्वार पर दस्तक दे दी। करुणानिधि गुरु ने इस युवा के हृदय में उठी सांसारिक दुःखों की करुण पुकार सुन ली। गुरु की पारखी नजरों ने तत्क्षण हीरे की पहचान कर ली व जिन दीक्षा की स्वीकृति दे दी। प्रसन्न मना इस युवा ने 20 अप्रैल 1997, महावीर जयंति की परम पुनीत पावन बेला में आचार्य श्री से जैनेश्वरी दीक्षा ले महाव्रती जिन मुनि बन, दिगम्बर भेष धारण कर, मुक्तिपथ पर अपना पहला कदम बढ़ा, 'मुनि सुनीलसागर' नाम पाया।

अब संदीप की मोहकारा के बंधन तड़ातड़ टूट गए। घर, परिवार, माता-पिता, भाई-बहन, नाते-रिश्तेदार सारे के सारे संबंध छिटक कर परे हो गए और शुरू हो गई उसकी मृण्मय को चिन्मय बना 'मृत्युंजयी' बनने की कड़ी साधना। उसी के साथ संयम के सूर्य रथ पर सवार, तपस्या की वह्नि में त्याग की समीधा डाल-डाल कंचन को कुंदन कांति से दमकाने का महाभियान प्रारंभ हो गया। आचार्य गुरु से जिनागम के महान ग्रंथों के अध्ययन वाचन व स्वाध्याय से श्रुतमंथन होने लगा। श्रुतमंथन से प्राप्त ज्ञानामृत से अमरत्व प्राप्ति के प्रयास होने लगे। चर्या में चारित्र ढलने लगा। हृदय की सीप से चिंतन के अमूल्य मोती जन्म लेने लगे। ज्ञान ज्योति से अंतर्द्वीप जल उठा जो बाहर भी आलोक बिखेरने लगा। जीवन के इकतारे से आत्मानंद का अनहद नाद छिड़ने लगा। स्वपर कल्याण की कल-कल, छल-छल करती सरिता प्रवाहमान हो गई। इस प्रकार एक मुक्तिकामी साधक, करुणा से ओत-प्रोत हृदय ले आत्मकल्याण व विश्व कल्याण की राह पर चल पड़ा।

मुनि श्री सुनीलसागरजी अब अपनी कठोर साधना से सिंचित स्पंदनों को समाज को सौंपने के प्रयासों में जुट गए। मूल्यपरक चेतना जागृत करती उनकी संवेदनाएँ मंगलमय कल्याणी वाणी के माध्यम से जन-मन-पथ पर प्रवचनों व धर्मोपदेश के रूप में पहुँचने लगी। उनके हृदय का स्पंदन आगम ज्ञान के सार रूप में, शब्द समूह बन कागज पर सवार हो, यात्रा पथ पर निकल, साहित्य सृजन के रूप में पाठकों तक पहुँच उन्हें आत्म वैभव से परिचित कराने लगा। और यह उनका स्पंदन ही है जो रचनात्मक हो, संस्कार शिविर, शिक्षण शिविर, ग्रंथ वाचना, स्वाध्याय, पंचकल्याण व वेदी प्रतिष्ठा, विभिन्न विधान मंडलों, विद्वत गोष्ठियों, मंदिरों, संत सदनों, पाठशालाओं के भूमिपूजन, उद्‌घाटनों व समाज के माध्यम से धार्मिक कार्यों के आयोजन- संयोजन की प्रेरणा आदि आदि के माध्यम से जीवंतता पा यथार्थ की भूमि पर उतरकर वैयक्तिक एवं सामाजिक जीवन में न केवल उत्स ऊर्जा व उत्साह संचरित करने लगा अपितु जन-मन में मुक्ति प्राप्ति की आकांक्षा भी पैदा करने लगा।

आचार्य गुरु द्वारा शिष्य को लगातार दस वर्षों तक तरासने की साधना पुष्पित, पल्लवित व फलित हो स्पष्ट दृष्टिगोचर होने लगी। गुरुवर शिष्य के समर्पण, आभ्यंतर की गहराई, अंतरधारा की पावनता तथा अनुभूति की विपुलता देख न केवल गदगद थे अपितु अभिभूत भी। शिष्य की ओजस्वी पात्रता गुरु की पारखी नजरों से छुपी न रह सकी। शिष्य पर गुरु कृपा की ऐसी वृष्टि हुई कि उन उदारचरितानाम महागुरु ने मुनि सुनीलसागरजी को 25 जनवरी 2007 के शुभ दिन औरंगाबाद (महाराष्ट्र) में विशाल जनसमूह, 7 आचार्यों के संघ समक्ष 'आचार्यपद' पर सुशोभित कर उन्हें महामुनि बना

श्रमण संस्कृति के महापद पर सुशोभित कर दिया। यही नहीं गिरि गुदा से सहृदय गुरु ने अपने इस योग्यतम शिष्य को अपने साथ रखने का राग त्याग, आत्म कल्याण में रत रह लोक कल्याण व धर्म प्रभावना करने, समाज में संस्कारों का बीजारोपण करने, सामाजिक- सांस्कृतिक चेतना जागृति के लिए अलग से विहार करने का आदेश व आज्ञा दे दी। गुरु ने आशीर्वाद स्वरूप इतना ही कहा, ''जब तक कंधे पर भार नहीं होगा, तब तक उभार नहीं होगा। मर्यादा में रहकर श्रमण संस्कृति का परचम फैलाओ।'' समझदार शिष्य के लिए इशारा काफी था।

भरे हृदय, भारी मन व बरसते नयनों से शिष्य ने गुरुआज्ञा शिरोधार्य की। उपसर्गों व परिषह जन्य पीड़ाएँ सहते, राह की विघ्न, बाधाएँ लांघते आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने हजारों कि.मी. की पदयात्रा की। उनकी पदयात्रा मात्र जमीन नापना या पद घर्षण नहीं थी अपितु उसका उद्देश्य पथ में आते-मिलते जा रहे पथिकों को संस्कार, मूल्य व नैतिकता का पथ्य व पाथेय बांटते रह, उनके जीवन को अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह व ब्रह्मचर्य के आचार-विचारों से अलंकृत करना था। धर्म, जाति व सम्प्रदाय से परे वे व्यसन मुक्त समाज के निर्माण में सतत संलग्न दिखाई देते थे। जहाँ मुनियों का आगमन निषेध था, उन स्थानों पर आपने निर्भीक हो प्रवेश किया व अपने ठोस आगम ज्ञान से कट्टर पंथवादियों का मतिभ्रम दूर कर उन्हें सच्चे मार्ग पर आरूढ़ किया। श्रवणबेलगोला व अन्य पद यात्रा में भी आपने जगह-जगह बिखरे पड़े श्रमण संस्कृति के अवशेषों, ऐतिहासिक व पुरातात्विक दृष्टि से महत्वपूर्ण जैन धर्म की प्राचीनता का सूक्ष्म अवलोकन कर, जैन इतिहास को अपने यात्रा वृतांतों में लिपिबद्ध कर जैन धर्म के प्रति अपनी सच्ची कर्तव्य निष्ठा अर्पित की। यही नहीं हमारी प्राचीन प्राकृत भाषा में साहित्य रचना कर, उसमें प्रवचन दे मृतप्राय शौरसेनी प्राकृत को पुनर्जीवित कर हजार वर्ष के बाद एक नया कीर्तिमान रच दिया। आपके प्राकृत के विशद् ज्ञान, प्राकृत में समृद्ध साहित्य सृजन को देख श्रवणबेलगोला में आयोजित विद्वत् परिषद व श्री चारूकीर्तिजी भट्टारक स्वामीजी ने आपको 'प्राकृताचार्य' व 'अभिनव नेमिचंद्र' की उपाधियों से विभूषित किया। दक्षिण यात्रा में ही सौदामठ के भट्टारक स्वामीजी ने आपको आचार्य अकलंक देव के अति प्राचीन सिंहासन पर बिठाया? जिस सिंहासन के आभावलय के तेज के कारण कोई साधु जिस सिंहासन पर आसानी से नहीं बैठ पाया, उस पर आप लगातार पाँच से छह घंटे आराम से विराजित रह अपनी चर्या करते रहे। आप अपने पद संचलन में व्यक्तिशः सुधार को महत्व देते रहे। आपके विलक्षण व्यक्तित्व से धर्मस्थल के श्री वीरेंद्र हेगड़ेजी भी अत्यधिक प्रभावित थे। उन्होंने अपनी जनहितकारी व वन्य जीवन सुरक्षा की महती योजनाओं के लिए आपसे लम्बे समय तक विशेष मार्गदर्शन लिया। इस प्रकार कई कीर्तिमान स्थापित करते नव युवाचार्य के रूप में आपका पद संचलन जारी था।

आचार्य श्री जितना आत्मकल्याण के प्रति सजग हैं उतनी ही गहरी सहानुभूति व प्रतिबद्धता उनमें विश्व कल्याण के प्रति भी है। वे सांसारिक दुःखों से दुःखी प्रत्येक जीवात्मा को मुक्तात्मा बनाना चाहते हैं। वे अपने आध्यात्मिक ज्ञान से सभर, जीवंत, प्रभावशाली, यथार्थवादी व शास्त्रोक्त प्रमाणिक प्रवचनों द्वारा 'शव' होते जा रहे चेतन में 'शिवत्व' का प्राण मंत्र फूँक रहे हैं। उनमें युगबोध है, उनके विचार प्रगतिशील वैज्ञानिक व समसामयिक हैं। जड़ता, अन्याय व अनाचार के विरुद्ध आवाज उठाने का उनमें सत्साहस है। तेजी से बदलते सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक, वैज्ञानिक संदर्भों ने आपके वैचारिक चिंतन को नया क्षितिज दिया है। आपके सम्यक जीवन दर्शन तथा व्यापक मानवीय दृष्टिकोण ने आपको जन हृदय के अति निकट ला दिया है। श्रोताओं को समाधिस्थ कर देने वाले आपके प्रवचन आपके प्रभावशाली व्यक्तित्व का आइना है।

सिद्धहस्त साहित्यकार के रूप में आपकी अर्धशतक से भी अधिक हिंदी, प्राकृत, संस्कृत में सृजित रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं। साहित्य की प्रत्येक विधा में लिखा आपका सद्साहित्य जीवन रूपांतरण कर मुक्ति मार्ग प्रशस्त करने वाला है। आप बहुभाषाविद् हैं। आचार्य गुरु के प्रति आपका अनन्य समर्पण इस बात से स्पष्ट होता है कि उनकी अस्वस्थता

के समाचार सुन 2009 से 2010 जून तक की समयावधि में लम्बी व तीव्र (तेज) एक-डेढ़ हजार कि.मी. की पदयात्रा करते हुए आप दो बार उनके दर्शन के लिए जा पहुँचे।

आपके चरित्र के ऐसे अनेकानेक विशिष्ट गुणों तथा हिमतुंग धवल अमल व्यक्तित्व से प्रभावित हो आचार्य गुरु तपस्वी सम्राट श्री सन्मतिसागरजी ने आपको अपना उत्तराधिकारी बनाया। आचार्य श्री के आदेशानुसार (24 दिसंबर 2010, आचार्य श्री की समाधि के पश्चात) 26 दिसंबर 2010 को कुंजवन, उदगाँव तथा इधर मुंबई जहाँ आचार्य श्री सुनीलसागरजी चातुर्मास कर रहे थे, सर्व सहमति से विशाल जनसमूह के बीच दोनों जगह एक साथ इसकी विधिवत घोषणा हुई और आचार्य गुरु सन्मतिसागरजी के आदेशानुसार अंकलीकर परम्परा के चतुर्थ पट्टाचार्य के गौरवपूर्ण पद पर आचार्य श्री सुनीलसागरजी को आसीन किया गया। आपने सहर्ष आचार्य संघ के संपूर्ण संघ के दायित्व की जिम्मेदारी स्वीकार ली। पट्टाचार्य के रूप में आप नेतृत्व का एक अविस्मरणीय 'आदर्श' धार्मिक एवं सामाजिक जीवन के लिए उपस्थित कर रहे हैं। आपके विशाल संघ में साधु, साध्वियाँ, वृद्धजन सहित चतुर्विधसंघ समान रूप से आत्माराधना कर रहे हैं। वर्तमान में आपके संघ में 57 पिच्छीधारी संत हैं जिनमें पुरुष तथा नारी शक्ति की संख्या प्रायः समान है।

कल्याण मार्ग पर प्रवृत्त आचार्य श्री जिनके रोम-रोम से विश्व कल्याण की अजस्त्र धाराएँ फूट रही हैं, वे हमारे जीवन में पड़े स्वार्थ के गड्ढों से हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील व परिग्रह जैसे पंच पापों तथा क्रोध, मान, माया, लोभ चार कषायों का मेला गंदा पानी/ कीचड़ उलीच-उलीच कर बाहर फेंक रहे हैं तथा मन मरूधर की सूखी झीलों में उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग, आकिंचन्य व ब्रह्मचर्य जैसे दस धर्मों का मीठा निर्मल नीर भर, आत्मानंद का शतदल खिलाने की जद्दोजहद करते दिखाई दे रहे हैं। जहाँ एक ओर वे 'सत्वेषु मैत्री' की भावना भर जन हृदय से वैर-वैमनस्य मिटाना चाहते हैं वहीं वे 'खम्मामि सव्वजीवाणं, सव्वे जीवा खमन्तु में' के बोध वाक्य से हमारे हृदयों की राग-द्वेष की गहराती दरारें पाटने के प्रत्यन में लगे हैं। 'सर्वेभवन्तु सुखिनः सर्वेसन्तु निरामयाः' तथा 'परस्परोपग्रहो जीवानाम्' के उनके दृष्टिबोध से विश्व मंगल की कामना परिलक्षित होती है।

इस प्रकार असाधारण व्यक्तित्व के धनी 'महाविज्ञ' आचार्य श्री सुनीलसागरजी अपनी असाधारण साधना से समाजहित के असाधारण अवदानों का अम्बार लगा रहे हैं। हम डंके की चोट कह सकते हैं कि इस अछोर महासागर के किसी भी छोर पर हम जाकर खड़े हो जाएँ, उस बंदरगाह पर संसार सागर से उस पार ले जाने के लिए आध्यात्म के बड़े-बड़े जहाज लंगर डाले खड़े मिलेंगे।

अब मैं अपनी बात पर आती हूँ। अंकलीकर परम्परा के चतुर्थ पट्टाचार्य आचार्य श्री सुनीलसागरजी जैसे दुर्द्धर तपस्वी, अनिकेत संत, निष्काम साधक की जीवन गाथा 'महाविज्ञ' का सृजन करना मेरे लिए चिड़िया का चोंच द्वारा तिनके-तिनके जुटा नीड़ निर्माण करने की प्रक्रिया व कठिन साधना जैसा है। चिड़िया का दृष्टिकोण मजबूत घोसला बनाना है ताकि उसमें उसका परिवार सुरक्षित रह सके, सुंदरता उसका दृष्टिकोण नहीं होता। ठीक वैसे ही मैं अल्पज्ञ उन महाप्रज्ञ की संपूर्ण जीवनगत यहाँ वहाँ बिखरी अलभ्य जानकारियाँ चिड़िया की चोंच सी अपनी अल्प क्षमता द्वारा येन-केन-प्रकारेण बटोरती संचित करती रही। करेला ऊपर से नीम चढ़ा वाली मेरी हालत रही। पहले ही यह कठिनतम व मुश्किल काम, ऊपर से जीवन की विकटतम परिस्थितियाँ, जीवनगत संघर्षों के घमासान चलते संग्राम, दुःखों से विव्हल मन व बरसती आँखों के बीच कृति आकार लेती रही। जीवन की इन विसंगतियों के बीच जन्म लेती इस कृति की सृजन यात्रा में मेरा एकमात्र उद्देश्य उपलब्ध साधनों द्वारा इन महायोगी महापुरुष की पात्रता के अनुकूल उनका चरित्र चित्रण करना और इस तुच्छ से नीड़ (कृति) में इन 'विश्व प्रेरणा पुरुष की दिव्यमूर्ति' स्थापित करना ही मेरा लक्ष्य रह गया, जो युगों-युगों तक 'प्रकाश स्तंभ' बन भटकती मानवता का पथ प्रशस्त करती रहेगी।

इस ऊहापोह में साहित्य सृजन के लिए आवश्यक कला पक्ष, भाव पक्ष, भाषा शैली व अन्य आवश्यक तत्त्वों की

ओर मेरा ध्यान ही नहीं गया। मैं क्षमायाचना पूर्वक स्वीकारती हूँ कि निश्चित ही यह साहित्यिक कृति नहीं रही। प्रकृति पुरुष (बालवत दिगम्बर) आचार्य श्री सुनीलसागरजी का प्राकृतिक जीवन इस कृति में प्राकृतिक रूप से सृजित होता रहा अतः यह कृति कृत्रिमता से कोसों दूर है। कृति का सृजन नैसर्गिक है।

संत की जीवन गाथा लिखने के लिए वैसा संतत्व चाहिए। चर्या चक्रवर्ती के चारित्र चित्रण के लिए वैसा आचरण चाहिए। विरक्ति के अतलान्तों को छूते मर्यादा पुरुषोत्तम के जीवन की मर्यादित वृत्तियों को लिखने किसी त्यागी-व्रती की सी महावृत्ती चाहिए। किंतु उपरोक्त में से मेरे पास एक भी गुण या विशेषता नहीं है तथापि मैंने आचार्य श्री सुनीलसागरजी जैसे महापुरुष की असाध्य जीवन साधना को साधने का बीड़ा उठाया है। हिमालय की कठिन चढ़ाई तो आसान है किंतु संतों भगवंतों के हिमाद्रितुंग उज्ज्वल उतंग चारित्र की धवल भव्यता को छू पाना अत्यंत कठिन काम है। उनके जीवन की अलभ्य जानकारियाँ प्राप्त करना, पाताल फोड़कर पानी निकालने जैसा कठिनतम कार्य है तथापि बिना हताश निराश हुए, कर्तव्य पथ पर दृढ़ रह मैं उनके जीवन से प्राप्त जानकारियों को बूंद-बूंद रूप में सहेज, समेटकर बड़ी सावधानी से 'सृजन कुंभ' भरने की बड़ी लम्बी कड़ी श्रमसाध्य साधना करती रही। मेरी यह छोटी सी नगण्य तुच्छ सी साधना उन तपः पूत साधना के सुमेरू के आगे राइ रत्ती भर भी नहीं है। तथापि उत्साह व उमंग के साथ कृति 'महाविज्ञ' आचार्य श्री सुनीलसागरजी की जीवन यात्रा, सृजन की धरती पर उतरती जीवन गाथा के तानों-बानों में बुनती रही।

कृति के सृजन का मेरा एकमात्र अर्जुनी लक्ष्य यही रहा कि आचार्य श्री के जीवन के श्रेष्ठत्व की संचयिका उनकी 'जीवन गाथा' जन-जन के जीवन की महागाथा बन सके। उनके ज्ञान की सहस्त्रों-सहस्त्र किरणावलियों के प्रकाश में हम उनका एकाध गुण देख उसका अवलम्बन ले अपना मुक्ति पथ प्रशस्त कर सकें। कृति में बिखरे उनके जीवन के अमृत कणों को बटोर-बटोर कर हम अपनी मुक्ति की नींव मजबूत कर सकें। हम उनके उदार, सरल, आदर्श व उज्जवल चारित्र से प्रेरणा लेकर अपना जीवन पथ सरल बना सकें। अपने आपको श्रेष्ठ बनाने का प्रयत्न कर सकें। ये महामनीषी दिक्सूचक यंत्र की तरह हमारे जीवन की दशा व दिशा बदलने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकें। इस कृति में लिपिबद्ध आचार्य श्री के जीवन के प्रेरक प्रसंगों के किरण दीपों से जन-मन के बुझे दीप जल सकें।

'महाविज्ञ' कृति यथा नाम तथा गुण आचार्य श्री सुनीलसागरजी के महानतम गुणों का दिग्दर्शन कराने वाली, उनकी विशिष्टताओं से साक्षात्कार कराने वाला सृजन है। सृजन यात्रा में मैंने पाया कि आचार्य श्री का दिव्य जीवन, हमारे जीवन के संघर्षों, दुःखों व मुश्किल क्षणों की अंधेरी रातों में प्रभात के प्रभाकर की तरह भास्वरायमान हो भोर की लालिमा बिखेरने वाला है। अनुभूत आगम वाणी जब-जब प्रवचनों के माध्यम से उनके अधरों से निसृत होती है, तब हमारी भटकावभरी जिंदगी में मंजिल की तरफ बढ़ने की राह खोज देती है तथा हममें जीवन की भ्रमभरी टेढ़ी-मेढ़ी वीथिकाओं से बाहर निकालने की सूझ-समझ लाती है। उनका विषय विकारों, राग-द्वेष, मोह-माया, पाप-कषायों रहित उज्ज्वल, शुभ्र अमल- विमल स्फटिक सदृश पारदर्शी जीवन, हमें हमारे दूषित व कदाचरणयुत जीवन को साफ-स्वच्छ करने का आइना देता है। सम्यक विचारों व ज्ञान की सम्यकता से आचरित उनका सम्यक् जीवन हम में भी सदाचरणयुत, संस्कारमय, सम्यक् जीवन जीने की लालसा जगाता है।

यहाँ यह बताना आवश्यक है कि आचार्य श्री का जीवनवृत्त सरलता से पढ़ा व समझा जा सके इसलिए इसे 9 भागों में विभाजित कर, जानकारियाँ दी गई हैं जिसका विवरण अलग से दिया जा रहा है।

महापुरुषों के चरित्र चित्रण की तरह आचार्य श्री की जीवन गाथा के लेखन में भी कई युगप्रवर्तक आचार्यों, संतों, विद्वानों, परिजनों, परिचितों, अपरिचितों से संबंधित प्रकरणों व घटनाओं के पुष्प गुम्फित हैं। मैंने अपनी साधारण सी योग्यता, क्षमता व बुद्धि से अपने पूज्यों व अन्यान्य के प्रति अपनी निष्ठा मर्यादा, विनय व आदर समर्पित करने की पूरी कोशिश की है तथापि मेरी अल्पज्ञता व अज्ञानतावश उनकी किसी प्रकार की अवज्ञा या अविनय हुआ हो, पूज्य

प्रेरक पुरुषों का आगमोक्त चित्रण न हो पाया हो, जिनागम की मर्यादा का कहीं भी उल्लंघन हुआ हो, उन सारी त्रुटियों की जिम्मेदारी मेरी है। मैं उन प्रणम्य पूज्यों के पादपद्मों में नत-नत हो अपनी गलतियों के लिए क्षमायाचना करती हूँ। पुनश्च क्षमायाचना सहित हमारे महान आचार्यों, संतों, चतुर्विध आचार्य संघों, गुणीगणों, विद्वानों तथा सुधी पाठकों से विनम्र निवेदन करते हुए उनका अमूल्य आशीर्वाद, उनके सुझाव व मार्गदर्शन चाहूँगी, ताकि मैं अपनी भूलों का सुधार कर सकूँ व दोगुने उत्साह के साथ महान उदात्त पुरुषों का चरित्र चित्रण मेरी लेखनी से निसृत होता रहे।

आचार्य श्री के विराट व्यक्तित्व को कहीं शब्द सीमा में बांधा जा सकता है? कदापि नहीं। उनका विलक्षण तेजस्वी प्रतिभाशाली बचपन, अदम्य उत्साह, जोश के साथ होश, दृढ़ आत्मविश्वास तथा पुष्ट मनोबल वाला यौवन, युग श्रेष्ठ, तपस्वी सम्राट, आचार्य गुरु श्री सन्मतिसागरजी के प्रति समर्पित शिष्यत्व, उनके द्वारा किया गया आगम का गूढ़ गहन ज्ञान प्राप्ति का पुरुषार्थ, उनका आध्यात्म, उनका जीवन दर्शन, जड़ में चेतना फूँक देने वाला चिंतन, उनकी व्यवहार कुशलता, मृदु/मधुर संभाषण, कथनी करनी में एकरूपता, अद्‌भुत वक्तृत्व शैली, आत्मजागृति व जनजागृति लाने वाले धर्मोपदेश/प्रवचन, साहित्य सृजन के माध्यम से हर विचारधारा को ध्यान में रख दिया जाने वाला सम्यक् बोध व मार्गदर्शन, परिषह जय क्षमता व समता तथा कभी हताश-निराश न होने वाली उनकी जीवटता आदि आदि आचार्य श्री के जीवन की ऐसी अविस्मरणीय विशेषताएँ हैं, जो हमारे जेहन में बसी हैं, जिनकी स्मृति मात्र ही हमारी रगों में आत्म कल्याण की विद्युत तरंगों का आवेश पैदा करती रहेगी।

लोकार्पण के पूर्व कथा के लेख को विराम देना मेरी मजबूरी है, पर कथानायक का जीवन सतत प्रवहमान है। यद्यपि मेरी लेखनी थम चुकी है पर विश्व कल्याण के लिए उनका चरण चक्रमण गतिशील है, मानवता के हित में साहित्य सिरजा जा रहा है, अध्ययन-अध्यापन, वाचना द्वारा मुमुक्षुओं की जिज्ञासाएँ शांत हो रही हैं, उन्हें दीक्षाएँ दी जा रही हैं। अजान- आरती, पूजा, प्रार्थना, गुरुशबद वाणी सब कुछ धर्मोपदेश में उनकी वाणी द्वारा अमृत बरस रहा है....

वे जीवन पथ पर अविरल, अनवरत, अथक, अबाध गति से सतत चल रहे हैं, बिना रुके... सत्य की खोज में, मुक्ति की चाहत में, कुंदकुंद का कुंदन बनने, महावीर का महावीरत्व पाने, सन्मति की दी गई मति द्वारा रागी-द्वेषियों की कुमति को सुमति करने... और... और...

यह आचार्यश्री के लोकहितकारी विराट व विलक्षण व्यक्तित्व एवं कृतित्व का ही प्रभाव है कि मात्र एक वर्ष के अंतराल में आचार्यश्री के 44वें अवतरण दिवस पर उनकी जीवन गाथा 'महाविज्ञ' वृहद कृति के द्वितीय संस्करण का प्रकाशन व लोकार्पण हो रहा है। यह मेरे लिए अत्यन्त हर्ष का विषय है।

कृति **'महाविज्ञ'** के लोकार्पण की इस भावविह्वल बेला में मैं कहना चाहूँगी कि इसमें आचार्य श्री सुनीलसागरजी के जीवन का 'महाप्रकाश' भरा है। मेरी सृजन साधना तथा सुधीपाठकों व विद्वत्गणों का इस कृति को पढ़ना तभी सार्थक हो सकेगा जब आचार्य श्री के जीवन का यह 'महाप्रकाश' हमारे मुक्तिमार्ग का 'महाप्रकाश' बन सके। आइये, आत्म कल्याण की दिशा में इन गतिशील मनीषी के साथ हम भी अपने कदम उस 'महाप्रकाश' की प्राप्ति की ओर बढ़ाएँ।

Saroj Shah

सरोज शाह
एफ-132, एम.आई.जी. कॉलोनी
नियर तेजस नर्सिंग होम
क्रिश्चियन एमिनेंट की गली, इंदौर (म.प्र.)
मो. 9425480974, 6355776321, 9537167039

स्थान : इंदौर
दिनांक : 7.10.2012

कृति परिचय

भाग-1 : प्राची से अरुणोदय

प्रथम भाग में विशिष्ट रूप से कथानायक के प्रारंभिक पाँच बिंदुओं पर सृजन केंद्रित किया गया है। (1) पारिवारिक पृष्ठभूमि (2) जन्म पूर्व घटनाएँ (3) जन्म (4) बचपन (5) प्रारंभिक (प्राथमिक) शिक्षा। पारिवारिक पृष्ठभूमि का व्यक्ति के जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ता है। उनके धार्मिक परिवार के उनके परिजन द्वारा सिमरिया (दमोह) में व फिर तिगोड़ा में जिनमंदिर का निर्माण करवाया गया, पंचकल्याणक में गजरथ चलवाया गया व अन्य धार्मिक गतिविधियों में हिस्सा लिया जाता रहा। फलतः पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही इसी धार्मिक आस्था की बुनियाद पर आचार्य श्री सुनीलसागरजी के जीवन मंदिर का भव्य भवन टिका है। गर्भावस्था से लेकर गृहस्थावस्था तक 'सेठजी का मंदिर, अपना मंदिर, मत्थे का मंदिर' शब्द उनके कर्णकुहरों में अमृत घोलते रहे, धार्मिक संस्कारों से उन्हें संस्कारित करते रहे और अंततोगत्वा उन्होंने जीवन को ही मंदिर बना, अपनी आत्मा के परमेश्वर में संयम का सूर्य मंत्र फूँक प्राण प्रतिष्ठित कर दिया/लिया।

गर्भ में दोहले के रूप में माँ के साथ सम्मेदशिखरजी की तीर्थयात्रा की घटना द्वारा आपने सिद्ध कर दिया कि आज जो सिद्धत्व प्राप्ति का महाभियान आपने छेड़ रखा है वह गर्भ से कहो या पिछले जन्मों के साथ लाए संस्कारों से ही छिड़ा अभियान है। इस प्रकार पारिवारिक पृष्ठभूमि, गर्भ, जन्म, बचपन, शिक्षा, उच्च शिक्षा से संबंधित उनके जीवन की सारी घटनाएँ साधारण सी दिखने के बावजूद भी विशिष्ट व असाधारण रही है। पूत के लक्षण पालने में कहावत बचपन से ही उनके चरित्र में चरितार्थ होती रही। पग-पग पर उनके साधारण से दिखने वाले व्यक्तित्व से महानता व विलक्षणताओं के दिग्दर्शन होते रहे। जीवन की टेढ़ी-मेढ़ी वीथिकाओं से होते हुए वे जिधर से भी, जहाँ से भी गुजरे, घर, परिवार, समाज इनकी अप्रतिम विलक्षण मेधा शक्ति तथा संतत्व से भरे सदाचरण का लोहा मानता रहा। बचपन से लेकर युवावस्था तक हमने कभी कहीं उन्हें किसी से लड़ते-झगड़ते, दुर्व्यवहार करते या पापाचार करते नहीं देखा। वे बड़े सुलझे विचारों वाले, उलझनों को सुलझाने वाले, व्यवहारकुशल, सरल चित्त बालक/किशोर रहे।

हमने हर कहीं उन्हें जीवन मूल्यों के सत्व निचोड़ से भरा पाया और अंततः वही सदाचरण का महान आदर्श उन्हें संयम के श्रेष्ठतम पायदान तक ले गया। उनका जीवन बचपन से प्राप्त सुसंस्कारों व सुशिक्षा के तानों-बानों से बुनता चला गया और आज वह संयम, तप, त्याग, ब्रह्मचर्यादि की स्वच्छ, शुभ्र, उज्ज्वल, निर्मल, धवल चदरिया का रूप ले चुका है।

अस्तु, तिगोड़ा (हीरापुर के पास), जिला सागर में 7 अक्टूबर 1977 को श्रीमती मुन्नीदेवीजी व पिताश्री भागचंदजी जैसे धर्मनिष्ठ माता-पिता के घर जन्मी पाँच संतानों में 'संदीप' सबसे बड़े बेटे रहे। वे परिवार में अपने चार अन्य भाई-बहनों क्रमशः संजय, प्रदीप, विनय व बहन अर्चना से हटकर

थे। उनके श्रेष्ठ विचार, अच्छे कार्यों, आत्मविश्वास, साहस व तीक्ष्ण बुद्धि ने स्कूल में उन्हें छात्रों की भीड़ से अलग खड़ा कर दिया। पढ़ने-लिखने में होशियार, खेलकूद में आगे, खाने के शौकीन, घूमने-फिरने में माहिर, परिवार में आज्ञाकारी पुत्र, अच्छे भाई, अच्छे विश्वासपात्र मित्र, पशु-पक्षियों के प्रति दयाभावना से ओतप्रोत हृदय, सबके सहयोगी, अनुशासनप्रिय, मितव्ययी, सलीके पसंद, हित-मित-प्रिय बोलने वाले संदीप बड़े विनयवान थे। जहाँ भी जाते, उनकी हर कहीं प्रशंसा होती। अन्य बच्चों व स्कूल में उनका उदाहरण दिया जाता। बचपन से ही वे सबके रोल मॉडल थे।

कालान्तर में उनके व्यक्तित्व के इन्हीं विशिष्ट गुणों से प्रभावित व अभिभूत हो उन्हें युगसर्जक गुरु तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी ने अपने सैकड़ों शिष्यों में इन कम उम्र युवाचार्य श्री सुनीलसागरजी को अपनी परम्परा का पट्टाचार्य पद दे दिया और युवाचार्य ने अपने कर्तव्य पथ पर आरूढ़ रह सिद्ध कर दिया कि सृजन, विसर्जन माँगता है, निर्वाण अवदान चाहता है, श्रेष्ठता समर्पण, श्रद्धा, आस्था, विवेक व विनय से प्राप्त होती है। शिखर पर पहुँचने के लिए कठिन पुरुषार्थ चाहिए और यह वे आद्योपांत करते रहे।

संदीप बचपन से ही दृढ़ संकल्पी, आत्मविश्वास से भरपूर, साहसी, त्वरित निर्णय लेने में दक्ष तथा परिश्रमी थे। कक्षा 5वीं के 9-10 वर्षीय छात्र संदीप ने किशुनगंज से बाहर शहर के किसी अच्छे विद्यालय में एडमिशन लेने का निर्णय ले लिया व कड़ी मेहनत कर पढ़ाई करने लगे। रात में भी देर तक पढ़ते ताकि 5वीं की परीक्षा में अच्छे से अच्छे अंक मिल सकें व बाहर विद्यालय में उनका एडमिशन हो सके। आजादी के तीस वर्ष बाद भी किशुनगंज में लाइट नहीं थी और संदीप ढिबरी (चिमनी छोटी) के उजाले में देर रात तक पढ़ते थे। विधि की विडम्बना कहो या दुर्भाग्य, पढ़ते-पढ़ते नन्हे बालक संदीप की आँख लग गई, अनजाने में ढिबरी उलट गई व संदीप के कपड़ों में आग लग गई। संदीप पेट व अन्य जगह बुरी तरह जल गए। जलने से उठे फफोलों व घावों से एक पल में संदीप के सपनों का महल ढह गया। एक ओर नन्हें संदीप को असह्य शारीरिक कष्ट व दूसरी ओर आगे बढ़ने के लिए पाँव उठने से पहले ही पाँवों में चक्की के पाट बंध गए। कहाँ तो 5वीं अच्छे अंकों से पास कर 6टी में शहर के स्कूल में एडमिशन लेने की ऊँची मंशा और कहाँ अब 5वीं की ही परीक्षा देने के लाले पड़ गए। जैसे तैसे 5वीं पास की, छटी भी पुनः अच्छे अंकों से पास की। माँ व पिता की अनिच्छा के बावजूद भी जिद्दी संदीप ने आखिर गणेशप्रसाद वर्णी संस्कृत महाविद्यालय मोराजी (सागर) में एडमिशन हासिल कर लिया। सच है ईश्वर उसी की मदद करता है जो स्वयं की मदद करता है अर्थात् परिश्रम करता है। इरादों का पक्का होता है तथा हर संकट से जूझने का माद्दा रखता है और संदीप ये संस्कार गर्भ से अपने साथ लेकर आए थे।

भाग-2 : विरक्ति की नींव

द्वितीय भाग में किस तरह शिक्षण संस्थान में संदीप के जीवन में विरक्ति के बीज पड़ गए, इसका जिक्र है। बाल जीवन की पाठशाला संदीप के जीवन की 'महापाठशाला' बन गई। गणेशप्रसाद वर्णी संस्कृत महाविद्यालय के रूप में उस सरस्वती मंदिर ने संदीप के हृदय को ही मंदिर बना दिया। रूरकेला व भिलाई के कल-कारखानों में जो भी इस्पात ढलता हो पर हमारे देश का असली व जीवंत इस्पात तो वर्णी विद्यालय जैसी शिक्षण संस्थाओं के कक्षा कक्षों में बच्चों के शोर-शराबे के बीच ढल,

इस्पात बनकर बाहर आता है। कालान्तर में वे छात्र अपने इस्पाती कंधों पर धर्म, संस्कृति, समाज व राष्ट्र की जिम्मेदारियाँ हँसते-हँसते उठा लेते हैं। ऐसा ही एक इस्पाती बालक संदीप, पट्टाचार्यश्री सुनीलसागरजी संत रूप में धर्म, संस्कृति, समाज व राष्ट्र के उत्थान की दिशा में 'लोहपुरुष' के रूप में उस विद्यालय के कक्षा कक्षों में ढलने लगा।

कहाँ तो नन्हे संदीप ने भौतिक शिक्षा में बहुत बड़ी डिग्री ले बड़ी नौकरी पाने की चाहत में शहर के इस विद्यालय में प्रवेश लिया था। आध्यात्मिक ज्ञान तो दूर की कौड़ी, उन्हें ठीक से चौबीस तीर्थंकरों के नाम भी याद नहीं थे। कौन जानता है भविष्य के गर्भ में क्या छुपा है? परिस्थितियों ने इस कदर पलटा खाया कि संदीप का भाग्य ही बदल गया और आज वे आध्यात्म जगत के शिखर पुरुष/सिरमौर बन गए।

बड़ा आदमी बनने के सपने लिए संदीप ने वर्णी विद्यालय में कक्षा 7वीं में प्रवेश लिया था किंतु ज्ञानार्जन अभी शुरू हुआ ही था कि कक्षा 8वीं में जाते ही उनका अभिन्न मित्र टेकचंद अकाल काल कवलित हो गया। मित्र वियोग का वज्रप्रहार बालमन सह नहीं पाया। फिर तो उनके अभिन्न मित्र वीरेंद्र कारू, प्रहलाद, प्रिय गुरु पं. सुरेशचंद्रजी शास्त्री तथा और और प्रिय परिचित, अपरिचित जन अकाल क्रूर काल के शिकार होते रहे। अपने अजीजजनों के मृत्यु के वज्रपात की असह्य पीड़ा ने संदीप को तोड़ दिया। संदीप के जीवन का दृष्टिपटल ही बदल दिया। अब तो हर पल संदीप को ऐसा लगने लगा कि 'मृत्यु की तलवार की धार उनके सिर पर भी लटकी है। किसी भी क्षण उनकी भी मृत्यु का बुलावा आ सकता है।' अवसाद की स्थिति तक पहुँचते-पहुँचते ज्ञान मंदिर के शिक्षा संस्कारों ने उन्हें उबार लिया। उनके इस्पाती इरादों को उभार दिया और उन्हें दुरूहतम, परिषहजन्य जैनेश्वरी दीक्षा लेने की दिशा में उत्प्रेरक का काम किया। अपनों के मृत्युबोध ने उनके लिए मृत्युंजयी बनने की राह खोल दी। भाग दो में इन्हीं घटनाओं का वर्णन है।

भाग-3 : गुरु की खोज

व्यक्ति जिस धर्म, जाति या सम्प्रदाय में जन्म लेता है उसके संस्कारों का उस पर तावत जीवन प्रभाव रहता है। जैन कुल में जन्म लेने के कारण संदीप पर जैन धर्म, दर्शन, चिंतन व श्रमण संस्कृति का गहरा प्रभाव पड़ता रहा। इन्हीं संस्कारों ने संदीप की मनोभूमि इतनी अधिक मजबूत व उर्वर कर दी कि संदीप उस पर संयम, त्याग, तपस्या की फसलें लहलहाने उद्दत हो गए और शुरू हो गई एक सद्गुरु की तलाश। वे एक ऐसे आदर्श गुरु की खोज में थे जिनके आदर्श आचरण को जीवन में उतार सकें। उनके आदर्श व आज्ञाओं को शिरोधार्य कर संदीप स्वयं एक आदर्श शिष्य बन सके। उनके अनुसार एक श्रेष्ठ व आदर्श गुरु- युगसर्जक व युग निर्माता होता है। गुरू की चूक समाज व शिष्य दोनों के लिए अभिशाप बन जाती है, जिसका दुष्परिणाम शताब्दियों तक समाज भुगतता रहता है।

संदीप का सोच गुरु चुनने में इतना गहरा व विस्तीर्ण था कि वे अपने चुनाव में जल्दबाजी या लापरवाही करना नहीं चाहते थे। उनका मानना था कि कुम्भकार घड़ा टेढ़ा-मेढ़ा बनने पर दूसरा बना लेगा, इंजीनियर की गलती खराब सड़क बनने पर दूसरी में सुधर जाएगी किंतु गुरु की गलती या गुरु की गलत विचारधारा से शिष्य का जीवन नारकीय बन जाता है और वह समाज में औरों के लिए भी

नारकीय वातावरण पैदा करता रहेगा। गुरु से प्राप्त कुशिक्षा पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होती रह पीढ़ियों के परिवेश, पर्यावरण व वातावरण को दूषित करती रहेगी।

संदीप ने अब तक संस्कारदाता के रूप में ही गुरुगणों को देखा था किंतु अब वे जिन्हें अपने आध्यात्मिक जगत का, मुक्ति मार्ग के पथ प्रदर्शक तथा जन्म जरा मृत्यु का भ्रमण मिटाने वाले गुरु बनाने जा रहे थे। उनका सोच था कि उन गुरु के विचारों में विवेक व उदारता हो, वे ज्ञान का भंडार हों, चर्या के चक्रवर्ती हों। वे फलदार वृक्ष की तरह सघन छायादार हों। उनकी दृष्टि स्नेहिल हो, शिष्यों के प्रति उनके हृदय से वात्सल्य का झरना सतत झरता हो, उनकी संवेदना मोम की तरह मुलायम उष्मा पाते ही पिघलने वाली हो। क्योंकि सदाचरण व सभ्याचरण का पोषक गुरु ही सदाचारी शिष्यों को गढ़ व तराश सकता है।

कैसे इस असाधारण शिष्य को ऐसे असाधारण, विलक्षण गुरु मिले, भाग 3 में शिष्य की गुरु की खोज का खजाना संचित है।

भाग-4 : मुक्ति की प्यास

इस भाग में ब्र. संदीप द्वारा गुरु दर्शन के लिए जाने की अनोखी तैयारी, मातृतुल्य वर्णी विद्यालय को अंतिम विदाई दे, वहाँ से रवाना होने की घटनाएँ व ब्र. संदीप की चिन्तन धारा का प्रवाह है। बरुआसागर में प्रथम गुरु दर्शन पर संदीप को भाव विभोर कर देने वाली विचार वीचिकाओं को दर्शाया गया है। इस भाग में प्रथम दृष्टया गुरु की पारखी निगाहों द्वारा हीरे की पहचान, ब्र. संदीप का गुरु से दीक्षा निवेदन, गुरु द्वारा प्रदत्त स्वीकृति , दीक्षा पूर्व दिये गये मुनि जीवन के आदर्श सूत्र आदि-आदि का वर्णन है।

इसके अलावा प्रथम गुरुदर्शन से लेकर दीक्षा लेने की विभिन्न घटनाओं का आध्यात्मिक परिप्रेक्ष्य में जिक्र है। इस भाग में संदीप के गृहत्याग, पुत्र वियोग में परिवार की पीड़ा का परिदृश्य, दुःख विह्वल माँ का संदीप को सच्चा जीवन बोध देने जैसी महत्वपूर्ण बातें लिपिबद्ध है। पुत्र वियोग में ममतामयी माँ का हृदय फट पड़ता है फिर भी आँसुओं के सैलाब में डूबी माँ पुत्र को संयममय जीवन के प्रति सच्चा कर्तव्य बोध देती है।

इसी भाग में ब्र. संदीप की मुनि दीक्षा व तत्संबंधी चिन्तन धारा का वर्णन है।

भाग-5 : साधना के अलावों में

इस भाग में मुनि श्री सुनीलसागरजी के 20 अप्रैल 1997 से लेकर 25 जनवरी 2007 तक गुरुवर आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के संघानुशासन में रह मुनिचर्या निर्वहन का लेखा-जोखा है। इस भाग में मुनि श्री के गुरु के चरण सान्निध्य में रहकर मुनि धर्म का सूक्ष्म ज्ञान प्राप्त करने से लेकर, गुरुवर से ज्ञानार्जन, संघानुशासन में चर्या, स्वाध्याय, आहार, विहार, निहार, चातुर्मास, पंचकल्याणक, धर्म प्रभावना, समाज सुधार की दिशा में किए गए कार्यों, साहित्य सृजन आदि- आदि की संपूर्ण जानकारी है।

इस भाग में गुरु द्वारा शिष्य को तरासने की प्रक्रिया तथा शिष्य द्वारा गुरु के मार्गदर्शन में कड़ी साधना द्वारा स्वयं के व्यक्तित्व व कृतित्व को निखारने- संवारने की दिशा में किए गए प्रयासों की

जानकारी है। यह भाग गुरु की गुरुतम उदारता व शिष्य के गुरु के प्रति समर्पण व कर्तव्यनिष्ठा का अनुकरणीय आदर्श उदाहरण है।

भाग-6 : कनक से कुन्दन

इस भाग में बताया गया है कि मुनि जीवन की संयममय साधना के दस वर्षों में किस प्रकार मुनि श्री सुनीलसागरजी ने अपने ज्ञान-ध्यान, दर्शन-चिंतन, जप-तप, आचरण- चर्या व सृजन साधना के कड़े पुरुषार्थ द्वारा विष्णु सा विराट व्यक्तित्व खड़ा कर लिया, जिससे प्रभावित हो दूरदृष्टि आचार्य गुरु ने उन्हें आचार्य पद 25 जनवरी 2007 को महाराष्ट्र औरंगाबाद में देकर सोने में सुहागा लगाने व सुगंध भरने का काम एक साथ किया। एक अनुभवी और पारखी गुरु ने आत्मानुशासित युवा ऊर्जा व उत्साह से लबरेज साधक शिष्य को विरक्ति के विहान के गगन में उन्मुक्त उड़ान भरने, पंख दे दिए।

गुरु की आशा के अनुकूल इन युवाचार्य ने मर्यादा के तटबंधों में रह अपने जीवन के सारे निचोड़ का 'सत्व', अपनी कड़ी साधना से चारों ओर बिखेर अपने लिए भी व समाज के लिए सुखद वातावरण निर्मित कर दिया। आचार्य श्री ने इस अवधि में क्षुल्लक सुयोगसागरजी के साथ अडूल, नातेपूते, मुंबई आदि जगह चातुर्मास कर प्रभावोत्पादक धर्म प्रभावना की। अपनी श्रवणबेलगोला की ऐतिहासिक यात्रा में आपने प्राकृत भाषा का डंका बजा एक इतिहास रच दिया। जिनागम की मृतप्राय प्राकृत भाषा को आचार्य कुंदकुंद के बाद युवाचार्य श्री सुनीलसागरजी ने पुनर्जीवित कर दिया। यही नहीं इतिहास में सदा-सदा के लिए अपना नाम अंकित कर दिया।

परम गुरुभक्त आचार्य श्री सुनीलसागरजी गुरु के अस्वस्थ होने की खबर पा एक बार श्रवणबेलगोला से व दूसरी बार नातेपूते से हजारों कि.मी. की पदयात्रा, दिन में 30-30, 35-35 कि.मी. चलकर करते हुए गुरु दर्शन को पहुँचे, उनकी जी भर सेवा की। छाया की तरह उनके साथ लगे रहे और गुरु वात्सल्य के महा कृपापात्र बन गए।

सच है आचार्य श्री सुनीलसागरजी जैसे जिस संत (व्यक्ति) का जीवन सुसंस्कारों की बुनियाद पर खड़ा होता है वही व्यक्ति उत्कृष्ट व उन्नत जीवन जीते हुए 'शांत शिखरों' की ओर बढ़ता है। आचार्य श्री के जीवन की ऐसी ही अनुपम झलकियों का दिग्दर्शन इस भाग में कराने का मेरा प्रयास है।

भाग-7 : पात्र से महापात्र

गुणों की सहस्त्र धाराओं को अपने में सहेजे-समेटे गुणनिधि रत्नाकर श्री सुनीलसागरजी शिखरों की ओर बढ़ रहे थे। इन युवाचार्य की यशकीर्ति केतु दिग् दिगंतों में लहरा रही थी। एक साधारण से 'पात्र' को दो सदियों का प्रतिनिधित्व करने वाले तपस्वी सम्राट आचार्य 'महागुरु' सन्मतिसागरजी ने 'महापात्र' बना दिया था। इन सबसे अनजान, बेखबर युवाचार्य अपने कर्तव्य पथ पर आरूढ़ स्व पर कल्याण में संलग्न थे।

विधि की विडम्बना 24 दिसंबर 2010 सुबह 5.30 बजे अंकलीकर परम्परा के तृतीय पट्टनायक आचार्य श्री सन्मतिसागर गुरुवर की विधिवत् समाधि हो गई। युवाचार्य सुनीलसागरजी पर गुरु वियोग का यह महावज्र प्रहार था- कैसे उन्होंने यह आघात सहा व कैसे उन्हें पट्टाचार्य पद पर सुशोभित कर

गुरु संघ का उत्तरदायित्व सौंपा गया तथा इस पद से संबंधित घटित घटनाएँ कि आचार्य श्री के करीब शताधिक शिष्यों में से आप जैसे युवाचार्य को ही यह पद क्यों व कैसे दिया गया इसकी विस्तार से जानकारी देने का प्रयास इस भाग में किया गया है। और आचार्य श्री सुनीलसागरजी को किन परिस्थितियों में इस अंकलीकर परम्परा के चतुर्थ पट्टाचार्य का पद स्वीकार करना पड़ा, इसका प्रामाणिक उल्लेख है।

भाग-8 : लोक अभ्युदय व आत्मोन्नति की ओर बढ़ते चरण

इस भाग में उनकी जनवरी 2012 से लेकर अभी तक की जीवनचर्या दर्शायी गई है। वे एक विशाल संघ के साथ रहते हैं संघ का संचालन करते हैं। उनके संघ में युवा ब्रह्म. व साधु से लेकर वयोवृद्ध साधु भी अनुकूल वातावरण में धर्माराधना करते हैं। ब्रह्मचारी, क्षुल्लक, एलक व मुनि के साथ-साथ आपके संघ में ब्रह्मचारिणी, क्षुल्लिका व अर्जिका माताजी संघानुशासन में रह आत्माराधना व धर्माराधना कर रहे हैं। आपके संघ में आत्माराधक स्त्री-पुरुषों का समान महत्व व स्थान है।

पट्टाचार्य के रूप में आपने नेतृत्व का अनूठा व अविस्मरणीय पाठ दे धार्मिक एवं सामाजिक जीवन में आदर्श प्रस्तुत किया है। इस भाग में आपके द्वारा समय-समय पर शिष्यों को दी जाने वाली शिक्षा-दीक्षा, समाधि के दृश्य अंकित हैं व इस कालावधि में आपके द्वारा कराए जाने वाले विभिन्न पंचकल्याणक, वेदी प्रतिष्ठा, विशेष विधान, तीर्थोद्धार, जीर्णोद्धार, आहार, विहार, निहार की अनेक घटनाओं, उपसर्ग, अंतराय, अतिशय आदि आदि आपके जीवन की अनेकानेक जानकारियाँ इस भाग में प्रस्तुत है। इसके अलावा यह भी बताया गया है कि विहार में वे कैसे टूटे-फूटे भवनों, खेत-खलिहानों, झोपड़ियों में रात्रि विश्राम कर पेट्रोल पंप तक पर संघ की आहारचर्या संपन्न कराते हैं। इसके अलावा वे कठिन परिषहों के बीच अपनी आत्माराधना, धर्माराधना, स्वाध्याय, वाचना, सामायिक, प्रतिक्रमण नियमानुसार कैसे व कहाँ करते हैं, इतने बड़े संघ की व्यवस्था विहार में व रात्रि विश्राम में कैसे होती है?

इस प्रकार मुक्तिपथ पर अग्रसर आपके लोक अभ्युदय व आध्यात्मिक कार्यों की सुगंध दसों दिशाओं में प्रसरती- पसरती जा रही है। आपके साथ-साथ आपके दीक्षित- शिक्षित संघस्थ संत भी तारा मंडल की तरह चमक रहे हैं। आप अपने भक्तों व संत शिष्यों को आगे बढ़ने व व्यक्तित्व विकास का हर सुअवसर देते रहते हैं। आप मात्र मेधा पुरुष ही नहीं व्यवस्था पुरुष भी हैं, प्रबंधन में निष्णात हैं। संघ में संत से लेकर सेवक पद पर कार्यरत प्रत्येक व्यक्ति का आप यथावत ख्याल रखते हैं। संघ में हर कोई आप से संतुष्ट व खुश है। हमने देखा है कि कभी आपको किसी शिष्य पर खिन्न होने की आवश्यकता नहीं पड़ी। जितने संघ के प्रति आप उदार, सरल व सहिष्णु हैं, वैसे उदाहरण विरले मिलते हैं। संघ का हर सदस्य आप पर आँख मूँदकर विश्वास करता है।

भाग-9 : आचार्य श्री का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

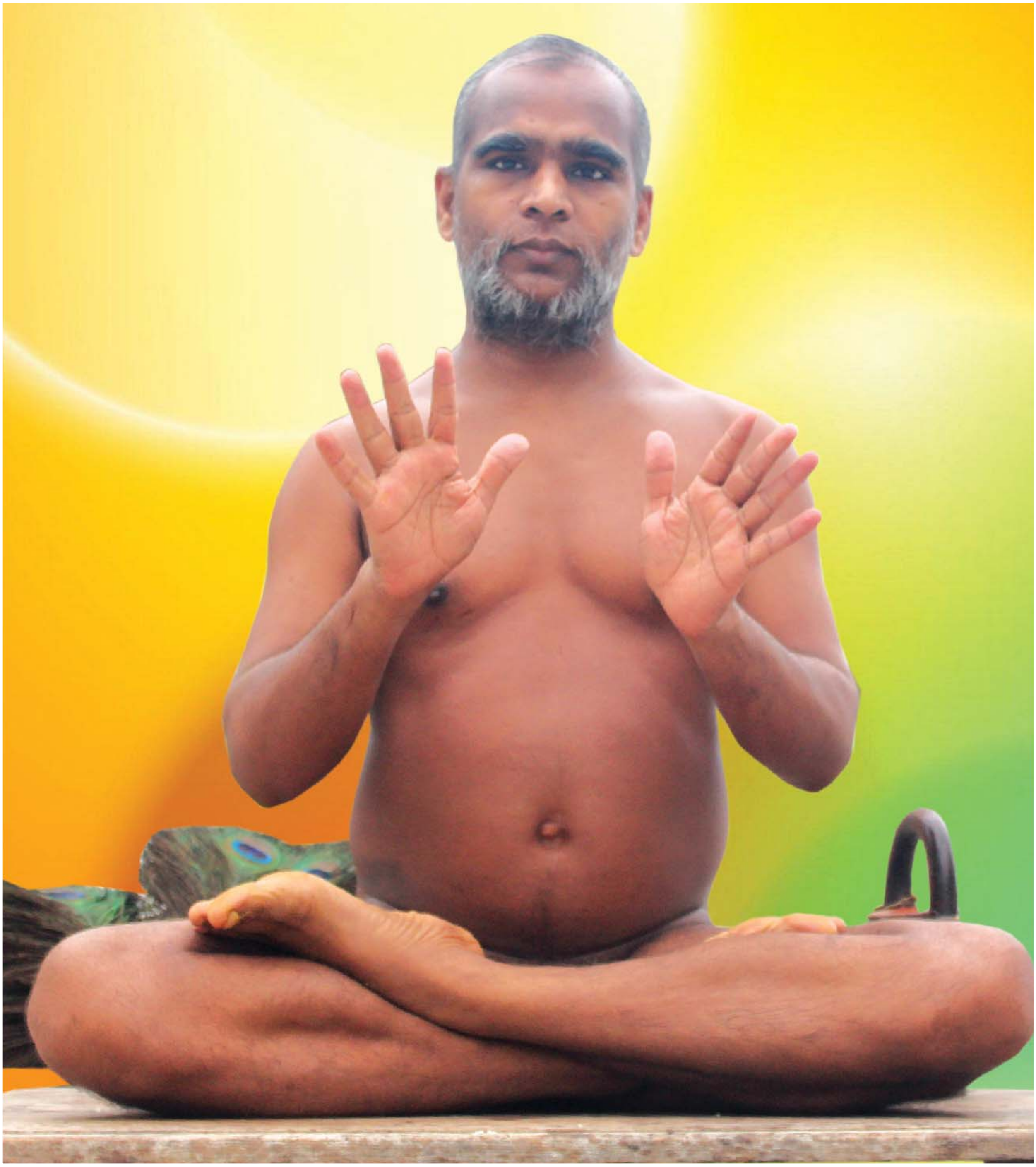
आचार्य श्री सुनीलसागरजी स्वयं जीवन को उत्सव-महोत्सव की तरह जीते हैं और अपने विचारों, चिन्तन, ज्ञान व चर्या द्वारा हमारा जीवन भी उत्सव-महोत्सव में रूपांतरित कर देना चाहते हैं। वे मैदानी नदी की तरह शांत व सरल हैं। प्राणीमात्र के प्रति उनके हृदय में प्रेम व वात्सल्य भरा है। जिसके

हृदय प्राण में प्रेम और वात्सल्य भरा है। तब उसमें क्रोध कहाँ से होगा? उनकी आँखें हमेशा प्राणीमात्र के प्रति करुणा से आर्द्र रहती हैं। उन्होंने विरक्ति से काम-वासनाओं पर विजय प्राप्त कर ली है और आज यह विरक्ति ही उन्हें अपने राम से मिलवाने का मार्ग बन चुकी है। उन्होंने अपने भीतर से मोह-माया, छल-कपट, राग-द्वेष, स्वार्थ आदि के काँटें चुन-चुन कर बाहर फेंक दिये हैं तभी तो उनके भीतर वीतरागता की फूल बगिया महकती रहती है और वे आत्मानंद के खिले पुष्प सबमें बाँट रहे हैं। सबका जीवन सुरभित, पुष्पित कर देना चाहते हैं।

आचार्य श्री का मानना है कि हमारे सारे दुःख-सुख, वियोग-संयोग हमारी वैचारिक मानसिकता का परिणाम है। सुख के क्षण बहुत जल्दी व्यतीत हो जाते हैं लेकिन दुःख भरा एक-एक पल युगों सा लम्बा लगता है जो हमारे जीवन को विषाद व तनाव से भर देता है। आचार्य श्री हमें विषाद से बाहर निकाल हमारे जीवन को उत्सव व आनंद का छंद बना देना चाहते हैं। उनका मानना है कि दुःख/विषाद अंधेरा है, आनंद के उजाले से इसे तोड़ देने पर दुःखों के विषाद के विषैले स्वाद से मुक्ति पाई जा सकती है। उनका दर्शन, उनका चिंतन, उनका ज्ञान, उनकी चर्या, उनका आहार-विहार, उनके बोधि प्रसिक्त प्रवचन आदि-आदि संसारी प्राणियों को दुःखों के सलीबों से उतारकर परमानंद के महारास का आनंद देने वाला है, अनहद नाद का गुंजन कराने वाला है।

ऐसी विलक्षण प्रतिभा के धनी, असाधारण व्यक्तित्व एवं कृतित्व सम्पन्न युगनायक आचार्य श्री का भाग-9 में विभिन्न शीर्षकों के अंतर्गत गुणानुवाद किया गया है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उन्होंने जो क्षैतिजिक ऊँचाइयाँ छुई हैं उन्हीं की एक झलक इस भाग में दिखाई गई है। यह भाग उनकी चारित्रिक विशेषताओं के विविध प्रकार के सुरभित पुष्पों से गुंफित पुष्पमाल है। यथा- (1) व्यक्तित्व एवं कृतित्व, (2) आचार्य श्री के जीवन के महत्वपूर्ण बिंदु, (3) साहित्य सृजन, (4) प्राकृताचार्य (5) गतिपथ पद विहार, (6) प्रवचनों में आचार्य श्री का जीवन दर्शन, (7) सांसारिक दुःख-दर्द, (8) एक महान चिंतक, (9) बोधिवर्धक अमृतकण, (10) सूक्तिसुधा, (11) असाध्य वीणा, (12) सान्निध्य में प्रतिष्ठा महोत्सव, (13) चातुर्मासिक उपलब्धियाँ, (14) वंशावली, (15) उनके द्वारा दीक्षित साधु। संक्षिप्त में यह भाग उनके जीवन का आईना है जिसमें देख हमें अपने प्रतिबिम्ब पर से धूल झाड़ना है।

शुभ आशीर्वाद



धर्म साम्राज्य नायक, परम्पराचार्य, वर्तमान के वर्धमान

आचार्य श्री सुनीलसागरजी महाराज

परम्पराचार्य



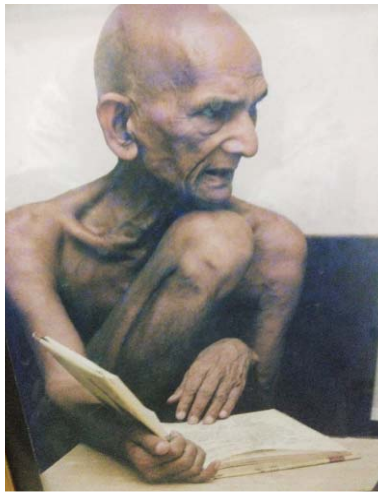
मुनिकुंजर आचार्यश्री आदिसागरजी (अंकलीकर) ससंघ



आचार्यश्री आदिसागरजी (अंकलीकर) सांगली निवासी श्री भोंदे एवं श्री निटवे को शास्त्र समझाते हुए।



सांगली में आचार्यश्री आदिसागरजी एवं आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी श्रावक भरमप्पा लक्ष्मणराव आरवाड़े एवं उनकी पत्नी के साथ



आचार्यश्री सन्मतिसागरजी अध्ययनरत।

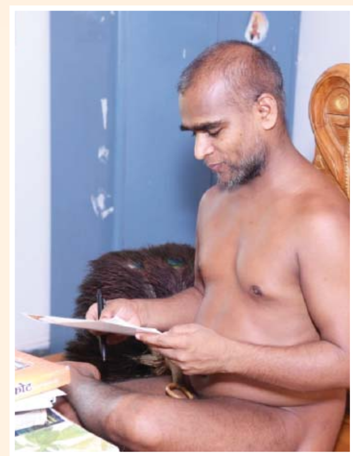


समाधिस्थ आचार्यश्री सन्मतिसागरजी महाराज

आचार्यश्री की विभिन्न मुद्राएँ



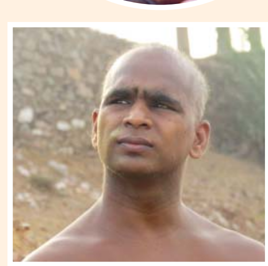










पारिवारिक पृष्ठभूमि


पिता श्री भागचंदजी एवं माता श्रीमती मुन्नीदेवीजी

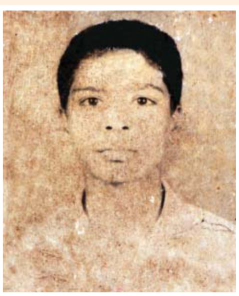

अपनी माता के साथ बालक संदीप


तिगोड़ा का घर


इस कमरे में हुआ आचार्यश्री का जन्म


तिगोड़ा मदरसा में लिया प्रारंभिक अक्षर ज्ञान


भाई-बहनों के साथ बालक संदीप


बालक संदीप


तिगोड़ा का वह तालाब जहाँ बचपन में बालक संदीप डूब गए थे


पड़ोसी का घर जहाँ संदीप ज्यादा रहते थे


भाई संजय का परिवार


भाई प्रदीप का परिवार


ब्र. विनय भैया


आचार्यश्री के गृहस्थ जीवन के बहन-बहनोई


इस पेड़ के नीचे खेलते थे


घर जहाँ बालक संदीप का बचपन बीता


इस घर में आचार्यश्री ने ब्रह्मचर्य व्रत लिया

वर्णी गुरुकुल (सागर)





वर्णी विद्यालय मोराजी



प्राचार्य पं. ज्ञानचंदजी ने पढ़ाया



वर्णी विद्यालय मोराजी



कार्यालय



प्रार्थना सभा हॉल





पुस्तकालय जहाँ अधिकांश समय व्यतीत होता था



अध्ययन कक्ष जहाँ पढ़ाई करते थे





शांतिकुटी जहाँ आचार्यश्री अकेले ही अध्ययन करते थे



वह कमरा जहाँ आचार्यश्री रहा करते थे



पुराना छात्रावास तोड़कर नया भवन बनाया गया

संदीप से सुनीलसागर तक



ब्रह्मचारी अवस्था में

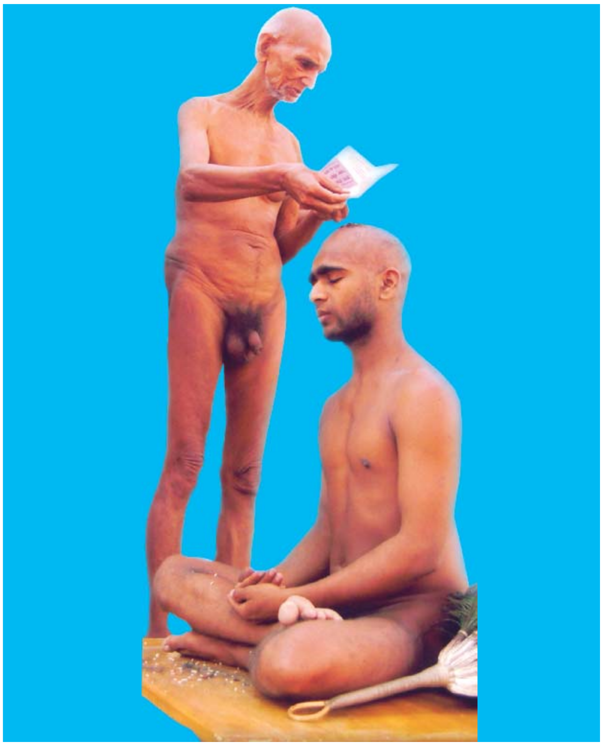




बरुआसागर में मुनि दीक्षा



औरंगाबाद में आचार्य पद की क्रिया करते गुरुदेव



औरंगाबाद में आचार्य पद की क्रिया

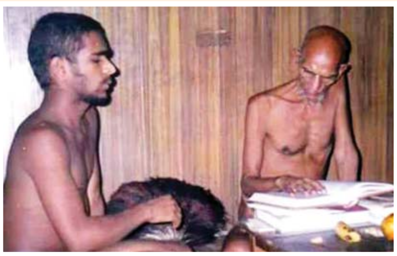
विभिन्न मुद्राओं में गुरु-शिष्य



आचार्यश्री के साथ पहला विहार डाकण में



आहार प्रत्याख्यान



गुरुदेव के साथ शंका-समाधान





गुरुदेव सन्मतिसागरजी के साथ महत्वपूर्ण विचार-विमर्श करते आचार्य सुनीलसागरजी



बीमारी में गुरुदेव के साथ विहार में







गुरु के केशलोच करते सुनीलसागरजी





गुरुदेव सन्मतिसागरजी के साथ विभिन्न स्थानों पर विहार करते हुए सुनीलसागरजी



कुंजवन में आदिसागरजी की चरण छत्री पर

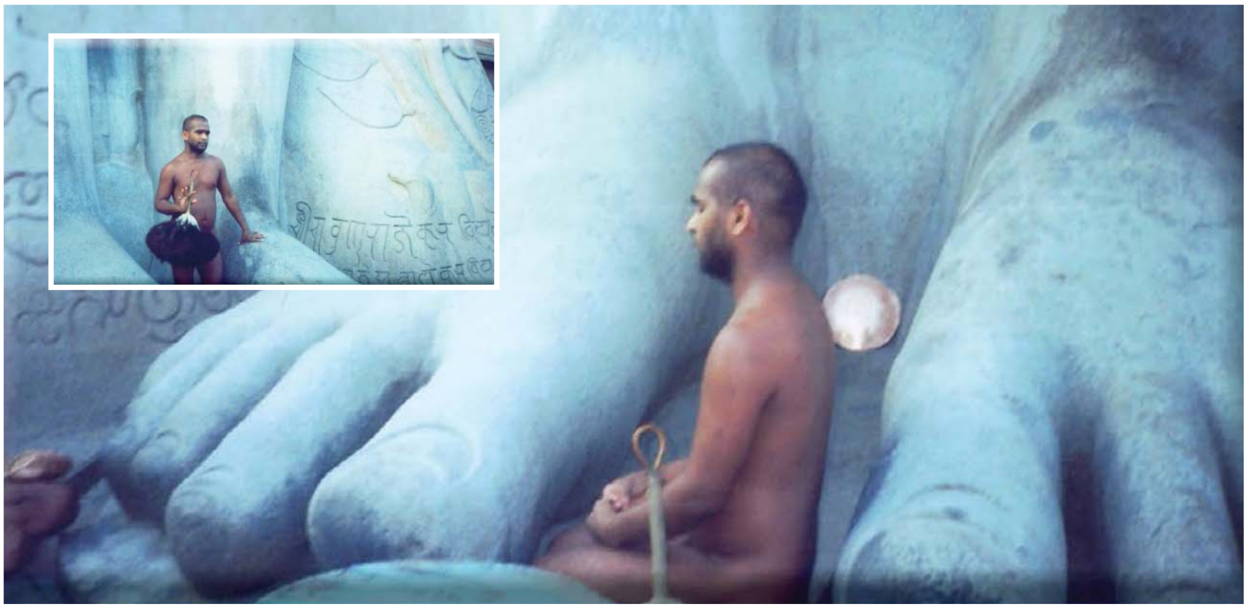


स्वाध्याय के क्षण



गुरुवर के साथ

दक्षिण भारत के तीर्थ दर्शन



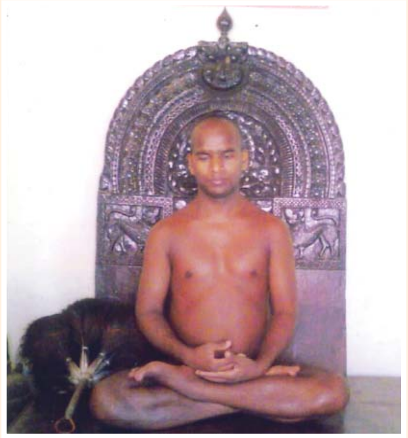
गोम्मटेश बाहुबली के चरणों में ध्यानमग्न



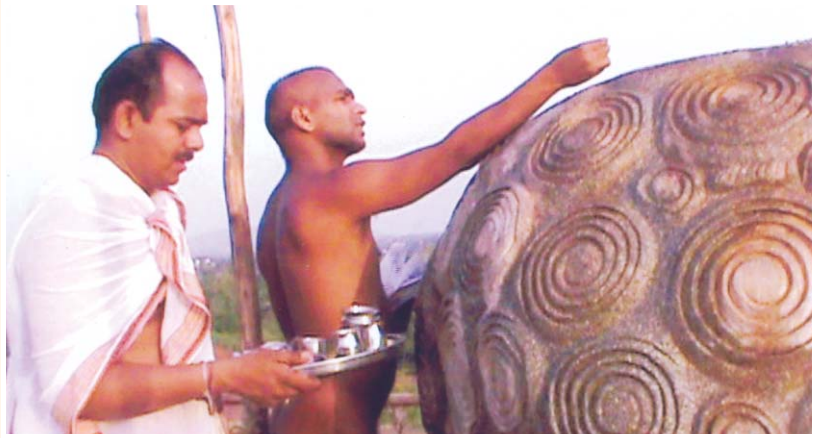
सोलापुर में आयोजित डॉक्टर्स सम्मेलन में आचार्यश्री सुनीलसागरजी की पुस्तक का विमोचन करते डॉ. प्रदीप नांदगाँवकर, पं. विद्युल्लता शहा, डॉ. कुर्डूकर, डॉ. सुजाता मेहता, डॉ. पाटिल, डॉ. मिलिन्द शहा



श्रवणबेलगोला में प्राकृत के विविध आयाम पर आयोजित विद्वत् गोष्ठी में आचार्यश्री सुनीलसागरजी, भट्टारक चारुकीर्तिजी एवं अन्य



सौंदा मठ में अकलंक पीठ पर विराजित आचार्यश्री



कुंजवन उदगाँव में अनन्तवीर्य भगवान के संस्कार करते हुए आचार्यश्री, डॉ. संदीप गाँधी लासुर्णे

आचार्यश्री सुनीलसागरजी 'महाविज्ञ' के विलक्षण व्यक्तित्व पर गुणीजनों के विचार

■ **''आगे अब तुमको ही सब कुछ संभालना है''** मुंबई चातुर्मास 2010 के लिए विहार से पूर्व कुंजवन में आशीर्वाद देते हुए गुरु तपस्वी सम्राट आचार्यश्री सन्मतिसागरजी ने कहा। उनकी यह वाणी सत्य सिद्ध हुई।

■ सम्मेदशिखरजी यात्रा के दौरान निवाड़ी में तपस्वी सम्राट से चर्चारत प्रथम गणिनी आर्यिका विजयमती माताजी ने आचार्यश्री सन्मतिसागरजी के पास बैठे युवा नवदीक्षित मुनि श्री सुनीलसागरजी से कुछ प्रश्न पूछे, जिनके असाधारण उत्तर सुन माताजी आचार्य से कह बैठीं- **''यह हीरा आपको कहाँ से प्राप्त हो गया? मुनि सुनीलसागरजी बहुत ऊँचाई पर पहुँचेंगे। अंकलीकर परंपरा को बहुत आगे ले जाएँगे।''** जब भी वे पत्र लिखती, युवा मुनि सुनीलसागरजी को भी नमोस्तु लिखती।

■ चतुर्थ पट्टाचार्य बनने के पूर्व आचार्यश्री सूर्यसागरजी आचार्यश्री सुनीलसागरजी के चरणों में गिरकर नमस्कार करने लगे। तब आचार्यश्री ने उन्हें ऊपर उठाते हुए कहा- ''अरे आप तो पद में हमसे बड़े हैं। आप हमें क्यों नमस्कार कर रहे हैं?'' तब आचार्यश्री सूर्यसागरजी ने कहा- **''आप इतने योग्य पात्र हैं कि कालान्तर में पट्टाचार्य का पद तो आपको ही प्रदान किया जाएगा, इसलिए मैं अभी से आपको नमस्कार करता हूँ।''**

■ **''युवा आचार्य श्री सुनीलसागरजी महाराज प्राकृत व आगम के प्रकांड विद्वान तथा आचार्यश्री सन्मतिसागरजी के योग्यतम शिष्य हैं। मुमुक्षुओं के गढ़ शोलापुर में ही 2008 का चातुर्मास करवाना।''** भट्टारक चारुकीर्ति स्वामी श्रवणबेलगोला ने शोलापुरवासियों को पत्र लिखा जबकि उन्होंने अब तक आचार्यश्री के दर्शन भी नहीं किये थे।

■ **''आचार्यश्री सुनीलसागरजी प्राकृत भाषा के ज्ञानी प्राकृताचार्य तो हैं ही, वे गोमटेश अट्ठगं रचने से अभिनव नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती भी हैं।''** -चारुकीर्ति भट्टारक स्वामी, श्रवणबेलगोला (8.2.2009)

■ **''तपस्वी सम्राट ने हीरा चुना है।''** -आचार्यश्री वर्धमानसागरजी

■ **''तपस्वी सम्राट ने दूरदर्शितापूर्ण निर्णय लेकर अंकलीकर परम्परा के चतुर्थ पट्टाधीश के रूप में आचार्य सुनीलसागरजी को चुना है।''** -आचार्यश्री पुष्पदंतसागरजी, पुष्पगिरि प्रणेता

■ **''आचार्य सुनीलसागरजी की साधना, आराधना, प्रभावना प्रशंसनीय है।''** -आचार्य विरागसागरजी

■ गिरनार गौरव आचार्य नेमिसागरजी ने गिरनार में चतुर्थ पट्टाचार्य आचार्यश्री सुनीलसागरजी के मंगल पदार्पण पर कहा- **''प्राकृताचार्य सुनीलसागरजी के रूप में कुंदकुंदाचार्य मानो इस गिरनार की सिद्ध भूमि पर पुनः अवतरित हो गए। उद्‌भट विद्वान, विलक्षण प्रतिभा के धनी, जैन धर्म के मार्तण्ड आचार्य सुनीलसागरजी इस युग के कुंदकुंदाचार्य हैं।''**

■ **''आचार्यश्री सुनीलसागरजी जिनशासन की शान हैं।''** -संत शिवाचार्य, प्रतापगढ़

■ **''दिगंबर जैन संत आचार्यश्री सुनीलसागरजी की तपस्या कठोर है। वे ऐसे साधक हैं जो अपने अनुशासित आदर्श आचरण से समाज व राष्ट्र की समस्याओं का व्यावहारिक समाधान उपस्थित करते हैं। यदि उनकी तरह देश सत्य, अहिंसा आदि अणुव्रतों को ईमानदारी से जीवन में अपना लें तो गरीबी, बेकारी, भुखमरी व असमानता जैसी समस्याएँ नगण्य रह जाएँगी।''** गुजरात के मुख्यमंत्री श्री विजय रूपाणी ने आचार्यश्री को राष्ट्र गौरव का सम्मान प्रदान करते हुए कहा।

■ **''गुरुदेव की शिक्षा-दीक्षा-प्रतिभा से बहुत प्रभावित हूँ। जिन्हें देश की प्राचीन भाषा प्राकृत भाषा का ज्ञान है, अनेक विद्याओं में सिद्धहस्त हैं।''** राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री अशोक गेहलोत

■ **''आचार्यश्री सुनीलसागरजी चालीस वर्ष की उम्र है। मुझे उतने वर्ष राजनीति में हो गए। कठोर तप-त्याग और साधना के बल पर जो श्रेष्ठता व सम्मान उन्होंने पाया है, उसका शतांश भी मैं नहीं पा सका। श्रावकाचारमय जीवन के लिए उनसे आशीर्वाद चाहता हूँ।''** -गुलाबचंद कटारिया, गृहमंत्री, राजस्थान (7.10.2017)

अनुक्रमणिका

मंगलाचरण

ॐ

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः

(1)

मुख 'सरोज', 'सरोज' नैन
जिनके 'सरोज' दो हाथ
पारस पद सरोज पर
नत-नत है 'सरोज' का माथ।
विघन हरण मंगल कर्ता
तुम हो प्रभु पारसनाथ।
कारज हो पूरा 'सरोज' का
अरज त्रिलोकी नाथ।।

(2)

कहाँ? बूँद की क्षमता जो
सागर की थाह नाप पाई।
कहाँ? धूल कण की ऋजुता
नभ की वितस्तता है पाई।
महावीर पथ संचालक
'सु' 'नील' 'सु' 'सागर' लहराया
अर्चन आरती को उस रवि की
भक्ति दीप जला लाई।।

(3)

गुण के पारावार गुरु का
पार न कोई पा पाया।
सात समन्दर की मसि की
गुण गीत न कोई लिख पाया।।
फिर भी गुरु गुण गाथा लिखने
की हिम्मत की है मैंने
भक्ति शक्ति दो प्रभु पथ में
रहे सदा उजास छाया।

भाग-1

प्राची से अरुणोदय

प्राची से अरुणोदय

रात्रि का अंतिम प्रहर। वह माँ सुखद नींद में सोई थी कि अचानक दिपदिपाते दिव्य प्रकाशपुंज में नहा गई। ज्योति के उस महापुंज से अमृत झर रहा था, जिसमें वह तरबतर। ऐसी दिव्य ज्योतिप्रभा जिसके बारे में उसने न कभी सुना था न ही आज जो अद्‌भुत, अनुपम, विस्मयकारी घटना अनुभूत हो रही थी न ही उसे सुनाया जा सकता था- शब्दातीत, वर्णनातीत मात्र अनुभव जन्य। उसका मनमानस व हृदय महानंदित था। पोर-पोर पुलकित था, शरीर का अणु-अणु उस ज्योति पुंज से सराबोर था, रोम-रोम रोमांचित। ज्योति पर्व के उन दुर्लभ क्षणों में वह माँ आनंदालोक के महा सरोवर में डूबती चली गई। उस माँ के आभावलय से उठी वह तीव्र ज्योति प्रभा क्षण भर में पूरे कमरे को दीप्तिमान करती उस माँ के ही शरीर में प्रवेश करती अनुपम छटा बिखेर विलीन हो गई। उस अलौकिक आलोक पुंज की दिव्य शक्ति वह माँ सहन न कर सकी और कुछ क्षणों के लिए अपनी सुधबुध खो बैठी। जैसे ही वह इस अलौकिक दिव्य आभावलय से बाहर निकली- हतप्रभ हो उठ बैठी। उस तीव्र प्रकाशपुंज से उसकी आँखें चौंधिया गई थी। अभी भी उसके रोम-रोम से ज्योति के सुधा सोते झर रहे थे। अवर्णनीय, अकल्पनीय आनंद के मारे कंठ अवरुद्ध था, शब्द मौन थे, पर वह दिव्यानंद अभी भी उसके हृदय में जस का तस भरा था। जैसे-तैसे पति को जगाया। अनुभूत आनंद (आप बीती) बताना चाहा, पर एक अंश भी नहीं सुना पाई। पर पति भी अभी-अभी विलीन हुए उस दिव्य प्रकाश के आभावलय में ही थे अतः आनंदातिरेक से रोमांचित हो उठे। उन्हें भावी भविष्य का आभास होने लगा, पर वे चुप थे।

माह बीता न बीता कि उस माँ को पता चला कि वह 'माँ' बनने वाली है, क्षण का सैकड़ावाँ भाग कहो, वह एक बार पुनः उस दिव्य प्रकाश से दीप्त हो उठी। वह रोमांचित हो गई। नित्य नियमानुसर देवदर्शन, पूजन करने जिनालय गई। पूजा-पाठ कर पुनः प्रभु चरणों में माथा टेक अपने जीवन की इस सुखद घड़ी के लिए धन्यवाद दिया, अपनी भावी संतान के लिए प्रभु से शुभ मंगल कामनाएँ कीं। मंदिरजी से घर लौटते वक्त रास्ते भर वह सोचती रही कि उस रात उस दिव्य प्रकाश पुंज के रूप में किसी दिव्यात्मा ने ही संतान रूप में उसके शरीर में प्रवेश किया है।

गर्भस्थ शिशु का ही ऐसा अप्रतिम पुण्य प्रताप था कि गर्भधारण करने के पश्चात भी बिना किसी कष्ट के वह माँ सतत स्वाभाविक जीवन द्विगुणित ऊर्जा व उत्साह के साथ जी रही थी।

गर्भधारण किए अभी उस माँ का 5वाँ महीना पूर्ण हुआ भी न था कि उन्हें शाश्वततीर्थ सिद्धभूमि सम्मेदशिखरजी के दर्शन करने जाने का दोहला पड़ा। ऐसा दोहला जो कभी किसी ने सुना न था। वह महातीर्थ सम्मेदशिखरजी के दर्शन करने जाने के लिए इतनी व्याकुल हो उठी कि अपनी इच्छा पति को बताई। पति ने लाख समझाया कि गर्भावस्था की इस हालत में उस महातीर्थ पर जाना उचित नहीं। पहली बात इतनी लंबी यात्रा, दूसरा इतने ऊँचे व लम्बे पहाड़ की कठिनतम चढ़ाई- साधारणतः मेरे जैसे हट्टे-कट्टे इंसान को नानी-दादी याद दिला देती है, तब तुम ऐसी अवस्था में...। थोड़ा सब्र करो। बच्चा हो जाने दो फिर बच्चे को लेकर हम बड़े आनंद से यात्रा करेंगे। तुम्हें गर्भावस्था की इस हालत में तीर्थदर्शन तो दूर वहाँ तक का सफर कराने में भी मुझे डर लगता है। पर वह माँ न मानी। बोली, ''मेरे पेट में पलने वाले बच्चे को तो अभी ही सम्मेदशिखरजी के दर्शन करना है। उसकी व्यग्रता बढ़ने के कारण ही मेरी आकुलता-व्याकुलता बढ़ती जा रही है।''

अंततः तिया (त्रिया) हठ के आगे पति ने सारे हथियार डाल दिए। घर के बड़े बुजुर्गों के विरोध के बावजूद भी पति ने पत्नी का दोहला पूर्ण करने, उसे सम्मेदशिखरजी की यात्रा करवाई। गर्भ में बच्चा होने के बावजूद भी उस माँ ने उपवासी (बिना खाए-पीए) रहकर, पैदल ही पहाड़ की वंदना की। पत्नी के पहाड़ चढ़ाई के हर कदम पर पति की साँस ऊपर की ऊपर व नीचे की नीचे रह जाती और उस माँ की निराकुल आनंदमय यात्रा चलती रही। पूरे पर्वत पर चढ़ते व वंदना करते वक्त वह माँ यही सोचती रही कि यह मेरी नहीं, मेरे गर्भस्थ शिशु की श्री सम्मेदशिखर पहाड़ (तीर्थ) की वंदना है। इस पावन भूमि के कण-कण में बसे अनंत सिद्धों को उस अजन्मे शिशु का नमन हो।

उस महातेजस्वी गर्भस्थ शिशु का ही प्रभाव समझो, उस माँ ने सकुशल यात्रित होते हुए बड़े भक्ति भाव व भद्र परिणामों से हर टोंक की वंदना की। सच कहें तो माँ के निमित्त से शाश्वत सिद्ध भूमि महातीर्थ सम्मेदशिखर की वंदना कर उस अजन्मे शिशु ने जाने- अनजाने सिद्धत्व प्राप्ति का अपना लक्ष्य बता दिया था/जग जाहिर कर दिया था और माँ की उस अजन्मे बच्चे के निमित्त से दुर्लभ से दुर्लभतम सम्मेदशिखरजी की वंदना हो गई। अद्‌भुत संयोग था।

अंततोगत्वा जिस पुत्ररत्न को उस माँ ने जन्म दिया था, 3-4 वर्ष की उम्र में पिता व नानी के साथ नैनागिरि सिद्ध क्षेत्र के दर्शन कर वहाँ विराजित आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज के दर्शन कर व आहार चर्या देख, 'मुझे बड़े महाराज' बनना है कि जिद में उसने अपने सारे कपड़े उतरवा दिए, पिच्छी, कमंडल व अंजुरी बाँध उनकी तरह आहार करने की जिद में रोते हुए भूमि पर लोट लगा दी।

भविष्य वर्तमान के गवाक्षों से झांक रहा था। गर्भावस्था में सम्मेदशिखर महातीर्थ की वंदना करने तथा विश्ववंदनीय प.पू. आचार्य श्री विद्यासागरजी जैसा बनने की जिद करने वाला वह विलक्षण व असाधारण बालक है संदीप। आगे चलकर आज वे विश्व विभूति अंकलीकर परंपरा के चतुर्थ पट्टाधीश प.पू. आचार्य श्री सुनीलसागरजी के रूप में जन हृदय के सम्राट बने, अपने आत्मकल्याण के साथ-साथ विश्वकल्याण कर रहे हैं।

यह गाथा है सिद्धत्व प्राप्ति की चाह में संसार तज संन्यस्त जीवन धारण कर, उन महागुरु प.पू. आचार्य श्री विद्यासागरजी की राह पर चल पड़ने वाले योगीश्वर, महाविज्ञ, पट्टाचार्य श्रीसुनीलसागरजी के जीवन की। प्रकृति की सुरम्य गोद में बसे तिगोड़ा गाँव के अनमोल 'लाल' की।

जिस धरती पर विश्व के इस विराट व्यक्तित्व ने जन्म लिया, उस गाँव की धरा पर विधाता ने अपना सारा प्राकृतिक, सौंदर्य पहले से ही न्योछावर कर दिया। मचलती, थिरकती, मनमोहिनी हवाएँ, कल-कल कर बहती वेगवती बान्दा नदी, नदी के तटों पर हरे-भरे घने पेड़-पौधे, पेड़ों पर पंछियों की चहचहाहट, दूर क्षितिज से झांकता बाल रवि, अरुणोदय की रतनारि लालिमा, इस लालिमा में नहाए गाँव के तीन-तीन विशाल जिनालय, जिनके ऊँचे-ऊँचे शिखर कलशों पर लहराती धर्म ध्वजाएँ- उस तीर्थ स्वरूप गाँव की पावनता की कथा/कहानी दूर से ही बता रही थी और बता रही थी कि इस गाँव की माटी में लोट-पोट कर पला-बढ़ा यहाँ का एक नौनिहाल यौवन की दहलीज पर कदम धरते ही विरक्ति के महासरोवर में डूब गया, गहरे उतरता गया, उतरता गया और जब वह बाहर निकला तो उसके दोनों हाथों में 'रत्नत्रय' के अमूल्य हीरे-जवाहरात, पिच्छी और कमंडल थे।

तिगोड़ा के रोपे गए बाल संस्कारों, किशुनगंज की कर्मण्यशीलता, गणेशप्रसाद वर्णी संस्कृत विद्यालय, मोराजी (सागर) में किए गए कठोर पुरुषार्थ व विरक्ति के पल्लवित पुष्पित बीज वपन से वह युवा छात्र संदीप दिगम्बरत्व की कठिन साधना की राह पर अग्रसर हो, आज कहाँ से कहाँ पहुँच गया है।

कब? क्यों? कैसे? किन कारणों से? ऐसे अनेक प्रश्नों के उत्तर की खोज में चलते हैं। तो आइये...

'संदीप से पट्टाचार्य सुनीलसागर के लोह व्यक्तित्व में ढलने तक की यात्रापथ के विभिन्न पड़ावों की ओर...

पारिवारिक पृष्ठभूमि

श्रमण संस्कृति के शिखर पुरुष, अंकलीकर परम्परा के चतुर्थ युवा पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी के जीवन के इस भव्य भवन के निर्माण में अतीत के इतिहास की महत्वपूर्ण भूमिका है जिसकी नींव संस्कारों के ईंट गारे से चुनी हुई है।

सेठ परिवार के पितृपुरुष सबसुख सिंघई सिमरिया, सागर (म.प्र.) के मूल निवासी, गोलापूरब जैन समाज से थे। आप चार भाई थे जो सिमरिया में ही रहते थे। आपका परिवार बड़ा धार्मिक था जिसने सिमरिया में जिन मंदिर का निर्माण करवाया था। शादी के पश्चात धर्म-ध्यान करते हुए आप लोग अच्छी तरह जीवन यापन कर रहे थे। आप लोग गाँव के सबसे बड़े साहूकार थे। आपकी महाजनी में गाँव भर का लेन-देन, खेती-किसानी व सारे कामकाज चलते थे। चारों भाई नीति व ईमानदारी से अपने-अपने व्यवसाय करते, पूरे गाँव पर धाक व रुतबा जमाए थे।

गाँव में इस महाजन परिवार के चारों भाइयों की उन्नति, प्रतिष्ठा व संपन्नता गाँव के मुखिया राय साहब को अच्छी न लगी। वे बिना वजह इन भाइयों को मुखिया के नाते प्रताड़ित करने लगे। विवाद इतना बढ़ गया और वे लोग इतने परेशान हो गए कि पुश्तैनी व्यवसाय व प्रॉपर्टी छोड़ एक भाई गंज, छतरपुर (म.प्र.), दूसरा भाई भगवां, तीसरे सबसुख सिंघई अपनी ससुराल तिगोड़ा जाकर रहने लगे। सबके मन में अपनी प्रॉपर्टी व व्यवसाय छोड़ने का जितना दुःख नहीं था उससे कई गुना दुःख अपने पुरखों द्वारा निर्मित जिन मंदिर छोड़ने का था।

तीनों भाइयों द्वारा सिमरिया छोड़ते ही गाँव में लेन-देन व खेती-बाड़ी तथा धंधे में खरीदी-बिक्री में परेशानियाँ आने लगीं। गाँव आर्थिक मुसीबत में फँसता चला गया। विवाद के चलते सबसुखजी का एक चौथा भाई जो सिमरिया में ही रहता था, ने भी गाँव छोड़ने की तैयारी कर ली।

बात सुन मुखिया राय साहब दौड़े-दौड़े आए व मंदिर की देखरेख व गाँव वालों के हित में उनसे सिमरिया में ही रुकने का आग्रह किया। सारे विवाद व दुश्मनी भूल दोस्ती का हाथ बढ़ाकर उन्हें वहीं रोक लिया। परिवार सहित मंदिर की देखरेख करते हुए वे जीविका चलाते रहे। वहीं के होकर रह गए।

तिगोड़ा (हीरापुर), जिला सागर में रहने वाले भाई सबसुख सिंघई के सात पुत्र थे। उनके सबसे बड़े बेटे का नाम हीरालाल व छोटे का नाम ठाकुरदास था। नाम के अनुरूप उनका काम था। संवत् 1829 में हीरालालजी व ठाकुरदासजी सहित सभी भाइयों ने मिलकर तिगोड़ा में भगवान आदिनाथ का भव्य, सुंदर व आकर्षक मंदिर बनवाया था, जो बड़ा मंदिर कहलाता है। प्रकृति की सुरम्य गोद में बसा पहाड़ियों के बीच वन-जंगलों से आच्छादित, प्राकृतिक वातावरण से भरपूर, तिगोड़ा गाँव किसी तीर्थक्षेत्र सा प्रतीत होता है। सचमुच वर्तमान में पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी की जन्मस्थली होने के कारण यह महातीर्थ बन गया। ठाकुरदासजी मोतीलालजी के दादाजी थे तथा मोतीलालजी हमारे कथानायक संदीप (वर्तमान में पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी) के दादाजी थे। ठाकुरदासजी को सिमरिया में अपने पुरखों द्वारा बनवाए मंदिर को छोड़ने का दुःख हमेशा सालता रहता था। अतः तिगोड़ा में उस परम्परा के निर्वहन तथा मन की शांति व संतोष के लिए ठाकुरदासजी ने अपने भाई हीरालालजी की सहायता से इस आदिनाथ जिनालय का निर्माण करवाया और अपने नाम के अनुरूप 'ठकुरसुहाती' जुमले को सार्थक व सही सिद्ध कर दिया। इस बड़े मंदिर की प्राण प्रतिष्ठा पर उन्होंने बड़े उत्सव व ठाट-बाट के साथ गजरथ चलवाया जिस कारण आपके परिवार को सेठ की उपाधि दी गई। यह उपाधि समाज द्वारा दी जाती है। तब से आपके परिवार के सदस्य सेठ परिवार के नाम से जाने जाते हैं। तिगोड़ा में आज भी हीरालालजी के माथे का मंदिर है जो सेठ के मंदिर के नाम से जाना जाता है। इसके अलावा वहाँ तीन बड़े मंदिर और हैं। उस समय वहाँ की आबादी 1500 थी तथा वहाँ करीब 20 जैन परिवार के 200 सदस्य थे। आज भी हैं।

दो साल बाद गंज (जहाँ एक और भाई रहते थे) में भी गजरथ महोत्सव संपन्न हुआ और इसमें भी सेठ परिवार की

अहम् भूमिका रही। धार्मिक प्रवृत्ति का सेठ परिवार काफी सम्पन्न व धनाढ्य तथा दानी था। वे लोग धर्म क्षेत्र में मुक्त हस्त दान दिया करते थे। तिगोड़ा में उनकी अच्छी-खासी प्रतिष्ठा थी।

ठाकुरदासजी के पाँच पुत्र थे 1. भूरेलाल, 2. नवल, 3. कमल 4. रामप्रसाद, 5. रामलाल। रामलालजी ठाकुरदासजी के सबसे छोटे बेटे थे। रामलालजी के भी छह बेटे 1. मोतीलाल, 2. प्यारेलाल, 3. मोहनलाल, 4. वीरेन्द्र कुमार, 5. स्वरूपचंद्र व 6. हलकूलाल थे।

रामलालजी के बड़े पुत्र मोतीलालजी का विवाह भगवां के फौजदार बालचंद्र की बहन बेटीबाई के साथ संपन्न हुआ। मोतीलालजी के तीन पुत्र व दो पुत्रियाँ 1. छक्कीलाल 2. गुलाबचंद्र, 3. भागचंद, पुत्रियाँ 1. ममताबाई, 2. शीलाबाई हुईं।

आचार्यश्री की जन्मभूमि तिगोड़ा : एक नजर

आचार्यश्री की जीवन गाथा लिखने के सिलसिले में मुझे तिगोड़ा उनकी जन्मभूमि के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। यहाँ मुझे उनके परिवार व उनके बारे में ढेर सी बातें ज्ञात हुईं, उनमें से कुछ प्रमुख जानकारियों पर यहाँ एक नजर डालते हैं।

मैं कोई इतिहासकार नहीं हूँ, न ही मैं तिगोड़ा का इतिहास लिख रही हूँ। किसी संत-महात्मा या महापुरुष के जन्म लेने से उनकी जन्मभूमि भी इतिहास प्रसिद्ध हो जाया करती है। यही सोचकर मैं पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी की इस जीवनगाथा 'महाविज्ञ' में तिगोड़ा का इतिहास तो नहीं अपितु उस क्षेत्र की संक्षिप्त जानकारी व आचार्यश्री के रईस जमींदार घराने की कुछ विशेषताएँ जो मुझे प्राप्त हो सकीं, उन्हें देना आवश्यक समझती हूँ। संभवतः भविष्य में ये जानकारियाँ उनके जीवन के ऐतिहासिक दस्तावेज के लिए प्रमाण-रूप हों।

वर्तमान में प्रकृति की सुरम्य गोद में वनाच्छादित पहाड़ियों के बीच अवस्थित तिगोड़ा म.प्र. के सागर जिले के हीरापुर से 4 कि.मी. दूर एक छोटा सा बड़ा मनोरम कस्बा है। जैसा कि तिगोड़ा दर्शन के अवसर पर आचार्यश्री के गृहस्थ जीवन के भाई डॉ. संजय व अन्य परिजनों ने बताया कि अब से 60-70 बरस पूर्व तक तिगोड़ा में दिगंबर जैन श्रावकों के काफी घर थे। आचार्यश्री के गृहस्थ जीवन के दादाजी व परदादाजी काफी संपन्न व जमींदार थे तथा उनका परिवार न सिर्फ तिगोड़ा अपितु दूर-दूर तक सेठजी के नाम से जाना जाता था। उनके (संदीप, आचार्यश्री) के पुरखों के पास करीब 600-700 एकड़ जमीन थी जिस पर खेती होती थी, जिससे कितने ही परिवारों के पेट पलते थे या यों कहें, घर चलते थे। तिगोड़ा में इस संपन्न परिवार द्वारा बनाया गया भव्य जिन मंदिर आज भी सेठ परिवार व तिगोड़ा की समृद्धि की कहानी कहता है। उनके यहाँ के बने पीतल के बड़े-बड़े बर्तन अन्य जगहों के साथ दमोह की दरबारीलाल किशोरीलाल फर्म को जाते थे। दमोह में आज भी यह फर्म है।

राजाओं के शासनकाल में आजादी से पूर्व तिगोड़ा तीन रियासतों सागर, बिजावर व पन्ना की सीमा पर बसा होने के कारण बहुत बड़ा व्यापारिक केन्द्र रहा। राजाओं की सेनाओं का भी आना-जाना व आस-पास पड़ाव हुआ करता था। व्यापारिक केन्द्र होने के कारण हर रियासत से लोग यहाँ आकर बस जाते थे। इसके अलावा आवागमन के साधनों के अभाव में भी यहाँ की कच्चे लोहे की व डोलामाइट व बॉक्साइट की खदानों के कारण भी तिगोड़ा समृद्ध था। संदीप के दादाजी व भागचंदजी के दादाजी का पीतल के बर्तन बनाने का बहुत बड़ा कारोबार था। तिगोड़ा में लौह अयस्क व अन्य खदानें तथा घना जंगल होने के कारण वहाँ लोहे का सामान, हथियार व लकड़ी का सामान बनाने वाले एक से बढ़कर एक कारीगर थे।

सेठ परिवार की करीब 100-150 एकड़ जमीन खदान क्षेत्र में होने से शासन ने अधिग्रहीत कर ली। करीब सौ

एकड़ जमीन विकास कार्यों में चली गई व इतनी ही जमीन फॉरेस्ट विभाग में चली गई। इसके बाद भी परिवार के पास अच्छी-खासी जमीन बची थी। परिवार के दानी व दयालु लोग गाँव के जरूरतमंदों को खेती-किसानी के लिए जमीन बिना लिखा-पढ़ी के दे देते थे जिनसे न उन्होंने कभी अपनी जमीन माँगी न ही लोगों ने लौटाने की मनसा रखी। इस तरह संदीप के जन्म तक उनके दादाजी मोतीलालजी के पास 130-135 एकड़ जमीन ही रह गई। उदार हृदय मोतीलालजी इसमें से भी जरूरतमंदों को जब-तब जमीन दे दिया करते थे।

समय ने करवट बदली। तिगोड़ा की समृद्धि ढलान पर आ गई। राजाओं का शासन व रियासतें आजादी के बाद समाप्त हो गईं। राजाओं के आपसी युद्ध समाप्त होने से सेनाओं की आवाजाही बंद हो गई। धीरे-धीरे रियासतों के लोगों का आना-जाना भी रुक गया। व्यापार-व्यवसाय को काफी झटका लगा। लोगों के सामने रोजी-रोटी का सवाल खड़ा हो गया और तिगोड़ा से हर वर्ग के लोगों का पलायन शुरू हो गया। सेठ परिवार के लोग भी सागर, पूना, छतरपुर आदि चले गए। मोतीलालजी के साथ छोटे बेटे भागचंदजी (आचार्य श्री संदीप के गृहस्थ जीवन के पिताजी) पुश्तैनी व्यापार संभालते थे। समय बदल गया था। गाँव में बड़ी खींचातानी चलती थी। पर भागचंदजी दबंगता से मालगुजारी, खेती-किसानी व बर्तन के व्यवसाय में पिताजी का हाथ बँटाते थे।

जमीन दूर-दूर व जंगलों के बीच होने के कारण भागचंदजी सारी जमीन की जुताई-बुवाई नहीं करवा पाते थे। फिर भी 60-65 एकड़ जमीन से फसलें लेते ही थे। बैलों, अनाज आदि के भंडारण का काम मुन्नीजी (संदीप की माताजी) कर पति व ससुर के व्यवसाय में हाथ बँटती थी। बैलों को चारा-पानी व अन्य गाय-ढोरों की देखभाल मुन्नीदेवी ही करती थीं। बाड़े में गाय-भैंसों का दूध दुहने में भी कभी वे कोताही नहीं करती, न ही जी चुरातीं। इतना बड़ा परिवार व इतनी सारी गाय-भैंसें व बैलों का काम निपटाते हुए जरा सी भी फुर्सत नहीं मिलती थी। मुन्नीजी की हाइट कम थी व उनके बैल अच्छे मोटे-तगड़े व काफी हाइट के थे। बैलों के गले में रस्सी बाँधने के लिए उनके हाथ नहीं पहुँचते थे, बैल उनके सामने अपना सिर नीचा कर देते और वे बैलों के गले में रस्सी डाल खूँटे से बाँध देती। ऐसी अन्य कई घटनाएँ भी मुन्नीजी व भागचंदजी के बारे में पता चली।

इसी बीच संदीप का जन्म हो चुका था। वे 3-4 साल के होने आए थे व घर के सामने बड़े बच्चों के साथ स्कूल जिसे दादाजी मदरसा कहते थे, जाने लगे थे। पूत के लक्षण पालने में- संदीप की प्रतिभा के कायल गुरुजी ने पिता भागचंदजी व दादाजी मोतीलालजी को संदीप की अच्छी शिक्षा पर ध्यान देने की बात कही। भागचंदजी ने संदीप व अपनी अन्य संतानों के शैक्षणिक भविष्य के लिए कड़ा कदम उठाया व परिवार सहित किशुनगंज चले गए। तब तक तिगोड़ा से कई जैन-अजैन परिवार पलायन कर चुके थे। आज की स्थिति में तिगोड़ा में मात्र 20-22 जैन परिवार ही रहते हैं जो वहाँ के 3-4 भव्य जैन मंदिरों की सार संभार करते हैं। मुन्नीजी व भागचन्दजी अपने बैलों व गाय-भैंसों से बहुत स्नेह रखते थे। उनके एक बैल की मृत्यु हो गई। दोनों को काफी दुःख हुआ। बैल के बिना उन्हें अच्छा नहीं लगता था, जैसा पिताजी भागचंदजी ने बताया- बैल की मृत्यु भी उनके शीघ्र तिगोड़ा छोड़ने का एक कारण था।

कालान्तर में उन्हीं संदीप की कठोर साधना व श्रम ने उन्हें अंकलीकर परंपरा के चतुर्थ पट्टाचार्य पद पर सुशोभित कर दिया। पट्टाचार्य पदारोहण के वक्त वे 30 पिच्छीधारी साधु-साध्वियों के युवा संघ नायक रहे व आज वे विशाल संघ का नेतृत्व कर रहे हैं।

जन्मभूमि के दर्शन का रोमांच

मेरा धन्य भाग्य कि मैं तिगोड़ा आचार्यश्री की पावन जन्मभूमि पर थी। तिगोड़ा, जिसे मैं तीर्थ ही कहूँगी, कि उसी घर में और उसी जगह मैं खड़ी थी जैसा कि संदीप के जन्म की चश्मदीद गवाह, आचार्यश्री के गृहस्थ जीवन की चाची ने बताया। उन्होंने इस जगह खड़े होकर बताया कि संदीप का जन्म इसी जगह हुआ था। मैं तो उस पुश्तैनी घर को बाहर से देखते ही पुलकित हो गई जो एक महान संत के अतीत व जन्म की गौरवगाथा सुना रहा था और जब मैं संदीप की उस ठेठ जन्मभूमि पर, उसी कमरे में, वहीं खड़ी थी जिस पवित्र भूमि की गोद में शिशु संदीप अवतरित हुए थे। मैं रोमांचित थी, हर्ष विभोर थी। पल भर को मेरी पलकें मूँद गई- प्रसव पीड़िता माँ मुन्नीदेवी जी मेरे मस्तिष्क पटल पर उभर आई और अगले क्षण सद्यजात रुई के फाहे से सुकोमल शिशु संदीप की भाव मूर्ति मेरे मस्तिष्क पटल से जेहन में उतर आई। क्षण भर में जिस अलौकिक शक्ति के मैंने दर्शन किये वह शब्दातीत है। मैं लाख कोशिशों के बावजूद भी उस दिव्यानुभूति को साझा नहीं कर सकती, पर हाँ मैं दृढ़ विश्वास के साथ कह सकती हूँ कि जो उस परम पावन भूमि पर मुझे आभास-अनुभव हुआ वह असाधारण व अलौकिक था। मेरी खुशी उस भूमि पर खड़े होते उस वक्त कई-कई गुना बढ़ गई थी जिस वक्त मेरे साथ उनकी जन्म की साक्षी, उनकी चाची स्वयं खड़ी थी। तिगोड़ा में संदीप को माँ से ज्यादा प्यार इन्हीं चाची का मिलता रहा है जिन्होंने उस वक्त मुझे सद्यजात शिशु रूप संदीप के साक्षात दर्शन करा दिये।

संदीप की बातें बताते-बताते उनकी आँखों की कोरें गीली हो जाती थीं। साड़ी के पल्लू के छोर से आँखें पोंछती पुनः संदीप व मुन्नीदेवी की विशेषताओं का वे बखान करने लग जाती पर उल्लेखनीय बात है कि इस कालावधि में उन्होंने शिशु संदीप के लिए 'महाराजजी' सम्मानसूचक शब्द के सम्बोधन का ही प्रयोग किया। उन्होंने एक बार भी संदीप शब्द का सम्बोधन नहीं किया। माँ मुन्नीदेवी के प्रति भी उनके मन में प्रगाढ़ आदर व स्नेह देखने को मिला। ऐसी है उस परिवार की आचार्यश्री के प्रति श्रद्धा, भक्ति, आदर व सम्मान की भावना। काश! इन क्षणों हमारे साथ 'दिव्यमणि' माँ मुन्नीदेवी होती। और मेरा मस्तिष्क महान युगपुरुष की जननी माँ मुन्नीदेवी के चरणों में नत-नत हो गया जिन्होंने युग को इतना बड़ा महात्मा दिया।

माता-पिता परिचय

मोतीलालजी के छोटे बेटे भागचंदजी (जो हमारे कथा नायक के गृहस्थ जीवन के पिता हैं) का जन्म संवत् 2007, सन् 1952 में तिगोड़ा में हुआ। इनमें धार्मिक संस्कार कूट-कूट कर भरे थे। उनका विवाह सन् 1971 में दरगुआ निवासी श्री कपूरचंदजी की सुपुत्री शांतिदेवी के साथ संपन्न हुआ। किंतु विवाह के मात्र 4 वर्ष बाद सितंबर सन् 1975 में शांतिदेवी का अचानक निधन हो गया।

भागचंदजी का द्वितीय विवाह 14 फरवरी (वैलेंटाइन डे आज का) 1976 को किशुनगंज, जिला दमोह के धार्मिक व प्रतिष्ठित परिवार के श्री पन्नालालजी की सुसंस्कारित सुयोग्य व धार्मिक प्रवृत्ति की पुत्री मुन्नीदेवी से संपन्न हुआ। मुन्नीदेवी के पिता का नाम पन्नालाल तथा माता का नाम केसरबाई था। केसरबाई की पाँच बेटियाँ व एक बेटा था। इस प्रकार भागचंदजी का स्वयं का व ससुराल पक्ष दोनों तरफ से भरा-पूरा परिवार था।

मुन्नीदेवी का पाँच बहनों में दूसरा नंबर था। वह बड़ी सुशील, सुसंस्कारित, होनहार, होशियार, सरल स्वभावी व धार्मिक प्रवृत्ति की युवती थी। व्यवहार कुशल व मृदुभाषी मुन्नीदेवी थोड़े ही दिनों में सबके दिलों पर राज करने लगीं। ससुराल में वह सबकी चहेती थी। पति भी उन्हें बहुत चाहते थे। छल-प्रपंच मायाचारी से दूर मुन्नीदेवी के हृदय में बड़ों के प्रति सम्मान व सेवा भावना तथा छोटों के प्रति वात्सल्य कूट-कूट कर भरा था। हर कार्य में दक्ष मुन्नीदेवी ने शीघ्र

ही समाज व नाते-रिश्तेदारों में अपनी गहरी पैठ जमा ली। जहाँ भी जाती, मुन्नीदेवी अपने गुणों की सुरभि छोड़ आती।

भागचंदजी व मुन्नीदेवी जीवनरथ के दो पहिये बन गृहस्थी का रथ बड़े उत्साह व प्रेम के साथ खींचे चले जा रहे थे। भागचंदजी मुन्नीदेवी के निश्छल स्नेह में अपना अतीत भूल चुके थे। चूँकि पति-पत्नी दोनों धार्मिक प्रवृत्ति के थे अतः प्रातः नित्य क्रियाओं से निपट सुबह देवदर्शन, पूजा-पाठ, स्वाध्याय आदि करके घर लौटते व अपने-अपने कार्यों में लग जाते। दोनों अपने-अपने भाग्य को सराहते, जिनेन्द्र देव को धन्यवाद देते कि उनकी कृपा से उन्हें इतना अच्छा जीवन साथी मिला।

अवतरण पूर्व

मुन्नीदेवी मुँह अंधेरे उठ गई थी। उन्हें बड़ा सुखद अनुभव हो रहा था। रोज की तरह आज भी प्रभाकर प्रभात लेकर आया था जो प्रकृति के माध्यम से भागचंद्रजी व मुन्नीदेवी के आंगन में प्रभातिया गा रहा था। दिशाएँ चन्दन अबीर लुटा रहीं थीं। हवाओं का आंचल लहरा रहा था। मुन्नीदेवी को अनायास आभास होने लगा कि उनके जीवन में, घर में बहार आ गई है। खुशियों के मेले लग गए हैं। चेहरा आनंद के आभामंडल से आभासित हो गया। मन के आंगन में दिवाली के दीप जल उठे। हृदय मधुर भावों से भर गया, चाहत की फसलें लहरा उठी। उत्साह से भरी मुन्नीदेवी अपनी खुशियाँ समेटे समेट नहीं पा रही थीं।

दो देह एक प्राण भागचंदजी के मन आँखों से जीवन संगिनी की उत्साह भरी यह जीवन चर्या छुप न सकी। उनका मन भी आज उत्फुल्ल था। अज्ञात खुशियों की हिलोरें उठ रही थीं। उन्होंने पत्नी की आँखों में अनोखी चमक देखी। पास जाकर धीरे से कहा- ''आज मेरा मन अज्ञात खुशी से भर उठा है। लगता है तुम भी रोज से आज कुछ अलग उत्साहित व कुछ अधिक प्रसन्न दिखाई दे रही हो।'' पति की मधुर वाणी सुन मुन्नीदेवी शरमा गईं। बोली- ''नहीं तो...'' पर आगे कुछ नहीं बोल पाईं। बात टालने की कोशिश की पर पति के प्रेमपूर्ण आग्रह को न ठुकरा पाई। उन्होंने धीमे से लजाते हुए मीठी वाणी में कहा- ''आप पिता बनने वाले हैं।'' सुनते ही भागचंदजी का मन-आंगन खुशियों की हजारों हजार जाई, जूही, चम्पा, चमेली के फूलों से भर गया। उस महक से कुछ क्षणों के लिए तो वे मदहोश से हो गए। वैसी ही खुशियों के सैलाब मुन्नीदेवी के हृदय से भी उमड़ रहे थे। दोनों ने एक-दूजे की खुशी एक-दूसरे की आँखों में बिन कहे ही पढ़, सुन, समझ ली।

नित्य कर्म से निवृत्त हो वे उत्साह व श्रद्धा से भरे जिन मंदिर चल पड़े। धीरे-धीरे यह बात परिवार में फैल गई। मुन्नीदेवी के शारीरिक लक्षणों को देख घर की बुजुर्ग महिलाओं ने उन्हें बताया कि अब उन्हें संभलकर रहना, चलना, फिरना है। वे माँ बनने वाली हैं। उनका मन खुशियों से बाँसों उछलने लगा क्योंकि नारी की पूर्णता मातृत्व में ही है।

मंदिर जा मुन्नीदेवी ने बड़ी श्रद्धा व भक्ति भाव से देव-दर्शन, पूजा-अर्चना की। भंडार में अपनी शक्ति अनुसार गुप्त दान किया। मुन्नीदेवी हाथ जोड़कर अपनी भावी संतान के लिए भगवान से शुभ मनोकामनाएँ लिए मन ही मन प्रभु के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए प्रार्थना कर कहने लगी, ''प्रभु! तू कुछ देता नहीं है किन्तु मेरी कोख में जिस प्रथम संतान का आगमन हुआ है वह तेरी कृपा का ही सुफल है। प्रभु यह सुफल सदा तेरे चरणों में चढ़ा रहे, अर्पित रहे और हमारे जीवन का महाफल बने।'' उनकी प्रार्थना का तात्पर्य था कि उनकी संतान नेक एवं विवेकी बने।

कौन जानता था कि मुन्नीदेवी के द्वारा जाने-अनजाने की गई वह प्रार्थना सुफल महाफल बन आज सत्य हो गई। आज उनकी वह प्रथम संतान बेटा संदीप मुनि श्री सुनीलसागरजी बन सिर्फ उनके परिवार का ही गौरव नहीं अपितु समूचे समाज, श्रमण संस्कृति, देश व विश्व के लिए महाफल बन अपनी संयम साधना से अहिंसा व शांति की पताकाएँ फहरा रहा है।

घर में प्रथम संतान के आगमन की बात सुन उसके जन्म लेने तक व बाद में भी घर में खुशी का अलग ही माहौल बना रहता। किन्तु भागचंदजी व मुन्नीदेवी कुछ दिव्य व तेजोमय वातावरण महसूस करने लगे। जैसे-जैसे उनका गर्भ बढ़ता जा रहा था, वे अधिक धार्मिक होती जा रही थीं। उनके विचार पवित्र व परिणाम निर्मल होते जा रहे थे। आपसी राग-द्वेष, निंदा-बुराई, झगड़े-झंझट उन्हें जरा भी नहीं सुहाते। वे पहले से ही सरल व भद्र परिणामी थीं। अपने व्यवहार, विवेक, समझ, सूझ व बुद्धि कौशल से परिवार व समाज में उनका एक नई बहू होने के बावजूद भी विशेष आदर था। हो भी क्यों न। वे असाधारण माँ, भावी विश्व पुरुष महान संत को जन्म देने वाली युग जननी थी। उनके घर-आंगन में खुशियों की रत्न वृष्टि हो रही थी।

इधर प्रथम संतान के आगमन की मनो (पुराना वजन का तौल) खुशी भागचंदजी के मन में समेटे नहीं सिमटती थी। पहली पत्नी तो बिना संतान सुख दिये चल बसी थी, किन्तु इस दूसरी पत्नी ने उनकी चाहत पूरी कर दी। इधर दीप्त आभा कान्ति युत भ्रूण के पेट में वृद्धिगत होते हुए माँ मुन्नी के मुख की आभा कान्ति द्विगुणित होती जा रही थी। एक दिन उनकी हमउम्र मंदिर में मिलने वाली सहेली ने उनसे पूछ ही लिया- ''क्यों भई! तुम्हारी खुशखबरी सही है कि नहीं। तुम्हें देखकर तो ऐसा नहीं लगता कि तुम माँ बनने वाली हो। मेरा तो मेरे इस आने वाले बच्चे ने नाक में दम कर रखा है। न खाने देता है, न पीने देता है, न ही सोने देता है। मुझे तो ऐसा लगता कि कब नौ महीने पूरे हों।''

मुन्नीजी ने मुस्कुराते हुए कहा कि ''मेरा बच्चा तो पेट में से ही माँ का बड़ा ख्याल रखता है। मेरी दिनचर्या पहले जैसी ही सामान्य है। जरा भी तकलीफ नहीं है। हाँ, एक बात है, मन मंदिर व धार्मिक कार्यों में ज्यादा लगता है।''

दोनों ही जल्दी में थी। घर की ओर चल दीं।

किसी आभा पुरुष की आभा कान्ति उसके धरती पर अवतरित होने से पूर्व ही सृष्टि के कण-कण से आभासित होने लगती है। प्रकृति के रोम-रोम से पुलक प्रकट होती रहती है। भविष्य के गर्भ में छुपे उस महामानव की महानता के चिह्न अक्सर समय की रेत पर उभरते-मिटते रहते हैं। लेकिन हमारे चर्मचक्षु उन्हें पहचानने में असमर्थ रहते हैं पर शुभ संकेत तो दे ही जाते हैं।

इस महान आत्मा ने माँ के गर्भ से ही माँ की इच्छाओं, अभिलाषाओं, अभिरुचियों, मनोवृत्तियों व मनोभावों के माध्यम से अपने आने की पृष्ठभूमि तैयार कर दी थी। गर्भवास में उसने माँ को जरा सी भी तकलीफ नहीं दी। गर्भधारण से ही माँ अनेक शुभ स्वप्न देखा करती। स्वप्न में कभी वे तीर्थ वंदना करती तो कभी मुनियों को आहार देती। कभी पूजा करती तो कभी स्वाध्याय। सोचती, दिन भर धार्मिक चर्या व चर्चा करती रहती व सुनती रहती हूँ इसलिए मुझे ऐसे स्वप्न आते रहते हैं। संयोग भी उन्हें ऐसे ही मिलते रहते थे।

5-6 माह की गर्भावस्था में मुन्नीदेवी को सम्मेदशिखरजी की यात्रा की प्रबल भावना जागृत हो गई। सोते-जागते उन पर शाश्वत तीर्थधाम सम्मेदशिखरजी की यात्रा की धुन सवार थी। उनका किसी काम में मन नहीं लगता। मनोदशा ऐसी होती जा रही थी कि उनका खाना-पीना छूटने लगा। घर के लोगों ने सोचा था कि गर्भ के छठवे महीने ऐसी स्थिति में उन्हें सम्मेदशिखरजी की यात्रा करवाना किसी खतरे से कम नहीं है। बच्चे के जन्म के बाद यात्रा करवा देंगे। मुन्नीदेवी ने अपने पति भागचंदजी से कहा- ''मुझे सम्मेदशिखरजी की वंदना किये बिना एक पल भी चैन नहीं है। मुझे तो यात्रा करनी है।''

भागचंदजी ने समय की नजाकत समझते हुए उन्हें रात को सो जाने व सुबह उठकर चर्चा करने की बात कही। और वे सो गए। सुबह चार बजे के करीब मुन्नीदेवी अचानक उठकर बैठ गईं व पति को जगाकर कहने लगी- ''देखो मेरा बच्चा पेट में से मुझे बार-बार कह रहा है मुझे सम्मेदशिखरजी की यात्रा कराओ। यह मेरी नहीं, मेरे आने वाले बच्चे की इच्छा है। वरना इसके गर्भ में आने से पहले तो आपसे ऐसी बात कभी नहीं कही थी। न ही ऐसी भावना पहले कभी

हुई।''

भागचंदजी के गले भी यह बात उतर गई। वे अपनी पत्नी की साफगोई अच्छी तरह जानते थे। उन्होंने उसे आश्वस्त किया कि तुम चिन्ता मत करो, कुछ भी हो मैं तुम्हें सम्मेदशिखरजी की तीर्थ वंदना जरूर कराऊँगा। सबेरे हम विस्तृत चर्चा करेंगे। अभी तुम सो जाओ।

सम्मेदशिखर यात्रा

सबेरे देव दर्शन से निवृत्त हो मुन्नीदेवी तो गृहकार्य में लग गई किन्तु भागचंदजी अपने माँ-पिता/भाई-भाभी के पास पहुँचे। उन्होंने उनसे मुन्नीदेवी की सम्मेदशिखरजी की तीर्थवंदना की इच्छा के बारे में चर्चा की। उन्हें तो पहले से ही मुन्नीदेवी की इच्छा के बारे में पता था। सबने फिर से वही बात दोहरा दी कि पाँचवें-छठवें महीने में इतने बड़े पर्वत की वंदना करने जाना खतरा मोल लेने के सिवाय और कुछ नहीं। उन्होंने भागचंदजी को समझाया कि मुश्किल से दुबारा तुम्हारी गृहस्थी जमी है। जान-बूझकर यह कदम उठाकर मुसीबत मोल लेना व जगहँसाई कराना ठीक नहीं। ईश्वर न करे किन्तु कोई अनहोनी हो गई तो? भागचंदजी बीच में ही बात काटकर बोल पड़े- ''अम्मा! भाभी! ऐसा कुछ भी नहीं होगा। निश्चित मानो। जबसे यह जीव मुन्नी के गर्भ में आया है, तबसे ही उसे तीर्थ वंदना की इच्छा प्रबल होती जा रही है। अर्थात् यह इच्छा मुन्नी की नहीं, गर्भस्थ शिशु की है। ज्यों-ज्यों समय व्यतीत होता जा रहा है, मुन्नी की त्यों-त्यों तीर्थ वंदना के लिए व्यग्रता बढ़ती जा रही है। अतः मुझे तो ऐसा लगता है कि 'उस शिशु' को ही तीर्थ वंदना करना है। उसके प्रभाव से मुन्नी को कुछ नहीं होगा और हम यात्रा कर सानंद लौट आएँगे। भागचंदजी व मुन्नीदेवी की इच्छा के आगे सारा परिवार नतमस्तक था। सच कहें तो उस युग पुरुष ने आने के पूर्व ही अपना आभावलय बिखरा दिया था। सबसे अपनी बात मनवा ली।

आनन-फानन में उस धार्मिक परिवार ने यात्रा की तैयारी की। दोनों को अनेक हिदायतें दे मंगल भेंट देकर खुशी-खुशी तीर्थ वंदना के लिए विदा किया। मुन्नीदेवी की तो खुशी का पारावार न था।

सम्मेदशिखर शाश्वत तीर्थ की पावन माटी पर पग रखते ही मुन्नीदेवी को अलौकिक शान्ति व सुकून की अनुभूति होने लगी। परिणाम निर्मल व विचार उज्ज्वल हो गए। शुभ्र व धवल परिणाम वाले दम्पत्ति ने दिन भर तलहटी के मंदिरों की वंदना की। मुन्नीदेवी को देख बुजुर्ग महिलाएँ ठिठक जाती व उन्हें समझाती, हिदायतें देती कि पहाड़ धीमे-धीमे चढ़ना, थकान लगे तो बैठ जाना, चढ़ते न बने तो डोली कर लेना। साथ में कुछ कलेवा रखना, जरूरत पड़े तो खाकर पानी पी लेना।

कुछ ने कहा- यहाँ जब-तब बारिश होने लगती है। संभलकर चलना, पाँव न फिसल जाय।

एक युवा महिला तो उन्हें देखकर ही बोल पड़ी- ''अरे बहिनजी! इतनी क्या तीर्थ वंदना की जल्दी थी। क्या चार-छह महीने नहीं रुक सकती थी? ऐसी अवस्था में इतने बड़े पहाड़ की वंदना करना। कुछ लेने के देने न पड़ जाए। अब आ ही गई हो तो सलीके से वंदना करना। पेट के बच्चे का ध्यान रखना।'' प्यार भरी उलाहना देते हुए वह आगे बढ़ गई।

मुन्नीदेवी सारी हिदायतें नम्रता से स्वीकार करती रही पर उन्हें यह सलीके से वंदना करने की बात समझ नहीं आई। पर वह मुस्कुरा कर आगे बढ़ते हुए बोल गई कि ''जिस सांवरिया पारस बाबा ने बुलाया है वही बेड़ा पार करेगा। मैं तो उसी के भरोसे यहाँ आई हूँ। सलीका भी वही देगा, संभालेगा भी वही।''

मुन्नीदेवी मंदिरों के दर्शन कर धर्मशाला लौटते वक्त सोच रही थी कि देखो, आज इस मेरे पेट में पल रहे शिशु के लिए कितने-कितने लोग मंगल कामनाएँ कर रहे हैं। यह अजन्मा बच्चा ही हमें इस महान पुण्यमयी सिद्धभूमि में लेकर

आया है। हमें डरने की बात नहीं, यह अच्छी तरह यात्रा करा देगा। हमारे माध्यम से यह अपनी इच्छा पूर्ण कर लेगा। जब इस धरा की माटी पर आते ही मुझमें इतना उत्साहवर्धन व ऊर्जा का संचार हो रहा है तब उस श्रीशैल पर चढ़ते वक्त मुझमें कितनी शक्ति का संचय हो जाएगा, कहा नहीं जा सकता।

धर्मशाला पहुँचते ही भागचंदजी ने मुन्नीदेवी से कहा कि हम डोली कर लेते हैं। तुम आराम से वंदना करना। लेकिन मुन्नीदेवी तो पैदल यात्रा करने की अपनी जिद पर अड़ी रही। बहुतेरा समझाने के बाद भी उन्होंने अपना पैदल यात्रा का निर्णय अटल रखा। यही नहीं, उन्होंने यह भी कह दिया कि वे कल शिखर वंदना के पश्चात ही अन्न-जल लेंगी। जब भागचंदजी ने उन्हें गर्भस्थ शिशु का हवाला दिया तब वे अनायास बोल पड़ीं- ''जब वह मुझे यहाँ तक लाने का माद्दा रखता है तब वह मेरे साथ-साथ भूख-प्यास भी सहन कर लेगा। उसके लिए जिन उपासना की यह ट्रेनिंग है।'' मुझे लिखते हुए हर्ष हो रहा है कि इन संयमधारी जिन मुनि ने माँ के गर्भ में ही अपनी मुनिचर्या की ट्रेनिंग ले ली थी।

भागचंदजी मुन्नीदेवी की बात सुन हँस पड़े। उन्होंने देखा कि मुन्नीदेवी पर न सफर की थकान थी न दिन भर मंदिरों के दर्शन करने जाने की थकावट। ताजगी से उनका चेहरा चमक रहा था। उन्होंने कहा कि अब खाकर आराम करो, ताकि अच्छे से वंदना हो सके।

अर्धरात्रि से उठकर नहा-धोकर तैयार हो वे चल पड़े तीर्थ वंदना के लिए। तीर्थराज गिरिवर पर पहला कदम रखते ही उन्हें जो खुशी हो रही थी वह शब्दातीत थी। उन्होंने कृतज्ञता प्रकट करते हुए पति से कहा- ''यह शुभ दिन आज आपके कारण ही मेरे जीवन में आया है।'' और वे मन ही मन णमोकार महामंत्र का जाप करते हुए पहाड़ चढ़ने लगीं।

भोर होते ही वे चौपड़ा कुंड होते हुए गौतमस्वामी की टोंक पर पहुँचे। बड़ी श्रद्धा व भक्तिभाव से उनकी तीर्थ वंदना शुरू हुई। गौतम स्वामी को नमन-वंदन करते वे आगे बढ़ते रहे। अभी वे निराबाध इतना ऊँचा पहाड़ चढ़कर आए थे। अब फिर कठिन चढ़ाई शुरू हो गई। एक-एक टोंक पर जहाँ से एक-एक तीर्थंकर के साथ करोड़ों मुनियों ने सिद्धपद प्राप्त किया था उन्हें उस माता ने अपनी ओर से तथा अपने अजन्मे बच्चे की ओर से हर बार नमन किया। वह सोचती जा रही थी कि देखो यह कितना पुण्यशाली जीव है कि जन्म से पूर्व ही मुझे दोहला दे मेरे माध्यम से सिद्धों के दरबार में आ पहुँचा।

चन्द्रप्रभु शांतिनाथ आदि टोंक की कठिन चढ़ाई चढ़ते-उतरते वे लोग पार्श्व प्रभु टोंक पर पहुँच गए। पहली सीढ़ी पर पग धरते ही मुन्नीदेवी खुशी से रोमांचित हो उठी। उनकी साधना सफल हो रही थी, साधना का दीप जलने को था। पार्श्व प्रभु के मंदिर में पहुँच पूजन, अर्चन, आरती, जाप किये। शांति से बैठ प्रभु की स्तुति की। पूरी वंदना मुन्नीदेवी ने बिना कुछ खाए-पीए ही की। पर्वत से तलहटी में धर्मशाला में आकर ही उन्होंने कुल्ला कर भागचंदजी के आग्रह पर थोड़ा कलेवा किया। जब पत्नी सकुशल वंदना कर लौट आई तब कहीं भागचंदजी की जान में जान आई। लेकिन तीर्थ वंदना तो उन्होंने भी निराकुल होकर की।

घर वापसी

घर वापसी पर परिजनों ने इकट्ठा होकर उनका बड़ा सत्कार किया। घर पर उत्सवी माहौल हो गया। सबने मिल प्रभु भक्ति के भजन गाए और सबने अपनी खुशियाँ व्यक्त कीं। मुन्नीदेवी की यह अनूठी सम्मेदशिखर यात्रा तिगोड़ा ही नहीं, आसपास के क्षेत्रों में भी चर्चा का विषय बन गई थी। हर किसी के मुँह से एक ही वाक्य निकलता- ''आने वाला बच्चा निश्चित ही कोई भव्य आत्मा है।'' और बच्चे का इंतजार करने लगे।

तीर्थ वंदना कर आए अभी जुम्मे-जुम्मे आठ दिन भी नहीं हुए थे कि परिवार में मुन्नीदेवी की गोद भराई की रस्म की तैयारियाँ शुरू हो गई क्योंकि यह भागचंदजी की प्रथम संतान होने वाली थी। मोतीलालजी के लिए तो यह बड़ी

खुशी की बात थी। उन्होंने दूर-दूर के नाते-रिश्तेदारों को आमंत्रित किया। तिगोड़ा के समाज व रिश्तेदारों सहित गाँव के अपने इष्ट मित्रों, जान-पहचान वालों को भी आमंत्रित किया गया। मोतीलालजी व बेटीबाई यही कहते रहे कि हमारे घर कोई साधारण सा जीव या बच्चा नहीं, असाधारण बच्चा आ रहा है। तब ही तो हमारे यहाँ अनहोनी अच्छी-अच्छी बातें हो रही हैं। और मुन्नीदेवी की गोद भराई की रस्म बड़े हर्षोल्लास से मनाई जाने लगी।

गाजे-बाजों के साथ सबेरे मुन्नीदेवी को देवदर्शन के लिए ले जाया गया। बड़ा भोज दिया गया। गाने-बजाने के साथ गोद भराई की रस्म पूरी की गई।

गोद भराई के कुछ दिनों बाद ही मंदिर में सिद्धचक्र विधान मंडल था। मुन्नीदेवी ने उसमें भी सबके ना करने के बाद भी खड़े-खड़े ही पूजा की। बुजुर्ग महिलाएँ उन्हें बैठकर पूजा करने का कहती रही पर उनकी भक्ति तो ऐसी परवान चढ़ी कि उन्होंने तो खड़े होकर ही प्रभु की पूजा-अर्चना की। वे भी मानती थी कि उनमें यह अद्‌भुत भक्ति की शक्ति गर्भस्थ शिशु के कारण ही आई है।

निश्चित ही मुन्नीदेवी का गर्भावस्था में तीर्थ वंदना, धार्मिक सपने देखना, देव दर्शन में विशेष रुचि, गोद भराई की रस्म भव्य पैमाने पर संपन्न होना, विधान में खड़े-खड़े पूजा करना, गर्भ में किसी महान आत्मा के अवतरण की ओर संकेत था जिसे परिवार तो क्या, गाँव वालों के लिए भी जब-तब चर्चा का विषय बन जाता (बुंदेलखंड में खड़े होकर ही पूजा करने की परंपरा रही है।)

किसी विलक्षण विभूति या किसी असाधारण दिव्यात्मा का धरती पर अवतरित होना भी उसी की तरह एक असाधारण व दिव्य घटना है। जाने-अनजाने प्रकृति तो अपनी तरह उसके किसी माँ के गर्भस्थ होने या उसके पूर्व से ही उसके आने का विभिन्न माध्यमों से संकेत देती रहती है। उसके गर्भस्थ होते ही उसके आभामंडल से वातावरण पवित्र व सकारात्मक होता जाता है। उस दिव्यात्मा का सबसे ज्यादा प्रभाव माँ पर पड़ता है। पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी के माँ के गर्भ में आते ही माँ मुन्नीदेवी पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि उनका मन नित-प्रति पवित्र व निर्मल होता जा रहा था। सारी आकुलता-व्याकुलता समाप्त हो मन में असीम शांति का अनुभव होता था। देव दर्शन, पूजा-पाठ, शास्त्र स्वाध्याय, सामायिक आदि में उनकी रुचि बढ़ती जा रही थी। कभी उनमें विरक्ति व वैराग्य की भावनाएँ वेगवती हो जाती तो कभी तीर्थ दर्शन, साधु सत्संग की भावना प्रबल हो जाती। स्वप्न में भी उन्हें मंदिर, भगवान की वीतरागी शान्त मुद्रा या ऐसे ही शुभ चिह्न कभी कलश, कभी श्रीफल आदि दिखते। जैसे-जैसे गर्भ बढ़ता जा रहा था, उनकी धार्मिक रुचि बढ़ती जा रही थी।

उन्होंने शास्त्रों-पुराणों में पढ़ा व सुना था कि माँ पर गर्भस्थ शिशु का प्रभाव पड़ता है। किसी पुण्यात्मा जीव के गर्भ में आने से माँ के भावों की परिणति बदल जाती है जो वे स्वयं में घटित होते देख रही थीं। अतः उनके मन में यह निश्चित हो गया था कि उनके गर्भ में कोई पुण्यात्मा जीव आया है। और जब-तब उनका वात्सल्य, उनकी सारी ममता उस गर्भस्थ शिशु के प्रति उमड़ पड़ती।

उनकी इन धार्मिक व श्रेष्ठ भावनाओं व क्रियाकलापों का गर्भस्थ शिशु पर भी प्रभाव पड़ रहा था।

जन्म

7 अक्टूबर की वह अलस भोर! प्रभाकर किसी दिव्यात्मा के धरती पर अवतरित होने का संदेश ले प्राची से नभांगन में उतरा है। मौन, सारी सृष्टि से कह रहा था, धरती पर भी आज एक सूरज उदित होने वाला है। हवाएँ प्रभातियाँ गा रही थी। वातास में माधुर्य घुल गया था।

जाने-अनजाने भागचंदजी के घर आंगन में भी आज उत्साह व उल्लास का माहौल था। घर में कुछ चहल-पहल

ज्यादा थी। सास बेटीबाईजी ने कुछ अनुभवी बुजुर्ग महिलाओं के साथ तैयारी कर रखी थी कि अब मुन्नीजी को कभी भी प्रसव हो सकता है। उनकी तबीयत भी एक-दो दिन से नरम-गरम चल रही थी। उनकी बहुत अच्छे से देखभाल की जा रही थी और इधर नए मेहमान के स्वागत की भी पूरी तैयारियाँ थी। आज दिन में सूरज बहुत तपा तब बेटीबाईजी बहू से बोली- ''देखना! ऐसा ही तेज प्रताप वाला तुम्हारा बच्चा होगा।''

तिगोड़ा की धरती धन्य हो गई जब 7 अक्टूबर सन् 1977 तदनुसार आश्विन कृष्णा दशमी (10मी) तिथि, सम्वत् 2035 की उस कृष्णा निशि का तमस भागचन्दजी के घर रात्रि 8 बजे शिशुरूप बाल रवि के उदित होते ही छिन्न-भिन्न हो गया। मात्र तिगोड़ा (हीरापुर) सागर जिले की ही भूमि नहीं अपितु पूरी भारत वसुन्धरा अपने इस लाल के आगमन पर हर्षित व उल्लसित थी। पृथ्वी का रोम-रोम पुलकित था।

मुन्नीदेवी ने पुत्र रत्न को जन्म देकर सेठ परिवार का मान बढ़ा दिया सुबह होते ही हवा के रथ में आरूढ़ यह समाचार घर-घर, द्वार-द्वार दस्तक देता पूरे तिगोड़ा में पहुँच गया और भागचन्दजी व मुन्नीजी की खुशियों में सारा गाँव शरीक हो गया। मोतीलालजी के आँगन में ढोल-ताशे बजने लगे। बधाइयाँ व मंगल गीत गाए जाने लगे। गाँव भर में लड्डू बँटवाए गए। सच बात है, जो जन-जन का मंगल करने आया हो, उसके स्वागत-अभिनंदन में मंगलाचार होना स्वाभाविक रूप से ही हो जाता है।

कौन जानता था कि साधारण परिस्थितियों में एक साधारण परिवार में जन्मा एक साधारण सा बालक एक दिन साधना का सूर्य बन अपने असाधारण व्यक्तित्व और कृतित्व से इतना महान बन जाएगा कि सारी दुनिया उसके चरणों में नतमस्तक हो जाएगी। आज उसका जन्मोत्सव एक परिवार व एक गाँव तक ही सीमित है लेकिन कल पूरी दुनिया उसकी जन्म जयंती मनाएगी।

दादा मोतीलालजी की खुशियों का ठिकाना नहीं था। पोते के आते ही बधाइयों का तांता लग गया। ननिहाल किशुनगंज में भी नाती के आने का शुभ संदेशा पहुँचाया गया। सुनते ही नानी केशरबाई नाती का मुँह देखने दौड़ी चली आई। सद्यजात शिशु को देखते ही उनकी खुशी का पारावार न था। उन्होंने झट से शिशु को अपनी गोद में ले लिया। उसे गोद में लेते ही उन्हें अनुपम शांति व सुखानुभूति होने लगी। अभी तक वे कितने ही बच्चों को अपनी गोद में ले चुकी थी किंतु इस शिशु को गोद में लिटाते ही उन्हें कुछ विशेष अनुभूति होने लगी। उसमें इतना चुम्बकीय आकर्षण था कि उनकी नजरें उसके चेहरे से ही नहीं हट रही थी। उन्होंने बेटी से कहा- ''मुन्नी! तेरा यह सांवला सलोना इतना प्यारा है कि मुझे लगता है इसे ही देखती रहूँ। इसे गोदी से नीचे उतारने का मन ही नहीं हो रहा है।'' तब मुन्नीदेवी ने कहा- ''मेरी सास भी ऐसा ही कह रही थीं। सच मानो तो माँ मुझे भी ऐसा ही लगता है। पर मैं सोचती हूँ यह माँ की ममता है।''

दोज के चांद सा बालक वृद्धिगत हो रहा था। घर व आसपास के बच्चे-बूढ़े लोगों का जमावड़ा हमेशा शिशु बालक के पास लगा रहता। मानो सबके लिए वह अजूबा था। कोई उसके काले घने बालों पर वारा न्यारा था तो कोई उसके सांवले रंग पर। कोई उसके छोटे-छोटे कानों को छूकर आनंदित होता तो कोई उसकी सूए सी तरासी पतली नाक पर वारी-वारी जाते। किसी को उसकी धनुषाकार भौंहों वाली पानीदार आँखें मन भा जाती तो कोई उसके कोमल गालों व गुलाबी होंठों पर मर मिटता। बच्चे उसके कोमल मुलायम छोटे-छोटे हाथ-पैरों को सहलाते रहते। कोई बालक के पास से टस से मस नहीं होता। मानो भविष्य में अपार जनसमूह में रहने वाली यह प्रारंभिक रिहर्सल थी। मुन्नीजी स्वयं व बच्चे के लिए थोड़ा एकान्त व आराम चाहती तब वह सबको बच्चे को दूध पिलाने, नहलाने, सुलाने की बात कह विदा करती। मुन्नीदेवी हँसते हुए माँ से कहती- ''क्या करें, माँ, यह बच्चा ही इतना पुण्य लाया है कि लोग इसे हाथोंहाथ उठा रहे हैं। घर में भी एक मिनट को कोई इसे अकेला नहीं छोड़ता। अपना-अपना भाग्य। शिशु बालक इतना छोटा होने के बाद भी इस हाथ से उस हाथ, उस हाथ से उस हाथ जाता रहता। बस जब सोता, तब ही शांति से लेट पाता। गोदी में

रह-रह कर वह भी गोदी का हो गया। उसे भी नीचे अच्छा नहीं लगता। नीचे लिटाते ही रोने लगता।

केसरबाईजी ने बेटी से कहा- ''मुन्नी, लरका अबे हल्को सो हे। ईखो गोदी में लिटाते रहने से ईकी मांस पेशियाँ मजबूत नहीं होगी। दूसरा इसे बाद में नीचे या झूले में अच्छा नहीं लगेगा। गोदी में आने के लिए यह तुझे परेशान कर देगा। कामकाज नहीं करने देगा।''

मुन्नीजी- ''माँ, चिंता मत करो। जब नौ मास यह मेरा लाड़ला गर्भ में रहा तब मुझे जरा भी परेशान नहीं किया तो आगे भी नहीं करेगा। मैं इसका जितना ध्यान रखती हूँ यह भी उतना ही रखता है।'' उन्होंने एक-दो अपनी परिचिताओं के नाम बताए। उनको लरका रात भर रोता है, दिन में भी रोता है तो चुप होने का नाम नहीं लेता। माँ, दादी, नानी सब परेशान। माँ को तो हर रात रतजगा कराता है। यह तो उतना ही रोता है जितनी बाल सुलभ चेष्टा है। यह बोलता तो है नहीं, अतः हम तो इसके रोने के माध्यम से ही सही, इसकी आवाज सुनने तरस जाते हैं।

नानी माँ ने बबुआ के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा- ''बात तो सही है। इस बच्चे में आकर्षण ही ऐसा है। सब इसकी ओर खिंचे चले आते हैं। अभी तक इसके गर्भ में आने के वक्त की बात सुनी थी, अब तो साक्षात इसके आने से घर में चहल-पहल हो गई है। लोगों का मेला सा लगा रहता है जबकि यह दस-बीस दिन का शिशु बोलता-चालता कुछ नहीं। मात्र हमें टकटकी लगाए देखता रहता है। कभी-कभी हँसता-मुस्कुराता है। फिर भी घर में उत्सवी व खुशियों का माहौल है। इसने घर भर को खुशियों से मालामाल कर दिया है। अपने तेज से सबके विचार बदल देता है। इसके पास जो भी आता है, अच्छी-अच्छी बातें ही करता है। कोई किसी की निंदा बुराई नहीं करता। बड़ी बुजुर्ग महिलाएँ तो बड़े-बड़े महापुरुषों, आचार्यों व तीर्थंकरों की बातें ही करती हैं। घर पुराण की नहीं। शास्त्र पुराण की चर्चा यहाँ चलती है। कुन्दकुन्द, पुष्पदंत, भूतबलि जैसे आचार्यों की बातें यहाँ होती हैं। कभी–कभी तो मुझे लगता है वे इसे श्रुत स्वाध्याय सुनाने ही आते हैं और यह है कि चुपचाप सुनता रहता है। उस वक्त भूखा होने पर भी नहीं रोता है।''

तभी शिशु ने किलकारी मारते हुए हाथ-पैर चलाते माँ का ध्यान अपनी ओर खींच लिया। मुन्नीजी उसे हौले से गोद में ले दूध पिलाने लगी। वात्सल्य व ममता से उनका रोम-रोम पुलकित था। अब तो दुपहरी में रोज वहाँ शास्त्र चर्चा चलती रहती। कभी पंचकल्याणकों की चर्चा के द्वारा तीर्थंकर भगवन्तों, उनके भव्य समवशरण रचना व कभी उनकी दिव्य ध्वनि के माध्यम से उनके संदेशों व घटनाओं की चर्चा चलती तो कभी सिद्धों की बातें होती। इसके साथ पंचकल्याणक करवाने वाले आचार्य, उपाध्याय व साधुओं की भी चर्चा चल पड़ती। उनकी कठोर तपस्या व साधना की प्रशंसा अनुमोदना की जाती। जाने-अनजाने वे वृद्ध माताएँ उस शिशु के भवितव्य की पृष्ठभूमि लिख रही थीं। वे नहीं जानती थी कि जिन पंच परमेष्ठी की चर्चा हम जिस शिशु के सामने कर रहे हैं एक दिन हमारा यह जिनागम का रोपा हुआ बीजमंत्र इसके जीवन को बरगद बना देगा। इसमें ही साधु और आचार्यत्व छुपा हुआ है। आज हम चार लोग उसके पास बैठकर चर्चा कर रहे हैं। कल वह हजारों के बीच बैठकर ऐसी धार्मिक चर्चा करेगा। शायद हम इसकी धर्मसभा में बैठने के पूर्व ही यह नश्वर देह छोड़ चुकी होंगी। इस प्रकार रोज शिशु का भवितव्य गढ़ा जा रहा था। संस्कारों की बुनियाद रखी जा रही थी। चर्चा के माध्यम से एकत्रित उन माताओं ने भविष्य में चर्चित होने वाले उस युग पुरुष की चर्चा जन-जन तक पहुँचा दी थी।

पूत के लक्षण पालने में। तू शुद्ध है, तू बुद्ध है, तू चिदानंद है, आदि-आदि बातें वे महिलाएँ उस शिशु को रोज घुट्टी में पिला जाती। माँ मुन्नी को भी उन बातों में बड़ा आनंद आता। वे कहती देव दर्शन नहीं हो पाता तो क्या, शास्त्र चर्चा तो इस बच्चे के कारण सुनने को मिल जाती है। बच्चे को बड़े दुलार से सीने से चिपकाती माँ मुन्नी बेटे से कहती रहती, तुम्हारे कारण चालीस दिन मैं मंदिरजी भले नहीं जा पा रही हूँ, पर मुझे लगता है यह श्रुत चर्चा ये महिलाएँ नहीं तू कह रहा है। तू चुपचाप अबोध बोल नहीं सकता, इनके मुख से बुलवा रहा है।

इस प्रकार वह शिशु विभिन्न माध्यमों से अपनी महानता का शुभ संकेत यदा-कदा देता रहता। उसके पुण्य से घर में मंगलमय वातावरण हो गया। मृदु व्यवहार व मधुर वाणी से हर आगंतुक का सम्मान होता। जिनका कभी इस घर में आना नहीं होता वे भी शिशु को देखने के निमित्त से चले आते। शिशु ने तो भागचंदजी का भाल बदल दिया था। कालान्तर में इसी बेटे ने उनको दीक्षा दे इहलोक के साथ परलोक भी सुधार दिया। सच बात है, पुण्यात्माओं के आने से ही जगत व जनजीवन पर सकारात्मक प्रभाव पड़ने लगता है।

खुशियों के पल, पल भर में पर लगा फुर्र हो जाते हैं। पलक झपकते ही कब बालक 40 दिन का हो गया, पता ही न चला। वैसे तो जब से बालक का जन्म हुआ था, घर में उत्सव जैसा ही माहौल था। हर आगंतुक का मुँह मीठा कराने मिठाइयाँ बनती रहती किंतु अब बच्चे को मंदिर ले जाने व नामकरण संस्कार की रस्म का एक बड़ा उत्सव मनाने की पुनः तैयारियाँ शुरू हो गईं। इस मंगल प्रसंग पर परिवारजनों के साथ-साथ दोनों बुआओं श्रीमती ममता बाईजी नैनागिरि तथा दूसरी बुआ श्रीमती शीला बाईजी नादेल (सागर) वाली को विशेष सम्मान के साथ बुलाया गया।

बाजों-गाजों के साथ बालक को मंदिर ले जाया गया। नया मखमल का मुलायम कपड़ा भगवान के सम्मुख बिछाकर बालक को नमस्कार हेतु लिटाया गया। पंडितजी ने बालक को केसर का तिलक लगाया, उसके कान में णमोकार महामंत्र सुनाकर कहा- आज से यह बालक भगवान महावीर का अनुयायी सबकी साक्षी में हो गया है। दादी ने बच्चे के नन्हे-नन्हे हाथों दान करवाया। सामूहिक भक्तामर के पाठ के बाद घर वापसी हुई।

उधर तब तक दादाजी मोतीलालजी ने ज्योतिषी को घर पर बुलवा लिया था। सेठ परिवार का तिगोड़ा में अच्छा रुतबा था अतः ज्योतिषी भी उनके घर आने में अपना सम्मान महसूस कर रहा था। इधर महिलाएँ बच्चे के सुखद जीवन व दीर्घायु की मंगल कामना के मंगल गीत गा रही थी, उधर ज्योतिषी मोतीलालजी के पास बैठे बालक की जन्म कुंडली बना रहे थे। उन्होंने बच्चे का नाम 'ह' पर बताया तथा कहा- ''बच्चा बड़ा भाग्यवान है। इसे सब चाहेंगे। बड़ा आदमी बनेगा। विलक्षण बुद्धि व नेतृत्व करने वाला होगा। इसकी ख्याति विश्व भर में होगी।'' और भी शिशु के बारे में उन्होंने कई बातें बताई लेकिन ज्योतिषी ने यह बात स्पष्ट नहीं की कि यह योगी बनेगा या भोगी रहेगा। क्योंकि कुंडली में उन्हें गृह नक्षत्रों का प्रभाव स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि उसमें योग लेने व घर छोड़ने की प्रबल संभावना थी। भगवान महावीर व बुद्ध की कुंडली जैसा योग उन्हें दिखाई दे रहा था। लेकिन वे मोतीलालजी, भागचंदजी व परिवार की खुशी में कुछ खलल डालना नहीं चाहते थे। जाते-जाते वे इतना जरूर कह गए कि किसी ऐरे-गैरे ज्योतिषी को इसकी पत्रिका मत दिखाना। इसकी पत्रिका इतनी अच्छी है कि कहीं किसी की नजर न लग जाए। इसके पीछे ज्योतिषी का एकमेव उद्देश्य यही था कि कोई अधकचरा ज्योतिषी उन्हें बच्चे के गृह त्याग की बात बताकर कहीं परिवार की खुशियाँ न छीन ले। इसका बच्चे के पालन-पोषण पर भी विपरीत प्रभाव पड़ेगा। क्योंकि जन्म समय व स्थान के अनुसार बनी यह पत्रिका बता रही है कि युवावस्था में ही यह बालक घर छोड़ देगा। महायोगी बनेगा। अतः बताकर माता-पिता को दुःखी नहीं करना है। वैसे ज्योतिष शास्त्र भी ऐसी बातें बताने के लिए मना करता है।

उन ज्योतिषीजी की ज्योतिष विद्या की ख्याति दूर-दूर तक फैल चुकी थी। वे उस क्षेत्र के प्रसिद्ध ज्योतिर्विद थे। ज्योतिषिजी ने सोचा कि जिन गृह नक्षत्रों के योग बालक में योग लेने के लक्षण दर्शा रहे हैं तब क्यों न मैं इस भविष्य के योगी के दर्शन आज ही कर स्वयं को धन्य कर लूँ। जरूर बालक में कोई न कोई विशेष लक्षण होगा ही। वे ज्योतिष शास्त्र की प्रामाणिता भी लगे हाथ देखना चाहते थे। अतः उन्होंने सेठ मोतीलालजी के सामने शिशु को देखने की मनसा व्यक्त की। लाल मखमल के रूमाल में लिपटे बालक को भुवा पिताजी की आज्ञा सुन दालान में ले आई व ज्योतिषीजी की गोद में लिटा दिया। जाने-अनजाने शिशु के हाथ-पैरों पर से रूमाल फिसल गया। बालक हाथ-पैर चलाकर खेलने लगा। वे बालक को खिलाने के उद्देश्य से अपनी उंगली बालक की हथेली के पास ले गए। बालक उंगली पकड़कर

खेलने लगा।

बालक की गद्देदार हथेली का स्पर्श व पैरों की बनावट देखकर ज्योतिषी को उसका भवितव्य कुंडली के अनुसार सत्य लगा। उन्होंने पुनः सेठ मोतीलालजी से कहा कि यह भाग्यवान बालक भविष्य में अद्वितीय उपलिब्ध प्राप्त कर बड़ी जिम्मेदारी बखूबी निभाएगा। उन्हें यह तो पता नहीं था कि अनाथों के नाथ के ये ऊर्जावान हाथ एक दिन पावन पिच्छी से सुशोभित होकर पाणिपात्र में ही आहार ग्रहण करने के लिए प्राप्त हुए हैं। अब उन्हें अपनी बनाई बालक की कुंडली की सत्यता पर पक्का यकीन हो गया।

सेठ मोतीलालजी क्षेत्र के प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। सेठ साहब से मिलने कई ख्याति प्राप्त लोग घर आया करते थे। अक्सर बालक संदीप को दादाजी के पास खेलता देख उनकी नजरें बालक के असाधारण हाथ-पैरों पर चली जाती। कई लोग सेठजी से कह चुके थे कि इस बालक के पाँव महापुरुषों का आचरण आचरित करने वाले महापुरुषों के पैरों जैसे प्रतीत होते हैं और इसके गदराए हाथ भी विशिष्टता लिए हैं।

इस प्रकार कालान्तर में भी संदीप के हाथ-पैरों व रेखाओं को देख उनके महापुरुष बनने की भविष्यवाणियाँ होती रहीं।

ऐसे ही घर आए एक सामुद्रिक शास्त्र के ज्ञाता ने तो आपश्री के भरावदार व असाधारण पैर देखकर भविष्यवाणी कर दी कि निश्चित ही ये महापुरुषों का आचरण करने वाले महापथिक के चरण हैं जो किसी अलौकिक पद पर खड़े होने के लिए ही बने हैं। जो एक जगह न टिक पद संचलन करते धरा को तीर्थ बना धन्य करने को ही बने हैं। अस्तु तब किसने बालक के बारे में क्या कहा, अब कोई मायने नहीं रखता पर संदीप ने गर्भ काल व जन्म से ही घर, परिवार व समाज को अपनी महानता के दर्शन करा दिये थे। आज वे सारी भविष्यवाणियाँ सत्य सिद्ध हो गई हैं।

मोतीलालजी तो पोता बड़ा आदमी बनेगा, भाग्यवान है, विश्व भर में इसकी ख्याति फैलेगी, सुनकर फूलकर कुप्पा हो गए। सुनकर पूरा माहौल खुशियों से भर गया। लेकिन मोतीलालजी ने पोते की पत्रिका अपने ही पास रख ली व कहा- बच्चे का नाम रखा जाए।

सबने अपनी-अपनी पसंद का नाम सुझाया पर दादाजी को पसंद नहीं आया। तब छोटी बुआजी ने अपनी गोद में लेटे, टुकुर-टुकुर इधर-उधर देखते भतीजे को लाड़ करते हुए कहा- यह तो कुल का दीपक है। अतः इसका नाम ‘संदीप’ रख दिया जाए। यह अपने सत्कार्यों के प्रकाश से उजाला फैलाकर युगों-युगों तक इस कुल का नाम रोशन करेगा। यह तो सेठ परिवार का ‘कुलदीप’ है।

आगे चलकर रत्नत्रय का प्रकाश फैलाने वाला यही बालक ‘संदीप’ अंकलीकर परंपरा के चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी के रूप में आज जन हृदय का सम्राट बना हुआ है। बुआ का दिया नाम सार्थक कर रहा है। घर वालों ने तो उसे ‘कुलदीप’ बनाने तक ही सोचा था। किंतु कालान्तर में यही बालक श्रमण संस्कृति का ‘कुलदीप’ बन जाएगा। उस समय किसी ने सोचा भी न था। अंततः संदीप नाम से बालक का नामकरण हो गया।

नामकरण होने के बाद ज्योतिषाचार्यजी ने मोतीलालजी से कहा कि सेठ साहब, बालक कर्क राशि में पैदा हुआ है। इसका नाम ‘ह’ से आता है लेकिन आपने जो नाम रखा है वह भी यह सार्थक करेगा। लेकिन कर्क राशि वाला यह बालक बड़े शांत स्वभाव वाला होगा और अपने आसपास भी सुख-शांति फैलाएगा। अर्थात् यह दुनिया में सुख-शांति का संदेश देगा। तब मोतीलालजी ने बच्चे का जन्म नाम ‘हिमांशु’ रख दिया। पर बुआ ने पिता से कहा- आप चाहे जो कर लें, हमारे लिए तो संदीप ही इसका जन्म नाम है।

मोतीलालजी ने कहा- जैसी तुम लोगों की मर्जी। उन्होंने ज्योतिषी को भेंट-मिठाई दे विदा किया।

जब तक बुआ लोग रही तब तक तो मुन्नी भाभी व बच्चे को लेकर मंदिर जाती। इसके बाद बच्चा कभी दादी के

साथ देवदर्शन को जाता या कभी माँ के साथ। माँ उसे दोनों नन्हें हाथ जुड़वा पकड़कर कहती, ''हे भगवन्! मैं नन्हा सा शिशु हूँ। मैं तेरे दर्शन कर तेरे जैसा बन जाऊँ।'' फिर चन्दन तिलक व गंधोदक लगाती। उससे रोज चावल चढ़वाती। वे बच्चे के हाथ धोकर बच्चे को मंदिर ले जाती।

बच्चे का देवदर्शन का यह संस्कार कभी नहीं टूटा। जब तक गोदी में उठाने लायक था तब तक तो माँ, दादी, पड़ोसी कोई भी महिला उसे मंदिर लेकर जाती। पर पाँच-छह महीने का होने के बाद तो पिता भी उसे दर्शन कराने ले जाते।

शिशु संदीप शांत स्वभावी बालक थे। बिना वजह वे रो-रो कर माँ को परेशान नहीं करते। अक्सर कहा जाता है कि बालक को बड़ा करने में माँ को एक-एक रात छह-छह महीने की करनी पड़ती है तब कहीं बालक बड़ा होता है। शिशु संदीप गर्भ में थे तब भी और अब भी माँ को ज्यादा परेशान नहीं करते। किन्तु हाँ, जब कभी-कभी माँ को उन्हें गोद में उठाने में देरी हो जाती तब वे जिद पर चढ़ जाते। फिर जो उनका रोना शुरू हुआ कि सिर आसमान पर उठा लेते। दूध नहीं पीते और माँ की गोद से मचल-मचल जाते। जब मुन्नीजी से वे नहीं संभलते तो वे भी उनके साथ रो पड़ती। वे उसे थपथपाते प्यार से कहती जाती- बेटा, अब ऐसी गलती नहीं होगी। हम काम छोड़कर पहले तुम्हारा ध्यान रखेंगे। आखिर जब संदीप रो-रो कर थक जाते तब कहीं चुप होते व माँ का दूध पीते-पीते सो जाते। आसपास की अनुभवी महिलाएँ मुन्नीजी को समझाती रहती कि बच्चे बड़े करना कोई हँसी खेल नहीं है। समय पर बच्चे के सारे काम करो। घर के काम तो देर-सबेर हुआ करेंगे। बच्चे को नहीं रुलाना। वे भाग्यशाली हैं जिनके घर बच्चे होते हैं।

जब संदीप किलकारियाँ मारते, हाथ-पैर चलाते खेलते तो मुन्नीजी व भागचंदजी उसकी शिशु क्रीड़ाओं पर वारे-न्यारे हो जाते। वे खाना बनाते-बनाते संदीप को खेलते देखने दौड़ी चली आती। कभी उनकी दाल जल जाती तो कभी सब्जी तो कभी रोटी। यह तो अच्छा था कि घर में उन्हें कोई टोकने-डाँटने वाला नहीं था।

अब संदीप घुटने के बल चलने लग गए थे। इधर भागचंदजी भी अपना अधिकांश समय संदीप संग व्यतीत करते। वे मुन्नीजी के चोरी छिपे उन्हें थोड़ा सा केला खिला देते। तभी नानी केशरबाईजी संदीप के छह माह का होते ही अन्न प्रासन संस्कार कराने तिगोड़ा चली आई। वे अपने साथ जलेबी बनाकर लाई थीं। पर यहाँ नाती के लिए खीर बनाई। चाँदी की कटोरी में चाँदी के चम्मच से नानी ने नाती को अच्छा नेग देकर खीर चटाई। संदीप खीर तो जरा सी खाते किन्तु नन्हे-नन्हे हाथों से चम्मच पकड़ नानी को देख खिलखिलाने लगते। नानी भी उस निश्छल हँसी को देख खीर खिलाना ही भूल जाती। संदीप अपनी बाल क्रीड़ाओं से घर भर का मन मोह लेते।

अब तो माँ के लिए संदीप को संभालना और मुश्किल काम होता जा रहा था। नीचे कोई भी सामान पड़ा हो, घुटनों के बल चले जाते और खींचकर ढुलका देते। माँ चावल दाल बिनती होती, झपट्टे से थाली पलट देते। पानी का भगोना या बाल्टी रखी होती, सपाटे से वहाँ जाकर बैठ जाते व छब-छब कर दोनों हाथों से पानी में खेलते पूरे गीले हो जाते। उन्हें देखकर माँ को तो ऐसा लगता मानो अष्ट ऋद्धि व नवनिधि घर में उतर आई हों।

माँ संदीप की बाल क्रीड़ाएँ देख उस पर वारी-न्यारी होती रहती। एक-दो बार गीला हो जाने से संदीप को सर्दी-बुखार हो गया तब फिर वह उन्हें पानी के पास नहीं जाने देती। एकाध बार मुन्नीजी का ध्यान चूकने पर संदीप ने गरम संडासी पकड़ ली। जब वह रोने लगे तब उनका ध्यान गया। यह तो गनीमत थी कि संडासी ज्यादा गरम नहीं थी, फिर भी हथेली लाल तो हो ही गई थी।

माँ संदीप का बहुत ध्यान रखने लगी। जब संदीप सोते तब घर के सारे काम फटाफट निपटाने की कोशिश करती। जागने पर उनकी फिर से शरारतें शुरू हो जातीं। अब संदीप दीवार पकड़ या किसी सहारे के खड़े होकर चलने लगे। माँ खड़ी होती तो पीछे से माँ की साड़ी पकड़ खड़े हो जाते व धम्म से गिर जाते व रोने लगते। तब कहीं माँ पीछे मुड़कर देख उन्हें गोद में उठा लेती।

बचपन

ज्यों-ज्यों संदीप बढ़ते जाते, त्यों-त्यों उनकी हरकतें बढ़ती जाती। अब तो उनका दिन भर यही काम था, किसी सहारे से खड़े होना, दीवार पकड़कर चलना। जब थोड़ा आत्मविश्वास जगा, बिना सहारे खड़े होने लगे। गिरते-पड़ते आखिर उन्होंने चलना सीख लिया। नए-नए पैर लिए थे अतः वे दिन भर डग-डग करते चलते रहते। फिर गिर पड़ते। फिर चलने लगते। माँ को ध्यान रखना पड़ता था कि किसी सामान पर न गिर जाए। कहीं लग न जाए। वे तो माँ की चिंताओं से अनजान बाल सुलभ चेष्टाओं से माँ पिताजी का मन लुभाते रहते। जो भी भागचंदजी के घर आता, वो संदीप के साथ खेलने लग जाता। आसपास के बच्चे भी अब संदीप को खिलाने आने लगे। संदीप को चलना क्या आ गया, दिन भर वे घर में चलते रहते। देहरी लांघना नहीं आती तो धड़ाम से गिर पड़ते। सिर में लग जाती। वे रोने लगते। फलतः संदीप ने अच्छे से चलना सीख लिया।

अब तो वे चलते-चलते आंगन में पहुँच जाते। यहाँ तक कि सड़क पर भी पहुँच जाते। कई बार रास्ते चलते लोग बालक को घर में छोड़ जाते व मुन्नीजी को हिदायतें दे जाते कि बच्चे का ध्यान रखो। सड़क पर वाहन चलते रहते हैं। ज्यों-ज्यों संदीप बड़े होते जा रहे थे, मुन्नीजी की मुश्किलें बढ़ती जा रही थीं।

रोज सबेरे कभी माँ या कभी पिताजी या कभी दोनों के साथ मंदिर जाना, चावल चढ़ाना, गंधोदक सिर पर लगवाना, चंदन का तिलक करवाना व भंडार करना संदीप की नित्य नियम की क्रिया बन गई थी। जब संदीप को बोलना नहीं आता था, सबेरे नहाने तैयार होने के बाद हाथ जोड़कर जै-जै के इशारे से मंदिर जाने का संकेत करते। अब तो उन्हें थोड़ा बोलना-चलना दोनों आ गया था।

बोलना आते ही माँ ने उन्हें 'ॐ' बोलना सिखाया। संदीप शीघ्र सीख गए। जै जै (जय जय) बोलना तो रोज नन्हें-नन्हें हाथ जुड़वाकर माँ-पिता द्वारा बुलवाने के कारण बालक संदीप अपने आप ही सीख गए।

महापुरुषों का जन्म निश्चित प्रकृति में अद्भुत घटना होती है। उसके पृथ्वी पर अवतरित होते ही प्रकृति पुरवाइयों से उसका स्वागत करती है। पक्षीगण प्रभातियाँ गाते हैं और सूरज की कोमल किरणें धरती के चर-अचर में पुलक भर देती हैं। यह तो रही प्रकृति की बात। लेकिन भौतिक जगत में भी उसके आने की आहट और उपस्थिति का अहसास जब-तब होता रहता है। जन्म के पूर्व संदीप की माँ की मनोवृत्ति व अब जन्म के बाद उनकी बाल चेष्टाएँ एक अध्यात्म जगत के सिरमौर महामानव के आने का आगाज कर रही थी।

संदीप सांवले सलोने हृष्ट-पुष्ट चंचल बालक थे। उनकी बुद्धि शिशु रूप से ही तीक्ष्ण थी। माँ के साथ मंदिर जाना तो उनकी नित्य क्रिया में जुड़ गया था। यदि किसी कारणवश माँ मंदिर नहीं जा पाती तो उनकी आकुलता-व्याकुलता उनकी मनोदशा बता देती। फिर भी यदि कोई उन्हें मंदिर नहीं ले जाता तो वे मचल जाते। फिर उनको बहलाना बड़ा मुश्किल काम था। अभी उन्हें 'ॐ' बोलना आया था। अतः माँ को जाप करते देख उन्हें भी माला चाहिए होती और फिर ओम का जाप शुरू हो जाता। कभी एक मनका खिसकाते तो कभी एक साथ चार तो कभी माला ही नन्हे-नन्हे हाथों से संभल नहीं पाती। किन्तु फिर भी माला को पूरे वक्त पकड़े रखते। जब माँ हाथ जोड़ उठने को होती तब तक तो संदीप हाथ जोड़ माला चौकी पर रख उठ गए होते।

मंदिर जाने का चाव संदीप को इस कदर लग चुका था कि संदीप आंगन में खेलते मंदिर जाने वालों को पहचानने लगे थे। लोगों को भी संदीप में इतना आकर्षण लगता था कि रास्ते से ही वे आवाज लगाते- ''संदीप... मंदिर चलना है?'' और अपनी तुतली भाषा में ''आता हूँ'' कह संदीप दौड़ पड़ते और उनके साथ हो लेते। शुरू-शुरू में तो जब संदीप आंगन में नहीं दिखते, घर के लोग हैरान-परेशान हो जाते किन्तु जब उन्हें कोई लेकर छोड़ जाता तब समझ में

आता। अब तो संदीप जब भी घर-आंगन में नहीं दिखते, सब समझ जाते कि किसी के साथ मंदिर हो लिया होगा। घर आकर माँ से कहते- ''जै जै गया था।'' और बोलने लगते- ''महावीर भगवान की जै'' माँ तो अपने बबुआ पर मर मिटती।

बुंदेलखंड की प्रथानुसार माँ मुन्नीजी के लिए अब संदीप को गोद में ले खड़े-खड़े भगवान की पूजा करना संभव नहीं था। अतः वे बैठकर पूजा करती थीं। बालक संदीप भी पास में बैठकर माँ के साथ सारे द्रव्य क्रमानुसार चढ़ाते। उन्हें यद्यपि द्रव्य की पहचान नहीं थी किन्तु किसके बाद कौनसा द्रव्य चढ़ाना अच्छे से याद था। वे झटपट दर्शन कर बाल चपलतानुसार यहाँ-वहाँ खेलते रहते किन्तु जैसे ही माँ पूजा का पाटा लगाकर पूजा करने बैठती, कहीं भी हो, माँ के पास आ बैठते। आज मुन्नीजी का स्वास्थ्य थोड़ा नरम था पर वे पूजा करने बैठ गईं। संदीप भी उनके साथ छाहा (स्वाहा) बोलते अर्घ्य चढ़ा रहे थे। तभी माँ ने नैवेद्य की जगह भूल से दीप चढ़ाने के लिए ले लिया। नन्हें संदीप ने माँ का हाथ पकड़ लिया। उन्हें ठीक से बोलना नहीं आता था। जे जे (यह यह) कहते हुए संदीप ने अपने हाथ की नैवेद्य की चटक माँ के हाथ में पकड़ा दी व खुद ने नैवेद्य के लिए दूसरी चटक ले ली। माँ अपनी भूल को भूल गई किन्तु नन्हें से बेटे को देखती रह गई जिसे न किसी द्रव्य का नाम आता है न पूजा विधि। किन्तु किसके बाद कौनसा द्रव्य चढ़ाना है, उसे मालूम है। अर्थात् पूजा के वक्त संदीप अपनी बाल सुलभ चंचलता छोड़ एकाग्रता से पूजा करता है। अर्घ्य चढ़ाता है। पूजा के वक्त वह कभी उठकर कहीं नहीं जाता। ना ही उन्हें जरा सा भी परेशान करता है। वह ध्यान से द्रव्य चढ़ाता है। तभी उसे द्रव्य का क्रम याद हो गया। उन्हें समझते देर न लगी कि निश्चित ही संदीप साधारण बच्चों से कुछ अलग है।

घर आकर जब मुन्नीजी ने यह बात पति व अन्य सदस्यों को बताई तब सब मजाक करते हुए कहने लगे कि तुमने तो इसे गर्भ में ही पूजा करना सिखा दी थी। मुन्नीजी को अब यह पक्का हो गया कि संदीप की स्मरण शक्ति विलक्षण है।

संदीप अब थोड़ा-थोड़ा बोलने लगे थे। माँ उन्हें पंच परमेष्ठी के नाम व चौबीस तीर्थंकरों के नाम रोज बुलवाती। संदीप तुतलाते बोलते बड़े प्यारे लगते। माँ रात को संदीप को सुलाते या झूला झुलाते वक्त दर्शन स्तुति या कोई भजन सुनाती तब कहीं जाकर उन्हें नींद आती और यदि कभी बीच में रुक जाती तो नन्हें-नन्हें हाथों से माँ का मुँह पकड़कर बोलने को कहते। सच है भव्यात्माओं और महान आत्माओं को बचपन से ही अध्यात्म के व अन्य सुसंस्कार अपने आप मिलते रहते हैं। तिगोड़ा के ही एक सद्गृहस्थ उत्तमचंद जैन भी अक्सर बच्चों की पाठशाला पढ़ाया करते थे। संदीप उसमें भी अग्रणी रहते थे। वहाँ की प्राथमिक शाला में भी संदीप जाते थे। दादा (बब्बाजी) मदरसा जाओ बोलकर भेजते थे। किसको पता था कि यही बालक संदीप भविष्य के पट्टाचार्य अध्यात्म योगी महामुनि श्री सुनील सागरजी बनेंगे। पूत के लक्षण पालने में वाली कहावत चरितार्थ होने लगी।

नैनागिरि प्रसंग

संदीप ढाई तीन साल के रहे होंगे। मुन्नीजी अपने दूसरे प्रसव के लिए किशुनगंज अपने मैके गई। जहाँ उन्होंने अपने द्वितीय पुत्र संजय को जन्म दिया। बच्चा महीने भर का हो गया था। भागचंदजी को संदीप की बहुत याद आ रही थी और वे अपने दूसरे पुत्र को भी देखना चाहते थे। अतः वे अपनी ससुराल आए हुए थे। उन्हीं दिनों नैनागिरि में रिश्तेदारी में कोई शादी का प्रसंग था। आचार्य श्री विद्यासागरजी भी ससंघ नैनागिरि में विराजमान थे। भागचंदजी एकपंथ दो काज वाली बात सोचकर संदीप व उसकी नानी को साथ ले नैनागिरि पहुँच गए।

उन्होंने सवेरे का समय मंदिर दर्शन व आचार्य श्री के दर्शन व आहार देखने का रखा था। सो वे सबेरे-सबेरे संदीप

व उसकी नानी को साथ ले तीर्थ वंदना व गुरु दर्शन को चल पड़े। देव दर्शन से आकर आचार्य श्री विद्यासागरजी व संघ का दर्शन किया। संदीप ने भी आचार्य श्री व संघ का महाराजजी की जै बोलते हुए दर्शन किया।

संदीप ने आचार्य श्री व मुनियों को दिगम्बर भेष में देख पूछा- ''कक्का! (पापा) महालाजजी (महाराजजी) कप्पे क्यों नहीं पहनते?'' अब भागचंदजी इतने छोटे बच्चे को क्या समझाते। उसे जवाब दें तब तक संदीप ने अपना प्रश्न फिर से दोहरा दिया। तब भागचंदजी ने बड़े प्यार से संदीप को समझाया कि ''बेटा! महाराजजी को भगवान बनना है। अपने भगवान कपड़े नहीं पहनते इसलिए महाराजजी कपड़े नहीं पहनते।'' तब संदीप तपाक से बोले- ''कक्का! मुझे भी भगवान बनना है।'' पिता ने संदीप की बाल सुलभ बातें नजरअंदाज करते हुए कहा- ''ठीक है, बनना।'' पापा की बात सुन नन्हें संदीप तो ऐसे खुश हो रहे थे जैसे सच में भगवान बन गए हों।

अब भागचंदजी, संदीप व उसकी नानी आचार्य श्री व संघ की आहार चर्या देखने चल पड़े। मुनि संघ शुद्धि कर मंदिर में मुद्रा ले (अभिग्रह ले) आहार चर्या को चल पड़े। आगे आचार्य श्री थे। नन्हे संदीप अचरज भरी निगाहों से पड़गाहन का दृश्य देख रहे थे। लोग सिर पर कलश, हाथों में श्रीफल व अन्य फल लिए झुक-झुक कर ''ओ स्वामी! नमोस्तु... नमोस्तु...'' कहते हुए मुनियों व आचार्य श्री का पड़गाहन कर रहे थे। बालक संदीप को ''ओ स्वामी नमोस्तु...नमोस्तु...' ही समझ पड़ रही थी। एक चौके वाले के पास आचार्य श्री रुक गए। वे आचार्य श्री की तीन प्रदक्षिणा देने लगे। मंदिर में संदीप पिताजी के साथ भगवान की तीन प्रदक्षिणा लगाते थे अतः वे ''मैं भी महाराज के चक्कर लगाऊँगा'' कहते हुए हाथ छुड़ाकर भागने लगे। पिताजी ने पकड़कर पास खड़े करते हुए समझाया कि जब तुम बड़े हो जाओगे, तब प्रदक्षिणा भी लगाना। आहार भी देना। फिर वे उसे चौके के बाहर से आचार्य श्री का आहार दिखाने ले गए।

संदीप ने पापा से पूछा- ''महाराजजी का क्या नाम है?''

भागचंदजी- ''आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज।''

संदीप बार-बार अपनी तुतली भाषा में आचार्य श्री विद्यासागरजी, विद्यासागरजी बोलने लगे।

तभी संदीप अपनी हाफ पेन्ट नीचे खिसकाते हुए बोले, मेरे कप्पे खोल दो। मेरे कप्पे खोल दो। (कपड़े खोल दो)। पापा ने समझा, लघुशंका करना होगी।

उन्होंने कहा- ''धर्मशाला चलकर खोल देते हैं।''

संदीप जोर-जोर से चिल्लाने लगे- ''नहीं यहीं खोलना है, यहीं खोलना है। मुझे पहले महालाजजी बनना है। मुझे पहले महालाजजी बनना है।''

झट से पिताजी संदीप को गोद में उठाए धर्मशाला की तरफ भागे। पिताजी को रोते हुए संदीप का आखरी वाक्य समझ नहीं आया। वे तो यही समझे कि उसे सू-सू करना है। अतः कमरे में ले जाकर उनकी हाफ पेन्ट उतार दी। तब तक नानी भी आ गई थी। वह ऊपर के कपड़े खींचते हुए बोले- ''ये भी उतार दो। मुझे बले महालाजजी बनना है।'' सब लोगों को आचार्य श्री को बड़े महाराजजी बोलते हुए सुना था अतः संदीप भी बड़े महाराजजी बोलने लगे।

जब पिताजी ने उनकी बात नहीं सुनी व समझाने का प्रयत्न करने लगे तब तक संदीप रोते हुए जमीन पर लोट गए। वे जोर-जोर से रोते हुए कहते जा रहे थे- ''मेरे कप्पे (कपड़े) अभी के अभी उतारो, मुझे बड़े महाराजजी बनना है।'' आखिर बालहठ के आगे कौन जीत सका है। संदीप को रो-रो बेहाल होते देख आखिर नानी ने उनके कपड़े उतार दिये।

तब संदीप खुश होते हुए खड़े होकर महाराजजी की तरह नन्हा हाथ कंधे पर रख कहने लगे मुझे भी ओ स्वामी... ओ स्वामी... बोलो। पाटा बिछाओ। अब खड़े होकर मैं भी हाथों में खाना खाऊँगा। आहार लूँगा, ऐसा तो उन्हें बोलना आता नहीं था। अतः उन्होंने दोनों हाथ पास कर कहा- मुझे इसमें खाना दो। मैं बड़े महाराजजी जैसे खाना खाऊँगा।

अगर उस जिद्दी बच्चे को ना कहा जाता तो वह फिर पछाड़े खाकर भूमि पर गिर लोट लगाता पूरा कमरा सिर पर ले लेता। अभी भी कुछ लोग तो दरवाजे पर खड़े ही थे।

नानी ने बड़े प्यार से कहा- ''अभी मैं तेरे लिए खाना व पटा लेकर आती हूँ जिस पर तू खड़े-खड़े खाना। आ, जब तक तू कपड़े पहनकर बाहर खेल। बाद में फिर से उतार देंगे।''

भोले भाले संदीप कपड़े पहनने को पहले तो राजी ही नहीं हुए। नानी ने काफी बहला-फुसलाकर बड़ी मुश्किल से कपड़े पहनाए व खेलने को भेज दिया।

तब तक शादी के कार्यक्रम चालू हो गए थे। ढोल-ढमाके बज रहे थे। संदीप बच्चों के साथ ढोलक की थाप पर नाचकर सबका मन मोह रहे थे। लेकिन फिर भी थोड़ी-थोड़ी देर में पिताजी से पूछ रहे थे नानी कब आएगी। मुझे तो मुनि महाराज बनना है। महाराजजी जैसे खाना खाना है।

पिताजी चिंतित थे कि कहीं फिर संदीप मचलने न लग जाए। उन्होंने समझाया बेटे, घर जाकर व्यवस्था करेंगे। यहाँ नहीं हो रही है। लेकिन थोड़ी-थोड़ी देर में एक ही बात कह रहे थे- ''मुझे बड़े महाराजजी बनना है।'' संदीप के मन में बस एक ही धुन सवार थी, ''महाराजजी बनना है।'' भागचंदजी अब शीघ्र ही नैनागिरि छोड़ देना चाहते थे।

शिक्षा

संदीप चार वर्ष के होने आए थे। आस-पड़ोस के बड़े बच्चों को स्कूल जाते देख वे भी स्कूल जाने की जिद करते। मुझे पट्टी-पेम ला दो, मुझे भी पढ़ने जाना है। जिन बच्चों के साथ संदीप खेलते थे, शांत स्वभाव व मृदुभाषी होने के कारण सबके चहेते थे। भैया, मुझे भी स्कूल ले चलो, कह वह उनके साथ स्कूल हो लेते पर शिक्षक इतने छोटे बच्चे को साथ में स्कूल लाने के लिए मना करते।

बब्बाजी (दादाजी) मोतीलालजी ने संदीप की स्कूल जाने की जिद व पढ़ने की लगन देख पं. उत्तमचंदजी के पास पाठशाला में गुरु पूर्णिमा के दिन बिठा दिया। पंडितजी बच्चों को धार्मिक शिक्षा तो मौखिक सिखाते थे पर साथ ही उन्हें अक्षर ज्ञान व अंक ज्ञान की शिक्षा दे पढ़ना-लिखना भी सिखाते थे। वहाँ संदीप को जो अक्षर लिखना सिखाया जाता, घर पर बैठे-बैठे लिखते रहते। बब्बाजी नन्हें संदीप को चलो मदरसे चलो (पाठशाला को उन दिनों लोग मदरसा बोलते थे) कहकर उंगली पकड़ मदरसे छोड़ आते। संदीप की तो मन की मुराद पूरी हो गई। शुरू-शुरू में तो संदीप बब्बाजी की उंगली पकड़ मदरसे जाते किंतु चार छह दिन बाद तो वे बब्बाजी की उंगली छुड़ा मदरसे (पाठशाला) की ओर दौड़ लगा देते।

''शैतान कहीं का'' कहते हुए बब्बाजी मुस्करा देते। फिर भी तसल्ली के लिए मरदसे तक जाकर संदीप को देख आते। वहाँ घंटा दो घंटा पढ़ाई कर वापस घर आ जाते। घर आते ही पुनः मुझे स्कूल जाना, स्कूल जाना की रट शुरू हो जाती। अब संदीप को घर में रखना मुश्किल था।

बब्बाजी ने आखिर शुभ मुहूरत दिखला संदीप को स्कूल में भर्ती करा दिया। उन्होंने शिक्षकों से कहा कि भले ही अभी इसका नाम मत लिखना, पर इसे स्कूल में बैठने दीजिए। संदीप पहली कक्षा के विद्यार्थियों के साथ बैठने लगे, जो उनसे बड़े थे। संदीप मदरसे में भी सीखते थे अतः उन्हें लिखना-पढ़ना (अक्षर ज्ञान होने लगा) आने लगा। संदीप दूसरे बच्चों को भी सिखाते थे। शिक्षक को समझते देर न लगी कि संदीप कुशाग्र बुद्धि का बालक है। मोतीलालजी का परिवार गाँव का प्रतिष्ठित परिवार था अतः सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था। संदीप को स्कूल गए जुम्मे-जुम्मे चार दिन भी नहीं हुए थे कि एक दिन भागचंदजी से संदीप के शिक्षक ने कहा, ''सेठ साहब! आपका बेटा बड़ा होशियार व होनहार है।'' भागचंदजी शिक्षक के मुँह से बेटे की प्रशंसा सुन फूले नहीं समाए। 'पूत के लक्षण पालने में' संदीप

तो पग-पग पर अपनी कुशाग्रता का परिचय देता आ रहा था।

मीठा-मीठा खेलें अनोखा खेल

संदीप मदरसे क्या जाने लगे, उनके छोटे-छोटे कुछ बाल सखा बन गए। संदीप उन्हें अपने साथ खेलने के लिए घर ले आते। यद्यपि वे संदीप से उम्र में बड़े थे, पर सब साथ ही खेलते रहते। आसपास के कुछ बच्चे भी अक्सर संदीप के साथ खेलने उनके ही घर आ जाते।

जब मैं इस कृति के लेखन के सम्बन्ध में जानकारियाँ हासिल करने व गुरु जन्मभूमि गुरुग्राम तिगोड़ा के दर्शनार्थ गई, तब उनके परिजन व रिश्ते में चाची ने मुझे यह घटना बताई।

जब भी संदीप के बाल सखा खेलने घर में एकत्र होते, खेलने से पूर्व संदीप चाची के पास कटोरी में शक्कर लेने जाते। एक बार नहीं, दो बार नहीं, यह क्रम जब भी बच्चे खेलने आते, संदीप का चलता रहता। चाची ने बड़े प्यार से एक दिन पूछा- ''बउआ! तुम इस शक्कर का क्या करोगे?'' संदीप ने अपनी मीठी सहज, सरल वाणी में बड़े भोलेपन से कह दिया- ''हम मीठा-मीठा खेलेंगे।''

शुरू में तो काम की व्यस्ततावश चाची इस बात पर ध्यान न दे पाई। लेकिन जब संदीप का कटोरी में शक्कर ले जाने का सिलसिला जारी रहा तब कुतुहलवश चाची ने जाकर देखा कि संदीप ऐसा कौनसा मीठा-मीठा खेल खेलते हैं?

अब हम संदीप के गृहस्थ जीवन के विशाल पुश्तैनी मकान की उस देहरी के पास खड़े थे। चाची अतीत में खोई हर्ष विभोर हो बोल पड़ी- महाराजजी (संदीप) इसी देहरी पर बैठकर अपना मीठा-मीठा खेल प्रारंभ करते थे। जब यह देहरी और ऊँची व चौड़ी हुआ करती थी, बाद में जिसे तुड़वाकर थोड़ी नीची करवा दी गई थी पर अभी भी वह ऊँची ही है। इसी देहरी को लांघ बैठक कक्ष से अन्दर जाया जाता था। संदीप इसी देहरी पर बैठ, बैठक में बैठी अपनी बाल सखा मंडली को थोड़ी-थोड़ी शक्कर बाँटते जाते व कहते जाते कि 'अब हम मीठा-मीठा खेलेंगे'। कोई किसी से झगड़ेगा नहीं, मारपीट नहीं करेगा। चाची कहने लगी। संदीप के बालमन की इस निश्छल बात को सुन कर मेरा हृदय ममता से भर गया और मैंने संदीप (महाराजजी) को गोद में उठाकर उनका माथा चूम लिया। अब उनको व घर भर के सदस्यों को समझ में आया कि इतने बच्चे खेलते हैं, पर कोई भी आपस में झगड़ता नहीं है। आज भी जब घर में बच्चे खेलते-झगड़ते हैं, तब संदीप (महाराजजी) बउआ के उस मीठे-मीठे अनोखे खेल की चर्चा छिड़ जाती। हर कोई तब भी व आज भी कहता है कि इतने छोटे बच्चे में ऐसी भावना व विचार कैसे आए?

पर आज उनके इस अनोखे मीठे खेल के पीछे छुपी भावना का रहस्य समझ आता है कि यह उनकी वात्सल्य व प्रेम की संत हृदय की भावना की एक झलक थी जो आज वे सारे विश्व को बाँट रहे हैं। आचार्य संघ में रहते व आज स्वयं इतने विशाल चतुर्विध संघ के नायक होने के बावजूद भी वे अपने मृदु व्यवहार व मधुर वाणी के कारण सबके हृदयों पर राज करते हैं। संघ में वे सबके चहेते व अजीज रहे व आज भी हैं। इसी विनयशील स्वभाव व विद्वत्ता होने के कारण आचार्य गुरु तपस्वी सम्राट सन्मतिसागरजी की आँखों के तारे प्रियाग्र शिष्य बने रह उनके पट्ट नायक बन गये।

प्रारंभिक (प्राथमिक) शिक्षा

भागचंदजी अपने बच्चों के भविष्य के प्रति विशेष सावचेत थे। उन्हें तिगोड़ा में बच्चों की पढ़ाई- लिखाई की कुछ खास अनुकूलता नहीं लगी। व्यापार व्यवसाय की दृष्टि से भी वे तिगोड़ा छोड़ने की सोच रहे थे। तभी ससुराल किशुनगंज

में अनहोनी घटना घट गई। उनके ससुर शांत हो गए थे व कुछ समय पश्चात ही चौदह- पंद्रह वर्षीय एकमात्र साला भी गुजर गया। ससुराल पक्ष असहाय हो गया। यह निमित्त ही कहो भागचंदजी व मुन्नीजी ने किशुनगंज में बसने का निर्णय ले लिया और एक दिन तिगोड़ा छोड़ वे किशुनगंज चले गए।

एक-दो दिन तो संदीप को नानी के घर अच्छा नहीं लगा किंतु अब वे वापस जल्दी तिगोड़ा जाने की रट लगाए थे। मुझे मदरसे जाना है, मुझे स्कूल जाना है, मुझे यहाँ नहीं रहना। चलो, तिगोड़ा चलो। जब माँ ने संदीप को समझाया कि अब हम तिगोड़ा नहीं जाएँगे, यहीं रहेंगे, सुनकर तो संदीप दहाड़े मार-मारकर रोने लगे। किशुनगंज अच्छा नहीं है, किशुनगंज अच्छा नहीं है, मुझे तो तिगोड़ा ही जाना है। संदीप ने खाना-पीना छोड़ दिया। पूरा घर सिर पर उठा लिया। संदीप का रो-रोकर बुरा हाल था। माँ पिताजी को तो पहले से ही संदीप की मनोदशा का अंदाजा था। जब संदीप रो-रोकर थक गए, तब भूखे- प्यासे जमीन पर ही सो गए। माँ भी उदास थी, उसने भी खाना नहीं खाया।

भागचंदजी ने मुन्नीजी से कहा, ''हम कल ही संदीप को स्कूल में भर्ती करवा देंगे। पर अभी संदीप छोटा है, उसे स्कूल में बिठाएँगे भी कि नहीं। तिगोड़ा में तो सब परिचित थे पर यहाँ...। कैसे क्या होगा? अभी संदीप उठेगा- तब फिर स्कूल जाने के लिए हंगामा मचाएगा।'' तभी मुन्नीजी की छोटी बहन अपने स्कूल के सर को जो पास में ही रहते थे, बुला लाई। इतने में संदीप उठ गए व फिर से स्कूल जाने का रोना-गाना शुरू हो गया। शिक्षक ने संदीप को समझाया कि वह कल से ही मौसी के साथ स्कूल आए। यहाँ का स्कूल बहुत अच्छा है। उन्होंने संदीप को समझा- बुझाकर चुप करा दिया। खाने, खेलने- कूदने की उम्र में इतने छोटे बच्चे की पढ़ने की ऐसी ललक देख वे खुश हो गए। इस उम्र के बच्चे तो स्कूल जाने के नाम पर रोते हैं और यह है कि स्कूल जाने के लिए रो रहा था।

जाते-जाते शिक्षक संदीप को पुचकारते हुए बोल गए कि ''अब तुम खाना खाओगे, रो-रोकर मम्मी-पापा को परेशान नहीं करोगे व कल से मौसी के साथ स्कूल आओगे।'' उदास संदीप ने गर्दन हिला कर हाँ कर दी।

दूसरे दिन माँ ने संदीप को तैयार कर मौसी के साथ स्कूल भेज दिया। संदीप अनमने मन से चुपचाप मौसी की उंगली पकड़े स्कूल जा रहे थे। मौसी उन्हें पहली कक्षा के शिक्षक से बात कर कक्ष में बिठा अपनी कक्षा में चली गई। तब तक वो शिक्षक भी आ गए थे। परिचित शिक्षक को देख संदीप की आँखों में चमक आ गई।

नए शिक्षक, नया माहौल, नए बच्चे, सब कुछ नया-नया। वैसे भी संदीप कम बोलते ऊपर से अजनबीपना। संदीप चुपचाप बैठ गए। शिक्षक थोड़े इधर-उधर हुए कि चार-छह बच्चे संदीप को घेर कर बैठ गए। कोई उनसे नाम पूछ रहा था तो कोई गाँव। कोई पूछ रहा था कहाँ रहता है तो कोई पूछ रहा था तू किसके साथ आया? बाल सुलभ बातें हो रही थीं। बच्चों का साथ पा, संदीप के मन की उदासी का कुहरा छंटने लगा। एक-दो दिन में वे बच्चों के साथ घुल मिल गए। पर कुछ भी हो तिगोड़ा व वहाँ का स्कूल, मदरसा व बाल मित्रमंडली उनकी रग-रग में रच-बस गई थी। किशुनगंज उन्हें रास नहीं आ रहा था। सारे नन्हें-नन्हें उसके हम उम्र साथी पीछे छूट गए थे। फिर से नए दोस्त बनाना, नए माहौल में ढलना। तिगोड़ा में तो उन्हें दोस्त बनाने नहीं पड़े, जन्म से ही मानो दोस्त मिले थे पर यहाँ...।

स्कूल में पहला दिन संदीप का अच्छा रहा। शिक्षक का भी विशेष स्नेह रहा। बच्चे भी नए दोस्त को साथ लेकर घूम फिर व खेल रहे थे। संदीप छीना-झपटी करने व बच्चों से मारपीट करने वाला शैतान बच्चा नहीं था। अतः बच्चों में नए दोस्त संदीप को अपने पास बिठाने की होड़ मची रहती। बच्चों में निश्छल स्नेह होता है। धीरे-धीरे संदीप स्कूल के माहौल में ढलने लगे। घर आकर वे अपने नए बाल दोस्तों के बारे में माँ को बताया करते। माँ तो यही चाहती थी कि उनका मन यहाँ रम जाए।

स्कूल में जो भी पढ़ाया सिखाया जाता, संदीप ध्यान से बड़ी लगन से सीखते। अभी उन्हें अक्षर व अंक ज्ञान दिया

जाता था। कुशाग्र बुद्धि होने से उन्हें बहुत जल्दी एक या दो बार में ही पढ़ना- लिखना आ जाता। वे बार-बार पढ़ते- लिखते व कंठस्थ याद करते। उन्हें जल्दी पढ़ना- लिखना आ जाता तब वे बचे टाइम में कक्षा के अन्य बच्चों को सिखाते। कक्षा के सब बच्चे संदीप को चाहते थे, इधर शिक्षक भी उनसे बहुत खुश थे। वे संदीप के इस गुण के कारण उन्हें बहुत प्यार करते। स्कूल में जो भी पढ़ा-लिखा, घर जाकर संदीप माँ को लिखकर व पढ़कर सुनाते। माँ बड़ी खुश थी कि चलो संदीप का मन अब यहाँ लग गया है। उसके बाद संदीप का रोना-गाना बंद हो गया था। पर अब भी जब- तब संदीप तिगोड़ा वापस जाने की जिद तो करते थे। कई बार घर की याद कर अनमने हो जाते।

संदीप तो क्या, माँ-पिताजी को भी तिगोड़ा की यादें सताती रहती। सच है, जिन जड़ों से जुड़े हैं, जिनसे जीवन रस सोखा है वे इतनी जल्दी भुलाई थोड़े ही जा सकती है। संदीप के बालमन पर इनका गहरा असर था क्योंकि अभी तक उनकी सारी छोटी-सी दुनिया तिगोड़ा ही थी। खैर किशुनगंज में आज किसी का मन न लगे पर रहना यहीं है तो मन भी वहीं लगाना पड़ेगा।

संदीप कक्षा में ही नहीं पूरी शाला में कुशाग्र व तीक्ष्ण बुद्धि वाले छात्र के रूप में जाने जाने लगे। स्कूल में पढ़ाया घर आकर गृहकार्य के रूप में करते। वे रोज एक दो पहाड़े कंठस्थ करते। सभी विषयों में वे अव्वल थे। शाला के शिक्षक उन्हें बहुत चाहते थे। संदीप के पीछे-पीछे उनके छोटे भाई संजय भी स्कूल जाने लगे थे। जब भी शिक्षक भागचंदजी से मिलते, कहते ''सेठ साहब आपका बच्चा संदीप बहुत होशियार है। इसे शहर के किसी अच्छे व बड़े स्कूल में पढ़ाओ।'' भागचंदजी तो संदीप की विलक्षण बुद्धि से पहले से ही परिचित थे। संदीप ने तीसरी कक्षा पास कर ली। हर क्लास में उनका पहला नंबर रहता। पढ़ाई, खेलकूद व अन्य गतिविधियों में भी संदीप सबसे आगे रहते। बचपन से ही वे सबसे मिल-जुलकर रहते। किसी बच्चे से उनकी कभी लड़ाई- झगड़ा नहीं होता। कमजोर बच्चों को वे पढ़ना- लिखना सिखाते। वे शिक्षकों के साथ-साथ छात्रों के भी प्रिय थे। वे स्कूल में बड़े विनयी, शिक्षकों के आज्ञापालक, पढ़ाई में अव्वल व प्रत्येक कार्य में आगे रह नेतृत्व करने वाले आदर्श विद्यार्थी थे। बहुत छोटी उम्र से ही उनमें ये बड़े-बड़े गुण दृष्टिगत थे।

उनकी स्मरण शक्ति अत्यधिक तीव्र थी। एक बार पढ़ने- सुनने पर उन्हें याद हो जाता। पाठ्यपुस्तकों की सारी कविताएँ, कहानियाँ वे शाला खुलने के प्रारंभिक दिनों में कंठस्थ कर लेते व बड़े रोचक ढंग से बालसभा में सुनाते। उनकी उम्र के बच्चों को ठीक से हिंदी पढ़ना भी नहीं आती और वे फर्राटे से हिंदी पढ़ते व सुनाते। नन्हे संदीप में बचपन से ही देश के इतिहास, भूगोल विषय में विशेष रुचि थी। उनकी यह रुचि तिगोड़ा के जिन मंदिरों को देखकर जाग्रत हुई। नन्हे संदीप माँ-पिता के साथ मंदिर जाते तो उनसे कभी-कभी उत्सुकतावश पूछ लेते, ''यह मंदिर किसने और कब बनवाया। ये मूर्तियाँ कहाँ से लाते हैं आदि आदि।'' इसी पूछताछ में संदीप को एक दिन पता चला कि तिगोड़ा का एक मंदिर उनके परिवार के ही बाप-दादाओं ने बनवाया था जिसे माथे का मंदिर या सेठजी का मंदिर कहते हैं। यह हमारे परिवार द्वारा बनाया गया मंदिर सुन वह माँ से अक्सर कहा करते, ''माँ मैं भी ऐसा मंदिर बनवाऊँगा, जब बड़ा हो जाऊँगा न तब।'' माँ संदीप की बात सुन खुश हो जाती व उन्हें बहुत दुलार करती। कहती ''ठीक है बेटा बनवाना। परिवार की परंपरा निभाना। इस परिवार ने दो जिन मंदिर बनवाए हैं तीसरा तू बनवाना।'' आज वही संदीप पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी के रूप में बचपन में कही बात सत्य सिद्ध कर रहे हैं। न माँ को न ही संदीप को पता था कि कालान्तर में पट्टाचार्य पद पर आरोहित मुनि सुनीलसागरजी की प्रेरणा से जगह-जगह जिन मंदिरों का निर्माण व प्राण प्रतिष्ठा होगी। यही नहीं वे उपदेशों द्वारा तथा भव्यात्माओं को दीक्षा देकर न जाने कितने- कितने मानव मनों को मंदिर बना रहे हैं। भविष्य बचपन में ही संदीप की जिह्वा से बोल पड़ा था।

दोस्त मजीद एवं ईद

एक दिन माँ बच्चों को खाना खिला रही थी। तभी संदीप माँ से बोले, ''माँ कल खीर बनाना।'' माँ आश्चर्य से संदीप का मुँह देखने लगी। प्रसन्न हो वे कहने लगी, ''वाह मेरे गूंगे बेटे ने पहली बार अपनी फरमाइश रखी है, जरूर कल खीर बनेगी। दूसरे बच्चे तो जब-तब मनपसंद खाना बनाने की जिद करते हैं पर संदीप ने पहली बार मुँह खोला है। छोटे भाई भी बहुत खुश थे। तब संदीप ने कहा, ''माँ यह मेरी फरमाइश नहीं, कल मजीद (दोस्त) की मीठी ईद का त्यौहार है। उसके घर सेवयां की खीर बनेगी। जब मजीद नमाज अदा कर अपने अब्बा जान के साथ हमारे घर ईद मिलन के लिए आएगा, हम उन्हें खीर खिलाकर उनका मुँह मीठा करेंगे।'' ''अरे मैं तो भूल ही गई कि कल ईद है।''

मजीद मस्जिद से नमाज अदा कर घर आकर सबसे पहले अपने अब्बाजान के साथ संदीप के घर गया। बड़े लोग आपस में गले मिलकर प्रेम भाईचारे की बात करने लगे। संदीप और मजीद भी आपस में गलबहियाँ डाले बाल सुलभ बातें करने लगे। मजीद अपने दोस्त संदीप को सुबह से लेकर नमाज अदा करने तथा नए कपड़े व जो टोपी पहनी थी, उसके खरीदने तक की सारी बातें बताने लगा। तभी माँ सबके लिए खीर ले आई। इस पर मजीद के अब्बा बोल उठे, ''खीर तो भाभी जान हमें आपको खिलाना चाहिए थी, पर आज आपने हमें खीर खिलाकर हमारी ईद की खुशी को कई गुना बढ़ा दिया।'' ''यह तो संदीप की फरमाइश थी कि वह अपने दोस्त को खीर खिलाएगा।'' मुन्नीजी ने खुशी जाहिर करते हुए कहा।

यद्यपि मजीद व संदीप के परिवारों का आपसी पुश्तैनी रिश्ता था किंतु संदीप व मजीद की दोस्ती ने उन्हें और प्रगाढ़ बना दिया। संदीप अक्सर छुट्टी वाले दिन या स्कूल से छुट्टी होने पर मजीद के घर चले जाते थे। मजीद के अब्बा मिट्टी के खिलौने बनाते थे। नन्हा मजीद भी कभी अब्बा को मिट्टी के लौंदे ले जा- ले जाकर देता तो कभी खिलौने इधर-उधर करता रहता। संदीप की मजीद से दोस्ती होने व उसके घर जाने के कारण उन्हें भी गीली मिट्टी के लौंदे उठाने, खिलौने उठाने- धरने में बड़ा मजा आता। वे मजीद के अब्बा को खिलौने बनाते बड़े ध्यान से देखते व मिट्टी लेकर किसी भी आकार का खिलौना बनाकर खुशी से चिल्लाते- देखो अम्मी हमने भी खिलौना बनाया है बड़ा सुंदर है ना! उन बच्चों के खिलौने देख-देख अम्मी की हँसी छूट जाती। वे जोर-जोर से हँसते हुए मजीद के अब्बा से कहती ''देखो तो बच्चों ने कितने प्यारे खिलौने बनाए हैं। जगह- जगह रखे मिट्टी के छोटे-बड़े गोलों को देख वे भी अपनी हँसी नहीं रोक पाते।'' मजीद को तो माँ की हिदायतें सुन-सुन पता था कि सूखे खिलौने उठाना चाहिए पर संदीप तो थोड़ी देर के लिए मजीद के घर जाते अतः उन्हें कुछ पता नहीं था। और वे गीले खिलौने ही उठाने लग जाते। उठाते वक्त कई खिलौने टूट जाते और वे रुआंसे हो जाते। तब मजीद की अम्मी संदीप को बड़े प्यार से समझाती कि सूखे हुए खिलौने उठाना चाहिए और वे सारे गीले टूटे हुए खिलौनों का बड़ा लौंदा बनाकर फिर से उससे छोटे-बड़े खिलौने बनाने लग जाती पर कभी बच्चों को नहीं डांटती।

संदीप का मिट्टी के खिलौनों में जीवन दर्शन

संदीप बचपन से प्रकृति के साथ खेलकर बड़े हुए हैं। कभी भी बड़े व महँगे खिलौनों की जिद नहीं करते। जहाँ मिट्टी दिखी कि वे उसे इकट्ठा करके तरह-तरह के खिलौने बनाने लग जाते। वह इस शौक में अपने सपनों को आकार देते, कभी बड़ा शिखरबद्ध जिन मंदिर बनाते तो कभी पशु रक्षा व दया, अहिंसा, परोपकार, एकता आदि ऊँची भावनाओं को छोटी-छोटी आकृति बनाकर दृढ़ करते। इस खेल-खेल में कहीं कुछ टूट जाए तो नए उत्साह के साथ पुनः बनाते तो कभी मित्रवर्ग द्वारा कुछ बिखर जाए तो भी उतनी ही सहजता से अनित्यादि भावना का चिंतन कर प्रसन्न रहते थे। रोना या रुलाना, पीटना या झगड़ना संदीप को आता ही न था। खेलना व खिलखिलाना उनकी आदत में शुमार था।

उनकी उपस्थिति में घर, परिवार, मित्र हर कहीं खुशनुमा वातावरण बना रहता था।

चूँकि संदीप अक्सर मजीद के घर जाते रहते थे, अतः संदीप मजीद के साथ खिलौने बनाने का खेल खेलते रहते। अब संदीप मिट्टी के छोटे-छोटे लौंदे उठाकर कभी गायनुमा पशु व उसकी रोटी बनाते तो कभी पक्षी बनाकर छोटा सा पानी का सिकोरानुमा लौंदा उसके पास रख देते। कभी मंदिर व शिखरनुमा आकार मिट्टी के लौंदे को देने का प्रयत्न करते। मजीद की अम्मी को संदीप अम्मी कहकर ही पुकारते थे तथा वे भी संदीप से मजीद जैसा ही स्नेह रखती थी। संदीप अपने हर खिलौने के बन जाने पर अम्मी को खुशी से आवाज लगाते- ''देखो अम्मी, हमने गाय-रोटी बनाई है, पक्षी व उसके पानी पीने का सिकोरा बनाया है, मंदिर का शिखर बनाया है, मस्जिद का गुम्बद बनाया है, फूल बनाया है, पत्ती बनाई है।'' जब भी संदीप मजीद के घर जाते, इसी तरह पशु-पक्षियों आदि के लौंदेनुमा खिलौने बनाते रहते। वे मिट्टी के लौदों को आकार देकर गणेशजी व शंकरजी भी बनाते व दोनों मित्र एक-दूसरे के खिलौने देख खुश होते। उनमें कभी तेरे खिलौने से मेरा खिलौना अच्छा, ऐसी होड़ नहीं रही। बस वे तो अब्बा-अम्मी को दिखाना भर चाहते थे। एक दिन संदीप ने चकला-बेलन बनाकर अम्मी को आवाज लगाई- देखो मैंने आपके व मेरी मम्मी के लिए क्या बनाया है। अम्मी तो संदीप पर वारी-न्यारी हो गई। संदीप ने कहा- अम्मी एक जोड़ मैं आपके लिए यहीं रख जाऊँगा, दूसरा मम्मी के लिए घर ले जाऊँगा, कहते-कहते संदीप ने गीले खिलौने ही उठा लिए। अम्मी-अब्बा की हँसी के फव्वारे छूट गए। चकला बेलन टूटकर मिट्टी के गोले बन गए।

अम्मी मजीद के अब्बू से कहती- ''देखो संदीप को सबसे कितना लगाव है। पशु-पक्षी, मंदिर-मस्जिद, माँ, अतः इन खिलौनों से उसके विशाल हृदय व प्रेम की भावना झलकती है। वह बड़ी संजीदगी से खिलौने बनाता है भले उसे बनाना नहीं आता है। देखना वह बड़ा होकर नेक व बेहतर इंसान बनेगा।'' और भी उन्होंने संदीप के लिए कई अच्छी-अच्छी बातें कही। वे अल्लाह ताला से हाथ ऊपर उठाकर संदीप के लिए दुआएँ माँगने लग जाती- ''या अल्लाह-संदीप को दुनिया की सारी नियामतें बख्श दें।''

कभी-कभी अन्य दोस्त भी संदीप के साथ मजीद के घर चले जाते। वे खिलौने तो कम बनाते, शैतानी ज्यादा करते व संदीप व मजीद के खिलौने तोड़ डालते। कभी-कभी अब्बू के खिलौने भी तोड़ देते। मजीद तो गुस्से में कभी-कभी मारपीट भी कर देता पर संदीप तो कभी दोस्तों से लड़ते-झगड़ते ही नहीं थे। तो फिर मारपीट करना बहुत दूर की बात। वे फिर से खिलौने बनाने लग जाते व मजीद से भी कहते, चल छोड़ न यार झगड़ा करना, इतनी देर में तो फिर से खिलौने बना लेता। इनसे लड़ने-झगड़ने में खिलौने बनाने का मजा किरकिरा नहीं करना। संदीप की प्रेम भरी बातें सुन वे छोटे-छोटे उसके दोस्त कहने लगते- अब हम भी चुपचाप खिलौने बनाएँगे। तुम्हारे खिलौने नहीं तोड़ेंगे। इस प्रकार संदीप में प्रेम से हृदय परिवर्तन करने के संस्कार बचपन से ही थे। उन्हें प्रकृति व पशु-पक्षियों से प्रेम था। जो आचार्यश्री में आज भी तदनुरूप बना हुआ है। कभी उनके पास बंदर, कुत्ते, बिल्ली आकर बैठ जाते हैं तो कभी पक्षी उनके हाथ, कंधे आदि पर आकर बैठ जाते हैं।

संदीप व मजीद की दोस्ती यथावत चलती रही। दोनों बच्चों की अपनी बाल दुनिया निराली थी। कब ईद बीत गई व कब दीवाली आ गई पता ही नहीं चला। माँ से गुझिया हाथ में ले संदीप ने मजीद के घर की ओर दौड़ लगा दी। आधा गुझिया मजीद को दे, गलबहियाँ डाल दोनों बच्चे बड़े चाव से गुझिया खाने लगे। मजीद की अम्मी, अब्बा इन नन्हें बच्चों का आपस में स्नेह देख-देख बड़े खुश होते।

दीवाली की रात को संदीप अपने हिस्से के पटाखे ले मजीद के घर चले गए। मजीद के अब्बा की देख-रेख में दोनों ने पटाखे छोड़े। संदीप अपनी हर चीज मजीद से शेयर करते। जब पटाखे समाप्त हो गए दोनों बच्चे

खटिया पर बैठकर बातें करने लगे। लाइट थी नहीं अतः अंधेरा था। तभी संदीप किसी कीड़े के काटने से चीख पड़े। असह्य पीड़ा से वे चीख-चीखकर रोने लगे। मजीद के अब्बू ने लालटेन के उजाले में देखा, संदीप को बिच्छू ने काट लिया था। मजीद की अम्मी दौड़ी आई। संदीप को गोद में लिटाए वह बिच्छू के डंक मारने वाली जगह फूंक मारकर शीतलता प्रदान करने की कोशिश कर रही थी। संदीप का दर्द बढ़ता जा रहा था क्योंकि बिच्छू का जहर चढ़ता जा रहा था। आसपास के लोग इकट्ठा हो गए थे। संदीप के घर भी खबर पहुँच गई थी। माँ-पिताजी, भाई भी दौड़े चले आए। तभी मजीद के अब्बू कोई जड़ी घिसकर कटोरी में ले आए व बिच्छू के डंक वाली जगह लगाई। थोड़ी देर बाद संदीप को थोड़ी शांति महसूस हुई। धीरे-धीरे उन्हें मजीद की अम्मी की गोद में ही नींद आ गई।

जब संदीप को आराम लगने लगा, तब माँ-पिताजी उन्हें घर ले गए। पर संदीप का कभी मजीद के घर जाना नहीं रुका।

छोटी लकीर-बड़ी लकीर

अब संदीप चौथी कक्षा में आ गए थे। टीचर बोर्ड पर कुछ लिख रहे थे। वे ध्यान से देख रहे थे तभी उन्होंने बोर्ड पर एक लकीर खींची व बच्चों से पूछा, ''बताओ बच्चों इस लकीर को छोटा कैसे किया जाए।'' एक-एक कर कक्षा के सारे बच्चों से शिक्षक ने पूछा पर वे किसी के जवाब से संतुष्ट नहीं हुए। छात्र संदीप तो अभी-अभी कक्षा में आकर बैठे थे अतः शिक्षक ने उन्हें पूछना मुनासिब नहीं समझा। किंतु संदीप ने जवाब देने के लिए हाथ खड़े कर दिए।

शिक्षक ने संदीप की तरफ देखते हुए पूछा, ''क्या नाम है तुम्हारा बेटे।'' मानो संदीप के कानों में तो अमृत घुल गया। शिक्षक जैसी ही मधुरवाणी में संदीप ने नाम बताया 'संदीप'। टीचर ने पूछा ''तुम बताओगे इसका उत्तर?'' ''जी'' धीरे से कहते हुए संदीप ने शिक्षक की टेबल पर से चॉक उठाया और बोर्ड पर जो लकीर खींची गई थी उसके ऊपर अपनी बाल बुद्धि से लम्बी सी लकीर खींच दी। और उत्तर दिया, ''सर, यह लकीर अपने आप छोटी हो गई।'' सर ने शाबासी देते हुए सब बच्चों से संदीप के लिए तालियाँ बजवाईं।

'फर्स्ट इम्प्रेशन इज दि लॉस्ट इम्प्रेशन' संदीप का कक्षा में पहला इम्प्रेशन ही इतना धमाकेदार था कि शाला में क्या छात्र, क्या शिक्षक, संदीप ने सबसे बिना बोले अपना लोहा मनवा लिया। शिक्षक ने संदीप की प्रतिभा की परीक्षा लेते हुए पूछा, ''संदीप! तुम्हारे दिमाग में त्वरित यह उत्तर आना बहुत बड़ी बात है। दूसरा तुम्हें यह उत्तर आया कैसे?'' संदीप ने जो जवाब दिया उससे तो शिक्षक उस नन्हे बालक की तर्क बुद्धि देख दाँतों तले उंगली दबाने लगे। बिल्कुल अप्रत्याशित किंतु सटीक उत्तर। सर यदि छोटे भाई के पास बड़े भाई को खड़ा कर देंगे तो वह अपने आप छोटा हो जाएगा। लकीर तो चॉक से खींची है जिसे मिटाया जा सकता है किंतु छोटी वस्तु को तो छोटा नहीं किया जा सकता। बड़े काम करने से आदमी बड़ा बन जाता है। छोटा छोटा ही रह जाता है। यह लकीर हमें बताती है कि मुझे मिटाओ मत, अपने अच्छे कामों की बड़ी लकीर खींच दो। मैंने बड़ी लकीर खींच दी और शिक्षक संदीप के इस उत्तर से आश्चर्यचकित थे। शिक्षक ने संदीप की न केवल कक्षा में प्रशंसा की, दूसरे दिन प्रार्थना के वक्त भी पूरी शाला के बच्चों के सम्मुख उसे खड़ा कर भूरि-भूरि प्रशंसा की। और संदीप शाला के 'हीरो' बन गए। छोटे भाई संजय ने घर आकर भैया के बारे में बताया तो माँ ने तो संदीप को छाती से लगा लिया। यह कहते हुए कि ''मेरा संदीप तो बहुत बड़ा आदमी बनेगा।'' वे बड़ी खुश हो गई।

नदी में डूबना

किशुनगंज जाने के बाद भी संदीप पिताजी के साथ अक्सर तिगोड़ा आते-जाते रहते थे। एक बार वे अपने दोस्तों के साथ गाँव बाहर की छोटी नदी बंदिया किनारे घूमते-घामते पहुँच गए। सब बच्चों ने नदी में नहाने का प्लान बनाया। संदीप बाजू में खड़े सुनते रहे। बालमंडली ने संदीप को एक बाजू चुपचाप खड़े देखा। तब पूछा- ''संदीप! तू नहीं नहाएगा क्या?''

संदीप कुछ जवाब देते, तब तक कुछ बच्चे उसे खींचकर पानी में ले जाने लगे। संदीप का बालमन भी स्वयं को रोक नहीं पाया। वे ऊपर के कपड़े उतार बच्चों के साथ नदी में नहाने का आनंद लेने लगे। आपस की धींगामस्ती में बच्चे भूल गए कि आग व पानी से नहीं खेलना चाहिए।

कुछ बच्चे चट्टान से कूदकर तैरकर किनारे आ रहे थे। संदीप तो जब भी नहाए, किनारे पर ही। उन्हें न तैरना आता था न नदी की गहराई का पता था। बच्चे चिल्ला रहे थे संदीप कूदो... संदीप कूदो...। पर संदीप असमंजस में थे। उन्हें तैरना नहीं आता था। इसलिए डर रहे थे। तभी पीछे से दो-तीन बच्चे दौड़ते हुए आए और संदीप को खींचकर आगे ले गए और पानी में धक्का दे दिया। दस वर्षीय संदीप हाथ-पैर चलाने लगे पर तैर नहीं सके। वे मुँह ऊँचा कर चिल्लाने लगे- बचाओ... बचाओ... और वे पानी में डूब गए। पानी गहरा था अतः वे निकल न सके।

बच्चों ने शोर मचाया। वहीं पास में नहा रहे बड़े लड़कों ने संदीप को डूबते देख लिया था। उनके लिए तो वहाँ गले-गले तक पानी था लेकिन नन्हा संदीप उसमें डूब गया। एक पल भी गँवाए बिना डुबकी लगाकर वे संदीप को बाहर निकाल लाए। संदीप हाल ही में डूबे थे अतः ज्यादा पानी नहीं पीया गया था। जो थोड़ा बहुत था वह नाक व मुँह के रास्ते बाहर निकल गया।

थोड़ी ही देर में संदीप ठीक होकर खड़े हो गए। 'जाको राखे साइयां मार सके ना कोय।' सच में कैसे डूबते संदीप? वे तो संसार सागर में डूबने वालों को बाहर निकाल भव पार करना सिखाने आए हैं। किन्तु नदी में डूबने पर नन्हें संदीप को मृत्यु का बोध व जीवन का महत्व समझ में आ गया था।

बाहर पढ़ना

संदीप की पढ़ाई में अत्यधिक रुचि थी। वे दिन में स्कूल जाते व शाम को धार्मिक पाठशाला पढ़ते। दोनों जगह वे सबसे आगे रहते। स्कूल में वे हर विषय में पारंगत थे। वे असाधारण छात्र थे। किशुनगंज के शिक्षकों की भी यही राय थी कि संदीप शाला के एक होनहार छात्र हैं। उस जमाने में कोई पालक-शिक्षक की मीटिंग तो होती नहीं थी। अतः शिक्षकों ने भागचंदजी को एक दिन शाला में बुलाकर कहा कि आपका बेटा संदीप बहुत होशियार है। इसे आप शहर के किसी बड़े स्कूल में डालो। इसकी प्रतिभा निखरेगी। यह होनहार बालक एक दिन बहुत बड़ा व्यक्ति बनेगा। यह बहुत आगे बढ़ेगा। भागचंदजी ने जवाब दिया- ''संदीप के प्रति मेरी भी ऐसी ही राय है। जितना सौम्य, शिष्ट व विनीत स्कूल में है, घर व आस-पड़ोस में भी इसका ऐसा ही मृदुल व्यवहार है। पाँचवीं कक्षा यह उत्तीर्ण कर ले, उसके बाद मैं इसे या तो सागर के मोराजी के श्री गणेशप्रसाद वर्णी दि. जैन संस्कृत विद्यालय में या खुरई में जहाँ भी इसका एडमिशन हो जाएगा, पढ़ने भेज दूँगा।'' भागचंदजी भी संदीप में बड़ी संभावनाएँ देख रहे थे। अतः वे भी बेटे का भविष्य सँवारने के लिए कृतसंकल्पित थे।

संदीप अब कक्षा 5वीं में आ गए थे। शिक्षक भी अक्सर संदीप को अच्छी पढ़ाई के लिए प्रोत्साहित करते रहते थे ताकि बाहर के किसी अच्छे स्कूल में उन्हें एडमिशन मिल जाए। मम्मी-पापा व छोटे भाई भी कहते रहते कि संदीप को तो अब बाहर पढ़ने जाना है। माँ संदीप को हमेशा समझाती रहती कि बेटा, वहाँ तुम समय पर स्कूल जाना, समय पर आ जाना। समय पर खाना खाना, अपना ध्यान रखना। गुरुजनों का सम्मान करना। बदमाश व शैतान बच्चों की संगत

में मत पड़ना वरना उनके द्वारा गलत काम करने पर उनके साथ रहने पर वे तुम्हारा नाम लगा देंगे। तुम्हें फँसा देंगे। तुम्हें सजा मिलेगी। अतः अच्छे बच्चों की संगत करना। वैसे माँ ने तो अपने सभी बच्चों को अच्छे सुसंस्कार दिये थे पर वे जानती थी कि संदीप बहुत छोटा बच्चा है। यद्यपि वे नहीं चाहती थी कि वे इतने छोटे बच्चे को अपने से अलग करे पर पिता की इच्छा के आगे उनकी एक न चली। पर उन्होंने संदीप का पालन-पोषण इस तरह से किया था कि संदीप बचपन से ही आत्मनिर्भर हो गए थे। वे अपने सारे काम स्वयं करते थे। उन्हें पढ़ने के लिए कभी माँ-पिताजी या शिक्षक को बोलना नहीं पड़ा। वे तो स्वयं ही पढ़ लेते थे।

जब से उन्हें किशुनगंज से बाहर पढ़ाई के लिए भेजने की बात चली थी, उनसे अच्छे नंबर से पास होने की बात कही जाती थी। अब संदीप को समझ आ गया था कि अच्छे नंबर आए बिना उन्हें बाहर के अच्छे स्कूल में एडमिशन नहीं मिलेगा। और उन्हें यहीं किशुनगढ़ में ही पढ़ना पड़ेगा। अतः वे जी-जान से पढ़ने लगे। परीक्षा नजदीक आती जा रही थी व संदीप जमकर पढ़ाई करने लगे थे।

अब तो नन्हें संदीप का एक ही लक्ष्य था, बाहर पढ़ाई करने जाना। अतः कक्षा 5वीं में ज्यादा से ज्यादा नंबर लाना। यद्यपि वे कक्षा में प्रथम आते किंतु उनका बालपन यह भी सोचता कि वहाँ उनके जैसे और भी बच्चे पढ़ने आते होंगे जिनके नंबर उनसे भी ज्यादा हों और संदीप को उनसे कम नंबर के कारण एडमिशन न मिले। उन दिनों गाँवों में लाइट नहीं थी। ढेबरी व लालटेन का उपयोग किया जाता था।

ऐसी ही एक रात संदीप व भाई संजय ढेबरी के उजाले में पढ़ाई कर रहे थे। दिन में स्कूल की पढ़ाई व शाम को खेलने के कारण बच्चे थक गए। दीया (ढेबरी) पास जलती रखी रह गई व दोनों बच्चे पढ़ते-पढ़ते सो गए। उन्हें गहरी नींद लग गई। नींद में संदीप के टल्ले से ढेबरी उलट गई व बिस्तर में आग लग गई। आग ने संदीप की पोलीएस्टर की शर्ट पकड़ ली। जब गर्म-गर्म लगा, संदीप उठ बैठे। यह क्या उनकी शर्ट जल रही थी। वे जोर-जोर से रोने-चिल्लाने लगे। बचाओ... बचाओ...

संदीप का रोना सुन माँ उठ बैठी। उन्होंने देखा संदीप का शर्ट जल रहा है। उन्होंने सबसे पहले संदीप की शर्ट उतारकर फेंकी क्योंकि वह बदन पर चिपकने लगी थी। संदीप का पेट जल गया था। संदीप जलने के कारण बुरी तरह रो रहे थे। माँ ने मलहम लगा संदीप को गोद में लिटा, सिर पर हाथ फेरने लगी। माँ की ममता की उष्मा पा थोड़ी देर में संदीप सो गए। माँ भगवान को लाख-लाख दुआ दे रही थी कि संदीप की जान बची लाखों पाए। पर यह क्या, उनके हाथों में भी जलन होने लगी। देखा दोनों हाथ संदीप की आग बुझाने में जल गए थे। उन्होंने भी हाथों में मलहम लगाया। अभी तक बेटे के दुःख में उनका अपनी ओर ध्यान ही नहीं गया था।

सुबह देखा, संदीप के पेट पर बड़े-बड़े फफोले हो गए थे। माँ के हाथों पर भी फफोले उभर आए थे। संदीप के पेट के फफोलों में पानी भर गया। फफोले फूटने पर घाव हो गए। संदीप का स्कूल जाना बंद हो गया। संदीप रोते थे कि मुझे स्कूल जाना है। पर उनकी स्थिति स्कूल जाने लायक नहीं थी। इधर परीक्षा सिर पर थी। घर पर लेटे-लेटे ही पढ़ाई करते। संदीप के घाव भरने व ठीक होने में वक्त लगा। आज भी संदीप (आचार्य श्री सुनीलसागरजी) के दाईं बाजू कमर पर जलने के निशान हैं।

विधि की विडम्बना, कहाँ तो बड़े-बड़े मंसूबे ले संदीप रात को पढ़ने बैठे। कैसा दुर्भाग्य? रात ने ऐसा कहर बरसाया कि संदीप के मंसूबों पर पानी फिर गया। माँ-पिताजी संदीप को ढाढस बंधाते रहते कि वे जल्दी ठीक हो जाएँगे। शिक्षक भी कभी-कभी उन्हें देखने घर आते व समझाते रहते।

जैसे-तैसे संदीप ने कक्षा 5वीं की परीक्षा तो दी, अच्छे अंकों से पास भी हो गए। पर अभी उनके घाव ठीक नहीं हुए थे। माँ उनका बहुत ध्यान रखती। अभी वे बाहर पढ़ने भेजने लायक नहीं थे। आखिर शारीरिक स्थिति के कारण

संदीप को कक्षा छठी किशुनगंज के माध्यमिक स्कूल में ही पढ़ना पड़ी।

दूध का जला छाछ भी फूंक-फूंक कर पीता है। संदीप भी बहुत सावधानी बरतते। स्कूल में भी व घर में भी। स्कूल में शिक्षक गुप्ता सर व घर पर माँ उनका बहुत ध्यान रखती थी।

माँ के लिए तो ज्योतिषी की बात कि इस बच्चे को आग-पानी से बचाए रखना, सत्य हो गई। पिछली बार संदीप पानी में डूबने से बचे थे, इस बार आग से जलने से बच गए। माँ संदीप के स्वस्थ व अच्छे रहने के लिए एक माला णमोकार महामंत्र की नित्य जपा करती। संदीप के लिए माँ अक्सर चिंतित रहा करती। पिछली बार नदी में बिना बताए नहाने चले जाना व डूब जाना व अब रात में जल जाना। सोच-सोच कर मुन्नीजी दुःखी हो जाती। क्या पता इसका आगे का भविष्य कैसा है। बाहर पढ़ने जाने पर इतने छोटे संदीप का कौन ख्याल रखेगा। वे अब अक्सर संदीप के पिताजी से कहा करती कि संदीप 8वीं कक्षा तक यहीं हमारे पास रहकर पढ़ ले, उसके बाद हम उसे बाहर पढ़ने भेजेंगे। तब तक संदीप बड़े व थोड़े समझदार हो जाएँगे।

संदीप अब थोड़े ठीक होने लगे थे। वे कई बार यह कहते हुए रो पड़ते कि मेरा एक साल खराब हो गया। उन्हें यह भी डर बैठ गया था कि क्या पता अब बाहर पढ़ने जाने मिले या न मिले। पर पिताजी कहते तू ठीक हो जा, हम छठवीं कक्षा के बाद तुझे सागर के वर्णी स्कूल में भर्ती कराएँगे। वे संदीप की हौसला अफजाई करते हुए कहते रहते कि मेरा संदीप तो पढ़ने में इतना होशियार है, कि कौन बेवकूफ होगा जो इसे एडमिशन नहीं देगा। संदीप को विश्वास हो गया था कि पिताजी उनकी इच्छा पूरी करेंगे।

लेकिन फिर भी अभी तो संदीप ने मात्र तैयारी शुरू की थी, कदम भी नहीं उठाया था कि संघर्षों के बवंडर उठ खड़े हुए। नन्हे संदीप के पेट पर ही फफोले नहीं उभरे थे, बाल मन पर भी फफोले उभर आए थे। उनका विह्वल मन बार-बार कह रहा था कि शुरुआत में ही आग से जलने की अनहोनी घटना ने घटित हो मेरा रास्ता रोक लिया। क्या पता कल और क्या-क्या घटे। पर संदीप इस कठिनतम परिस्थिति में भी निराश नहीं हुए। वे अपनी संकल्प शक्ति व आत्मबल बढ़ाते रहे। यद्यपि इस वर्ष उनकी इच्छा पर कुठाराघात हो पानी फिर गया था, पर हर परिस्थिति में आगे बढ़ने की लगन व ललक तो उनमें कायम थी।

जीवन के तूफानों ने उस दीप की लौ बुझाना चाहा पर यह दृढ़ संकल्पी, आत्मविश्वास के नेह से आपूरित नन्हा संदीप था जिसकी अकम्प लौ बुझाने की ताकत किसी बड़े से बड़े बवंडर, तूफान या झंझावात में भी नहीं थी।

अभी जलने के घाव पूरी तरह ठीक नहीं हुए थे पर संदीप स्कूल जाने की जिद करते थे। पिताजी ने काफी हिदायतें दे उन्हें स्कूल भेजना शुरू किया था। संदीप को तो छठी कक्षा के बाद बाहर पढ़ने जाना था। अतः वे कक्षा में ही बैठकर पढ़ाई किया करते थे। छुट्टी में ग्राउंड में खेलना-कूदना, भागना-दौड़ना सब बंद कर वे चुपचाप कक्षा में कई बार तो अकेले ही बैठे पढ़ाई किया करते। अब वे अपने स्वास्थ्य के प्रति काफी सतर्क थे।

छात्र द्वारा डस्टर मारने की घटना

उस दिन कक्षा में शिक्षक छात्रों को हिन्दी का पाठ पढ़ा रहे थे। पाठ संदीप की क्लास का एक छात्र विनय पढ़ रहा था। पाठ में एक जगह 'तथा' लिखा था जिसे विनय 'कथा' पढ़ रहा था। मास्टरजी उससे वह वाक्य बार-बार पढ़वा रहे थे पर विनय हर बार 'तथा' को 'कथा' ही पढ़ रहा था। क्लास के सभी बच्चों के साथ संदीप भी यह सुनकर हँस दिये। तभी शिक्षक ने गुस्से में आ विनय के गाल पर एक चाँटा रसीद करते हुए उससे कहा- ''कथा नहीं तथा पढ़ो।'' जब उसने सही शब्द 'तथा' पढ़ा तब अन्य बच्चों के साथ संदीप भी अपनी हँसी नहीं रोक सके।

तभी शिक्षक, ऑफिस से बुलावा आने पर चले गए और इधर विनय के पास बोर्ड पोछने का डस्टर पड़ा था, उठाकर संदीप को दे मारा। संदीप संभलते, तब तक तो संदीप के सिर में डस्टर की जोरदार चोट लग गई थी। संदीप 'अरे बाप रे' कहते हुए रोते हुए दोनों हाथों से सिर पकड़कर बैठ गए। तब तक कुछ छात्र दौड़कर शिक्षक को बुला लाए थे। संदीप के सिर पर हरा घुम्मा उभर आया था। सर में दवाई लगा संदीप को चुप कराते हुए पूछा और कहीं तो नहीं लगा। संदीप के ना करने पर वे आश्वस्त हुए। सारी तकलीफें इस सीधे-सादे बच्चे के पीछे ही पड़ी हुई है, कहते हुए उन्होंने विनय की खबर ली। देखा, वे सब लोग संदीप को दवाई लगा रहे थे तभी विनय बस्ता उठाकर कक्षा से भाग चुका था। वह कक्षा का ही नहीं, पूरी शाला का बदमाश बच्चा था। आए दिन बच्चों को मारता-पीटता रहता था। बात-बात में बच्चों को पत्थर मार देना उसकी फितरत में था।

शिक्षक ने कुछ छात्रों के साथ संदीप को घर भेज दिया। संदीप को देखते ही उनके छोटे भाई-बहन माँ को आवाज लगाने लगे, ''माँ जल्दी आओ, संदीप भैया को लगी है।'' माँ दौड़ी-दौड़ी बाहर आई। संदीप को देखते ही माँ बोल पड़ी- ''अरे, सिर पर इतनी बड़ी चोट का निशान? क्या हुआ मेरे संदीप को? कैसे लगी? और कहीं तो नहीं लगी?''

''नहीं माँ नहीं, तुम चिन्ता मत करो। थोड़ी सी चोट आई है। ठीक हो जाएगी। तभी माँ ने मरहम लाकर संदीप के सिर पर लगा दिया। बच्चों ने सारी बात बताते हुए कहा- ''इसमें संदीप की कोई गलती नहीं। हँस तो हम सब रहे थे, पर विनय ने डस्टर सामने फेंका जो संदीप के सिर में लग गया।'' माँ यह कहते हुए रो पड़ी कि ''सारी अला-बला मेरे सीधे-सादे बच्चे के पीछे ही पड़ी हुई है। यदि डस्टर संदीप के पेट पर लगता तब? क्या होता? कितना मुश्किल से संदीप ठीक हो रहा है।''

शाम को पिताजी घर आए व उन्होंने संदीप की चोट देखी तब बोल पड़े- ''दुबली गाय को सौ उपाधि।''

संदीप चोट से डरकर घर नहीं बैठे। वे रोज स्कूल जाते। एक दिन स्कूल जाते वक्त रास्ते में विनय दिख गया। संदीप ने विनय से पूछा- ''तुम स्कूल क्यों नहीं आते हो?'' विनय संदीप व साथी बच्चों को देख भागने लगा।

तब संदीप ने कहा- ''विनय भागो मत। जाओ बस्ता ले आओ, मेरे साथ स्कूल चलो। मैं सर से कह दूँगा, वे तुम्हें कुछ नहीं कहेंगे। तुम मेरे पास बैठा करना, मैं तुम्हें बहुत अच्छे से हिन्दी पढ़ना सिखा दूँगा। तुम्हें फिर कोई सर नहीं डाँटेंगे। जाओ बस्ता ले आओ और हमारे साथ ही स्कूल चलो। आज से तुम हमारे दोस्त हो।''

विनय रोज घर से तो बस्ता लेकर ही स्कूल समय से निकलता, यहाँ-वहाँ बस्ता पटक खेलता रहता व शाम को स्कूल छूटने के समय घर पहुँच जाता। संदीप की स्नेह भरी बातें सुन पेड़ पर टँगा बस्ता उतार विनय संदीप के साथ स्कूल चल दिया। कक्षा में संदीप के पास विनय को बैठा देख सर ने विनय को डाँटना चाहा, तब संदीप ने खड़े होकर कहा- ''सर, अब विनय ऐसी शरारतें नहीं करेगा। मैं इसे पढ़ना-लिखना सिखाऊँगा।''

सर ने कहा- ''शाबास संदीप! तुमसे हमें यही अपेक्षा थी। बच्चों! संदीप से सीखो। इसने विनय को कुसंगति में पड़कर बुरे व गलत रास्ते पर जाने से बचाकर स्कूल ला स्वयं पढ़ना-लिखना सिखाने की जिम्मेदारी ली है। इसने समाज के लिए बहुत बड़ा काम किया है। विनय जैसे बच्चे गलत हाथों में पड़कर आगे चलकर चोर, लुटेरे, डाकू या बहुत बड़े अपराधी बन समाज का सिरदर्द बन जीना दुश्वार कर देते हैं। संदीप ने न केवल विनय का भविष्य सँवारने का काम किया है बल्कि समाज की भलाई के लिए इस छोटी सी उम्र में महत्वपूर्ण कदम उठाया है। तुम्हें तो क्या हमें भी संदीप से प्रेरणा लेना चाहिये। मुझे संदीप पर नाज है कि वह इस शाला का छात्र है। इसे मैंने पढ़ाया है। देखना संदीप भविष्य में एक बहुत अच्छा नागरिक बनेगा।

* * *

एक बार संदीप देर से स्कूल पहुँचे। साढ़े ग्यारह की बजाय साढ़े बारह बज गए थे। रामप्रसाद गुप्ता सर कक्षा में

बैठे हुए थे। हाँफते हुए संदीप ने जैसे ही कहा- ''मे आय कम इन सर?'' उन्होंने कहा- ''यस''। साथ ही पूछा- ''इतनी देर कैसे हो गई?'' संदीप ने सहजता से कहा- ''खाना बना रहा था।'' सर ने पूछा- ''क्यों?'' संदीप ने कहा- ''माँ की तबीयत खराब है (तीन दिन की अशुद्धि) इसलिए।'' आचार व संस्कृति समझने वाले सर ने तब तक उनके हाथ के नाखूनों पर लगे हुए आटे को देखकर स्नेह से कहा- ''आओ बेटा बैठो।'' वे सोचते रह गए कि इतनी छोटी वय में इतनी समझ और कार्यक्षमता अद्‌भुत है।

भाई-बहन के जन्म का प्रकरण

इधर भागचंदजी का भी परिवार वृद्धिगत हो गया था। संदीप के बाद डेढ़ पौने दो साल के अंतराल से उनके चार भाइयों संजय, प्रदीप व विनय का जन्म हुआ। चौथे भाई का जन्म के साथ ही मरण हो गया। संदीप अब अपनी पढ़ाई के साथ-साथ माँ के छोटे-छोटे कामों में भी हाथ बँटा देते क्योंकि माँ का अधिकांश समय अपने छोटे-छोटे बच्चों को संभालने में बीत जाता था। संदीप भी अपने छोटे भाइयों को खिलाते रहते ताकि माँ के लिए घर के कामकाज आसान हो जाए।

संजय रक्षाबंधन पर अक्सर उदास हो जाते। माँ से कहते रहते- माँ हमें भी बहन चाहिये। हमारी रानी बहना जो हमें राखी बाँधे। माँ अब हमारे लिए बहन ही लाना, भाई नहीं। माँ संजय की भोली बातों पर हँस देती जैसे सब कुछ उनकी मर्जी पर ही हो। संदीप खाने के वक्त माँ से बहन की माँग अक्सर करते रहते। वे कहते रहते कि माँ वह बड़ी हो जाएगी तब आप मंदिर जाएँगी तब वह हमें खाना परोस दिया करेगी। भैया-भैया कहकर हमारे साथ-साथ घूमेगी। हम भी उसे जब छोटी होगी, गोदी में उठाकर घुमाएँगे। आप जरा भी चिन्ता-फिकर मत करना। मैं उसको संभालूँगा। आपको मेरी बहन से जरा सी भी परेशानी नहीं होने दूँगा। 11.9.87 को संदीप को बहिन मिल गई। संदीप ने तो बहिन का नाम 'मेरी रानी बहिना' कहते हुए 'रानी' ही रख दिया। भले माँ-पिताजी ने उसका नाम अर्चना रखा। उन्हें बहिन रानी से बड़ा लगाव था। सागर पढ़ाई के कारण वे रानी के साथ छुट्टियों में ही रह पाते थे। रानी के जन्म के 9-10 वर्षों बाद तो उन्होंने दीक्षा ही ले ली।

माँ बड़े प्यार से संजय का माथा चूम लेती व कहती- तू तो मेरा सबसे समझदार व होनहार बेटा है। एक बहिन क्या, तू तो बड़ा होकर पूरा परिवार संभाल लेगा। भवितव्य कौन जानता है। माँ को क्या पता था कि बड़ा होकर संदीप गृह त्याग कर विरक्त संत बन जाएगा। वह ममतामयी माँ संदीप की बुलंदियों पर पहुँचते तो न देख पाई, पर हाँ संदीप को पट्टाचार्य सुनीलसागर के रूप में जरूर देखा जो आज पति भागचंदजी व छोटे बेटे विनय को मुक्ति के कल्याण पथ पर ले आए हैं। पिता को तो क्षुल्लक व भाई को ब्रह्मचर्य व्रत दे दिया। वे अन्यान्य मुमुक्षुओं को भी दीक्षा दे संसार बंधन से मुक्त करने का प्रयास कर रहे हैं।

* * *

भाग-2

विरक्ति की नींव

वर्णी विद्यालय मोराजी

संदीप ने कक्षा छठी की परीक्षा प्रथम स्थान से पास की। संदीप के इतने अच्छे अंक देख शिक्षकों ने संदीप से कहा कि अब तुम्हें इधर-उधर जाने की जरूरत नहीं। सागर के गणेश वर्णी दिगंबर जैन संस्कृत महाविद्यालय में तुम्हें एडमिशन मिल जाएगा। वहाँ बच्चों के लिए छात्रावास भी है।

संदीप बड़े शांत स्वभाव के थे। पिताजी से डरते थे। ज्यादा बात नहीं करते थे। पिताजी संदीप को बहुत प्यार करते थे। आज संदीप का रिजल्ट आने वाला था। अतः वे घर पर संदीप का बड़ी बेसब्री से इंतजार कर रहे थे। जैसे ही संदीप रिजल्ट लेकर घर आए, उसके हाथ से रिजल्ट कार्ड को देखते हुए कहा- ''बेटा! तुमसे मुझे यही उम्मीद थी। मेरा होनहार बेटा।'' कहते हुए उन्होंने खुशी से संदीप को छाती से लगा लिया। मुन्नीजी भी वहीं बैठी कुछ कार्य कर रही थी। उनसे उन्होंने कहा कि संदीप के इतने अच्छे अंक हैं कि हम अब कहीं और नहीं, सागर मोराजी स्कूल में संदीप का एडमिशन कराएँगे। आज से ही संदीप के जाने की तैयारी करो।

पुत्र मोह में डूबी मुन्नीजी का मन डाँवाडोल था। वे बोल पड़ीं- ''आए दिन संदीप के साथ कोई न कोई अनहोनी होती रहती है। मैं अभी इतने छोटे बच्चे को अकेले कहीं नहीं भेजूँगी। अभी यह यहीं पढ़ेगा।'' तब तपाक से भागचंदजी बोल पड़े- ''अनहोनी होनी होगी वह तो यहाँ भी हो जाएगी। तुम कहाँ-कहाँ हथेली लगाती फिरोगी। मोह ममता छोड़ो, इसका भविष्य देखो और इसे पढ़ने जाने दो। मैं अपने बच्चों को पढ़ा-लिखाकर बड़ा आदमी बनाऊँगा। अभी तो संदीप जाएगा। बाद में छोटे बच्चे भी बाहर पढ़ने जाएँगे।''

समय पंख लगाकर उड़ता रहा और संदीप का सागर जाने का समय पास आता जा रहा था। संदीप को अपने छोटे भाई-बहनों से व माँ-पिता से जितना प्यार था, उतना ही प्यार अपनी पढ़ाई से भी था। बिछड़ने के दुःख से दुःखी भाई-बहनों व माँ को रोता देख संदीप का बालमन भी रो पड़ता। वे भी उनके साथ रोने लगते किन्तु अगले ही पल वे भाइयों को समझाने लगते कि एक साल की ही तो बात है। अगले साल तो पिताजी तुम्हें भी मेरे पास पढ़ने भेज देंगे। हम फिर ऐसे ही साथ रहेंगे, खेलेंगे। और माँ से कहते- ''माँ, तुम्हीं तो सबसे कहती रहती हो कि संदीप को तो हम सागर पढ़ने भेजेंगे। सागर का संस्कृत विद्यालय बहुत अच्छा विद्यालय है। वहाँ पढ़ने वाले विद्वान-ज्ञानी व बड़े आदमी बनते हैं। और आज मुझे भेजने का वक्त आया तो रो-रो कर मुझे रोक रही हो। कमजोर बना रही हो। इसका मतलब तुम मुझे अज्ञानी, गँवार ही रखना चाहती हो। विद्वान बनाना नहीं चाहती।'' माँ रोते-रोते भी संदीप की तर्कपूर्ण व विद्वत्ता भरी बातों को सुन हँस देती। व उसके गाल पर चपत लगाते, घने बालों को सहलाते कह उठती- ''बेटा, माँ की ममता जब हिलरा उठती है तो आँखों से बह निकलती है। माँ के दिल को तू क्या जाने।''

आखिर किशुनगंज छोड़ने का वक्त भी आ गया था। रात में ही माँ ने सारी तैयारी कर सामान पैक कर रख दिया था। थोड़ा नाश्ता भी रखा था। वहाँ होस्टल में रहना था इसलिए माँ को ज्यादा चिंता नहीं थी, फिर संदीप उम्र में छोटा जरूर था पर काफी समझदार, शिष्ट व सौम्य था। बिछड़ते वक्त सभी छोटे भाई बहुत रोए, संदीप भी स्वयं को नहीं रोक सके। वे अपने छोटे भाई-बहनों का बहुत ख्याल रखते थे। पढ़ाते भी थे। सभी भाई स्कूल से साथ घर आते थे।

पिता कठोर बने हुए थे। सारा सामान व संदीप को साथ ले चल पड़े। भाई संजय व प्रदीप बस स्टैंड तक छोड़ने साथ आए। बस चल पड़ी। भाइयों की आपस की नजरों से नजरें मिलीं, आँखें छलक पड़ीं। बस आगे बढ़ गई। पीछे छूट गए थे किशुनगंज में अपने छोटे-छोटे भाई-बहन, अपने बाल सखा, माँ, घर, आंगन, गलियाँ, जहाँ संदीप की सिर्फ यादें ही यादें शेष थीं। भाई-बहनों को स्कूल जाने का मन नहीं था क्योंकि आज संदीप भैया साथ नहीं थे। माँ ने आज

भी रोज की तरह बच्चों को थालियाँ परोस दी। पर यह क्या? संदीप की थाली यों ही पड़ी थी। माँ का दिल भर आया। वह अपने को नहीं रोक सकी। सुबक उठीं। माँ को रोता देख बच्चे भी रो पड़े। सब एक-एक रोटी खा उठ गए। माँ तो आज थाली पर बैठी ही नहीं। शाम को तो मुन्नीजी खाना बनाने ही नहीं उठी।

तब संदीप की नानी ने खाना बनाया व सबको समझाकर खाना खिलाया। उन्होंने कहा कि ''संदीप पढ़ने गया है, छुट्टियों में आता रहेगा। पढ़ाई पूरी कर यहीं तो आएगा। बच्चों का भविष्य बनाने के लिए हमें मन कड़ा करना पड़ेगा।''

उधर संदीप भी उदास थे। पिताजी के बार-बार आग्रह करने पर भी उन्होंने कुछ नहीं खाया।

* * *

भागचंदजी सागर पहुँचकर संदीप को लेकर सीधे श्री गणेश वर्णी दिगंबर जैन संस्कृत विद्यालय पहुँचे। यह वह पावन स्थान था जो संदीप के जीवन को महाजीवन से जोड़ने वाला था। संदीप इधर-उधर मुग्ध भाव से देख रहे थे। यह स्थान उन्हें कुछ विशिष्ट अव्यक्त दिव्य अनुभूति दे रहा था। यद्यपि संदीप नहीं जानते थे कि यह वह जगह है जहाँ से उनके 'भव' का रूपान्तरण 'मूर्ति' महामानव के रूप में होने वाला है। कौन जानता था कि वह सरस्वती का यह पावन मंदिर एक दिन संदीप के लिए 'शिवालय' बन उनमें 'शिवोहम्' का प्राण मंत्र/बीज मंत्र फूंक देगा। इस महान संस्था को एक महान भारतीय मनीषा को प्राणवंत करने का श्रेय मिलेगा। कौन जानता था कि यहाँ एक बालमन में जिन संस्कारों का बीजारोपण होगा वे कालान्तर में अपनी बरगदी छाँह तले सारे विश्व को पनाह देगा।

संदीप बड़े आदर भाव से उस गुरुकुल को देख रहे थे। तभी उधर से एक लड़का निकला। देखते ही उसे समझ आ गया कि ये इस लड़के के एडमिशन के लिए बाहर से आए हैं।

लड़का- ''आप लोग किसको देख रहे हैं?''

भागचंदजी- ''प्राचार्यश्री को।''

लड़का (कार्यालय की ओर संकेत करते हुए)- ''प्राचार्यजी उस कार्यालय में हैं।''

भागचंदजी ने संदीप के साथ प्राचार्य कक्ष में पहुँचकर प्राचार्यजी को नमस्कार किया। संदीप ने बड़े विनय भाव से उनके चरण स्पर्श किये। प्राचार्यजी ने उन्हें बैठने के लिए कहा।

दोनों के बैठ जाने पर प्राचार्य ने संदीप से पूछा- ''बेटा, आपका क्या नाम है?''

संदीप ने विनीत हो मृदुवाणी में जवाब दिया- ''संदीप भागचंदजी जैन।''

प्राचार्य- ''कहाँ से आए हो?''

संदीप- ''किशुनगंज, जिला दमोह से।''

प्राचार्य- ''कौनसी कक्षा पास की है एवं क्या-क्या पढ़ा है आपने?''

संदीप ने निर्भीक हो जवाब दिया- ''कक्षा छठी पास की है'' व संक्षिप्त में विषयों के नाम बताए।

गुरु ने शिष्य के गुणों की क्षण भर में पहचान कर ली। उन्हें बड़ी खुशी हुई कि यों अनायास शिष्य के रूप में उन्हें एक अनमोल हीरा मिल गया। उन्हें तो पहली नजर में ही उसके बोलने व व्यवहार से उसके संस्कारों का पता चल गया। गुरु ने पहली नजर में शिष्य के गुणों को पहचान लिया और शिष्य को भी समझते देर न लगी कि उसे पं. दयाचंदजी साहित्याचार्य व पं. मोतीलालजी आदि के रूप में बहुत अच्छे गुरु मिल गए हैं। संदीप के मन में पहले दिन से ही उनके प्रति जो श्रद्धा व आदर भाव पैदा हुआ था वह सदैव वैसा ही बना रहा। आज संदीप की खुशी का पारावार न था। दो वर्ष की कठिन साधना का फल नन्हे संदीप को मिल गया था।

प्राचार्य- ''भागचंदजी, आपका बेटा बड़ा होनहार है। मुझे खुशी है इसे इस विद्यालय में प्रवेश देते हुए। अब आप इसे यहाँ छोड़ बड़े इत्मीनान से जाइये। जैसा यह आपके लिए है, वैसा ही हमारे लिए है।''

भागचंदजी ने पंडितजी से कहा- ''संदीप बहुत छोटा व सीधा-सादा है। इसे दुनियादारी का कोई ज्ञान नहीं।''

प्राचार्य- ''अच्छा है न भागचंदजी। यहाँ सारे बच्चे ऐसे ही आते हैं तभी तो हमें इनके जीवन के कोरे कागज पर आदर्शों, संस्कारों व जीवन मूल्यों की इबारत लिखने में आसानी होती है। लिखे हुए पर लिखना कठिन है। फिर आपका संदीप तो हमारे मूल्यांकन से दो अंक आगे ही है। यहाँ खाने-रहने की सारी व्यवस्थाएँ हैं। घर जैसा वातावरण है। उसे सब कुछ समझा दिया जाएगा। दो दिन में संदीप यहीं का होकर रह जाएगा।'' उन्होंने भागचंदजी व संदीप को साथ ले जाकर बड़े स्नेह से भोजन कराया।

भागचंदजी शाम को ही बेटे संदीप को प्राचार्यजी के सुपुर्द कर किशुनगंज के लिए रवाना हो गए। भागचंदजी का संदीप के प्रति अप्रतिम स्नेह था किन्तु वे बच्चों के भविष्य सँवारने के लिए कठोर होकर पिता का फर्ज निभाते रहे। पुत्र वियोग में उनके लिए रास्ता काटना कठिन था। दिल पर पत्थर रख लाड़ले संदीप को वे छात्रावास तो छोड़ आए पर उनका मन बड़ा भारी था। रास्ते भर वे चुपचाप रहे। संदीप की हजारों यादें उनके मानस पटल पर उभरती-मिटती रही। उन्हें अपने चारों ओर संदीप ही नजर आ रहा था। बस उन्हें यही लग रहा था कि मेरा छोटा सा बच्चा कैसे अकेला रहेगा?

भागचंदजी ने स्वयं बताया कि ऐसी हालत में मैं जैसे-तैसे घर पहुँचा। पर घर पहुँचते ही मेरे सब्र का बाँध टूट गया। मैं जोर-जोर से रोने लगा। लगातार दो घंटे तक रोता रहा। आसपास के लोग व पत्नी समझाते रहे पर मैं स्वयं को नहीं संभाल पाया। जब रो-रो कर मन हल्का हुआ तब कहीं मैं अपने आँसुओं को रोक पाया। संदीप बिना घर खाने को दौड़ रहा था। लग रहा था संदीप इधर से आएगा, संदीप उधर से आएगा, संदीप यह कहेगा, संदीप वह कहेगा। संदीप के बिना घर सूना हो गया था। घर की सारी रौनक चली गई थी। उनकी सूनी आँखें घर-आंगन, सड़क सब निहार रही थी जहाँ संदीप खेलता-कूदता, पढ़ता--लिखता था। आज उन्हें पहली बार संदीप का अभाव महसूस हो रहा था। फिर वे स्वयं ही स्वयं को तसल्ली देने लगे कि संदीप का भविष्य बनाने के लिए यह जरूरी था।

इधर संदीप ने एक-दो दिन में ही छात्रावास का अनुशासन समझ-सीख लिया था। उन्हें एक परिचित बच्चे शिखरचंद के साथ एक कमरे में रख दिया गया। उनकी उससे बहुत अच्छी दोस्ती हो गई। उनकी दिनचर्या सबेरे उठकर प्रार्थना से शुरू होती। फिर मंदिर में पूजा प्रक्षाल के लिए जाते।

स्कूल के प्रथम दिन ही संदीप ने अपनी विलक्षण प्रतिभा व असाधारण व्यक्तित्व का परिचय दे दिया। शिक्षक जो पढ़ाते, ध्यान से सुनते व पूछने पर तुरंत जवाब दे देते। शिक्षक संदीप से बहुत प्रसन्न थे। होशियार, शालीन व सहपाठियों के मददगार होने के कारण हर छात्र उनका दोस्त था। यहाँ लौकिक शिक्षा के साथ धार्मिक शिक्षा भी दी जाती। आप रुचि लेकर पढ़ने लगे।

'विणओ मोक्खद्दारं' विनय ही मोक्ष का द्वार है- आपके जीवन की मूल सूक्ति थी। आप अपने गुरुजनों का बहुत सम्मान करते। सुबह-शाम उनके चरण छूना आपकी दैनिक क्रिया थी। शिक्षकगण आपसे विशेष स्नेह रखते। आपके आचरण का अनुशीलन अन्य छात्र भी करने लगे थे। 'विनय मोक्ष का द्वार है' कि सूक्ति ने संदीप के जीवन की उक्ति व आचरण बन संदीप को सबका चहेता बना दिया।

संदीप विद्यालय के अनुशासन का पालन करते हुए सुबह 4 बजे सोकर उठ जाते थे, फिर प्रार्थना, फिर पढ़ाई, फिर 5.00 बजे व्यायाम, फिर स्नान, 6 बजे से 10.30 बजे तक शास्त्रीय कक्षाओं में अध्ययन करना, फिर भोजन कर 12 से 4.30 बजे तक स्कूल में पढ़ाई करना, फिर खेलना, 5.30 को शाम का भोजन, फिर वाचनालय में पढ़ना, शाम 7 बजे प्रार्थना, जिनदर्शन, आरती, 7.30 से पढ़ाई व रात्रि 10 बजे से विश्राम का नियम उन्हें बहुत कठिन लगता था। गुरुकुल के नियमानुसार चर्या करने में प्रारंभ में तो संदीप को बड़ी कठिनाई लगती किन्तु बहुत जल्दी ही वे उस

अनुशासन के अभ्यस्त हो गए।

यद्यपि संदीप पढ़ाई में कभी भी लापरवाही नहीं बरतते क्योंकि वर्णी विद्यालय में आने का उनका मुख्य लक्ष्य अच्छी शिक्षा प्राप्त करना था तथापि वे और अधिक मन लगाकर पढ़ने लगे।

संदीप ने 7वीं कक्षा में वर्णी विद्यालय में प्रवेश लिया था। यहाँ लौकिक शिक्षा के साथ-साथ छात्रों को धार्मिक शिक्षा भी दी जाती थी। यहाँ जैन धर्म के साथ कुछ जैनेत्तर शास्त्र भी पढ़ाए जाते थे। संदीप भी धार्मिक शिक्षा बड़े चाव से ग्रहण करते। पर उन्हें 7वीं के छात्रों की तुलना में धार्मिक ज्ञान नहीं के बराबर था। उन्हें 7वीं कक्षा के विद्यार्थी होने के बाद भी तीर्थंकरों के नाम क्रमबद्ध भाव भासना सहित नहीं आते थे। क्लास टीचर पं. विजयजी शास्त्री ने काफी कोशिश की पर कुशाग्र बुद्धि बालक संदीप तीर्थंकरों के क्रमबद्ध नाम याद ही नहीं कर पा रहे थे। बड़े-बड़े प्रश्नों के उत्तर व कविताएँ कंठस्थ कर लेने वाला संदीप भगवान के नाम याद नहीं कर पा रहा था, यह बात शिक्षक की परेशानी का सबब बन गई।

एक दिन शिक्षक विजयजी ने यह बात अन्य शिक्षकों को आपसी चर्चा में बताई। छठी कक्षा के टीचर पं. भागचंदजी ने जब यह बात सुनी तो कहा- ''मैं उस बच्चे को तीर्थंकरों के नाम सिखा दूँगा। आप चिन्ता न करो। हमारे जैन बच्चों को तो तीर्थंकरों के नाम याद होना ही चाहिये। यहीं से तो हमारी धार्मिक शिक्षा प्रारंभ होती है।''

दूसरे दिन से धार्मिक शिक्षा पढ़ाने पं. भागचंदजी जाने लगे। पूजन की पंक्तियों के माध्यम से उन्होंने बच्चों को तीर्थंकरों के नाम एक-दो दिन में ही याद करवा दिये। इसके बाद तो धार्मिक शिक्षा प्राप्त करने में संदीप जो आगे बढ़े कि फिर पीछे मुड़कर देखा ही नहीं। वे पंक्तियाँ हैं-

ऋषभ अजित संभव अभिनंदन, सुमति पद्म सुपार्श्व जिनराय।
चंद्र पुष्प शीतल श्रेयांस जिन, वासुपूज्य पूजत सुरराय।।
विमल अनंत धर्म जस उज्ज्वल, शांति कुंथु अरु मल्लि मनाय।
मुनिसुव्रत नमि नेमि पार्श्व प्रभु वर्द्धमान पद शीश नमाय।।

पूजा के इस छंद के माध्यम से पं. भागंचदजी ने संदीप को गा-गा कर तीर्थंकरों के नाम याद करवाए थे। आज भी आचार्य श्री सुनीलसागरजी उस घटना को याद कर उन गुरुओं के प्रति कृतज्ञता से भर उठते हैं। गुरु ने विद्यार्थी जीवन में बालक संदीप को शिक्षण के साथ-साथ गुरु का शिष्य के प्रति कर्तव्य का पाठ भी पढ़ा दिया। एक आदर्श गुरु के रूप में वे पं. भागचंदजी को कभी भूल नहीं सकते। छात्र संदीप एकमात्र छात्र के लिए पं. विजयजी की बात सुन अपनी कक्षा छोड़ अन्य कक्षा में जाकर पढ़ाएँ, ऐसे गुरु करुणा व कृपा के आदर्श खोजे से नहीं मिलते। उनका मानना था कि यदि संदीप जैसे मेधावी छात्र को तीर्थंकरों के नाम याद नहीं हुए तो उसकी धार्मिक शिक्षा से रुचि हट जाएगी या कम हो जाएगी। संभवतः संदीप के लिए यह सच भी हो सकता था।

यहाँ भगवान महावीर के जीवन का वह प्रसंग याद आता है जब कि शेर की पर्याय में दो अवधिज्ञानी मुनि उन्हें ज्ञान देने जाते हैं। यहाँ भगवान महावीर के प्रतीक रूप में एक बालक संदीप है जो विलक्षण प्रतिभा का धनी होने के बावजूद भी जैन धर्म के 24 तीर्थंकरों के नाम याद नहीं कर पा रहा है। जब पं. विजयजी (कक्षाध्यापक) उसे तीर्थंकरों के नाम याद नहीं करवा पाए तब अन्य पं. भागचंदजी आगे आए व अपने अथक परिश्रम से उसे मय चिह्नों के तीर्थंकरों के नाम याद करवा दिये।

क्या यह आश्चर्य की बात नहीं कि जिस बालक को कभी तीर्थंकरों के नाम याद नहीं होते थे, आज वह पट्टाचार्य मुनि श्री सुनीलसागरजी के रूप आगम की कंठस्थ गाथाओं को अपने प्रवचनों में धड़ल्ले से बोलते हैं। कोई भी विषय

पद्य रूप में तैयार कर हाव-भाव के साथ प्रस्तुत करने में निष्णात हैं।

वर्णी विद्यालय में चूँकि संदीप का यह प्रथम वर्ष था, पिताजी ने संदीप को अकेला पहली बार छोड़ा था। अतः उनका मन नहीं मानता था। अतः जब भी व्यवसाय से फुर्सत मिलती, प्रारंभ में महीना-पंद्रह दिनों में वे एक बार सागर आकर संदीप को देख जाया करते।

इस बार पिताजी ने संदीप को 10 रु. का नोट देकर कहा- जो भी तुम्हारी इच्छा हो, खा-पी लेना या किसी चीज की जरूरत हो तो खरीद लेना। पिताजी चले गए। संदीप एक तो मितव्ययी, दूसरे गुरुकुल के नियमों से बंधे कभी बाहर जाने का व अन्यत्र खाने-पीने का समय ही नहीं मिलता। यद्यपि अन्य बच्चे समय निकालकर इधर-उधर घूमते रहते किन्तु संदीप पढ़ाई के प्रति काफी सजग थे। अतः वे बाहर नहीं जाते।

जब संदीप छुट्टियों में वापस घर गये, तब उन्होंने पिताजी को 10 रु. का नोट वापस कर दिया। पिताजी ने प्यार से डाँटा भी कि तुम्हें रुपये खर्च करने के लिए दिये थे, सहेज कर वापस लाने के लिए नहीं।

तब संदीप ने बड़ी विनम्रता से जवाब दिया- ''कक्का (पापा), जब वहाँ इतनी अच्छी व्यवस्था है तो फिर बाहर खाने-पीने में समय तथा पैसा अपव्यय करने की क्या जरूरत?'' पिताजी ने बड़े दुलार से संदीप को छाती से लगा लिया। पिता-पुत्र की वार्ता सुन माँ भी गद्-गद् हो गई।

रत्नकरण्ड श्रावकाचार के अध्ययन से सच्चे देव-शास्त्र-गुरु की समझ आ जाने से संदीप का मिथ्यात्व छूट गया व जिनपूजा-शास्त्रभ्यास-मुनि सेवा की रुचि हो गई।

गुणस्थान

भोपाल में मुनि श्री समतासागर-प्रमाणसागर के सान्निध्य में धार्मिक शिक्षण/प्रशिक्षण शिविर में संदीप धार्मिक शिक्षा लेने व देने मोराजी विद्यालय छात्रावास के कुछ छात्रों व पंडित वीरेन्द्रजी के साथ गए थे। वहाँ वे एक धर्मशाला में ठहरे थे। वहाँ और भी पंडितगण अपने विद्यालय के छात्रों के साथ आकर ठहरे थे। उन्होंने वर्णी विद्यालय के इन छोटे-छोटे बच्चों को देखा।

सभा में सभी जगहों से आए विद्यार्थी बैठे थे और शिक्षक पंडितगण भी उच्चासन पर विराजित थे। संदीप सहित वर्णी विद्यालय के छात्र सबसे आगे बैठे थे। मोराजी के अनुशासित विद्यार्थी समय पूर्व ही सभा में जाकर बैठ गए। पहले से ही वर्णी विद्यालय मोराजी के छात्रों की होशियारी के डंके बज चुके थे। पंडितजी वीरेन्द्रजी से सब पूर्व परिचित थे। सबने हास्य-व्यंग्य में कहा- ''हमने सुना है वर्णी संस्कृत विद्यालय मोराजी के छात्र बहुत होशियार हैं। जरा खड़े हो जाओ कौन-कौन छात्र हैं?'' मोराजी सागर से, एक पंडितजी ने कहा।

सबसे पहले संदीप ने खड़े होकर सब गुरुजनों को प्रणाम किया। साथ में अन्य सहपाठी भी थे। ''अच्छा-अच्छा, बैठ जाओ। इतने छोटे बच्चों से क्या पूछना।'' कहते हुए सबको बैठा दिया। फिर उन्हीं पंडितजी ने सभा में बैठे सभी छात्रों से गुणस्थानों के नाम गाथा सहित पूछे। हॉल में बैठे बच्चे गाथा तो ठीक, गुणस्थानों के नाम भी नहीं बता पाए। क्योंकि इतने छोटे बच्चों को गुणस्थानों का इतना सटीक ज्ञान नहीं दिया गया था।

संदीप ने हाथ खड़ा किया था। पंडितजी ने व्यंग्य में कहा- ''अच्छा तो तुम मोराजी से हो। किसी को तो आया नहीं, तुम बताओगे? ठीक है, बताओ 14 गुणस्थानों के नाम।'' संदीप को खड़ा देख पंडित वीरेन्द्रजी बडे खुश हुए। एक दिन पूर्व ही संदीप ने गोम्मटसार जीवकांड की 9वीं व 10वीं गाथा उन्हें सुनाते हुए 14 गुणस्थानों के नाम सुनाए थे। संदीप को खड़ा देख उन्हें पूरा विश्वास था कि वह यहाँ उनका व उनके विद्यालय का नाम ऊँचा करेगा।

संदीप ने निडर होकर जवाब दिया कि गोम्मटसार जीवकांड की गाथा नं. 9 तथा 10 के अनुसार 14 गुणस्थान इस

प्रकार हैं। उन्होंने दोनों गाथाएँ सुनाईं-

मिच्छो सासणमिस्सो अविरदसम्मो य देसविरदो य।
विरदा पमत्तइदरो अपुव्वअणियट्टि सुहमो य।।9।।
उवसंतखीणमोहो सजोगकेवलिजिणो अजोगी य।
चउदसजीवसमासा कमेण सिद्धा य णादव्वा।।10।।

संदीप ने उत्तर दिया कि इन गाथाओं के अनुसार चौदह गुणस्थान इस प्रकार हैं- 1. मिथ्यात्व, 2. सासादन, 3. मिश्र, 4. अविरत सम्यग्दृष्टि 5. देशविरत, 6. प्रमत्तविरत, 7. अप्रमत्त विरत, 8. अपूर्वकरण, 9. अनिर्वृत्ति करण, 10. सूक्ष्म साम्पराय, 11. उपशांत मोह, 12. क्षीण मोह, 13. सयोग केवलि, 14. अयोग केवलि। ये चौदह जीव समास अर्थात् चौदह गुणस्थान क्रम से होते हैं।

संदीप का गाथाओं सहित सटीक उत्तर सुनकर सारे पंडितगण आश्चर्यचकित थे। सभी उन्हें शाबासी देते हुए कह रहे थे, सच में इस बच्चे ने तो गाथाओं सहित बिना किसी त्रुटि के क्रमवार चौदह गुणस्थानों के नाम फटाफट बता दिये। कमाल कर दिया इसने तो। गाथा तो दूर, गुणस्थानों के क्रमवार नाम बताना भी मुश्किल है। यह बच्चा विलक्षण प्रतिभा का धनी है। पंडित वीरेन्द्रजी की ओर देखते हुए कहा कि आप लोग विद्यार्थियों के साथ कितनी मेहनत करते हैं यह छोटा सा बच्चा इसका उदाहरण है। सारे के सारे विद्वत्जन संदीप की प्रशंसा करते नहीं थक रहे थे क्योंकि संदीप ने अपनी बुद्धि कौशल का लोहा मनवा लिया था। सब आश्चर्यचकित थे कि इतने कम समय में इस बालक ने इतना कठिन ज्ञान भी अर्जित कर याद कर लिया। संदीप ने अपनी असाधारण प्रतिभा व विलक्षण बुद्धि कौशल का परिचय विद्वत्त सभा में दे दिया। सभी को संदीप में अपार संभावनाएँ नजर आ रही थी।

जब संदीप वापस मोराजी गुरुकुल लौटे, साथ चले पंडितजी ने सबको बताया कि संदीप ने मोराजी की कीर्ति परचम फहरा दी। इस संस्था की प्रतिष्ठा तो पहले से ही थी पर संदीप ने कठिनतम प्रश्न का उत्तर गाथाओं सहित बताकर इस संस्था के नाम में चार चाँद लगा दिये। पू. वर्णीजी के नाम को रोशन कर दिया। हमें नाज है कि हमारी संस्था में संदीप जैसा मेधावी छात्र अध्ययन कर रहा है। संदीप के लिए गुरुजनों की प्रेरणा-प्रोत्साहन व साथी छात्रों के स्नेह व सम्मान ने ज्ञानार्जन बढ़ाने के लिए संजीवनी का काम किया।

संदीप सोच रहे थे कि यह सब इस वर्णी विद्यालय के अनुशासित जीवन व गुरुजनों की छात्रों के प्रति कड़ी साधना का फल है। जब वे आए थे तब शुरू-शुरू में मीठी नींद से सुबह चार बजे उठना बड़ा कठिन लगता था, अब वह नियम बन गया। आज उसी नियम-अनुशासन ने उन्हें यह शानदार सफलता दिलाई।

बीना बारहा में दुर्घटना

एक बार की बात है। संदीप गुरुकुल से एक ब्रह्मचारी भैया कुछ छात्रों के साथ बीना बारहा में मुनि श्री हेमंत सागरजी (आर्यिका पूर्णमती माताजी के पिता) तथा मुनि श्री हेम सागरजी (आर्यिका सम्मेदशिखरमति माताजी के पिता तथा आचार्य श्री अजितसागरजी के शिष्य) के दर्शनार्थ जा रहे थे। संदीप भी साथ हो लिए। ड्राइवर गाड़ी खड़ी करके कहीं चला गया और ये सभी महाराजश्री के दर्शनार्थ चले गए। ब्रह्मचारी भैया तो वहीं महाराजजी के पास बैठे थे किन्तु संदीप दर्शन कर बाहर आ गए। वे खड़ी गाड़ी में ड्राइवर की सीट पर जा बैठे।

थोड़ी देर तो वे शांति से बैठे गाड़ी के ब्रेक, स्टीयरिंग आदि को देखते रहे। तभी उनके बाल मन में शरारत का कीड़ा कुलबुलाने लगा। वे बैठे-बैठे गाड़ी का गियर, ब्रेक, स्टीयरिंग आदि इधर-उधर करने लगे। यह क्या? अकस्मात गाड़ी स्टार्ट हो गई और सड़क पर आ गई तथा तेजी से चलने लगी। अचानक घटी इस घटना से संदीप घबरा गए। उन्हें तो

गाड़ी चलाने या बंद करने की एबीसीडी भी नहीं मालूम थी। क्या करें? कैसे रोकें? सोच ही रहे थे कि सामने तेजी से आता हुआ ट्रक दिखा। संदीप की आँखों के आगे अंधेरा छाने लगा। उन्हें लगा गाड़ी अभी ट्रक से टकरा जाएगी व एक्सीडेंट हो जाएगा और उसका काम तमाम। उन्होंने जोर-जोर से णमोकार मंत्र बोलते हुए गियर व ब्रेक दबा दिये। गाड़ी दूसरी साइड जाकर पास खड़े ट्रैक्टर से टकराकर रुक गई। टक्कर इतनी जोर की थी कि गाड़ी का गेट निकलकर बाहर गिर गया जिसे ट्रैक्टर वाले ने रख लिया।

आवाज सुन गाड़ी का ड्राइवर दौड़ा आया। वह आश्चर्य में पड़ गया कि उसकी गाड़ी यहाँ कैसे? उसने गाड़ी में झाँककर देखा। संदीप सीट पर पड़े थे। गाड़ी का गेट निकल गया था। ड्राइवर ने संदीप को उठाया। उसकी तो घिग्घी बंध गई। डर के मारे काँपने लगे कुछ बोले नहीं। पाँच-सात मिनट में वे नॉर्मल हो गए। ड्राइवर ने संदीप को डाँटते हुए कहा- ''बदमाश कहीं के, गाड़ी चलाना कोई खेल है। भगवान जाने तू कैसे बच गया वरना आज तो तेरा काम तमाम ही था। तू तो मरता ही मरता, हमको भी लफड़े में फँसा जाता। तेरे घर वालों व गुरुकुल वालों को जवाब देना मुश्किल हो जाता। कान पकड़कर बोल, आइंदा ऐसी हरकत कभी नहीं करेगा। वरना अभी जाकर भैयाजी व सबसे बोलता हूँ।'' मरता क्या न करता, संदीप ने वैसा ही किया।

संदीप ने ड्राइवर को बताया कि गेट ट्रैक्टर वाले ने ही रख लिया है। माँगा जाने पर उसने हर्जाने के बतौर रुपये माँगे। ड्राइवर ने कहा जरा सी खरोंच ही आई है भैया! यह सारी करामात इस सिरफिरे बच्चे ने की है। गनीमत है कि यह बच गया। ट्रैक्टर वाले ने कहा- ''बचा क्या? इसे तो भगवान ने ही बचाया है वरना आज इसका तिया-पांचा हो जाता। पोटली में बाँधकर ले जाना पड़ता।''

ड्राइवर- ''भाई ऐसा अशुभ मत बोलो। बच्चा है, शरारत में गाड़ी चला दी। चलो जो हुआ सो हुआ। मेरा तो कितना नुकसान हो गया। अब बच्चे से क्या कहूँ। कितना मासूम है। चलो मेरी गाड़ी का गेट वापस कर दो।''

दोनों ड्राइवरों की बात चल रही थी और संदीप वहाँ से रफूचक्कर हो गए व जाकर ब्रह्मचारी भैयाजी के पास बैठ गए।

अभी की घटना को हुए साल भर हुआ होगा कि संदीप के साथ फिर यह अनहोनी हो गई। जान पर बन आई। पर जान बची लाखों पाए, वाली कहावत चरितार्थ हो गई। एक बार फिर संदीप ने मौत को मात दे दी थी।

जब लौटते वक्त ड्राइवर ने सबको संदीप की हरकत के बारे में बताया तब किसी ने विश्वास ही नहीं किया कि इतना सीधा-सादा संदीप ऐसी भी शरारत कर सकता है।

शिक्षा और शिक्षक

वर्णी संस्कृत विद्यालय में लौकिक शिक्षा के साथ जैन धर्म एवं जैनेतर शास्त्र भी पढ़ाए जाते। सातवीं कक्षा में एडमिशन के साथ संदीप ने प्रवेशिका, रत्नकरंड श्रावकाचार व लघु सिद्धांत कौमुदी में प्रथम स्थान प्राप्त कर पास की। 8वीं कक्षा में आपने तत्त्वार्थ सूत्र की परीक्षा पुनः प्रथम स्थान से पास की। लघु सिद्धांत कौमुदी के शेष भाग का आपने पुनः गहराई से अध्ययन किया। आगे की कक्षाओं में लौकिक शिक्षा के साथ आपने उप प्राचार्य पं. मोतीलालजी से सर्वार्थ सिद्धि, पं. वीरेन्द्र शास्त्री से पुरुषार्थ सिद्धयुपाय का सटीक अध्ययन किया। इसके अलावा आपने परीक्षामुख ग्रंथ, गोम्मटसार जीवकांड, कर्मकांड, मध्यसिद्धांत कौमुदी आदि कई ग्रंथों का अध्ययन कर उनमें निष्णात हो गए। आज आप पट्टाचार्य के रूप में अपने प्रवचनों में अपने विद्यार्थी जीवन में पढ़े ग्रंथों की कंठस्थ की गई गाथाओं के माध्यम से अपनी बातें रखते हैं।

आप बड़े मेधावी व श्रमशील छात्र रहे। स्कूल पढ़ाई, खेलकूद के बाद भी अन्य छात्र खेलते, मस्ती करते रहते, वहाँ

संदीप कभी अपना समय फालतू जाया नहीं करते। अपने पाठ्यक्रम के अलावा अनेक ग्रंथों को पढ़ अपने ज्ञान कोष में वृद्धि करते रहते।

छात्रावास के अधीक्षक श्री सुबोध जैन आपकी पढ़ाई में लगन, एकाग्रता व सत्यनिष्ठा से काफी प्रभावित थे। उनको आपसे विशेष स्नेह था। वे 7वीं-8वीं कक्षा में संदीप की लौकिक व धार्मिक पढ़ाई में विशेष मदद व मार्गदर्शन किया करते थे। पढ़ाकू व धुन के पक्के संदीप ने अनेक धार्मिक ग्रंथों का गूढ़ गहन अध्ययन कर अपनी ज्ञानवृद्धि कर ली थी। अतः अधीक्षक महोदय के साथ आपका अधिकांश समय तत्त्व चर्चा, साहित्य चर्चा या अन्य योग्य संलाप में बीतता था।

संदीप की विनयशीलता व अध्ययन प्रियता ने उन्हें वर्णी विद्यालय के समस्त ज्ञान के महामनीषी गुरुओं की आँखों का नूर बना दिया था। आपके गुरुजन उप प्राचार्य पं. मोतीलालजी, प्रफुल्ल कुमारजी, प्राचार्य दयाचंदजी, सुरेशचंदजी, ज्ञानचंदजी, पं. भागचंदजी, वीरेन्द्रजी, सुबोधजी, विजय कुमारजी ने आपको लौकिक, साहित्यिक व आध्यात्मिक ज्ञान गंगा में स्नान कराया। आपकी पारखी निगाहों ने संदीप में संभावनाओं का अपार लहराता समंदर देखा और उन्होंने संदीप के व्यक्तित्व को निखारने में अपनी सारी ताकत झोंक दी। आज संदीप पट्टाचार्य श्री सुनील सागरजी के पद पर सुशोभित अध्यात्म के शिखर पर पहुँचे हुए हैं। उसकी नींव को इन ज्ञानपुंज महामनीषियों ने मजबूत किया था। इन्होंने संदीप में जो आत्मज्ञान की ज्योति जलाई, उनके हृदय में अध्यात्म प्रेम जागृत किया, उसी ने उन्हें वैराग्य की पराकाष्ठा पर पहुँचाया। इन्हीं गुरुओं की दी गई ज्ञान प्रसादी के कारण अपने दीक्षा गुरु आचार्य श्री सन्मति सागरजी की आँखों के तारे बन गए। आज वे अध्यात्म के मार्तण्ड बन जो ज्ञान प्रकाश फैला रहे हैं, वह विलक्षण है।

मंदिर की पुस्तकें व्यवस्थित करना

संदीप वर्णी संस्कृत विद्यालय में मात्र पढ़ने-लिखने तक ही सीमित नहीं रहे, वहाँ उन्होंने अपने व्यक्तित्व का चहुँमुखी विकास किया। वे हर क्षेत्र, हर गतिविधि, हर कार्यक्रम में आगे रहते।

जब खाली वक्त होता तो वे बच्चों के साथ गपशप में या यहाँ-वहाँ घूमने में समय नष्ट नहीं करते। वे कई बार अपने दोस्त कमलेश, अशोक या अन्य के साथ या अकेले ही मंदिर में चले जाते। वे देवदर्शन को जाते तो अक्सर देखा करते कि लोग माँ जिनवाणी की विनय नहीं करते हैं। पूजा की पुस्तकों में चावल पड़े हैं। बार-बार खोलने से फट गई है। पुस्तकें व शास्त्र लोग पढ़कर यहाँ-वहाँ या अव्यवस्थित पटक कर चले जाते हैं। वे पूजा की पुस्तकें अलग जमाकर रखते, स्तुति-स्तोत्र की पुस्तकें अलग, शास्त्र-पुराण अलग, पत्रिकाएँ अलग रखते। फटी पुरानी पुस्तकें छाँटकर अलग रख देते। ऐसा करते वक्त उन्हें आगम की अच्छी-अच्छी पुस्तकों की जानकारी मिलती। उनमें से वे अपनी रुचि की व पढ़ने योग्य पुस्तकें व पत्रिकाएँ छाँटकर अलग रख देते। उनमें से रोज मंदिर जाते तो एक-दो पुस्तकें ले आते व रात को अपना होमवर्क करने के बाद पढ़ते थे। दूसरे दिन उन्हें रख आते व नई दूसरी पुस्तकें ले आते। संदीप ने एक नोटबुक बना रखी थी जिसमें वे उन पत्रिकाओं व पुस्तकों की अच्छी-अच्छी बातें नोट कर लेते। शाम को वाचनालय भी जाते थे।

इस प्रकार उनका सरस्वती का कोष नित्य बढ़ता जा रहा था। जिसे वे संग्रहीत ही नहीं करते, अपितु खर्च भी करते जाते। जब भी पाठशाला या विद्यालय में बालसभा होती, किसी विशिष्ट व्यक्ति की जन्म जयंती या पुण्यतिथि होती, भाषण प्रतियोगिता, वार्षिक उत्सव, मंगलाचरण बोलने या कार्यक्रमों का संचालन करना हो, शिक्षकगण उनका नाम सबसे ऊपर रखते। धीरे-धीरे वे अपने गहन ज्ञान के बल पर भाषण देने की कला में निष्णात हो गए। प्रतियोगिताओं में उनका पहला नंबर रहता। शिक्षकों को भी उनके इतने अधिक ज्ञान का राज पता चल गया था। वे संदीप का उदाहरण

बच्चों को दिया करते। इस प्रकार संदीप का पुस्तकें पढ़ने का चाव निरंतर बढ़ता जा रहा था।

छात्रावास के अधीक्षकजी संदीप को बहुत चाहते थे। वे संदीप की हर गतिविधि पर विशिष्ट ध्यान रखते। उन्हें प्रोत्साहित व प्रशिक्षित भी करते। संदीप के कहने पर उन्होंने गोंद व कवर पेपर की व्यवस्था करवा दी। संदीप थोड़ा-थोड़ा समय बचाकर फटी पुरानी पुस्तकें चिपका कर उन पर कवर चढ़ाकर उस पर पुस्तक के नाम की स्लिप चिपका देते। इस प्रकार वे जिनवाणी का बहुत विनय करते। उनके जीवन का मूल मंत्र था-

''विद्या ददाति विनयं, विनयात् याति पात्रताम्।''

विद्या विनय देती है और इसी से जीवन में योग्यता आती है। यह सोच वे जिनवाणी का बहुत आदर सम्मान करते। संदीप से बने पू. पट्टाचार्य श्री सुनील सागरजी, आज भी उनमें जिनवाणी के प्रति परम आदर व विनय भाव हैं। उनकी प्राकृत में रचित जिनवाणी स्तुति भारदी थुदी (भारती स्तुति) काफी लोकप्रिय है। जगह-जगह लोग उसे बड़े भक्ति भाव से गाते हैं। प्रवचनों के बाद भी हम आचार्य श्री के मुखारविंद से बड़ी मधुर वाणी में जिनवाणी थुति (स्तुति) सुनते हैं। बचपन में अर्जित वह ज्ञान कई बिन्दुओं, कथा, कहानी, कविता, प्रेरक वाक्य आदि के रूप में उनके प्रवचनों में प्रकट होता रहता है।

मधुर गीतों से प्रभु की भक्ति, आरती व पूजा करने का संदीप को बचपन में बड़ा शौक था। गुरुकुल में उन्होंने कुछ कविताओं की भी रचना की थी। 'केवल रवि किरणों से' वाली देवशास्त्रगुरु की पूजा उन्हें बेहद पसंद थी। उसकी जयमाला में वे तल्लीन हो जाते थे।

संदीप को प्रारंभ से ही संगीत सुनने व गाने का बड़ा शौक था। वे 'प्रभु पतित पावन' दर्शन स्तुति व 'तुमसे लागी लगन' भजन तथा बाहुबली स्तुति भगवान के सामने बड़े मधुर स्वरों में गाते। अंताक्षरी कार्यक्रम में भी वे कविताएँ गाकर सुनाते थे। वर्णी विद्यालय में उनका यह शौक यथावत रहा। अब विद्यालय में कोई सांस्कृतिक कार्यक्रम हो या मंदिर में आरती, या भजन कीर्तन के कार्यक्रम का आयोजन, संदीप को सर्वप्रथम आमंत्रित किया जाता और उन्हें अग्र स्थान प्रदान किया जाता। आपकी अप्रतिम असाधारण प्रतिभा से पूरी सभा प्रभावित होती और दूर-दूर तक आपकी प्रतिभा की चर्चाएँ होती रहती। आप आध्यात्मिक गीतों को संगीत के साथ प्रभु भक्ति में मगन हो, तल्लीनता से इतने मधुर स्वरों में गाते कि सारी सभा भी उनके साथ भक्ति में सराबोर हो जाती। झूमने लगती। अब तो सागर के किसी मंदिर में कोई कार्यक्रम होता तब संदीप को आमंत्रित किया जाता।

जब कोई मधुर गीत गाता, आपको बहुत अच्छा लगता। आज भी आप आध्यात्मिक पद/गीत गाने व साहित्यिक संगीत गाने व सुनने का कभी-कभी आनंद लेते हैं।

छुट्टियों में घर जाना

संदीप जब भी गुरुकुल से छुट्टियों में घर जाते, तब अपने भाइयों व बहन के लिए कुछ न कुछ जरूर लेकर जाते थे। अपनी छोटी बहन रानी से उन्हें विशेष स्नेह व लगाव था। इस बार वे अपनी प्यारी लाड़ली बहन रानी के लिए पीली फ्रॉक लेकर गए थे। बहन बड़ी खुश हो गई। वे व्यावहारिकता व बड़े होने का कर्तव्य अच्छे से जानते थे। वहाँ की सारी बातें अपने छोटे भाई-बहनों को बताते। छुट्टियाँ होते ही सबको संदीप भैया के आने का बेसब्री से इंतजार रहता। कुछ भी हो, घर में अन्य बच्चों के होने के बाद भी संदीप के जाने के बाद घर सूना-सूना हो गया था। जैसे घर की चहल-पहल, रौनक ही चली गई थी। यद्यपि संदीप ज्यादा बोलते नहीं थे, पर फिर भी उनके होने से घर भरा-भरा लगने लगता। सब बच्चों के साथ माँ भी कामकाज छोड़ संदीप को घेरकर बैठ जाती। वे विद्यालय, छात्रावास आदि-आदि की बातें पूछते रहते। संदीप भी उनको क्या-क्या सीखा, कौन-कौन दोस्त हैं, कहाँ-कहाँ घूमने जाता है आदि सारी छोटी-

बड़ी बातें अपने भाई-बहनों को व माँ को बड़े प्रेम से बताते। अपने गुरुजनों की प्रशंसा के पूल बाँधते।

भैया के विद्यालय, उनके शिक्षकों व उनके क्रियाकलापों की चर्चा सुन छोटे भाई संजय व विनय तो संदीप के पीछे ही पड़ गए कि भैया हमें भी आपके गुरुकुल में पढ़ना है। अबकी बार हमें अपने साथ ले चलो। संदीप कहते कक्का (पिताजी) भेजें तब न। तुम लोग आ जाओगे तो खेलने-कूदने व घूमने-फिरने में बड़ा मजा आएगा। बच्चे संदीप के साथ पढ़ने जाने की जिद करने लगे।

आखिर पिता मान गए कि संदीप 7वीं पास कर लेंगे तब उन दोनों को क्रमशः वर्णी विद्यालय में प्रवेश दिला देंगे। क्योंकि वे भी देख रहे थे कि गुरुकुल का संदीप के व्यक्तित्व व ज्ञान वृद्धि पर गहरा प्रभाव पड़ा था। वहाँ उन्हें संदीप का उज्ज्वल भविष्य नजर आ रहा था।

चाहे लौकिक शिक्षा हो या धार्मिक, संदीप का पहला स्थान ही रहता। 7वीं कक्षा संदीप ने प्रथम स्थान के साथ पास की थी। शिक्षक संदीप से बहुत खुश थे। चूँकि संदीप के ताऊ व बुआ वहीं सागर में ही रहते थे। छोटे भाई संजय व प्रदीप संदीप से मिलने की इच्छा से कभी-कभी बुआ के यहाँ आते रहते। फिर वे गुरुकुल भैया से मिलने पहुँच जाते। संदीप उन्हें स्कूल, छात्रावास, मंदिर, खेल का मैदान आदि सब दूर घुमाते व बड़ी रोचक जानकारियाँ देते। अपने गुरुजनों व छात्रावास अधीक्षक से मिलवाते। अतः शिक्षकगण संदीप के भाइयों से परिचित थे।

कोई भी साथ मिलता या पिता संदीप से मिलने जाते तब माँ संदीप के लिए नाश्ता जरूर भिजवाती थी। ठंड के मौसम में तिल्ली के लड्डू, पपड़ी आदि विशेष पसंद की हर वस्तु बनाकर माँ भेजती थी कि महीना भर अच्छे से नाश्ता चल जाएगा। पर पता चलता कि संदीप जब भी नाश्ता करते, अपने सब दोस्तों को बाँटकर ही करते थे। भले दो-चार दिन में सब समाप्त हो जाए। एक ही कमरे के सहपाठी भी भले खुद से लेकर खा ले पर संदीप द्वारा कभी कोई शिकायत का काम नहीं। भरना व बटोरना नहीं, बाँटना, देना व लुटाना ही संदीप के स्वभाव में था। ऐसे मीठे लड्डू बाँटने वाले संदीप आज जन-जन में मीठी अमृतमयी जिनवाणी के लड्डू बाँट रहे हैं। वही मीठा प्यार, सम्मान लौट-लौट कर कई गुना होकर उन्हें मिल रहा है।

संदीप छुट्टियों में घर जाने से पूर्व प्राचार्यजी व अधीक्षकजी से आज्ञा लेने गए। बात-बात में पूछ लिया- ''गुरुजी, अबकी बार मैं अपने छोटे भाई को यहाँ पढ़ाई के लिए लेकर आऊँगा।'' उन्होंने कहा- ''तुम इतने अच्छे हो तो तुम्हारा भाई भी ऐसा ही होगा। ले आना, हम एडमिशन दे देंगे। तुम जैसे अच्छे विद्यार्थी ही विद्यालय का नाम रोशन करते हैं। ऐसे ही छात्रों की हमें जरूरत है।''

जब संदीप का आठवीं में प्रवेश हुआ तब छोटे भाई संजय का छठवीं में प्रवेश हुआ। दोनों साथ रहते और खूब पढ़ते। संजय भी भाषण प्रतियोगिता में विजयी रहता। बड़े भाई के कहे पर चलता। पढ़ाई पूरी हुई, परीक्षा हुई और दोनों घर चले गए।

हॉल में व्यंतर का उपद्रव

9वीं कक्षा की पढ़ाई के लिए जब संदीप विद्यालय में आए, तब अपने साथ अपने दो छोटे भाइयों संजय के साथ प्रदीप को भी लेकर आए। भागचंदजी बच्चों को प्राचार्यजी के सुपुर्द करके वापस किशुनगंज चले गए। बड़े बेटे संदीप के होने के कारण उन्हें बच्चों की जरा भी चिंता नहीं थी। वैसे संदीप भी बच्चे ही थे। पर उनमें उम्र से ज्यादा सूझ-समझ थी। वे गंभीर थे। दायित्व निर्वहन की उनमें अद्भुत क्षमता थी।

भाइयों का एडमिशन कराते वक्त संदीप को अपने एडमिशन वाले दिन की याद आ गई। सब कुछ नया-नया, अजनबीपन। कहने को वहाँ कोई भी अपना नहीं था। तिस पर भोले-भाले, सीधे-सादे, सरल स्वभावी संदीप।

अपनी/उनकी इसी गुण निधि के कारण छात्र तो क्या शिक्षक भी उनके अपनों से ज्यादा स्नेही बन गए। भाइयों को तो संदीप भैया के होने से कुछ भी फरक नहीं पड़ा। न उन्हें किसी भी प्रकार का भय था न चिंता कि अकेले कैसे रहेंगे। सोने में सुहागा, संदीप दोनों को अपने कमरे में ले गए।

संदीप को तीनों भाइयों के हिसाब से अपना रूम थोड़ा छोटा लगा। उनके रूम के सामने का रूम बड़ा हॉल था जो हमेशा खाली पड़ा रहता था। संदीप ने यह सोचकर कि वह रूम बड़ा होने के कारण तीनों भाइयों को जरा भी असुविधा नहीं होगी, सबका सामान उस रूम में रख दिया। सबने मना किया कि संदीप आज तक इस रूम में कोई नहीं रहा, तुम भी इस रूम में मत शिफ्ट करो। अपने पहले वाले रूम में ही रहो। बड़े बच्चों ने संदीप को बताया कि पहले वाले छात्र व सफाई करने वाले बताते रहते हैं कि इस रूम में कुछ अला-बला है। यहाँ कोई नहीं ठहरता और रात्रि में तो डरावनी हरकतें होती रहती हैं।

संदीप ने यह कहकर कि मैं तो सामने के रूम में ही रहता हूँ, फिर भी मैंने तो कभी कुछ नहीं सुना, न देखा। सब साथियों की बात अनसुनी कर हॉल में रहने-सोने का निश्चय किया। रात्रि में बिस्तर लगाकर सोने की तैयारी में थे। तब भी कुछ बच्चों ने आकर कहा, ''संदीप यहाँ मत सोओ। चलो अपने उस रूम में ही सोना।'' पर संदीप पर तो जैसे जिद चढ़ी थी। संदीप की णमोकार महामंत्र पर गहरी आस्था थी। उसने णमोकार महामंत्र के माहात्म्य के बारे में काफी कुछ पढ़-सुन रखा था। अतः उसने णमोकार मंत्र बोलते हुए बिस्तर के चारों बाजू चॉक से घेरा बना दिया। संदीप सबसे आगे सोए थे। यदि रात को कुछ हुआ तो सबसे पहले उनके साथ ही होगा, भाइयों के साथ नहीं। उठकर बाहर भी जाना पड़े तो झट से वे दरवाजा खोल देंगे।

दोस्तों की बातें सुनकर संदीप ने दरवाजे खिड़कियाँ बहुत अच्छे से बंद कर दिये। सांकल भी चढ़ा दी और सो गए। दिन भर के थके हारे बच्चे सोते ही तीनों को नींद आ गई।

रात को बारह-साढ़े बारह बजे के करीब तेज आँधी चली व खिड़कियाँ व दरवाजा खुल गये। जोर-जोर से भड़भड़ाने की आवाज आई। संदीप ने सोचा मैंने तो खिड़की, दरवाजा बहुत अच्छी तरह बंद किये थे फिर कैसे खुल गए? उन्होंने फिर से सब बंद कर खिड़कियों पर चटखनी व दरवाजे पर सांकल चढ़ा दी। आकर लेट गए। जैसे ही आकर सोए, जैसे ही नींद की झपकी आई, पुनः आंधी चली व खिड़की-दरवाजे तेज आवाज के साथ खुल गए व जोर-जोर से भड़भड़ाने लगे। तभी संदीप ने देखा कि एक काला हाथ भर का पुतला दरवाजे से आकर संदीप की तरफ बढ़ने लगा। वह दौड़कर संदीप की तरफ झपटता पर संदीप न डरे न घबराए। जोर-जोर से णमोकार महामंत्र बोलने लगे। वह पुतला लाख कोशिश करने के बाद भी घेरा तोड़कर संदीप व उनके भाइयों तक नहीं पहुँच सका। संदीप बराबर पुतले पर नजर रखते हुए णमोकार मंत्र जोर-जोर से बोलते रहे। उन्होंने एक सेकंड भी णमोकार मंत्र बोलना बंद नहीं किया। वह पुतला बार-बार संदीप की तरफ झपट्टा मारते हुए जाता पर उनको छू नहीं पाता। आधा घंटे तक दरवाजे खिड़कियाँ जोर-जोर से भड़भड़ाती रहीं। तेज हवा-आंधी तूफान की आवाज आती रही। आखिर हार कर वह पुतला दरवाजे से बाहर चला गया। उसके जाते ही हवा बंद हो गई। दरवाजे भड़भड़ाना भी बंद हो गए। यद्यपि संदीप डरे नहीं, पर इस घटना से पसीने से तर हो गए।

जब थोड़ी शांति हुई तो संदीप ने भाइयों को उठाया व बिस्तर लेकर अपने पुराने कमरे में बिछाकर वहाँ भी णमोकार महामंत्र का घेरा बनाकर सो गए। सामान ज्यों का त्यों वहीं छोड़ आए। सबेरे उठने पर अपने भाइयों व छात्रों को रात वाली घटना बताई। बात छात्रावास के अधीक्षक तक भी पहुँच गई। उन्होंने उस हॉल पर ताला लगवा दिया ताकि रात्रि में पुनः कोई नासमझ बच्चा वहाँ सोने न चला जाए। यह तो अच्छा हुआ कि संदीप को व्यंतर जाति के देवों के बारे में पता था अतः डरे नहीं। अगर डर के मारे बच्चों के साथ कोई हादसा हो जाता तो विद्यालय बदनाम हो जाता।

संदीप ने जब अपने दोस्तों को रात में तेज आंधी-तूफान के कारण उनके हॉल के दरवाजे व खिड़कियाँ जोर-जोर से भड़भड़ाकर बजने की बात बताई तो सभी आश्चर्यचकित हो गए। रात में कहीं भी आंधी-तूफान नहीं आया था। अर्थात् अब सबको पक्का हो गया कि यह उस सूने खाली पड़े हॉल में किसी व्यंतर आत्मा का ही उत्पात था। जिसकी बात छात्रावास में वे सुनते आ रहे थे।

अब संदीप पर अपनी धार्मिक एवं लौकिक पढ़ाई की जिम्मेदारी के साथ-साथ अपने दोनों भाइयों की भी सारी की सारी जिम्मेदारी आ पड़ी थी। उस कर्तव्यबोध का उन्होंने बड़ी कुशलता से निर्वहन किया। पहले दिन से ही उन्होंने भाइयों को गुरुओं के प्रति सम्मान व विनम्रता का पाठ गुरुओं के चरण छूकर सिखा दिया था। ऐसे ही बिना बोले धार्मिक पाठशाला, विद्यालय, गुरुकुल छात्रावास व भोजनशाला का अनुशासन बिना कुछ कहे स्वयं अनुशासित रह समझा दिया। संदीप ने इतना जरूर अपने दोनों छोटे-छोटे भाइयों से कहा कि यहाँ हम मौज-मस्ती करने नहीं, पढ़-लिख कर अपना भविष्य सँवारने आए हैं। तुम लोग खेलो-कूदो, हर प्रकार से यहाँ प्राप्त सुविधाओं का सही रूप से उपयोग कर अपने व्यक्तित्व का विकास करो। लेकिन हमारा मूल लक्ष्य तो पढ़ाई करना ही है। अतः बिना आलस किये, बिना समय गँवाए, आज से ही अगली कक्षाओं की पढ़ाई शुरू कर देना। हाँ, कोई ऐसा गलत काम मत करना कि पिताजी की इज्जत को बट्टा लग जाए। एक के कारण तीनों को विद्यालय छोड़ घर जाना पड़ेगा। किशुनगंज से आने पर तो हमें यह बढ़िया जगह मिल गई, यदि हमारी गलतियों, शरारतों से अगर यह ठिया छूट गया तो समझो हमारा भविष्य सँवरते-सँवरते बिखर जाएगा। हम यहाँ भविष्य सँवारने आए हैं, बिखेरने नहीं। भाग्य बनाने आए हैं, बिगाड़ने नहीं। किस्मत चमकाने आए हैं, चटकाने नहीं। अतः हमें अपने व्यवहारों से व्यावहारिक बनना है। भूल से भी कोई भूल नहीं करना है। उसे सुधारना है, स्वीकार लेना है, अपने से बड़ों को बता क्षमा माँग लेना है। एक गलती छुपाने, एक झूठ छुपाने के लिए कई झूठ बोलने पड़ते हैं। अंततः झूठ के पुलिन्दे खड़े हो हमारा सुख चैन छीन लेते हैं। अतः हमें सरल रेखा की तरह सत्य के सरल मार्ग पर चलते हुए अपना लक्ष्य हासिल करना है। अंततः लक्ष्य प्राप्ति के बाद, पढ़ाई पूरी होने पर हम यहाँ से चले जाएँगे। अतः हमें गुलाब व चंदन की तरह महकते हुए रहना है। ऐसा काम करना है कि यहाँ से जाने के बाद भी हमें सब याद करें, हमें बुलाएँ और हमारे आने पर हमारा सम्मान करें। हमें भी यहाँ बार-बार आने का मन हो। यहाँ हमारे नेक कार्यों की खुशबू हमेशा महकती रहे।

इस प्रकार विद्यालय का पहला पाठ तो संदीप ने छात्रावास के कमरे में ही अपने भाइयों को पढ़ा दिया था। अंत में यही कहा कि यह पाठशाला हमारी माता तुल्य है। हमें सदैव इसका आदर, सम्मान करना है।

संदीप की बात सुन दोनों भाई कहने लगे- ''भैया, आप जैसा चाहोगे हम वैसा ही करेंगे। हम अच्छे से पढ़ाई करेंगे। यह विश्वास हम आपको दिलाते हैं।'' संदीप अपने दोनों भाइयों को साथ में विद्यालय ले जाते हुए बहुत खुश थे। उन दोनों छोटे भाइयों को अपने बड़े भैया संदीप पर बड़ा नाज था।

दो परीक्षाएँ एक साथ

तीनों भाई समय पर स्कूल आते-जाते अपनी पढ़ाई करते। नौवीं के छात्र संदीप अब हाईस्कूल के विद्यार्थी थे और दोनों छोटे भाई माध्यमिक शाला के। अतः संदीप की पढ़ाई-लिखाई व अन्य शालेतर गतिविधियाँ बढ़ गई थीं। फिर भी संदीप रात्रि में दोनों भाइयों की पढ़ाई संबंधी कठिनाइयाँ हल करवा देते। उन्हें लेकर रोज आधे घंटे बैठते, उसके बाद अपनी पढ़ाई करते। संदीप की विद्यालयीन शिक्षा की पढ़ाई के साथ-साथ धार्मिक शिक्षा की पढ़ाई भी बढ़ गई थी। संदीप ने अभी से धार्मिक शिक्षा में शास्त्री की परीक्षा देने का मन बना लिया था। अतः वे पाठशाला की परीक्षा की पुस्तकों के अलावा भी गोम्मटसार जीवकांड, कर्मकांड आदि ग्रंथों का भी अध्ययन करते रहते।

इस बार संदीप जिम्मेदारियों में अत्यधिक जकड़े हुए थे। धार्मिक व विद्यालयीन शिक्षा का कोर्स बढ़ गया था। अतः उन्हें फुर्सत नहीं मिलती थी। अबकी बार दोनों परीक्षाएँ भी एकसाथ हो रही थीं। अतः उन पर पढ़ाई का प्रेशर अत्यधिक था। परीक्षा के समय का तो उन्होंने शिक्षकों से विनम्र अनुरोध कर प्रबंधन कर लिया। सबेरे धार्मिक परीक्षा में उन्होंने आधा घंटा जल्दी व विद्यालयीन परीक्षा में आधा घंटा लेट पहुँचने की प्रिंसिपल से परमिशन ले ली। संदीप की शाला के श्रेष्ठ विद्यार्थियों में गिनती थी। अतः उन्होंने संदीप की दोनों परीक्षाओं के प्रति एक सी लगन व उत्साह देखते हुए स्वीकृति दे दी।

एक ही दिन एक ही समय में दो-दो पेपर की पढ़ाई करना व लिखना बड़ा कठिन काम था। पर दूरदर्शी संदीप रोज की पढ़ाई रोज कर याद कर लिया करते व दो-चार दिनों के अंतराल में रिवीजन भी कर लिया करते। यह बात उनकी धार्मिक एवं विद्यालय दोनों पढ़ाई पर एक सी लागू होती थी। यद्यपि संदीप को दो-दो पेपर की परीक्षा साथ होने से परीक्षा के दिनों में अत्यधिक पढ़ाई करना पड़ती थी। सहपाठी छात्र कहते रहते कि इस बार संदीप का कक्षा में प्रथम स्थान आना मुश्किल है पर संदीप को अपने काम से काम रहता था। अत्यधिक मेहनत कर संदीप ने स्कूली परीक्षा में तो प्रथम स्थान प्राप्त कर लिया किंतु शास्त्रीय परीक्षा पूर्व मध्यमा प्रथम वर्ष में उन्हें 'प्रताप विजय' नामक साहित्य के पेपर में सप्लीमेंट्री आ गई। जो बाद में देवेन्द्र नगर से पास हो गए।

प्रार्थना सभा में प्राचार्यजी ने संदीप की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए कहा कि संस्था को ऐसे ही होनहार, मेहनती व लगनशील विद्यार्थियों की जरूरत है। संदीप की यही मेहनत एक दिन रंग लाएगी।

व्यक्तित्व का निर्माण

वर्णी संस्कृत विद्यालय सागर मात्र शिक्षा का केन्द्र, ज्ञानशाला ही नहीं था अपितु वहाँ छात्रों के व्यक्तित्व विकास और चारित्रिक उदात्तता की शिखर रचना भी हो रही थी। वहाँ के पथ प्रदर्शक व ज्ञानपुंज गुरु छात्र को जीवन मूल्यों से इस तरह मंडित कर रहे थे कि उसके व्यक्तित्व का मानव, समाज, राष्ट्र व विश्व पर इतना व्यापक प्रभाव पड़े कि वह 'सत्यं शिवं सुंदरं' का पाठ पढ़ा सके।

संदीप इसी 'ज्ञान के संस्कार केन्द्र' से जीवन को उन्नत बनाने व शांत शिखरों की ओर बढ़ने के संस्कार ग्रहण कर रहे थे। वे यहाँ अपने छात्र जीवन की धुली-पुछी कोरी स्लेट पर परिवार, परिवेश और विश्व पारावार से जोड़ने की इबारत लिखना सीख रहे थे। संदीप के वैराग्य पथ पर चल पड़ने व मुक्ति कामना के लिए आत्मबोध प्राप्त कर जीवन उत्सर्ग कर देने के पीछे इस विद्यालय के विवेकजन्य संस्कारों की महत्वपूर्ण भूमिका है। यहीं पर उनमें 'उदार चरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना कूट-कूट कर भरी गई जो कालान्तर में संत हृदय से विश्व के प्राणीमात्र के लिए करुणा जल के अजस्र स्रोत के रूप में फूट पड़ी जो आज तक अविरल प्रवाहमान है। उन्होंने वहाँ अपने गुरुओं में माता का हृदय (अनुभव), पिता का मस्तिष्क (अभिव्यक्ति की शक्ति) तथा गुरु का आचरण (प्रभावशीलता) एक साथ देखी और उन्होंने इन तीनों बातों को जीवन निर्माण का आधार बना लिया। प्राकृत से सुसंस्कृत बनने के लिए यहाँ दिये जाने वाले सुसंस्कारों को ग्रहण करने लगे। यहीं पर दिये जाने वाले संस्कारों से संदीप ने स्वयं को सदाचार, सत्यनिष्ठा, सद्भाव, सामंजस्य, शांति, धैर्य, समन्वय, संयम आदि जैसे मूल्यों से विभूषित किया।

संदीप ने यहीं से सीखा कि जैसे ब्रह्मांड के केन्द्र में सूर्य है वैसे पृथ्वी के केन्द्र में मनुष्य। जैसे सूर्य पूरे ब्रह्मांड को प्रकाशमान कर देता है वैसा ही विवेकवान, प्रेम, शांति व सद्भावना के गुणों से सम्पन्न मनुष्य पूरे विश्व के लिए हितकारी है। व्यक्तिशः सुधार से समाज, राष्ट्र व विश्व का सुधार संभव है जो चरित्रगत उदारता व उदात्तता से प्रभावित होता है।

इस प्रकार संदीप के लिए यह शिक्षालय किसी देवालय, श्रद्धालय से कम नहीं था जहाँ शिक्षक के ऊँचे आसन पर

'ज्योति दीप्त गुरु विराजमान थे जिन्होंने उन्हें मानसिक, नैतिक व वैयक्तिक गुणों से तेजोमय किया। जिन्होंने उनके जीवन की बंजर भूमि को उर्वरा कर गंगा-सतलज का मैदानी तट बना श्रावणी हरीतिमा से आच्छादित कर दिया।

यही कारण है कि कल के छात्र संदीप आज पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी मुनिराज के पद पर सुशोभित हो हजारों हजार लोगों में आत्मबोध का उत्साह भर मुक्ति प्राप्ति की उड़ान भरने के लिए दर्शन, ज्ञान व चारित्र के सम्यक पंख दे रहे हैं। जीवन के कंकरीले पथरीले चट्टानी तटों को ज्ञानामृत से नर्मदा के कछारी तट बना रहे हैं। शव होते मनुष्य में शिवत्व जगा उसकी देह को शिवालय बना रहे हैं। सामाजिक संत्रासों की सुरंगों से गुजरते आदमी को सच्चे सुख की राह दिखा रहे हैं। मनों की कड़वाहट में मिठास घोल रहे हैं। सत्याचार से प्राप्त शिक्षा व संस्कार, शांति, समन्वय व सद्भावनाओं से आपूरित आचार्य श्री अपने जीवन बोध परक प्रवचनों/उपदेशों द्वारा व्यक्ति और समाज को मानवता के विकास, चारित्रिक भराव तथा विश्व शांति की दिशा में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित कर रहे हैं।

गुरुओं की गुण संपन्नता, आचार संहिता, आचरण की सभ्यता, छात्रों के प्रति समर्पणशीलता तथा उदार चेतना से संदीप के बाल कोमल मन में जो संस्कारों की कोपलें फूटी थी, समय के अंतराल में वे आज अपनी सघन वटनेरी छाया तले थके-हारे विश्रान्त, कर्मों के कोड़ों की मार सहते, दुःखी तप्त-संतप्त प्राणियों को आचार्य श्री सुनीलसागरजी के रूप में पनाह दे रहे हैं। सान्निध्य दे रहे हैं।

जिन महान गुरुओं ने विश्व को महात्मा गाँधी, नेल्सन मंडेला जैसी महान हस्तियाँ दीं, आचार्य सुनील सागरजी भी उन्हीं महान गुरुओं द्वारा समाज को दिया गया अलभ्य अवदान है। अच्छे शिक्षालयों में ही समर्पित शिक्षकों द्वारा ऐसी पावन जीती जागती प्रतिमाओं का निर्माण होता है।

मंगलगिरि का प्रसंग

वर्णी विद्यालय सागर से मंगलगिरि क्षेत्र पर संदीप व दोस्त दर्शन करने पहुँचे थे। वहाँ पर पहचान वाले भैया की रिक्शा थी। शरारती संदीप को रिक्शा चलाने का मन हुआ। जैसे ही चलाने का प्रयास किया कि रिक्शा उचक गई। इतने में ड्राइवर आया, जोर से डाँट लगाई। वह बहुत ज्यादा गुस्से में था। एक तरफ गाड़ी को नुकसान हो जाता, दूसरी तरफ संदीप को कुछ हो जाता तो? ''मैं तुम्हारी विद्यालय में शिकायत करूँगा।'' कहकर ड्राइवर आगे बढ़ा। संदीप घबराए नहीं, पर अब कुछ उपाय करो कि बात बढ़े नहीं। क्रोध के बदले क्रोध समाधान नहीं है। लापरवाही या अकड़ भी नहीं कि ''हाँ जाओ, मैं डरता नहीं जो चाहे करो।'' संदीप के कोमल मन में बढ़िया विचार आया। बड़े विनम्र शब्दों में क्षमा माँगते हुए ड्राइवर भैया से बात करते हुए साथ चलने लगे। फिर रास्ते में जेब में रखे 10 रुपये निकालकर संदीप ने भैया को मीठा रसगुल्ला खिला दिया। मुँह व मन मीठा हो गया, नाराजगी गायब हो गई। विद्यालय पहुँचते-पहुँचते दोस्ती हो गई, मामला शांत हो गया। संदीप का व्यक्तित्व व वाणी ऐसी प्रभावशाली थी कि कोई भी पानी-पानी हो जाता। इतनी सी उम्र में विपरीत परिस्थिति को कैसे अनुकूल बनाना, प्रेम से किसी का मन जीतने की कला, गंभीरता व शालीनता संदीप में देखते ही बनती थी।

विधान की घटना

वर्णी संस्कृत विद्यालय में संदीप ने कक्षा 9वीं पूरी करते-करते परीक्षामुख, तत्त्वार्थसूत्र, सर्वार्थसिद्धि, द्रव्य संग्रह, छहढाला, लघु सिद्धान्त प्रवेशिका, जीवकांड जैसे कई ग्रंथों का अध्ययन अपने प्रकांड विद्वान, पंडित गुरुओं द्वारा कर लिया था। पूजा-पाठ, अभिषेक, शांतिधारा करने कराने में तो वे पारंगत हो गए थे, अब अपने गुरुओं पं. मोतीलालजी,

पं. भागचंदजी, पं. ज्ञानचंदजी, प्राचार्य दयाचंदजी आदि के मार्गदर्शन में वे विशेष धार्मिक अनुष्ठान विधान आदि करने में भी पारंगत हो गए थे। अपने गुरुओं के साथ मंदिरों व मांगलिक प्रसंगों पर घरों में किये जाने वाले ऐसे धार्मिक अनुष्ठानों में संदीप जाते रहते थे। शांति विधान, पंच परमेष्ठी विधान, भक्तामर विधान आदि तो संदीप अक्सर गुरुकुल के मंदिर में कराते रहते थे (गुरुजनों की देखरेख में)।

संदीप नौवीं की परीक्षा के बाद छुट्टियों में घर आए। पिताजी ने नया घर खरीदा था। अतः वहाँ भक्तामर महामंडल विधान रखा गया। इस मंगल प्रसंग पर संदीप की बुआओं समेत बहुत सारे रिश्तेदार आए थे। बड़े भक्ति भाव से विधान की पूजा चल रही थी। संदीप पूजा विधान के अच्छे जानकार थे। अतः अपने घर का विधान भी वे ही करवा रहे थे। संदीप की इस विशिष्ट योग्यता व विद्वत्ता की सब प्रशंसा कर रहे थे।

चौबीस घंटे के भक्तामर का पाठ चल रहा था। रात के डेढ़ या दो बज रहे थे। तभी बाहर से जोर-जोर से चिल्लाने की आवाज आई। आवाज बुआ के बेटे लखन की थी। कुछ लोग दौड़े-दौड़े बाहर गए। पता चला लखन लघुशंका के लिए बाहर गया था वहीं से वह जोर-जोर से चिल्लाता, ऊल-जुलूल हरकतें कर रहा था। वह किसी को पत्थर उठाकर मार रहा था। चार-चार लोगों से भी वह पकड़ में नहीं आ रहा था। उसमें इतनी ताकत आ गई थी कि वह धक्का देकर सबको एक बाजू छिटका देता था। लोगों ने कहा कि लखन उस सूने पड़े खंडहरनुमा घर में लघुशंका के लिए चला गया होगा जहाँ प्रेतात्माएँ रहती हैं। वह किसी प्रेतात्मा की चपेट में आ गया होगा।

बुआ तो बेटे की हालत देखकर रोने लगी। संदीप को उसकी आवाज से समझ में आ गया कि उसे व्यंतर बाधा हो गई। सारे लोग बाहर लखन के पास जाने लगे। तब संदीप ने कहा- कैसे भी हो, लखन को इधर पाठ में लाओ। आठ-दस लोग उसे पकड़कर संदीप के पास लाए। संदीप ने श्लोक बोलकर लखन पर भगवान पर की गई शांतिधारा का गंधोदक (जल) छिटका। कुछ बूँदें उसके सिर पर डाल दी। इसके बाद वे लखन के लिए शांति की कामना करते हुए उस व्यंतर आत्मा को लखन को छोड़ चले जाने का कहते हुए नाभि से ऊपर शरीर व सिर पर णमोकार महामंत्र बोलते हुए गंधोदक छिटकने लगे। संदीप के साथ वहाँ उपस्थित सारे श्रावकगण जोर-जोर से णमोकार महामंत्र बोलने लगे। अभी तक तो वह लोगों के हाथ से छूटकर भागने की कोशिश कर रहा था किंतु आश्चर्य, वह अब नीचे बैठ सबके साथ णमोकार महामंत्र बोलने लगा।

संदीप ने पूछा- ''लखन कैसे हो?''

''अच्छा हूँ।''

''अब कैसा लग रहा है?''

''अच्छा लग रहा है।''

तब लखन ने पूछा- ''भक्तामर मंडल विधान खतम हो गया क्या जो णमोकार महामंत्र का जाप हो रहा है?''

संदीप- ''नहीं, यह सब तेरे लिए हो रहा है। हम पाठ शुरू करते हैं।''

लखन बिल्कुल ठीक हो गया था। उसने पूरा विधान सानंद संपन्न किया।

अब तो सबके मुख से एक ही बात निकल रही थी कि यह सब संदीप की शिक्षा प्राप्ति का ही परिणाम है।

* * *

छुट्टियाँ समाप्त होते ही दसवीं की पढ़ाई के लिए संदीप सागर पहुँच गए। शास्त्रों की पढ़ाई मोराजी में और लौकिक पढ़ाई जनता स्कूल में चालू हो गई। मित्र चंद्रशेखर तंतुवाय, कमलेश जैन, वीरेन्द्र कारू आदि नियमित उपस्थित होने लगे। स्कूल के प्राचार्य व्ही.पी. हूंका के मार्गदर्शन में भागवत सर, द्विवेदी सर, तिवारी सर, शर्मा सर और चतुर्भुज सर आदि विभिन्न विषयों की पढ़ाई करवाते थे। सिंह सर पीटी, व्यायाम और खेल करवाते थे। खान सर विज्ञान के प्रैक्टिकल

करवाते थे।

हमेशा दोहरी पढ़ाई चलती थी। कभी-कभी परीक्षाएँ भी साथ पड़ जाती थी। सूझबूझ और गुरुजनों के सहयोग से संदीप हमेशा कामयाब होते रहे।

प्रति शनिवार को छात्र हितकारिणी सभा के होने वाले कार्यक्रमों में भी वे भाग लेते ही थे। इस सभा में वे क्रीड़ा सचिव भी रहे। खेलों में भी उनकी समुचित रुचि थी। प्रिय खेल थे कबड्डी और वॉलीबॉल।

यात्रा प्रसंग

दसवीं की परीक्षा समाप्त होते ही 5-6 दोस्तों के साथ संदीप ने सम्मेदशिखरजी सिद्धक्षेत्र के दर्शन करने जाने की योजना बनाई। संदीप अपने दोस्तों के साथ ट्रेन में सफर कर रहे थे। विद्यालयीन धार्मिक शिक्षा व साधु संतों के सत्संग के कारण संदीप अक्सर थोड़े-थोड़े समय में मौन ले लिया करते जिससे उनका न समय नष्ट होता न एनर्जी। दोस्तों की फालतू की गपशप से भी वे बच जाते। और उनका मौन मनन-चिन्तन चला करता।

थोड़ी देर तो संदीप ने दोस्तों के साथ गपशप की किंतु बाद में उन्होंने दो घंटे के लिए मौन ले लिया। इधर दोस्त लोगों की गपशप चल रही थी व उधर सामने वाली सीट पर बैठे परिवार की। लेकिन संदीप चुपचाप बैठे पुरुषार्थ सिद्धि उपाय ग्रंथ के श्लोकों का मनन-चिंतन कर रहे थे। दो घंटे होने आए थे। संदीप चुपचाप बैठे थे। यदि मित्र कुछ पूछते तो सिर हिलाकर या इशारों में जवाब दे देते। दोस्त स्टेशन पर चाय-नाश्ते के लिए उतरे। संदीप से भी पूछा पर संदीप ने इशारे से मना कर दिया। अब सामने की सीट पर बैठे परिवार की बातचीत समाप्त हो गई थी। उनका ध्यान बातचीत कर रहे लड़कों की ओर गया। तभी महिला ने पुरुष से कहा- ''देखो-देखो, वो सामने की सीट पर बैठा लड़का अपने बच्चे जैसा ही लग रहा है। जब से हम ट्रेन में सवार हुए हैं, इसकी आवाज ही नहीं सुनी। इशारों में ही बात करता है। नाक, आँखें, बाल सब कुछ अपने बच्चे जैसे हैं। यह भी गूंगा है। सात वर्ष पूर्व अपना जो गूंगा बच्चा गुम हो गया था, आज इसके बराबर होता।'' पति व दो और पुरुष बैठे थे। सब संदीप को ध्यान से देखने लगे।

वे सब एक साथ बोल पड़े- ''बिल्कुल अपने राहुल जैसा ही है। अगले स्टेशन पर हम पुलिस को सूचना देकर इसे अपने साथ ले जाने की कार्रवाई करते हैं।'' तभी उनमें से एक व्यक्ति संदीप के पास आकर बैठ गया। आने वाली बेवजह विपत्ति को भाँपते हुए संदीप ने अब अपना मौन तोड़ना ही ठीक समझा। वैसे भी उनका दो घंटे का समय कबसे पूर्ण हो चुका था, फिर भी मौन साधे हुए थे। संदीप अपने दोस्तों से बातें करने लगे। सभी एक साथ चिल्ला पड़े- ''संदीप का मौन समाप्त हो गया, संदीप का मौन समाप्त हो गया।'' तभी दोस्त वीरेन्द्र ने पूछा- ''संदीप, तुम इतनी देर कैसे मौन रह लेते हो, हम तो एक मिनट भी चुप नहीं रह सकते।'' संदीप ने मुस्कुराते हुए जवाब दिया- ''धीरे-धीरे अभ्यास करने से सब कुछ संभव हो जाता है।''

इतने में स्टेशन आ गया। सामने वाली सीट पर बैठा परिवार संदीप से बिना कुछ कहे उतर गया। ट्रेन चल दी।

तभी दोस्तों का जोरदार ठहाका लगा- ''यार संदीप, यदि तू नहीं बोला होता तो ये लोग तुझे अपने साथ उतार ले जाते। अब तेरे मौन तोड़ने का राज समझ आया।''

कक्षा 10वीं के बाद

संदीप कुशाग्र बुद्धि व अद्‌भुत मेधा शक्ति वाले छात्र थे। उनकी स्मरण शक्ति एवं ग्रहण करने की क्षमता विलक्षण थी। उनको समझ में भी जल्दी आ जाता, उसको व्यक्त भी अच्छी तरह करते थे। एक बार जो याद हो गया, उसे दूसरी बार नहीं पढ़ना पड़ता।

आठवीं कक्षा में मुख्य शिक्षक श्री सुरेशचंद्र साहित्याचार्य संदीप को इतिहास व व्याकरण पढ़ाते थे। पढ़ने में संदीप की अत्यधिक रुचि व बुद्धि कौशल से वे अत्यधिक प्रभावित थे। उन्होंने प्राचार्यजी को संदीप की पढ़ाई में अव्वल होने तथा कक्षा 8वीं में प्रथम स्थान पाने की रिपोर्ट देते हुए कहा कि कक्षा 9वीं से ही शास्त्री प्रथम वर्ष की परीक्षा की तैयारी करवानी चाहिये। पूरे वर्णी विद्यालय में संदीप की गिनती मेधावी व श्रेष्ठ छात्रों में थी।

प्राचार्यजी का आदेश व खुद का भी धर्म के प्रति लगाव के कारण संदीप कक्षा 9वीं के साथ शास्त्री (प्रथम वर्ष) की कठिन पढ़ाई करने लगे। इसके लिए उन्होंने कई जैनेतर ग्रंथों का भी अध्ययन किया।

अब संदीप की कक्षा 10वीं बोर्ड की व शास्त्री की परीक्षा की तैयारी जोर-शोर से शुरू हो गई। संदीप को दोनों कठिन परीक्षाएँ एक साथ देनी थी। संदीप दिन रात बिना समय गँवाए सतत कड़ी मेहनत कर रहे थे। दोनों प्रश्न पत्र बड़े कठिन थे। 10वीं बोर्ड में आपका खास दोस्त वीरेन्द्र कारू सहित एक छात्र और पास हुआ। आपका प्रथम स्थान रहा। संदीप को खुशी थी कि दोनों दोस्त पास हो गए।

छुट्टियों पश्चात जब संदीप स्कूल पहुँचे, सबसे पहले उन्होंने वीरेन्द्र कारू के साथ अपनी खुशियाँ शेयर करना चाही। चारों तरफ वीरू को खोजा पर वो कहीं नहीं मिला। स्कूल के अधिकारीगण से पूछने पर पता चला कि तालाब में तैरते वक्त डूबने से उसकी मृत्यु हो गई। संदीप स्तब्ध रह गए। एक इतना अच्छा तैराक डूबकर मर गया। संदीप को अपने खास दोस्त के निधन का सदमा इतना गहरा लगा कि कई दिनों तक तो ठीक से खाया-पीया भी नहीं। उसके बिना जिंदगी सूनी-सूनी लगती थी।

संदीप को इस बात का इतना गहरा दुःख था कि छुट्टियों में हर बार की तरह इस बार भी उनका अभिन्न मित्र वीरेन्द्र कारू भी सदा-सदा के लिए उनसे बिछड़ गया। हर छुट्टी के बाद शाला प्रारंभ होने के बाद संदीप को पता चलता कि कोई न कोई उनका अभिन्न मित्र उनसे बहुत दूर चला गया। अब तो उन्हें वे छुट्टियाँ ही अच्छी नहीं लगती जिनके लिए छात्र इंतजार करते रहते। छुट्टियों के बाद घर से छात्रावास लौटते वक्त उनके मन में धुकधुकी लगी रहती, क्या पता इस बार किस अनहोनी की बुरी खबर सुनने को मिले। क्या पता किसके साथ क्या बुरी घटना घटी हो। सोचकर ही मन बेचैन हो जाता और फिर स्कूल आते ही किसी न किसी दुःखद घटना का समाचार पाते ही उनका मन विह्वल हो जाता। संवेदनशील मन रोने लगता। दुःख के बादल मन में उमड़ते-घुमड़ते रहते और जब तब आँखों से बरस पड़ते।

वे पिछली छुट्टियों के बाद सातपुर गाँव के टेकचंद जैन के पेड़ से गिरकर मरने का प्रसंग भूले भी नहीं थे कि वीरेन्द्र की और फिर प्रहलाद की भी मृत्यु हो गई।

विगत वर्षों की घटनाओं से विह्वल इस वर्ष किसी अनहोनी की आशंका से डरे-सहमे, उदास संदीप कक्षा 12वीं की पढ़ाई व शास्त्री (धार्मिक शिक्षा) की आगे की पढ़ाई के लिए छात्रावास में आ गए। इस बार घर में उनका जरा भी मन नहीं लगा। छात्रावास में आकर वे धार्मिक ग्रंथों का स्वाध्याय व पढ़ाई अधिक डूबकर करते। पर उनका मन उचट जाता। कुछ दिन पढ़ाई थम जाती। उनकी मनोस्थिति से उनके शिक्षकगण बहुत अच्छी तरह परिचित थे। वे नहीं चाहते थे कि एक हँसता मुस्कुराता युवा (किशोर), उम्र के पहले पड़ाव पर ही जिंदगी से इतना हताश, निराश व उदासीन हो जाए। इतनी कम उम्र में इन घटनाओं से प्रभावित हो वह भविष्य में दीक्षा ले लेगा, इसकी तो उन्होंने कल्पना भी नहीं की थी। पर हाँ, उनको चिंता थी कि कहीं यह अप्रतिम प्रतिभावान मेधावी छात्र डिप्रेशम में न आ जाए। 12वीं व शास्त्री के रिजल्ट के लिए संदीप से उस संस्था को ढेर सारी आशा-अपेक्षाएँ थीं। यदि संदीप अधिक दिनों तक इस स्थिति से उबरा नहीं तो इसका परिणाम बुरा भी हो सकता है। कहीं वह पढ़ाई ही न छोड़ दे। चूँकि संदीप सभी शिक्षकों के अति प्रिय, आज्ञाकारी, योग्य, विनयी शिष्य थे अतः सब लोग पढ़ाई के बहाने ही उन्हें अधिक से अधिक व्यस्त व अपने सम्पर्क में रखने लगे। जैन दर्शन चिंतन की चर्चा से उनका मन हल्का होने लगा व वे पुनः पुरानी पटरी पर आने लगे।

संदीप पूर्णतः सामान्य हो जाए व उनमें कुछ परिवर्तन आ जाए यह सोचकर संदीप को पहले से ही बता दिया गया कि उन्हें पर्युषण पर्व में प्रवचन के लिए जबलपुर के बरमान कस्बे में जाना है क्योंकि छात्रावास से विद्वानों को दशलक्षण पर्व पर प्रवचन के लिए बाहर भेजे जाने की परम्परा पुरानी रही है। संदीप को इसमें कुछ भी नया नहीं लगा। पिछले पर्युषण में वे पं. वीरेन्द्रजी के साथ करेली (नरसिंहपुर) प्रवचनार्थ गए थे। वह पूर्व से ही वहाँ की भी तैयारी में जुट गए। अब उन्हें अन्यथा बातें सोचने का वक्त ही नहीं था। वे पूर्णतः अध्ययन कार्य में जुट गए।

वाह रे भाग्य! जिसका जैसा भवितव्य होता है उसे वैसे योग-संयोग मिलते ही रहते हैं। विधि का विधान न टाला जा सकता है न मिटाया जा सकता है न घटाया-बढ़ाया जा सकता है। बरमान में पर्युषण के मध्य ही एक भयंकर दुर्घटना घट गई। शाम के समय स्कूल से घर लौटते साइकल सवार दो मासूम बच्चों की दर्दनाक मौत विशालकाय ट्रक के पहियों के नीचे आ कुचलकर हो गई। दिल को दहला देने वाले इस हृदय विदारक दृश्य ने संदीप के मन-मानस को झकझोर कर रख दिया। मेरी ये पंक्तियाँ उनके मन-मानस में गूँजने लगीं।

''फूल खिलने न पाया औ मुरझा गया
अश्क औरों की आँखों से ढुलका गया
अपने वालों के गम की न पूछो जरा
दर्द गैरों के दिल में भी गहरा गया।''

फिर भी इस बार उन्होंने इस घटना को अपने ऊपर हावी नहीं होने दिया क्योंकि अभी कर्तव्य व संस्था का सम्मान दाँव पर लगा था। यदि मन विचलित हो गया व पर्युषण पर्व में तीनों वक्त के कार्यक्रम ठीक से नहीं हो पाए उनकी नामी संस्था की किरकिरी हो जाएगी। समाज वहाँ के विद्वानों को धर्म प्रभावना के लिए बुलाते वक्त एक बार सोचेगा। संदीप ने अपने मन व विचारों पर नियंत्रण रख शेष दिन अच्छे से धर्म प्रभावना कर अपनी संस्था की अच्छी छाप छोड़ी जिससे प्रभावित होकर समाज ने संस्था के लिए दान दिया। पर हाँ, जिस दिन एक्सीडेंट की घटना संदीप ने देखी थी, उस दिन जीवन की क्षणभंगुरता पर दिया गया उनका जीवन बोध देने वाला प्रवचन सुन लोग रो पड़े। यहीं पर उन्होंने (इसी गाँव के बाहर) इन्हीं दिनों में नर्मदा किनारे जीव हिंसा का रोंगटे खड़े कर देने वाला दृश्य भी देखा था, जिसे देख उनके मन में जीव दया उमड़ पड़ी। मूक पशुओं पर होते अत्याचार देख उनका मन, हृदय व आँखें एकसाथ रो पड़े। संदीप सोच रहे थे कि पिछले जन्मों में मैंने भी पशु गति में जा ऐसे न जाने कितने असहनीय अकथनीय कष्ट उठाए होंगे।

संदीप पर 12वीं कक्षा की पढ़ाई का बहुत अधिक प्रेशर था। अतः मोराजी आते ही पढ़ाकू संदीप पढ़ाई में व्यस्त हो गए। शिक्षकगण भी आश्वस्त थे कि बाहर के वातावरण से संदीप में परिवर्तन आ गया है। वे क्या जाने कि संदीप के अंतर में जो ज्वाला धधक रही है उसमें वैराग्य की खिचड़ी पक रही है। उसमें एक और चिंगारी मिल आग में घी का काम कर रही है।

संदीप इतनी अधिक व्यस्तता के बीच यदि जरा सी भी फुर्सत पाते कि अतीत की घटनाएँ चित्रपटल की भाँति उनके मनोमस्तिष्क पर उभर आती। पर अब उन्हें समझ में आ गया था कि जो बीत गया सो बीत गया। इस पर सोचते रहने से कुछ बनने बिगड़ने वाला नहीं है। मुझे वर्तमान में जीना है। वर्तमान को सुदृढ़ व सफल बनाना है। भविष्य अनिश्चित है अतः वर्तमान सुधारना है। भविष्य की नींव तो वर्तमान पर टिकी है और फिर वे जी-तोड़ मेहनत से पढ़ाई में लग जाते।

मेहनत रंग लाई। संदीप ने कक्षा 12वीं बोर्ड की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास कर कक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त कर शानदार सफलता प्राप्त की। अब संदीप सिर्फ मोराजी व अपनी स्कूल की ही शान नहीं रहे, पूरे सागर की शान बन गए थे।

विद्यालय व छात्रावास में सबने संदीप को सिर आँखों पर उठा लिया।

सहपाठियों के साथ संदीप ने भी सर्विस के लिए अप्लाई कर दिया था। इंटरव्यू भी दिया। आत्मरंग में रंगे संदीप को पता नहीं कि किसी की सर्विस लगी या नहीं पर संदीप की सर्विस क्लर्क की पोस्ट पर जबलपुर में लग गई थी। पर संदीप जिनका मन सारी संसारिक मोहमाया से उठ गया था, सांसारिक सुख-सुविधाएँ जिन्हें नीरस लगने लगी थी, जीवन की क्षणभंगुरता को जिन्हें पल-पल बोध हो रहा था वे सर्विस कर अपने पैरों में बंधन की बेड़ियाँ डालना नहीं चाहते थे। उन्हें तो कर्म बंधन की बेड़ियाँ जो तोड़नी थी, जिसके बंधन में वे जन्म-जन्मांतरों से बंधे थे।

ग्रीष्मकाल में मोराजी में अखिल भारतीय शास्त्री परिषद के शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया गया था जिसमें प्राचार्य नरेन्द्र प्रकाश जैन फिरोजाबाद, पं. शिवचरण जैन मैनपुरी, प्रतिष्ठाचार्य अमरचंद जैन शाहपुर, डॉ. श्रेयांस जैन बड़ौत आदि सौ से अधिक विद्वान पधारे थे। इसमें संदीप, जो शास्त्री का अध्ययन कर रहे थे, को पंडित के रूप में आमंत्रित किया गया था। समापन सत्र का अंतिम वात्सल्य भोज पूर्व सांसद डालचंद जैन द्वारा दिया गया। सभी विद्वानों के साथ संदीप भी उसमें सम्मिलित हुए।

घर जाना

प्रतिवर्ष घटती घटनाएँ अपने किसी न किसी अभिन्न मित्र या परिचित की मृत्यु व मोराजी में किये गये धार्मिक अध्ययन से प्राप्त ज्ञान से जैन धर्म के दर्शन, चिंतन व सिद्धांतों ने संदीप के मन पर इतना गहरा असर डाला कि जब भी वे छुट्टियों में घर जाते, उन पर उनकी धार्मिक प्रवृत्ति हावी रहती। छात्रावास की धार्मिक क्रियाएँ सामायिक वगैरह वे घर पर भी करते। मौन भी रखते। अभी उन्होंने मोह नहीं जीता था। उनका मोही मन अपने उन सदा के लिए बिछड़े दोस्तों की याद में विचलित हो जाता। पिताजी से वे ज्यादा बातचीत नहीं करते पर माँ को तो वे अपने मन की हर बात बता देते।

साथ में पढ़ रहे छोटे बेटों द्वारा संदीप की मनोदशा व पढ़ाई के बारे में माँ को पहले से ही बहुत कुछ पता होता। संदीप की पढ़ाई को लेकर उन्हें किंचित भी चिंता नहीं थी किंतु उनकी अत्यधिक धार्मिक प्रवृत्ति व सांसारिक कार्यों के प्रति अरुचि देख माँ जरूर चिंतित हो उठती। पिताजी के बार-बार कहने पर भी संदीप यदा–कदा ही दुकान पर जाते। उनके इस घर के प्रति रूखे व्यवहार को देख संदीप को अच्छी खासी फटकार लगाते हुए कहते- ''बच्चू, अभी नहीं कुछ सीखोगे तो आगे चलकर दादी-नानी याद आ जाएगी।'' पर संदीप के कानों पर जूं तक भी नहीं रेंगती। उनका कुछ जवाब न पाकर पिताजी झल्लाते हुए कहते- ''न जाने किस मिट्टी का बना है। इस पर तो कुछ असर ही नहीं होता।'' और वे यह कहते हुए चल देते कि यह तो मिट्टी का माधो है, इससे बात करना व्यर्थ है।

पिताजी के जाने के बाद माँ सारे हाथ के काम छोड़ संदीप के पास आकर बैठ जाती। बातों-बातों में बहला-फुसला संदीप के मन की थाह पाना चाहती। उन्हें लौकिक पढ़ाई का अधिक ज्ञान नहीं था लेकिन धार्मिक पढ़ाई की चर्चा छेड़ देती। यद्यपि धार्मिक क्षेत्र में जो ज्ञान संदीप को था वैसा तो उन्हें कतई नहीं था पर धर्म के प्रति माँ की जिज्ञासा व रुचि देखकर संदीप माँ से बहुत अच्छे से बातें करते।

संदीप माँ को समझाते कि माँ हम जन्म-जन्मांतरों से कर्म बंधनों में जकड़े कर्मों के इशारों पर नाच रहे हैं। एक मनुष्य जीवन ही है जिसमें हम ज्ञान प्राप्त कर उस ज्ञान से कर्मों का नाश कर सकते हैं। यदि हमने यह जीवन सार्थक नहीं किया तो हम पुनः नरक निगोद पशुगति में अनंत काल भटकते दुःख उठाते रहेंगे। माँ हमें अपने जीवन सुधार के कार्य करना चाहिये।

संदीप माँ को समझाते रहते, ''माँ, मनुष्य जीवन अत्यंत दुर्लभ है। उससे भी दुर्लभ है मनुष्यता, उससे भी दुर्लभ है

जिनेन्द्र देव द्वारा कहा गया मंगलमय जिनधर्म प्राप्त करना। दुर्लभ से दुर्लभतम है संयम व मोक्ष जिसे जिनधर्म के दर्शन, चिंतन व सिद्धांतों का अनुकरण व आत्मसात कर हमें प्राप्त करना चाहिये। मनुष्य जन्म व्यर्थ नहीं गँवाना चाहिये।''

जब-तब संदीप की माँ से ऐसी धर्म व तत्त्व चर्चा होती रहती थी। माँ को आश्चर्य होता कि संदीप को धर्म का इतना गूढ़ गहन ज्ञान कैसे प्राप्त हो गया। इतनी छोटी उम्र में बच्चों को तीर्थंकरों के नाम चिह्न व दर्शन स्तुति ठीक से याद नहीं होती और यह बड़े-बड़े आगम ग्रंथों की बातें करता है। पाप-कषायों से दूर रहने की बातें करता है। आत्म कल्याण की बातें करता है। दूसरे बच्चे भी तो उसी विद्यालय में पढ़ते हैं, उसी तरह का ज्ञानार्जन प्राप्त करते हैं पर वे तो संदीप की सी बातें नहीं करते।

माँ संदीप को इस माहौल से उबारने कुछ वस्तुएँ लाने या काम के बहाने बाहर भेज देती ताकि उसे बाहरी दुनिया का थोड़ा-बहुत ज्ञान हो। दुनियादारी समझे। माँ को अपने इस भोले-भाले सीधे-सरल स्वभावी दुनियादारी से दूर बेटे की अक्सर चिंता सताती रहती थी कि इस छलकपट भरे संसार में इसकी कैसे निभेगी। माँ को क्या पता कि यह संसार छल-छद्म भरा है इसीलिए तो संदीप की इससे अरुचि हो गई है। माँ कभी संदीप को भाई-बहनों या उनकी रुचि का भोजन बनाने के लिए सामान लाने के बहाने बाहर भेज देती तो कभी किसी दोस्त से या रिश्तेदारों या पड़ोसियों से मिलने। माँ संदीप को रिश्ते-नाते में शादी-ब्याह या अन्य कार्यक्रमों में भी जबर्दस्ती ठेलती (भेजती) रहती। कभी द्रोणगिरि, नैनागिरि, कुंडलपुर तीर्थ के दर्शन को भी पूरा परिवार जाता। 1995 में तो संदीप ने सम्मेदशिखरजी शाश्वत तीर्थक्षेत्र व पंचतीर्थ की भी वंदना कर ली। सांसारिक मंगल प्रसंगों में सम्मिलित होने की बजाय संदीप को तीर्थ दर्शन में अत्यधिक आनंद आता।

माँ ने अपने जीवन काल में अनेक विद्वानों-पंडितों के प्रवचन सुने थे पर संदीप का ज्ञान व उसका समझाने का तरीका इतना उत्कृष्ट व सरल है कि उसके आगे वे फीके लगते हैं। एक दिन संदीप की माँ से साधु चर्या की बात चल रही थी तब माँ ने संदीप पर प्रभाव डालने के लिए कहा कि हमारे दिगम्बर नग्न मुनियों की चर्या अत्यधिक कठिन है। मुनि पद संयम की दुधारी तलवार पर चलने जैसा है। बाईस परीषह सहते हुए निर्दोष चर्या का पालन करने वाला पुरुष सिंहवृत्ति का होता है। दिगम्बर मुनि बनने वाला लाखों में एक होता है। नंगे पैर चलना, भीषण गर्मी, सर्दी, बरसात में नग्न बदन रहना, बत्तीस अंतराय टाल मात्र एक बार आहार लेना कोई हँसी-खेल नहीं है। भगवान महावीर का बताया मार्ग बड़ा कठिन मार्ग है।

तब अनायास संदीप के हृदय की भावना होंठों पर आ गई और वे बोल पड़े- ''माँ, मैं भगवान महावीर के बताए मार्ग पर चल सकता हूँ?''

हतप्रभ सी माँ संदीप का मुँह देखने लगी। ''फिर से बोल तो मुझे कुछ समझ में नहीं आई तेरी बात।'' माँ का वाक्य सुन संदीप सतर्क हो गए। कहा- ''नहीं, कुछ नहीं माँ। मैं तो आपसे ऐसे ही कह रहा था। मात्र चर्चा में इतनी सी बात सुन तुम चिंतित हो गई।'' और वाकपटु संदीप ने विषय बदल दिया क्योंकि वे परिवार व परिवेश की मनोवृत्ति से अच्छी तरह वाकिफ थे। अतः अभी-अभी मन के पत्ते खोल किसी उलझन में पड़ना नहीं चाहते थे। आ बैल मुझे मार वाली कहावत उन्हें अच्छे से याद थी।

माँ अप्रत्यक्ष रूप से संदीप के सामने मुनिचर्या की कठिनता की बात करती-कहती रहती- ''एक बार मुनि पद अंगीकार करने के बाद छोड़ा नहीं जा सकता। घर से बाहर निकले कदम वापस घर में प्रवेश नहीं कर सकते। यदि घर छोड़ आगे बढ़े तो वह व्यक्ति वापस पीछे नहीं मुड़ सकता। अतः व्यक्ति को अपनी शक्ति, सामर्थ्य, सहनशीलता देख श्रेष्ठ गुरु से ही दीक्षा लेना चाहिये वरना पछताना पड़ता है। दीक्षा बहुत कठिन और बड़ी साधना है जो हर किसी के बस की बात नहीं। अतः जैनेश्वरी दीक्षा बहुत सोच-समझ कर लेना चाहिये।'' संदीप माँ की अनुभव जन्य प्रेरक बातें ध्यान

से सुन अपने को दृढ़ बनाते रहते।

माँ बेटे की अक्सर चर्चा होती रहती। बेटा आत्मकल्याण कर जीवन में आगे बढ़ने की बात करता और मोह पगी माँ संयम की साधना की कठिनाइयाँ गिनाते मोहपाश में फाँस उसे आगे बढ़ने से रोकना चाहती। इधर अति धार्मिक बेटे से पिता की नोंकझोंक चलती रहती। दृढ़ संकल्प व नेक इरादों वाले संदीप कभी विचलित नहीं होते। साधना पथ के पथिक के पैरों में मोह की बेड़ियाँ डालने की क्रिया अनादि काल से चली आ रही है। जब विश्वनाथ महावीर की जगत जननी त्रिशला भी तीर्थंकर वर्द्धमान को संयम पथ पर बढ़ने से रोकने की हर संभव चेष्टा करती रही। पिता सिद्धार्थ पितृमोह में राज्य के मोह में राजकुमार वर्द्धमान को बांधने की कोशिश करते रहे तब संदीप के जीवन की यह सामान्य बात थी।

माँ हर वक्त डरी-सहमी शंका-कुशंकाओं से घिरी रहती कि कहीं धर्मपथ पर चलने वाला उनका लाड़ला कोई अनहोनी घटित न कर दे। माँ ने बेटे के मन की थाह ले ली थी। घर में संदीप के तीन छोटे भाई व एक बहन और थी पर संदीप को लेकर माँ आकुल-व्याकुल रहती थी। वह अपना दुःख-दर्द किसी को कह भी नहीं पाती। पति को भी नहीं। उनकी स्थिति ऐसी थी कि न उगलते बने न निगलते। बार-बार संदीप को लेकर चिंतित हो जाती। संदीप उनका सबसे बड़ा होनहार व सबसे लाड़ला बेटा है।

छुट्टियों में संदीप के आने पर घर में माँ हर कार्य उसकी मर्जी का करती। उसके न बताने पर भी उसकी पसंद का भोजन बनता। उसका प्रयत्न होता कि किसी भी तरह संदीप का घर के प्रति अनुराग बढ़े। यदि राग बढ़ जाएगा तो विराग अपने आप समाप्त हो जाएगा।

मोह पगी माँ बेटे संदीप को मोह व राग के बंधनों में बाँधने का हर संभव प्रयास करती। मातृ ममता के रेशमी ताने-बाने बुनती रहती ताकि संदीप उनमें फँसता चला जाए और उसके सिर से आध्यात्मिकता व धार्मिकता का भूत उतर जाए। वह उनके अन्य बच्चों सा सामान्य जीवन जीये। पर संदीप के नियम भले ही वे छोटे हों, पर बढ़ते जा रहे थे।

अब तो छोटे भाई-बहनों को भी मालूम हो गया था कि संदीप भैया कब खाएँगे, कब मंदिर जाएँगे, कब सामायिक व स्वाध्याय करेंगे। वे भी भैया का बड़ा ध्यान रखते।

ज्यों-ज्यों परिवार का प्रेम संदीप के प्रति बढ़ता जा रहा था, त्यों-त्यों संदीप संसार से उदासीन होते जा रहे थे। पर सबको विश्वास था कि मोराजी (सागर) से बाहर निकल नौकरी करने या पिताजी के व्यवसाय में हाथ बँटाने, काम-धंधे में लग संदीप सब कुछ भूल जाएगा। उसका मन घर में लग जाएगा। शाला में धार्मिक शिक्षा का उसके कोमल मन पर पड़े प्रभाव का यह असर है। बड़ा होने पर यथार्थ की खुरदरी चट्टानों पर जब संदीप पैर रखेगा, पग तले छिल जाएँगे तब इसे ठीक से चलना आ जाएगा।

संदीप भी दुविधा में होते। धार्मिक होना अलग बात है। अभी तो वे विद्यार्थी थे। कक्षा 12वीं ही पास की थी। उनके पास इतना ऐसा कुछ नहीं था कि जिसके बल पर वह आध्यात्मिक क्षेत्र में आगे बढ़ें। यदि कुछ करना है तो अपने पास उस क्षेत्र में कुछ विशेष उपलब्धि हो। निरंतर अध्ययनरत रहने के कारण कभी उन्हें स्व-मूल्यांकन करने का समय ही नहीं मिला। फिर भी उनका लक्ष्य तो धर्मक्षेत्र व आध्यात्मिक क्षेत्र ही था।

इस तरह हर बार संदीप छुट्टियों में घर आते, माँ को ज्ञान की बातें सुनाते, माँ से भी कई शिक्षाएँ ग्रहण करते। कब छुट्टियाँ बीत जाती पता ही नहीं चलता और माँ रोते हुए अपने बच्चों को पढ़ने के लिए मोराजी, सागर के लिए विदा कर देती।

भाग-3

गुरु की खोज

वैराग्य के कारण
टेकचंद

बालक संदीप को 1989 में किशुनगंज में अपनी प्रारंभिक शिक्षा अर्जित करने के लिए गणेशवर्णी दिग. जैन संस्कृत महाविद्यालय सागर (म.प्र.) मोराजी विद्यालय में प्रवेश दिलवाया गया। महान शिक्षाविद्, समाज सुधारक, आध्यात्म प्रचेता श्री गणेशप्रसादजी वर्णी द्वारा स्थापित मोराजी सागर विद्यालय व महाविद्यालय में आपने कक्षा 7वीं माध्यमिक शिक्षा से लेकर महाविद्यालयीन शिक्षा भी वहीं से ग्रहण की। चूँकि जैन समाज शिक्षा के प्रति प्रारंभ से ही जागरूक रहा है। अतः आप ही की तरह सागर के आसपास व दूर-दूर के जागरूक लोग अपने छोटे-छोटे बच्चों को इस विद्यालय में ला भर्ती करा देते थे। वहाँ बच्चों के लिए छात्रावास तथा देखभाल की समुचित व्यवस्था थी। ये बच्चे इसी मोराजी सागर महाविद्यालय से अपनी उच्च शिक्षा पूर्ण कर गृहस्थ जीवन में प्रवेश करते हैं।

संदीप की तरह कई अन्य आसपास के गाँवों, कस्बों व छोटे-छोटे शहरों के बच्चे वहाँ रहकर पढ़ते थे। उनमें से सातपुर (सागर) का एक छात्र टेकचंद भी पढ़ता था जो संदीप का अच्छा बाल सखा था। छुट्टी के वक्त दोनों नन्हें दोस्त गलबहियाँ डाले शाला प्रांगण में घूमते रहते। संदीप की तरह वह भी शांत स्वभाव का था। अतः दोनों की अच्छी पटरी बैठती थी। फुर्सत के क्षणों में दोनों दोस्त साथ बैठ घर की यादें साझा करते रहते। दोनों शिक्षकों की नजरों में बड़े शिष्ट व शालीन स्वभाव के बच्चे गिने जाते। सातवीं पास कर कब वे आठवीं में पहुँच गए पता ही नहीं चला।

एक दिन शाम को खेल के समय में कुछ बच्चे एकत्रित हो गए व कहा चलो दौड़ लगाते हैं। संदीप उनमें अगुआ थे। पहले तो टेकचंद ने दौड़ने के लिए मना कर दिया पर संदीप के विशेष आग्रह पर वह दोस्त की बात न टाल सका व सब दोस्तों के साथ उसने भी दौड़ लगा दी। दौड़ते-दौड़ते टेकचंद गिर गया व बेहोश हो गया। जब बच्चे टेकचंद गिर गया, टेकचंद गिर गया, चिल्लाते हुए टेकचंद के पास भीड़ रूप में इकट्ठा हो गए। तब दौड़ में बहुत आगे निकल गए संदीप के कानों में ये शब्द पहुँचे। हाँफते हुए रुककर उन्होंने पीछे मुड़कर देखा। तुरंत जहाँ बच्चों की भीड़ जमा थी उस तरफ संदीप ने दौड़ लगा दी। बच्चों को एक ओर धकियाते, भीड़ चीर संदीप टेकचंद के पास पहुँच गए। वहाँ देखा टेकचंद के मुँह से झाग निकल रहे थे। अपने शर्ट के एक छोर से उसके पास बैठकर उसका मुँह पोछा। उस पर से धूल झाड़ी व उसे साथियों की सहायता से अपनी कक्षा में ले जाकर लिटा दिया व शिक्षकों तक खबर पहुँचवा दी। वे टेकचंद के पास से एक क्षण को भी नहीं हटे। साथियों से पानी मँगवाया व अपनी बाल सुलभ बुद्धि से दोस्त के मुँह पर पानी के छींटे देने लगे। तब तक शिक्षकगण भी आ गए थे। संदीप की सेवा भावना, त्वरित निर्णय क्षमता व दोस्त के प्रति निश्छल प्रेम देख शिक्षक अभिभूत हो गए। शिक्षक उसे हॉस्पिटल ले जाने की बात कर ही रहे थे कि टेकचंद को होश आ गया व वह उठ बैठा। संदीप जो अब तक दोस्त के उपचार में बाधा न पड़े, अपनी रुलाई रोके थे, दोस्त के होश में आते ही खुश हो गए व उसके गले लगकर जोर-जोर से रोने लगे। वे कहने लगे- टेकचंद आज तू मेरे कहने पर दौड़ा व गिरकर बेहोश हो गया। यदि मैं आग्रह न करता तो तू न दौड़ता न ही गिरकर बेहोश होता। भगवान का लाख-लाख शुक्रिया कि तुझे होश आ गया। सब संदीप को समझा रहे थे कि इसमें तेरी क्या गलती? हमने भी तो कहा था कि टेकचंद तुझे भी दौड़ना होगा। संदीप अचानक उठे, दौड़कर गए व एक ग्लास पानी ले आए तथा वे धीरे-धीरे बड़े प्यार से टेकचंद को पिलाने लगे व बार-बार पूछने लगे, ''तुझे अब तो कुछ नहीं हो रहा है? वरना हम सर से कहकर हॉस्पिटल ले चलते हैं।'' टेकचंद ने कहा, ''संदीप तू चिंता मत कर, अब मैं ठीक हूँ।'' तुझे कहीं लगी तो नहीं, कह संदीप उसे ऊपर से नीचे तक देखने लगे।

शाम को मेस में खाना खाने जाते वक्त भी संदीप टेकचंद का बहुत ध्यान रख रहे थे कि फिर से न गिर जाए। बेहोशी

के बाद टेकचंद बहुत थका दिख रहा था, उसे शीघ्र नींद आ गई। पर संदीप उस रात सो ना सके। थोड़ी-थोड़ी देर में वे उठकर टेकचंद को देख लेते थे व पूछ लेते थे, ''टेकचंद तू ठीक तो है! कुछ हो तो नहीं रहा तुझे?'' टेकचंद अपने प्रति संदीप का इतना प्रेम देख उसे कहता, ''यार अब तू सो जा। मेरी चिंता छोड़। मुझे कुछ नहीं हुआ। अपनी भी चिंता कर।''

सबेरे नहा-धोकर स्कूल जाने की तैयारी चल रही थी तब संदीप ने देखा, टेकचंद के घुटने व कोहनी गिरने से छिल गए थे व उन पर खून जम गया था। संदीप ने उस पर नारियल का तेल लगाया व टेकचंद को आराम करने को कहा, पर टेकचंद नहीं माना, संदीप के साथ स्कूल चल दिया।

दोनों दोस्तों की बातें चल रही थीं। संदीप कह रहा था ''टेकचंद तू गिर गया तो कोई बात नहीं। दौड़ते हुए कोई भी गिर जाता है, पर तू बेहोश क्यों हो गया? यही चिंता मुझे सता रही है। तुझे डॉक्टर को दिखाना चाहिए। आज मैं स्कूल में सर से बात करूँगा।'' तब टेकचंद ने चुप्पी तोड़ी व कहा, ''मुझे मिरगी की बीमारी है। कभी-कभी ऐसा दौरा पड़ता है और मैं बेहोश हो जाताहूँ। फिर थोड़ी देर में होश आ जाता है। पिताजी ने काफी इलाज करवाया। इस कारण अब कभी-कभी दौरा पड़ता है।'' इसके बाद परीक्षा तक टेकचंद को कुछ नहीं हुआ। सब भूल गए थे कि टेकचंद कभी बेहोश हो गया था। पर संदीप नहीं भूला था। उसका नन्हा मन उसकी बीमारी को कितने ही एंगल से देखता व डर जाता। पर वह कर भी क्या सकता था।

परीक्षा हो चुकी थी। दोस्तों के बिछुड़ने का समय आ गया था। सब अपने-अपने गाँव जा रहे थे। अब छुट्टियों के बाद ही सबका मिलना होगा। संदीप व टेकचंद भी बिछुड़ रहे थे। संदीप ने टेकचंद से कहा, ''अपना विशेष ध्यान रखना। आग, पानी, कूएँ, बावड़ी से दूर रहना। आम के पेड़ों पर मत चढ़ना। हमेशा सहारा लेकर खड़े रहना। दोस्त या भाई-बहन के साथ ही बाहर जाना।''

टेकचंद जोर-जोर से हँसते हुए कहने लगा, ''भाई, तू तो बाप की तरह समझा रहा है। छोड़ ये फालतू की बातें, कुछ अच्छी, घूमने-फिरने की बात कर।'' आगे कुछ कह-सुन पाते तब तक दोनों की गाड़ियों के जाने का समय हो गया।

पखेरू की तरह वक्त को उड़ते देर न लगी। भाई-बहनों के साथ धमा-चौकड़ी मचाते कब छुट्टियाँ खत्म हो गई व कब संदीप पुनः सागर- मोराजी पाठशाला के लिए चल पड़ा पता ही नहीं चला। अब संदीप हाईस्कूल का छात्र था। यों तो बच्चे स्कूल खुलने के बाद महीने भर तक आते रहते थे। लेकिन इस बार 'सर' ने सबको पहले दिन से ही आने की सख्त हिदायत दी थी व कहा था फिर से सबको फार्म भरना पड़ेगा। अतः संदीप की कक्षा के करीब-करीब सभी छात्र आ गए थे, पर टेकचंद अभी तक नहीं आया था। सातपुर का वह अकेला छात्र था। किससे पूछे कि वह क्यों नहीं आया? तभी एक दिन उसके पिताजी आए। संदीप उनके पास दौड़े-दौड़े गए- वह उनसे कुछ पूछते, उससे पहले ही उसके पिताजी की आँखें भर आई व कहने लगे ''बेटा तुम्हारा जिगरी दोस्त टेकचंद अब इस दुनिया में नहीं रहा।'' सुनते ही ऐ! कहते हुए संदीप धम्म से नीचे बैठ गए। उसके पिताजी ने बताया कि ''वह आम के पेड़ पर केरी तोड़ने चढ़ा। वहीं उसको मिरगी आ गई और पेड़ पर से सिर के बल नीचे गिर गया। सिर फट गया। हमको खबर मिली व पहुँचे तब तक बहुत देर हो चुकी थी। खून बहुत बह गया था और वहीं उसकी दुःखद मौत हो गई।'' आगे उसके पिताजी कुछ न बोल पाए।

संदीप के लिए इससे बड़ा दुःखद दिन कोई नहीं था। संदीप का सबसे प्रिय दोस्त चला गया था। दोस्त की याद में संदीप ने खाना भी नहीं खाया। इस घटना से उबरने में संदीप को काफी वक्त लगा। लेकिन संदीप को अपने बाल सखा टेकचंद की रह-रह कर यादें आती रहती थीं। वे टेकचंद के बिना स्वयं को बहुत अकेला महसूस करते क्योंकि वे

टेकचंद के साथ के आदी हो गए थे। दोनों में बचपन का निश्च्छल स्नेह था। बिना किसी चाह, बिना किसी स्वार्थ के दोनों बच्चे अपनी बाल दुनिया में रमे रहते। संदीप टेकचंद की पढ़ाई में भी मदद किया करते। पर अब टेकचंद नहीं था... उसकी याद आते ही संदीप की आँखें भर आती। उनके बालमन पर सिर्फ 8वीं टेकचंद ही लिख गया था।

वर-वधू

गर्मियों की छुट्टियों में संदीप किशुनगंज पहुँचे। उनके पड़ोसी साहूजी की बेटी की शादी थी। संदीप भी परिवारजन के साथ शादी में सम्मिलित ही नहीं हुए, दौड़-दौड़कर छोटे-मोटे काम भी कर रहे थे। बाजे बज रहे थे, अग्नि की साक्षी में सुखी वैवाहिक जीवन की कामना लिए वर-वधू सात फेरे ले रहे थे। गर्मी की वजह से चारों ओर तेज पंखे चल रहे थे कि अचानक दुल्हन की चुनरी के छोर ने लहराते हुए कुंड से उठती आग पकड़ ली। शादी की धमाल-मस्ती में किसी का ध्यान उस ओर नहीं गया और अचानक आग इतनी तेज भभकी कि दूल्हा-दुल्हन आग की लपटों में घिर गए। दुल्हन तो जैसे-तैसे बच गई लेकिन दूल्हा नहीं बचाया जा सका। आग उसे लील गई। बुजुर्गों से कहते सुना, ''आग व पानी किसी के दोस्त नहीं होते।'' क्षण भर में खुशियाँ मातम में बदल गईं।

इतने कम अंतराल में संदीप के जीवन में यह दूसरी मृत्यु की तूफानी घटना घट गई। संदीप बदहवास उस शादी मंडप को देखते रह गए। उन्हें बारह भावना (दौलतरामजी) कंठस्थ थी। सोचने लगे टेकचंद व इस दूल्हे की तरह मेरी भी किसी पल मृत्यु हो सकती है। उस दृश्य को देख संदीप रोने लगे। माँ संदीप को घर ले आई।

संदीप के बाल मन पर यह दूसरा बड़ा आघात लगा था। हमेशा चहकते रहने वाले संदीप मौन व उदास रहने लगे। उनका मन न खेलने-कूदने में लगता न खाने-पीने में। संदीप अकेले चुपचाप बैठे कुछ सोचते रहते। परिचितों की मौत ने उनके मन में कोहराम मचा दिया। अब संदीप यही सोचते रहते कि इसी तरह मेरी मौत भी कभी भी किसी भी क्षण आ सकती है।

सर्वार्थ सिद्धि का स्वाध्याय

मोराजी वर्णी सागर विद्यालय में धार्मिक व लौकिक शिक्षा साथ-साथ चलती थी। संदीप दसवीं कक्षा की पढ़ाई के साथ धार्मिक शिक्षा का अध्ययन भी कर रहे थे। एक दिन पंडितजी मोतीलालजी आचार्य पूज्यपाद स्वामी के सर्वार्थ सिद्धि ग्रंथ का अध्यापन करा रहे थे। उसमें संसार के पंच परावर्तन का प्रकरण चल रहा था। पंडितजी ने उस प्रकरण को इतनी गहराई व मार्मिक ढंग से पढ़ाया कि संदीप उसी में खो गए। संदीप सोचने लगे कि देखो अज्ञानवश मैं भी अनादिकाल से गति-गति में भटकता दुःख पाता रहा। उनकी चेतना जाग्रत हो गई। उस प्रकरण की मार्मिकता का उनकी चेतना पर इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि उस दिन संदीप ने न कुछ खाया न पीया। एक दिन यही पंच परावर्तन का चिंतन उनके वैराग्य का निमित्त बना क्योंकि उनके कोमल संस्कारित मन पर इस रात-दिन चलने वाले चिंतन ने गहरी पैठ बना ली थी।

इस प्रकरण में संदीप ने पढ़ा था कि अज्ञानवश इस चेतन ने विभाव परिणति कर कर्मों का बंध किया और अनादिकाल से पंच परावर्तन में अज्ञानी बन भ्रमण करता रहा। जिन शासन, जिनेंद्र भगवान, जिनवाणी और सच्चे गुरु की शरण ही इस पंच परावर्तन से छुटकारा दिला सकते हैं। संदीप ने तभी अपने मन में दृढ़ निश्चय कर लिया कि मुझे तो सच्चे गुरु की शरण में ही जाना है। उनके चरणों में जीवन समर्पित कर संसार परिभ्रमण से छुटकारा पाना है। आगे भी उनका चिंतन चलता रहा कि पंच परावर्तन में जीव भ्रमण करते हुए कैसे-कैसे दुःख भोगता है। मुझे तो बस इस भव भ्रमण से मुक्ति पाना है। संसार के दुःखों से छुटकारा पाना है।

जैसे गाय जुगाली करती है वैसे ही संदीप बार-बार पंच परावर्तन पंच परावर्तन का चिंतन करते रहे। चिंतन पंडितजी ने इतनी गहराई से समझाया था कि संदीप के कोमल, संवेदी मन में वह गहराई से उतर गया। संदीप उस दिन उस चिंतन में इस कदर खोए रहे कि उन्हें न भूख लगी न प्यास। न दिन में कोई काम किया न रात में सोए। बस पंच परावर्तन का चिंतन चित्रपट की तरह उनके मनो मस्तिष्क पर उभरता रहा। कई दिन संदीप उस चिंतन में डूबे गुमसुम बैठे रहे।

शिक्षकों व दोस्तों ने समझा-बुझाकर संदीप को उस मनोदशा से बड़ी मुश्किल से बाहर निकाला, लेकिन वैराग्य के बीज तो यहीं से उनके मन में पड़ चुके थे। इस अध्ययन से दिन पर दिन संसार के प्रति उनकी निस्पृहता बढ़ती गई और अंततः वैराग्य में परिणत हो गई।

वीरेंद्र कारू की मौत

पड़ोसी दूल्हे की जलकर मौत का संदीप के मन पर गहरा झटगा लगा था। वे अक्सर सोचते रहते कि 'अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा' अर्थात इस संसार में शाश्वत निज आत्मा के अलावा कोई साथी सगा नहीं है।

माँ से संदीप की मनोदशा छिपी नहीं थी। वह संदीप को समझाती रहती कि मृत्यु पर किसी का बस नहीं चलता। वह संदीप को इस सदमे से उबारने का हरसंभव प्रयत्न करती। माँ समझाती कि देखो इस वर्ष तुम्हारी 10वीं बोर्ड की परीक्षा है। यदि यही हाल तुम्हारे वहाँ सागर विद्यालय में रहे तो तुम पढ़ाई नहीं कर पाओगे और फेल हो जाओगे। वहाँ तुम्हारा कौन ध्यान रखेगा? बीती ताहि बिसार दे, आगे की सुधि ले। और एक दिन माँ की बातों को गाँठ बाँध संदीप आगे की पढ़ाई के लिए मोराजी सागर विद्यालय के लिए रवाना हो गए।

स्कूल में वीरेंद्र कारू संदीप का बहुत अच्छा दोस्त था। संदीप तो दुबले- पतले छरहरे थे लेकिन वीरेंद्र कारू हृष्ट-पुष्ट, ऊँचा तगड़ा था। वह अपनी उम्र से ज्यादा ही लगता था। वह अनेक प्रकार की शारीरिक चेष्टाएँ कर साथी छात्रों का मनोरंजन करता रहता। संदीप की तरह वह भी पढ़ाई में अच्छा था। इसलिए भी संदीप की उससे अच्छी पटती थी। 10वीं बोर्ड की परीक्षा में पेपर कठिन था। संदीप, वीरेंद्र कारू व एक और ऐसे तीन छात्र ही पास हुए। वीरेंद्र ने संदीप की मनोदशा बदल दी थी। उसने गंभीर संदीप को हँसना, खिलखिलाना सिखा दिया।

छुट्टियाँ खत्म होते ही संदीप ग्यारहवीं की पढ़ाई के लिए मोराजी आ गए। जाकर वे अपने अजीज दोस्त वीरेंद्र से सबसे पहले मिलना चाहते थे व पास होने की खुशी बाँटना चाहते थे। शाला परिसर में वीरेंद्र कारू कहीं नहीं दिखा। ऐसा कभी नहीं हुआ कि वह स्कूल में पहले दिन न दिखे। आज उलटा हो रहा था। संदीप उसे यहाँ- वहाँ ढूंढ रहे थे जबकि हर बार स्कूल खुलते ही वही पहले संदीप से मिलता था। अंततः बेचैन संदीप ने अधिकारीगण से उसके बारे में पूछा। उनका जवाब सुनते ही संदीप के तो हाथों के तोते उड़ गए। क्या? वीरेंद्र अब इस दुनिया में नहीं रहा? अब वह उससे कभी नहीं मिल सकेगा? उसने जो सुना उसका इतना ही सार था कि वह तालाब में तैरने गया लेकिन कीचड़ में फंस गया। अच्छा तैराक होने के बावजूद भी वह बाहर न आ सका और तालाब में ही उसकी इहलीला समाप्त हो गई। तालाब से बड़ी मशक्कत के बाद उसका शव ही बाहर लाया जा सका।

जिगरी दोस्त वीरेंद्र कारू की याद में संदीप की आँखों से गंगा-जमुना बह निकली। मिलन की चाहत दुःख में बदल गई। संदीप बार-बार साँसों के माली से प्रश्न कर रहा था।

''कैसे? ये भूल हुई साँसों के माली
फूल चुनना था, क्यू कली तोड़ डाली?''

लौकिक शिक्षा के साथ आध्यात्मिक शिक्षा में भी विशिष्ट योग्यता हासिल संदीप सोचने लगे, 'जिंदगी शबनम की तरह क्षणभंगुर है। क्या पता मौत किस हालात में आवाज देगी? क्या पता कहाँ ले जाकर जिंदगी को मात दे देगी। अगले

पल क्या घटने वाला है। कोई नहीं जानता, नियति को क्या मंजूर है। पहले टेकचंद और अब वीरेंद्र कारू, दूसरा दोस्त भी चला गया। अक्सर धार्मिक कक्षाओं में पंडितगण व विद्वतगण समझाते थे वही बात फिर से संदीप को याद आ गई।

'अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा'

इस संसार में आत्मा के अलावा कुछ भी शाश्वत नहीं है। कोई सगा-साथी नहीं है। लेकिन मित्र वियोग के इस दारूण दुःख के पलों में उनका सारा ज्ञान असहाय एक बाजू धरा रह गया था।

संदीप में जीवन से वितृष्णा सी पैदा हो गई। वीरेंद्र ने इतनी मेहनत से पढ़ाई कर फर्स्ट डिविजन हासिल किया और यकायक चला गया। क्या सुख भोगा उसने? अब संदीप के चिंतन का केंद्र बिंदु वह स्वयं होता था। क्या पता मैं भी इसी तरह किसी भी पल इस दुनिया से चला जाऊँगा? मेरी भी पढ़ाई की सारी मेहनत धरी की धरी रह जाएगी। संदीप का मन बड़ा अशांत व विचलित था। दोस्त की मृत्यु की हृदय विदारक एक घटना से संदीप उबर भी न पाये कि दूसरी घट जाती और वह भी अपने प्रिय साथी की।

पं. सुरेशचंद्रजी का देहावसान

विद्यालय के प्रधानाध्यापक पं. सुरेशचंद्रजी शास्त्री कक्षा 8वीं के प्रमुख टीचर थे। संदीप उन्हें बहुत चाहते थे और प्रधानाध्यापकजी भी शाला के मेधावी छात्र संदीप से बहुत स्नेह करते थे। उनको छात्र संदीप से काफी अपेक्षाएँ थीं। वे अक्सर स्टाफ रूम में संदीप की प्रशंसा करते रहते थे।

प्रधानाध्यापकजी पं. सुरेशचंद्रजी धार्मिक शिक्षा में लघु सिद्धांत कौमुदी (संस्कृत व्याकरण) भी बखूबी पढ़ाते थे। वे अच्छे विद्वान व प्रवचनकार होने के कारण 1992 में पर्युषण पर्व में सहारनपुर में प्रवचन करने गए थे। दो दिन ही बीते थे कि पूजा के वस्त्र में वे मंदिर की सीढ़ियाँ चढ़ रहे थे, मुख से दर्शन पाठ बोले जा रहे थे कि अचानक उन्हें हार्ट अटैक आ गया। उन्हें संभलने का अवसर ही नहीं मिला और वे चल बसे। सहारनपुर का समाज इस दुःखद घटना से स्तब्ध था।

उनकी मृत देह सागर पहुँची। विद्यालय परिवार के साथ संदीप भी उनकी अंतिम यात्रा में सम्मिलित हुए। आठवीं कक्षा में पढ़ाने वाले तथा जीवन में व्यावहारिक शिक्षा देने वाले अपने इतने अच्छे शिक्षा गुरु की अकाल मृत्यु पर उनके परिवार का क्रंदन व विलाप देख-सुन संदीप का मन भी रो उठा। फिर अब उनके एक प्रिय शिक्षक के अपने से सदा-सदा के लिए दूर हो जाने पर संदीप के हृदय को गहरा झटका लगा।

शमशान में उनकी हट्टी-कट्टी देह घंटे दो घंटे में खाक होते देख संसार की अनित्यता व नश्वरता ने उन्हें झकझोर दिया। फिर उनके मन में प्रश्न उठ खड़ा हुआ क्यों मेरे प्रियजन मुझसे दूर हो जाते हैं? क्या पता किस पल मेरी भी ऐसी नियति हो जाए? अपने दो अजीज दोस्तों व प्रिय शिक्षक के अचानक काल कवलित होने से संदीप अंदर तक हिल गए। मृत्यु के महातांडव ने उनका मन झकझोर दिया।

प्रहलाद

संदीप अब स्कूल में भी उदास रहते थे। वैसे ही कम बोलते थे किंतु चुप-चुप उदास रहने व कम बोलने में फर्क है। संदीप के ये हाल शहर का दादा टाइप, शैतान लड़का प्रहलाद देखता रहता था। एक दिन संदीप इंटर में भी कक्षा में गुमसुम उदास बैठे थे।

प्रहलाद ने हौले से उनके कंधे पर हाथ रखा। संदीप चौंक पड़े, पीछे मुड़कर देखा, प्रहलाद उनके पास खड़ा मुस्करा रहा था। प्रहलाद ने संदीप से कहा, ''दोस्त एक फूल के टूटकर गिर जाने पर बगिया वीरान नहीं हो जाती। एक तारे के

टूटने से आकाश खाली नहीं हो जाता। देखो इस शाला में तुम जैसे कितने फूल खिले हैं। 'वीरेंद्र कारू' के यों अचानक चले जाने से क्या शाला की बगिया उजड़ी? नहीं न। सब काम यथावत चल रहा है। माना तुम्हारा बहुत अच्छा दोस्त था। पर नियति के आगे किसकी चलती है। गो-वेंट-गॉन- जो बीत गया उसे जाने दो, Act Act in the living present. जाने वाले के साथ नहीं जाया जाता। हममें जब तक श्वांस है जिंदा रहना है- चाहे हँसकर जीयो या रोकर।'' कहते हुए वह संदीप को हाथ पकड़कर कक्षा कक्ष से बाहर ले गया। प्रहलाद ने संदीप के जीने का रंग-ढंग ही बदल डाला। संदीप को पता ही न चला कि प्रहलाद से उसकी गाढ़ी दोस्ती कब हो गई। कैसे हो गई?

प्रहलाद एक दबंग गुंडा था। वह शाला के किसी भी छात्र के लिए मारने-मरने को तैयार रहता। इसलिए उसका कइयों से पंगा होता रहता। वह निडर हो गया था। प्रहलाद व संदीप की जोड़ी सबके लिए आश्चर्य का विषय थी। सब संदीप को प्रहलाद के साथ रहने से मना करते थे वरना वह किसी दिन उसके साथ मुसीबत में फंस जाएगा? पर प्रहलाद संदीप के लिए जीवट वाला दोस्त था जिसने उसे दुःखों के समंदर से बाहर निकाला था।

सुशील, सुसंस्कारी संदीप जानते थे कि उन्हें क्या करना है? जैसे जल में रहकर भी कमल जल से भिन्न है वैसे ही संदीप प्रहलाद के साथ रहकर भी, उसकी प्रकृति व प्रवृत्तियों से अलग थे, लेकिन वह प्रहलाद ही था जिसने उसे दुःख के क्षणों से उबारा था। दोस्ती अलग चीज है स्वभाव में भिन्नता अलग।

एक बार प्रहलाद की अपने परिवार वालों से अनबन हो गई। झगड़ा इतना बढ़ गया कि भाई-भाई आपस में एक-दूसरे को मारने- मरने को उतारू हो गए। प्रहलाद में कषायों (क्रोध) की तीव्रता थी। वह भाई-भाभी के खिलाफ तलवार लेकर घूमने लगा। किसी अनहोनी की चिंताओं के भय से संदीप ने उसे तलवार न रखने व भाई से सुलह करने की बात समझाई। पर वह न माना। विनाश काले विपरीत बुद्धि। और एक दिन प्रहलाद से भयभीत भाभी ने दांव देखकर उस पर एसिड फेंक दिया। उसका सारा शरीर झुलस कर माँस का लोथड़ा बन गया। एक पल में वह हृष्ट-पुष्ट व सुंदर देह इतनी वीभत्स हो गई कि कल्पना मात्र से दिल सिहर उठे। उसकी हृदय विदारक चीत्कारें दूर-दूर तक सुनाई दे रही थीं। अंततः भर यौवन में वह इतनी बुरी मौत मर गया।

प्रहलाद की मौत संदीप के लिए कई यक्ष प्रश्न खड़े कर गई। संदीप हृदय से आहत थे। जिधर सुख, चैन, शांति की तलाश में कदम बढ़ाते कि वहीं चिर वियोग का हृदय विदारक, मन को विचलित कर देने वाला दृश्य मिला। कहाँ से व कैसे संदीप शांत व स्थिर रहे। स्वयं को शांत रखने में जो साथ देने आगे आए वे ही उसे अशांत कर चले गए।

जीवन मृत्यु का खेल इतनी नजदीकी से देख-देखकर अब संदीप के मनो मस्तिष्क पर हमेशा मृत्यु का ही महा तांडव होता रहता था। एक घटना से संदीप ठीक से उबर संभल भी न पाते कि दूसरी घट जाती। अब उन्हें हर पल डर रहता कि अगले पल जाने कौन घटना घट जाए। क्या पता कौन स्नेही/प्रिय अलविदा कह चल दे। क्या पता अगला काल का शिकार वह स्वयं भी हो सकता है।

एक दिन संदीप अपने दोस्त चंद्रशेखर के साथ जो प्रहलाद के घर के पास ही रहता था, प्रहलाद के माता-पिता से मिलने गए। देखा अब मित्र तो नहीं था लेकिन जिसके निमित्त उसकी जान चली गई, अहंकार की प्रतीक वह तलवार आज भी वहीं दरवाजे के पीछे रखी थी। फिर से प्रहलाद की यादों ने संदीप के मन में हल-चल मचा दी। प्रहलाद की इस दर्दभरी मृत्यु ने संदीप का मन दहला दिया।

पुजारीजी की बहन का जल मरना

बार-बार घटते मौत के इस क्रूर नर्तन को देख-देख तीक्ष्ण बुद्धि वाले छात्र संदीप की यह मनोदशा शिक्षकों से छुपी न रह सकी। वे नहीं चाहते थे कि उनका इतना अच्छा छात्र, जिससे उन्हें कई उम्मीदें थीं/हैं जिसमें उन्हें कई संभावनाएँ

नजर आ रही थीं/हैं, कहीं वह राह से न भटक जाए। अतः वे संदीप का विशिष्ट ध्यान रख, पढ़ाई के लिए प्रेरित करते रहते।

एक दिन संदीप ग्यारहवीं कक्षा की पढ़ाई के वक्त वर्णी भवन मोराजी में पं. मोतीलालजी से सर्वार्थ सिद्धि का अध्ययन कर रहे थे। अचानक उनकी नजर सामने वाली बिल्डिंग पर पड़ी, वहाँ से भारी मात्रा में धुआं निकलता हुआ दिख रहा था। आपने तुरंत पंडितजी सा. को बताया। उन्होंने भी वहाँ देखा, पर अब धुआं बढ़ गया था। नीचे से बचाओ बचाओ की आवाजें आ रही थीं। आप व पंडितजी अध्ययन-अध्यापन छोड़ नीचे आए।

पता चला विद्यालय में रहने वाले मंदिर के पुजारीजी की बहन अपने एक मासूम व एक गर्भ में पलने वाले बच्चे सहित तीव्र असाता वेदनीय कर्म के उदय से आत्महत्या के उद्देश्य से जल गई। अकस्मात 3 प्राणी जिंदगी खो बैठे। पिछली शाम तो उसे मंदिर में एक बच्चे के साथ प्रभु भक्ति आरती में संदीप ने देखा था। दीदी अत्यंत सुंदर थी। मंदिर के सामने रहने व पुजारीजी के कारण उसका पूरा परिवार परिचित था। क्षणभर में वह कंचन सी सुंदर काया जलकर जिस रूप में बदल गई थी, देखा नहीं जा रहा था।

संदीप अवाक् देखते रह गए। एक साथ झुलसी मृत दो लाशें बाहर लाई गईं। किंकर्तव्यविमूढ़ सोच रहे थे कि देखो इसकी बुद्धि किस कर्म के जाल में फंस जीवन छल ले गई। कुछ समय पूर्व हँसता मुस्कराता परिवार शव में बदल गया। सारा परिवार क्षणभर में बर्बाद हो गया। इस घटना ने संदीप के मन मानस को झकझोर दिया। संदीप वहीं खड़े-खड़े सोचने लगे कि पानी के बुलबुले के समान तीन जिंदगियाँ बुलबुला गई। मौत की आँधी ने क्षणभर में तीन लोगों के जीवन दीप बुझा दिए।

अथिरं मित्त-लावण्णं कलत्तं सजणो तहा
धण-धण्णादि गेहं च, सव्वं हि जलबुब्बदं

संसार में मित्र, लावण्य, सुंदर स्त्री, स्वजन, धन-धान्यादि और घर सब कुछ ही वस्तुतः जल के बुलबुले के समान है। कुछ भी स्थिर नहीं है। हठात उनके मुख से 'शाश्वत स्वरूपोहम्' निकल गया।

यद्यपि इस घटना ने संदीप को अत्यधिक विचलित तो कर दिया था पर यह घटना उन्हें जीवन का बहुत बड़ा फलसफा दे गई। मनुष्य जीवन सांसारिक दुःखों, मुश्किलों व परिस्थितियों से हार मान मृत्यु को वरण करने (आत्महत्या करने) के लिए नहीं अपितु, संसार की समरस्थली में अपने पुरुषार्थ व विवेक बुद्धि से दुःखों की सेना को पराजित कर अमर्त्य होने व अमरता प्राप्त करने के लिए है। चाहे जो भी हो, कितनी भी विकट परिस्थिति हो, आत्महत्या कायरता है। अतः मनुष्य को आत्महत्या कभी नहीं करना चाहिए। दुःखों को बाँटना चाहिए, जरूर कोई न कोई हल या राह मिल जाएगी। क्षणिक आवेश में आत्महत्या कर अमूल्य मानव जीवन नष्ट नहीं किया जाना चाहिए। इससे बड़ी मूर्खता कोई और नहीं है।

पुजारीजी की बहन जीवन-मृत्यु के अवसादों में घिरे संदीप के जीवन में स्वयं मरकर भी जीवन जीने की नई ललक व लौ जगा गई।

जीवन मृत्यु का घटता नित नया क्रूर कर्तन संदीप को और अधिक अध्यात्म के निकट लाता गया। संदीप चिंतन कर रहे थे कि मित्र, सुंदरता, धन-वैभव, स्वजन सब कमल पत्र पर पड़े शबनम की तरह क्षणिक व अस्थिर है। 'शीर्यते इति शरीरः'। यह शरीर प्रतिक्षण क्षीण होता रहता है। और उपरोक्त घटनाएँ डूबने, जलने, गिरने आदि की कषायोंवश या मोहवश मनुष्य को अकाल काल कवलित कर देती है। शरीर, आयु व यौवन अमूल्य हैं इनका विनाश होने से पहले ही हमें आत्म कल्याण में लग जाना चाहिए न कि अज्ञानतावश इनका योग-उपयोग सांसारिक बाह्य पदार्थों के संग्रह, सुरक्षा, वृद्धि आदि में लगा इस बेशकीमती जीवन को मूल्यहीन कर लेना चाहिए।

लौकिक शिक्षा के साथ-साथ संदीप अब धार्मिक- आध्यात्मिक शिक्षा में भी निष्णात हो गए थे। अपने घनिष्ठों, परिचितों व दोस्तों के साथ घटी सांसारिक विद्रुपताएँ संदीप को संसार से उदासीन बनाती चली जा रही थी। और आज पुजारीजी की बहन की इस वीभत्स अकाल मृत्यु ने उन्हें अंदर तक हिला कर रख दिया। वे एकांत में चिंतन करने लगते कि हमें आयु, शरीर व यौवन रहते हुए आत्म कल्याण कर लेना चाहिए। आत्म कल्याण का अर्थ मुक्ति प्राप्ति है। एक मुक्तात्मा ही अनंत ज्ञानदर्शनादि से युक्त है। 'अनंत चतुष्टय सहितोऽहम्।'

दादाजी का देहावसान

फरवरी 1993, गोम्मटेश्वर बाहुबली भगवान के महा मस्तकाभिषेक का सीधा प्रसारण तब के एकमात्र चैनल 'दूरदर्शन' पर हो रहा था। संदीप और कई दोस्त टी.वी. के सामने बैठे कार्यक्रम देख रहे थे कि अचानक संदीप के लिए बुलावा आया। संदीप बाहर निकले तो देखते हैं कि ताऊजी का बेटा चक्रेश अपनी राजदूत गाड़ी स्टार्ट किए खड़ा है।

संदीप को देखते ही कहा जल्दी से गाड़ी पर बैठो। प्रश्नवाचक मुद्रा में वे गाड़ी पर बैठ गए। चक्रेश भी तेजी से गाड़ी श्मशान घाट की और दौड़ाने लगे। बड़ी सड़क पर पहुँचते ही देखते हैं कि एक अर्थी आ रही है। भैया गाड़ी रोक देते हैं और संदीप का हाथ पकड़ अर्थी की तरफ चलते हुए कहते हैं- बब्बाजी (दादाजी) अब नहीं रहे। संदीप की आँखें छलक पड़ीं। वे चलते हुए विचारमग्न हो गए- अभी पंद्रह दिन पहले ही ताऊजी तबीयत बिगड़ने पर उन्हें किशुनगंज से सागर लाए थे, अभी आठ दिन पहले ही मैं उनसे मिलकर आया था। मुकेश व मनोज भैया उनकी सेवा में थे। वे मुझे बहुत प्यार करते थे, अपनी चाय व मिठाई भी मुझे दे देते थे। बुखार आ जाने पर या नींद न आने पर वे बचपन में मुझे अपनी छाती से चिपटाकर णमोकार सुनाते हुए सुलाते थे। वे सुबह चार बजे उठकर बारह भावना, चौबीसी आदि का ऊँची आवाज में पाठ करते थे। उनके पाठ सुनकर भी कोई न जगे तो वे कहते, ''उठ रे ढेर! भुंसरा हो गओ।'' उन्होंने पूजन-भजन कभी नहीं छोड़ा। मुझे भी संस्कारित किया व मदरसे (स्कूल) जाने के लिए प्रेरित करते थे।

अग्नि संस्कार का जोरदार शोर होने पर संदीप की मग्नता भंग हुई और उन्होंने दादा का अंतिम दर्शन किया। इस घटना से वे फिर उदास हो गए। अपनों का वियोग देख फिर से संदीप का संवेदी मन द्रवित हो गया।

साइकिल सवार दो बच्चों का एक्सीडेंट

मोराजी गणेश वर्णी विद्यालय से प्रतिवर्ष दशलक्षण पर्युषण पर्व पर संस्था के मेधावी, विलक्षण प्रतिभाशाली व विद्वान छात्रों को विभिन्न स्थानों पर प्रवचन के लिए भेजा जाता था। संदीप को भी इस वर्ष सन् 1994 में बरमान भेजा गया। इस छोटे बच्चे का असाधारण ज्ञान, गूढ़-गहन चिंतन व कुशल वक्तृत्व शैली देख समाज ने संदीप को सिर-आँखों पर बिठा लिया। हर किसी के मुख पर संदीप भैया का नाम था। उन्हें देखते ही लोग सोचने लगते 'इतना छोटा बच्चा क्या प्रवचन देगा?' पर समाज उनकी विद्वत्ता व प्रवचन शैली की कायल हो गई।

सातवें दिन शाम का वक्त था। संदीप जिस घर में ठहरे थे। वहाँ का उनका एक हम उम्र लड़का जो संदीप का दोस्त बन गया था आया व कहने लगा, ''संदीप भैया, बड़ा दुःखद व बुरा समाचार है। यहाँ से थोड़ी दूर मुख्य सड़क पर दो छोटे बच्चों को जो साइकिल से स्कूल से घर जा रहे थे, ट्रक ने कुचल दिया। मैं वहाँ जा रहा हूँ। आपको चलना हो तो चलो!'' संदीप यह सोचकर उसके साथ हो गये कि संभवतः हम वहाँ कुछ काम आ सकें।

संदीप ने वहाँ जो दृश्य देखा, देख उनका सिर चकरा गया। कुछ महिलाएँ जो उधर से गुजर रही थीं, यह दृश्य देख गश खाकर गिर गई। संदीप ने देखा कि ट्रक के टायरों में दोनों बच्चे बुरी तरह कुचल गए थे। चारों ओर खून व मांस

के लोथड़े बिखरे पड़े थे। उस दृश्य को देखकर संदीप का हृदय हा हा कार कर चित्कार उठा। हृदय तंत्रिकाएँ कांप उठी। बच्चों के माँ-पिता के हाल-बेहाल थे। संदीप स्वयं को ही नहीं संभाल पा रहे थे, अतः दुःखी उदास वहाँ से लौट आए। नन्हीं कलियाँ खिलने से पहले ही कुचल गई। वह करुणा भरा दृश्य देख संदीप का दिल, आँखें तो रो रही थीं, पर उनके साथ सारी प्रकृति रो रही थी।

रास्ते में बारह अनुप्रेक्षाओं में अनित्य, अशरण व संसार भावनाओं का चिंतन उनके मन में चल रहा था। नियति की यह क्रूर कारूणिक लीला (दृश्य) उनके मनस पटल के सामने से हट ही नहीं पा रही थी। संदीप के जीवन में एक के बाद एक घटती जा रही घटनाओं के साथ इस घटना ने आग में घी का काम कर दिया। उनका मन संसार की नश्वरता से और अधिक उद्वेलित हो गया। संसार के प्रति उनकी उदासीनता बढ़ती जा रही थी। बच्चों के माता-पिता की करूण चित्कारें कर्ण कुहरों से होकर संदीप का हृदय भेद रही थी। वहाँ किसी काम आना तो दूर फिर एक नए दुःख का बोझ संदीप के हृदय पर लद गया।

इस घटना के दूसरे या तीसरे दिन संदीप समाज के कुछ युवकों के साथ शाम को नर्मदा नदी किनारे टहलने गए। इत्तफाक से वे उधर से गुजरने लगे जिधर बकरे, मुर्गियाँ काटी व उनकी चमड़ी उधेड़ी जाती थी। बेबस मूक पशुओं का करूण क्रंदन व वहाँ का वीभत्स दृश्य देख संदीप ने आँखें मूंद ली। उन मूक पशुओं के प्रति शांति की प्रार्थना करते लंबे-लंबे डग भरते वे लोग वहाँ से लौट आए। संदीप की आगे घूमने, जाने की हिम्मत ही न हुई। सांसारिक जीवों की इस दुर्गति (दशा) ने संदीप को अंदर तक रूला व हिला दिया।

भावभूमि

एक के बाद एक अकाल काल कवलित होते रहे अपने आत्मीय प्रियजनों, दोस्तों, परिचितों, अपरिचितों की मृत्यु का महातांडव संदीप के मनो मस्तिष्क पर जब-तब हावी होता रहता था। चाहे घर पर हो या स्कूल में, कॉलेज में हो या मंदिर में, खेल के मैदान में हो या बाजार में, संदीप को कहीं चैन नहीं मिलता था। समुद्र की तरह ऊपर से तो संदीप शांत दिखते थे लेकिन भीतर ही भीतर जीवन-मृत्यु का बड़वानल धधकता रहता था। अचानक उन्हें साहित्य में पढ़ी प्रसादजी की ये पंक्तियाँ याद आ जाती-

रामकृष्ण गौतम कोई भी इन लपटों से बचे नहीं हैं
अजी! हमारे जन्म मरण के खेल इन्हें कुछ नए नहीं हैं
नित प्रति नई-नई आहुतियाँ, धधक रही मरघट की ज्वाला।

इन दुःखद जीवनानुभवोंका आवेग संदीप के अचेतन मन पर हावी होता रहा। कहने को तो संदीप दुनियादारी के सारे काम व्यवस्थित व सलीके से करते थे, पर बिना मन मर्जी व इच्छा के। प्रथमानुयोग में पढ़ी 'भरतजी घर में भी वैरागी' व राजा जनक के वैराग्य की कथाएँ उन्हें याद आती रहती। स्कूल में तो उनकी मनोदशा पर ध्यान देने वाला कोई नहीं था लेकिन जब वह घर पर जाते व उदास बैठे सोचा करते तो माँ चिंतित हो पूछ बैठती बेटा ''अब कौनसी घटना घट गई?'' कई बार तो जब वह सोच में डूब जाते, खाना तक ठंडा हो जाता। छोटे भाई बहन उन्हें खाने की याद दिलाते।

बहुत कुरेदने पर संदीप माँ से इन बातों (घटनाओं) का जिक्र करते। वे अक्सर कहा करते, माँ मृत्यु का कोई भरोसा नहीं, इसके साथ ही जो जैनदर्शन, चिंतन व सिद्धांतों का आध्यात्मिक अध्ययन व आचार्यों के ग्रंथों का स्वाध्याय करते रहते, उनकी चर्चा भी माँ से करते। बातचीत में संदीप कई बार माँ से अपने संसार परिभ्रमण को समाप्त करने का जिक्र कर चुके थे। माँ सोचती अभी सब पढ़ाई का असर है। समय आने पर अपने आप भूल जाएगा व संसार के

क्रिया-कलापों में डूब जाएगा।

भोली व सरल चित्त माँ समझ नहीं पाई कि बेटे संदीप के हृदय में इतना तीव्र विरक्ति का बीज पड़ गया है जो मन की मिरदा में दबा पड़ा, समय-समय पर संयोग वियोग की दारूण दुःखद घटनाओं के खाद व पानी की आर्द्रता के कारण मरा नहीं है। अपितु उचित समय के इंतजार में है। या यों कहें योग निमित्त के अभाव में सुप्त पड़ा है।

वक्त बेवक्त घटी इन दुःखद घटनाओं की स्मृतियाँ जब-तब संदीप के संवेदी मन को कुरेदती रही और उनकी भावभूमि उर्वर होती रही। बारिस पूर्व कृषक की तरह वे अध्यात्म के हल से जीवन के बंजर खेत की जुताई कर उसे उर्वरक बनाने का प्रयत्न करते रहते ताकि समय पर उसमें मुक्ति के बीजों का वपन किया जा सके, शिवत्व की फसलें लहराई जा सकें। क्षमा को उन्होंने जीवन का आभूषण बना लिया। मार्दव से मन की वल्गाओं को कसने लगे। आर्जव से सरलता हासिल करने लगे। सत्य से उनका जीवन शृंगारित होने व संतोष से मोह-माया उपेक्षित होने लगी। छोटे-छोटे नियमों व संकल्पों से जीवन के महत्व पर संयम, त्याग व तपस्या के पहरे बिठा दिए। इस प्रकार संदीप चुपचाप यौवन के स्वर्णकाल को मौज-मस्ती व सांसारिक सुख-भोगों में बिताने की बजाए निस्पृहता व त्याग की भट्टी में तपा कुंदन बनाने का प्रयत्न करते रहे।

नित प्रति संदीप पर जीवन की नश्वरता हावी होती जा रही थी। संदीप ने फूल से मासूम दो नन्हे बच्चों को ट्रक के नीचे कुचलकर मरते देखा था, टेकचंद के रूप में बचपन को पेड़ से गिरकर प्राण खोते देखा था। वीरेंद्र कारू के रूप में किशोरावस्था को पानी में डूबकर, जान खोते देखा था। प्रहलाद के रूप में यौवन को तेजाब में झुलस, दारूण दुःख, पीड़ा सहते, मरते देखा था। अग्नि की साक्षी में सात फेरे लेते दूल्हे को उसी अग्नि को लीलते देखा था। अन्नपूर्णा कही जाने वाली सुंदर यौवना को उसी किचन की आग में जल आत्महत्या कर जीवन को श्मशान बनते देखा और वयोवृद्ध दादाजी का मरण देखा था। अपने युवा हृष्ट-पुष्ट शिक्षक को भी सबके बीच से सदा के लिए जाते देखा था। यह सोच-सोच संदीप चिंतन में पड़ जाते कि कहीं कभी मेरी भी ऐसी ही नियति न हो क्योंकि-

पानी केरा बुदबुदा, अस मानुष की जात।
देखत ही छुप जाएगा, ज्यों तारा परभात।

एक के बाद एक मृत्यु के हवन कुंड में पड़ती ये आहुतियाँ संदीप के जीवन व जगत के प्रति वैराग्य की लौ को प्रज्ज्वलित रखने में आग में घी का काम करती रही। संसार के व्यामोह से धुंध छँटने लगी। पग-पग पर आध्यात्मिक अध्ययन से अर्जित ज्ञान उनका सबसे बड़ा सम्बल बनता जा रहा था। जीवन के चर्मोत्कर्ष युवाकाल में सांसारिक सुख-स्वप्नों में डूबे रहने की बजाए संदीप के जीवन का एक-एक क्षण चिर सुख की खोज की चिंता में व्यतीत होने लगा। कभी मौन रहकर आत्मचिंतन में मगन हो जाते तो कभी अध्ययन में तल्लीन हो जाते। पर हर वक्त संदीप स्वयं को असहाय सा महसूस करते। उन्हें एक सच्चे गुरु की तलाश थी। जो सही राह पर चलने के लिए सही मार्गदर्शन दे सके। संदीप यही सोचा करते कि मुझे मृत्यु से कोई नहीं बचा सकता। अतः मुझे मृण्मय से चिन्मय बनना है।

संदीप में विरक्ति की भावनाएँ वेगवती हो परवान चढ़ रही थी। योग-संयोग कहो या निमित्त, प्रारब्ध कहो या भवितव्य, संदीप की कक्षा 12वीं (बारहवीं) की परीक्षा समाप्त होते ही संदीप ने अपने दोस्त सुनील व अन्य मित्रों के साथ आचार्य श्री विद्यासागरजी के दर्शन का प्रोग्राम बनाया। आचार्य श्री उन दिनों बुंदेलखंड की भूमि को पावन करते विहार कर बीना बारहा में विराजमान थे। संदीप अपनी मित्र मंडली के साथ आचार्य श्री के दर्शनार्थ बीना बारहा पहुँच गए।

सबेरे-सबेरे नहा-धोकर तैयार हो संदीप दोस्त सुनील व अन्य मित्रों के साथ आचार्य श्री के कक्ष की ओर चल पड़े। चूँकि संदीप आचार्य श्री के दर्शन के लिए जाते रहते थे अतः आचार्य श्री ने उनकी प्रतिभा को पहचान लिया था। वे उन्हें व्यक्तिगत रूप से पहचानते थे। संदीप थे ही ऐसे कि कितने भी बड़े महायोगी महापुरुष हो, उनका जरा सा चरण

सान्निध्य पाकर भी उन पर अपने परिचय की कोई न कोई निशानी छोड़ देते थे। आचार्य श्री विद्यासागरजी पर भी उन्होंने अपनी छाप छोड़ दी थी। आचार्य श्री सामायिक पश्चात शुद्धि के लिए कक्ष से बाहर निकल रहे थे कि संदीप का सामना आचार्य श्री से हो गया- तभी संदीप उनके चरणों में नतमस्तक हो गए। संदीप को सामने देख आचार्य श्री ने पूछ लिया, ''कब आए सुनील?'' इतने महान आचार्य श्री को उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया।

आचार्य श्री को उनका नाम संदीप की जगह सुनील ध्यान रह गया था। कर्णकुहर में अमृत घोलते आचार्य श्री के शब्द स्वर सुनते ही संदीप का मन पुलकित हो गया और मुस्कराते हुए आचार्य श्री की दृष्टि संदीप पर पड़ते ही संदीप धन्य हो गए।

आचार्य श्री के श्रीमुख से निकला संदीप के लिए वह 'सुनील' नाम आज सार्थक हो गया। वे इसी सुनील सागर के नाम से विख्यात हैं।

आचार्य श्री के शुद्धि से आने के पश्चात संदीप उनके श्री चरणों में श्रद्धा, भक्ति व विनय पूर्वक नमन कर बैठ गए। असाधारण व विलक्षण प्रतिभा हजारों- लाखों के बीच रहकर भी अपनी अलग छाप छोड़ देती है। संदीप तो उन आलोकमूर्ति आचार्य श्री को देखते ही भावविभोर हो गए। बिना बोले ही उनका विनय, विवेक व संस्कार बोल उठे। आचार्यवर की पारखी नजरों ने संदीप की विशिष्ट प्रतिभा पहचान ली। उन महान तपस्वी साधक गुरुवर की पवित्र आत्मा के आभावलय के प्रताप से संदीप के भावों की परिणति विशुद्ध हो गई।

अचानक संदीप के मन मानस में नैनागिरि तीर्थदर्शन में इन्हीं आचार्य श्री विद्यासागरजी के दर्शन की घटना जीवंत हो उठी। जिसे नानी व पिताजी बड़े रोचक ढंग से बार-बार सबको सुनाया करते थे। संदीप के स्मृतिपटल पर अचानक वह 3 वर्षीय अबोध बालक उभर आया जो आचार्य विद्यासागर महाराज बनने की जिद में अपने कपड़े खुलवाने पर अड़ा था। जब नन्हे-नन्हे हाथों की मशक्कत के बाद भी कपड़े नहीं उतरे, जमीन पर लोट लगाता रोने लगा। आखिर नानी से कपड़े उतरवा वह महाराज के पास के खिलौने पिच्छी कमंडल व उनके जैसे खड़े-खड़े खाना खाने की जिद कर रहा था। वह बालक और कोई नहीं स्वयं संदीप ही थे।

संदीप के अवचेतन मन में सांसारिक मायाजाल के आवरण की राख के ढेर के नीचे दबी विरक्ति की वह चिंगारी गुरु दर्शन के शीतल हवा के झोंके से आवरण (राख) हटा धधक उठी। ''मुझे महाराजजी बनना है, मुझे महाराजजी बनना है।'' वाक्य उनके कानों में गूंजने लगे। उन्हें ऐसा लगने लगा जैसे वीणा की मधुर झंकार झंकृत हो रही हो। संदीप उन दिव्य तेजोमय महामूर्ति की आभा में नहा गए।

अचानक कोमल तन व कोमल मन वाले किशोर संदीप उठ खड़े हुए, अनुनय-विनय पूर्वक गुरु चरणों में नत-नत हो माथा ढारे आग्रहपूर्वक निवेदन करने लगे, ''गुरुदेव मुझे आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत दे दीजिए। मैं आपके संघ में रहना चाहता हूँ।''

किशोरवय छरहरे दुबले-पतले तरुण संदीप को आचार्य श्री ने कहा ''अभी तुम छोटे हो। अपनी आध्यात्मिक एवं लौकिक पढ़ाई पहले पूरी करो। अभी तुम्हारी उम्र संघ में रहने लायक नहीं।''

''पर! पर गुरुवर्य ब्रह्मचर्य व्रत तो आप दे सकते हैं।''

उन महागुरु की पारखी नजरों ने एक ही पल में भांप लिया कि यह राह में पड़ा ऐसा वैसा पत्थर नहीं, अपितु श्रमण संस्कृति का अमूल्य हीरा है। अगर इसे थोड़ा सा ही तराश दिया जाएगा तो अपनी आभा कांति से स्वयं तो दमक ही उठेगा, औरों को भी दमका देगा। पर वे मुनिपुंगव आचार्य श्री जल्दी में नहीं थे।

आचार्य श्री ने फिर कहा, ''तुम युवा हो, ब्रह्मचर्य व्रत ले लेना तो आसान है, पर इसे निभाना अति कठिन है। तुम्हारा रंग-ढंग, विवेक व्यवहार, विरक्ति, दृढ़ संकल्प शक्ति के साथ आत्म शक्ति को जागृत करने की ललक को देख तो

लगता है व्रत रखने में तुम सफल हो जाओगे। व्रत पालन कर लोगे।''

संदीप ने भी उन युग पुरुष गुरु की बातें बड़े ध्यान से सुनी। वैसे तो आचार्य श्री से अक्सर कई युवक- युवतियाँ व्रत लेते रहते हैं, पर संदीप आचार्य श्री को निश्चित ही कुछ अलग लगे। उनकी असाधारण, ऋजुता, सरलता व समर्पण से आचार्य श्री अभिभूत हो उठे। संदीप की तेजोमय कांति कहो या सद्‌व्यवहार, आचार्य श्री को उसकी सच्ची विरक्ति व भवितव्य का पूर्वाभाष हो गया था। इसलिए सावधिक ब्रह्मचर्य व्रत प्रदान कर दिया।

लौटते में संदीप की खुशी समेटे नहीं सिमटाई जा रही थी क्योंकि उनकी मन मुराद पूरी हो गई थी। एक महान सच्चे गुरु के सान्निध्य में सत्यपथ पर कदम बढ़ा दिए थे।

ब्रह्मचर्य व्रत ले लौटते

लौटते में दोस्तों की फिर गुफ्तगू चालू हो गई। कह रहे थे यार! संदीप, हमेशा तो हम बक-बक करते थे और तू मौन रहता, सुनता था किंतु आज तो तूने गजब कर दी। हम सब चुप थे और तू अकेला बोल रहा था। हमें तो विश्वास ही नहीं हो रहा था कि तेरी जबान कैसे खुल गई। तभी एक दोस्त बोला, ''हम तो फिजुल की गटर-पटर करते रहते हैं जिसमें कोई सार नहीं। संदीप कम बोलता है- और आज बोला तो मार्के की बात कही। अपने जीवन लक्ष्य की बात कही। हम तो क्या? लाखों लोगों में भी एकाध नहीं ले सकता, इसने आज वह संकल्प ले लिया। यार संदीप, तूने तो गजब कर दिया। आचार्य श्री के आगे अच्छों-अच्छों की बोलती बंद हो जाती है। सचमुच संदीप तू कैसे उठ खड़ा हुआ? यह शोध (करने) का विषय है।'' तभी एक अन्य मित्र बोल पड़ा, ''इसे कहते हैं सौ सुनार की, एक लोहार की।''

अब दोस्त अपनी बात पर आए। वे कह रहे थे ''संदीप! तूने जीवन का इतना बड़ा निर्णय बिना सोचे समझे, बिना किसी सलाह- मशविरा किए, बिना किसी के पूछे-ताछे ले लिया, हमारे लिए अकल्पनीय है। यह सुनकर तेरे मम्मी-पापा नाराज हो जाएँगे। तुझे इतनी जल्दबाजी नहीं करनी थी। अभी तो हमने बारहवीं की परीक्षा मात्र दी है, रिजल्ट आना बाकी है पर तूने। यह क्या किया दोस्त? अभी तो हमारे मौज-मस्ती के दिन हैं और तूने जीवन के महल पर व्रत-नियमों का पहरा बिठा दिया।'' संदीप चुप था। काल के गर्भ में क्या छुपा है इसकी सोनोग्राफी का मंत्र तो उसके पास भी नहीं था। दोस्त समझा रहे थे कि घरवालों को बताए बिना इतना बड़ा निर्णय नहीं लेना चाहिए था।

अब दोस्तों की बातों का केंद्र बिंदु संदीप था। संदीप ने अपने मन की बात कभी किसी पर जाहिर नहीं होने दी। जब हम सब डॉक्टर, इंजीनियर, सफल व्यापारी बनने या सरकारी नौकरी करने की बात करते थे, तब भी यह चुप रहता था, बहुत जोर देकर पूछने पर कह देता, ''कुछ नहीं बनना।'' और जब हमने इसका पीछा नहीं छोड़ा तब इसने झल्लाकर कह दिया, ''परमात्मा बनना है।'' संदीप! आज अचानक तेरे इस कठिन व विस्मयकारी निर्णय से पता चलता है कि तेरी वो 'परमात्मा बनने' वाली चाहत सही है। परमात्मा स्वयं बनना है तो साधना स्वयं करनी पड़ती है,दोस्त नहीं समझ सके।

बचपन से लेकर युवा होने तक संदीप के जीवन में संसार की अनित्यता, नश्वरता व दुरूहता की घटने वाली घटनाओं ने उनका मन-मानस झकझोर दिया था। कहने को जिन प्रिय मित्रों के असमय काल-कवलित होने पर उनका संवेदी मन बर्फ सा पिघलता रहा था। उन्हीं घटनाओं ने उनके मन को जीवन व जगत के यथार्थ का बोध कराकर अपने आत्महित के लिए पाषाण सा कठोर बना दिया। हर सिक्के के दो पहलुओं की तरह संदीप के जीवन के इन दोनों पहलुओं ने जीवन अधिक गतिमान बना दिया।

संदीप-संजय संवाद

संदीप जब आचार्य श्री विद्यासागरजी के दर्शन करने दोस्तों के साथ गए थे तब छोटे भाई संजय को बता गए थे। वे दोनों भाई आपस में अपने मन की बातें एक-दूसरे को बताते थे।

संजय : ''भैया आचार्य श्री के दर्शन कर आए? कैसी रही यह यात्रा?''

संदीप : ''हाँ संजय। अबकी बार की यात्रा तो बहुत अच्छी रही।''

संजय : ''ऐसी क्या खास बात रही भैया?''

संदीप : ''खास बात है संजय। जैसे ही मैंने आचार्य श्री के चरणों में अपना शीश झुकाया, पल के लिए उनकी पलकें उठी, हाथ आशीर्वाद देने के लिए उठा। मैंने भी रोमांचित मन से उन्हें नमन करते हुए देखा। फिर तो पता नहीं क्या हुआ? मैं उनमें खो गया या वे मुझमें। तब 'मैं' 'मैं' न रहा मैं तो विद्या गुरुमय हो गया। अचानक मुझे बचपन का नानी द्वारा सुनाया किस्सा याद हो आया और मैं अपनी सुध-बुध खो बैठा। मेरे ओठों से निकल गया ''गुरुवर मुझे आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत दे दीजिए।''

संजय : ''और आचार्य श्री ने आपको ब्रह्मचर्य व्रत दे दिया?''

संदीप : ''हाँ दे ही दिया समझो। मैं तो उस वक्त इतना अधिक भावविह्वल हो गया था कि इसके बाद क्या हुआ मुझे कुछ पता नहीं। जब दोस्तों ने कंधा झिंझोड़ मुझे उठाया तब कहीं मेरी चेतना लौटी या कहो बाहर आया। पर मुझे याद है कि मैंने आचार्य गुरु से आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ले लिया।''

संदीप खुशी-खुशी भाई संजय को बताने लगे कि ''मुझे अब सारे झंझटों से मुक्ति मिल गई। मुझे उस वक्त इतनी खुशी हुई कि क्या बताऊँ?''

तभी रोते हुए संजय ने बात काटते हुए कहा, ''भैया यह क्या कर दिया आपने। बिना सोचे-समझे, माँ, कक्का या हम लोगों को बताए बिना इतना बड़ा महान व्रत ले लिया। जीवन का इतना बड़ा निर्णय ले लिया। वह भी इतनी सी उम्र में। दो साल, पाँच साल का व्रत लिया होता तो समझते, अभी समय निकल जाएगा। लेकिन आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ले लिया आपने। कैसे कटेगी अकेले आपकी इतनी बड़ी पहाड़ सी जिंदगी? भैया आपने यह अच्छा नहीं किया? और किसी का नहीं तो सिर्फ अपना ही ध्यान रखा होता'', कहते-कहते संजय की रूलाई और तेज हो गई।

संदीप : ''रोओ मत मेरे भाई! तुम तो मेरी हौसला अफजाई करने की बजाए मुझे कमजोर बना रहे हो। मैं तो कर्म कारा से, बंधन मुक्ति का प्रयास कर रहा हूँ और तुम हो कि मुझे मोह की बेड़ियों में जकड़ वापस वहीं फेंकना चाह रहे हो।''

संजय रोते हुए बोले, ''भैया मुझे आपकी ये ज्ञान व पंडिताई की बातें नहीं सुनना, न मेरी समझ में आती है। इन्हें अपने पास रखो। अभी तक मैं समझता था भैया धार्मिक प्रवृत्ति के हैं, ठीक है। धार्मिक प्रवृत्ति होना कोई बुरी बात नहीं किंतु आपकी धार्मिकता यहाँ तक पहुँच जाएगी? यह तो मैंने कभी सोचा भी न था। अपना न सही माँ का तो खयाल रखा होता?''

संदीप : ''अरे! मेरे छोटे भाई, माँ व कक्का का ध्यान रखने को तुम जैसा मेरा छोटा समझदार भाई है तो। फिर मुझे किस बात की चिंता। अब तुम रोना बंद करो। हम कोई दूसरी बात करते हैं।'' कहते हुए संदीप ने अपने हाथों से भाई के आँसु पोंछते हुए अपने गले लगा लिया व कहा, ''देखो संजय मैंने अपने अभिन्न मित्रों को अकाल कालकवलित होते देखा है। मौत के महातांडव का दुखद नर्तन बहुत पास से देखा है। क्या पता किस क्षण मैं भी उनकी तरह अकाल काल का ग्रास बन जाऊँ? अतः हमें आयु, शक्ति व यौवन आदि के क्षीण होने के पहले आत्म कल्याण कर लेना चाहिए। आत्म कल्याण मुक्ति प्राप्त कर लेने में है। अतः मैं सारे सांसारिक विकल्पों को छोड़ निजात्मा में स्थिर होना चाहता हूँ।

जानता हूँ यह रास्ता बहुत कठिन है, किंतु यदि तुम्हारा थोड़ा सहयोग मिल जाएगा तो सहज हो जाएगा। तुम समझदार हो, मुझे तुमसे बड़ी अपेक्षा है।''

संजय प्रश्नसूचक दृष्टि से भाई को देखने लगे।

''देखो संजय, मैं घर का बड़ा बेटा होने के नाते घर भर को मुझसे बड़ी अपेक्षाएँ एवं आशाएँ हैं। पर आज से तुम मेरी जगह हो। आज नहीं तो कल मेरा उस घर से रिश्ता छूटना ही है।'' मितभाषी संदीप इतना कह चुप हो गए।

संजय ने उदास स्वर में पूछा, ''भैया छुट्टियाँ लग गई हैं घर कब चलना है?''

तब संदीप ने कहा, ''अभी हम लोग सर्विस के लिए फॉर्म भर रहे हैं। इंटरव्यू की डेट आने पर मैं तय करूँगा। तुम जाओ। हाँ माँ के कान पर मेरे ब्रह्मचर्य व्रत लेने की बात डाल देना। पर कक्का से मत कहना। औरों के मुँह से बात सुने इससे पहले तुम ही माँ को बता देना। बाकी बातें मै कुछ दिनों बाद घर आऊँगा, तब करेंगे।''

भाई की बातें सुन संजय का मन बैठ गया। छुट्टियों में घर जाने का संजय का उत्साह समाप्त हो गया था।

छुट्टियों में संदीप को साथ में न पा, संजय के घर में घुसते ही माँ ने सशंकित हो पूछा, ''क्यों संदीप नहीं आया?'' ''माँ, भैया कुछ दिनों बाद आएँगे। वे सर्विस के लिए ट्राय कर रहे हैं।'' कह संजय ने चतुराई से बात समाप्त कर दी।

दूसरे दिन संजय ने अवसर देख माँ को बताया कि ''संदीप भैया आचार्य श्री के दर्शन को गए थे। आचार्य श्री से वे ब्रह्मचर्य व्रत लेकर आए हैं।''

''कितने समय का लिया है?''

''माँ यह तो आप ही भैया से पूछ लेना। दो-चार दिन में आने ही वाले हैं।''

माँ ने सोचा, सागर से अक्सर लड़कन लोग आचार्य श्री के दर्शन को जाते हैं। दो-चार साल का व्रत ले आते हैं। संदीप ने भी दोस्तों के साथ ले लिया होगा। सोचकर बात हल्के में ले ली।

छुट्टियों में भाई संजय के जाने के कुछ दिनों बाद संदीप किशुनगंज पहुँचे। संदीप का बदला व निखरा व्यवहार भाँपते माँ को देर न लगी पर वह संदीप से कुछ नहीं बोली। संदीप चुपचाप हर बार की तरह इस बार भी अपने में मगन थे। अभी दो-तीन दिन बीते होंगे कि पिताजी ने संदीप से पूछा, ''अब बारहवीं का एक्जाम हो गया है। आगे क्या करना है? कोई व्यवसाय करना है? नौकरी करना है या कुछ और...।''

संदीप ने नम्रता से जवाब दिया, ''अभी तो ग्रेजुएशन करना है।''

पिताजी के पास पूछने को और कुछ बचा ही न था। अतः चुप हो गए।

संदीप की माँ से ज्यादा बातचीत होती रहती थी। माँ ने संदीप को कुरेदा, ''दो-तीन जगह से लड़कियों की बात आ रही है, घर-परिवार व लड़कियाँ अच्छी हैं। छुट्टियों में टाइम निकाल कर देख लो। लड़कियाँ देखते-देखते ही वक्त निकल जाएगा।''

संदीप, ''पर माँ मुझे शादी नहीं करना है।'' ''क्यों? क्यों तुम्हें शादी नहीं करना? तो क्या कुंवारे रहोगे? ब्रह्मचारी रहोगे। तुम घर के बड़े लड़के हो। घर की सारी जवाबदारी तुम पर है, घर के कुलदीपक होकर ऐसी बात करते हो? तुम्हें शोभा नहीं देती।''

सीधी-सादी माँ संदीप की सरलता समझ नहीं पाई। वह बोली, ''ठीक है, आगे पढ़ना चाहते हो, पढ़ो। अपने पैर पर खड़े हो जाओ, शादी तो हम तब ही करेंगे।''

पिताजी चाहते थे कि संदीप अब बड़ा हो गया है। छुट्टियों में घर आया है तो कुछ कामकाज सीखे। दुनियादारी देखे-समझे। पढ़ाई अपनी जगह, कामकाज अपनी जगह। आजकल अच्छों-अच्छों को नौकरी नहीं मिलती। अतः अभी से व्यापार- व्यवसाय के गुर सीखे। भविष्य में काम आएगा। पर संदीप की अनिच्छा व उदासीनता के आगे वे असहाय

थे। वैसे भी बेटा कम बोलता है, ज्यादा बिना वजह किसी से मिलता- जुलता नहीं है। सीधा व सरल है, सांसारिक छल-प्रपंच, लोभ-लालच उसमें रत्तीभर नहीं है, यह जानते थे। कई बार वे चिंतित हो जाते थे कि इस 'परपंची' दुनिया में वह कैसे टिक पाएगा? अंततः आकाश की ओर देख हाथ जोड़ कह देते, 'बलियसि केवल ईश्वरेच्छा।' ईश्वर तू ही इसकी रक्षा करना। लेकिन संदीप के सामने वे पिताजी कठोरता से ही पेश आते। शायद उनके डर से वह कुछ करने लगे।

पर संदीप था कि मनमर्जी का राजा। उसका व्यवहार वही ढाक के तीन पात सा- सदैव एक सा। हाँ दिल की बात माँ से जरूर करता। उसने एक दिन माँ को सब कुछ बता दिया। ''माँ मुझे न व्यवसाय करना है, न नौकरी, न शादी-ब्याह करना, न ही गृह-गृहस्थी के पचड़े में पड़ना है।''

माँ संदीप की बातें सुन ऊपर से नीचे तक कांप गई। किसी अनहोनी की आशंका में उग्र हो पूछ बैठी, ''तो फिर तुझे क्या करना है?''

संदीप, ''माँ, मुझे मुनि बनना है।''

माँ, 'क्या?'' माँ अचानक जड़ हो गई। संदीप की ओर स्थिर नजरों से देखती ही रह गई। माँ के शरीर में कुछ हल-चल होती न देख संदीप घबरा गया।

''माँ, माँ'' कहते हुए संदीप जोर-जोर से माँ को झिंझोड़ने लगा। माँ को अचानक चेतना आ गई, वह पसीने से तर-बतर हो गई। संदीप दौड़कर माँ के लिए पानी लाया, माँ को पानी पिलाया और कहने लगा ''माँ तुमने मेरी बात पूरी सुनी ही नहीं और अपनी यह हालत बना ली।'' वह बड़े प्यार से माँ से कहने लगा, ''अरे! माँ कोई मैं आज दीक्षा लेने थोड़े जा रहा हूँ? जो तुमने अपनी यह हालत बना ली। जिन दीक्षा कोई इतनी आसान है कि कहा और ले ली। थाली में भोजन की तरह परोस दी। उसके लिए पूर्वाभ्यास और तैयारी करना जरूरी है। वह तो तुमने पूछा इसलिए मैंने भी अचानक कह दिया। अभी तो मुझे ही नहीं पता है कि मुझे क्या बनना है व क्या करना है? हाँ! इतना जरूर पता है कि आगे पढ़ाई जारी रखना है।''

इस प्रकार संदीप ने माँ को सामान्य करने की भरसक कोशिश की। संदीप जानते थे कि मोह-माया का बंधन तोड़ने के लिए वह स्वयं को कठोर बना रहा है। पर मोहपगी माँ का दिल तो छुई-मुई सा नाजुक है। वह कैसे बेटे के वियोग का वज्र आघात सह सकती है? उसका दुःखी व व्याकुल होना स्वाभाविक है।

दीक्षा पूर्व

संदीप समझदार व विवेकशील थे। वे नहीं चाहते थे कि अपनी किसी भी बात का माँ की मनोदशा पर किसी प्रकार का कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़े। सबके लिए व उसके लिए भी माँ अहं है, परिवार के लिए माँ पहली आवश्यकता है, 'संदीप नहीं'। घर का बड़ा बेटा होने के नाते माँ-पिता, भाई-बहन सबकी उससे कई अपेक्षाएँ एवं आशाएँ हैं। उसके बिना भी यह काम छोटे भाई आसान कर देंगे। पर माँ ही एक अकेली है, जिसके अभाव की पूर्ति नहीं हो सकती। अतः इस परिवार की सुरक्षा व संरक्षण के लिए माँ को स्वस्थ व मजबूत रहना जरूरी है। समय की नजाकत देख फिलवक्त संदीप ने अपने ब्रह्मचर्य व्रत की बात टाल दी। संदीप कहना यही चाहता था कि माँ मैंने ब्रह्मचर्य व्रत ले लिया है अतः मुझे आगे संयम के रास्ते पर बढ़ना है। इत्तफाक से माँ का प्रश्न ही ऐसा था जिसका उत्तर एकमात्र वही था मुनि बनना है। झूठ बोलकर बरगलाना, मायाचारी करना जैसी प्रवृत्तियों से संदीप कोशों दूर थे। अपनी साफगोई, ईमानदारी, सच्चाई व सदाचारी वृत्तियों के कारण घर, परिवार, गाँव व स्कूल में भी वे प्रसिद्ध थे। हर कोई आँख मूँद कर संदीप पर विश्वास कर लेता था। शिक्षकगण तो छात्रों को कक्षाओं में नैतिकता को लेकर उसका उदाहरण देते थे। एक तो वह पढ़ाई में

होशियार, मेधावी, प्रतिभावान छात्र हमेशा फर्स्ट आने वाला, फिर फूलों की झुकी डालों सा विनम्र व गुणों का पिटारा। अतः वह छात्रों का रोल मॉडल था।

जब माँ ने पिताजी को संदीप की 'मुनि दीक्षा लेने' की मनसा बताई, तो उन्होंने पत्नी मुन्नी को यही समझाया कि ''वह परीक्षा बाद आचार्य श्री विद्यासागरजी के दर्शन करने गया था। आचार्य भगवन व अन्य मुनिगण को देखकर उसके भाव मुनि बनने के हो गए होंगे। इसलिए मेरे व तुम्हारे बार-बार उसके भविष्य की योजना के बारे में पूछने पर यह बात कह दी होगी। तुम्हें याद होगा, 'संदीप तीन साल का था तब नैनागिरि में इन्हीं आचार्य श्री विद्यासागरजी को देखकर, दर्शन कर उनके जैसा बनने के लिए कपड़े खोलने की जिद की थी और अंततः खुलवाए भी। वह दृश्य आज भी जब-तब मेरी आँखों के सामने आ जाता है।''

तब पत्नी मुन्नी ने भी तपाक से कहा कि ''तब भी वह सीधा-साधा नन्हा संदीप नानी से कपड़े खुलवा कर ही माना था व पिच्छी-कमंडल लाने की उसकी जिद जग जाहिर है। उस वक्त उसको समझाना इतनी टेढ़ी खीर था तब आज तो वह लौकिक शिक्षा से ज्यादा धार्मिक शिक्षा में निष्णात है। घर व स्कूल के संस्कार ही उसे कुछ ऐसे मिले कि बचपन से उसमें व्रत-नियम- संयम कूट-कूटकर भर गए। इनमें संदीप कुछ ज्यादा संस्कारी है।''

पति ने पत्नी से कहा, ''तुम चिंता कर चैन मत गँवाओ। मैं उसे समझा दूँगा। अभी उसकी बालक बुद्धि है। थोड़ा परिपक्व होते सब ऊँच-नीच समझ आने लगेगी।''

त्वरित निर्णय लेने वाले पिताजी ने सोचा कि संदीप के दिमाग में जो मुनि बनने का कीड़ा कुलबुला रहा है, उसे शीघ्र निकालना होगा। उन्होंने संदीप को अपने पास बिठाकर प्रेम से समझाया। ''मुनि जीवन की कठिन व कठोर साधना की बारीकियों से अवगत कराया। यह भी समझाया कि दीक्षा भरी जवानी में नहीं अपितु जीवन के उत्तरार्द्ध में ली जाती है। सांसारिक कर्तव्यों का निर्वहन करते-करते व्यक्ति मुनिचर्या निर्वहन के योग्य बन जाता है।'' अभी तो उन्होंने संक्षिप्त में समझा दिया। समय की अनुकूलता न देख संदीप चुपचाप पिताजी की बातें सुनते रहे। न उनका विरोध किया न अपनी मनसा जाहिर की। संदीप अपनी बात कहने के लिए उचित अवसर का इंतजार करने लगे।

जब से संदीप ने मुनि बनने की बात कही थी तब से माँ का मन बड़ा बेचैन व अशांत रहने लगा था। जितना वह बेटे को जानती- समझती थी, उससे ज्यादा कौन उसे समझ सकता था। माँ को पता था कि कम बोलने वाला संदीप जो सोचता है वही कहता है और करता भी है। उसे अब हर पल यही चिंता सताती रहती थी कि संदीप किसी दिन घर छोड़ कर न चल दे। उस कल्पना मात्र से ही उसका हृदय सिहर उठता था। संदीप के बिना वह कैसे रहेगी? उसके बिना घर कितना सूना लगेगा? माँ के हृदय की ममता आँखों की कोरों से सावन-भादौ बन बरस पड़ती। मेले-कुचेले पल्लू के छोर से आँखें पोंछती, हृदय पर पत्थर रख वह गृहस्थी का बोझ संभाल रही थी। पर एक टीस, एक हूक उनके हृदय से हर पल उठती रहती- 'कहीं संदीप घर न...।' आगे की बात सोचते-सोचते पुत्र मोह में पगी माँ की आँखों के आगे अंधेरा छाने लगता।

एक दिन माँ ने संदीप का मन टटोलना चाहा। उसने संदीप से कहा, ''हर माँ-बाप की तमन्ना होती है कि उनके बच्चे तरक्की करें, भविष्य में पढ़-लिखकर बड़े आदमी बने इसीलिए हमने तुझसे, तेरी भविष्य की योजना के बारे में पूछा। तेरे जवाब से पूरा घर विचलित व दुःखी हो गया। बेटा! जो तुझे उचित लगे वही कामकाज करना पर अब भविष्य में ऐसा जवाब मत देना।''

संदीप उचित अवसर की तलाश में तो था ही, उसने माँ से कहा, ''माँ मुझसे झूठ नहीं बोला जाता। जो सच था वही मैंने कह दिया। माँ तुम रोकर कमजोर बन मेरा मनोबल कमजोर मत करो। मैं आत्म कल्याण कर अपना मनुष्य जीवन सार्थक करना चाहता हूँ। तुम एकमात्र मेरी सच्ची हितैषी हो। तुम मेरा मार्गदर्शन करो माँ! तुम्हारी शिक्षा व संस्कार

ने ही मुझे इस मार्ग पर अग्रसर किया। अब मैं जो कहने जा रहा हूँ उसे ध्यान से सुनना। 12वीं की परीक्षा के बाद मैं बीना बारहा में आचार्य श्री प.पू. विद्यासागरजी महाराज के दर्शनार्थ गया था। वहाँ मैंने उनसे आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण कर लिया।''

''क्या! ब्रह्मचर्य व्रत! वह भी एक, दो या पाँच वर्ष का नहीं आजीवन! बिना सोचे-समझे तूने यह क्या किया? कोई भी बेटा माँ-बाप को पूछे बिना इतना बड़ा कदम उठाता है भला। बड़ा बेटा होने के नाते घरभर को तुझसे कितनी उम्मीदें हैं। पिता सोचते हैं कंधे से कंधा मिलाकर तू उनके हाथ मजबूत करेगा। मैं तो उम्मीद लगाए बैठी हूँ कि बहू आएगी, उसी को सारी गृहस्थी की जिम्मेदारी सौंप थोड़ी राहत महसूस करूँगी। भाई-बहन की अलग ही तुझसे उम्मीदें हैं। तूने तो सबकी उम्मीदों पर पानी फेर दिया। हमारा सपना सपना ही रह गया। आचार्य श्री ने अचानक एक बार में ही आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत थोड़े ही दे दिया होगा? उन्होंने तीन वर्ष या पाँच वर्ष का व्रत दिया होगा। तुम्हारे सुनने में गलती हो गई होगी। हम खुद जाकर आचार्य श्री से पूछकर पता करेंगे।''

बेटे संदीप द्वारा कही ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण करने की बात सुन माँ के पैरों तले की जमीन खिसकने लगी थी लेकिन हिम्मत रख धैर्य धारण कर वह बेटे को समझाती रही। उसने निःसंकोच हो बेटे से कहा, 'बेटे जवानी अंधी होती है, दीवानी होती है, बेकाबू होती है। भूख और नींद पर विजय पाना आसान है, किंतु यौवन की उद्दाम लालसाओं पर नियंत्रण करना बहुत ही मुश्किल काम है। जवानी की इच्छाओं पर लगाम लगाना साधारण बात नहीं है। अच्छे-अच्छे संतों व बड़े-बड़े संयमियों को विषय वासनाओं के आगे पस्त व स्खलित होते देखा-सुना है। इसमें किसी का दोष नहीं। यह तो मानवीय प्रवृत्ति व प्रकृति है।''

माँ का धीरज जवाब दे गया। इससे ज्यादा माँ नहीं बोल पाई। गला रुंध गया। दिल भर आया। आँखें पनियाली हो आई। वह संदीप के पास से उठ गई।

संदीप ने ब्रह्मचर्य व्रत ले लिया। इस बात से माँ के मन में कोहराम मच गया। अभी तक संदीप की बातों को आदर्श की बातें समझ मुन्नीदेवी ने गहराई से नहीं लिया, नहीं दिल पर आने दिया। लेकिन आज संदीप ने माँ के सम्मुख हकीकत बयां कर दी कि उसने संयम की खुरदरी चट्टानों पर कदम बढ़ा दिए हैं। माँ जानती थी कि संदीप का निर्णय वज्र निर्णय है। उसे अपने संकल्प व निर्णय से कोई टस से मस नहीं कर सकता। मुनि भक्ति की उसे आदत है। वह पहले भी आचार्य श्री विरागसागरजी के संघ में जा चुका है। संयम का मार्ग उसकी चाहना है। उसका घर में रुकना मुश्किल है। वह इस मामले में किसी की नहीं सुनता। एक दिन मौसी ने भी समझाया पर वह नहीं माना। मन तो कहता है कि वह सही रास्ते पर जा रहा है, पर उसे छोड़ने की हिम्मत नहीं होती। माँ के दिल-दिमाग में परस्पर विरोधी विचार आते और व्याकुल हो उठती... फिर कुछ शांत होती।

माँ की समझाइश

माँ को मानो पूर्वाभास हो गया था। संदीप द्वारा ब्रह्मचर्य व्रत लेने की बात सुन माँ मुन्नीदेवी ने स्वयं को कठोर बनाया। ममता को हावी न होने दे, अपने आप पर नियंत्रण रखना शुरू किया। संदीप ने व्रत ले लिया है, क्या पता अगली बार घर आए, न आए।

माँ मुन्नीदेवी जो थोड़ा बहुत शास्त्र स्वाध्याय या श्रुत श्रवण कर लिया करती थी, उनके पास उतना ही धार्मिक ज्ञान था। संदीप के ज्ञान व प्रज्ञा प्रकाश के आगे उनके ज्ञान की स्थिति कहाँ राजा भोज व कहाँ गंगू तेली जैसी थी। फिर भी वे संदीप को अक्सर समझाती रहती कि ''बेटा तुमने जिस ब्रह्मचर्य व्रत को लेकर संयम के पथ पर कदम बढ़ाया है उससे निश्चित है कि यहीं तक नहीं रुकोगे, आगे बढ़ोगे। तुमने कहा भी है कि मुझे मुनि बनना है, मुक्ति पथ अंगीकार

करना है। पर! बेटा मोक्षमार्ग बड़ा कठिन मार्ग है। दुधारी तलवार पर चलना आसान है पर मुक्ति पथ तो उससे भी तेज तलवार की धार पर चलने जैसा है। तुम अभी तक जो जो भी व्रत नियम पालन कर रहे हो वे घर में या होस्टल में रहकर कर रहे हो। तुम कभी बिना बिस्तर सोए नहीं, बिना कपड़ों के रहे नहीं, लंघन (उपवास/एकासन) कभी कभार किए हो। ग्रीष्म की कड़ी धूप में या शिशिर की ठिठुराती ठंड में कभी 20-30 कि.मी. पैदल चले नहीं।'' माँ कभी कभार ही संदीप को 'तुकार' से बुलाती थी पर ममता के वशीभूत वह कब तुमसे तुकार पर आ गई पता ही न चला। वे कहने लगी।

''यदि तूने संतत्व ग्रहण किया तो सबसे पहले इन-इन कठिनाइयों के बारे में सोच। क्या तू ऐसा दुरूहतम जीवन जी पाएगा? जरा से में तुझे सर्दी-गर्मी लग जाती है फिर धरती की खुली गोद में शीत लहरों व लू-लपटों का कैसे सामना कर पाएगा? एक बार भोजन, लम्बा विहार, बिना बिस्तर शयन, भूख-प्यास का परिषह, अनेकों बाधाओं, कठिनाइयों भरी दिगम्बर श्रमण चर्या क्या निभा पाएगा? हमारे मोक्ष मार्ग की ये प्रारंभिक (बेसिक) आवश्यकताएँ हैं। तिस पर यौवन के इस चढ़ाव पर तूने ब्रह्मचर्य व्रत ले लिया है, स्वयं का मूल्यांकन कर, स्वयं पर नियंत्रण कैसे रख पाएगा? हमारे मोक्षमार्ग के इन अनेक बाधा मय कंटकाकीर्ण पथ पर तू चलने को उद्यत हुआ है, तू चल, अपना आत्म कल्याण कर, अपना मुक्तिमार्ग प्रशस्त कर पर याद रख यदि एक बार आगे बढ़ा, फिर कभी पीछे नहीं लौट सकेगा? कठिनतम होने के बावजूद भी यह मोक्ष मार्ग सर्वश्रेष्ठ है। तुझे इस पर हर कदम संभल-संभल कर चलना होगा। मर्यादाओं के दायरे में रहना होगा। रास्ते की फिसलन से बचते-बचाते अपने ज्ञान, ध्यान व चारित्र के शिखर को ऊँचा उठाना तुम्हारा सर्वोपरि कर्तव्य होगा। इस पथ की गौरव गरिमा बढ़ाना तुम्हारा प्रथम धर्म होगा। बेटा मेरा आशीर्वाद व शिक्षा है कि अगला कदम जब भी तेरा उठे- इन बातों पर गौर करने के बाद ही उठाना। जल्दबाजी में ऐसा निर्णय मत ले लेना कि बीच में ही पथ छोड़ देना पड़े। विपरीत परिस्थितियाँ, प्रतिकूलताएँ या असह्य स्थिति में भी शांति, समता, संतोष व सहिष्णु बनाए रखना।'' समझाते-समझाते माँ का दिल भर आता, आँखों की कोर से ढुलकते आँसू पल्लू के छोर से पोछती रुंधे गले से माँ-बेटे को ऐसी न जाने कितनी संयममय जीवन की बातें समझाती। ''बेटा बड़े-बड़े तपस्वी, ध्यानी, योगियों को पथ से विचलित होते देखा है। तू तो मेरा अदना सा, छोटा सा संसारी बेटा है, स्वयं को संभालना बड़ा कठिन काम है।''

जब से माँ ने संदीप के ब्रह्मचर्य व्रत लेने की बात सुनी, उनका दिल धार-धार रोता रहता लेकिन वे ऊपर से कठोर बनी रहती। माँ जानती थी कि संदीप को उसके इस्पाती इरादों से कोई नहीं डिगा सकता। उनके सामने कुछ लड़के थे जिन्होंने ब्रह्मचर्य व्रत लिया और मुनि बन गए। संदीप के संयममय जीवन की कल्पना मात्र से उनके रोम-रोम कांप उठते। कहीं संदीप ने...। मैं उसके बिना कैसे जीऊँगी। किंतु दूसरे ही पल स्वयं को संभालती। स्वयं से वार्तालाप करती- संदीप की छुट्टियाँ बीत रही हैं, किसी भी दिन अचानक चला जाएगा। अतः मुन्नीदेवी अपना ज्यादा से ज्यादा वक्त संदीप केसाथ गुजारती।

पिता कामकाज को लेकर संदीप को डांट-डपट कर चले जाते तब माँ संदीप के पास आकर बैठ जाती। हौले से सिर सहलाते हुए मातृहृदय की ममता उस पर उंडेलते हुए कहती- ''संदीप तेरी रुचि जब धर्म में व संयम जीवन अंगीकार करने में है तब तुझे कोई ताकत संसार के मायाजाल में नहीं फंसा सकती। तूने आज तक मोराजी पढ़ने जाने से लेकर ब्रह्मचर्य व्रत लेने तक अपनी मनमर्जी का किया है, आगे भी तेरी ही मनमर्जी चलेगी। तू पिताजी की बातों को मन पर मत ला। वे तेरे पिता हैं, वे तेरा अच्छा व भला ही चाहते हैं। अपनी जगह वे सही हैं, तेरी जगह तू। हम तो मोह की कारा में ज्यों के त्यों जकड़े हैं, लेकिन तूने मोह व आसक्ति पर विजय पा ली है। फिर भी बेटा यदि तूने ब्रह्मचर्य व्रत ले लिया है तो यह मत समझना कि अब तुझे घर छोड़ना ही पड़ेगा। तू इस घर में रहकर धर्म-ध्यान करना। मैं तेरे

सारे व्रत-नियम अच्छे से सम्हाल लूँगी। जब तक जी चाहे रहना, तुझे कोई कुछ नहीं कहेगा। यह घर तेरा ही है।''

''घर छोड़ने की जल्दबाजी में कोई गलत निर्णय मत ले लेना। जिस दिन तुझे लगे कि तू परिपक्व हो गया है। उस दिन ही आगे बढ़ना। तू अभी बहुत छोटा है। घर से बाहर निकला नहीं है। अतः तुझे वास्तविक जीवन की कोई समझ-सूझ नहीं है। तू अच्छे गुरु के चरणों में ही समर्पण करना। जो गुरु तुझे शिष्य स्वीकार करें फिर उनके चरण कभी मत छोड़ना। उनका विश्वास जीतना, वैयावृत्ति करना, हर परिस्थिति में गुरु चरणों में जीवन बिताना। इस पृथ्वी तल पर गुरु से अधिक प्रिय दूसरा कोई नहीं है।''

''गुरु ही विधाता है, भाग्य निर्माता है, गुरु दाता है, गुरु बंधु-बांधव है, गुरुगुण रत्नों के रत्नाकर हैं, गुरु शिक्षक है, माता-पिता से बढ़कर है, गुरु ही अष्टकर्मों को नाशकर मोक्ष ले जाने वाले हैं। जैसे लकड़ी की नाव में रखकर लोहा समुद्र पार ले जाया जा सकता है। वैसे ही मूर्ख से मूर्ख भी गुरु उपदेश से भवसागर पार जा सकता है। अतः तू गुरु के चरण पकड़े रहना।''

जो माँ संदीप (बेटे) के मोह में रोती रहती है वह बेटे को अपनी भोली बुद्धि से इतना अच्छा मार्गदर्शन करेगी, संदीप तो हैरान थे। माँ के प्रति श्रद्धा से अभिभूत संदीप माँ के चरण छू लेते। संदीप ने सोचा भी न था कि माँ उसे इतना सपोर्ट करेगी। उसने तो यही सोचा था कि पिताजी की किसी बात पर वह ध्यान नहीं देगा, लेकिन माँ उसके सामने सबसे बड़ी चुनौती थी, जिसे चुनौतना टेढ़ी खीर थी। फिर आज वही माँ उसकी समस्याओं के समाधान बता रही थी।

एक दिन एकांत में संदीप को बैठाकर माँ ने कहा, ''तेरी परीक्षा तो जिस क्षण तूने ब्रह्मचर्य व्रत लिया उसी क्षण से शुरू हो गई। अभी तुम्हारी भरी युवावस्था है, स्त्रियों व युवतियों से दूरी बनाए रखना। यह बात हमेशा याद रखना। यद्यपि तू बहुत कम बोलता है या मौन रखता है तथापि संसारी लोगों से भी दूर रहना, वरना ये लोग तेरे लिए झंझट खड़ी कर देंगे। ये दो बातें मेरी गाँठ बाँध लेना। मेरा आशीर्वाद सदा तेरे साथ है। याद रखना कपड़े का दाग धुलकर साफ हो जाता है पर चरित्र पर लगा दाग धुल नहीं सकता। तू कितना पवित्र है यह मैं जानती हूँ, तू जानता है या भगवान। बाकी और कोई नहीं जानता। अतः अब से तू अपना प्रथम कर्तव्य 'ज्ञानाभ्यास' रखना क्योंकि 'आत्मज्ञान संपन्न साधक के लिए स्वर्ग, शूरवीर योद्धा के लिए जीवन, इंद्रिय विजयी योगी के लिए सुंदर स्त्री तथा वीतरागी निस्पृह साधक के लिए संपूर्ण जगत तृण के समान तुच्छ जान पड़ता है' ऐसा शास्त्रों में आता है। अतः तू अधिक से अधिक ज्ञानार्जन करना। यही ज्ञान तुझे मुक्ति पथ तक पहुँचाएगा। तेरे अभीष्ट लक्ष्य प्राप्ति में सिद्धिकारक होगा।

माँ के लिए बेटा संदीप आज भी बेटा है व कल भी बेटा ही रहेगा। बेटा कितना भी महिमा का हिमवान बन जाए, पर माँ के लिए बेटा, बेटा ही रहता है। हर माँ अपने बेटे का हित व अच्छा चाहती है। माँ ने संदीप से कहा, ''तूने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया है तो तू हरसंभव दृढ़ प्रतिज्ञ रह इस व्रत का पालन करेगा, ऐसा मेरा तुझ पर अखंड विश्वास है। किंतु फिर भी कहीं, किसी क्षण तू अपने को कमजोर महसूस करे, व्रत पालन में स्वयं को असहज या असमर्थ महसूस करे, तब स्वयं, परिवार, समाज, धर्म व गुरु की जगहँसाई करवाने की बजाए चुपचाप गुरुवर के पास प्रायश्चित लेकर घर लौट आना, फिर अपने को परिपक्व कर आगे बढ़ना। किंतु तेरे साथ ऐसा ऊँच-नीच नहीं होगा यह मुझे पूर्ण विश्वास है।''

''अक्सर देखने, सुनने, पढ़ने में आता है कि स्त्रियों/स्त्री की निरंतर संगति से घोर तपस्वी, महाव्रती, मौन साधक, ज्ञानयुक्त इंद्रिय जीतने वाला साधक, बाल ब्रह्मचारी, अखंड शील पालने वाला, विशुद्ध चर्या चारित्र पालक संत भी लोकापवाद का पात्र बन जाता है, तब फिर तुझ जैसे सीधे, सरल, साधारण बालक की क्या बिसात?''

''अतः तू हमेशा देव पूजा, जप-तप, सामायिक- प्रतिक्रमण, शास्त्राभ्यास, मौन चिंतन, मनन व मंथन में अपने को व्यस्त रखना। तेरी इस सच्ची साधना व आराधना के कारण तुझे कोई विचलित नहीं कर पाएगा?''

यद्यपि संदीप इन बातों से कतई अनभिज्ञ नहीं थे तथापि माँ ने इन बातों द्वारा अपने मातृ हृदय की जो ममता उस पर उंडेल दी थी उससे संदीप भीतर तक भीग गए। एक कम पढ़ी-लिखी माँ ने अपनी ममता द्वारा सारे संसार का जीवन बोध चंद पंक्तियों में बड़ी सरल भाव भाषा में अपने बेटे को दे डाला। माँ की ये शिक्षाएँ दृढ़ संकल्पी संदीप का मनोबल और अधिक मजबूत कर रही थी।

संदीप माँ के चरणों में नतमस्तक थे। आज उन्हें मोराजी में अर्जित वह ज्ञान का अंबार माँ के जीवनानुभव की ज्ञान गठरियों के सामने तुच्छ लग रहा था। मोहारिष्ट, आँसुओं के सैलाब में डूबी वह माँ संदीप की नजरों में बड़े-बड़े ज्ञानी, ऋषि-मुनियों से भी बड़ी ज्ञान की पाठशाला बन गई थी। उसने सोचा था, उसके 'इस' निर्णय को सुन माँ अपना होश-हवाश खो बैठेगी, पुत्र वियोग की कल्पना के दुःख सागर में डूब जाएगी! अपनी चेतना खो देगी... और भी... न जाने क्या क्या....।

वैसा हुआ भी। माँ दुःख विह्वल हुई भी, दुःख सागर में डूब गई। उस दिन से लेकर आज भी उसकी आँखें आर्द्र हैं। पनियाली हैं, हर क्षण उन दो आँखों में आँसुओं का समंदर उमड़ता नजर आता है, जो जब-तब उफन पड़ता है। पर! पर! फिरभी माँ सावचेत है। दृढ़ है। धीर, गहन गंभीर है। दूरदर्शी है। हर हाल में स्वयं पर व परिवार पर उसका नियंत्रण है। वह टूटकर भी नहीं टूटी, वह डूब कर भी नहीं डूबी, रोते हुए भी उसने आँसुओं को रोके रखा। मेरे हित की बातें उसने दिल पर पत्थर रखकर कही। मुझे हर तरह दृढ़ कर मुझे चारों ओर से इन बातों से उसने सुरक्षा कवच में ढंक दिया। अब वह आश्वस्त है कि मैं सुरक्षित रहूँगा। इतना सा संतोष ही एक माँ के लिए काफी है। भोली माँ समझती थी कि इन बातों को ध्यान में रख मैं जीवन संग्राम को जीत लूँगा। भविष्य के संघर्षों से दो-दो हाथ कर सकूँगा। अवांछित आने वाली झंझाओं को हथेली से रोक पाऊँगा। भोली माँ ने अपने आँचल को मेरे लिए लोह सुरक्षा कवच बना दिया था। इस प्रकार माँ ने अपने स्वार्थ के लिए मुझे रोकने की बजाए सर्वार्थ सिद्धि का रास्ता आसान कर दिया।

माँ बेटे का संवाद

संदीप सोच रहे थे- अभी तक मैंने माँ को एक माँ, बच्चों की माँ, बच्चों की साज-संभार, देखभाल करने वाली ममता मूर्ति, माँ के रूप में ही देखा था किंतु आज वह माँ बेटे के जीवन पथ को आलोकमयी बनाने के लिए भगवती, सरस्वती बन गई। विद्यार्थी जीवन में पढ़ा कृष्ण-गोपियों का निश्छल प्रेम प्रसंग संदीप के मन में जीवंत हो उठा। कृष्ण गोपियों की याद में विह्वल थे। उनका मन मथुरा में नहीं लगता था। उद्धव ने उन्हें ज्ञान की बातें समझाईं। प्रेम पगे श्रीकृष्ण ने अनसुनी कर दी। तब उद्धव ने श्रीकृष्ण से कहा मैं ब्रज जा रहा हूँ, गोपियों को कोई संदेश देना है! श्रीकृष्ण ने एक कोरे कागज का टुकड़ा देते हुए कहा यह गोपियों को पढ़कर सुना देना, तुम्हारी ज्ञान की बातें भी उन्हें समझा देना। पर यह तो कोरा कागज है। तुम लिखो तो, मैं नहीं पढ़ूँगा। तुम चिंता मत करो, इस कोरे कागज में ही वे मेरा सारा प्यार बाँच लेंगी। कहकर कृष्ण मुस्कुरा दिये।

उधो के ब्रज पहुँचते ही गोपियों को जैसे पता लगा कि उधो मथुरा से आए हैं- सारी की सारी गोपियाँ श्रीकृष्ण की कुशलक्षेम पूछने दौड़ी चली आईं। हमारा कान्हा कैसा है, हमारा कन्हैया कैसा है? जैसे ही उधो ने श्रीकृष्ण का दिया कोरा कागज बताते हुए कहा इसमें कृष्ण ने तुम्हारे लिए प्रेम संदेश भेजा है। उधो अपनी बात पूरी कर भी नहीं पाए कि गोपियों ने उधो के हाथ से वह कागज झपट लिया। फिर उनकी आपसी छीना-झपटी में उस कागज का जितना टुकड़ा जिसके हाथ आया, लेकर छाती से लगा लिया। उस कोरे कागज को ही वे प्रेम पगी गोपियाँ प्रियतम कन्हैया का प्रेम संदेश मान निहाल हो गई और प्रेम पगी घर चली गईं।

वैसे पुत्र प्रेम में पगी माँ नहीं जानती कि आगम जिनवाणी क्या कहते हैं? गुरुवाणी क्या होती है? किन्तु बेटे की आगे

की जीवन यात्रा सुरक्षित-संरक्षित रखने के लिए वह माँ की हृदयवाणी थी। गोपियों की तरह माँ ने अपनी भावनाओं में पुत्र के लिए सारा स्नेह उडेल दिया था।

माँ के धीरज, आत्मविश्वास, आत्म नियंत्रण, समता, साहस, संतोष की पराकाष्ठा देख संदीप अभिभूत थे। माँ की यह एक तरह से सहमति थी जिसने संदीप की उहापोह खत्म कर दी। आगे का रास्ता साफ कर दिया। संदीप को दृढ़ विश्वास हो गया कि भले माँ उसका कितना भी विरोध करे अंततोगत्वा उसके साथ है। अब उन्हें पापा की कठोर बातें भी मीठी बातों की सी लगती थी। सच है जब किसी बाप का बेटा घर छोड़ संयम के पथ पर चलने की बात करे तब वज्र से कठोर हृदय वाले बाप का हृदय भी इस बात के वज्र प्रहार से टुकड़े- टुकड़े हो जाता है। जब दूसरे के बेटे-बेटियाँ संयम के पथ पर अग्रसर होते हैं, हम खुशी-खुशी अनुमोदना करते हैं किंतु जब वही घटना हमारे साथ घटने को होती है, तब हमारा जन्म- जन्मांतरों का मोह बंधन हमें रुला देता है, तड़पा देता है, झकझोर देता है। सारा ज्ञान, सारी समझाइशें, सारे उपदेश इस मोह पाश में बंधे जीव के मोह के आगे थोथे हो जाते हैं। यदि भागचंदजी भी बेटे संदीप के व्रत ग्रहण की बात सुन इस मोह रिपु के कुचक्र में फंसे उस बेटे को डांटते, फटकारते तो कोई आश्चर्य नहीं। इधर मोहांधकार से बाहर निकलने की कोशिश कर रहे संदीप को मोह आसव पीये परिजनों की मनोस्थिति का अच्छी तरह पता था। अतः वे हर प्रतिकूल परिस्थिति व व्यवहार में समता धारण किए हुए थे, जिसकी पूर्व तैयारी वे पहले से ही किए हुए थे।

इसी जद्दोजहद में समय बिना किसी इंतजार के बीत गया और संदीप ने वापस सागर मोराजी वर्णी विद्यालय में जाने की तैयारी कर ली। संदीप के मन में क्या चल रहा था उसे तो कोई नहीं जानता था पर धरती से धीर, सागर से उदात्त व तरुवर से निस्पृही संदीप ने मोहमाया का अभेद्य दुर्ग तोड़ने की यथाशक्ति पूर्ण कोशिश की। किंचित सफल भी हुए, पर अभी कुछ प्रयत्न बाकी था। पिताजी कहते थक गए, संदीप नए कपड़े बनवा लो, कॉलेज जाओगे, इंटरव्यू देने जाओगे, अतः कुछ सलीके के कपड़े चाहिए। संदीप का जिस परिग्रह से मोह घटता जा रहा था वह और परिग्रह इकट्ठे करना नहीं चाहते थे। माँ संदीप के लिए नाश्ता साथ ले जाने के लिए बनाने लगी, तब संदीप ने मना कर दिया। माँ ने कहा ''हर बार तो तुम स्वयं कहकर बनवाते हो और इस...'' आगे कुछ माँ कहती इससे पूर्व ही संदीप बोले ''माँ वहाँ सब समय पर मिल जाता है फिर बिना वजह यहाँ से वजन उठाकर ले जाना।''

* * *

अंततः किशुनगंज, अपनी कर्मभूमि, वह घर जहाँ बचपन से लेकर यौवन की देहरी पर संदीप आ खड़ा हुआ था, जिस घर में माँ का दुलार, पिता का प्यार तथा भाई-बहनों का स्नेह छुपा था, जिन गलियों, सड़कों पर दोस्तों के साथ गलबहियाँ कर बचपन व हँसी-ठिठोली कर किशोरावस्था गुजारी थी, वह मंदिर जहाँ बचपन में नन्ही-सी मुट्ठी भर चावल ले मंदिर जाने वालों को देख दौड़ता- भागता मंदिर चला जाता, जहाँ से उसमें सारे धार्मिक संस्कारों का वपन हुआ था। उन्हें निर्लिप्त भाव से छोड़ संदीप जा रहे थे। माँ-पिताजी, भाई-बहन समझ रहे थे संदीप आगे की पढ़ाई के लिए जा रहा है। संदीप का कॉलेज में पढ़ाई करना उनके लिए गौरव की बात थी। उनकी संदीप से बहुत सारी उम्मीदें व अपेक्षाएँ थीं।

संदीप इन सबकी आँखों के सपने पढ़ बांच रहे थे पर उनको ही पता नहीं था कि वे उन्हें किस रूप में पूरा कर पाएँगे। संदीप ने माँ-पिताजी के पैर छुए। माँ भरी आँखों से इतना ही कह पाई, ''अपना ध्यान रखना, वापस जल्दी घर आना।'' और फिर माँ की आँखों से अविरल अश्रुधार बह चली।

संदीप अनासक्त भाव से सबको देख रहे थे। उन्होंने माँ से कहा ''माँ रोओ मत। रोकर मुझे कमजोर मत करो। मैं ऐसा कोई काम नहीं करूँगा जिससे तुम्हें मुझे अपना बेटा कहते हुए शर्म महसूस हो। माँ तुम्हें मुझे अपना बेटा कहते

हुए गौरव महसूस होगा। मैं ऐसे काम करूँगा।'' माँ को ना जाने क्यों बार-बार ऐसा लग रहा था कि वे संदीप को इस घर से आखरी बार विदा कर रही है। संदीप की जुदाई में उनका दिल फट पड़ रहा था। वह अपने मन की व्यथा किसी से भी न कह पा रही थी। यदि पति से कहती तो वे घर में तूफान मचा देते व उसे आगे की पढ़ाई के लिए कभी नहीं भेजते। आँसू भरी आँखों से उन्होंने हाथ जोड़ कर जिनेंद्रदेव से प्रार्थना की- 'भगवन् मेरे भोले-भाले संदीप की तू रक्षा करना।'

''माँ मैं चलता हूँ। माँ मुझे याद कर तुम रोना मत। स्वयं को संभालना। संदीप हर पल तुम्हारे पास ही होगा।'' कहते हुए संदीप चल दिए। माँ डबडबाई आँखों में उभरी संदीप की धुंधली तस्वीर देख रही थी। अचानक, नहीं मैं संदीप को अच्छे से जीभर कर देख लूँ सोचते हुए उन्होंने साड़ी के छोर से आँखें पोछ डाली। बावरी माँ टकटकी लगाए संदीप को तब तक एक टक निहारती रही, जब तक वह आँखों से ओझल नहीं हो गया। पिताजी व भाई लोग संदीप को छोड़ने बस स्टाप गए थे। अब माँ के सब्र का बाँध टूट गया। निढाल हो जमीन पर बैठ गई। वह धार-धार रो रही थी। बहुत रो लेने पर जब दिल हल्का हुआ उन्होंने अपने अस्त-व्यस्त कपड़े ठीक किए। उन्हें बार-बार संदीप के कहे वाक्य याद आ रहे थे, ''माँ मुझे याद कर तुम रोना मत। स्वयं को संभालना। तुम्हारा संदीप हर पल तुम्हारे पास ही होगा।''

हाँ बेटा तू बचपन से आज तक जैसा का तैसा मुझे याद आ आकर हर पल मेरे आस-पास ही तो रहता है, कहते हुए मुन्नीदेवी ने दीर्घ निःश्वास छोड़ी। उन्हें बार-बार लग रहा था कि कोई संदीप को वापस लौटाकर ले आए। उनके मन मानस में घूम रहा था संदीप- संदीप मेरा प्यारा बेटा।

वे हर बार संदीप को पढ़ने जाते वक्त रोती थी, पर वैसी नहीं जैसी आज रो रही थी। तब सोचती थी संदीप पढ़ने जा रहा है, भविष्य बनाने जा रहा है, छुट्टियों में आता-जाता रहता है। किंतु आज पढ़ाई का एक पड़ाव बारहवीं पूरी कर ली है। अब कॉलेज की पढ़ाई के लिए जा रहा है, पर बीच में ही ब्रह्मचर्य व्रत ले माँ के मनसूबों पर पानी फेर देगा, कौन जानता था। उसकी वह विरक्ति, दिल को चीर देने वाली वे बातें याद करके माँ का कलेजा कांप जाता। क्या पता उसके भवितव्य में क्या लिखा है।

माँ बैठी तो फिर उठी ही नहीं। घंटों संदीप की यादों में खोई रही। उसे बार-बार एहसास होता- संदीप इधर से आ रहा है। संदीप उधर से आ रहा है। संदीप यहाँ खड़ा है, संदीप वहाँ बैठा है। संदीप पढ़ रहा है, संदीप माँ से बातें कर रहा है, ऐसी जाने कितनी- कितनी बातें थीं संदीप की, जिनकी यादं माँ को बार-बार रुला देती, तभी संदीप की कही बात माँ को याद आ गई, ''माँ इस मोह ने अनंत काल से हमें अंधा कर रखा है। तू बार-बार मुझे याद कर रो-रोकर आर्त रौद्र ध्यान के बंध मत बाँधना। ये नरक निगोद के दुःखों के कारण हैं। यदि जीव को आत्मकल्याण करना है तो इस बंधन को तो तोड़ना ही होगा।''

चिंतन

यद्यपि पूर्व से ही सात्विक, त्यागमय जीवन जीना व कम बोलना या मौन का नियम लेना संदीप के आचरण में था किंतु अब ब्रह्मचर्य व्रत लेने के बाद उनमें और अधिक दृढ़ता आ गई थी। उन्होंने दृढ़ निश्चय कर लिया कि त्याग से बढ़कर कोई हितकारी व शांतिदाता नहीं है। इस अनमोल मानव जीवन का सदुपयोग कर इस त्याग के बल पर ही मुक्ति की महाशक्ति का संचय करना है। मुझे सांसारिक नश्वर सुख-भोगों की मृग मरीचिका के पीछे भाग-भाग जीवन निरर्थक नहीं करना है अपितु मोह-माया की कारा की चिरबंधन की बेड़ियों को तोड़ सर्वस्व त्यागी बन 'महावीरत्व' प्राप्त करना है। इस प्रकार वे अपने समर्पण व साधना से अपनी भावभूमि मंजुल, मृदुल व उर्वर करते रहे।

जो सुखानुभूति 12वीं परीक्षा के बाद पी.ई.टी. पास कर इंजीनियरिंग या पी.एम.टी. पास कर मेडिकल में प्रवेश पाने

पर छात्र को होती है उससे कई गुना अधिक सुखानुभव संदीप को ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण करने पर हो रहा था। इत्तफाक से यह 'मुक्ति महल' में प्रवेश परीक्षा भी उन्होंने कक्षा बारहवीं के बाद ही उत्तीर्ण की। उन्होंने मन ही मन अपनी इस परीक्षा का नाम बी.वी.टी. (ब्रह्मचर्य व्रत टेस्ट) रखा। अब उनमें दृढ़ आत्मविश्वास हो गया था कि निश्चय ही संयम धारण कर वे एक दिन जिनमुनि बन पाएँगे! इस एकमात्र प्रवेश परीक्षा से वे डॉक्टर, इंजीनियर, आर्किटेक्ट सब कुछ एक साथ बन जाएँगे। डॉक्टर के रूप में वे स्वयं व औरों के सांसारिक दुःखों का इलाज कर सकेंगे। संयम व त्याग की हथौड़ी, छेनी से इंजीनियर या आर्किटेक्ट के रूप में जीवन पर चढ़ी कर्म की परतों को छील-छीलकर अलग कर मुक्ति महल का निर्माण कर सकेंगे। सी.ए. के रूप में कर्म शृंखलाओं का ऑडिट कर सकेंगे।

इस प्रकार संदीप को आत्मसंतुष्टि थी कि उन्होंने सही समय पर सही ब्रांच का चयन किया। लेकिन अभी संदीप के लिए यह सुनिश्चित नहीं था कि वह कब, कैसे, किसके साथ, किस रूप में अपनी यात्रा आरंभ करेंगे। संयम की किस यूनिवर्सिटी (गुरु के ज्ञान) में उन्हें कैसे प्रवेश मिलेगा। एक तरह से संदीप के लिए तयशुदा रास्ता होने के बाद भी सब कुछ अनिश्चित था। अतः संदीप ने आगे की पढ़ाई जारी रखने का निर्णय लिया।

सागर आगमन

संदीप गणेश वर्णी संस्कृत विद्यालय मोराजी सागर में आ चुके थे। अभी कॉलेज में एडमिशन लेना था, अतः लौकिक पढ़ाई की किसी बात का उनके मन में टेंशन नहीं था। किंतु वे शास्त्री की पढ़ाई कर रहे थे अतः उन्हें जिनागम के ग्रंथों के अध्ययन के साथ जैनेतर ग्रंथों, संस्कृत व प्राकृत भाषा के ग्रंथों का अध्ययन भी करना होता था। संदीप जानते थे कि ज्ञानादि मात्र परीक्षा देने तक सीमित नहीं है अपितु इसे धार देने के लिए सतत अध्ययन की जरूरत पड़ती है, वरन ज्ञान कुंद हो जाता है। जब उन्होंने पढ़ा कि 'ब्रह्मचर्य व्रत दुर्गति का नाश करने वाला, ज्ञानाभ्यास अज्ञान का नाश कर देने वाला तथा शुभ भावना भवनाशिनी है' तब उनका मन आनंद सागर में गोते लगाने लगा। उन्हें लगा कि उन्होंने ब्रह्मचर्य व्रत लेकर सही वक्त पर सही निर्णय लिया है।

संदीप ने स्वयं को शास्त्राभ्यास (शास्त्र अध्ययन) में लगा दिया। अब संदीप ने सांसारिक जीवन सागर में संकल्प-विकल्पों से उपजे विकारों की तटबंध तोड़ देने वाली उत्ताल तरंगों पर नियंत्रण करना अपने लिए आसान बना लिया था। जीवन धारा एक ही दिशा में मोड़ ली।

संदीप का कक्षा 12वीं (बारहवीं) का रिजल्ट आ गया था। संदीप ने बारहवीं की परीक्षा प्रथम श्रेणी व स्कूल में प्रथम स्थान के साथ उत्तीर्ण की थी। अपनी इस शानदार अनुपम उपलब्धि के प्रति भी उनके मन में कोई विशेष हर्ष नहीं था। प्रसन्नता के क्षणों में भी उनमें सम भाव थे। परीक्षा के रिजल्ट के पश्चात वे पहली बार विद्यालय में आए थे। अतः प्रार्थना सभा के पश्चात गुरुकक्ष में उनका आशीर्वाद लेने जा पहुँचे। बड़े विनीत व शिष्ट भावों से संदीप ने गुरु चरणस्पर्श क्या किया गुरुजनों को लगा, संदीप ने उनके पैरों को छूकर उन पर शीतल चंदन का लेपन कर दिया हो! सबके हाथ संदीप को आशीर्वाद देने उठ रहे थे व होंठों से प्रशंसा के फूल झर रहे थे। सभी गुरुजनों का विनयशील युवा संदीप के प्रति विशेष स्नेह था। वे जानते थे कि संदीप के लिए आकाश कुसुम तोड़ लाना साधारण सी बात है। प्राचार्यजी ने संदीप से आगे की पढ़ाई की योजना पूछी। संदीप ने जवाब दिया ''बी.कॉम. के लिए कॉलेज का फॉर्म भर रहा हूँ और यहाँ शास्त्री की पढ़ाई भी पूर्ण करना व आप गुरुगणों से जिनागम का अध्ययन करना है।''

वीरेंद्रजी पंडितजी जिनसे संदीप की मित्रवत भी चर्चा होती थी, ने पूछा, ''संदीप हमें पता चला है कि तुमने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत लिया है। क्या यह सही है?''

''जी गुरुजी।''

तभी प्राचार्यजी ने कहा कि ''हमारे यहाँ से अक्सर छात्र साधु संतों व आचार्य श्री के दर्शनार्थ जाते हैं। कुछ विरले छात्र दो साल या ज्यादा से ज्यादा 5 साल का ब्रह्मचर्य व्रत ले निर्विघ्न पढ़ाई पूरी कर घर लौटकर घर-गृहस्थी बसा लेते हैं। पर तुमने तो आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत लेकर सांसारिक जीवन पर विराम लगा दिया। तुम बड़े धार्मिक प्रकृति के संस्कारवान, प्रज्ञावान छात्र हो यह तो किसी से छिपा नहीं है, पर आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत...'' प्राचार्यजी आगे कुछ कहते इससे पूर्व ही संदीप ने अपनी कानों में अमृत घोलती मृदु वाणी में कहना शुरू किया।

''गुरुवर, दो, तीन या पाँच वर्ष के लिए ब्रह्मचर्य व्रत ले एक साथ दो नाव में पैर रखने जैसा है। इससे न ब्रह्मचर्य व्रत का ठीक से पालन होता है न घर में मन लगता है। नदी का प्रवाह एक ही ओर एक ही दिशा में रहने पर ही वह प्रवाहमान रह सकती है। मुझे एक ही दिशा में आगे बढ़ना है और वह दिशा ज्ञान-संस्कारों द्वारा आप बचपन से आज तक मुझे देते आए हैं। अध्यात्म का रंग आप लोगों ने मुझ पर इतना गहरा चढ़ा दिया है कि अब इन तुच्छ सांसारिक सुखों का कोई भी रंग मुझ पर नहीं चढ़ पाएगा। यह आगे के जीवन की तैयारी है।'

आप लोगों से ही मैंने पढ़ा है कि ''ब्रह्मचर्य से तप विशुद्ध होता है, दर्शन शुद्धि तथा ज्ञान शुद्धि होती है। ब्रह्मचर्य विषयों का शत्रु है और ब्रह्मचर्य ही मोक्ष का सोपान है। 'ब्रह्मचर्य स्वरूपोऽहम्'''

सारे गुरुजन संदीप के अध्यात्म पगे इस गूढ़ गहन उत्तर को सुन अवाक् थे। तभी किसी ने कहा ''संदीप ने गणेश वर्णी विद्यालय का नाम रोशन कर दिया।'' तब दूसरे गुरुजन ने कहा, ''अरे हमें तो नाज है यहाँ पर एक और गणेश वर्णी तैयार हो रहे हैं।'' हर कोई संदीप की प्रशंसा के पुल बाँध रहे थे और संदीप नत-नत गुरु आशीष समझ ग्रहण कर रहे थे। संदीप मुझे कॉलेज में फॉर्म भरने जाना है कहते हुए सब गुरुजनों को प्रणाम कर उठ खड़े हुए। चलते-चलते गुरुजनों के वचन उनके कानों में पड़ रहे थे- ''संदीप तो हम सबसे आगे निकल गया। आज इतनी सी उम्र में इतनी बड़ी ऊँचाई छू ली, कल क्या पता, कहाँ पहुँचेगा?''

कॉलेज पढ़ाई

संदीप ने कॉलेज बी.कॉम. प्रथम वर्ष में एडमिशन ले लिया। कॉलेज जाना भी शुरू कर दिया। आचार्य श्री विद्यासागरजी ने कहा था, ''पहले धार्मिक एवं लौकिक शिक्षा पूरी करो, फिर आगे की बात होगी।'' सो संदीप ने उचित ही समझा। संदीप ने सोचा धार्मिक शिक्षा कोई पूरे वक्त तो ग्रहण की जाती नहीं। बचा टाइम बैठे-ठाले बिताने की बजाए कॉलेज जाना उचित है। कॉलेज का ज्ञान, वहाँ के तौर-तरीके वगैरह भी व्यक्तित्व निर्माण में सहायक होते हैं। जब मैं दिनभर स्कूल की पढ़ाई के साथ शास्त्री की पढ़ाई कर लेता था तब कॉलेज की तो दो-तीन घंटे की ही पढ़ाई है। अतः संदीप कॉलेज शुरू-शुरू में नियमित जाते रहे।

शेष समय संदीप ने अपनी सारी प्रतिभा, विशिष्ट योग्यता तथा दृढ़निष्ठा अध्यात्म ग्रंथों के गूढ़ गहन तत्त्वों के अध्ययन, मनन, चिंतन व रसास्वादन में लगा दिया। संदीप अभी तक धार्मिक पढ़ाई संबंधी ग्रंथों के अलावा चारों अनुयोगों प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग व द्रव्यानुयोग के कई ग्रंथों का स्वाध्याय व अध्ययन कर चुके थे। अतः उनके पास सरस्वती का भंडार तो भरा था, वे उसकी दिन-प्रतिदिन वृद्धि कर रहे थे। संदीप ने आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करने में अपने को पूर्णतः झोक दिया, क्योंकि विद्या या ज्ञान ही हमारा बंधु, मित्र, हितैषी तथा सदा साथ रहने वाला सहगामी धन है। इसी से सर्वार्थ सिद्धि होती है। ज्ञान कामधेनु व चिंतामणि रत्न है। रत्न तो खो जाता है पर यह रत्न न खो सकता है न इसे कोई लूट ही सकता है। यही ज्ञान स्वर्ग-मोक्ष दिलाने वाला है। ज्ञान हमेशा कल्याणकारी है। सम्यक् प्रकार से आधारित ज्ञान व्यक्ति की उसी प्रकार रक्षा करता है जिस प्रकार माता पुत्र की। इसीलिए तो जिनवाणी को माता कहते हैं। इस प्रकार यह श्रेयसकारी व यश देने वाला ज्ञान गुरु सेवा, ज्ञानीजनों की सत्संगति व

भावपूर्ण अभ्यास करने से ही प्राप्त होता है। संदीप को ये तीनों अनुकूलताएँ यहाँ वर्णी विद्यालय में सहज प्राप्त थीं और वे ज्ञानाभ्यास में जुट गए।

बिस्किट फैक्ट्री

संदीप का अभी-अभी ही कॉलेज में एडमिशन हुआ था। संदीप ने 12वीं बोर्ड परीक्षा में सागर के स्कूल में अच्छा स्थान प्राप्त किया था। अतः कॉलेज में प्रोफेसर लोग व युवा छात्र उन्हें मेधावी व योग्य छात्र मानते थे। प्रोफेसर उनसे विशेष स्नेह रखते थे व हर छात्र इस व्यवहार कुशल, मृदुभाषी व मृदुल तथा सौम्य स्वभाव वाले संदीप से दोस्ती करना चाहता था। संदीप की सबसे मित्रता थी। संदीप की धार्मिक प्रवृत्ति व मनोवृत्ति भी छात्रों में चर्चा का विषय थी। कॉलेज में प्रारंभिक दिनों में ही चंद्रशेखर तन्तुवाय से संदीप की दोस्ती हो गई।

बातों-बातों में संदीप को पता चला कि चंद्रशेखर की बिस्किट की फैक्ट्री है जिसमें अंडों का उपयोग होता है। अहिंसा व दया धर्म के हिमायती वाकपटु संदीप ने दोस्त तन्तुवाय को समझाकर फैक्ट्री में अंडों का उपयोग बंद करवाया। उसके पिताजी भी संदीप की बातों से प्रभावित व सहमत हो गए।

आज भी प्रतिवर्ष चंद्रशेखर तन्तुवाय का परिवार आचार्य श्री के दर्शनार्थ चातुर्मास में आता है।

संदीप जानते थे कि ज्ञान के सतत अभ्यास से ही तत्त्वों का सम्यक् बोध होता है, मन का निरोध होता है, कल्याण मार्ग में प्रीति होती है, कषायों की उपशांतता से आत्मा की निर्मलता बढ़ती है, विषय भोगों से विरक्ति होती है। इसी ज्ञान से हमें अपने हित- अहित, कल्याण- अकल्याण मार्ग, बंध- मुक्ति, धर्म- अधर्म तथा योग्यायोग्य की पहचान होती है। ज्ञान की महिमा अपरंपार है। विनय व विवेकपूर्वक ज्ञानाराधना करने से केवलज्ञान व मोक्ष सुख तक की प्राप्ति होती है।

संदीप अधिक से अधिक अपने ज्ञानार्जन का उपयोग करते थे। आचरण में उतारते थे। उनका आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत धारण करने के भीष्म निर्णय के पीछे उनका यही महा ज्ञानालोक रहा। उनके अनुसार बिना क्रिया या आचरण में उतारे ज्ञान गधे के बोझ के समान है।

सागर वर्णीशाला- ज्ञान के प्रति विचार

संदीप सोच रहे थे इसी महाज्ञान सूर्य ने उनके अमावस की काली रात के अंधेरे के रूप में व्याप्त महामोह की कालिमा को छिन्न-भिन्न कर दिया। तभी तो माता-पिता, भाई बहनों का वह मोह उन्हें किंचित भी विचलित नहीं कर सका। और संदीप ने उत्तरोत्तर ज्ञान वृद्धि को अपना लक्ष्य बना लिया।

संदीप अपने ज्ञान को यथाशक्ति आचरण में उतारकर स्वयं को परिमार्जित व परिष्कृत करने लगे। श्रावक के षटावश्यक (देव पूजा, गुरुपास्ति, शास्त्र स्वाध्याय, दान, पूजा, तपादि) का वे और अधिक अच्छे से पालन करने लगे थे। कॉलेज तो वे पेंट शर्ट में जाते किंतु गुरुकुल में वे अब श्वेत धोती-दुपट्टा धारण करते थे, जो उनके दुग्ध धवल उज्ज्वल चारित्र के प्रतीक थे। वे परिग्रह परिमाण भी करने लगे थे। आत्मज्ञान संपन्न साधक संदीप के लिए स्वर्ग तथा संपूर्ण जगत सुख तृणवत था। संतोष की पुलक सदा उनके अधरों पर बिखरी रहती। बिना कहे उनके प्रखर व्यक्तित्व को देख जिधर से भी वे गुजरते उनके प्रति आदर व श्रद्धा से जय जिनेंद्र कहते हुए लोगों के हाथ उठ जाते। वे सम्मान के पात्र तो पहले भी थे किंतु ज्ञान के आचरण में उतरने से उनकी आभा कांति जनमन में उतरने लगी। ज्ञान की आभा ने चारित्र को चमका दिया था।

संदीप श्रावक के षटावश्यक कर्तव्यों के निर्वहन के साथ-साथ साधु, मुनियों के आहार विहार-निहार व वैयावृत्ति

में भी जाने लगे थे। वे मंदिरों में विधान मंडल आदि धार्मिक अनुष्ठान भी करवा देते व धार्मिक उपदेश भी देने लगे थे जिससे उनके व्यक्तित्व की प्रखरता बढ़ती जा रही थी।

संदीप जितनी एकनिष्ठा से बी.कॉम. की पढ़ाई कर रहे थे उससे कई गुना तन्मय व एकाग्र हो आध्यात्मिक अध्ययन करते थे। तथापि जब तब उन पर बचपन से लेकर आज तक घटी अपने दोस्तों, परिचितों आदि की अकाल मृत्यु का परिदृश्य उनकी आँखों के सामने उभर आता। कुछ क्षणों के लिए मोहावृत्त हो वे विचलित हो जाते। उनकी रिक्तता महसूस करते किंतु आत्मज्ञान का बोध उन्हें मोह की परिधि से बाहर खींच लाता। अब उनका दुःख परकीय की जगह स्वकीय हो जाता। वे बुद्ध की तरह, जो रोगी, वृद्ध व शव को देखकर गहन चिंतन में डूब जाते कि क्या मैं भी एक दिन रोगी, वृद्ध होकर मरण को प्राप्त कर लूँगा। और एक दिन वे भर यौवन में नव सद्यजात शिशु को माँ के पास अकेला सोता छोड़ 'बोधि' की तलाश में निकल पड़ते हैं, सोचने लगते कि क्या पता मेरे इन दोस्तों, परिचितों की तरह मुझ पर भी कब क्रूर काल का प्रहार हो जाए और मिट्टी का घरौंदा यह मानव देह टूटकर बिखरकर मिट्टी में मिल जाए। जीवन कमल दल पर पड़े सुंदर शबनम की तरह क्षणभंगुर है जो कुछ क्षणों में नष्ट हो जाता है। जीवन पानी की बूँद के समान है, कब नष्ट हो जाए, घड़ी पल का पता नहीं। अतः यह माटी की देह माटी में मिल जाए या पानी की बूंद सा जीवन पानी पानी हो जाए, उससे पहले मुझे अपने इस शव होते जीवन में शिवत्व का चेतना तंत्र फूंक लेना चाहिए। किसी भी पल जीवन नैया डूब सकती है, नौका मझधार में डूबे जरूरी नहीं है, किनारे पर भी आकर डूब जाती है। अतः डूबने से पहले मुझे तैरना सीख लेना चाहिए। उनका ज्ञान कह रहा था देह/पर्याय नयी है पर आत्मा तो वही पुरानी युगों-युगों से चली आ रही है जो राग-द्वेष, मोह-माया के तानों-बानों से बुनी, विषय विकारों से जर्जर हो रही है।

संदीप अपने महान आचार्यों द्वारा रचित इन महान ज्ञान ग्रंथों के अध्ययन व अभ्यास से ज्ञानानंद में विचरण करने लगे थे। यह ज्ञान ही था जिसने उन्हें महामृत्यु बोध की मोहासक्ति की विह्वलता से बाहर निकाल अनासक्त बना दिया था। महाविज्ञ बना दिया था, जो जान रहा था, समझ रहा था कि मृत्यु निश्चित है, कभी भी, कहीं भी। उसकी आहट हर पल हमें मिल रही है फिर उसे सुनकर कौन विज्ञ होगा जो महामोह की नींद से जागना नहीं चाहेगा। संदीप जन्म जन्मांतरों का सोता छोड़ जाग गए थे। सुख, सुविधाओं व भोगों के बिस्तर से उठ खड़े हुए थे। उनके कानों में दोस्तों के कहे शब्द गुंजायमान हो रहे थे ''अरे! संदीप इतनी सी मात्र अठारह वर्ष की उम्र में आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ले लिया। जवानी का थोड़ा सुख भोग तो कर लेते... आदि आदि...।''

पर संदीप का चिंतन ज्ञान कह रहा था इतनी सी उम्र कहाँ? यह आत्मा, यह जीव तो जन्म जन्मांतरों से सांसारिक सुख भोगों में रचा-पचा रहा। युग युगांतरों में कितने कालों की उम्र इसने इस भटकन भरे सुख भोगों में व्यर्थ नष्ट कर दी फिर भी इसे आत्मबोध नहीं हुआ। किंतु इस जन्म में मुझे न जाने कितने प्रकाश वर्षों के पुण्य संयोग से यह दुर्लभ मनुष्य जन्म, उससे भी महादुर्लभ यह जिनवाणी का 'ज्ञान बोध' मिला है, इतने अच्छे गुरुजन मिले हैं, परम उपकारी शिक्षण संस्था मिली है और उससे भी दुर्लभतम मुझे व्रत ग्रहण करने की यह पात्रता मिली है। यदि मुझमें 'ज्ञानार्जन' व 'ज्ञानबोध' की 'पात्रता' न होती तो इस विद्यालय में पढ़ने वाले अन्य अनेकानेक विद्यार्थियों की तरह मैं भी नगण्य हो जाता।

आध्यात्म के इस गूढ़ गहन चिंतन-दर्शन से संदीप नित प्रति ऊँचे और ऊँचे उठते जा रहे थे। लोक जीवन की एषणाएँ तिरोहित होती जा रही थी। पारलौकिक सुख-शांति की आकांक्षा बढ़ती जा रही थी। अब वे सबके साथ रहते हुए भी अकेले थे। देह में होने के बाद भी देहातीत होने की बातें सोच रहे थे। भूख-प्यास को आत्मा का स्वभाव न मानकर क्षुधातीत होने की ओर प्रयासरत थे। 'एकोऽहं अन्यो नास्ति' उनका जीवन लक्ष्य बनता जा रहा था। ''मैं अकेला आया हूँ, मुझे अकेले ही जाना है।'' इस 'एकला चालो' के चिंतन को परिपूर्ण करने, आचार-विचारण चर्या की भूमि मजबूत

कर रहे थे।

अब लक्ष्य स्पष्ट हो गया था- इस कंकरमय सांसारिक जीवन से ऊपर उठ स्वयं को शंकर, महादेव, देवों के महादेव महावीर बनना है। महावीर बनना है तो उनके जैसी चर्या अपनाना होगी। संदीप सोच रहे थे घर के संघर्ष को तो अपनी सूझ-समझ व विवेक से शांत कर दिया था, माँ को साध कर सबको साध लिया था- उन्हें याद था

'एकै साधे सब सधे, सब साधे सब जाए'

इसका उन्हें सबसे बड़ा लाभ यह मिला कि संदीप ने माँ की पाठशाला में भावी जीवन के अनेक पाठ पढ़ लिए जो निश्चित ही समय-समय पर काम आएँगे। ऐसी व्यावहारिक शिक्षा अन्यत्र नहीं मिल सकती। ये बातें तो सांसारिक जीवन के रिश्तों-नातों के संघर्ष की हैं। पर अब संदीप का स्वयं के साथ स्वयं का संघर्ष शुरू हो गया। मन पूछ रहा था, 'संदीप, 'संयम तलवार की दुधारी धार पर चलने जैसा है, चल सकेगा क्या? संयम, प्रकृति के बीच, समाज के बीच, प्राकृतिक रूप से रहने का नाम है, रह सकेगा क्या?' संदीप अब बहुत करीब से मुनियों की ज्ञान साधना, ध्यान साधना, चर्या साधना व वैचारिक विपुलता उनके निकट रह देखकर अपने भविष्य की पूर्व तैयारी करने लगे। वे साधु-संतों के दर्शन के लिए जाते, कुछ दिन रहते, लौट आते। तीर्थ दर्शन करने जाते। नैनागिरि, द्रौणगिरि, कुंडलपुर के कई बार वे दर्शन कर चुके थे। सन् 1995 में श्री सम्मेदशिखरजी शाश्वत तीर्थ के दर्शन किए। वे हरसंभव आत्मशुद्धि का प्रयास कर रहे थे। स्वयं में दृढ़ आत्मविश्वास भर रहे थे।

ऊँचे से ऊँचे पर्वत पर चढ़ने या लंबी दूरी की यात्रा तय करने के लिए व्यक्ति को अपना पहला नन्हा कदम तो उठाना ही पड़ता है। अपने इस्पाती इरादों, दृढ़ संकल्प शक्ति, बुलंद हौसलों व विचारों की परिपक्वता से कब मंजिल तक पहुँच जाता है, उसे पता ही नहीं चलता। आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ले संदीप ने संयममय जीवन की हिमतुंग कठिन यात्रा की चढ़ाई के लिए अपना पहला कदम उठा लिया था जो उनकी तन्मयता से अर्जित अध्यात्म ज्ञान की शक्ति से ही संभव हो सका था। ब्र. संदीप अच्छी तरह समझ चुके थे कि उनको जो आत्मानुभूति, आत्मजागृति का अनुभव हो रहा है, अंतस में झांककर देखने की क्षमता आ रही है ये सब ज्ञानार्जन व ज्ञानाभ्यास का ही सुफल है। गहन अध्ययन में डूबकर किए जाने वाले स्वाध्याय से ब्र. संदीप के चारित्र में आया निखार व आत्म नियंत्रण उनके आचरण से दृष्टिगत हो रहा था। ज्ञानार्जन के दर्पण में उन्हें आत्मदर्शन हो रहा था।

इसी आत्मदर्शन ने ब्र. संदीप को जीवन दर्शन करा दिया। जीवन नदी के प्रवाह के समान है जो किसी एक दिशा में प्रवाहमान हो गतिमान रह सकती है। आज ब्र. संदीप जीवन की दोराहों पर खड़े थे। एक राह उन्हें गृहस्थ जीवन की ओर ले जाने का रास्ता बता रही थी, दूसरी संयममय जीवन का। गृहस्थ जीवन की राह दिखने में बड़ी सरल, आसान व मखमली मसनदों बिछी थी, पर वे जान गए थे कि इन मुलायम बिछे मसनदों के नीचे नरक निगोद के दुःखों के कांटे-भाटे बिछे पड़े हैं। और दूसरी राह? वह संयम की राह बड़ी कठिन, दुरूह, दुष्कर व चढ़ाई वाली राह, परिषहों के अंगारे बिछी राह है, किंतु अंततः वही राह सुख, शांति व शीतलता प्रदान करने वाली राह है। संदीप ने ब्रह्मचर्य व्रत ले गृहस्थ जीवन की राह पहले ही बंद कर दी थी। अतः उनके सामने दूसरी राह संयम मय जीवन ही बची थी और वे अब उसके प्रति कटिबद्ध हो गए। ब्र. संदीप की वैचारिक दृढ़ता, संकल्प के प्रति कटिबद्धता व उद्देश्य पूर्ति के लिए समर्पण ने उन्हें अद्भुत दैवीय शक्ति से लक-दक कर दिया था, ऐसी ही प्रतिबद्धता व्यक्ति को लक्ष्य के निकट ले जाती है। अब ब्र. संदीप ने जीवन के सारे द्वंद्व समाप्त कर निर्द्वंद्व हो कॉलेज की बी.कॉम. की पढ़ाई छोड़ स्वयं को अध्यात्म साधना में झोंक दिया। उन्होंने सोचा कि जब मुझे सांसारिक जीवन में ही प्रवेश नहीं करना है तब इस बी.कॉम. की लौकिक शिक्षा में समय नष्ट करने से क्या मतलब?

अब ब्र. संदीप ने उस आत्मज्ञान की प्रदीप्ति से स्वयं को दीप्त करने के लिए अपनी सारी ऊर्जा, सारी निष्ठा, पूरी

लगन, अंतरात्मा की तन्मयता, योग्यता, पात्रता व क्षमता लगा दी। इस आत्मसाधना की पूर्व तैयारी में वे किसी भी तरह की कोर-कसर नही छोड़ रहे थे। पूर्णता प्राप्ति के लिए पूर्ण तैयारी हो। वे जानते थे हिमालय पर विजय प्राप्त करने के लिए पहाड़ चढ़ाई का अभ्यास हो, रास्ते की कठिनाईयों का ज्ञान हो, उचित संसाधन हो, इससे भी बड़ी बात उस क्षेत्र की पूरी जानकारी हो। अनुभव वृद्ध हो ऐसा मार्गदर्शक हो, तभी हिमालय फतह किया जा सकता है। सांसारिक दृष्टि से उनकी संयम साधना द्वारा मुक्ति की फतह का रास्ता इससे भी अधिक कठिन है। अतः ब्र. संदीप अपने आगामी यात्रापथ के कांटों की चुभन को पुण्य महक बनाने की पूर्व तैयारी में जुट गए।

भगवान महावीर की आत्म साधना में तो दिगम्बर साधना है। इस यात्रा पथ पर मंजिल फतह करने के लिए भौतिक संसाधनों की आवश्यकता नहीं पड़ती। यह तो मात्र स्व नियंत्रण का मार्ग है। अतः ब्र. संदीप धीरे-धीरे अभ्यास करने लगे। आचार-विचार शुद्धि ने ही तो उन्हें आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण कर लेने व सबसे बड़ी कठिनाई व चढ़ाई का अनुभव प्राप्त कर आगे बढ़ने की 'महाशक्ति' का संचार उनकी रग-रग में पहले से ही भर दिया था जिसके आगे भौतिक जीवन की प्रवंचनाएँ, विषय-विकार, वासनाएँ, इच्छाएँ- एषणाएँ, सांसारिक जीवन की सुख-सुविधाएँ, प्रलोभन आदि आदि तो पहले ही परास्त हो चुके थे। इस 'महाशक्ति' के महाप्रभाव से आगे की कठिनाइयाँ भी उन्हें आसान लगने लगी थी।

परिषह विजय, व्रत नियम, सामायिक, प्रतिक्रमण आदि कई चर्याएँ संयममय जीवन में करनी पड़ती हैं- श्रावकाचार के नियमानुसार यथोचित कर सकने वाली क्रियाओं का ब्र. संदीप अभ्यास करने लगे। उन्होंने परिग्रह परिमाण कर लिया। कॉलेज जाना छोड़ दिया। अतः पेंट शर्ट का पहनावे का सदा सर्वदा के लिए त्याग कर श्वेत वस्त्र धोती-दुपट्टा धारण कर लिया। ये धवल वस्त्र उनकी धवलता के प्रतीक तो थे ही, उन्हें हर पल अपने धवल लक्ष्य की ओर धायमान होने की प्रेरणा दे रहे थे। उन्हें मुक्तिपथ पर द्रुत गति से दौड़ने वाला धावक बना रहे थे। यहाँ कंपीटिशन/प्रतिस्पर्धा औरों से नही थी ब्र. संदीप की स्वयं की स्वयं से प्रतिस्पर्धा थी। इस रेस (दौड़) के लिए दर्शन, ज्ञान व चारित्र की जितनी सुसम्यक तैयारी वर्णी संस्कृत विद्यालय मोराजी सागर में ब्र. संदीप कर सकते थे कर रहे थे। वे हर कार्य अधिक से अधिक सम्यक् तरीके से ही करते रहे थे। वे अक्सर साधु-संतों के दर्शन, आहार, विहार व अन्य चर्याओं में पहले से ही साथ रहते, देखते व सुनते आ रहे थे। अतः उन्हें ऊपरी ज्ञान तो था ही किंतु अब वे परीक्षा की प्रिपरेशन लीव (पूर्व तैयारी छुट्टी) पर थे। अतः उन्होंने अपने लक्ष्य प्राप्ति के लिए स्वयं को झोंक दिया। इसके साथ अब उन्हें मार्गदर्शक सच्चे गुरु की भी तलाश थी।

वे आचार्य संघ व मुनि दर्शन को जाते। उनकी निश्रा में कुछ दिन सत्संग कर मुनिचर्या, आत्मानुशासन व संघानुशासन आदि की बारीकियाँ सीखते, समझते रहते थे। जहाँ बड़े-बड़े कलाकार अपनी कार्यशाला आयोजित कर इच्छुक कलाकरों को प्रशिक्षण देते हैं वहीं ब्र. संदीप ने तो अपना जीवन ही अपने लक्ष्य प्राप्ति की कार्यशाला बना लिया था, जिसमें व जिससे वे अभीष्ट की प्राप्ति के लिए विभिन्न तरीकों से स्वयं को प्रशिक्षित कर रहे थे, पूर्व तैयारी कर रहे थे। जब-जब भी ब्र. संदीप गुरु चरणों में जाते गुरु के उनके त्याग व तपस्या से उठती सुवास से संदीप के मन-प्राण महक उठते। उन ज्ञान दीप की दीप्ति से आँखों में ही रोशनी नहीं भरती अपितु ब्र. संदीप को लगता कि जिन संत का जीवन केशर की क्यारी सा महकता है जिससे उठती सुवास उसके मन प्राण ही पावन नहीं कर रहे, अपितु समूचे वातावरण को केशरमय बना रही है।

जैसे जैसे समय व्यतीत होता जा रहा था ब्र. संदीप के मन प्राण गुरु बिना छट-पटाने लगे। सांसारिक जीवन के रिश्ते-नाते टूट चुके थे। वे अकेले हो गए थे। वे निरत ज्ञानार्जन कर रहे थे पर अब उन्हें महसूस होने लगा कि इस ज्ञान से प्राप्त ऊर्जा को ऊर्जस्वित करने के लिए गुरु चाहिए। जिनवाणी हमें ज्ञानामृत पिला देती है, पर उसे पचाने के लिए

पथ्य तो गुरु ही देते हैं। ये अध्यात्मयोगी अपनी शक्ति, ज्ञान व अनुभव अपने शिष्यों में संप्रेषित कर पीढ़ी दर पीढ़ी पहुँचा कर ज्ञान को प्रवाहमान रखते हैं।

संदीप को बार-बार एहसास हो रहा था, गुरु के बिना जीवन शुरू नहीं। अब गुरु बिना उन्हें अपना जीवन फूल बिन वीरान बगिया सा लगगे लगा। गुरु बिना वे आकुल- व्याकुल रहने लगे। गुरु प्राप्ति की प्यास व व्यग्रता दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही थी। ब्र. संदीप को अब गुरु बिन सब कुछ सूना व अधूरापन लग रहा था। माँ की बातें याद आई, ''गुरु का चुनाव सोच-समझकर करना। कहीं गुरु चुन लेने के बाद पछताना न पड़े, अतः गुरु के चुनाव में जल्दबाजी मत करना। गुरु कपड़े बदलने की तरह बदले नहीं जा सकते। एक बार गुरु चुन लेने पर समग्र जीवन उन्हीं के चरणों में अर्पित कर देना।'' ब्र. संदीप के मनो मस्तिष्क में अब उन प्रशांत मुद्रा गुरु की मूर्ति की छवि बनी हुई थी जो श्रुत, व्रत, प्रत्याख्यान, संयम, नियम व तप की चेतना से युक्त हो। वे निरीह, निर्विकार, रागद्वेष रहित, जगत हितैषी, हितोपदेशक, शुद्ध आचरण वाले व कृपालु हों। ऐसे प्रज्ञावन, करुणानिधि गुरु का मिलना दुर्लभ है, पर असंभव नहीं। ब्र. संदीप को पूर्ण विश्वास था कि ऐसे महागुरु उन्हें जरूर मिलेंगे व शीघ्र ही मिल जाएँगे। संदीप को गुरु गुण गेयता पर विश्वास था अतः उन्होंने अपनी समग्र चेतना 'गुरु' पर केंद्रित कर दी। उनके हृदय में जिन गुरुओं के प्रति प्रगाढ़ श्रद्धा व समर्पण था। अतः कभी मन में विचारों की ऐसी तरंगें नहीं उठी कि अमुक गुरु ज्ञानी है, अमुक को कम ज्ञान है, अच्छे हैं, बुरे हैं आदि आदि। उनका गुरु दर्शन का मुख्य उद्देश्य मुनियों को देखकर अपना मनोबल मजबूत करना था। उनकी चर्या आत्मसात करने की दृढ़ता पैदा करना था। मुनि के समान मन निर्मल बनाना था।

ब्र. संदीप कई बार तो इतने विकल हो जाते कि गुरु वियोग में दिन-रात बड़े लंबे प्रतीत होते थे, काटे नहीं कटते। कहाँ होंगे वे ज्ञान, विवेक व बुद्धि से समुज्ज्वल मेरे 'तेजस्वी देवता' गुरुवर! कहाँ से? कैसे? उन्हें खोज लाऊँ। कोई तो उनका नाम पता बता दे। अब उन्होंने निश्चित कर लिया था कि मुझे शीघ्रताशीघ्र मुनि दीक्षा धारण कर आत्मकल्याण में रत हो जाना है। इसी के लिए मैंने घर-परिवार तजा, हाथ आई नौकरी ठुकराई, कॉलेज की पढ़ाई छोड़ी, बस अब एक ही चाहत है उन गुरु की जो मेरा अज्ञानांधकार, मोहांधकार हटा कर अपने ज्ञान प्रकाश से मुझे प्रकाशित कर दे। मुनि दीक्षा देकर अपने सा बना ले।

ब्र. संदीप की यह चाहत अब वर्णी विद्यालय के विद्वान शिक्षकों व विद्वान सहपाठी छात्रों की भी चाहत बन गई थी।

सबका मानना था कि वर्णी विद्यालय के इस प्रखर व मेधावी छात्र ब्र. संदीप ने संयम पथ को अपनाने का जो साहस किया है वह हजारों-लाखों में कोई विरला ही कर सकता है। इसकी पात्रता व योग्यतानुसार गुरु इसे मिल गए तो वे वर्णी विद्यालय के इस हीरे की चमक दुनिया में चमका देंगे। अतः वर्णी विद्यालय के विद्वत शिक्षकगण भी ब्र. संदीप के लिए चिंतित तो थे ही सतर्क भी थे कि कहीं जल्दबाजी में वह गुरु चुनाव में गलत निर्णय न ले बैठे। अतः वे हमेशा ब्र. संदीप को समझाया करते- ''गुरु तपस्वी हो, ओजस्वी हो, तेजस्वी हो। शिष्यों का आत्मबल बढ़ाने वाला हो। स्वयं के साथ शिष्यों को अशरीरी/ अदेह बनाने का प्रयत्न करने वाला हो।''

शादी ब्याह के बारे में लोक कहावत प्रचलित है कि जोड़ी तो ऊपर से ही तय होकर आती है, जब तक एक दूसरे से मिलते नहीं तब तक व्यक्ति खोज में जुटा रह परेशान होता रहता है। ठीक उसी तरह ब्र. संदीप भी गुरु की तलाश में थे। उन्हें भी किसी ने कहा था गुरु शिष्य की जोड़ी भी ऊपर से ही तय होकर आती है। उनकी व्यग्रता चातक की स्वाति बूंद पाने जैसी व्यग्रता थी। एक दिन संदीप ने आचार्य श्री सन्मतिसागरजी की फोटो वर्णी विद्यालय में लगी देखी। यों तो संदीप प्रायः प्रतिदिन इस फोटो के माध्यम से आचार्यश्री के दर्शन कर लिया करते थे। उन्हें बताया गया था कि कभी महा तपस्वी आचार्य श्री सन्मतिसागरजी इस वर्णी विद्यालय भी आए थे। तब का ही है यह फोटो। ब्र. संदीप खड़े-खड़े बड़े ध्यान से आचार्य श्री का फोटो निहार रहे थे। देखते-देखते वे रोमांचित हो उठे। उनका रोम-रोम पुलकित हो गया।

क्षणभर में उनकी आँखें मूंद गई, लगा किसी दिव्य ज्योति पुंज में वे नहा गए। आँखें खोली, खुशी के मारे उनके बोल नहीं फूट रहे थे। तभी घूमते हुए आकर एक शिक्षक संदीप के पास आकर खड़े हो गए। संदीप का कंधा थपथपाते हुए वे बोले- यही तुम्हारी मंजिल है। आज तुम्हारी गुरु की तलाश पूरी हुई।

संदीप अचरज में पड़ गए। मुझे इन आचार्य श्री की तस्वीर को देख जैसी अनुभूति हुई है वैसी ही क्या गुरुजी को भी मेरे लिए हुई है। जैसे ही प्रश्नसूचक निगाह से संदीप ने गुरुजी को देखा, उसके बोलने के पूर्व ही वे बोल पड़े, ''आज सुबह मैं इधर से जा रहा था, मेरे पैर यहाँ आकर ठिठक गए। आचार्य श्री की तस्वीर देखते ही मेरा मन अभूतपूर्व उल्लास से भर गया। और संयोगवश पुनः इधर से अभी जा रहा था पुनः मुझे कुछ वैसा ही आभास होने लगा और यह तस्वीर मुझे अपने चुम्बकीय आकर्षण से अपनी ओर खींचने लगी और मैं यहाँ चला आया। और मैंने तुम्हें भी यहीं खड़ा पाया। मुझे कोई दिव्य शक्ति कह रही है, संदीप को जिस जिनगुरु की तलाश है, वे यही हैं। संदीप मुझे लगता है अब तुम्हें ठौर-ठौर भटकने की जरूरत नहीं। तुम्हारे लिए यही सही व सच्ची ठौर है। अब तुम्हें एक महान गुरु की दर मिल गई है, अब तुम बेदर नहीं हो। जाओ तुम एक बार उनके दर्शन कर आओ।''

हर्षातिरेक में संदीप कुछ ऊँची आवाज में ही बोल पड़े, ''जरूर, जरूर गुरुवर, मैं जरूर व शीघ्र ही उनके चरणों में माथा टेकने जाऊँगा। उन युग निर्माता गुरु के चरणों में रह अपने जीवन का निर्माण करूँगा। मैं उन प्रज्ञापुरुष, सरस्वती सुत, ज्ञानवृद्ध, अनुभववृद्ध, तपवृद्ध, निरंतर वृद्धिगत गुरु का पुण्य संयोग- सान्निध्य पा स्वयं को कृतार्थ करूँगा। अभी तक ब्र. संदीप ने कितने ही दिगम्बर आचार्य, उपाध्याय, साधु व चतुर्विध संघ की बड़ी आस्था, श्रद्धा, समर्पण व भक्तिभाव से वंदना अर्चना की, किंतु किसी के प्रति उनकी ऐसी भावभूमि नहीं बनी किंतु यहाँ तो तस्वीर में तकदीर मिल गई, तकदीर बन गई, खोज पूरी हो गई, भटकन पर विराम लग गया व मन के संकल्प-विकल्पों की अथिर लहरें थिर हो गई। तस्वीर में जिनकी प्रशांत मुद्रा अतुलित शांति प्रदान कर रही है तब साक्षात् दर्शन करने पर उनकी साधना व आराधना के प्रभामंडल व आभामंडल का मुझ जैसे अकिंचन दर्शनार्थी पर कितना? क्या? व कैसा प्रभाव पड़ेगा? यह तो दर्शन से ही अनुभव जन्य है। शब्दों से नहीं।

ब्र. संदीप स्वयं के ज्ञानार्जन व ज्ञानबोध प्राप्ति का पूर्ण श्रेय मोराजी गणेशजी वर्णी विद्यालय के अपने विद्वान व संस्कार देने वाले शिक्षकों को ही देते थे। उनके प्रति उनमें अपार श्रद्धा व आदर था। बार-बार अपने प्रिय मित्रों व परिचितों की मृत्यु बोध से दुःखी संदीप को बोध दे देकर उन्हें समझाया, उन्हें इस विषाद की स्थिति से बाहर निकाला व उसके बाद उन्हें जो तत्त्वज्ञान उन्होंने दिया, उसी से उनका वैराग्य दृढ़ व पुष्ट होता गया।

आज अचानक ब्र. संदीप की मुलाकात प्राचार्यजी से हो गई। प्राचार्यजी ने संदीप से पूछा, ''हमने सुना, तुमने कॉलेज छोड़ दिया?'' ''जी आपने सच ही सुना है'' संदीप ने विनीत हो जवाब दिया। ''आगे की तुम्हारी क्या योजना है?''

''गुरुजी! आज मेरी हॉल में लगे आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के फोटो पर अचानक दृष्टि पड़ी और फिर नजरें वहाँ से हटी ही नहीं। मुझे कुछ अलौकिक आभास हुआ। उनके प्रति श्रद्धा से मेरा हृदय अभिभूत हो गया। मन उनके प्रति समर्पित हो गया।'' आगे संदीप चुप हो प्राचार्यजी की तरफ देखने लगे। गुरु को शिष्य के मन की थाह पाते देर न लगी।

फिर भी प्राचार्यजी बोले- ''शास्त्री की पढ़ाई पूरी कर लो। इस बार शास्त्री द्वितीय वर्ष में केवल तीन विद्यार्थी पहुँचे हैं, जिसमें सबसे मेधावी तुम हो, तुम्हारे जाने से ये कक्षा बंद हो सकती है।'' विनम्रतापूर्वक संदीप बोले- ''गुरुजी! आप ही समझाते हैं कि आत्मकल्याण का भाव बने तो देर नहीं करना चाहिए, अतः मैं भौतिक पढ़ाई छोड़ आत्मशुद्धि हेतु साधना करना चाहता हूँ।''

प्राचार्यजी संदीप को अवाक् देखते रह गए और आज्ञासूचक हाथ उठ गया। गुरु आशीष ले संदीप निकल गए। (संदीप के निकलने के बाद विद्यालय में काफी परिवर्तन हुए।)

भाग-4

मुक्ति की प्यास

गुरुदर्शन की तैयारी

प्राचार्यजी ने कहा ''आचार्य श्री सन्मतिसागरजी महातपस्वी, आध्यात्म योग संपन्न, श्रुत सिद्धांत पारंगत और इंद्रिय समूह का दमन करने वाले संत हैं। वे धर्मानुशासन के शास्ता, संघ के अनुशास्ता, हित का पोषण करने में पितृतुल्य व शक्ति देने में गुरु शक्ति के समान है। वे श्रमण संस्कृति की महाविभूति हैं। आचार्य श्री का गुणगान करने में अपनी सारी शक्ति झोंक दूँ तब भी उनके गुण नहीं गिना पाऊँगा। वे नीरस व बिना अन्न का भोजन सदैव एक दिन उपवास, एक दिन आहार चर्या कर ग्रहण करते हैं। अष्टाह्निका व पर्युषण पर्व का तो पूरा उपवासी रहकर आराधना करते हैं। पूरे भारत में उनका सा दूसरा कोई तपस्वी नहीं है।''

गुरुओं के गुरु आचार्य श्री सन्मतिसागरजी महाराज का गुणगान सुन उन महातपोधन गुरु की भावमूर्ति ब्र. संदीप के मानस पटल पर उभर आई। अपने प्राचार्यजी के श्रीमुख से उनकी प्रशंसा स्तुति सुन अब ब्र. संदीप को उनके लिए और कुछ सुनना शेष नहीं बचा था।

दृढ़ संकल्पी ब्र. संदीप ने त्वरित निर्णय लिया कि अब मुझे शीघ्रातिशीघ्र ही आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के दर्शन के लिए जाना है।

योग संयोग कहो या ब्र. संदीप का भास्वर भवितव्य। चर्चा में मित्रों ने बताया कि ''इस सदी के महान तपस्वी आचार्य श्री सन्मतिसागरजी महाराज ने सन् 1996 का चातुर्मास फिरोजाबाद में अपने गुरु प.पू. 108 श्री महावीरकीर्तिजी की जन्मभूमि में किया है। वहाँ से वे ससंघ शौरीपुर बटेश्वर, भिंड, सोनागिरि, दतिया, झांसी, करगुआ आदि जगह रास्ते भर धर्म की महती प्रभावना करते हुए अभी-अभी 30.3.1997 को बरुआ सागर गाँव (झांसी के पास) पहुँचे हैं। महावीर जयंती को अभी कुछ दिन बाकी यानी बीस अप्रैल को महावीर जयंती है। संभवतः आचार्य श्री ने वहाँ महावीर जयंती मनाने की स्वीकृति दे दी है। वहाँ बड़े जोर-शोर से तैयारियाँ चल रही हैं। क्या पता आचार्य श्री वहाँ से कहाँ, किधर विहार कर दें। हम सब उनके दर्शन करने जाने का प्रोग्राम बना रहे हैं। तुम्हारा क्या इरादा है? विचार कर शीघ्र बता देना वरना फिर हमें दोष मत देना कि बिना बताए हम चले गए।''

''इसमें विचार करने व इरादे की क्या बात है? कब जा रहे हो तुम लोग? झट-पट प्रोग्राम बनाओ। बाद में अपनी बात से फिसल मत जाना। 'शुभस्य शीघ्रम्।' शुभ कार्य में कैसी देरी? आज अभी कहो तो चल दूँ।''

दोस्तों ने मजाक करते हुए कहा, ''भाई तेरा क्या तू तो सब छोड़-छाड़ वैरागी बन गया है। हमें तो घर पर भी तो बताना होगा। पर प्रोग्राम पक्का।''

ब्र. संदीप के लिए तो बिन माँगे मन की मुरादें पूरी हो रही थी। उनकी झोली में तो एक के बाद एक नेमत टपक रही थी। योग निमित्त अपने आप बन-मिल रहे थे। उनकी मन की खुशी उनके हाव-भाव, चाल-ढाल व बोल-चाल में छलक रही थी। सब समझ रहे थे संदीप (दोस्तों के लिए तो ब्र. संदीप दोस्त ही था) आचार्य श्री के दर्शन यात्रा पर जाने की बात से इतना खुश है। दोस्तों के कहने पर संदीप ने भी माँ को खबर पहुँचा दी कि मैं बरुआ सागर (झांसी) आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के दर्शन के लिए दोस्तों के साथ जा रहा हूँ।

माँ-पिताजी भी धार्मिक थे। सोचा संदीप अक्सर आचार्यगण व साधुओं के दर्शन के लिए दोस्तों के साथ जाता रहता है। उसका और कोई शौक तो है नहीं। ठीक है, दर्शन कर वापस दोस्तों के साथ ही लौट आएगा। पर माँ का मन सशंकित हो गया। पत्नी को दुःखी होते देख पति ने कहा, ''क्या संदीप पहली बार महाराज के दर्शन के लिए जा रहा है? सो तुम इतना दुःखी हो रही है। वह तो अक्सर जाता रहता है। दर्शन कर दोस्तों के साथ वापस लौट आएगा।'' पर माँ का मन नहीं मान रहा था, फिर भी पति की बात पर विश्वास कर लिया।

बात आई गई हो गई। माँ निश्चिंत होकर कामकाज में लगने की चेष्टा करती रही किंतु फिर भी अनायास बीच-बीच में उनका मन किसी अनहोनी की आशंका से उचट जाता। वह माँ का दिल था, हो भी क्यों न? उन्हें अपने आप पूर्वाभास हो गया था!

ब्र. संदीप को याद आया कॉलेज का वह आखरी दिन। क्या पता जो कॉलेज उन्हें इतना अच्छा लगता था, क्यों आज यहाँ से मन उचट गया। वे जीवन की दोराहे पर खड़े थे। बार-बार उनके मन में यही चिंतन चलता रहता कि एक राह संसार की ओर ले जाने वाली है, जो ऊपर से भौतिक सुख संसाधनों से युक्त है, पर है वह भी कठिन, संघर्षमय। इसके बावजूद अंततः वह दुःखों व नरक निगोद की ओर ले जाने वाली है। और दूसरी राह श्रमण पथ पर ले जाने वाली। जो बड़ी दुरूह, दुष्कर, कठिन व संघर्षमय है। आसान नहीं जब दोनों में ही कष्ट व संघर्ष है तो दूसरी राह ही क्यों ना अपना ली जाए, जो कष्ट साध्य होने के बावजूद भी अनंतचतुष्ट्य जैसी सुख निधि प्रदान करने वाली है।

मैं युवा हूँ। मेरी धमनियों में गर्म रक्त बह रहा है। मैं मुनि धर्म के सारे परिषह सह लूँगा। हिमालय को फतह करने की क्षमता व चाँद पर पहुँचने वाला हौसला मुझ जैसे युवाओं में ही भरा है। यदि मैं भी अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए हौसले बुलंद कर, अपनी शारीरिक व मानसिक ताकत झोंक दूँगा तब मेरे लिए कुछ भी कठिन नहीं। मेरा अंतिम लक्ष्य तो मुक्ति प्राप्ति ही है पर वह मुनि धर्म अंगीकार किए बिना संभव नहीं। अतः मैं श्रमण चर्या के निर्वहन के लिए कटिबद्ध हूँ और वे मुनिचर्या प्राप्ति व निर्वहन की पूर्णरूपेण चुपचाप हर तैयारी करने में लग गए।

एक ओर जहाँ वे दर्शन व ज्ञान के माध्यम से आचरण को निर्मल कर चारित्र को उज्ज्वल बनाने में लग गए वहीं वे विकारों के छिलके उतार-उतार, पाप- कषायों पर नियंत्रण करते अंतरंग की विशुद्धि बढ़ाने लगे। श्रावक अवस्था में रह कर भी मन मुनि जैसा निर्मल होने लगा। दिन- प्रतिदिन उनके आचरण में निर्मलता, विचारों में विशुद्धि तथा साधना में समर्पण भाव बढ़ता जा रहा था। धीरे-धीरे वे छोटे-छोटे संकल्पों को पूरा करते आगे बढ़ते जा रहे थे। उन्हें वह दोहा अच्छी तरह याद था-

धीरे-धीरे रे मना, धीरे सब कुछ होय।
माली सींचे सौ घड़ा, ऋतु आए फल होय।

कहने को उनके लिए ये छोटे-छोटे संकल्प व नियम थे पर इनको पालन करने व पूर्ण करने वाले तो उनके जैसे असाधारण पुरुष ही होते हैं। इन्हीं नियमों व दृढ़ संकल्पों की मजबूत पकी लाल ईंटों की नींव पर आज हम देख रहे हैं ब्रह्मचारी संदीप ने पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी के रूप में श्रमण संस्था के भव्य भवन- जीवन मंदिर का निर्माण किया है। उन्हें आतुरता नहीं थी, जल्दी नहीं थी, आकुलता- व्याकुलता नहीं थी। वे गृहस्थ/ पारिवारिक जीवन में एक आज्ञाकारी व श्रेष्ठ पुत्र रहे, छात्र जीवन में सर्वश्रेष्ठ व आदर्श छात्र रहे। फिर कैसे ब्र. संदीप जिस मुनि पथ को अंगीकार करने का लक्ष्य बना चुके थे, उसे 'श्रेष्ठतम' न दे सके, श्रेष्ठतम न बना सके? निश्चित ही वे असाधारण, विलक्षण व प्रखर बुद्धि के युवा थे तब वे कैसे साधारण कार्यों से संतुष्ट हो सकते थे। जिनका व्यक्तित्व उत्कृष्ट व ऊँचा हो, जिनका चिंतन गहरा हो, जिनका आचरण परिष्कृत व परिमार्जित हो, वे ही उत्कृष्ट की ऊँचाइयों को छू सकते हैं। ब्र. संदीप उसी उत्कृष्ट साधु जीवन को प्राप्त व आचरित करने की आकांक्षा लिए बढ़ रहे थे। क्योंकि संत जीवन में जिस विरक्ति, निर्ममत्व, निर्द्वंद्व मोक्षमार्गरत मुनि की जगत पूजा करता है। ब्र. संदीप सोच रहे थे कि व्यावहारिक जीवन में संतरूप में उस 'विश्व वंदना' को स्वीकार करने की योग्यता व पात्रता होनी चाहिए। साधु के रूप में आशीर्वाद देने जब भी मेरे हाथ उठे- उन खाली हाथों में 'रत्नत्रय' की निधि भरी हो। ऐसे ही श्रेष्ठ व कर्तव्य परायण व्यक्तित्व वाले महापुरुषों ने इतिहास रचा है।

मुनिधर्म तैयारी : अंतिम विदा

ब्र. संदीप की मुक्तिपथ की यात्रा की पूर्व तैयारियाँ जोर-शोर से चल रही थी। उनमें विरक्ति की उत्ताल तरंगें लहरायमान थीं। ज्ञानार्जन व ज्ञानाभ्यास निरंतर चल रहा था। ज्ञान की सम्यकता से चारित्र/ आचरण को मांज-धोकर चमका रहे थे। मोराजी वर्णी विद्यालय के विद्वत गुरुओं का मार्गदर्शन प्राप्त हो रहा था, साधुओं का सत्संग व सान्निध्य प्राप्त करते रहे- यथाशक्ति ब्र. संदीप ने कई दिनों, महीनों या कहो वर्षों पूर्व से यह तैयारी प्रारंभ कर दी थी। अब पथिक को यात्रा प्रारंभ करने के पूर्व पहला कदम उठाना था। नन्हे शिशु की तरह उन्होंने उठना, खड़े होना, गिरते-पड़ते चलना व दौड़ना सीखा था। यह सांसारिक जीवन की यात्रा थी, लेकिन जीवन की जिस 'शिवपथ' पर चलने की महायात्रा के लिए संदीप जो कदम उठाने उद्यत थे उससे उनका मन उत्साह, उल्लास से हिलोरित था। प्रतीक्षारत थे- कब पहला कदम उठे, वे गतिपथ पर धावमान हो जाएँ।

अंततः प्रतीक्षालय- वर्णी विद्यालय छोड़ने का समय भी आ गया। ब्र. संदीप ने बड़े कृतज्ञ भाव से उस 'सरस्वती मंदिर' को नमन किया, एक-एक कर वहाँ पढ़ाने वाले गुरुजनों की भावमूर्ति को प्रणाम किया, जिनके संस्कार सिंचन व अथक परिश्रम से वह आज इस योग्य बना। अप्रत्यक्ष रूप मन ही मन वहाँ के कण-कण का आभार माना। जिनके तिल तुष मात्र सहयोग या बड़े-बड़े सहयोग/ संयोग से वह इस योग्य बन सका। अंत में सबसे क्षमा माँगी कि उसकी किसी छोटी-मोटी गलती से उनका अविनय हुआ हो, किसी के मन में कोई ठेस पहुँची हो। ब्र. संदीप ने दृढ़ निश्चय कर लिया था कि जो भी हो मेरे लिए आचार्य श्री सन्मतिसागरजी की दर ही आखरी दर है। अब इस विद्यालय में मैं इस रूप में नहीं आऊँगा।

इतने में मित्र मंडली की आवाज आई, संदीप चलो। और ब्र. संदीप दो जोड़े धोती दुपट्टा, गमछा लिए चल पड़े। धवल वस्त्रों में महाधवलता पाने के लिए।

थोड़ी देर ब्र. संदीप दोस्तों के साथ वार्तालाप में मशगुल रहे किंतु फिर उनका मौन शुरू हो गया। संदीप को चुपचाप देख एक दोस्त बोल पड़ा, ''कुछ भी हो संदीप अपने नियम का पक्का है।''

रवाना होना

मौन हो धीरे-धीरे संदीप अपने में खो गए। उनका मौन मुखर हो उठा। वे सोच रहे थे वाहन द्वारा संभवतः मेरी यह अंतिम यात्रा हो। अभी मैं दोस्तों के साथ जा रहा हूँ। शायद इनके साथ न लौट सकूँ। तभी संदीप के कानों में दोस्तों का वार्तालाप पड़ा जो आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के बारे में बातें कर रहे थे। वे चर्चा कर रहे थे कि ''आचार्य श्री महाधैर्यवान, लंबी तपस्या करने वाले व उपसर्ग विजेता हैं। उनका संघ भी बड़ा है। यद्यपि चर्या से संबंधित उनके नियम कुछ कठिन हैं। बाकी साधकों के लिए अच्छी अनुकूलताएँ हैं। तभी तो वे आए दिन शिव पथगामी साधकों को दीक्षा देते रहते हैं। वे वृद्धों को भी दीक्षा दे देते हैं। उन्हें सारे रसों व अन्न का त्याग है? वे हमेशा अष्टाह्निका (तीनों) व पर्युषण पर्व के 8 व 10 उपवास रखते हैं। उन्होंने सिंहनिष्क्रिमण जैसा महान व्रत भी किया है। उनके व्रत उपवासों की कोई गिनती नहीं है। वे महातपोनिधि व करुणानिधि हैं।'' मित्रों के मुख से आचार्य श्री सन्मतिसागरजी का गुणगान/ गुणानुवाद सुन श्रद्धा से अभिभूत ब्र. संदीप का माथा अपने आप उनके श्रीचरणों में नत-नत हो गया।

संसार की नश्वरता ने संदीप में विरक्ति के भाव कूट-कूट कर भर दिए। ''मेरी मृत्यु भी कभी भी, किसी भी पल हो सकती है।'' जब यह भाव वेदना/ विह्वलता बार-बार सिर उठाकर संदीप को अंदर तक झकझोर देती थी तब उनका ज्ञान जो वे उस विद्यालय से प्राप्त कर रहे थे, सबसे बड़ा सम्बल बना। यही ज्ञान ज्योति उनके लिए आत्म ज्योति बन गई जो बार-बार संदीप को समझाती रहती कि मोह का तिमिर आत्मा को आवृत किए हुए है। धीरे-धीरे उस ज्ञान ज्योति

ने संदीप की आत्मा से उस मोहांधकार को विदीर्ण कर दिया, छिन्न-भिन्न कर दिया और वह पतंगे की तरह उस आत्म ज्योति को पाने लालायित हो गए। अब उनके मन में आत्महित करने वाली बात जम गई थी। आत्म कल्याण की लगन लग गई थी। अतः उनकी रुचि सारी सांसारिक बातों से हट गई थी और वे आत्म शुद्धि में लग गए।

उनका अर्जित ज्ञान उन्हें प्रेरित कर रहा था कि 'सिद्धोऽहं', 'शुद्ध स्वरूपोऽहं', 'निरुपाधि स्वरूपोऽहं', 'अभावित भावस्वरूपोऽहं', 'शुद्ध भावसहितोऽहं', 'ज्ञान स्वरूपोऽहं', 'शाश्वत स्वरूपोऽहं', 'अनंत चतुष्ट्य स्वरूपोऽहं'। ब्र. संदीप सोच रहे थे कि मुझमें जब ऐसी अपरिमित क्षमता व शक्ति है तो इस पर्याय दृष्टि से शरीर, आयु व यौवन के विनाश होने से पूर्व मुझे ये शक्तियाँ अर्जित कर आत्म कल्याण कर लेना चाहिए। 'भावना भवनाशिनी' इसी आत्म कल्याण की भावना से, उन्हें बोध हुआ कि बिना गुरु के सम्यक् दिशा नहीं मिल सकती। ज्ञान को सम्यक् बनाकर गुरु ही सम्यक् राह पर चलना सिखाते हैं। गुरु ही अपनी प्रामाणिकता, क्षमाशीलता, निर्ममता, सर्वहितैषिता व शालीनता आदि जैसे गुणों से शिष्य में देवत्व के गुण भरते हैं जो कालांतर में उसे देव पद प्रदान करते हैं।

संकल्पशील ब्र. संदीप ने अपना मनोबल इतना मजबूत कर लिया था कि कितनी भी तीव्रगति के विघ्न-बाधाओं के भूकंप हो, तो भी उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता था। महाविनाशकारी सुनामी की हूँकारती उठती-उफनती लहरों का ब्र. संदीप के फौलादी इरादों पर कोई असर नहीं पड़ सकता था। मुश्किलों का उतंग हिमालय भी उनकी राह नहीं रोक सकता था। इस्पाती संकल्पों वाले युवा को मुक्ति नगर की डगर पर चलने से कोई नहीं डिगा सकता था। रास्तें में ही 'मौन' साधना में उस साधक श्रावक ने ठान लिया था कि अब उसका अंतिम उद्देश्य दीक्षा ग्रहण कर मुनिव्रत अंगीकार करना है। उन्हें विश्वास था कि उन्हें इसमें शत-प्रतिशत सफलता मिलेगी। फिर भी यदि...? तब उनकी साधना एकलव्य सी साधना होगी। चाहे जो भी हो जाए, संदीप ने दृढ़ निश्चय कर लिया था कि बस, अब मुझे गुरु द्वारे से लौटना नहीं है।

यद्यपि संदीप प्रत्यक्ष रूप में पहली बार आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के दर्शन के लिए जा रहे थे, पर उनके बारे में बार-बार सुन-सुनकर वे उनके लिए इतने अपने से हो गए थे कि अब पल-पल उनके दर्शन की आतुरता बढ़ती जा रही थी। पर मन में धुगधुगी लगी थी क्या पता मुझे वे स्वीकारें या नहीं। यह तो मेरी गुरु की खोज है पर उन्हें कैसे शिष्य चाहिये, इसका तो मुझे पता ही नहीं है।

प्रथम गुरु दर्शन : बरुआ सागर

जैसे ही संदीप बरुआ सागर पहुँचे, गुरु दर्शन की उनकी आतुरता चरम पर थी। उनकी भाव विह्वल आँखें गुरु की तलाश में थी। खोजते- खोजते वे बरुआ सागर (झांसी) चंद्रप्रभु जिनालय के पास बने उस संत भवन में पहुँच गए, जहाँ आचार्य श्री ससंघ विराजित थे।

कक्ष के बाहर से ही जैसे ही ब्र. संदीप ने उन ध्यान योगी सन्मतिदाता आचार्य श्री सन्मतिसागरजी महाराज के चरणाम्बुजों के दर्शन किए, पलकें उठाकर उन्हें देखा, पल भर में उनकी नख से शिख तक प्रशांत मुद्रा नयन द्वार से हृदय में उतर गई। उन्हें लगा यह महाविभूति जीवन की समग्र अनुभूतियों का भंडार है, उतंगता का उतंग शिखर है, सूरज की सौरऊर्जा (अक्षय ऊर्जा) का अक्षय प्रभा पुंज है, शरद शशि की शीलता का सुधा कुंड है, यश कीर्ति फैलाता पुष्पलताओं का सुरभित निकुंज है और ये महोदधि भगवान महावीर की सच्ची विरासत सुख-शांति के वारिस हैं।

ब्र. संदीप को उन दिव्यमूर्ति आचार्यवर को देख एक सूत्र याद आ गया-

ध्यानमूलं गुरुमूर्तिः, पूजामूलं गुरु पदं।
मंत्रमूलं गुरुर्वाक्यं, मोक्षमूलं गुरुकृपा।।

अर्थात गुरु मूर्ति की 'प्रशांत मुद्रा' ध्यान का कारण है, गुरु के पूज्य चरण पूजा के उत्तम साधन है। गुरु के दिव्य वचन मंत्र के मूल शब्द हैं और गुरु की कृपा मोक्ष/ आत्म कल्याण का कारण है। ऐसे गुरु मुझे मिल गए हैं अतः अब मुझे इन्हीं गुरु का ध्यान करना है, इन्हीं के पाद पद्मों की पूजा करना है। इन्हीं की दिव्य देशना सुनना है और इन्हीं की कृपा दृष्टि प्राप्त करना है।

उन भावमूर्ति आचार्यवर के दूर से दर्शन कर ब्र. संदीप इतने भाव-विभोर हो गए, इतने आत्म विस्मृत हो गए कि उनकी समझ-सूझ चूक गई। वे तो यह भी भूल गए कि वे यहाँ क्यों आए हैं? वह आँखें मूंदे गुरु द्वार पर खड़े रहे। उन्हें लगने लगा कि इन प्रभात के अरुणिम अरुण के दर्शन, ज्ञान व चारित्र की बिखरती सहस्त्रों रक्तिम रश्मियों ने उनके जीवन में सुप्रभात ला दिया है। संदीप के जीवन की बगिया हजारों-हजार खुशियों के फूलों से लहक-महक उठी है। वे आचार्यवर के दर पर खड़े तो स्थिर थे किंतु उनका मौन मन बार-बार उन आध्यात्म योग संपन्न, श्रुत सिद्धांत पारंगत, इंद्रिय समूह का दमन करने वाले, दीक्षा व शिक्षा देने वाले, पंचाचार से युक्त, वात्सल्य निधिपति आचार्य श्री सन्मतिसागरजी की बाहर से ही नत-नत वंदना कर रहा था।

अचानक श्वेत धोती-दुपट्टा धारी ब्र. संदीप की तंद्रा टूटी। उन्होंने देखा कि आचाार्यश्री सन्मतिसागरजी बरुआ सागर (झांसी) के चंद्रप्रभु जिनालय के पास बने मुनि भवन में भूमि पर विराजित पूरे संघ के साथ नित्य क्रिया व प्रतिक्रमण कर रहे थे। उन्होंने स्वयं को संभाला व उनके सम्मुख जाकर बड़े विनीत व आदरभाव से आचार्य श्री के श्रीचरणों में अष्टद्रव्य का अर्घ्य चढ़ाया व त्रय भक्ति योगों से सविनय आचार्य श्री की चरण वंदना की। पुनः पुनः नमोस्तु किया व व्यवस्थित जगह देख बैठ गए। गुरु शिष्य का यह प्रथम मिलन था।

फूलों की डाली सा झुक-झुक कर उस युवा द्वारा किए गए भक्ति, समर्पण, वंदन से गुरुदेव अभिभूत थे। पहली नजर में ही बिना पूछताछ किए गुरु की पारखी नजरों ने उस युवा के व्यक्तित्व से झलकती उसकी प्रतिभा पहचान ली। और उस युवा ने तो बिन कहे- बोले ही अपनी छाप गुरु हृदय पर छोड़ दी। ब्र. संदीप के श्वेत धवल वस्त्र व विनीत आचरण को देख वात्सल्य रत्नाकर आचार्य श्री ने मृदुवाणी में पूछ लिया, ''ब्रह्मचारीजी, कहाँ से आए हो?'' संदीप के कर्ण कुहरों में तो जैसे वीणा की झंकार झंकृत हो उठी। संदीप को विश्वास नहीं हो रहा था, प्रतिक्रमण के तुरंत बाद आगे की क्रिया रोक आचार्य श्री उससे परिचय पूछ लेंगे।

ब्र. संदीप ने बड़े विनीत भावों से अत्यंत संक्षिप्त में अपना पूर्ण परिचय व्यक्त किया। इसके पश्चात स्वाध्याय/ वाचना शुरू हो गई। संदीप तो वहीं के होने आए थे। अतः वे स्वाध्याय में बैठ गए।

स्वाध्याय के बीच तत्त्वचर्चा हो रही थी व आचार्य श्री अनेक प्रश्न पूछ रहे थे। ब्र. संदीप बड़े ध्यान से सुन रहे थे। ग्रंथ तो उनके पास था नहीं, किंतु गहन ज्ञान के आधार पर वे आचार्य श्री के प्रश्नों का सटीक जवाब दे रहे थे। एक-दो बार तो आचार्य श्री की आज्ञा से उन्होंने तर्क के माध्यम से अपनी बात रखी। प्रश्नों के माध्यम से आचार्य श्री ने इस युवा ब्रह्मचारी की जहाँ-जहाँ से थाह मापी वहाँ- वहाँ गहराई मिली, कहीं उथलापन नजर नहीं आया। गुरु द्वारा बिना परीक्षा लिए और बिना परीक्षा दिए ब्र. संदीप आचार्य श्री सन्मतिसागरजी की नजरों के नूर बन गए, मन के हूर बन गए। आचार्य श्री आज बड़े प्रसन्न थे। उन्हें लगा बिना खदान की खुदाई के भी गणेशप्रसाद वर्णी संस्कृत विद्यालय का यह हीरा खुद-ब-खुद उनके पास चला आया है। जैसे कोई अदृश्य शक्ति उन्हें उस युवा की ओर खींच रही थी। आचार्य श्री को आभास हो रहा था कि दिखने में दुबला-पतला, छरहरे बदन का यह सीधा- सरल युवा असाधारण व्यक्तित्व व विलक्षण प्रतिभा का धनी है। उन्हें ऐसे ही युवा शिष्यों की जरूरत है जो दयामयी, अहिंसामयी जिनधर्म का रथ अपने मजबूत कांधे पर रख खींच सके। जैसे आचार्य धरसेन को नरवाहन व सुबुद्धि मुनि के रूप में आचार्य श्री पुष्पदंत व आचार्य श्री भूतबलि मिल गए थे। मुझे भी वैसे ही शिष्य रूप में यह ब्र. संदीप मिला है? इसके श्वेत वस्त्र इसके उच्च

लक्ष्य के द्योतक हैं! अब मैं इस हीरे को खोने नहीं दूँगा।

गुरु निर्णय- शिष्य चिंतन

फिर आचार्य श्री सोच में पड़ गए। अरे! अभी तो मेरी उससे कोई बातचीत भी नहीं हुई है। हो सकता वह तो दोस्तों के साथ शायद दर्शन को आया हो। पर उनकी जौहरी निगाहों ने उसकी प्यास व चाह की थाह नाप ली थी, तभी किसी श्रावक ने उनके कक्ष में प्रवेश किया। चूँकि आचार्य श्री का उपवास था अतः वे आहार पर नहीं उठे थे। आचार्य श्री ने उससे कहा ''सागर वर्णी विद्यालय के कुछ बच्चे आए हैं, भोजन की व्यवस्था करवा देना। और हाँ ब्रह्मचारीजी को किसी चौके में भिजवा देना।''

वापस आकर श्रावक ने कहा, ''आचार्य श्री, बाकी की तो व्यवस्था कर दी पर ब्रह्मचारीजी का आज उपवास है।'' ''उपवास?'' ''हाँ।'' आचार्य श्री तो और खुश हो गए 'सोने पे सुहागा।' व्रत उपवास भी अभी से रखता है। यह तो बहुत अच्छी बात है।

आचार्य श्री सन्मतिसागरजी सोच रहे थे यह युवक, युवक क्या अभी बच्चा है, जो गणेश प्रसाद वर्णी संस्कृत विद्यालय मोराजी का छात्र है। सागर प्रवास में मुझसे वहाँ के प्रकांड विद्वान व पंडित शिक्षक मिले हैं। उन्हीं का पढ़ाया शिष्य है। पढ़ाई के प्रति इसमें रुचि व लगन होगी तभी तो इसे इतना ज्ञान है। ऐसे ज्ञानी शिष्य की इस संघ को नितांत आवश्यकता है। आज ऐसे युवा कहाँ दिखते हैं?

आचार्य श्री थोड़े से परिचय में उसमें अवस्थित एक श्रेष्ठ शिष्य के गुणों से परिचित हो गए थे। गुरु दर्शन समर्पण में ही उसकी गुरु भक्ति छ्लक पड़ी थी। संसार के दुःखों से भयभीत है, तभी तो उसने सारे सांसारिक सुखों का त्याग कर इतनी छोटी सी उम्र में आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ले लिया। इसका ब्रह्मचर्य व्रत इसके इंद्रियजयी होने का प्रमाण है। इसकी विनयशीलता तो इसके आचरण व वाणी से मधु छत्ते से शहद की भाँति टपकती रहती है। धार्मिक प्रवृत्ति का है तभी तो यहाँ तक इतनी दूरी तय करके आया है। इसके मन की शांति इसके चेहरे से झलकती है। निरालस्य व पुरुषार्थी है तभी तो इतना ज्ञान अर्जित कर सका है। आगे बढ़ने की इसकी प्यास यथावत है।

आचार्य श्री मन ही मन सोच रहे थे, यहाँ इतने लोग आते हैं, पर इस बच्चे ने तो जरा सी देर में ही मेरे मन-मानस में हलचल मचा दी। सच बात है विद्वानों व गुणीजनों की सब दूर पूजा होती है। बिना बोले वे अपने व्यवहार से अपना परिचय दे देते हैं।

संदीप के मन में हलचल

जैसी गुरु की स्थिति थी वैसी ही स्थिति इधर शिष्य ब्र. संदीप की भी थी। अभी तक उन्होंने उनकी तस्वीर देखी थी। उनके बारे में सुना था, पर आज पुण्योदय से उन महाज्योतिपुंज आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के साक्षात दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हो गया। उनके दर्शन मात्र से कुछ क्षणों के लिए उनका कंठ अवरुद्ध हो गया। पर उन्होंने स्वयं को संभाल लिया, विवेक जाग्रत हो गया, ज्ञान मुखर हो उठा, पुरुषार्थ परवान चढ़ गया और इन सब गुणों ने मिलकर आचार्य श्री को संदीप का परिचय दे दिया, उनके निकट ला दिया।

एकांत में संदीप उन निष्काम, मुक्तिकामी आचार्य श्री के बारे में सोचते रहे, संदीप के पास उन्हें देने के लिए कोई उपमा शेष नहीं बची थी। शब्द मौन थे- कहाँ से लाए उनकी स्तुति के लिए शब्द? ब्र. संदीप का मन एकदम शांत हो गया था। विकलताओं की उर्मियाँ कहाँ विलीन हो गई, पता ही नहीं चला। ऐसी शांति और निराकुलता का संदीप ने आज तक अनुभव नहीं किया था। ब्र. संदीप की मनोस्थिति कुछ इस प्रकार की हो गई थी।

''भ्रांतियों के किले की, प्राचीरें सारी ढह गईं।
मन में उहापोह कोई, शेष ना अब रह गई।
श्रमण पद पाने का मन आंगन में दीपक जल गया था।
उसमें था आलोक जो उससे स्वयं वह भर गया था।
थी ललक मन में कि कैसे भी श्रमण पद पा सकूँ।
एक ही थी चाह पद साधु का मैं अपना सकूँ।
लग गई थी धुन इक ही, चैन ना अब पल को था।
लगन बनने की 'नगन' बिसरा न पाया क्षण को था।''

ब्र. संदीप इतने छोटे से सत्संग व सान्निध्य से ही आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के रंग में रंग गए। वे जिधर भी देखते उन्हें आचार्य श्री ही दिख रहे थे। उन्हें सारा वातावरण आचार्यमय ही दिख रहा था। इसके अलावा कुछ भी सूझ नहीं रहा था। जो खुशी भगवान कुंदकुंद को सीमंधर स्वामी को देखने से हुई होगी, जो आत्मतुष्टि नरवाहन व सुबुद्धिमुनि को धरसेनाचार्य के श्रीचरणों में पहुँचने पर हुई होगी, जो रोमांच चंदनबाला को भगवान महावीर के दर्शन से हुआ होगा वैसी ही खुशी, वैसी ही आत्म संतुष्टि और वैसा ही रोमांच आचार्य श्री के दर्शन कर ब्र. संदीप के रोम-रोम से फूट रहा था।

दीक्षा का निवेदन

उनकी निगाहें घड़ी के कांटे पर टकटकी लगाए थी कि कब आचार्य श्री का सामायिक पूर्ण हो और वे जाकर उनके चरणों में अपना हृदय अर्पित कर दें, अपना जीवन समर्पित कर दें। गुरुवर से बड़ा प्रियतम आज उनके लिए कोई नहीं था। अब इस बीच के समय का एक-एक पल बिताना उनके लिए भारी पड़ रहा था। उन्होंने मुक्ति महाफल प्राप्ति का प्रतीक श्रीफल अपने हाथों में लिया व चल पड़े गुरु द्वारे। कभी अभीष्ट की वांछा में पैर सीधे नहीं पड़ रहे थे तो किंकर्तव्यविमूढ़ पता ही नहीं चल रहाथा कि कहाँ कैसे चल रहे हैं। जिंदगी का सबसे बड़ा लक्ष्य हासिल करने जा रहे संदीप गुरु चरणों में अपनी अर्जी लगाने जा रहे थे। धुक-धुकी लगी थी। क्या पता निवेदन स्वीकार होता है या खारिज? पर उन्हें अपनी साधना पर अटल विश्वास था कि गुरुवर उन्हें निराश नहीं करेंगे।

बढ़ रहे थे ब्र. संदीप गुरु दर की ओर। जैसे-जैसे निकटता आ रही थी उनका मन खुशी से बांसों उछलने लगा, हृदय मचल उठा, आँखों में चमक भर गई, पाँव थिरकने लगे। उनकी चाल-ढाल, हाव-भाव सब बदला-बदला सा लग रहा था। वे चाहते थे मैं व गुरुवर बस दो ही, दो के बीच कोई तीसरा न हो। और अंततः दरवाजे पर जा पैर ठिठक गए।

हल्की सी आहट पा आचार्य श्री की पलकें उठीं। सौम्य मूर्ति, शिष्ट ब्र. संदीप को सामने पा आचार्य श्री के मुख पर मुस्कान आ गई। उन्होंने संदीप को इशारे से अंदर बुला लिया। बिना एक पल गंवाए ब्र. संदीप गुरु चरणों में पहुँच गए।

चरणों में श्रीफल अर्पित कर, चरण पकड़ लिए, चरणों में माथा ढार दिया। अश्रुनीर से गुरु पाद प्रक्षालन होने लगा। बिना कहे ही मन की बात कह दी और गुरु ने भी बिना सुने उनके मन की बात पढ़-बांच ली। दोनों ने ही एक-दूजे के मन की बात समझ ली। खुशी के अतिरेक में ब्र. संदीप इतना ही कह पाए, गुरुवर मुझे अपना लो। अपना शिष्य बना लो। मैं हमेशा- हमेशा के लिए इन चरणों का होने आया हूँ। आपकी कृपा की छत्र-छाह पाने आया हूँ।

ब्र. संदीप के हाथ गुरु चरण पकड़े थे। माथा थोड़ा ऊपर उठाया। हृदय की बात जिह्वा पर आ ही गई। वे मन ही मन बुदबुदाने लगे-

'आत्मदृष्टा' आत्मदर्शन कराए वो आइना दो
मोह तिमिर मिटा सकूँ वो 'ज्ञानसूर्य' प्रकाश दो
हूँ कली बन पुष्प महकूँ तुम मुझे विकास दो
सत्य की मैं खोज कर लूँ, मार्ग का वह भास दो।

स्वीकृति

सजल नयनों से ब्र. संदीप गुरु चरण पखारते आगे इतना ही कह पाए-

'लक्ष्य तक ले जाए कर लूँ साधना व्याकुल बहुत हूँ।
मुक्तिकामी बन सिद्धासन पा सकूँ आकुल बहुत हूँ।
देकर अपनत्व अपना सा बना लो गुरु मुझे।
जला दो इक 'दीप' दीपक जलाए कितने बुझे।'
बीच मझधारों में कश्ती खे के इसको पार दो।
ओ खिवैया भव समन्दर से मुझे उस पार कर दो।

ब्र. संदीप ने बड़े विनीत भाव से आचार्य श्री से निवेदन किया। ''गुरुवर आप मुक्ति पथ के महापथिक हैं, मुझे भी इस पथ का पथिक बना लें। अपने वामन डग से मैं आपका अनुशरण कर लूँगा।''

कहने को आचार्य श्री का बहुत बड़ा संघ था। योग्य व विद्वान साधु- साध्वियाँ थे, लेकिन संदीप में उन्हें कुछ अलग ही नजर आया। आगंतुक अनजान ब्र. संदीप की उस विनयशीलता में ही उसका ज्ञान झलक गया। महान आचार्य ने समझा कि ज्ञान से ही इस युवा में इतनी विनम्रता आई है। जैसे रामकृष्ण परमहंस को नरेंद्र (विवेकानंद) को पाकर जो खुशी हुई थी, महान आचार्य धरसेन को मुनि नरवाहन एवं सुबुद्धि को देखकर जो खुशी हुई थी, आज आचार्य श्री सन्मतिसागरजी को ब्र. संदीप को पा वैसी ही खुशी हो रही थी। आचार्य श्री ने संदीप की बात के बीच में ही पूछ लिया, ''ब्रह्मचारीजी अध्यात्म के क्षेत्र में क्या-क्या पढ़ाई की है।''

ब्र. संदीप की आँखों में चमक आ गई। बड़ी विनम्रता से उन्होंने कहा ''भगवन्! मैंने कुछ नहीं पढ़ा। मेरा जीवन कोरी स्लेट है, कोरा कागज है? मुझे तो आपसे पढ़ना है। आप जो पढ़ाएँगे, मैं वही पढूँगा। आप जो लिखना सिखाएँगे, वही लिखना सीखूँगा। मुझे तो चलना भी नहीं आता, आप उंगली पकड़कर जहाँ ले जाएँगे, आपके पीछे-पीछे चल पड़ूँगा। आपका पथ ही मेरा पथ होगा। आपका लक्ष्य ही मेरा लक्ष्य होगा। आपके जागने से पहले मेरी सुबह व आपके सोने के बाद मेरी रात शुरू होगी। आप जहाँ ले जाकर बिठा देंगे, बैठ जाऊँगा। अभी तो मेरा जन्म ही नहीं हुआ।'' संदीप का गला भर आया। आगे वे न बोल सके।

आचार्य श्री को संदीप से ऐसे उत्तर की न तो कल्पना थी न ही अपेक्षा। वे तो कुछ और ही सुनना चाहते थे कि ब्रह्मचारीजी बताएँगे कि अमुक अमुक शास्त्र पढ़े। पर इसके उत्तर ने उनके ज्ञान की गहनता बता दी। दर्शन, ज्ञान व आचरण की सम्यकता की परीक्षा तो संदीप ने सबेरे आते ही दे दी थी। गुरु के प्रति ऐसा व इतना समर्पण देख आचार्य श्री का हाथ संदीप के माथे पर आशीर्वाद को उठ गया। ब्र. संदीप के बारे में आचार्य श्री की धारणा पक्की हो गई। अब उन्हें संदीप से कुछ नहीं पूछना था। उन्हें संदीप में वर्तमान व भविष्य की अनंत संभावनाएँ नजर आ रही थी। उसमें समय से पार देखने की क्षमता उन्हें दिख रही थी। आचार्य श्री सोच रहे थे ब्र. संदीप ने बिना बताए अपनी विद्वत्ता का आईना दिखा दिया था। कोई साधारण युवा भला ऐसी बातें कर सकता है? वे सोच रहे थे-

विश्व का उद्धार युवाओं के हाथों हो सका है।
शक्ति हिम्मत से असंभव भी संभव हो सका है।
आत्म हित के साथ ही यह जगत का भी हित करेगा।
और प्रभुवाणी से सुरभित धरा का कण-कण करेगा।

आचार्य श्री सन्मतिसागरजी ने ब्र. संदीप के निवेदन पर उनकी दृढ़ता देख उन्हें दीक्षा देने की स्वीकृति दे दी। इधर ब्र. संदीप ने तो डायरेक्ट मुनि दीक्षा की ही याचना की थी। उन्होंने कोई ऑप्शन नहीं रखा था। एक बार मुनि बन गए, बेड़ा पार। बार-बार की झंझट कैसी? यह सोच थी ब्र. संदीप की। आचार्य श्री को भी संदीप पर भरोसा था कि वह बहुत अच्छे से मुनि पद का निर्वहन कर लेगा। ब्र. संदीप की तो लाटरी ही खुल गई। प्रथम बार में ही सबसे बड़ा आध्यात्म जगत का जेकपाट हाथ लग गया। उनकी खुशी का ओर-छोर नहीं था। आचार्य श्री ने संदीप के बारे में बिना किसी छान-बीन किए संदीप को मुनि दीक्षा देने का त्वरित निर्णय ले लिया। उनके इस निर्णय से संघ अवाक् था।

आचार्य श्री ने महावीर जयंती के दिन दीक्षा की तिथि निश्चित कर दी। यह कहते हुए कि महावीर जयंती के दिन एक और महावीर का लघुनंदन जन्म लेगा। फिर क्या था? सुनते ही ब्र. संदीप ने आज जो उपवास रखा था, उसे महावीर जयंती दीक्षा दिवस तक यथावत रखने का संकल्प ले लिया। आज ब्र. संदीप को आचार्य श्री सन्मति यूनिवर्सिटी में प्रवेश के लिए पात्र घोषित कर दिया गया था। आचार्य श्री ने उन्हें अपने माता-पिता व परिजनों को बुलाने की आज्ञा दी। ब्र. संदीप की दीक्षा की बात चारों तरफ हवा की तरह कुछ ही समय में फैल गई।

जब आचार्य श्री के दर्शनार्थ ब्र. संदीप के साथ आए दोस्तों को खबर लगी कि संदीप महावीर जयंती के दिन मुनि दीक्षा ग्रहण कर रहे हैं, उनके तो पैरों तले की जमीन ही खिसक गई। बिना किसी को कानोंकान खबर पड़े संदीप ने अकेले जीवन का यह कड़ा व कठिनतम इतना बड़ा निर्णय ले लिया? सागर जाने पर सब संदीप की दीक्षा लेने का जिम्मेदार हम ही को ठहराएँगे। उसे हम ही बहला-फुसला दीक्षा दिलाने आचार्य श्री के पास ले गए। संदीप के मम्मी-पापा तो हमें कभी माफ नहीं करेंगे। उनका प्यारा इतना अच्छा व घर का सबसे बड़ा बेटा इतनी जल्दी दीक्षा ले लेगा? सोचकर ही वे रो पड़े। सबके सब बेतहाशा भागते-दौड़ते, ढूंढते हुए संदीप के पास पहुँचे। समवेत स्वर में सबने एक साथ पूछा, ''संदीप! हम क्या सुन रहे हैं? तुम मुनि बन रहे हो? दोस्त कुछ सोच-समझकर निर्णय लो। देख नहीं रहे हो? मुनिचर्या, मुनि जीवन कितना कठिन है। निभा पाओगे? दूसरा, घर का सबसे बड़ा व योग्य बेटा होने के नाते घर की जिम्मेदारियाँ भी तो तुम पर है। ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए घर की जिम्मेदारियाँ निभाकर पिताजी को थोड़ा सहारा देते, अपनी पढ़ाई पूरी करते फिर दीक्षा लेने की बात सोचते।''

माता-पिता व गुरुगणों को संदीप का संदेश

दोस्त लोग आगे बात बढ़ाते उससे पहले ही ब्र. संदीप ने उन्हें आगे कुछ कहने से रोक दिया। वे बोले, ''दोस्तों, तुम्हें मेरा यह निर्णय निश्चित ही अटपटा लगा होगा। पर मैंने बहुत पहले से ही दीक्षा लेने का तय कर लिया था। आज मुझे योग, संयोग, निमित्त, अवसर, गुरु सब एक साथ मेरे मन के मिल गए। ऐसा महा संयोग मुश्किल से मिलता है वरना व्यक्ति को कहीं न कहीं समझौता करना पड़ता है। मुझे अभीष्ट लक्ष्य की प्राप्ति के लिए किसी भी प्रकार का समझौता नहीं करना पड़ा। भगवद् कृपा कहो या गुरु कृपा- मुझे सब कुछ मनमाफिक मिला है। यदि मन चीता हो जाता है तब कठिन से कठिन रास्ता भी आसान हो जाता है। वरना चर्या ही बोझ सी लगती है। बेमन से कोई श्रेष्ठ कार्य संपादित

नहीं होता। मुझे आज श्रेष्ठ नहीं सर्वश्रेष्ठ मिल गया है।''

''मैं इसके लिए सबसे पहले पूज्य श्री गणेशप्रसादजी वर्णीजी व उनके द्वारा स्थापित उस विद्यालय के प्रति कृतकृत्य हूँ, जहाँ रहकर पढ़ाई कर मैंने मुनि बनने की योग्यता व पात्रता अर्जित की। तुम लोग मेरे दो काम करना- सच्चे दोस्तों के नाते मैं तुम लोगों को ये जिम्मेदारी सौंप रहा हूँ।'' (वे सब एक-दूसरे की ओर प्रश्नवाचक दृष्टि से देख रहे थे)

संदीप, ''पहली बात कि मोराजी विद्यालय के उन समस्त गुरुजनों के चरणों में एक छात्र के नाते मेरा अंतिम प्रणाम निवेदित् करना क्योंकि महावीर जयंति पर मुनि दीक्षा लेने के बाद मेरी मुनि धर्म की मर्यादाएँ होंगी। तब मैं उन्हें प्रणाम नहीं कर सकूँगा। फिर मैं गुरु के रूप में उन्हें नमन नहीं कर सकूँगा, लेकिन वे सब हमेशा मेरे पूज्य रहे हैं व रहेंगे। उनके दिए अध्यात्म आत्मबोध के ज्ञान ने मेरे आत्म चक्षु खोल गुरु चरणों तक पहुँचा, मेरा उद्धार कर दिया। उन परम हितैषी एक-एक गुरुवर को मेरा नमन, वंदन व प्रणाम कहना। उनसे कहना मैं उनका चिर ऋणी हूँ। दूसरी बात किशुनगंज प्रत्यक्ष कल ही जाकर मम्मी-पापा को मेरा संदेश पहुँचा देना कि मैं आत्मकल्याण की राह पर चल पड़ा हूँ। मुनि दीक्षा लेकर मेरा दूसरा जन्म हो रहा है। पहला तो मुझे उनके आशीर्वाद व आज्ञा की जरूरत है। माँ-पिता से बड़ा दुनिया में कोई नहीं है। वे ही मेरे सच्चे हितैषी हैं। वे यहाँ जल्द से जल्द आ जाएँ। मैं उनका इंतजार करूँगा।

''अंतिम व तीसरी बात आप सब मेरे दोस्तों व सहपाठियों के लिए। मेरे जीवन निर्माण व अभीष्ट लक्ष्य तक पहुँचाने में आप लोगों का जो सहयोग रहा वह किसी से छिपा नहीं है। आप लोगों के साथ आचार्य भगवन विद्यासागरजी महाराज के दर्शन करने गया और आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत की महाप्रसादी मिल गई। तुम लोगों के निमित्त से ही राजपथ पर पहुँचने की पगडंडी मिल गई। और आज का यह महाशुभ दिन। यह भी तो तुम्हारे निमित्त की देन है। प्रोग्राम तो तुम्हारा ही था न? मुझे तो तुम 'चलना है क्या?' पूछने आए थे। तुम्हारे प्रोग्राम की बदौलत यहाँ तक पहुँच गया व आज दीक्षा लेने का महा सुअवसर मिल गया।'' उनके कंधे थपथपाते हुए संदीप ने कहा, ''देखो दोस्तों संसारी जीवन व संन्यस्थ जीवन दोनों में संघर्ष है ही। संसारी जीवन का संघर्ष हमारे अनंत संसार का कारण है, किंतु संन्यस्थ जीवन का संघर्ष संसार के दुःखों व परिभ्रमण को समाप्त कर देने वाला है। एक दिन आत्मकल्याण की इच्छुक प्रत्येक जीवात्मा को वीतरागी दिगम्बर मुद्रा धारण करना ही होगी और वही मैं कर रहा हूँ। तुम्हारा मार्ग व जीवन भी मंगलमय हो।''

''समय अत्यल्प था। माता-पिता की आज्ञा व उपस्थिति के बिना दीक्षा नहीं हो सकती थी। अतः फिर से संदीप ने दोस्तों से आग्रह किया कि वे उनकी महावीर जयंति पर दीक्षा लेने की खबर किशुनगंज जाकर माता-पिता को दे दें। उन्हें व परिजनों को इस दीक्षा के अवसर पर बरुआसागर आने का मेरी ओर से सविनय आग्रह करना। मेरे पास वक्त बहुत कम है। तुम लोग शीघ्र यहाँ से प्रस्थान कर मेरे संदेश शीघ्रातिशीघ्र निर्दिष्ट स्थानों पर पहुँचा देना।'' अनासक्त निर्मोही संदीप की खुशियाँ उसकी प्रत्येक चेष्टा से झलक रही थी। मोहावृत्त दोस्तों की आँखों से सावन-भादों बरसने लगा। वे किंकर्तव्यविमूढ़ पत्थर के बूत की तरह खड़े थे। भावनाओं को नियंत्रण कर आँखें पोंछ उन्होंने देखा- मित्र ब्रह्मचारी संदीप वहाँ से कबके जा चुके थे।

आचार्य श्री द्वारा भी किशुनगंज ब्र.संदीप के घर उनकी होने वाली मुनि दीक्षा की खबर पहुँचा दी गई थी।

पक्षी घोंसलों की ओर लौट रहे थे। गायें रंभाती अपने-अपने बाड़े की ओर बछड़ों से मिलने की आतुरता में दौड़ी चली आ रही थी। हर किसी को गंतव्य तक पहुँचने की जल्दी थी।

सजल नयनों से संदीप के दोस्त भी चल पड़े। आते वक्त संदीप का मौन था। वे सब बातें कर रहे थे। अब जाते वक्त संदीप साथ नहीं थे, पर वे सब चुप थे। उनकी चुप्पी में भी 'संदीप का मौन' साथ चल रहा था। चारों ओर उदासी पसरी थी। सब थे पर संदीप नहीं था।

ब्र. संदीप के दोस्तों ने संदीप के दोनों संदेश किशुनगंज संदीप के माता-पिता को तथा वर्णी विद्यालय के समस्त

गुरुजनों तक पहुँचा दिए। जिसने भी यह बात सुनी, सब स्तब्ध थे। सबके मुँह से एक ही बात निकली ''हमें तो लग ही रहा था कि संदीप अब ज्यादा दिन विद्यालय में नहीं टिकेंगे।'' प्रार्थना सभा में संदीप का संदेश सुनाया गया व बताया गया कि उनका सहपाठी महावीर जयंति के दिन आचार्य श्री सन्मतिसागरजी से बरुआ सागर में मुनि दीक्षा लेने वाला हैं। हम सबको इस महोत्सव में जाना चाहिए। हर किसी के मुख से संदीप के लिए प्रशंसा के फूल झर रहे थे।

इधर पूरे सागर में भी 'ब्र. संदीप- गणेश वर्णी विद्यालय के छात्र मुनि दीक्षा ले रहे हैं।' बात जंगल की आग की तरह फैल गई। संदीप को सागर का हर व्यक्ति जानता था। हर कोई उनकी प्रतिभा का लोहा मानता था। जो कोई सुनता, यही कहता, ''उनमें विरक्ति कूट-कूटकर भरी थी। आज नहीं तो कल संदीप दीक्षा लेते ही।''

इधर किशुनगंज में भागचंदजी के घर जैसे ही यह खबर पहुँची कि संदीप की महावीर जयंति पर मुनि दीक्षा होने वाली है, कोहराम मच गया। माँ मुन्नीदेवी तो गश खाकर गिर पड़ी। भाई-बहनों का रो-रोकर बुरा हाल था। बात सुन भागचंदजी दुकान से दौड़े-दौड़े घर आए। बच्चों व पत्नी का हाल देखकर वे अपना दुःख तो भूल ही गए। पानी के छींटे दे-दे पत्नी को होश में लाए। वे उसे समझाने लगे, ''पगली रोती क्यों हो? अभी संदीप दीक्षा लेने वाला है, ली थोड़े ही है। अभी महावीर जयंति के तीन-चार दिन शेष हैं। हम कल सुबह ही बरुआ सागर चलते हैं, उसे समझा-बुझाकर घर ले आएँगे। हम अब उसे यहीं दुकान डलवा देंगे। नजरों के सामने रहेगा। चलो उठो, बरुआ सागर जाने की तैयारी करो।''

जिसने भी यह खबर सुनी, भागचंदजी के घर दौड़ा चला आया। आस-पड़ोस, जान-पहचान, नाते-रिश्तेदार यहाँ तक कि अनजान लोगों का भी भागचंदजी के घर मेले सा लग गया। संदीप किशुनगंज के होनहार, संस्कारी व प्रतिभाशाली युवक थे। अब तो किशुनगंज के हर घर में सिर्फ और सिर्फ एक संदीप की मुनि दीक्षा लेने की चर्चा ही थी।

होश में आने पर मुन्नीदेवी ने जिद पकड़ ली, कुछ भी हो मुझे अभी का अभी संदीप के पास चलना है। उन्होंने नियम कर लिया कि जब तक वे बेटे संदीप को देखेंगी नहीं, उन्हें अन्न-जल का त्याग है। सारे रिश्तेदार भी उन्हें ढांढस बंधा रहे थे कि हम संदीप को वापस लिवा लाएँगे। पत्नी की जिद देखते हुए भागचंदजी पूरे परिवार के साथ बरुआ सागर चल पड़े। रिश्तेदार, अड़ोसी-पड़ोसी व मित्रगण भी साथ हो लिए। दूसरे दिन किशुनगंज, तिगोड़ा से और भी कई लोग बरुआ सागर पहुँच गए थे।

रास्ते भर बेटे के मोह में डूबी माँ रोती रही और भागचंदजी व रिश्तेदार उन्हें समझाते रहे कि माता-पिता की स्वीकृति के बिना आचार्य श्री संदीप को दीक्षा दे ही नहीं सकते। संदीप को भी हमसे आज्ञा लेनी पड़ेगी। जब हम आज्ञा व स्वीकृति नहीं देंगे तो दीक्षा कैसे होगी?

पर मुन्नीदेवी से ज्यादा संदीप को कौन जानता था। उन्हें पता था कि अब संदीप घर वापस नहीं लौटेगा। वह इरादे का पक्का है। जो ठान लेता है, करके ही छोड़ता है व निभाता भी है। यदि हम उसे जोर-जबरदस्ती से घर ले भी आए, उसका मन कभी घर में नहीं लगेगा। जिसको परमात्म पद पाने की लगन लग गई उसके लिए घर कोई चीज नहीं, वह तो फिर घर से चला जाएगा। ऐसी अनेकों बातें सोच-सोच कर मुन्नीदेवी की रूलाई फूट पड़ती थी। पर वह कर भी क्या सकती थी।

गुरुवाणी : आदर्श जीवन के सूत्र

इधर ब्र.संदीप दीक्षापूर्व की अपनी क्रियाओं के साथ आचार्य गुरु की वैयावृत्ति, सेवा बड़ी लगन से करते अपना अधिक से अधिक समय उनके सान्निध्य में बिता रहे थे। वे मुनिचर्या का अच्छे से अवलोकन भी कर रहे थे। विशेष

बात कि ब्र. संदीप ने आचार्य श्री से मुनि दीक्षा लेने का निवेदन उपवास रखकर किया था। उन्होंने अपना यह उपवास का नियम दीक्षा दिवस महावीर जयंति तक आगे बढ़ा लिया। उन्होंने आचार्य श्री के पास जाकर संकल्प ले लिया कि अब मैं मुनि दीक्षा लेने के बाद ही अन्न- जल ग्रहण करूँगा। आज से मेरे उपवास शुरू।

आचार्य श्री ने समझाया भी पर संदीप नहीं माने। उपवास के साथ संदीप ने अपने साधनामय जीवन की शुरुआत कर दी। संदीप ने आचार्य श्री में पाया कि उन्होंने अपने श्रुत, व्रत, प्रत्याख्यान, संयम, नियम व तप के प्रति चेतना युक्त रहकर 'गुरु' शब्द को सार्थकता प्रदान करदी है। आप सच्चे अर्थों में गुरु हैं। आचार्य श्री ने संदीप को समझाया कि ज्ञानी धर्मात्मा पुरुष हमेशा आत्म कल्याण के लिए संयम धारण करता है, परोपकार के लिए पराक्रम करता है तथा सबके कल्याण का चिंतन करता है। साधु के रूप में संदीप का नया जन्म हो रहा था। अतः आचार्य श्री संदीप को मुनि जीवन के संस्कार घुट्टी में पिला रहे थे। संदीप का मनोबल बढ़ाते हुए आचार्य श्री ने उन्हें समझाया कि ''चारित्र से आदर्श बनता है, चिंतन करने पर निष्कर्ष निकलता है तथा किसी भी नई शुरुआत में संघर्ष तो होता ही है, होता था व होता रहेगा।''

आचार्य श्री ने ब्र. संदीप को दीक्षा पूर्व के तीन दिनों में जो आदर्श जीवन जीने के मंगल सूत्र दिए थे, उनसे ब्र. संदीप की विचारधारा को बल मिला। आचार्य श्री ने संदीप को समझाया कि ''हमेशा चिंतन करते रहना, चिंता नहीं। आत्मदर्शन में अपना संयममय जीवन बिताना, प्रदर्शन में नहीं। सतत अच्छे कार्य करते रहो, फालतू की कथा प्रपंचों में नहीं पड़ना।'' साधना पथ पर चलने से पूर्व आपने साधक को शिक्षा दी कि ''मोह विनाश का कारण है और महाव्रत आत्मप्रकाश सिद्धि का कारण है।''

आपने कहा कि, ''मनुष्य जन्म प्राप्त करना दुर्लभ है और उससे भी दुर्लभ महानता प्राप्ति करना। जो महत्व पाना चाहता है वह महान नहीं, जो दूसरों का शोषण करता है वह बलवान नहीं कहा जा सकता, जो व्यर्थ का विवाद वितण्डावाद करता है वह बुद्धिमान नहीं। ऐसा गुणी व निर्दोष व्यक्ति मिलना दुर्लभ है। महान व्यक्तियों को मर्यादित जीवन जीना होता है- आकाश महान है- पर मर्यादित है। महासागर अथाह व अतलांत है फिर भी मर्यादित है, महामेरू पर्वत भी मर्यादित है। महापुरुष मर्यादा पुरुषोत्तम राम की चर्चा विश्व भर में होती है। इसके लिए मर्यादा में रहना जरूरी है। अतः चलित पल्लव से मन पर संयम की वल्गा कसनी होगी। मन की शुद्धि से श्रेष्ठ कोई तीर्थ नहीं। मन चंगा तो कठौती में गंगा। मन की समता ही श्रेष्ठ शास्त्र है। सदाचार श्रेष्ठ देव है और हमारी आत्मा सर्वश्रेष्ठ है। जागृत मन से किया जाने वाला चिंतन, प्रज्ञा से लिया गया श्रेष्ठ निर्णय तथा पुरुषार्थ पूर्वक की गई क्रिया सफलता के मेरूदंड हैं।''

मन से प्रसन्न, वचन से कोमल तथा शरीर से कार्यशील युवा संदीप गुरुमुख से झरते इन अमृत सोतों में इस कदर निमज्जित हो गए कि उन्हें बाह्य जगत का कुछ ख्याल ही नहीं रहा। आचार्य भगवन कह रहे थे ''शुभ योग से महात्मा, अशुभ योग से दुरात्मा और अयोगदशा से जीव परमात्मा होता है। अतः साधक को अपने अभीष्ट लक्ष्य 'योग' को सम्हाले रखना चाहिए।''

इस वाक्य में तो आचार्य श्री ने मानो संदीप को संपूर्ण जीवन बोध दे दिया था। संदीप सोच रहे थे कि ये सारे के सारे गुण नद नालों की तरह आचार्य गुरु में एकाकार हो गए हैं, तभी तो वे महासागर, विशाल आकाश व उतंग सुमेरू सी ऊँचाइयों वाली मंगल मूरत बन गए हैं। इसी कारण वे विश्व कल्याण की राह में दुर्वा की तरह बिछ आत्म प्रकाश का स्वयं दर्पण बन गए हैं। ऐसी प्रणम्य मूर्ति महासंत मिलना दुर्लभ है। मेरा अहो भाग्य कि ऐसे महामानव के रूप में मुझे अपने गुरु मिले हैं।

उनके कवि हृदय से गुरुवर के प्रति श्रद्धा, आस्था व भक्ति के भावों की गंगा इन पंक्तियों में फूट पड़ी-

ओ युगनायक ओ युग दृष्टा, तुम ही सच्चे युग सर्जक हो।
ओ युगाधार युग उन्नायक, युग के सच्चे युग चिंतक हो।।
तुम महावीर की सत्य अहिंसा, दया प्रेम के रक्षक हो।
तुम आदि विधाता की संस्कृति के, संचालक, संरक्षक हो।।
पावन इन चरणों में मेरा बारम्बार नमन हो।
तेरे आशीषों से मुक्ति पथ पर मेरा गमन हो।''

गुरुवर के इन मंगलमय उद्बोधनों में संदीप ने उनके विष्णु से विराट व्यक्तित्व के दर्शन कर लिए थे। उनके पास गुरुवर का मूल्यांकन करने का कोई मापदंड नहीं था, न ही उनकी क्षमता का बखान करने के लिए शब्द सौष्ठव पास था। अब उन्हें अच्छी तरह समझ आ गया था कि क्यों इस दर पर आ जाने वाला वापस लौटकर नहीं जाता। सच बात है, ऐसे हिम तुंग व्यक्तित्व की तलहटी में आकर कौन वापस लौटना चाहेगा। गुरुवर ने एक बार भी मुझे न ऐसा कोई आदेश दिया है न आज्ञा कि दीक्षा बाद मुझे क्या करना है, क्या नहीं। इन्होंने आत्मानुशासन, जीवनानुशासन, संयमानुशासन, जिनानुशासन अपनी दिव्य वाणी द्वारा दर्शा दिया। अपनी क्षमता, योग्यता व पात्रतानुसार अपनाना साधक पर छोड़ दिया। मैंने भगवान महावीर की दिव्य ध्वनि तो नहीं सुनी। मेरे लिए तो यह गुरुवाणी ही महावीर की दिव्यवाणी है। मैं इस गुरुवाणी को जीवन मंत्र बनाऊँगा। मेरे भविष्य का सच्चा अनहद नाद यही है। ऐसी वाणी तो आचार्य गुरु जैसे संयमी, तपस्वी, त्यागी, सच्चे व पवित्र साधक के श्रीमुख से ही निकल सकती है। मेरा भाग्योदय है कि दीक्षा पूर्व मुझे इस वाणी का रसास्वादन व श्रवण करने का अवसर मिला।

माता-पिता का आचार्य श्री के पास जाना

इधर परिवार बरुआ सागर पहुँच गया। बरुआ सागर पहुँचकर वे सब लोग बेसब्री से संदीप को इधर-उधर ढूंढ रहे थे। पर वे कहीं दिखाई नहीं दे रहे थे। माँ के सब्र का तो बाँध ही टूट गया। वे रोते हुए बोल पड़ी, ''चलो हम आचार्य श्री के पास ही चलते हैं। उनके दर्शन भी हो जाएँगे, संदीप का पता भी चल जाएगा।''

जब सब लोग आचार्य श्री के पास पहुँचे व दर्शन किए। संदीप को आचार्य श्री के चरणों में बैठा देख, माँ की रूलाई तो जोर-जोर से फूट पड़ी। सारे के सारे परिजन रोने लगे। गमगीन माहौल देख संदीप आचार्य श्री को नमन कर वहाँ से उठ अपने कमरे में चले गए।

सबको इस तरह रोता-बिलखता देख आचार्य श्री को समझते देर न लगी कि ये संदीप के माता-पिता व परिजन हैं। माँ को छोड़ सारे परिजन रोष में आए थे कि आचार्य श्री को भला-बुरा सुनाएँगे कि वे संदीप को अचानक दीक्षा क्यों दे रहे हैं। पर जैसे भगवान के समोवशरण में जाने वाले हर जीव का मान, बैर, दुश्मनी, आवेश-आवेग सब समाप्त तिरोहित हो जाता है, वैसा ही आचार्य श्री की निश्रा में उन्हें अनुभव हो रहा था। मन शांत हो गया था। आकुलता-व्याकुलता, बेचैनी मिट गई थी।

पिताजी हाथ जोड़कर आचार्य श्री से निवेदन करने लगे, महाराजजी संदीप अभी बहुत छोटा है। अभी तो 20 वर्ष का भी नहीं हुआ है। युवा जोश से भरा है। जवानी अंधी होती है। बच्चा अपरिपक्व है। जिन प्रव्रज्या की कठिन साधना की पात्रता, क्षमता व ज्ञान अभी इसमें नहीं है। अभी आप इसे जिनागम का ज्ञान दो। संघ में रख संघानुशासन सिखाओ। थोड़ा परिपक्व हो जाए तब इसे दीक्षा देना। उन संसारी मोही परिजनों की बेटे के प्रति इतनी पवित्र भावना के पीछे भी मोह व मायाचारी छिपी थी। वे सोच रहे थे कि वे इस तरह आचार्य श्री को भरमा कर दीक्षा टलवा देंगे।

तब तक समझाने- बुझाने में संदीप मान जाएगा व न मानेगा तो आगे की आगे देखी जाएगी। माँ ने भी रोते-रोते कहा, ''महाराजजी आप संदीप को अभी दीक्षा मत दीजिए। थोड़ा परिपक्व हो जाने दीजिए। पर माँ ने निश्च्छल होकर'' यह बात कही।

किन्तु वे विरक्त महाचार्य, संसार के रागी-मोही जीवों की मोह महादशा से अच्छे से परिचित थे। वे रोज के अपने पास आने वाले जीवों/मनुष्यों को उपदेशामृत से यही जीवन बोध तो देते हैं। राग के दल-दल से बाहर निकालने का प्रयत्न करते रहते हैं। वे तो रागियों की रग-रग से परिचित थे। उन्होंने एक भव्य आत्मा के कल्याण के लिए धर्मसभा में मंगल उद्‌बोधन से भी कई-कई गुना ज्यादा उपयोगी इन मोहांधकार में डूबे जीवों को, संदीप के माता-पिता परिजनों को समझाना जरूरी समझा।

आचार्य श्री ने उन्हें हित, मित, मृदु व प्रेमपूर्ण वाणी में समझाना शुरू किया। उन्होंने कहा, ''तुम सब मोहाव्रत की मोटी चादर से ढंके हो। जिस दिन विरक्ति के एक झोके से यह चादर उड़ जाएगी, तुम भी संदीप की तरह आत्मदर्शन के लिए किसी संत के चरणों में चले जाओगे। अभी तुम सब की 'मोह की महादशा' चल रही है। मोह की साढ़े साती का अढ़ैया अपनी तीव्र दशा में है।'' आचार्य श्री ने वातावरण हल्का करने के लिए विनोद में यह बात कही।

आचार्य श्री की बात सुन सब लोग धीरे से हँस पड़े। गमगीन वातावरण थोड़ा हल्का होते देख आचार्य श्री ने सबकी ओर मुखातिब होकर कहा, ''मैंने तो पहली नजर में आपके हीरे जैसे बेटे को परख लिया था। वह एक अनमोल हीरा है। आप जैसे महान माता-पिता के दिए गए महान संस्कारों व सुशिक्षा के कारण वह आज यहाँ तक पहुँच गया है। उसका वैराग्य, उसका ज्ञान, उसकी दृढ़ता, उसकी संकल्प शक्ति, उसकी संयम प्राप्त करने की प्यास व उसका जिनागम के प्रति समर्पण- अलभ्य व असाधारण है। मैंने उसे कसौटी पर कस कर अच्छी तरह परख लिया है। आप लोग इसके संयम मार्ग की बाधाएँ बन अनंत कर्मों का बंध मत करो। वह तो यहाँ अपने कर्मों के बंधन से मुक्त होने आया है और आप लोग उसके निमित्त, अपने कर्म रूपी मधुछत्ते का आकार बढ़ाते जा रहे हैं। संदीप से ज्यादा आप लोग मेरी कृपा के पात्र हैं। मुझे आप लोगों पर करुणा आ रही है। आप अपने लिए उसको दीक्षा लेने से रोकने की बात कह अंतराय कर्म का बंध न बांधे तो अच्छा है।''

''आप लोगों का रोना वाजिब है। आप अनादिकाल से इस मोहपाश में बंधे भटक रहे हो। ज्ञानाभाव में स्वयं को नहीं पहचान पा रहे हो, न ही इसे हटा पा रहे हो। तुम भी आज सारे के सारे संदीप के निमित्त मेरे पास आए हो, तुम्हारा मार्गदर्शन कर कल्याण करना मेरा कर्तव्य है। एक संयमी को जन्म देने वाले माता-पिता साधारण माता-पिता नहीं हो सकते। संदीप तुम्हारा बेटा पहले है। पहला अधिकार उस पर तुम्हारा है। इसे मेरी झोली में डाल दो, एक जिनसंत जो अयाचक होता है, आज आप से याचना कर रहा है। यह विलक्षण व अद्‌भुत प्रतिभा व व्यक्तित्व का युवा है। यह एक दिन जैन जगत के क्षितिज का सूरज-चाँद बनेगा। तुम्हारा व मेरा नाम रोशन करेगा। जब युवा संदीप इतना समझदार है तो तुम लोग कितने समझदार होंगे अनुमान लगाया जा सकता है।''

अमृत झरती आचार्य श्री की वाणी ने पुत्र वियोग की तपन से तप्त माँ, पिता व परिजन की मन भू के लिए शीतलोदक का काम किया। ज्योति स्वरूप उनकी दिव्यवाणी ने उनका मोह तिमिर चीर दिया और उनका मन दिव्य शक्ति पुंज से भर गया। आचार्य श्री के मंगल बोध को वे कितना समझ पाए यह तो वे ही जाने पर उनको असीम शांति का अनुभव हो रहा था।

तभी आचार्य श्री ने बड़े वात्सल्य भाव से कहा, ''आप लोग अब जाइये, संदीप से मिलिए। जितनी बातें करना चाहते हो करना, उसके पास बैठना। उसके मन की थाह पाने की कोशिश करना। एक बात बताना चाहता हूँ, संदीप ने जिस दिन मुनि दीक्षा ग्रहण करने का निवेदन किया था उस दिन उसका उपवास था। उसने दीक्षा ग्रहण करने के दिन

तक के लिए उपवास रखने का संकल्प लिया है। आज भी उसका उपवास है। वह अपने लक्ष्य प्राप्ति के लिए दृढ़ है। अपनी बात पर अटल है। आप लोग धार्मिक हैं। आपके द्वारा बचपन में दिए संस्कारों के कारण तो वह व्रत नियम ग्रहण करता है।'' आचार्य श्री उन्हें आशीर्वाद देकर उठ गए।

ब्र. संदीप के माता-पिता व परिजन जिस आवेग-उद्वेग के साथ आए थे, संदीप के पास जाते-जाते आचार्य श्री के बोधामृत से वह शांत हो गया। जिस रोष व जोश के साथ वे संदीप को वापस ले जाने के लिए आए थे वह बहुत कुछ ठंडा हो गया था। जब वे सबके सब संदीप के पास जाकर चुपचाप बैठ गए, तब संदीप के आश्चर्य का ठिकाना नहीं था। उन्होंने तो उनके रौद्र व उग्र भरे रूप की कल्पना की थी, पर माँ-पिता सब उदास व शांत बैठे थे। मोह के वशीभूत पिता अपने को न संभाल पाए व थोड़े उग्र हो बोल पड़े ''तुम हमें बिना बताए यहाँ चले आए व आचार्य श्री को दीक्षा प्रदान करने के लिए श्रीफल अर्पित कर दिया।'' उन्होंने अपने मन की भड़ास निकाल दी कि ''तेरे चुपचाप यहाँ आ जाने से हमारी कितनी बदनामी हो रही है। जितने मुँह उतनी बातें। हम किस-किस का मुँह पकड़ें? किस-किस को जवाब दें।'' पिताजी का यह लहजा संदीप के लिए चौंकाने वाला था।

पिताजी ने संदीप से कहा, ''बेटा घर चलो। ब्रह्मचर्य व्रत का पालन घर पर भी बहुत अच्छी तरह हो सकता है। जिस मुनि जीवन की बात कर रहे, उस मुनि चर्या व मुनि धर्म का निर्वहन करना बड़ा कठिनतम काम है। अभी तो ऊपर-ऊपर की बातें हैं, लेकिन पद धारण कर यथार्थ के वास्तविक धरातल पर पैर रखोगे तो समझ जाओगे मुनि धर्म का निर्वहन करना लोहे के चने चबाने जैसा है। जवानी के जोश में होश मत खोओ। मैं तुम सा ज्ञानी तो नहीं हूँ, पर अपने अनुभवों के आधार पर समझा रहा हूँ, तुमने अभी व इस उम्र में जो निर्णय लिया है वह सही नहीं है। जल्दबाजी का निर्णय गलत होता है व पीछे से पछताना पड़ता है। मुनिचर्या आसान नहीं है।''

ब्र. संदीप ने पिता की बातें बड़े धैर्य से सुनी। संदीप ने पापा को याद दिलाया कि पापा वर्णी विद्यालय सागर मुझे छोड़ते वक्त भी आपकी आँखों में आँसू यह कहते हुए आ गए थे कि इतनी सी उम्र में तुम्हें अकेला छोड़ना पड़ रहा है।'' तब मैंने कहा था, ''पढ़ने के लिए तो कुछ करना पड़ता है। पढ़ने की उम्र तो बचपन से ही शुरू होती है। मेरी चिंता मत करो। मैं सब कर लूँगा।'' आपने मुझे सीने से लगाते हुए शाबासी देते हुए कहा था, ''मेरा बेटा साहसी, हिम्मतवाला व धुन का पक्का है। अब मुझे तुम्हारी चिंता नहीं। तू छोटा सा होकर भी बड़े विचारों वाला है। आज भी मैं वही, वैसा और वैसे ही दृढ़ विचारों वाला हूँ। मेरा निर्णय अटल है।'' आज आपके लिए मेरा जवाब है कि ''मुक्ति पथ का उद्‌घाटन सम्यग्दर्शन प्राप्त करने से होता है। यह तभी सार्थक व संभव होता है जब व्यक्ति में शारीरिक, मानसिक व वाचनिक शांति हो, युवावस्था का उफान हो, साहस हो, दृढ़ता हो, धीरज हो, हिम्मत हो, मन में कुछ कर गुजरने की अपार क्षमता हो। जीवन क्षणिक व अनित्य है। मैंने बहुत निकट से मृत्यु को देखा है। कल किसने देखा? जो करना है त्वरित निर्णय ले आज कर लेना चाहिए। हमारे महान आचार्य, कुंदकुंद, अकलंक निकलंक आदि युवा थे। हमारे सारे के सारे महापुरुषों ने युवावस्था से ही श्रेष्ठ कार्य करना शुरू कर दिया था। मेरे प्रथम गुरु महामनीषी प.पू. आचार्य श्री विद्यासागरजी ने भी तो युवावस्था में घर त्याग दिया था और महिमा के हिमवान बने। आज जगत पूज्य हो गए। मेरा पथ आत्म कल्याण का पथ है, जिसे एक दिन आपको भी अपनाना होगा। सांसारिक जीवन के अपने पुत्र के कर्तव्य निर्वहन में मैं अब असमर्थ हूँ किंतु कल आपका भी यही पथ होगा। आत्म कल्याण के पथ पर चलने में मैं आपकी पूरी मदद करूँगा। अपना कर्तव्य निर्वहन करूँगा।''

पहले आचार्य श्री ने उनका ब्रेनवॉश कर दिया था, अब संदीप ने। उनसे ज्यादा कौन जानता था/है कि संदीप कितना

जिद्दी है। जो जिद पकड़ ली, उसे पूर्ण किए बिना दम नहीं लेता। संसार से विरक्त संदीप के आगे सांसारिक सुख-दुःख का रोना भैंस के आगे बीन बजाने जैसा था। सजल आँखों व भरे गले से वे इतना ही कह पाए, ''अब बेटा नहीं मानता तो, तू भगवान महावीर की सिद्धांत संपत्ति का वारिस है। दो-दो महान आचार्य भगवंतों प.पू. श्री विद्यासागरजी व तपस्वी सम्राट श्री सन्मतिसागरजी का वारिस बनने जा रहा है। जगतमाता सुरदेवी सरस्वती, शारदा का सुत बनने जा रहा है। भागचंद को तो कोई नहीं जानता पर इनसे तो पूरी दुनिया परिचित है। इनकी अमूल्य संपत्ति को सुरक्षित, संरक्षित व वृद्धिगत रखते हुए निर्द्वंद्व, निर्भीक, निशंक, निरामय, निर्मल हंस की तरह अपने मुक्ति के कल्याण मार्ग पर चलना। विशुद्धि के लिए प्रसिद्ध तेरी आगामी चर्या बेदाग रहे, यही हमारा मंगल आशीर्वाद है।'' कह भागचंदजी चुपचाप बेटे के सामने बेबस बैठे अपने आँसू नहीं रोक पा रहे थे।

सभी छोटे भाई-बहन बिलख पड़े,बोले ''भैया घर चलो। तुम्हारे बिना घर सूना हो गया है। अच्छा नहीं लग रहा है।'' बहिन रानी संदीप से रोते हुए लिपट गई। ''भैया आपका छुट्टियों में इंतजार रहता था। अब किसका इंतजार करूँगी। आप यहाँ से घर चलो।'' संदीप ने बड़े स्नेह से बहन को अपने से जुदा करते हुए कहा, ''जब भी तेरा मन करे, मुझसे मिलने चली आना। धीरे-धीरे तू भी मेरे जैसी बन जाएगी। फिर व्रत लेकर हमारे साथ रहना।'' बहन, ''भैया आप न...। इस तरह बहलाना- फुसलाना, पीछा छुड़ाना आपकी पुरानी आदत है।'' भाइयों से भी कहा, ''देखो जो मार्ग मैं अपना रहा हूँ वही सच्चा मार्ग है। तुम लोग भी मेरे साथ वर्णी विद्यालय में शिक्षा ग्रहण करते रहे हैं। जो मैं पढ़ता रहा वहाँ तुम भी वहीं सरस्वती का ज्ञानार्जन करते रहे। अब तुम लोगों को क्या समझाऊँ? मैं गुरुचरणों में रहकर अपने कर्तव्यों का यथेष्ट निर्वहन करता रहूँगा, तुम गृहस्थ जीवन में माता-पिता व आपस में एक-दूसरे का ध्यान रखना। प्रेम व स्नेह से रहना। घर की बातें घर में रखना। कभी मुझे यह सुनने न मिले कि संदीप तो यहाँ मुनि बनकर बैठा है और इसके भाइयों को देखो? मेरा व तुम्हारा कर्तव्य पथ एक जैसा है। इस बात में हम एक-दूसरे के पूरक रहेंगे। बाकी मेरा पथ अलग-तुम्हारा पथ अलग तो है, पर कोशिश करना मेरे पथ पर शीघ्र अपने कदम रख सको।''

अब तो परिजनों, रिश्तेदारों, पड़ोसियों किसी के पास आगे कुछ बोलने को शेष नहीं बचा था।

पर माँ जो अब तक जड़वत चुपचाप बैठी थी एक टक संदीप को निहारे जा रही थी। बचपन से लेकर आज तक का संदीप उनके मानस पटल पर खेलता रहा। श्वेत धवल वस्त्रों में बैठा क्या यह वही संदीप है। देख-देख उनकी आँखों से आँसू बह निकलते। कभी वह साड़ी के पल्लू के इस छोर से तो कभी उस छोर से आँसू पोंछने का निरर्थक प्रयत्न करती रही। पर वे बिन बुलाए अनगिनत अतिथि आँखों से ढुलकते रहे। वह सोचती जा रही थी, ''बचपन में कपड़े उतरवा बड़े महाराज जैसे आहार लेने की जिद जिसने मनवा ली थी, आज हकीकत सामने थी। यह तो कोख में मुनि बनने के संस्कार लेकर आया था।''

माँ की मोहासक्त स्थिति देख संदीप बोल पड़े, ''माँ रोती ही रहेगी या मुझे आशीर्वाद भी देगी।'' माँ को लगा बेटे ने उसका हृदय का प्याला अपनी अमृत वाणी से भर दिया। माँ ने अपनी मीठी बुंदेलखंड की भाषा में कहा, ''अब मैं तुम से क्या कहूँ। तुम तो इतने बड़े बन गए हो कि अब मेरी बात थोड़े ही सुनोगे। तुम अपनी मनमर्जी के राजा हो गए। मैं तो तुम्हारे आगे पत्थर से सिर कूट-कूटकर फोड़ लूँगी, तब भी मैं तुम्हें घर नहीं ले जा पाऊँगी। अब मैं तुमसे क्या कहूँ? तुमसे ज्यादा मुझे कौन जानता है?'' और माँ फूट-फूटकर रो पड़ी। वातावरण गमगीन हो गया। माँ के मन का बोझ थोड़ा हल्का हुआ, तब वह चुप हो गई।

संदीप ने माँ को समझाने के लहजे से कहा, ''माँ मैंने संकल्प ले लिया है कि मुनि दीक्षा के बाद ही अन्न-जल ग्रहण करूँगा। अभी मेरे उपवास चल रहे हैं। आप चाहें तो मैं आपके साथ घर चल सकता हूँ। जितने दिन चाहो रखना।

उपवास तो मैं दीक्षा लेने के बाद ही छोड़ूँगा।''

माँ की ममता हिलोरित हो उठी। ''नहीं बेटा नहीं। उपवासी तुझे घर में रखने से हमें क्या लाभ? तू भूखा-प्यासा रहे और हम भोजन करें? यह हो सकता है भला? तू घर लौट नहीं सकता और हम तुम्हें ले जा नहीं सकते। तुझे तेरे संकल्प से डिगा नहीं सकते। पर ध्यान रखना साधना के मार्ग की कठिनाइयों का सामना तब होता है, जब साधक उसे साधने लगता है। बेटा मुनि चर्या बड़ी कठिन साधना है। भूख-प्यास का परिषह, पैदल चलने का परिषह, सर्दी-गर्मी- बरसात का परिषह इसके अलावा भी कई-कई परिषह हैं, जिन्हें सहते हुए दिन में ही आकाश के तारे नजर आने लगते हैं। मुनि मार्ग की साधना की शुरुआत ही परिषह व संघर्षों- केशलुंच परिषह से होती है। यदि आज तुझमें इतनी क्षमता हो तभी तू आगे कदम बढ़ाना, वरना कुछ समय इंतजार करना। आचार्य श्री के सान्निध्य में रह साधना का मार्ग पुष्ट करना, फिर संयम ग्रहण करना।''

''माँ तुम चिंता मत करो, मैं आज से साधना की शुरुआत करूँ या कल से लेकिन वह शुरुआत ही होगी। जितना संघर्ष आज है, उतना ही कल भी होगा। अतः आज असंयमी रह संघर्ष करने से तो अच्छा है संयमी बनकर ही संघर्ष करूँ। तब मुझे जो अनुभव होगा, गुरुवर का मार्गदर्शन मिलेगा वह सम्यक होगा और मुझे सम्यक पथ पर चलने के लिए प्रेरित करेगा। तुम मेरी चिंता मत करो। मैं यथाशक्ति संयम पथ का निर्वहन करूँगा। कभी भी किसी भी हालत में इस पथ से च्युत नहीं होऊँगा। प्राण त्याग दूँगा पर पथ नहीं। भूखा रह लूँगा, पर भूल नहीं करूँगा। भव भवांतरों से चल-चल कर मैं बहुत थक चुका हूँ, अब मुझे विहार करना है। इन हाथों को पाणिपात्र बनाना है।''

''आप मुझे निर्बाध दीक्षा लेने दें। आप रोते रहेंगे व कर्म बंधन करते रहेंगे, तब भी मैं दीक्षा तो लूँगा ही। इससे तो अच्छा है जो काम रो-रोकर कर रहे हो, उसे खुशी-खुशी करो। मैं मुक्तिश्री के विजय अभियान के लिए चल पड़ा हूँ। ज्यादा नहीं तो दो कदम ही मेरे साथ चलें। मेरे काम की अनुमोदना कर अपने पुण्य के फलक को बढ़ाइए। मुझे कितने ही जन्मों में कितनी ही माताएँ मिलती रहीं। उनके प्रति कर्तव्य पूर्ति के पीछे अपना हित नहीं कर पाया। आज न जाने कितने जन्मों के पुण्य संयोग से, सद्‌गुरुओं के सान्निध्य से व सच्चे ज्ञान से अपनी पहचान हुई है। अतः मुझे अपना कल्याण करना है।''

यद्यपि सबको मन में संदीप के सांसारिक जीवन से वियोग की व्यथा तो थी ही, पर आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के ज्ञान बोध व संदीप की सात्विक, गूढ़ गंभीर बातों से दुःख की घटाटोप बदरिया छिटक गई।

माँ मुन्नीदेवी ने कहा, ''मैं संदीप से एक माँ के रूप में आखरी बार अकेले में बात करना चाहती हूँ।'' सब लोग एक-एक कर बाहर चले गए। यह सोच कि शायद माँ कोई ऐसी बात बेटे से कहे जिससे वह मान जाए। घर लौट चले।

संदीप गंभीरता से माँ की ओर देख रहे थे। माँ उसे अब कौनसी सीख अकेले में देना चाहती है। उसे पता था कि माँ घर लौटने के लिए तो कभी नहीं कहेगी। फिर क्या कहना चाहती है, उत्सुकता बढ़ने लगी। बहुत मुश्किल से माँ के कंठ से आवाज निकल पा रही थी।

मुन्नीदेवी- ''बेटा, जवानी पर किसी का बस नहीं रहता। बड़े-बड़े तपस्वी भी जवानी में डोल जाते हैं। फिर, दिगम्बर भेष में ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना बड़ा कठिन काम है। अतः स्वयं को संयमित रख आत्म नियंत्रण रखना। बेटा जग हँसाई न हो इसका पूर्ण ध्यान रखना। मैं माँ हूँ तेरा भला-बुरा सोचना मेरा कर्तव्य है। तू हर कठिन से कठिन परिस्थिति का सामना कर लेगा इसके साथ आत्म नियंत्रण पर विशेष ध्यान रखेगा। मुझे पूरा विश्वास है। पर फिर भी नग्न रहकर चर्या निभाना साधारण काम नही।''

''माँ परीक्षा तो परीक्षा ही है, फिर प्रश्न सरल हो या कठिन। अभ्यास करने वाले के लिए सारे प्रश्न सरल होते हैं,

किंतु जिसने अभ्यास नहीं किया है वह सरल प्रश्न भी हल नहीं कर सकता। जिस दिन से मैंने होश संभाला है, उस दिन से जो नैतिक व जीवन मूल्यों के संस्कार तुमने मुझे दिए हैं, उनका अभ्यास करता रहा हूँ। आज जिस संयममय साधना के सोपान पर पहुँचा हूँ, उस पर उंगली पकड़ चलना सिखाने वाली तो तुम्हीं थी। मुझसे ज्यादा मेरी क्षमता को माँ तुम जानती हो, फिर शंका कैसी? क्या तुम्हें उस संदीप पर विश्वास नहीं, जिसकी हर बात तुम्हारे लिए पत्थर की लकीर होती थी। हर बात पर आँख मूँदकर विश्वास कर लेती थी, अब खुली आँखों से देखना। जो कभी तुम्हारा संदीप था वह कहीं भी, कभी भी, दर्शन से, ज्ञान से, चारित्र से स्खलित नहीं होगा। निशंक व निश्चिंत हो अब आप अपने जीवन पथ पर आगे बढ़ती रहो। इतना याद रखना, आज जो रास्ता मैं अपनाने जा रहा हूँ, रास्ता तो एक वही तुम्हारा व सबका भी है। एक दिन उस पर चलने की कोशिश करना।''

माँ के इशारे पर सब अंदर आ गए थे। संदीप ने वही वाक्य पुनः दोहरा दिया- ''आज जो रास्ता....'' सब शांति से सुन रहे थे। संदीप सामायिक का वक्त हो गया कहकर उठकर चल दिए।

तभी एक व्यक्ति आचार्य श्री का संदेश लेकर आया, ''आप सब लोग दिन भर से भूखे-प्यासे हैं। हाथ-मुँह धो भोजन कर लीजिए।'' मुँह पर पट्टी बाँधी जा सकती है पर पेट पर नहीं। अभी तक सभी का लक्ष्य 'संदीप' था। अतः भूख-प्यास की ओर किसी का ध्यान नहीं गया था। वे सब चल पड़े भोजन शाला की ओर। माँ का दिल भर आया, ''संदीप तो तीन दिन से उपवास पर है। कभी खाना बनने में जरा सी देर हो जाती तो हल्ला मचा देता। भूख उससे जरा भी सहन नहीं होती थी। अब तो जीवन भर एक भुक्ति भोजन, बत्तीस अंतराय टालकर करेगा। इतना कठिन परिषह कैसे सह पाएगा वह'' कहते हुए वह फिर रो पड़ी। माँ मुन्नीदेवी कितना भी दिल कड़ा करती, किंतु सांसारिक जीवन की संदीप से संबंधित बातें जब-तब याद हो आती और बार-बार आँसू उनके मातृ हृदय की ममता, आँखों की गगरियों से छलक पड़ती। और वे अपने पल्लू के कोर से आँसू पोछती रहती। जो कोई उनकी इस दशा को देखता रो पड़ता। धीरे-धीरे सब सहज होता जा रहा था।

दीक्षापूर्व की क्रियाएँ

आचार्य श्री के आदेश व मार्गदर्शन में संदीप की दीक्षा पूर्व संपन्न होने वाली सारी सांसारिक क्रियाओं में संदीप के माता-पिता, भाई-बहन व परिजनों ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया व संपन्न कराई। माता-पिता ने 19 अप्रैल को पुनः आचार्य श्री को संदीप को मुनि दीक्षा देने की स्वीकृति दे दी व उन्हीं के सामने संदीप को दीक्षा ग्रहण करने की आज्ञा भी दे दी।

बादल छट गए। निरभ्र आकाश व बाधा रहित पथ। अब संदीप के लिए चलना व आगे बढ़ना आसान हो गया। स्वयं को भारहीन व बहुत हल्का महसूस कर रहे थे। चारों ओर का वातावरण सहज था।

20 अप्रैल सन् 1997 की मंगल प्रभात, महावीर जयंती सूरज अपनी सुनहरी किरणों के साथ क्षितिज के छोर से अपनी रक्ताभ आभा के साथ भासमान हो रहा था। इधर अध्यात्म जगत का एक और सूर्य अपनी विरक्ति की छटा बिखेरता धरती के आँचल में प्रभायमान हो रहा था।

संदीप बड़े सबेरे जाग अपनी नित्य क्रियाओं से निवृत्त हो, तैयार हो रोज से कई गुना अधिक ऊर्जा से ऊर्जस्वित, उत्साह से उत्साहित, देव दर्शन कर आचार्य भगवन के श्रीचरणों में जा पहुँचे। नमन कर चरण रज माथे लगाई। वे इन पंक्तियों के माध्यम से गुरु वंदना करने लगे-

शांति सुधा बरसाने वाले, भ्रांति रूप तम हरने वाले।
क्रांति कला के कंत गुरु सन्मतिसागर हो नमन तुम्हें।।1।।

ज्ञानदीप उजियाला करते, वायुदूत स्पन्दन भरते।
जल सम मन के शोधक शुद्ध सुसन्मति गुरुवर नमन तुम्हें।।2।।
शिशु सम सहाजानंद भरा है, युवकोचित उत्साह खरा है।
ज्ञानानुभव वृद्ध सुसन्मति देव मेरा हो नमन तुम्हें।।3।।
विकृति निवारक वैद्य तुम्हीं हो, संस्कृति रक्षक दक्ष तुम्हीं हो।
प्रकृति के ओ! प्रज्ञपुरुष गुरुदेव सुसन्मति नमन तुम्हें।।4।।
गुरुओं के गुण गाने वाले, दूर दोष स्व करने वाले।
गुणग्राहक मुनिपुंगव सद्गुरु सन्मतिसागर नमन तुम्हें।।5।।
जन संबोधन करने वाले, बोधक दृष्टि देने वाले।
देते हो उपदेश त्याग का, त्यागी सन्मति नमन तुम्हें।।6।।
दाता श्रेष्ठ हो किंतु अकिंचन, निखिलेश्वर हो किंतु निस्पृह।
आत्मराम रत विष्णु श्री गुरु सन्मतिसागर नमन तुम्हें।।7।।
स्वाध्याय व ध्यान युक्त हो, तपःपूत तुम जगत पूज्य हो।
चर्या चारक महापूज्य सन्मतिसागर गुरु नमन तुम्हें।।8।।
सूरिश्रेष्ठ तुम 'महाविज्ञ' हो, संग शून्य तुम महाप्रज्ञ हो।
आत्मलीन श्रमणेंद्र क्षमाभूषण गुरु सन्मति नमन तुम्हें।।9।।
भवदधि नैया पार उतारो, कृपा दृष्टि तुम मुझ पर वारो।
खेवटिया हो तारण हारे, सन्मति सद्गुरु नमन तुम्हें।।10।।
समयसार का सार तुम्हीं हो, निराधार आधार तुम्हीं हो।
कुंदकुंद के लघुनंदन हो, सन्मतिसागर नमन तुम्हें।।11।।

दीक्षा दिवस की मंगल प्रभात में प्रभाती के स्वर में ब्र. संदीप ने इन पंक्तियों के माध्यम से अपना भक्ति भावना से आपूरित हृदय खोलकर गुरु चरणों में रख दिया। खुशी के मारे झरते अश्रुनीर गुरु चरण कमल पखार रहे थे।

आचार्य श्री ब्र. संदीप के समर्पण, श्रद्धा, भक्ति से अभिभूत थे। वे सोच रहे थे कि यह सूरज अब तक किन बादलों की ओट में छुपा था। आज माँ सरस्वती की सेवा व वीर वाणी को जनवाणी बना जन-जन तक पहुँचाने के लिए ऐसे ओजस्वी नौनिहालों की जरूरत है। गदगद हृदय से उन्होंने संदीप को आशीर्वाद दिया। ब्र. संदीप निहाल हो गए। फिर उन्हें दीक्षा संबंधी कुछ बातें समझाई व मार्गदर्शन दिया।

महावीर जयंती 20 अप्रैल 1997 की रविवार (चैत्र शुक्ला त्रयोदशी 2054 संवत्) की वह शुभ पावन बेला भी आ गई। जब उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में ब्र. संदीप ने आचार्य श्री सन्मतिसागरजी से सब कुछ त्यागकर दिगम्बर जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण कर ली। उस 20 वर्षीय युवा को दीक्षित होते देख सारी जनता ने दाँतों तले उंगली दबा ली। यौवन के भर बसंत में उन्हें दीक्षित होते देख लोगों की आँखें बरस पड़ी।

आचार्य श्री ने ब्र. संदीप को पूर्व में अच्छी तरह से ठोक-बजाकर देख लिया था। एवं महावीर जयंति के दिन बरुआसागर (झांसी) में आचार्य श्री ने हजारों- हजार की तादाद में इकट्ठे श्रावकों व चतुर्विध संघ (पिच्छी) की साक्षी में ब्र. संदीप को दिगम्बर जैनेश्वरी दीक्षा देकर, भगवान महावीर का पथ संचलन करने के लिए भगवान महावीर के पथ पर उनका 'एक और वारिस' खड़ा कर दिया। आचार्य श्री ने उनका नाम मुनि श्री सुनीलसागर रखा। अब ब्र. संदीप मुनि श्री सुनीलसागर बन गए।

बेटे को दिगम्बर होते व केशलोंच करते देख पुत्र मोह में पगी माँ सब कुछ जानते-समझते हुए भी फफक-फफक कर रो पड़ी। उसकी ममता सारे ज्ञान बोध पर हावी हो गई। यह सोचकर कि और अधिक दुःख विह्वल हो गई कि संदीप एक बेटे के रूप में अब उस घर, उस गाँव कभी नहीं आएगा। यदि वह आएगा भी तो जगत पूज्य मुनि बनकर ही। रोते-रोते आँखें पोछते-पोछते भी वह संदीप के मुनि जीवन की अनुमोदना कर रही थी। मुनि सुनीलसागरजी के लिए शुभ मंगल कामनाएँ कर रही थीं। जिनेंद्र देव से प्रार्थना कर रही थी कि आज संदीप ने मुझे एक मुनि महाराज की माँ बनने का सौभाग्य प्रदान किया है। इन हजारों- हजार लोगों की भीड़ में मैं एक अकेली 'माँ' हूँ जिसने संत को जन्म दिया है। उन्हें अपनी माँ की कही बात याद आ गई।

''जननी जने तो भक्त जन, या दाता या सूर,
नहीं तो जननी बांझ रह, काहे गमावे नूर।''

और मैंने अपना माँ बनना सार्थक कर दिया। पिताजी भी अपने योग्यतम प्यारे बेटे को कठिन दिगंबर चर्या अपनाते देख रो पड़े। भाई-बहनों की दशा भी रो-रो बेहाल थी।

मंच पर संदीप की दीक्षा की क्रियाएँ संपन्न हो रही थी और नीचे बैठी माँ सोच रही थी कि मेरा बेटा सच्चा गुरु भक्त व प्रभु भक्त है। यह जग को जिस ज्ञान प्रकाश का दान करेगा, उस उजाले में लोग अपने जीवन की सही राह चुन सकेंगे। एक दिगम्बर संत की चर्या धारण करने वाला कोई साधारण व्यक्ति नहीं अपितु महावीर योद्धा होता है। मेरा संदीप ऐसा ही सूरमा संत है। इसमें तो भक्त दाता व सूर (संत) तीनों गुण मौजूद हैं! मेरी कोख इसने धन्य कर दी। दीक्षा देखते-देखते मुन्नीदेवी के भावों की परिणति इतनी निर्मल हो गई कि उनके भाव भी दीक्षा ग्रहण करने के हो गए, पर उन पर पूरी की पूरी कच्ची गृहस्थी, छोटे-छोटे बच्चों की जिम्मेदारी थी। वह सोच रही थी कि आज नहीं तो कल मैं भी जरूर दीक्षा लेकर अपना आत्म कल्याण करूँगी।

जब नव दीक्षित मुनि से अपने मन की बात कहने को कही, तब मुनि श्री सुनीलसागरजी ने इतना ही कहा कि ''सुमेरू की तलहटी में खड़ा एक बौना अपनी बात क्या कहे? मैं तो इन भगवत तुल्य आचार्य गुरुवर की हर आज्ञा व आदेश का अनुशीलन करता रहूँगा। सूरज के आगे मुझ जैसे 'ढिबरी' (दीपक) की क्या बिसात। जो कुछ कहेंगे मेरे पितृतुल्य गुरुवर ही कहेंगे'' और मुनि श्री सुनीलसागरजी आचार्य श्री के चरणों में माथा टेक अपने नियत स्थान पर बैठ गए।

आचार्य श्री ने 'सुनीलसागर' नाम की व्याख्या करते हुए कहा कि ''सुनील सागर नाम संतों के रखे जाने वाले नामों से कुछ हट कर है। गृहस्थों में सुनील नाम हुआ करता है। पर हमने संत का नाम सुनीलसागर रखा है। सुनकर सबको अटपटा लग रहा होगा। इससे पहले माँगी तुंगी से एक महामुनि मोक्ष पधारे थे उनका नाम 'नील' था। नील का अर्थ आकाश होताहै। वह आकाश जिसमें असंख्य सितारे झिल-मिलाते रहते हैं। जिसमें दुनिया को प्रकाश देने वाला ऊर्जा का महास्त्रोत सूरज तथा शीतल सुधा वृष्टि करने वाला शशि होताहै। वर्तमान में आकाश में हिंसा की प्रतीक मिसाइलें दागी जा रही हैं। वैज्ञानिकों के हिंसक प्रक्षेपास्त्रों के कारण यह नील (आकाश) दूषित हो गया है। अहिंसा की दुंदुभि बजाकर यह सुनील इसे पुनः सुनील कर देगा। मन के आकाश से विषय विकारों को मिटाकर उसे निरभ्र 'नील' कर देगा। भविष्य में यह अपने पुरुषार्थ व साधना से उन 'नील' महाराज सी साधना कर सिद्धत्व की प्राप्ति करेगा। जिन शासन का सूर्य बनकर अपनी ज्ञान किरणों से सारे जगत को प्रकाशित करेगा। युवा मुनि ज्ञान ऊर्जा से भरे हैं। समाज को इनके ज्ञान का लाभ मिलता रहेगा।

हर्ष, उल्लास के माहौल में ब्र. संदीप की निर्विघ्न मुनि दीक्षा संपन्न हो गई। संदीप से मुनि सुनीलसागर बनते ही उनकी जीवन चर्या व व्यवहार बदल गए। संयममय जीवन का प्रथम लक्ष्य तो उन्होंने हासिल कर लिया।

युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी सोच रहे थे कि तीन लोक में इस संन्यास प्राप्ति की अलभ्य घड़ी के रूप में संयम की अद्‌भुत जड़ी मेरे हाथ आज लग गई। इस संजीवनी जड़ी के प्रभाव से मैं अब विषय-विकारों के विष से निर्विष हुआ। चलपल्लव सा चलाचल मन आज अविचल हो परमब्रह्म में लीन हुआ। आचार्य भगवन ने मुझे बिना आज्ञा-आदेश के परम भावों का अमृत पिला दिया। आज महावीर जयंति के दिन मैं परम पद के 'शिवलाला भगवान महावीर' का शिशु 'लाल' बन गया हूँ। अहो भाग्य मेरे।

आचार्य श्री ने आज मेरा आत्म वैभव से साक्षात्कार करा दिया है। मैं जीव हूँ। चिरंजीव, चिरजीव, मैं ही परमज्योति परमात्मा हूँ। मैं सिद्ध हूँ, मैं शुद्ध हूँ, मैं चिदानंद हूँ, मैं चैतन्य हूँ, मैं चिद्रूप हूँ, मैं ही निरंजन, निराकार 'शिव' हूँ। शिवोऽहं। शाश्वतोऽहं। सोचते-सोचते मुनि श्री सुनीलसागरजी इतने आत्मलीन हो गए कि बाह्य जगत से उनका तादात्म्य कुछ देर के लिए टूट सा गया।

अंततोगत्वा मुक्ति की प्यास ने संदीप को मुनि सुनीलसागर बना दिया।

भाग-5

साधना के अलावों से

दीक्षा दिवस

दीक्षा दिवस से ही मुनि श्री सुनीलसागरजी की मौन साधना यथावत जारी थी। सिर्फ भक्ति व प्रतिक्रमण में ही उन्होंने मौन छोड़ा। स्वाध्याय में भी वे जिज्ञासा होने पर ही प्रश्न पूछते वक्त मौन छोड़ते, चर्चा कर लेते व वापस मौन धारण कर लेते। किसी अन्य की जिज्ञासा के बीच वे नहीं बोलते। यदि आचार्य श्री उनसे प्रश्न पूछते तभी सविनय हाथ जोड़कर उत्तर दे देते व पुनः मौन धारण कर लेते।

दीक्षा के उपरांत मुनि श्री ने रात्रि में ध्यान, अध्ययन, लेखन, चिंतन, मनन भी यथावत् जारी रखा। वे अपना एक मिनट का समय भी व्यर्थ नहीं जाने देते। दीक्षा पूर्व से ही उन्होंने अपनी विद्वत्ता की छाप आचार्य श्री पर छोड़ दी थी।

मुनि श्री की दीक्षा के बाद यदि अब कोई विद्वान, पंडित आदि अपनी जिज्ञासा या प्रश्न लेकर आचार्य श्री के पास आते तब आचार्य श्री मुनि श्री सुनीलसागरजी की ओर इंगित कर कहते आपकी जिज्ञासा का समाधान मुनि सुनीलसागर करेंगे। बड़े-बड़े विद्वान पंडित मुनि श्री की ओर देखकर सोचने लगते कि कल के दीक्षित युवा मुनि उनकी जिज्ञासा का समाधान कर सकेंगे क्या? किंतु जब मुनि श्री सुनीलसागरजी, गाथाओं, श्लोकों, ग्रंथों व आचार्यों के नाम सहित धाराप्रवाह बोलते हुए उनकी शंकाओं का समाधान कर उन्हें आश्वस्त कर देते, तब वे सब आश्चर्यचकित हो जाते। जाते-जाते वे कहते जाते कि आचार्य श्री के पास तो ज्ञान की खदान का हीरा है। इधर मुनि श्री बिना वजह आचार्य श्री के पास अधिक नहीं बैठते।

दीक्षा बाद

वे आचार्य श्री की वैयावृत्ति व सेवाचर्या में भी पहुँच जाते। आचार्य श्री के शिष्यों में आप अकेले थे जिन्हें यह सौभाग्य प्राप्त होता रहा।

आचार्य श्री के साथ मुनि श्री सुनीलसागरजी का प्रथम चातुर्मास था। मुनि श्री को आचार्य श्री की कठिन तपस्या नजदीक से देखने को मिली। उन्होंने चातुर्मास के प्रथम माह में एक उपवास एक आहार की तपस्या पूर्ववत चालू रखी। दूसरे माह में दो उपवास व एक आहार की, तीसरे माह में तीन उपवास एक आहार की तथा चौथे माह में चार उपवास एक आहार की तपस्या की साधना की।

इधर आचार्य श्री की तपस्या बढ़ती जा रही थी, उनकी शारीरिक कमजोरी भी बढ़ती जा रही थी। मुनि श्री आचार्य श्री की वैयावृत्ति में तन-मन से लगे रहते। अन्यों को तो आचार्य श्री 'हूँ' करके बाहर कर देते किंतु मुनि सुनीलसागरजी तो उनकी वैयावृत्ति में लगे रहते। आचार्य श्री उनके हाथों का स्पर्श पा आँखें खोलकर देख लेते व चुप हो जाते। कई बार आचार्य श्री को बुखार हो आता तब मुनि श्री रातभर उन्हीं के पास रुक जाते। वैयावृत्ति में मुनि श्री ने देखा कि आचार्य श्री की कितनी भी कठिन तपस्या हो, कितना भी स्वास्थ्य खराब हो, वे मात्र दो-ढाई घंटा आराम पश्चात उठकर बैठ जाते हैं। उन्हें देख मुनि श्री भी उठकर बैठ जाते। तब आचार्य श्री उन्हें यह कहते हुए वापस सुला देते कि अभी तुम्हें बहुत साधना व ज्ञानार्जन करना है। अतः कम से कम 6 घंटे की नींद लेना जरूरी है।

इस प्रकार मुनि श्री दीक्षा के पहले दिन से ही आचार्य श्री के कृपापात्र बन गए।

प्रथम विहार 1997

20 अप्रैल 1997 में बरुआसागर झाँसी में दीक्षा के बाद दूसरे ही दिन 21 अप्रैल 1997 को नवदीक्षित मुनि श्री सुनीलसागरजी ने बरुआ (सागर) से आचार्य संघ के साथ विहार कर अनाज मंडी में रात्रि विश्राम किया। यहाँ से संघ सकरार पहुँचा जहाँ संघ ने 3 सप्ताह तक मंगलवास किया। नवदीक्षित मुनि के लिए यह पहला पद विहार था। अप्रैल

माह की भयंकर गर्मी। सूरज सबेरे से ही अपना रौद्र रूप दिखाना शुरू कर देता था। दिगम्बर भेष, नंगे पैर और चारों ओर से उठती लू लपटों के थपेड़ों के बीच यह युवा मुक्ति पथ का राही मतवाला अलबेला संत अपने अलबेले अनूठे अंदाज में चल रहा था। नया भाष, नई राह, नया अनुभव, नया जीवन सब कुछ नया। राह की नई कठिनाइयाँ इस छुई-मुई से नाजुक, मात्र बीस वर्ष के तरुण संत को चुनौतियाँ दे रही थीं लेकिन उसके युवा हृदय के सागर से विस्तृत और अथाह उत्साह की इठलाती उठती तरंगों में तरंगायमान हो विलीन होती जा रही थी। आचार्य संघ के साथ चल रहा यह मुनि मौसम व मार्ग की प्रतिकूलताओं को चुनौती देता आगे बढ़ रहा था।

यद्यपि संदीप (मुनि सुनीलसागरजी) कई बार विहार में संघों के साथ पैदल चले थे। किन्तु तब शरीर पर कपड़े थे। पर आज नग्न बदन पर चारों ओर से गर्म हवाओं के थपेड़ों की मार सहते, नंगे पैरों से काँटों-भाटों भरी भट्टी सी तपती धरती पर वे हँसते-मुस्कराते चल रहे थे। न जरा सी आकुलता, न विकलता। यद्यपि गंतव्य तक पहुँचते-पहुँचते 24 घंटे में एक बार आहार-पानी लेने वाली संत चर्या निभाने वाले इस मुनि के प्राण प्यास के मारे छटपटा रहे थे। होंठ सूख रहे थे। पाँवों में फफोले उठ आए थे पर आत्मानंद में खोया यह साधक इसे देह का विषय मान समता के शीतलोदक से शांत कर रहा था। आत्मसाधना के फौलादी इरादों में वह इतना डूब गया, इतना डूब गया कि उसका अपने शारीरिक कष्टों की ओर तनिक भी ध्यान नहीं गया।

अंतराय : दीक्षा प्रारंभ में

जब मुनि श्री सुनीलसागरजी नव दीक्षित थे उस समय आचार्य श्री सन्मति सागरजी के संघ में एक नियम चलता था कि संघस्थ साधु-श्रावकों को शूद्र जल का त्याग करवाएँ, उसके बाद ही उनसे आहार लें। मुनि श्री सुनीलसागरजी उस समय संघ में प्रतिभावान साधक थे। उन्हें लगातार आठ दिनों तक अंतराय होता रहा। उनका स्वास्थ्य निरंतर गिरता जा रहा था। इतनी कमजोरी आ गई थी कि बड़ी मुश्किल से चल-फिर पा रहे थे।

आचार्य श्री चिंतित हो गए। नौवें दिन वे मुनि सुनीलसागरजी को अपने साथ आहार चर्या के लिए ले गए। आपने अपने नियम 'शूद्र जल का त्याग करवाने' (श्रावकों को) के नियम को शिथिल करते हुए कहा कि आप किसी श्रावक को शूद्र जल का त्याग न दें। सभी श्रावकों को आपको आहार देने का अवसर मिले। मुनि सुनीलसागरजी की स्थिति को देखते हुए आचार्य श्री सन्मतिसागरजी ने संघ के कई नियमों में परिवर्तन व समझौते किये। आपने प्रवचनसार की इस गाथा पर अमल किया-

आहारे वा विहारे देसे कालं समं खमं उवहिं।
जाणित्ता वि समणो वट्टदि जदि अप्प ले सो।।23।।

1997 की घटना

मुनि श्री सुनीलसागरजी की दीक्षा के पश्चात आचार्य श्री ने उनकी जन्मकुंडली मंगवाई। आचार्य श्री ज्योतिष के अच्छे ज्ञाता थे। पुष्य नक्षत्र में जन्म व अच्छे ग्रह योगों को देखते हुए आचार्य श्री ने मुनि सुनीलसागरजी से कहा, आपका भविष्य बहुत उज्ज्वल है। आपके ग्रह बता रहे हैं कि आप बहुत ऊँचाई पर पहुँचेंगे। किसी बहुत महत्वपूर्ण पद की जिम्मेदारी बड़ी कुशलता से निभाएँगे।

मुनि सुनीलसागरजी चुपचाप गुरु वचनों को सुनते रहे। तभी आचार्य गुरु ने उनसे कहा- ''मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता है। कभी भी कुछ भी हो सकता है। अतः मैं आचार्य पद किसी को सौंपने की सोच रहा हूँ।'' मुनि श्री गुरुजी की बात सुन सकते में आ गए। सोचने लगे, मेरी पत्रिका देख वे ऐसी बात क्यों कह रहे हैं? तब उन्होंने गुरुवर को आश्वस्त

करते हुए बड़े आत्मविश्वास के साथ कहा- ''अभी आपको 10-12 साल कुछ नहीं होना है। हमारे सिर पर गुरु आशीष का छत्र तना रहेगा।''

आश्चर्य से तब आचार्य श्री ने सुनीलसागरजी से पूछ लिया- ''आपको कैसे पता?'' शिष्य सुनीलसागर ने सविनय कहा, ''वैयावृत्ति करते समय मैंने आपके हाथों की रेखाएँ देखी थीं।'' ''अच्छा तो तुम हस्तरेखा भी जानते हो? तुम तो बड़े छुपे रुस्तम निकले।'' कहते हुए आचार्य श्री मुस्कुरा दिये।

अंततः कालान्तर में गुरु-शिष्य दोनों की बातें एक साथ सच हो गईं।

सकरार के लम्बे प्रवास में आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के सान्निध्य में अनेक धार्मिक कार्यक्रम संपन्न हो रहे थे। टुंडला के महेश कुमार जैन ने चौबीसी व त्रय आचार्यों आचार्य श्री आदिसागर अंकलीकर, आचार्य श्री महावीरकीर्ति, आचार्य श्री विमलसागरजी की मूर्तियाँ गुरुवर से प्रतिष्ठित करवाईं। नवीन जिनालय की वेदी प्रतिष्ठा, श्री सिद्धचक्र महामंडल विधान का भव्य आयोजन तथा प्रवचनसार की वाचना हुई। नवोन्मेष से युक्त मुनि श्री सुनीलसागरजी ने पहले दिन से ही हर कार्यक्रम में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। उन्होंने अपनी अकूत प्रतिभा, विलक्षण मेधा शक्ति, समर्पण व अटूट गुरुभक्ति की छाप आचार्य सम्राट के हृदय पर अंकित कर दी। मौन साधक आचार्य भगवन इस समर्पित युवा शिष्य की गतिविधियों को देख-देख बहुत खुश होते रहते। वे सोचते रहते कि बरुआ सागर से वे बेशकीमती हीरा लाए हैं जिसे तराशकर वे 'कोहीनूर' हीरा बनाना चाहते हैं जो जैन धर्म के तख्ते-ताज में मढ़ा जा सके। अतः वे नवदीक्षित मुनि की हर गतिविधि पर पैनी नजर रखे हुए थे। महावीर जयंती के दिन तो उन्होंने उसे भौतिक दीक्षा दी थी। आत्मपरिष्कार की दीक्षा तो उसकी अब शुरू हुई थी।

सकरार में 'प्रवचनसार' की वाचना गुरुदेव के सान्निध्य में संपन्न हुई। ज्ञान के भंडार इस महाग्रंथ ने उनके हृदय पर गहरी छाप छोड़ी। इसी ज्ञान के आलोक से वे अपनी खोई आत्म सत्ता को ढूँढना व पाना चाहते थे। दीक्षा प्राप्ति के प्रथम क्षण से ही ज्ञानपिपासु ये युवा संत ज्ञान प्राप्ति की सम्यक् साधना में निमग्न हो गए। विद्यार्थी जीवन से ही उन्हें पुस्तकों से विशिष्ट प्रेम था। संन्यस्थ जीवन में भी यथावत् रहा।

प्रथम संस्मरण

एक दिन मुनि श्री सुनीलसागरजी ने आचार्य गुरु के कक्ष में एक पुस्तक 'मेरी स्मृतियाँ' देखी। अज्ञानतावश संघानुशासन से अपरिचित तथा मुनि जीवन के छोटे-छोटे नियमों से अनजान पुस्तक प्रेमी ये मुनि पुस्तक पढ़ने की अपनी ललक व जिज्ञासा नहीं रोक पाए। वे वह पुस्तक मंदिर की पुस्तक जान वहाँ उपस्थित एक लड़के से पूछकर गुरुवर की अनुपस्थिति में ले आए तथा कह आए कि गुरुदेव को बता देना।

आचार्य गुरु भी उस पुस्तक को पढ़ रहे थे। अतः उस पुस्तक को न पा संघस्थ साधुओं से पूछताछ शुरू हुई। मुनि सुनीलसागर से भी पूछा गया।

उन्होंने सहज भाव से विनयावनत् हो जवाब दिया कि पुस्तक का शीर्षक पढ़ अपनी पुस्तक पढ़ने की चाह व जिज्ञासा को मैं नहीं रोक पाया। अतः कमरे में उपस्थित नीरज नामक लड़के को बताकर तथा आपको बताने का कहकर वह पुस्तक मैं आपकी अनुपस्थिति में ले आया।

आचार्य श्री ने उसे बुलाने की आज्ञा दी।

मुनि श्री उसे बुलाने बाहर तक गए लेकिन दूर-दूर तक उसका अता-पता नहीं था। अपराध बोध से सिर नीचा किये वे लौट आए। उन्हें लगा, मानो उन्होंने बहुत बड़ी चोरी कर ली हो। रुआंसे हो उन्होंने गुरुवर से कहा- ''वह लड़का तो नहीं मिला।'' उन्होंने नतमस्तक हो विनीत भाव से कहा- ''अब इस गलती का जो भी प्रायश्चित हो मुझे प्रदान करें।

प्रायश्चित शिरोधार्य है। भविष्य में ऐसी किसी गलती की पुनरावृत्ति न होगी।''

आचार्य श्री ने कहा- ''आज का उपवास करो।''

मुनि श्री प्रायश्चित लेकर लौट आए।

वे अपने कमरे में आ गए व मौन साधना में तल्लीन हो गए। जब-तब इस गलती पर पश्चाताप स्वरूप उनकी आँखों से आँसू छलक पड़ते थे। पश्चाताप के इन क्षणों में वे अपने जीवन के कुछ महत्वपूर्ण निर्णयों पर पहुँचे।

(1) किसी पर भरोसा मत करो, अपना काम खुद करो। यदि उन्होंने नीरज को पुस्तक लेने के बारे में आचार्य श्री को बताने का न कहकर स्वयं ही गुरुवर को जाकर बता दिया होता तो इतना बड़ा बात का बतंगड़ न होता। वे गुरुदेव की नजरों में न गिरते। (जैसा कि वे सोच रहे थे।)

(2) किसी की अनुपस्थिति में बिना उसकी आज्ञा के न उसके कक्ष में जाओ न किसी से बिना पूछे कोई पुस्तक या अन्य अति आवश्यक वस्तु लाओ या मँगाओ।

कहने-सुनने को तो यह तुच्छ सी घटना लगती है। जुम्मे-जुम्मे मुनि जीवन अंगीकार किये हफ्ता भी न बीता था कि यह घटना उन्हें जीवन का बहुत बड़ा सबक सिखा गई। उनके लिए चारित्रिक दृढ़ता का भव्य भवन खड़ा करने में नींव का पत्थर साबित हुई। उन्होंने अपनी इस गलती को छोटी नहीं, बहुत बड़ी माना कि ऐसी छोटी-छोटी गलतियाँ ही एक दिन पहाड़ बन हमारा सुख-चैन लूट लेती हैं। हमारा शांति का मार्ग अशांत हो जाता है। साधु जीवन के शुरुआती दौर में ही गुरुवर ने साध्वाचरण का यह पहला सबक सिखाकर मुझ पर बहुत बड़ा उपकार कर दिया है। वे प्रायश्चित की घुट्टी पिला-पिला कर हमारा कल्याण का मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं।

इसके बाद इस नौसीखिये संत ने संघस्थ साधुओं के प्रायश्चित के अनुभवों को सुनकर अनेकों शिक्षाएँ ग्रहण कीं। उन्हें लगा, दीक्षा एक से ली है किन्तु यहाँ श्रमणाचार को धवलता प्रदान करने अनेकों से प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष शिक्षा ग्रहण करने का अवसर मिलता रहता है। अब वे स्वयं तो संयमित रहने में जरा सी भी कोताही न बरतते साथ ही संघ के सभी संयमियों के क्रिया कलापों पर पैनी नजर रख आत्मपरिष्कार करते अपनी गलतियों को सुधारते रहते हैं। यद्यपि उनको दीक्षा लिए चंद दिन ही बीते थे लेकिन गृहस्थ जीवन व छात्र जीवन के सदाचारी आचरण से उनका साध्वाचरण इतना सधा हुआ व अनुशासित था कि वहाँ किसी गलती की कोई गुंजाइश ही नहीं थी। तथापि वे तो धुन के पक्के अपने को अच्छी तरह ठोक-बजा कर मजबूत बना लेना चाहते थे। उन्होंने अल्हड़ यौवन की लापरवाहियों पर लगाम कसना शुरू कर दिया।

इस घटना के पीछे उनके जीवन के कई गूढ़ रहस्य छिपे थे। अस्तु नए जीवन की यह नई पहली चन्द्रकला थी।

सकरार से रानीपुर

वैशाख के अंतिम दिन मई की भीषण गर्मी में सकरार से रानीपुर की ओर आचार्य संघ के साथ आपका विहार हुआ। रास्ते की दूरी का सही अनुमान न होने से विश्राम स्थल तक पहुँचते-पहुँचते अंधेरा होने लगा। दूसरे दिन सबेरे भी विहार कर रानीपुर पहुँचते-पहुँचते सूरज आग उगलने व धरती भट्टी सी तपने लगी थी। नंगे पैर चलते दिगंबर भेष धारी साधुओं का साध्वाचार देखते ही बनता था। उष्णता व चर्या परिषह से क्लेदित साधक आहार में दूध, पानी, रस व फल जैसी थोड़ी सी वस्तुएँ ग्रहण कर पाए। यद्यपि सबका आहार निर्विघ्न संपन्न हुआ किन्तु श्रावकों द्वारा बड़ी श्रद्धा से संतों के लिए बनाया भोजन ज्यों का त्यों धरा रह गया।

मुनि श्री सुनीलसागरजी के संत जीवन की चर्या का यह प्रथम अनुभव था। ग्रीष्म की प्रचंड उष्णता से उनकी दिगंबर देह झुलस गई। आहारचर्या के बाद भी उनका कंठ सूख रहा था, पेट व यूरीन में जलन हो रही थी। पाँवों में फफोले

पड़ गए थे। किन्तु बिना आकुलता-व्याकुलता के वे परिषह जयी मुनि धीरज व समता धारण किये हुए थे। वे सोच रहे थे, आत्मा को कुंदोज्वलन बनाने के लिए देह को तो तपना होगा ही। और वे आत्मचिन्तन में खो गए। आत्मसाधना में उनका दैहिक दुःख कब तिरोहित हो गया, पता ही नहीं चला। वे सोचने लगे- 'चैतन्यस्वरूपोहं।'

जतारा श्रुतोत्सव

रानीपुर के निकट जतारा में भी अच्छा खासा जैन समाज है। जतारावासियों के निवेदन पर आचार्य श्री ने नवदीक्षित मुनि सुनीलसागरजी की प्रतिभा व विलक्षण मेधा शक्ति देखते हुए उन्हें व उपाध्याय समतासागरजी को श्रुतोत्सव मनाने के लिए वहाँ भेज दिया। विशाल शोभायात्रा के साथ मुनिद्वय नगर के बाहर बनी पांडुक शिला पर पहुँचे। नवनिर्मित काष्ठासन पर जैसे ही मुनि श्री बैठे कि अचानक बादल घिर आए व जोरों से पानी बरसने लगा। खुले आसमान के नीचे पद्मासन लगाए दोनों संत बैठे पानी में भीगते रहे। 30-35 मिनट बाद पानी बंद हुआ। श्रीजी के अभिषेक के पश्चात जुलूस लौटने लगा।

घटना नं. 2

पर यह क्या? रास्ते में ही मुनि श्री सुनीलसागरजी को अपने गुप्तांग (वृषण) पर दर्द व सूजन महसूस होने लगी। जस-तस संत आवास तक पहुँचते-पहुँचते मर्ज ने विकराल रूप धारण कर लिया। शहर के एक से एक डॉक्टर, वैद्य, हकीम व जानकारों का मेला लग गया। पर सब बेबस थे। मुनि श्री न तो उनकी दी दवाई ग्रहण करते थे न इंजेक्शन। उनकी तकलीफ बढ़ती जा रही थी। एक पल को भी चैन नहीं था पर मन कड़ा कर वे ध्यान में लगे रहे। जैसे-तैसे रात बीती। विशेषज्ञ डॉक्टरों ने शल्य क्रिया की बात कही व कहा इस तकलीफ का अन्य कोई उपचार नहीं है। पर मुनि श्री अपने नियम पर दृढ़ थे। कह रहे थे- ''समाधि ले लूँगा पर मुनिपद नहीं छोडूँगा।'' आचार्य श्री तक भी यह बात पहुँच गई थी पर वे भी कुछ कह नहीं पाए।

इधर मुनि श्री की तकलीफ बढ़ती ही जा रही थी। समाज जन से उनकी असह्य वेदनामय स्थिति देखी नहीं जा रही थी। जैन व जैनेतर समाज के प्रबुद्ध गणमान्य जन इन युवा मुनि को समझा रहे थे कि आप युवा हैं, दीक्षा ग्रहण किये महीना भर भी नहीं हुआ है। आप इलाज करवा लीजिये। प्रायश्चित ले पुनः दीक्षा ग्रहण कर लीजियेगा। आप जैसे असाधारण व्यक्तित्व के धनी संत की वर्तमान में समाज को सख्त आवश्यकता है। आपसे समाज का बहुत बड़ा कल्याण होने वाला है। बीमारी की बात चारों ओर फैल गई। आसपास के स्थानों से भी समाज जन डॉक्टर, वैद्यों को ले-लेकर आ रहे थे पर सब आपकी चारित्रिक दृढ़ता के आगे असहाय थे।

जतारा के जैन डॉक्टर से मुनि श्री की यह पीड़ास्पद स्थिति देखी नहीं जा रही थी। वे आकर बोले- ''महाराजजी, मैं आज टीकमगढ़ जा रहा हूँ वहाँ के प्रसिद्ध आयुर्वेदिक डॉक्टर सुरेन्द्र जैन (पठा वाले वैद्य) से इस संबंध में चर्चा करने के लिए। यदि बीमारी का निदान न मिला तो आपको हमारी प्रार्थना स्वीकारनी होगी और ऑपरेशन करवाना होगा। यह कोई लाइलाज या असाध्य बीमारी नहीं है जो आप समाधि ले लें। हम ऐसा नहीं होने देंगे। आप प्रायश्चित लेकर पुनः अपनी चर्यारत हो जाइयेगा। इतिहास साक्षी है आचार्य समंतभद्र स्वामी का बहुत बड़ा उदाहरण हमारे समक्ष है।

मुनि श्री कुछ कहते इससे पूर्व ही वे वहीं से टीकमगढ़ के लिए निकल गए। वे सीधे डॉ. सुरेन्द्र जैन (वैद्यजी) के पास पहुँचे व सारा वृत्तांत बताया। उन्होंने आम्बा हल्दी व ग्वारपाठा का लेप हल्का गरम करके दिन में दो-तीन बार लगाने को कहा। डॉ. जैन ने तुरंत टीकमगढ़ से समाज के वरिष्ठ जन को यह उपचार प्रारंभ करने को कहा। वे चाहते थे कि उनके पहुँचने तक तो गुरुदेव को थोड़ा आराम मिल ही जाएगा। लौटते ही मुनिभक्त डॉ. जैन सीधे संत आवास

पर पहुँचे। समताभावी संत का चेहरा देखते ही उन्होंने राहत की साँस ली। लेप लगाने के बाद उन्हें बहुत आराम रहा।

तीसरे दिन तक तो उनको बीमारी से काफी हद तक आराम मिल चुका था। उन्होंने प्रवचन भी दिया। सारी अफवाहें समाप्त हो गईं व उनकी बाधित दिनचर्या पटरी पर आ गई। एक मुनिभक्त डॉक्टर ने संतों के प्रति अपनी/श्रावक की कर्तव्य परायणता का बेमिसाल उदाहरण प्रस्तुत किया। उधर युवा संत ने अपने धीरज, समता भाव व चारित्रिक दृढ़ता से परिषह जन्य इस कष्टप्रद स्थिति को सहन करते हुए आदर्श उपस्थित किया।

अल्पावधि में जतारा समाज आपकी विलक्षण प्रतिभा व चारित्रिक दृढ़ता का कायल हो गया। वहाँ धर्मामृत बरसने लगा। कुछ समय पश्चात आचार्य संघ भी जतारा आ गया। आपकी विद्वत्ता की प्रशंसा सुन गद्-गद् हो गए। गुरु शिष्य से यही तो चाहता है।

पपौराजी

जतारा से संघ के साथ मुनि श्री सुनीलसागरजी का विहार आषाढ़ के प्रारंभिक दिनों में टीकमगढ़ से 5 कि.मी. दूर पपौरा के लिए हुआ। वहाँ तीन दिनी मंगल वास में आपने इस अतिशयकारी तीर्थक्षेत्र में भगवान बाहुबली की उत्तुंग प्रतिमा सहित गंधकुटीनुमा 4 मंदिरों, रथ मंदिर तथा 105 अन्य जिनालयों की भाव भक्ति व श्रद्धा से वंदना की। वहाँ उपसर्ग विजेता भगवान पार्श्वनाथ की श्यामवर्णी नवनिर्मित प्रतिमा मनोहारी व आकर्षक है। प्रसन्नमना वहाँ से संघ के साथ समाज के आग्रह भरे निवेदन पर आप टीकमगढ़ पहुँचे। वहाँ संघ की भव्य अगवानी हुई।

1997 का टीकमगढ़ चातुर्मास

आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के सन् 1997 के मंगल चातुर्मास के मंगल कलश की स्थापना टीकमगढ़ में हुई। हर क्रिया में आप गुरुजी (आचार्य भगवन को मुनि सुनीलसागरजी गुरुजी कहते थे) के साथ रहे व सूक्ष्म अवलोकन करते शाम को अपनी डायरी में लिखते रहते।

सबक-1 : चातुर्मास में आपने प्रत्येक माह की एक सप्तमी व एक त्रयोदशी के उपवास की प्रतिज्ञा गुरुवर से की। संघस्थ एक पिच्छीधारी ने मुनि श्री से कहा कि आपने माह में पड़ने वाली चारों तिथियों के उपवास का नियम लिया है। आपने आचार्य श्री के समक्ष अपनी बात की पुष्टि करवानी चाही पर आचार्य श्री मौन रह गए। तब आपने बात को विराम देते हुए कहा- ''ठीक है, हम चारों तिथियों को उपवास कर लेंगे।''

आपने बात को तूल न देकर अपने पर लेकर समय व शक्ति नष्ट न कर अपने विशिष्ट गुण का परिचय दिया। आपने गुरुजी की पाठशाला से जीवन का नया सबक सीखा कि कोई भी व्रत-नियम लो, पूरा खुलासा करके लो ताकि गलती होने पर न स्वयं को व्रत अतिचार का दोष लगे और न किसी को कुछ कहने का मौका ही मिले। जाने-अनजाने हुई गलती को सुधार लेने में ही अपना भला है। इस प्रकार उन्होंने अपने विनम्र व समन्वयवादी व्यवहार की छाप गुरु हृदय पर छोड़ दी।

सबक-2 : नवदीक्षित युवा मुनि सुनीलसागर के पुस्तकें पढ़ने व लेखन प्रेम से प्रसन्न हो आचार्य श्री कुमुदनंदीजी ने उन्हें एक पुस्तक दी। पूर्व में पुस्तक प्रकरण उनके साथ घट गया था अतः वे तत्काल गुरुजी के पास पहुँचे व बताया कि यह पुस्तक उन्हें आचार्य श्री कुमुदनंदीजी महाराज ने दी है।

एक तो आचार्य श्री शिष्य के इतने अधिक पुस्तक प्रेम से अपरिचित थे, दूसरा वे प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष हर चारित्रिक दृढ़ता का पाठ शिष्य को पढ़ा देना चाहते थे ताकि भविष्य में ऐसी छोटी-छोटी बातें तिल का ताड़ न बना दे। अतः उन्होंने शिष्य से पूछा- ''तुमने माँगी होगी तभी उन्होंने तुम्हें यह पुस्तक दी होगी। इतने साधुओं के बीच भला वे तुम्हें

ही यह पुस्तक क्यों देने लगे।''

गुरुजी के वचन से मर्माहत हो वे तुरंत आचार्य श्री कुमुदनंदीजी को आचार्य श्री के समक्ष लिवा लाए व अपनी बात की पुष्टि करवा दी। आ. कुमुदनंदीजी ने कहा कि ''मैंने देखा, ये पुस्तक प्रेमी है। इसीलिए मैंने इन्हें यह पुस्तक दी ताकि पुस्तक पढ़कर अपने गुणों में वृद्धि कर सके। अपने व औरों के कल्याण में इस पुस्तक का सदुपयोग कर सकें।''

आचार्य श्री ने मौन संतुष्टि अभिव्यक्त की व शिष्य को समझा दिया कि सत्यमहाव्रत पालने में पुस्तक माँगने (बिना गुरु आज्ञा) भी दोष लगता है। आप जैसे समझदार शिष्य के लिए इशारा काफी था।

आज शिष्य ने गुरु पाठशाला में एक और सबक सीखा। इस बहाने उसे अपने दोषों के परिमार्जन का मसाला और मिल गया। अब वे अपने दोषों व गलतियों के प्रति सतर्क व चौकन्ने हो गए। वे संघस्थ साधुओं से भी बातचीत में पता लगाते रहते कि किस-किस दोष व गलती के लिए क्या प्रायश्चित मिला है व मिला था। इस प्रकार वे स्वयं को जिन संघानुशासन में ढालने लगे व जितना संभव हो सके, दोषों व गलतियों से बचने के प्रयास करने लगे। साथ ही संघस्थ हर पिच्छीधारी के ज्ञान व आचार-विचार का चुपचाप सूक्ष्म अवलोकन करते रहे। कहने को पाठशाला एक थी, संघ एक था, पर नवदीक्षित मुनि सुनीलसागर के लिए आचार्य श्री के अलावा शिक्षा देने वाले भी अनेक थे। इतनी अल्पावधि में उन्होंने संघ में रहकर देखा कि संस्कार, समता, समर्पण, सहनशीलता, सहयोग, स्वावलंबन, सेवा भावना, शांति आदि का संन्यस्थ जीवन में कितना अधिक महत्व है। संसारी व संन्यासी में यही तो अंतर है। जहाँ सांसारिक जीवन में छोटी-छोटी बातों पर लोग क्रोधवश गाली-गलौज, चाकू-छुरे व पिस्टल पर उतर आते हैं वहीं यहाँ गुरुदेव हमेशा हम शिष्यों को समता का शीतल नीर पिला, मन को शांति प्रदान करते हैं। यहाँ सभी कषायों से दूर अपने आत्मकल्याण में लगे हैं।

अब हर सूर्योदय के साथ वे सोचते, मेरे 'रत्नत्रय मार्तण्ड' गुरुवर आज मुझे कौनसा नया पाठ पढ़ाएँगे। मुनि श्री का यही सकारात्मक सोच उन्हें आगे बढ़ने की प्रेरणा देता रहा व उन्हें आगे, बहुत आगे ले गया।

गुरु सेवा समर्पण

चूँकि 1997 टीकमगढ़ चातुर्मास में आचार्य श्री सन्मतिसागरजी महाराज ने प्रथम माह एक उपवास एक आहार, द्वितीय माह दो उपवास एक आहार, तीसरे माह तीन उपवास एक आहार व चौथे माह चार उपवास एक आहार का अघोषित नियम ले रखा था। फलतः उनके मन ने तो इतनी कठिन तपस्या की साधना साध ली लेकिन शरीर तो शरीर है, चाहे वह साधु का हो या संसारी का। आचार्य श्री दिन पर दिन कृषकाय होते जा रहे थे। वे अस्वस्थ रहने लगे। सेवा व समर्पण भावी शिष्य मुनि सुनीलसागर साए की तरह उनकी वैयावृत्ति की भावना से रात-दिन गुरु चरणों में रहने लगे। वे रात-रात भर नहीं सोते थे। उन्होंने देखा कि इस अस्वस्थ स्थिति में भी गुरुजी का आत्मबल कितना दृढ़ है। अल्पाहार, अल्प निद्रा व रुग्णावस्था में भी उनकी चारित्रिक दृढ़ता, सुव्यवस्थित जीवन शैली व यथावत संघानुशासन देखते बनता था। जो अनुकरणीय, स्तुत्य व वंदनीय था। उनके धीरज की कोई सीमा नहीं थी। आकुलता-व्याकुलता की चेहरे पर शिकन भी नहीं थी। वही शांत, सौम्य, समताभावी छवि पूर्ववत थी। उनकी किसी भी गतिविधि व क्रियाकलाप पर उनकी अस्वस्थता का कोई असर नहीं था। गुरुजी की इस अनूठी तपस्या से प्रेरित युवा मुनि समर्पित भाव से और अधिक गुरु सेवा में लग गए।

मुनि सुनीलसागरजी की जीवन कार्यशाला में एक और नया सबक जुड़ गया। इसे संयोग कहेंगे या उनके भव्य भवितव्य की नींव, मुनि श्री के व्यक्तित्व को सुधारने, सँवारने के लिए नित-नूतन आदर्श मिल रहे थे। और वे स्वयं को सुधारने, आत्मगुण निखारने में चमक भरने में और अधिक व्यस्त रहने लगे। उन्होंने अपने गुरु से सीखा कि इतनी तपस्या के बाद भी आत्मध्यान कैसे साधा जाता है।

स्वाध्याय प्रकरण

टीकमगढ़ चातुर्मास 1997 के दौरान आचार्य श्री द्वारा कुंदकुंद देव के पंचास्तिकाय का स्वाध्याय चलता था। स्वाध्याय के दौरान विषय संबंधित चर्चाएँ व शंका समाधान भी हुआ करता था। जिस प्रकार सकरार में मुनि श्री सुनीलसागर प्रवचनसार की वाचना में गहन रुचि से पपीहे की प्यास के साथ ज्ञानामृत का पान करते रहे, यहाँ भी वे उतनी ही तन्मयता से स्वाध्याय का लाभ लेते रहे। नित्य वाचना से पूर्व व वाचना के बाद प्रकरण का गहन अध्ययन करते। चूँकि वे कॉलेज में पढ़ाई के दौरान ही आध्यात्म जगत में प्रवेश कर गए थे अतः यहाँ भी एक मेधावी छात्र के रूप में ही स्वाध्याय शाला का लाभ लेते रहे।

एक दिन स्वाध्याय के मध्य किसी प्रकरण पर उन्होंने आचार्य गुरु से कहा कि उस प्रकार का प्रकरण समयसारजी में भी आया है। आचार्य श्री ने प्रामाणिकता प्रस्तुत करने को कहा।

उत्साहित मुनि सुनीलसागर तत्काल वह ग्रंथ ले आए किन्तु उसमें वह प्रकरण नहीं मिला। उनका उत्साह कपूर की तरह काफूर हो गया।

तब गुरुजी ने उनके साथ समस्त संघ को शिक्षा देते हुए समझाया कि जब तक संदर्भ व ग्रंथ की पूर्ण व पुख्ता जानकारी न हो, तब तक धर्मसभा, स्वाध्याय सभा, विद्वत् सभा के बीच न बोलना चाहिये न अपनी बात रखना चाहिये। इससे स्वयं की प्रामाणिकता पर प्रश्नचिह्न लग जाता है। हो सकता है वैसा कोई प्रकरण अन्य ग्रंथ में आया हो, उसके बदले आपको अन्य ग्रंथ का नाम याद रह गया हो। अतः जो भी पढ़ो, सावचेत, सतर्क हो पढ़ो, बार-बार पढ़ो, महत्वपूर्ण प्रकरण ग्रंथ व लेखक के नाम के साथ याद करो तभी तुम विद्वत् परिषद में चर्चा करने की पात्रता अर्जित कर सकोगे। तुम्हारे सटीक प्रश्न सबको आकर्षित करेंगे।

इस घटना से मुनि श्री को अपने अल्प ज्ञान पर दुःख हो रहा था। मुझे अति उत्साहित हो बीच में नहीं बोलना चाहिये था। निश्चित ही मेरा ज्ञान अधूरा है।

युवा मुनि ने गुरुजी की इस शिक्षा को अपनी ज्ञान पोटली में बाँध-सहेजकर रख लिया। वे गुरुजी से प्राप्त प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष शिक्षाओं की ईंटों से अपने ज्ञान के भव्यभवन की नींव मजबूत करने में जुटे रहे। अपने कर्मों के गड्ढे उस ज्ञान प्रकाश से प्राप्त निर्जरा से भरने का पुरुषार्थ करते रहे।

गुरुजी की इस शिक्षा को उन्होंने अपने परिष्कार व परिमार्जन की दिशा में गंभीरता से लिया। इसे उन्होंने आत्मचिंतन का मोड़ दे दिया। अब उनकी चर्चा व समाधान शैली ही बदल गई। कुछ दिन मौन रहने के बाद उनका नव्य-भव्य रूप प्रकट होने लगा।

सीखना ही सीखना

सीखना ही सीखना, साथ में निखरना ही निखरना मानो मुनिश्री के जीवन का लक्ष्य रहा। उसी क्रम में उन्हें प्राप्त एक नई छोटी सी शिक्षा जो आज उनकी इतनी बड़ी उपलब्धियों का मूल आधार है। स्वाध्याय प्रेमी मुमुक्षु को मन में रहता ही है कि अमुक शास्त्रजी पढ़ना है, अमुक में से लिखना है, अमुक कभी काम आएगी, ऐसे में मुनिश्री के पास किताबों का ढेर हो गया। गुरु की नजरों से कुछ छिपता नहीं है। आचार्यश्री को पता चला तो प्रोत्साहित करते हुए कहा कि ''सुनीलसागर! आप जैसे मुनि के माइंड में सब शास्त्रजी शोभा देते हैं, अपने पास नहीं।''

मुनिश्री ने कहा- ''जो आज्ञा।''

मुनिश्री के बात गले उतर गई, समझदार को इशारा काफी है। उसी दिन से गुरुदेव को पाँच-पाँच गाथाएँ उन्होंने मुखाग्र सुनाना प्रारंभ कर दिया। आचार्यश्री की असीम कृपा व मुनिश्री का सतत पुरुषार्थ कि आज उन्हें वे समस्त ग्रंथ कंठस्थ व हृदयस्थ हैं। आज एक भी शास्त्रजी पास न हो तो भी वे घंटों लगातार श्रुत का पाठ अध्ययन मनन कर सकते हैं। कम्प्यूटर से भी फास्ट परफेक्ट समाधान, गाथा क्रमांक सहित प्राप्त हो जाता है। तब से अब तक मुनिश्री जो शास्त्र स्वाध्याय चल रहा हो, उस एक पुस्तक के अलावा किसी प्रकार का अतिरिक्त ग्रंथ पास नहीं रखते हैं, न ही डायरी में लिखते हैं। कोरे सादे कागज पर लिखा, अलग कर दिया। गुरु का अनुग्रह रहा कि मुनिश्री को जरा से भी परिग्रह की पराधीनता न रही। सच है, गुरुदेव तो हित के लिए कहते हैं, झेलने वाले शिष्य की अपनी निष्ठा व पात्रता चाहिये। सच कहें तो पात्रता भी गुरु ही समर्पणता परखकर विकसित करते हैं।

पूज्यश्री हमेशा कहते हैं कि ज्ञान ही सच्ची पूँजी है। यदि इस ज्ञान संपदा की बात करें तो सर्वाधिक श्री संपन्नों की सूची में आचार्यश्री सुनीलसागरजी का नाम सबसे ऊपर की श्रेणी में आएगा।

माताजी सूर्यमती व सुबोधमती - समाधि

ढलते-उतरते चातुर्मास व सन् 1997 के अंतिम महीनों में उन्हें संघस्थ आर्यिका सूर्यमती व सुबोधमती माताजी की समाधि अत्यधिक निकटता से देखने का अवसर मिला जो जीवन की नश्वरता का बोध करा गई। साथ ही साधु समाधि व अन्त्य संस्कार विधि का भी व्यावहारिक ज्ञान हो गया। इन घटनाओं ने उनके जीवन पर गहरा प्रभाव छोड़ा। वे चिन्तन करने लगे। देखो, कुछ समय पहले जो वर्तमान थी, काल के क्रूर प्रहारों से अब अतीत बन गई। सबको एक दिन इसी तरह अतीत बन जाना है, इतिहास बन जाना है।

पंचकल्याणक व गजरथ महोत्सव : दिसंबर 1997

टीकमगढ़ में सन् 1997 नवंबर माह में नंदीश्वर कॉलोनी स्थित नवनिर्मित नंदीश्वर जिनालय में सिद्धचक्र महामंडल विधान संपन्न होते ही 1 दिसंबर से 7 दिसंबर सन् 1997 तक तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के पावन सान्निध्य में पंचकल्याणक व भव्य गजरथ महोत्सव सानंद संपन्न हुआ। युवा मुनि सुनीलसागर ने अपनी विशिष्ट उपस्थिति दर्ज करवाई। युवा वर्ग, समाजजन, विद्वत् व विशिष्टजनों से सतत संपर्क में रहने से समाज में गुरुवर के साथ-साथ आपकी ख्याति भी फैल गई। आप भी लोगों की चाहत बन गए। अल्पावधि में आपने अपने पुरुषार्थ, हित-मित-मृदु वाणी, तीक्ष्ण बुद्धि, सदाचार व असाधारण ज्ञान से समाज में अपनी अलग पहचान बना ली। छोटे महाराज 'महारा' बन सबके लिए चुम्बकीय ध्रुव बन गए।

प्रतिष्ठा के बाद नंदीश्वर कॉलोनी गए तब गुरु आज्ञा से मुनि श्री को प्रवचन का निवेदन करते हुए ब्र. जय निशांतजी बोल रहे थे- ''आचार्य श्री के प्रवचन के पूर्व मैं उनके 'गणधर स्वरूप' मुनि श्री सुनीलसागरजी से निवेदन करता हूँ कि वे मंगल धर्मोपदेश देकर हमें सत्पथ दिखाएँ।''

* * *

आचार्य श्री भी देखते-सुनते मुस्कराते रहे और मुनि श्री का प्रवचन सविधि संपन्न हुआ। जो निश्चित ही स्तुत्य, ग्रहणीय व अनुकरणीय था। तत्पश्चात गुरुदेव का मंगल प्रवचन हुआ।

इस प्रकार युवा मुनि संघ में संघानुशासन बद्ध रहते हुए भी अपनी साधना व पुरुषार्थ से गुरु कृपापात्र बन अपने व्यक्तित्व व प्रतिभा को निखारते रहे। तराशने का काम गुरुदेव करते थे।

आचार्यश्री द्वारा सुनाया गया संस्मरण

टीकमगढ़ शीतकालीन वाचना के समय का प्रसंग है। मुनिश्री का आहार में अंतराय होने से वे जल्दी आकर मंदिर में ऊपर भगवान के पास बैठे थे। वहाँ एक आर्यिका माताजी आई व कुशलता पूछकर बात करने लगी। हमेशा मौन रहने वाले मुनिश्री को क्या सूझी कि सहज रूप से मातृ दृष्टि से माताजी से बात करते हुए पूछा कि आचार्यश्री आहारचर्या से आ गए क्या? तो हम नीचे जाकर प्रत्याख्यान कर लें। माताजी ने यहाँ तो कहा कि वह देखकर आती हैं और वहाँ नीचे जाकर गुरुजी से कहा कि आचार्यश्री! सुनीलसागरजी कह रहे हैं कि आप अभी तक आहार करके क्यों नहीं आए? आचार्यश्री ने एकदम कहा कि सुनीलसागर मेरा गुरु है क्या? वहाँ मुनिश्री को कुछ पता ही नहीं है, वह गुरुदेव के पास पहुँचे व प्रत्याख्यान करने लगे। आचार्यश्री के चेहरे पर कुछ नाराजगी दिख रही थी और आश्चर्य तब हुआ जब मुनिश्री ने अपना आसन व चौकी कमरे के कोने में रखा देखा। समझ गए कि कुछ तो बात है पर क्या हुआ है कुछ पता न था व न ही पूछने की हिम्मत हुई। बिना कुछ कहे उस कोने में ही मुनिश्री ने सामायिक कर ली, उतने में एक हितचिंतक ने सब बात स्पष्ट की व बताया कि माताजी ने अमुक बात कही है इसीलिए गुरुजी आपसे नाराज हैं। मुनिश्री ने कोई सफाई नहीं दी, न ही कुछ प्रतिक्रिया की व न ही सेवा, वैयावृत्ति व गुरुभक्ति में कमी हुई। धीरता व समर्पणता का सुफल रहा कि आचार्यश्री को दो दिन में स्वतः ही बात स्पष्ट हुई कि मुनिश्री ने कुछ भी अयोग्य बात नहीं की थी। मुनिश्री ने तब से कान पकड़े कि बिना मतलब किसी से कुछ भी नहीं बोलना, खासकर औरतों से। अच्छा ही हुआ, अधिक सावधानी व मौन साधना बढ़ती गई, चौकी व आसन के साथ मन भी यथावत गुरु के निकट आ गया।

1997-1998

दिसंबर 1997 में बारिश व हाड़तोड़ ठंड के कारण टीकमगढ़वासियों ने आचार्य संघ को विहार करने से रोक लिया। समाज के वरिष्ठ व गणमान्य श्रावकों, विद्वानों, पंडितों के अति विशेष आग्रह पर उनका शीतकालीन वाचना का निवेदन आचार्य श्री ने स्वीकार कर लिया।

20 दिसंबर 1997 से सुबह 'नियमसार', व अपराह्न 'वृहद द्रव्य संग्रह' तथा 'रत्नकरंड श्रावकाचार' की विधिवत् वाचना नए मंदिर में प्रारंभ हो गई। 40-45 दिनों तक यह वाचना चलती रही। मुनि श्री सुनीलसागरजी को इस ज्ञानशाला में अपनी ज्ञान की रोशनी को प्रखर करने का अवसर मिला। जहाँ चाह वहाँ राह। पंचकल्याणक में तो गुरुवर ने पाषाण प्रतिमा में अंजन शलाका से प्राण फूँके थे यहाँ तो वे जीवंत चैतन्य प्रतिमाओं के उन्मीलित नेत्र ज्ञानांजन शलाकाओं से खोल रहे थे जहाँ मुनि श्री सुनीलसागरजी स्वयं को अपडेट कर रहे थे। मुनि श्री अच्छी तरह समझते थे कि यह 'ज्ञानसूरज' ही 'अज्ञान के क्षितिज' की परतें तोड़ ज्ञान प्रकाश से हृदय आलोकित कर मुनि जीवन सार्थक कर देगा। अतः वे इस ज्ञान के मधुछत्ते की एक-एक बूँद सोख कर, पी लेना चाहते थे, व वैसा किया भी। इन 40-45 दिनों में उन्हें लगा- ''उन्होंने बहुत कुछ पा लिया है। वे इस ज्ञानशाला की सौर ऊर्जा से पल-प्रतिपल स्वयं को उर्जस्वित करते रहे। यदि प्रतिभा व परिश्रम मिल जाते हैं तब व्यक्ति प्रत्येक क्षेत्र में समृद्धि के शिखर पर पहुँच जाता है।''

टीकमगढ़ प्रवास के अंतिम दिनों मंझार मंदिर में आचार्य श्री सन्मतिसागरजी का जन्म जयंती महोत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया गया। इस अवसर पर जयपुर के सुश्रावक श्री त्रिलोकचंदजी गोधा व श्री रतनलालजी बड़जात्या ने आचार्य श्री से निवेदन किया कि वे ससंघ उन्हें सम्मेदशिखरजी यात्रा कराना चाहते हैं। आचार्य श्री की तो मन की बात हो गई। कई बार संघ में शिखरजी की यात्रा की चर्चा चलती थी। कुछ दिनों पूर्व ही मुनि श्री सुनीलसागरजी ने कहा था कि यदि हम सबका प्रबल पुण्य संयोग होगा तो शीघ्र ही यात्रा का योग आएगा। आचार्य श्री ने बड़जात्याजी से बड़ा मलहरा

में विचार कर जवाब देने को कहा।

फरवरी सन् 1998 के प्रारंभिक दिनों में संघ के साथ पपौराजी पहुँचे। वहाँ के 105 जिनालयों की 7 माह पश्चात पुनः वंदना की व संयोग से रात्रि विश्राम उसी भवन में किया जिसमें चातुर्मास के पूर्व किया था।

अहारजी-द्रोणगिरिजी

पपौराजी से विहार कर संघ के साथ पठा व नारायणपुर में रात्रि विश्राम कर आप अहारजी अतिशय क्षेत्र पहुँचे। वहाँ विशाल जिनालय में 'तीर्थंकर त्रिपुटी' बीच में 15 फीट ऊँची मनोहारी भगवान शांतिनाथजी की खड़गासन प्रतिमा तथा दायें-बायें कुंथुनाथ व अरहनाथ भगवान की वीतरागता रस बरसाती खड़गाहन प्रतिमाओं के दर्शन किये। मन गद्गद् हो गया। वहाँ आपने त्रिकाल चौबीसी की 72 तथा विदेह क्षेत्र के विद्यमान 20 तीर्थंकरों की प्रतिमाओं के भी दर्शन किये। व शेष अन्य छह मंदिरों की भी वंदना की।

रात्रि विश्राम के बाद आपने यहाँ से आधा कि.मी. दूर पहाड़ी पर स्थित छह चरण छतरियों के दर्शन किये। यहाँ से आप संघ के साथ लार, बुढेरा व भगवां होते हुए संघ के साथ 15 फरवरी 1998 को द्रोणगिरि पहुँचे। सीधे द्रोणगिरि पर्वत की वंदना की, जिनबिम्बों के दर्शन किये। उस गुफा के भी दर्शन किये जहाँ से वरदत्तादि पंच ऋषिराज मुक्ति को गए। द्रोणगिरि की तलहटी में सेंधपा गाँव है। सिद्धक्षेत्र पर प्रवास कर आप संघ के साथ वहाँ से करीब 5-6 कि.मी. दूर स्थित बड़ा मलहरा पहुँचे। शहर में मंगल प्रवेश आचार्य संघ की अगवानी के लिए आए शहरवासियों के विशाल जुलूस के साथ बड़ी ही धूमधाम से हुआ।

इस प्रकार संत जीवन के नए-नए अनुभव लिए पदयात्रा करते वे जीवन पथ पर आगे बढ़ रहे थे। दिगंबर भेष, पदयात्रा के कष्ट, अनियत चर्या, लगातार अंतराय आते रहना, भूखे-प्यासे रह कठिन साधना करना आपके लिए सहज स्वाभाविक चर्या बन गई थी। हर हाल में आप हँसते-मुस्कराते, दूसरों को हँसाते, आत्मसाधनारत व गुरुसेवा में रत थे। अभी आप एक नौसिखिये विद्यार्थी की तरह हर पाठ पढ़ रहे थे।

24 फरवरी 1998 को बड़ा मलहरा में आचार्य श्री 108 आदिसागरजी अंकलीकर का समाधि दिवस (56वाँ), संघस्थ साधुओं के केशलोंच व पिच्छी परिवर्तन के भव्य समारोह के साथ मनाया गया। इस कार्यक्रम में सांसद रामकृष्ण कुसमारिया, क्षेत्रीय विधायक कपूरचंद घुवारा, उद्योगपति प्रेमचंद्र जैन व भागचंद्र जैन के साथ कई गणमान्य व विद्वत्गण उपस्थित थे। इस अवसर पर मुनिदीक्षा के बाद प्रथम बार अत्यल्प अवधि में सृजित मुनि श्री की तीन पुस्तकें 'भक्ति से मुक्ति', 'अमरत्व का अमृत' और 'इष्टोपदेश' (पद्यानुवाद) का विमोचन हुआ। जो आचार्य संघ व मुनि श्री के लिए विशिष्ट गौरव की बात थी।

विहार में सतत गुरुवर के सान्निध्य में रहकर उनकी साधना व तपस्या से प्रेरणा लेकर आप अपनी प्रतिभा व परिश्रम से आत्मसृजन के साथ-साथ साहित्य सृजन के रास्ते पर चल पड़े। पद विहार में यात्रापथ पर आरूढ़ रहते हुए भी मार्ग की कठिनाइयों से दो-दो हाथ करते आपने मुनिदीक्षा के प्रारंभिक दिनों में ही सिद्ध कर दिया कि हर परिस्थिति में जीवन सहज व सरलता से जिया जा सकता है। जीने की तरह लेखन भी स्वाभाविक रूप से किया जा सकता है। ये पुस्तकें युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी की तपी हुई साधना व जीवटता का परिचय थीं।

दीक्षा प्राप्ति की अल्पावधि में ही आपने अपने अध्यात्म ज्ञान के अध्ययन से प्राप्त मनन, चिन्तन व मंथन का दिग्दर्शन इन रचनाओं के माध्यम से करा अपनी उपस्थिति की पुष्प सुगंधी बिखेर दी। आचार्य श्री तो इस प्रतिभावान, धीर गंभीर शिष्य को अपने संघ के लिए गौरव की बात मान प्रमुदित होते रहते थे। इस सृजन धर्मिता ने सिद्ध कर दिया कि जिस मुनि सुनीलसागर के नाम के साथ सागर जुड़ा है, उसमें निश्चित ही सिन्धु सा विस्तृत

और अथाह हुंकार भरने वाला उत्साह भरा है। कहीं उथला छिछोरापन नहीं है। संत जीवन के प्रारंभिक दिनों में ही इन युवा मुनि ने एक युवा के नाते आकाश के तारे तोड़ लाने व सागर में आग लगा देने वाली अपनी युवा ऊर्जा की झलक दिखा दी। मुनि श्री शिव साधना में रत अपनी सृजन धर्मिता से अमरत्व का अमृत बाँटते, समय के एक-एक पल को मुट्ठी में बाँधते, पथ संचलन करते, संत जीवन की सार्थकता सिद्ध करते, संतों व समाज के समक्ष अपना अनुपम आदर्श प्रस्तुत कर रहे थे। उन्होंने इन पुस्तकों के माध्यम से अपने प्रारंभिक संत जीवन में ही यह जता दिया कि वे एक समतामूलक समाज का निर्माण करना चाहते हैं जिसमें मानव जीवन की गरिमा सुरक्षित रह सके।

इस प्रकार मानवता की राह में अपने सृजन के अबूझ प्रकाश दीप धरते वे इस आशा से आगे बढ़ते गए कि इन रचनाओं के ज्ञानालोक से दिशा बोध प्राप्त कर भव्यात्माएँ दीपोत्सव मना सके।

गुन्नौर- बड़ा मलहरा

बड़ा मलहरा से संघ को विहार करना था। आचार्य श्री सन्मतिसागरजी ने सतना के लिए दो रास्तों में से एक कच्चा, निर्जन व घने जंगलों वाला रास्ता चुना। युवा मुनि के लिए यह कठिन तप साधना का एक और नया अनुभव था। घने जंगलों वाला वह रास्ता कंकरों-पत्थरों से पटा, खूंखार जंगली जानवरों का आसरा था। झाड़ियों व पेड़ों के बीच जरा सी भी आहट होती कि सभी की निगाहें उस ओर उठ जाती। साथ चल रहे श्रावकगण अभी भी आचार्य श्री को समझा रहे थे कि गुरुदेव अभी तो थोड़ा ही चले हैं, लौट चलो और दूसरे पक्के रास्ते को अपना लो। यह तो एक झलक है, आगे तो कुछेक गाँवों में कुछ खूंखार लोग रहते हैं जो राहगीरों के साथ मारपीट कर लूटपाट करते हैं। पर आचार्य श्री टस से मस नहीं हुए और उसी राह पर ससंघ अग्रसर रहे।

मुनि श्री भी परिषह जन्य पीड़ा सहते यात्रापथ पर आगे बढ़ रहे थे। जैसे ही श्रावकों ने बताया कि एक खूंखार व्यक्ति का गाँव आने वाला है, आचार्य श्री ने सारे संघ को एकसाथ चलने की आज्ञा दी, कोई आगे-पीछे न रहे। जैसे ही संघ गाँव के निकट पहुँचा, उस व्यक्ति के नेतृत्व में हथियारों से लैस ग्रामीण बीच रास्ते में राह रोके खड़े थे। तभी पीछे से आवाज आई, ''बाबा लोग, जो कुछ माल तुम्हारे पास है, अपनी खैर चाहो तो यहीं धर दो।''

संघ रुक गया। आचार्य श्री के साथ युवा मुनि श्री सुनीलसागर दृढ़ता से खड़े थे। उन्होंने मुखिया से कहा, ''भाई हमारे पास न गाँठ है न गठरिया। हमारे पास तो ये पिच्छी-कमंडल है। फिर भी चाहो तो टटोल कर देख लो। यदि कुछ मिल जाए तो रख लेना।'' निडर खड़े साधु व मुनि श्री की बात सुन सन्तों पर सरसरी नजर डालते हुए उनके मुखिया उस खूंखार व्यक्ति ने कहा- ''चुप रहो, ये बाबा लोग तो नंगे हैं। ऐसे साधु तो हमने आज तक नहीं देखे।'' और वे सबके सब संत चरणों में गिर गए। संतों ने उन्हें मंगल आशीर्वाद दिया।

वे हाथ जोड़कर आचार्य श्री से कहने लगे, ''बाबा, हमें माफ कर दो। हम अज्ञानी हैं। उपलब्ध साधनों से हमारी जीविका चलती नहीं, अतः हम लूटपाट भी कर लेते हैं। क्या करें मजबूर हैं।''

आचार्य श्री ने अपना वात्सल्य उन पर उंडेलते हुए उन्हें अपनी बुराई को छोड़ने को कहा व अपने यात्रा पथ पर ससंघ आगे बढ़ गए। मुनि श्री सोच रहे थे कि यह दिगंबर संतों की निष्काम व निस्पृह साधना का फल है जिससे प्रेरित हो दुर्जन व्यक्ति भी अपनी दुर्जनता छोड़ उनके चरणों में नत हो जाते हैं।

किशनगढ़

पाँवों में गड़ते पथ के काँटों-भाटों से छलनी हुए घाव युत पैरों से चलते मुनि श्री सुनीलसागरजी को भगवान महावीर

का स्मरण हो आया कि प्रभु महावीर भी अपने साधना काल में ऐसे ही घने अरण्य में ऊबड़-खाबड़, कंटकाकीर्ण मार्ग पर पथ संचलन कर आगे बढ़ते रहे। प्रभु ने अपनी करुणा कृपा से ऐसे अनगिनत राह में मिले दुर्व्यवहार को उद्यत खूंखार व्यक्तियों पर वात्सल्य व समता भाव रख उनका उद्धार किया। मुनि सुनीलसागरजी भी पथ की बाधाओं से समता भाव से पार पाते आगे बढ़ने लगे। वे सोचते जा रहे थे कि इस कठिन, दुर्गम, कंटकाकीर्ण मार्ग ने ही मुझे भगवान महावीर का सच्चा पथानुयायी बनने का सौभाग्य प्रदान किया है। इस प्रकार वे पथ की बाधाओं को सहते सकुशल किशनगढ़ पहुँच गए।

किशनगढ़ से विहार कर आप महेबा अमानगंज पहुँचे। यहाँ से आप संघस्थ साधुओं के साथ आचार्य वासुपूज्य की जन्मभूमि के दर्शन कर गुनौर (जिला पन्ना) पहुँचे। यहाँ मनोहारी जिनेन्द्र भगवान की प्रतिमाओं के साथ तीन गुरु प्रतिमाओं के बीच में परम्पराचार्य (प्रथम) आचार्य श्री आदिसागरजी व आजू-बाजू आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी व आचार्य श्री विमलसागरजी की प्रतिमाओं के दर्शन कर भाव विभोर हो गए। ये प्रतिमाएँ प्रथम गणिनी आर्यिका विजयमती माताजी ने अपने सन् 1997 के चातुर्मास के दौरान प्रतिष्ठित करवाई थी। ज्ञातव्य हो आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज ने अपना प्रथम चातुर्मास इसी गुनौर में किया था।

गुनौर के धर्मप्रेमी समाज के अनुनय विनयपूर्ण आग्रह पर भी आपने संघ के साथ विहार कर दिया क्योंकि संघ को होली पूर्व रीवा पहुँचना था। गुनौर से सलेहा में आदिनाथ भगवान की त्रिनेत्र वाली प्रतिमा के दर्शन कर (मेरी सम्मेदशिखर यात्रा, पृ. 10, श्रेयांसगिरि.... बना है।) आप संघ के साथ विकासशील क्षेत्र श्रेयांसगिरि पहुँचे। श्रेयांसगिरि पर्वत पर भी सलेहा जैसी आदिनाथ भगवान की त्रिनेत्र वाली प्रतिमा है जिसके सिर पर जटाजूट का मुकुट जैसा बना है। यहाँ पाँच-सात जिनबिम्ब युक्त गुफाएँ हैं। यहाँ से संघ नागोदा होते हुए सतना पहुँचा। सतना में पूर्व विराजित आचार्य श्री विद्यासागरजी के प्रभावी शिष्य मुनि श्री समतासागरजी, प्रमाणसागरजी एवं ऐलक निश्चयसागरजी सहित ब्र. प्रफुल्लजी, पं. दयाचंदजी, पं. सिद्धार्थजी आदि के साथ गणमान्य जनों ने संघ की भावभीनी अगवानी की। वहाँ से संघ ने रीवा के लिए विहार कर दिया जो सतना से करीब 50-60 कि.मी. दूर है।

रीवा

रीवा से 30 कि.मी. पहले ही कुछ धर्मप्रेमी समाज जन आचार्य संघ के दर्शनार्थ व अगवानी के लिए आ पहुँचे। बड़े भक्तिभाव व श्रद्धा से गुरु संघ के दर्शन कर आचार्य श्री से निवेदन किया कि 13 फरवरी को आपका रीवा में मंगल प्रवेश है और उसी दिन होली की महा हुड़दंग है। संघ की सुरक्षा में संभवतः खलल पड़ सकती है। अतः प्रवेश की तारीख आगे-पीछे कर दीजिये। पर 'बहते पानी व चलते संत' को कौन रोक सकता है। अंततः आचार्य संघ का रीवा में 13 फरवरी को ही मंगल प्रवेश हुआ। आचार्य श्री के प्रथम शिष्य आचार्य श्री शीतलसागरजी जो वहाँ विराजे थे, उनकी व उनकी प्रेरणा से जागृत कर्तव्यों में संलग्न व धर्मपथ पर आरूढ़ श्रावकों की सूझबूझ व कड़ी सुरक्षा व्यवस्था में संघ की भव्य अगवानी के साथ उसी दिन रीवा में मंगल प्रवेश हुआ। पहुँचते ही भगवान शांतिनाथ की विशाल प्रतिमा के दर्शन कर आचार्य श्री ने तीन उपवास की घोषणा कर दी। व तीन उपवास बाद आहार चर्या कर विहार की मनसा जता दी। धर्मनिष्ठ समाज के आग्रह को भी उन्होंने नहीं माना क्योंकि उनका अर्जुनी लक्ष्य संघ समेत सम्मेदशिखरजी के दर्शन करना था जहाँ इतने बड़े संघ के साथ यथासमय पहुँचना था।

जैसे ही उपवासों के बाद पारणा आहार संपन्न हुआ, बिन मौसम (फरवरी में) बरसात कर मेघ देवता ने धर्मप्रेमी समाज की श्रद्धाभक्ति का साथ दिया। आहार पश्चात मुनि श्री सुनीलसागरजी गुरुदेव के साथ आहारचर्या से लौट रहे थे कि फिर मूसलाधार बारिश होने लगी जो थमने का नाम नहीं ले रही थी। तब मुनि श्री ने आचार्य श्री से कहा- ''गुरुदेव,

साधु को या तो दानी रोक सकता है या पानी।'' रीवा के समाज की भावभक्ति व असीम पुण्योदय ने आपको रोक लिया। वैसे संघ के कारण गुरुदेव को रुकना पड़ा वरना वे चल देते।

वैसे संघस्थ साधुओं की मनसा थी कि तीन उपवास बाद दो-तीन आहार आचार्य श्री के हो जाते, उसके बाद विहार होता तो ठीक रहता। इस तरह रीवा में पाँच दिन के मंगल प्रवास पर ऐसी धर्म प्रभावना का माहौल हो गया था मानो आचार्य श्री ने वहाँ चातुर्मास नहीं, पचमासा कर लिया हो।

आचार्य श्री ने एक बार पुनः संघ से पूछा, ''क्या सम्मेदशिखर महातीर्थ की वंदना करनी है?'' सभी का दृढ़ उत्तर हाँ था। कौन उस शाश्वत महातीर्थ की वंदना का दुर्लभतम आया सुयोग टालना चाहेगा? तब फिर आचार्य श्री ने सभी की ओर मुखातिब हो कहा, ''रोज 15-20 कि.मी. चलना पड़ेगा व अपना कमंडल स्वयं उठाना पड़ेगा।'' सभी ने सहर्ष हाँ कर दी। मुनि श्री सुनीलसागरजी बोले- ''हमने तो आज, अभी यहीं से महातीर्थ की वंदना शुरू कर दी है।''

यहीं पर मुनि श्री सिद्धसागरजी के पाँव में एक छोटा सा फोड़ा हो गया और वे अस्वस्थ हो गए। रीवा से 18 फरवरी को संघ ने अगले पड़ाव की ओर विहार कर दिया।

मंगल यात्रा प्रारंभ

रीवा से विहार कर संघ मध्यप्रदेश की सीमा पर स्थित हनुमान नगर के एक स्कूल में रात्रि विश्राम के लिए रुका। रात्रि का एक पहर भी न बीता था कि तेज आंधी-तूफान व ओलावृष्टि के साथ मूसलाधार बारिश होने लगी। साधुगण कमरे में पर्याप्त जगह न होने के कारण बाहार दालान में सोए थे। जरा सी देर में बरामदे में पानी-पानी हो गया। अंधेरे में जस-तस साधु कमरे में गए परम मुनि सिद्धसागरजी के पैर का फोड़ा बढ़ गया था। वे अत्यधिक अस्वस्थ होने के कारण उठ नहीं सके। उन्हें असहनीय पीड़ा हो रही थी। मुनि सुनीलसागरजी सहित कुछ साधुओं ने मिलकर उन्हें उठाया व कमरे में ले जाकर सुलाया। इस हड़बड़ी में एक कमंडलु लुढ़ककर उलट गया।

मुनि श्री सुनीलसागरजी की जीवन डायरी में इस घटना से संत जीवन के जीवनानुभव का एक और पृष्ठ जुड़ गया जो उनके भविष्य के लिए प्रेरक व शिक्षाप्रद बन गया। हर परिस्थिति में हर वक्त स्वयं को तैयार रखो। विवेक व सूझ से काम लो।

हनुमान नगर से टेढ़े-मेढ़े पहाड़ी रास्ते की चढ़ाई चढ़ते आप संघ के साथ डूमण्डगंज पहुँचे। राह में पड़ने वाले गाँवों के ग्रामीण जन श्रद्धा से अभिभूत इन दिगम्बर संतों के चरणों में माथा टेक देते। युवा मुनि कुछ नहीं तो उन्हें एक सप्ताह के लिए ही मांस-मदिरा का त्याग करवा देते। डूमण्डगंज से मिर्जापुर होते हुए संघ विहार कर गंतव्य की ओर अग्रसर था। मिर्जापुर से करीब 60-65 कि.मी. की दूरी पूर्ण कर ली थी।

एक कुत्ते की मौत/संसार की अनित्यता

पद विहार में मुनि श्री सुनीलसागरजी युवा ऊर्जा से उर्जस्वित आगे-आगे चल रहे थे। उन्होंने देखा उस राज्यमार्ग पर एक कुत्ता तेज रफ्तार भागते ट्रक-ट्रालों के बीच से सड़क के एक पार से दूसरी पार आ-जा रहा था। मुनि श्री काफी दूर से कुत्ते की इस हरकत को देख रहे थे। चिंतित हो उन्होंने साथ चलते साधु व श्रावक से कहा- ''देखना यह कुत्ता भी राह में ट्रकों के पहियों तले दबे पड़े अन्य कुत्तों की तरह किसी ट्रक की चपेट में आ अपनी जान गँवा देगा।'' हुआ भी वही जिसकी शंका थी। मुनि श्री तेज कदमों से चलने लगे। वे चाहते थे जैसे-तैसे कुत्ते को भगा दे। पर वे पहुँचते तब तक देरी हो चुकी थी। जरा सी देर में कुत्ते की हृदय विदारक चीत्कार से द्रवित सबका ध्यान उस ओर गया। एक तेज गति से चलता भारी भरकम ट्रक सड़क पार करते कुत्ते को रौंदता हुआ निकल गया। रक्त रंजित कुत्ते की देह से

अंतिम साँसें चल रही थीं।

मुनि श्री ने उस पर कमंडलु का पानी छिड़का। उसकी चेतना लौटी। उसे णमोकार महामंत्र सुनाने लगे। तब तक आचार्य श्री भी आ गए थे। उन्होंने भी उसे णमोकार मंत्र सुनाया। उसकी वेदना मुनि श्री से देखी नहीं जा रही थी पर करुणा भरे हृदय से दिल पर पत्थर रख वे उस निरीह प्राणी को संबोधते रहे। चार-पाँच मिनिट में वह निःचेष्ट हो गया। उसके प्राण पखेरू उड़ गए। कुछ देर मुनि श्री विचलित हो गए। फिर स्वयं को संभाला।

संघ के साथ मुनि श्री भी आगे की ओर चल दिये। मुनि श्री को बार-बार वह घटना याद आते ही जीवन की क्षणभंगुरता व अनित्यता का बोध हो रहा था। गृहस्थ जीवन में जीवन की अनित्यता व क्षणभंगुरता की जिन घटनाओं ने उनका वैराग्य पुख्ता कर संतत्व स्वीकारने को प्रेरित किया था, संत जीवन के प्रारंभ में घटी इस हृदय विदारक दर्दनाक घटना ने उन्हें अंदर तक हिला कर रख दिया। क्षण भर पहले खेलता-कूदता, इधर से उधर भागता कुत्ता व क्षण भर में क्षत-विक्षत रक्त रंजित देह। मुनि श्री का हृदय उस जीव के लिए करुणा से भर गया। उसकी हृदय विदारक चित्कार अभी भी उनके कानों में गूँज रही थी। उसकी आत्मिक शांति व सद्‌गति के लिए वे रास्ते भर परमात्मा से प्रार्थना करते रहे। रात्रि विश्राम में भी जब तक उन्हें नींद नहीं आई, वह घटना उनकी आँखों में तैरती रही। वे उसकी सद्‌गति के लिए प्रार्थना करते रहे। एक बात से उन्हें संतोष था संभवतः उस कुत्ते की भव लब्धि अच्छी रही होगी तभी उसने संतों के आगमन से पूर्व ऐसी हरकत की व महान आचार्य व संत समुदाय के सान्निध्य में शांत भाव से णमोकार महामंत्र सुनाते हुए अपने प्राण छोड़े। वैसे उन्होंने विहार में रास्ते में ट्रकों की चपेट में मारे गए सड़कों से चिपटे सैकड़ों कुत्ते देखे, जिनकी ओर देखने वाला भी कोई नहीं था। उन जीवों में यह जीव कोई पुण्यशाली जीव था।

दूसरे दिन प्रातः विहार में मुनि श्री सुनीलसागरजी आचार्य श्री के साथ चल रहे थे। मुनि श्री ने कहा- ''गुरुदेव, आप तो रात्रि विश्राम में ध्यान में बैठ गए थे, पर मुझे तो थकान के कारण शीघ्र नींद आ गई थी। आप तो सोए ही नहीं।''

आचार्य श्री ने कहा- ''उस कुत्ते ने देवगति प्राप्त की है।''

मुनि श्री ने सहज भाव से उत्सुकतावश पूछ लिया- ''भगवन्! आपको कैसे पता चला?''

आचार्य श्री ने कहा- ''एक तो उस कुत्ते का मरण बड़े शांत परिणामों से संत समागम में हुआ, जो मनुष्य व यहाँ तक कि संतों के लिए भी दुर्लभ है। दूसरा उसने उस जगह देह त्यागी जहाँ उसे कोई देखने वाला भी नहीं था। ऐसी जगह हम सबने उसे संबोधा, णमोकार महामंत्र सुनाया, जिसे उसने ध्यान से सुना। मैं जब ध्यान कर रहा था तब वैसा ही कुत्ता खेलता-कूदता उछलकूद करता कमरे में आया। न उसने आवाज की न कोई अन्य चेष्टा की। कुछ क्षण बड़ी शांति से मेरे सामने खड़ा रहा और अदृश्य हो गया।'' मुनि श्री ने पुनः शंका रखी कि क्या किसी को णमोकार मंत्र का ज्ञान न हो या कर्णेन्द्रिय न हो तब भी क्या णमोकार मंत्र का प्रभाव होता है?''

आचार्य श्री ने शंका समाधान करते हुए कहा कि णमोकार महामंत्र प्रत्येक स्थिति में तो प्रभावित करता ही है, श्रेष्ठ गति भी प्रदान करता है। यहाँ तक कि यह चींटी, मच्छर तक को सुनाया जा सकता है। प्रत्येक जीव को णमोकार महामंत्र की पौद्‌गलिक वर्गणाएँ अवश्य प्रभावित करेंगी। उसे सद्‌गति प्रदान करेगी।मेरी तो मान्यता है कि हमें प्रत्येक पल इस महामंत्र का जाप करना चाहिये। यह भव भवान्तर में सुख देने वाला है।

कुत्ते की मृत्यु घटना के माध्यम से आचार्य श्री से इतनी ज्ञानवर्धक बातें सुन मुनि श्री के मनोमस्तिष्क में प्रथमानुयोग में पढ़े ऐसे अनेक उदाहरण तैरने लगे जैसे भगवान पार्श्वनाथ ने नाग-नागिन को, जीवंधर कुमार ने कुत्ते को, चारुदत्त ने बकरे को और सेठ वृषभदत्त ने बैल को यह महामंत्र सुना उनका उद्धार किया था।

जैसे ही आचार्य संघ उत्तरप्रदेश की सीमा छोड़ बिहार की सीमा में प्रवेश करने लगा, बारिश होने लगी। मानो उत्तरप्रदेश की धरती अश्रुपूरित नयनों से इन महान संतों को विदा कर अपना दुःख जता रही हो। उधर बिहार की धरती भी संतों के आगमन पर पुलक प्रकट कर रही थी। वर्षातिरेक में बदरिया बरस-बरस कर वंदन-अभिनंदन कर रही थी। उनके लिए मार्ग का शुद्धिकरण हो रहा था।

आचार्य संघ ने संघ संचालक श्री त्रिलोकचंद्रजी गोधा एवं श्री रतनलालजी बड़जात्या के कुशल नेतृत्व में बड़े भक्तिभाव से विहार की पावन धरा, हमारे तीर्थंकरों की पावन जन्मस्थली व निर्वाणस्थल में मंगल प्रवेश किया। आचार्य संघ का पहला आहार बनारस के पास स्थित एक गाँव जिसका नाम 'लंका' है वहाँ हुआ। सबको आश्चर्य हो रहा था कि भारत में भी एक लंका है। (भले ही वह गाँव हो पर है।) मुनि श्री को ताज्जुब हुआ कि इस लंका का उस लंका से कोई संबंध नहीं है। किंतु यहाँ बनारस की प्रसिद्ध रामलीला होती है, इसलिए इस हिस्से का नाम लंका है।

मुनि सिद्धसागरजी की समाधि

वहाँ (लंका) से विहार कर संघ ने डिडखिली (भगुआ) में एक बैंक में रात्रि विश्राम किया। वहाँ मुनि श्री सिद्धसागरजी के पैर की तकलीफ बहुत बढ़ गई थी। जैसे-तैसे रात कटी। युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी ने रात भर उनकी वैयावृत्ति की तथा णमोकार मंत्र सुनाया, धर्मबोध दिया व स्तुतियाँ सुनाईं। सुबह फिर विहार करना पड़ा क्योंकि वहाँ से 40 कि.मी. तक कोई जैन का घर नहीं था। अतः वहाँ रुका भी नहीं जा सकता था। मुनि श्री सिद्धसागरजी के मना करने पर भी उन्हें हाथ ठेले पर लिटाकर प्रातः विहार कराया गया। मुनि सुनीलसागरजी व कुछ साधु उनके साथ चल रहे थे। आचार्य श्री ने तो सुबह ही कह दिया था कि वे अब थोड़े समय के मेहमान हैं। अतः मुनि श्री सुनीलसागरजी उन्हें णमोकार महामंत्र रास्ते भर सुनाते जा रहे थे।

संघ चर्या के लिए अपने मुकाम पर पहुँचने ही वाला था कि उनका शरीर जवाब दे गया। सुबह 8.45 पर कोड़ी (मोहनिया) गाँव पहुँचते-पहुँचते वे समाधिमरण को प्राप्त हो गए। पंछी उड़ गया, नश्वर देह यहीं छूट गई। चंद दिनों में मुनि श्री के सम्मुख जीवन की नश्वरता व संसार की अनित्यता की यह दूसरी घटना घटित हुई। यद्यपि गाँव में एक भी जैनी का घर नहीं था तथापि उस गाँव के सहृदय अजैन लोगों ने मिलकर अच्छी सी जगह देख आचार्य श्री के दिशा-निर्देश में उनके पार्थिव शरीर का अंतिम संस्कार (दाह संस्कार) किया। इस दिन संघस्थ साधुओं ने उपवास रखा। दूसरे दिन आहार चर्या कर संघ ने विहार कर दिया।

मुनि श्री सुनीलसागरजी का चिन्तन निरंतर चल रहा था। एक फोड़े ने इतना विकराल रूप धारण कर लिया कि जिसके निमित्त से मुनि श्री सिद्धसागरजी असमय समाधि मरण को प्राप्त हो गए। पुनः मुनि श्री सुनीलसागरजी के मन में हलचल मच गई। पुरानी यादों ने कुरेदकर उनके मन में उथल-पुथल मचा दी। ''किसी दिन मैं भी कोई निमित्त पा अकाल क्रूर काल का शिकार हो सकता हूँ। जिंदगी का कोई भरोसा नहीं। क्या पता मौत कब, कहाँ व किस हालात में आवाज दे दे। मुझे अधिक से अधिक सिद्धि की साधना कर जीवन सार्थक कर लेना चाहिये। दीपक अपने लघु जीवन में भी जलकर औरों को प्रकाश दे अपना जीवन सार्थक कर लेता है। मुझे भी अपने इस छोटे से जीवन को अपनी पूरी ताकत से आत्मकल्याण व विश्व कल्याण में लगा देना चाहिये।'' विहार में पैर तो शक्तिनुसार ही चल रहे थे किन्तु मन का पंछी अनन्त आकाश में उड़ा चला जा रहा था।

रीवा की होली के बाद ही आचार्य श्री ने महावीर जयंती गया में मनाने का निर्णय निश्चित कर लिया था। अतः बिना रुके संघ कुदरा, सासाराम, डालमिया नगर, औरंगाबाद, शेरघाटी, चेरिकी होते हुए आगे की ओर अग्रसर था। रास्ते में

सब विनोद कर रहे थे कि शेरघाटी में कोई शेर नहीं मिला न ही घाटी मिली।

ऐन महावीर जयंती की मंगल प्रभात की मांगलिक बेला में गया के भक्तों ने भव्य जुलूस के साथ बड़े भक्ति भाव से आचार्य संघ का गया में मंगल प्रवेश कराया। जिन शासक भगवान महावीर के जन्म जयंती के दिन गया में पदार्पण कर आचार्य श्री ने गया की धरती को धन्य कर दिया। उस सुप्रभात को शुभ प्रभात कर दिया। समाज ने भव्यातिभव्य जुलूस के साथ गुरुसंघ का नगर में प्रवेश कराया व बाद में वह जुलूस अहिंसा रैली में परिवर्तित हो आचार्य श्री के मंगल उद्बोधन व आशीर्वचन पश्चात संपन्न हुआ।

राजगृही वंदना

रीवा से सिंघाटिया, जनरोठा, कोशला एवं हिसुआ होते हुए संघ ने 16 अप्रैल 1998 को समाज की अगवानी में जुलूस के साथ राजगृही नगरी में मंगल प्रवेश किया। आहार चर्या पश्चात सायंकालीन प्रतिक्रमण में आचार्य श्री ने कहा कि कल सुबह पौ फटते ही हम पहाड़ की वंदना को जाएँगे। चौथे पहाड़ पर ज्यादा खतरा है। हम वहीं से अपनी वंदना शुरू करेंगे।

पवित्र भावों से संघ वंदना को चल पड़ा। 15-20 श्रावक व 4-6 सुरक्षा कर्मचारी साथ हो लिए। दो-तीन कि.मी. रास्ता पहाड़ी पर चढ़कर वे एक मंदिर तक पहुँचे। पहाड़ बिल्कुल निर्जन था। मंदिर में एक सर्प का डेरा था। फिर भी सभी ने वहाँ स्थापित चरण पादुकाओं की भाव भक्ति से वंदना की व पहाड़ से उतरने लगे। उतरते वक्त एक बारह सिंघा निरीह नजरों से टकटकी लगाए संघस्थ साधुओं को देख रहा था, मानो कह रहा हो-

''आदमी खूंखार इतना हो गया है।
आदमी से आदमी अब डर गया है।।
शेर-चीतों का नहीं भय जंगलों में।
आदमी की बस्तियों से डर गया है।।''

वह अपनी मूक भाषा में कह रहा था, अब लोगों ने यहाँ आना छोड़ दिया है। आज आप जैसे सिंहवृत्ति संतों की चरण रज छू यह पहाड़ी व हम पशु-पक्षी धन्य हो गए हैं। जबसे मनुष्यों ने इन चरण पादुकाओं का स्पर्श करना छोड़ा है, सर्प इन चरणों से लिपटे पड़े रहते हैं।

इसके बाद संघ ने पाँचवें पहाड़ की वंदना की। सबने मन ही मन भगवान महावीर की स्तुति की। बारंबार नमन कर संघ धर्मशाला में लौट आया।

दूसरे दिन संघ ने तीसरे पहाड़ से वंदना शुरू की। तीसरे पर्वत पर भगवान महावीर की खड़गासन प्रतिमा के दर्शन कर पीछे की ओर से दूसरे पहाड़ पर चढ़े। वहाँ भगवान मुनिसुव्रतनाथजी का अभिषेक हुआ। राजगृही मुनिसुव्रतनाथ भगवान की जन्मस्थली है। वहाँ से लम्बे व ऊबड़-खाबड़, कठिन चढ़ाई वाले रास्ते से प्रथम पर्वत पर भगवान महावीर के प्रथम देशना स्थल, विपुलाचल पर्वत की वंदना कर आचार्य संघ प्रवास स्थल आचार्य महावीरकीर्ति सरस्वती भवन लौट आया। शास्त्रों से ज्ञात होता है कि एकमात्र चन्द्रप्रभुजी को छोड़ शेष तेईस तीर्थंकरों का समवशरण इस राजगृही नगरी में आया व तीर्थंकरों की दिव्य देशना हुई (दिव्यध्वनि खिरी)। अतः राजगृही का जैन समाज के लिए विशेष महत्व है।

कुंडलपुर की ओर/एक्सीडेंट

राजगृही के तीन दिनी प्रवास में पंचपहाड़ी की एक पूर्ण वंदना बड़ी प्रसन्नता, सहजता व शांति से कर संघ ने महावीर

जन्मस्थली कुंडलपुर के लिए विहार कर दिया। रास्ते में एक घटना घटी। मुनि श्री सुज्ञानसागरजी व मुनि श्री श्रुतसागरजी आगे निकल गए।

मुनि श्री सुनीलसागरजी उनसे करीब एक-दो कि.मी. पीछे आचार्य श्री के साथ चल रहे थे। दो कि.मी. के करीब चलने पर मुनि श्री आचार्य श्री से आज्ञा लेकर लघुशंका के लिए रुक गए। जैसे ही शुद्धि करके वे आगे बढ़ने को हुए, उन्होंने देखा एक ट्रक आ रहा है व उसके पीछे एक बाइक (राजदूत) आ रही थी जिस पर तीन युवा बैठे थे। दोनों आराम से अपनी गति में चल रहे थे। मुनि श्री जैसे ही आगे बढ़ने को हुए उन्होंने देखा कि वह बाइक शायद आगे निकलने के चक्कर में अचानक दाईं ओर से आकर ट्रक से टकरा गई। दो युवा बाइक के नीचे दब गए थे। वे ज्यादा घायल हो गए थे और चिल्लाने लगे- ''बचाओ-बचाओ''। एक युवा सड़क किनारे जा पड़ा, उसे भी काफी चोट आई थी।

मुनि श्री सब कुछ भूल उन्हें बचाने दौड़ पड़े पर उन्होंने भावातिरेक में होश नहीं खोया था। एक क्षण उन्होंने सोचा, अब मैं निर्ग्रन्थ मुनि सुनीलसागर हूँ। ऐसी स्थिति में वे उहापोह में थे कि क्या करें क्या न करें। तभी बाइक व ट्रक की टक्कर की भयंकर आवाज सुन सड़क से लगी झोपड़ियों व आसपास गाँव के लोग दौड़े चले आए और लोगों को बाइक के नीचे से निकाल उपचार करने लगे। मुनि श्री ने करुणावश गाँव वालों से उन्हें हॉस्पिटल ले जाने को कहा। संघ आगे निकल गया था अतः मुनि श्री तेज कदमों से चल दिये। वे रास्ते में सोच रहे थे कि गनीमत है वे तीनों बच गये किंतु उस दुर्घटना के दृश्य ने उन्हें झकझोर दिया। एक क्षण पहले उन्होंने उन तीनों को बाइक पर हँसी-ठिठोली करते देखा था और दूसरे ही क्षण उनकी हँसी चीत्कारों में बदल गई। किसी का कोई ठिकाना नहीं, कब किसको क्या हो जाए। इसी विचार मंथन में वे कब गुरुवर के निकट पहुँच गए, पता ही नहीं चला। ये घटनाएँ उनका मृत्यु से साक्षात्कार करा उन्हें जीवन के प्रति सावचेत करती रहती हैं।

आचार्य श्री ने पूछा- ''देर हो गई। तुम्हारे चेहरे पर यह बेचैनी क्यों है? तबीयत तो ठीक है? रास्ते में कुछ तुम्हारे साथ अनहोनी तो नहीं हुई?''

अपने प्रति गुरुदेव की इतनी चिंता व व्यग्रता देख मुनि श्री सुनीलसागरजी ने सारा वृत्तांत गुरुवर को कह सुनाया।

रात्रि विश्राम स्थल सिलाव पहुँचने पर जब इस एक्सीडेंट की चर्चा चली तब आगे चल रहे मुनि श्री सुज्ञानसागर व मुनि श्री श्रुतसागरजी ने बताया कि उन तीनों युवकों ने उनके दिगम्बरत्व को देख उन्हें खूब गालियाँ दी व उन्हें प्रताड़ित व परेशान किया। मुनि श्री सुनीलसागरजी के मुख से निकल गया, ''ओहो! मुनि निंदा का इतना भयानक फल उन्हें तत्काल मिल गया। ये निर्ग्रंथ मुनि किसी का कुछ बिगाड़ते नहीं अपितु स्वर्ग व मोक्ष सुख प्राप्ति का निमित्त बनते हैं। इनकी पूजा, भक्ति, स्तुति न कर सको, कोई बात नहीं किंतु इनकी निंदा-अवमानना करना, कष्ट पहुँचाना, नरक निगोद के दुःख देने वाला है।'' उन तीनों युवकों को मुनि निंदा व प्रताड़ना का इतना भयानक कुफल इतना शीघ्र मिलना इसका उदाहरण है।

* * *

जब तक मुनि श्री निद्रादेवी के आगोश में न आ गए तब तक उनके मन में यात्रा में अभी-अभी घटी दो घटनाओं का चिंतन-मंथन चलता रहा। एक तो कुत्ते वाली घटना, भविष्य से अनजान कुतुहल वश बारबार सड़क पार करने का खेल खेलता कुत्ता एक्सीडेंट में ट्रक के नीचे कुचल जाता है। संतों के मुख से णमोकार महामंत्र सुनते-सुनते मरण को प्राप्त होता है व आचार्य श्री के अनुभवानुसार देवत्व का सुख प्राप्त करता है। और दूसरी घटना उन तीन युवाओं के एक्सीडेंट वाली घटना। वे तीनों युवक संतों की निंदा, अवमानना व प्रताड़ना कर आए थे। वे भी गाड़ी पर सवार सड़क

पर धींगा मस्ती कर रहे थे। वे अगले ही कुछ क्षणों में अकस्मात कुमति का शिकार हो स्वयं आगे निकलने की चेष्टा से ट्रक से टकरा गये व स्वयं का एक्सीडेंट करा बैठे। बुरे कर्मों का बुरा फल होता है। उन्होंने साधुओं को नमन वंदन किया होता तो संभवतः उनके आशीर्वाद से वे इस दुर्घटना से बच जाते। कहाँ कुत्ता एक तिर्यंच पशु और कहाँ ये मनुष्य। सबकी अपनी-अपनी गति-मति है।

अपने-अपने पुण्य-पाप का फल। कुत्ता एक्सीडेंट के बाद भी गुरु से णमोकार मंत्र सुनता रहा और ये इंसान गुरुओं को गालियाँ देकर इतने मतिभ्रम हो गए कि एक्सीडेंट को खुद न्योता दे दिया। पास होने के बावजूद भी मैं उन्हें भगवान का स्मरण करने की बात न कह अस्पताल ले जाने का कह चल दिया। जैसी गति वैसी मति।

खैर जो जैसा करेगा वैसा भरेगा। हे प्रभु! मैं संत हुआ तो क्या? मुझे हमेशा सुमति व गुरु नाम मय 'सन्मति' देना ताकि मुझसे भूल कर भी कोई भूल ना हो सके।

कुंडलपुर महावीर जन्मस्थली

प्रातःकाल रवि की रक्ताभ लालिमा में संघ के साथ विहार कर मुनि श्री कुंडलपुर भगवान महावीर की जन्मस्थली पहुँचे। इसी कुंडलपुर के राजकुमार वर्द्धमान ने हिंसा के तांडव को यज्ञों में धर्म के नाम पर जीवित पशुओं को होमना (बलि देना) रुकवाया। इसके साथ ही गुलाम प्रथा का अंत करने व नारी जाति के कल्याण की मुहिम छेड़ी। महावीर के रूप की इसी अहिंसा के दम पर भारत ने अंग्रेजों से अपनी आजादी हासिल की। महावीर की जन्मस्थली के बारे में मुनि श्री के चिंतन को मैं अपनी इन पंक्तियों के माध्यम से व्यक्त करना चाहूँगी-

महावीर ने जन्म लिया वह नहीं एक वैशाली हो,
बस्ती-बस्ती गाँव-गाँव हर नगर-डगर वैशाली हो।
सत्य अहिंसा दया धर्म का जन्म जहाँ पर होता है,
हृदय विश्व के जन-जन का ही वह विशाल वैशाली हो।।

पावापुरी-गुणावा

भगवान महावीर की जन्मभूमि से विहार कर आप संघ के साथ उनकी परम पावन निर्वाण स्थली पावापुरी पहुँचे। सर्वप्रथम प्रसन्नमना आपने जल मंदिर में प्रतिष्ठित महावीर स्वामी एवं उनके दो शिष्यों की चरण पादुकाओं के दर्शन किये। फिर अन्य दस-बारह मंदिरों के दर्शन किये। यहीं आपने 21 अप्रैल 1998 को आचार्य महावीर कीर्तिजी का जन्मदिवस बड़ी धूमधाम से मनाया।

पावापुरी के तीन दिनी प्रवास के बाद संघ गुणावा पहुँचा। धर्मशाला में जिन मंदिर में चित्ताकर्षक कुंथुनाथ भगवान की विशाल प्रतिमा के दर्शन किये। धर्मशाला प्रांगण के छोटे से मंदिर में गौतम गणधर स्वामी के चरण हैं, जिनके दर्शन किये। शास्त्रीय मान्यतानुसार भगवान महावीर के प्रथम शिष्य इन्द्रभूति गौतम गणधर ने गुणावा से ही निर्वाण प्राप्त किया था।

गुणावा में दो दिनी मंगल प्रवास के बाद संघ ने विहार कर माखर गाँव में एक ब्राह्मण वैद्य के घर रात्रि विश्राम किया। जैन संतों की कठिन चर्या को देख उन्होंने संघपति त्रिलोकजी को बहुत सारे बेल (बिल्व) फल देते हुए कहा- ''इनका रस निकालकर संतों को देना। ये शीतलता दायक हैं व पेट भी साफ करते हैं।'' संघपति ने बिल्व फल का रस संतों को आहार में दिलवाने की व्यवस्था की।

अंतराय में विहार- कठिन राह

माखर से संघ हरदिया पहुँचा। हरदिया में मुनि श्री सुनीलसागरजी को अंतराय हो गया। ऐसी स्थिति में ही संघ ने भर दोपहरी में विहार कर दिया। अप्रैल समाप्ति पर था। ऊपर से सूरज अंगारे बरसा रहा था। नीचे धरती तवे सी तप रही थी, तिस पर पहाड़ी क्षेत्र की कठिन चढ़ाई। विश्राम स्थल तक पहुँचने के लिए बाईस-तेईस कि.मी. की यात्रा करना थी। मुनि श्री को बहुत ज्यादा बेचैनी होने लगी। फिर भी मन में समता धारण किये आचार्य श्री के साथ भगवान का स्मरण करते हुए रास्ता पार किया। मुनि श्री के साधु जीवन में एक साथ उष्ण परिषह, तृषा परिषह व चर्या परिषह का पहली बार कष्ट साध्य त्रिवेणी संगम हुआ था। पर बिना उफ्फ किये वे चलते रहे और अपनी संतत्व शक्ति का परिचय दिया। रात्रि विश्राम कर सबेरे पुनः संघ का विहार कोडरमा की ओर हो गया।

संघ तेरह कि.मी. लम्बी, तारा घाटी के टेढ़े-मेढ़े, ऊँचे-नीचे कठिन रास्ते की चढ़ाई कर आगे बढ़ रहा था। तारा घाटी की चढ़ाई ऐसी थी कि दिन में ही अच्छे-अच्छों को तारे नजर आने लग जाएँ। तेरह कि.मी. तक उस निर्जन स्थान में एक भी झोपड़ी नजर नहीं आई। पदयात्रा ही जिनका जीवन व्रत है, समता का अमृत सूखे हलक में उतारते संघ के साथ मुनि श्री भी पथारूढ़ थे।

आहार में तीन दिन तक अंतराय की वजह से क्षुधा परिषह व तृषा परिषह तथा कल की लम्बी चलाई की थकान के कारण उनके लिए हर अगला कदम चलना दूभर था लेकिन वे अपनी सारी ऊर्जा संचित कर दृढ़ आत्मबल के साथ चलते रहे। वे सोचते जा रहे थे कि अपनी तो सम्मेद शिखरजी की वंदना यहीं से शुरू हो गई। सम्मेद शिखरजी की चढ़ाई इससे और अधिक कठिन क्या होगी।

यहाँ सरल हृदयी पारदर्शी आचार्यश्री के ही श्रीमुख से उनके स्वयं के गुरु के प्रति उपजे मनोविकारी भावों व प्रायश्चित की बात सुनें। गुरु कुंभकार की तरह एक तरफ अंदर से सहारा देते हैं तो दूसरी तरफ गीली मिट्टी को बाहर से ठोकते रहते हैं। बड़ी धीरता, क्षमाशीलता, सहनशीलता व समर्पण चाहिये तब कहीं जाकर मिट्टी एक कलश का रूप लेती है। नादानीवश शिष्य के मन में कहीं कभी-कभी कुछ विकल्प भी पैदा हो जाते हैं, जैसे लगता है कि गुरुजी तो हमें ही कहते हैं, अमुक के लिए कुछ नहीं कहते या तो गुरुदेव के लिए सब पूछ लेते हैं, हमें कौन पूछे? वगैरह-वगैरह। ऐसा भी होता है कभी-कभी। पूज्यश्री ने स्वयं बताया कि सम्मेदशिखरजी की ओर विहार चल रहा था। जीवन का पहला विहार, उसमें भी गर्मी, इतना लंबा चलना और दुबले व दो आषाढ़, कारण तीन दिन का लगातार अंतराय। कुछ चल चुके थे कि एक युवा श्रावक ने तपस्वी सम्राट गुरुवर के लिए इशारा किया कि उनका कमंडलु पकड़ लें। मुनिश्री पीछे चल रहे थे। आचार्यश्री ने यूँ देखा और स्मित भरी मुस्कान से कहा- ''सुनीलसागर का कमंडल ले लो, उनका अंतराय है।'' मानो जान में जान आई। इतने बड़े कमंडलु का भार हल्का हुआ। साथ ही मन की सारी शिकायतों को विराम लगा।

मुनिश्री को ख्याल आया कि शिष्य कम अक्ल व कम बल वश कुछ भी सोचता रहे बाकी गुरु तो पूरा ध्यान रखते ही हैं। उसी दिन मुनिश्री ने यह शिक्षा पक्की गाँठ बाँध ली कि संयम देने वाले गुरु ही सच्चा संबल है, उनके बिना हम कुछ करने लायक नहीं हैं व जीवन में कभी भी मन में किसी प्रकार के संदेह या शिकायत को कोई स्थान नहीं देना है। मोक्षमार्गी को कभी कोई शिकायत या चाह नहीं होती है। और उनका मुक्तिपथ दृढ़ व पुष्ट होता गया। उनमें मनोविकारों पर विजय प्राप्त करने की दृढ़ता आ गई।

अब घाटी पार करने के लिए 3-4 कि.मी. शेष बची थी कि उन्हें रास्ते में दोनों ओर इमली, बेल, कैथ, आम, केले के फलों से लदे वृक्ष मिले, मयूर मिले। प्रकृति का यह शीतल वातावरण उन्हें सुकून दे रहा था। तभी उन्होंने देखा एक तीन-चार हाथ लम्बा पीला सर्प तेजी से रोड क्रॉस कर रहा था। इस प्रकार अपने संतत्व से प्रतिकूलताओं

को अनुकूल करते हुए मुनि श्री ने प्रसन्नता से पदयात्रा कर संघ के साथ रात्रि विश्राम के लिए शाम पाँच बजे एक गाँव में पदार्पण किया। रात्रि में झूमरीतलैया से बहुत से श्रावकों ने आकर संघ की बड़े भक्ति भाव से खूब वैयावृत्ति की।

अक्षय तृतीया

जैसे महावीर जयंती के दिन गया में मुनि श्री ने संघ के साथ मंगल प्रवेश किया था, वैसे ही अक्षय तृतीया के दिन संघ के साथ कोडरमा शहर में पदार्पण किया। ज्ञात रहे, इसी अक्षय तृतीया (आखातीज) को भगवान आदिनाथ (ऋषभदेव) ने छह मास के उपवास के पश्चात राजा श्रेयांस के यहाँ प्रथम आहार लिया था। यहाँ एक विशाल जुलूस के साथ-साथ धर्म प्रभावना करते, जुलूस मंदिरजी में विशाल धर्मसभा में परिवर्तित हो गया। यहाँ आचार्य श्री के पहले मुनि श्री सुनीलसागरजी के प्रवचन हुए। युवा मुनि की गूढ़ ज्ञान प्रतिभा की भूरि-भूरि प्रशंसा हुई। धर्मसभा से पुनः संघ शोभायात्रा के साथ भगवान महावीर मंदिर पहुँचा। दर्शन पश्चात परम मुनिभक्त मानमल महावीर प्रसाद झांझरी के यहाँ मुनिसंघ की आहार चर्या निर्विघ्न निरांतराय संपन्न हुई। मानमलजी ने अस्वस्थ होने के बाद भी आहारदान दिया। दोपहर में सुरेश झांझरी के संयोजकत्व में भक्तामर महामंडल विधान संपन्न हुआ। ठीक चार बजे यहाँ से आचार्य संघ के साथ मुनि श्री का मंगल विहार हो गया।

हीराटांड घटना

चूँकि रात्रि विश्राम का रास्ता लम्बा नहीं था। संघ धूल उड़ने वाले कच्चे रास्ते से जा रहा था। रास्ता छोटा होने के बावजूद भी मार्गदर्शक के अभाव में संघ रास्ता भटक गया। जैसे-तैसे सही मार्ग पर चलने लगे किन्तु तब तक बहुत देर हो गई थी। हीराटांड पहुँचने से पूर्व अंधेरा होने लगा। उन्हें एक अर्धनिर्मित स्कूल दिखा। वहीं रात्रि विश्राम के उद्देश्य से संघ उस ओर तेज कदमों से चल पड़ा। मुनि श्री सुनीलसागरजी, एक साधु व रतनलालजी साथ-साथ पीछे चल रहे थे। तभी होटल में से एक दाढ़ी वाले व्यक्ति ने उन पर एक ग्लास पानी फेंका, जिसके छींटे उन मुनि महाराज, रतनलालजी व कुछ बूँदें मुनि श्री पर गिरीं। समय की नजाकत व मुनिधर्म निभाते वे स्कूल की तरफ तेज कदमों से बढ़ गए क्योंकि उन्हें प्रतिक्रमण आदि क्रियाएँ जो करनी थीं।

संतों के आशीर्वाद से दुर्घटना टली

यहाँ से सबेरे संघ ने पिपचो गाँव के लिए विहार कर दिया जहाँ आहार चर्या संपन्न होना थी। कच्चे ऊबड़-खाबड़ रास्ते से एक दो कि.मी. आगे बढ़े होंगे कि वहाँ से दो-तीन रास्ते फूटते थे। फिर वहीं समस्या, किस पर आगे बढ़ा जाए। कुछ आगे चलने पर खेत पर काम कर रहे किसान से राह पूछी गई। पता चला, गलत रास्ते पर आ गए हैं। पुनः वापस चलकर किसान के बताए रास्ते पर संघ ने तीन-चार कि.मी. की दूरी तय की होगी कि उन्हें संघ संचालक त्रिलोकजी हाथ में खाली केन लिए, उदास थके-थके पैदल अपनी ओर आते दिखे। पास आने पर उन्होंने आचार्य श्री व संघस्थ साधुओं को विनयावत नमस्कार किया।

पैदल आने का कारण पूछने पर उन्होंने बताया कि वे संघ के लिए दूध लाने पास के गाँव में जा रहे हैं। उनकी बड़ी गाड़ी खराब हो गई व छोटी गाड़ी, जिससे वे अपने परिवार के साथ रात को हीराटांड के उस स्कूल से लौट रहे थे जहाँ साधुओं की उन्होंने आनन-फानन रात्रि विश्राम की व्यवस्था करवाई थी, रास्ता कच्चा, सँकरा व अंधेरा होने के कारण हीराटांड में साधुओं की व्यवस्था कर लौटते वक्त उनकी गाड़ी का अगला पहिया गहरे गड्ढे में उतर गया। भयंकर एक्सीडेंट

हो गया। आचार्य श्री व मुनिसंघ के आशीर्वाद से गाड़ी पलटते-पलटते बच गई व उनका परिवार बच गया। इतना बड़ा हादसा होने पर थोड़ी बहुत चोट तो सबको आई थी। त्रिलोकजी की माँ के एक हाथ, पैर में ज्यादा चोट लगी थी। पर वे तो इस बात से खुश थे कि गुरुदेव यह तो आपके आशीर्वाद का ही चमत्कार था कि हम लोग बच गए व आज आपका दर्शन लाभ मिल रहा है वरना बचने की कोई संभावना नहीं थी। जो लोग हमारी मदद के लिए इतने अंधेरे व निर्जन स्थान में क्या पता कहाँ से आ गए थे, वे भी यही कह रहे थे कि आप पर गुरुकृपा का फल है वरना इस परिस्थिति में बचने की कोई संभावना नहीं थी। न किसी की मदद की। कहते-कहते त्रिलोकजी की आँखें छलछला आईं।

आशीर्वाद देते हुए आचार्य श्री ने कहा- ''यह मात्र गुरुकृपा ही नहीं अपितु तुम्हारी निश्छल व समर्पित गुरुभक्ति का भी महाफल है।'' वातावरण को हल्का-फुल्का बनाने के लिए मुनि श्री सुनीलसागरजी बोल पड़े- ''चलो जान बची लाखों पाए।''

संघ पिपचो की ओर बढ़ गया। आहार चर्या व सामायिक के बाद फिर अगले पड़ाव की ओर बढ़ गया। वही रास्ता कच्चा व कंकरीला। राह के कंकरों में गुरु चरणों को छू-छू कर धन्यता पाने की होड़ मची थी। वे बेचारे क्या जाने कि इन साधुओं के पगतलों में वे कितना चुभ रहे थे। संतों को कंकर कंटकों की परवाह कहाँ। इधर सड़क किनारे आधा किलोमीटर दूरी पर बसे गाँवों के भोले-भाले सरल स्वभावी ग्रामीणों को संत आते दिखाई दे जाने से वे दूसरे ग्रामीण बंधु-बांधवों को आवाज लगाते दौड़े चले आते व गुरुचरणों में माथा टेक, चरण रज माथे चढ़ाते। उनकी इस असीम निष्काम श्रद्धा भक्ति को देख संत संघ अभिभूत उन सबको मंगल आशीर्वाद देता आगे बढ़ रहा था।

हद तो तब हो गई जब संतों ने दूर से देखा कि एक गाँव तरफ जहाँ से वे गुजर रहे थे, लोग भाग-दौड़कर किसी एक दिशा में जा रहे थे व विचित्र आवाज लगा रहे थे। स्त्री, पुरुष, बच्चे, बूढ़ों को इस तरह भागते-दौड़ते जाते देख उन्हें किसी अनहोनी की शंका होने लगी। किंतु यह क्या? जैसे ही वे गाँव की सीमा में पहुँचे, पूरे गाँव के लोग इकट्ठा होकर श्रद्धाभक्ति से अभिभूत ढोल-ताशे बजाते, उत्फुल्ल हो नाचते-गाते संघ की ओर आ रहे थे। सबने बड़ी श्रद्धा भक्ति व विनय भाव से एक-एक संत के चरणों में अपना शीश नवाया व चरण रज को चंदन की तरह माथे पर लगाया। उन्होंने संत चरणों में अपनी परंपरा के अनुसार भेंट चढ़ाई। दो-तीन युवा अपने सिर पर खटिया लिए थे। खटिया बिछा संतों से उस पर बैठने का आग्रह अनुनय करने लगे। कुछ ग्रामीण अपने साथ नए अंगोछे (बड़े रुमाल) लाए थे जिससे उन्होंने धूल धुसरित संतों के चरण पोछे। आचार्य श्री ने उन्हें शीघ्र ही आगे गंतव्य पर पहुँचने की बात कही व अपनी मजबूरी प्रकट की। उन्हें मंगल आशीर्वाद दिया व इसी तरह राह से निकलने वाले संतों की भक्ति करने की बात कही व आगे बढ़ गए।

तभी कुछ ग्रामीण, जिन्होंने संतों के चरणों में जो भेंट चढ़ाई थी, पोटलियों में बाँधे संतों के पीछे दौड़े चले आ रहे थे व पुकार रहे थे, ''बाबा रुक जाओ, हमारी तुच्छ सी भेंट लेते जाओ।'' कुछ युवक व बच्चे दौड़ते हुए आगे पहुँचे व सबसे पीछे चल रहे संतों के चरणों में बैठ गए व उन्हें रोक लिया। युवकों ने संतों से कहा- ''बाबा, आपके पास तो रखने को कुछ नहीं है, आप बता दीजिये हमने आपको जो भेंट चढ़ाई थी आप जहाँ कहेंगे वहाँ पहुँचाकर आएँगे।'' तभी भेंट की पोटलियाँ माथे पर रखे दौड़ते-हाफते सब ग्रामीण भी आ पहुँचे। उन्होंने पोटलियाँ संतों के चरणों में रख दी। उनके लिए तो सभी संत एक से थे। तभी युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी जो आचार्य श्री के साथ-साथ पीछे चल रहे थे, ने वात्सल्य पूरित मृदुवाणी में उनको समझाया कि हम ऐसे संत हैं जो किसी से कुछ नहीं लेते, न किसी की भेंट साथ ले जाते हैं। आचार्य श्री की तरफ इंगित करते हुए कहा- ''इस भेंट को आप हमारे गुरु का आशीर्वाद व प्रसाद समझ पूरे गाँव को बाँट देना।'' निर्मोही संत कब किसके स्नेह बंधन में बंधे हैं, पुनः उन ग्रामीणों को आशीर्वाद देते उनकी निश्छल सहज भक्ति से अभिभूत हो वे चरण आगे बढ़ गए।

पीछे धरती पर संतों के चरण चिह्न छूट गए थे और वे भोले-भाले ग्रामीण उस चरण रज को रजत सी मूल्यवान समझ माथे पर लगाते व मुट्ठी भर-भर अंगोछों के छोरों में बाँधे प्रसन्नचित्त गाँव की ओर लौट पड़े।

1 मई सन् 1998 पिपचो

1 मई 1998 में मुनि श्री सुनील सागरजी ने पिपचो में आचार्य श्री सन्मति सागरजी ससंघ के साथ आहार चर्या, सामायिक व स्वाध्याय कर अपराह्न में बिहार कर दिया।

संघ यहाँ से लगभग दो-तीन किलोमीटर आगे बढ़ा ही था कि रास्ते में एक छोटे से गाँव में गणिनी आर्यिका विजयमाताजी ने जो आचार्य श्री का इंतजार कर रही थी, बड़े भक्तिभाव से आचार्यदेव व अन्य मुनिगणों के दर्शन किए व आचार्य संघ के साथ हो ली। 4-5 कि.मी. चलने के बाद रात्रि विश्राम के लिए गुरु भाई-बहन का संघ एक ही गाँव में दो अलग-अलग भवनों में ठहरा।

यहाँ से संघ के साथ मुनि श्री 9-10 कि.मी. चल निवाड़ी पहुँचे। वहाँ आहार चर्या, सामायिक, तत्त्व चर्चा आदि पश्चात आचार्य श्री व विजयमति आर्यिका माताजी में धर्म चर्चा हो रही थी। पास बैठे युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी ध्यान से उनकी चर्चा का श्रवण कर रहे थे। युवा मुनि अपने व्यवहार, विवेक, ज्ञान, गुणग्राह्यता, मृदुवाणी व कठिन साधना जैसे अनेक गुणों के कारण आचार्य संघ में सबके चहेते थे।

आर्यिका विजयमति माताजी का, युवा मुनि सुनीलसागरजी का गुरु के प्रति विशेष समर्पण व विद्वता जैसे गुणों के कारण उन पर विशेष मातृवत वात्सल्य था। वे भी उनका यथोचित सम्मान करते थे। चर्चा के मध्य माताजी ने मुनि सुनीलसागरजी से विनोदवश पूछा, ''तुम्हारा गोत्र व नाम क्या है?'' यद्यपि प्रश्न उनके गृहस्थ जीवन से संबंधित था, पर 'है' लगाकर मुनि सुनीलसागरजी को दुविधा में डालना चाहा।

प्रत्युत्पन्नमति मुनि श्री सुनीलसागरजी ने बिना एक क्षण गंवाए उत्तर दिया, ''मुनि का कोई गोत्र नहीं होता। रही बात नाम की, तो आत्मा का कोई नाम नहीं होता। किंतु फिर भी आप जानना चाहती हैं तो इस पुद्गल पर्याय का निक्षेप व्यवस्थानुसार 'सुनीलसागर' नाम है।''

युवा मुनि द्वारा दिए गए इस निस्पृहतापूर्ण सटीक उत्तर को सुन माताजी के मुख से निकल गया, ''आप बहुत ऊँचाई पर पहुँचोगे। वाह! आपकी प्रशंसा के लिए शब्द कहाँ से लाऊँ? (चंपापुर चातुर्मास के मध्य जब भी माताजी का पत्र गुरुदेव के नाम आता तो उसमें सुनीलसागरजी को भी नमोस्तु लिखती रहीं।) फिर चिलचिलाती धूप में दोपहर में संघ ने सरिया के लिए विहार कर दिया जो वहाँ से 19-20 कि.मी. था। रात्रि विश्राम एक स्थान पर कर दूसरे दिन दिनांक 2 मई को सरिया के लिए चल पड़े। सरिया की सहृदय समाज ने उत्फुल मन से बड़े उत्साह, जोश व उत्सवी माहौल में गाजे'बाजों के साथ दोनों संघों की अगवानी की।

दो चैत्यालयों के दर्शन कर संघ नवनिर्मित जिनालय पहुँचा। आनन-फानन दिनांक 3 मई को उस जिनालय की वेदी प्रतिष्ठा का मंगल कार्य आचार्य भगवन श्री सन्मतिसागरजी के दिशा-निर्देशन में संपन्न हुआ। दो दिनों तक समस्त त्यागियों ने वहाँ दिन-रात मच्छरों का परिषह सहते हुए समय व्यतीत किया।

मुनि श्री सुनीलसागरजी के लिए सरिया का प्रवास नए-नए अनुभव प्रदान करने वाला रहा। उन्होंने आचार्य श्री के सान्निध्य में देखा कि आचार्यश्री कितनी सूझ-बूझ, समझ, दूरदर्शिता से विहार के मात्र एक-दो दिनी प्रवास में भी कितनी द्रुतगति से बड़े-बड़े कार्य सुव्यवस्थित रूप से संपन्न करा देते हैं। बिना किसी आकुलता- व्याकुलता के मानो काम पूर्व संयोजित हो। वहाँ मच्छरों के साम्राज्य में भी वे जरा भी विचलित नहीं हुए।

सरिया से सबेरे विहार कर केलारोड में चर्या कर फिर विहार कर रात्रि विश्राम कर ढावारोड पहुँचे। ढावारोड में सबेरे

चर्या से पूर्व ही सम्मेद शिखरजी से कुछ युवक आ गए जिन्होंने बड़े भक्तिभाव से आचार्य श्री को ससंघ सम्मेद शिखरजी पधारने के लिए श्रीफल भेंट किया।

यहाँ से शिखरजी के ऊँचे-ऊँचे शिखरों युत पर्वतों को देख मुनि श्री सुनीलसागरजी का हृदय हर्षातिरेक से गद्गद् हो गया। वे अपने आपको धन्य मानने लगे व इस दुर्लभ सौभाग्यशाली क्षण को गुरु कृपा की प्रसादी मान गुरुवर आचार्य भगवंत के प्रति कृत-कृत्य थे।

अब तो मुनि श्री के साथ सारे संघस्थ साधु-साध्वियाँ अनंत सिद्धों के वास उस पावन पवित्र भूमि की रज का स्पर्श करने व उस महान पुण्यभूमि के दर्शन कर अपने नयन व हृदय धन्य करने के लिए लालायित थे।

लक्ष्य की ओर

आहार चर्या, सामायिक, स्वाध्याय के बाद समस्त त्यागी, व्रतीगण अपने 'लक्ष्य' तक पहुँचने के लिए उद्यत थे। कब आचार्य श्री के आदेश की रणभेरी बजे और वे अपने कर्म रिपुओं को कुचलने उस समरांगण में पहुँच जाएँ, जहाँ से उन जैसी अनंत आत्माओं ने अपने अंतर्द्वंद मिटा-मिटा अपने भावों व परिणामों की विशुद्धि से अठारह अक्षौहिणी (महाभारत) तो क्या? अनंत अक्षौहिणी कर्मों की सेना को परास्त कर सिद्धत्व प्राप्त किया। यहाँ तो बात स्वयं के लिए स्वयं के शत्रुओं को स्वयं ही परास्त करना था न कि राजा-महाराजाओं के काल की।

आज तो विहार के लिए गुरुवर का आदेश क्या हुआ। मुनि श्री सुनीलसागरजी के लिए बचपन में छुट्टी के लिए मानो स्कूल की घंटी बजी हो। आज उनके मन में किसी तरह का कोई प्रश्न नहीं था कि कितनी दूर चलना है, कहाँ रुकना है? कितनी थकान है? आज तो उनके मन में 1200 कि.मी. चलकर अपने लक्ष्य यात्रा की मंजिल तक निर्विघ्न रूप से पहुँच जाने की अपार खुशी थी न कि जरा सी भी थकान! मन फूल सा प्रसन्न व हलका था।

जंगली रास्तों से निकलकर सारे साधुगण डामर की सड़कों पर चल रहे थे। यद्यपि जंगली, पथरीले कंटीले रास्तों पर चल-चलकर उनके नंगे पाँव कांटों, कंकरों से बिंध गए थे, छिल गए थे, पैर तलों में घाव हो गए थे, धूप में चलते-चलते भूख-प्यास का परिषह और भी न जाने कितने-कितने परिषह सहते-सहते वे यहाँ तक आ पहुँचे थे। आज श्री शैल की चोटियों, शिखरों को देख वे सारी की सारी विषमताएँ विस्मृत हो गई थी। याद थी तो राह में मिलने वाले लोगों की श्रद्धा, भक्ति, वैयावृत्ति व साधुओं के प्रति समर्पण।

तपती भट्टी सी सड़क पर चलते-चलते ही उन्हें सम्मेद शिखर की पार्श्वनाथ भगवान की टोंक, तेरापंथी कोठी का मानस्तंभ व अन्य मंदिरों के शिखर दिख रहे थे। श्रद्धा से अभिभूत उनके मस्तक उन अनंत सिद्धों के चरणों में नत-नत हो जाते थे। मुनि श्री सुनीलसागरजी के पैर तो धरती पर पड़ रहे थे किंतु मन उन बीस तीर्थंकरों व अन्य सिद्धात्माओं में खो गया था। वे सोच रहे थे, 'अहो भाग्य! कि आज मैं भी उन्हीं के जैसा दिगम्बर निर्ग्रंथ साधु बन उसी भूमि से गुजर रहा हूँ, जहाँ से कभी वे सिद्धात्माएँ इसी निर्ग्रंथ भेष में अपनी अंतिम साधना के लिए गुजरी थीं और इस पर्वत की ऊँची श्रेणियों पर अवस्थित हो अपने आत्मध्यान में तल्लीन हो कर्मों की सेना को तहस-नहस कर 'महानिर्वाण' प्राप्त किया था। यदि इस पंचमकाल में 'निर्वाण' संभव होता तो मैं भी उनके जैसी साधना करने की कोशिश करता। किंतु फिर भी मैं अपने परिणामों, विचारों भावों को विशुद्ध, परिमार्जित बनाए रखने के लिए कृत संकल्पित हूँ।' आत्मचिंतन में वे इस कदर डूब गए थे कि उन्हें पता ही नहीं चला कि इतनी भयंकर धूप में वे पसीने से तरबतर हो गए हैं। जब वे चिंतन से बाहर आए देखा शरीर कुछ गीला-गीला लग रहा है। जैसे नहा लिए हों। ऊपर नजर डाली-आकाश साफ था और सूरज अपने पूरे तेवर में आग उगल रहा था। धरती तवे सी तप रही थी। उन्हें लगा पग तलों में छाले हो रहे हैं जो चलने में बाधक बनना चाहते हैं पर मंजिल के राही को इसकी परवाह कहाँ!

साथी साधुओं से पता चला चौदह कि.मी. में से उन्होंने अधिकांश दूरी पार (तय) कर ली है। अब तो शाश्वत तीर्थधाम काफी करीब है जो मुनि श्री सुनीलसागरजी को भी दिख रहा था। तभी उन्होंने देखा अचानक आकाश में काले बादल छा गए व हल्की बूंदा-बांदी होने लगी। मानो आकाश कहो या इंद्र देवता इन बूंदों के द्वारा आचार्य संघ का अभिनंदन करता अपनी खुशियों का इजहार कर रहा हो, संतों के शाश्वत तीर्थ में मंगल प्रवेश के पहले पाद प्रक्षालन कर रहा हो। मुनि श्री की खुशियों का पारावार न था। उन्हें लग रहा था काश! पंख होते तो इस पवित्र तीर्थधाम के चक्कर लगा आता, किंतु फिर भी मन का पंछी तो कब का शैल शृंगों में विचरण कर अपने आपको धन्य कर चुका था।

अब वे सारे साधुओं व आचार्य श्री के साथ श्री सम्मेद शिखर के 'कल्याण निकेतन' के नजदीक आ गए थे। जैसे ही नजरें उठीं, देखा एक भव्य द्वार बना हुआ है जिस पर लिखा था 'श्री सम्मेद शिखर सिद्ध क्षेत्र पर आपका स्वागत है।' इस पर धर्मचक्र के साथ णमोकार महामंत्र भी लिखा हुआ था। प्रेरणास्तोत में लिखा था- 'आचार्य श्री सन्मति सागरजी।'

पढ़ते ही मुनि श्री सुनीलसागरजी का मन खुशी से बाँसों उछाले लेने लगा। ओहो! मुझे कितने महान गुरु का शिष्य बनने का सौभाग्य मिला है जिनकी यशकीर्ति केतु पहले से ही इस पावन भूमि पर लहरा रही है। सिद्ध क्षेत्र में प्रवेश से पूर्व उनका परम पावन नाम। ऐसे महान गुरु का चरण सान्निध्य पा मेरा तो जीवन तीर्थधाम के दर्शन से पहले ही धन्य हो गया। निश्चित ही ये चलते-फिरते शाश्वत तीरथ हैं और उन्होंने दौड़कर गुरु चरणों में माथा टेक दिया। यदि गुरु कृपा न होती तो वे आज यहाँ नहीं होते।

उन्होंने देखा आचार्य श्री कुमुदनंदीजी ससंघ आचार्य संघ की अगवानी के लिए आ रहे थे। उन्होंने प्रमुदित मना युग श्रेष्ठ-ज्येष्ठ आचार्य श्री को नमोस्तु किया। आचार्य श्री ने उन्हें प्रसन्नचित्त गले लगा लिया। दो संघों के साथ अब तीसरा संघ मिल गया। अब चल पड़ा यह 'त्रिवेणी संगम काफिला' कल्याण निकेतन की ओर। जब वे कल्याण निकेतन पहुँचे तो वहँ पहले से उपस्थित विहार कर आ रहे आचार्य संघ से दोगुने साधु-साध्वियाँ संघ की अगवानी व अभिनंदन के लिए आ रही थीं। सबने बड़े श्रद्धा व विनय भाव से युग के महान तपोनिष्ठ साधक आचार्य श्री सन्मतिसागरजी महाराज की बड़े भक्ति भाव से चरण वंदना की। इस महा मिलन से सबकी खुशियों का ठिकाना नहीं था। मानो खुशियों का पारावार लहरा उठा। अपने गुरुवर का इतने बड़े चतुर्विध संघों में इतना महत्व देखकर ऐसे महान गुरु का शिष्यत्व ग्रहण करने पर मुनि श्री सुनीलसागरजी का हृदय गर्व से फूला नहीं समा रहा था।

अंधेरा होने को अभी एक-डेढ़ घंटा था अतः सभी ने अर्थात् एक विशाल संत समुदाय ने एक साथ गुरुवर की सन्निधि में प्रतिक्रमण कर आचार्य वंदना कर प्रायश्चित ग्रहण किया। वह ऐतिहासिक दृश्य अभूतपूर्व था। इसके पश्चात कुछ वात्सल्यपूर्ण चर्चाएँ हुईं और सारा संघ सामायिक में डूब गया। रात्रि विश्राम भी सभी ने वहीं पर एक साथ किया। युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी के लिए तो यह एक अजूबा ही था।

मुनि श्री सुनीलसागरजी का लेटे-लेटे चिंतन जारी था। वे अपने महान, श्रेष्ठ, ज्येष्ठ, तपोनिष्ठ गुरु के बारे में सोच रहे थे।

कीट पुष्प संग रह कर के देवों के सिर शोभा पाता।।
गुरु संग रहकर तिनका भी गुरु की गुरुता को पा जाता।।

वे बार-बार अपने भाग्य की सराहना कर रहे थे कि प्रभु की कृपा से उन्हें ऐसे महान गुरु मिले। गुरुवर आज अपनी साधना, सहृदयता व सहजता से इतना ऊँचा उठ गए कि इतने बड़े-बड़े साधक इनकी अगवानी को पलक पावड़े बिछाए खड़े हैं। शाश्वत तीर्थधाम तक बारह सौ कि.मी. लंबी यात्रा इनकी कृपा से ही सफल हो रही है।

सम्मेद शिखर-मंगल प्रवेश

6 मई 1998 की वह ब्राह्मी वेला, संजीवनी प्राणवायु सृष्टि के कण-कण में चेतना का संचार कर रही थी। सूरज अपनी सोनेरी किरणों के साथ नभांगण में प्रवेश कर रहा था। अरुण उषा ने दसों दिशाओं में अपनी अरुणिमा की अरुणाई बिखेर दी थी। पक्षीगण मंगल प्रभातिया गा रहे थे। संतों के महामिलन की वह अलबेली बेला थी। उस 'मंगल प्रभात' में आचार्य श्री के सान्निध्य में सारे साधुगण प्रतिक्रमण कर रहे थे तभी वहाँ आचार्य श्री संभवसागरजी, आचार्य श्री भरतसागरजी, आचार्य श्री सन्मतिसागरजी (भिंड), आचार्य श्री शीतलसागरजी, आचार्य श्री तपसागरजी, मुनि श्री अमितसागरजी आदि करीब 80-85 साधुओं का मधुवन से मंगल आगमन आचार्य संघ की अगवानी के लिए हुआ। प्रतिक्रमण पश्चात सबने श्री सन्मतिसागरजी की चरण वंदना की। आचार्य श्री ने भी सबकी यथायोग्य वंदना स्वीकार की। संपूर्ण संघ ने भी आपस में यथायोग्य वंदना-प्रतिवंदना की। सारे के सारे संत आचार्य श्री की भक्ति करते नहीं अघाते थे।

मुनि श्री सुनीलसागरजी के लिए तो यह विस्मयकारी दृश्य था। दूर-दूर तक केवल साधु-साध्वियाँ ही नजर आ रहे थे। मधुवन की किसी भी श्रमण वसतिका में एक भी त्यागी, व्रती, साधु नहीं बचा था। सारे के सारे आचार्य श्री के दर्शन लाभ व अगवानी के लिए दौड़े चले आए थे। वे सोच रहे थे कि देखो गुरुदेव का कितना पुण्यातिशय है कि बिना आयोजन के ही यह 'संत कुंभ' संयोजित/आयोजित हो गया। पूरे देश के महान संतों का यह इतना वात्सल्यमय 'महामिलन' कितना दुर्लभ व शुभ क्षण है मेरे लिए। ऐसा अद्भुत व मंगल संयोग देख पाना मेरे लिए निश्चित ही युगों-युगों के पुण्य संचय के संयोग का प्रतिफल है। यह मुनि श्री के जीवन का ऐसा आश्चर्यजनक प्रथम दृश्य था या यो कहों प्रथम घटना थी।

सिद्धधाम सम्मेद शिखर की ओर

कल्याण निकेतन में अवस्थित जिनालय के दर्शन कर संतों का 'महा संघ' आचार्य श्री के नेतृत्व में बड़े भक्ति भाव से चल पड़ा, सिद्धधाम श्री सम्मेदशिखरजी की चंदनमयी माटी को माथे लगाने। एक ओर अम्बर का रवि अपनी रश्मियाँ बिखेर आचार्य संघ का अभिनंदन कर रहा था तो दूसरी ओर अवनि का सूरज अपने रत्नत्रय की आभा किरणों से अलौकिक आलोक बिखेर रहा था। मुनि श्री सुनीलसागरजी के लिए तो इतने सारे साधुओं का जमावड़ा व सभी की आचार्य श्री के प्रति अद्भुत भक्ति, एक अद्भुत नजारा था। आज दूर-दूर से आई संत सरिताएँ- महासागर बन गई थीं। आज हर कोई खुश था। खुशी का ठिकाना नहीं था। कोई आचार्य दर्शन से खुश था तो कोई तीर्थदर्शन के लिए व्यग्र।

शनैः-शनैः रेंगता हुआ संतों का जुलूस आगे सरक रहा था। सभी संतों के प्रसन्नचित मुखड़ों को देख ऐसा लग रहा था वे सब के सब आचार्य श्री के दर्शन से अभिभूत हैं। पंथ, पट्ट (पट्टाचार्य) व परंपरा से परे वे भगवान महावीर के सच्चे अनुयायी थे। मुनि श्री सुनीलसागरजी ने इतने आचार्य संघों को एक साथ पहली बार देखा था। सबकी सरलता, सहजता व आचार्य श्री के प्रति श्रद्धा भक्ति ने उनका मन मोह लिया।

मधुवन की मंजुल मृदु मृदा पर संत चरण

सभी आचार्यों व संतों की गुरुदेव आचार्य श्री सन्मतिसागरजी पर अत्यधिक श्रद्धा का एक कारण और था। वे अपने पूरे संघ के साथ विगत काफी दिनों से पद विहार कर रहे थे। आज सतत बारह सौ- तेरह सौ कि.मी. की यात्रा पूर्ण कर इस पुण्यमयी धरा पर उन्होंने पदार्पण किया था। उनके एक तरफ आचार्य श्री भरतसागरजी व दूसरी तरफ आचार्य श्री कुमुदनंदीजी चल रहे थे। आचार्य श्री भरतसागरजी के मार्गदर्शन में संघ ने सर्वप्रथम पार्श्वनाथ स्वामी के दर्शन

किए। तदुपरांत जैन म्युजियम, इलायचीमति आश्रम, तीन मूर्ति मंदिर, त्रियोग आश्रम एवं अन्य मंदिरों की वंदना की।

चूँकि संघ का प्रवास तेरह पंथी कोठी में था अतः उसे छोड़ आचार्य संघ बीसपंथी कोठी की ओर चलने उद्यत हुआ। तभी आचार्य श्री भरतसागरजी ने उन्हें विमल सरस्वती भवन संकेत से दिखाया। संघ आचार्य श्री विमलसागरजी के समाधि स्थल पर पहुँचा, जहाँ द्वार पर 'वात्सल्य रत्नाकर' लिखा था। आचार्य श्री ने गुरु विमलसागरजी के समाधि स्थल की तीन प्रदक्षिणा पूर्वक भक्ति भाव से वंदना की। वहाँ से आचार्य श्री भरतसागरजी उन्हें समवशरण मंदिर ले गए। वहाँ से 'चौबीस टोंक' भव्य मंदिर में भगवत् वंदना की।

बीस पंथी कोठी में पार्श्वनाथ मंदिर समेत अन्य मंदिरों के दर्शन किए। तत्पश्चात आप ससंघ उस कक्ष में पहुँचे जहाँ आचार्य श्री विमलसागरजी बैठा करते थे। वहाँ चित्राबाई ने अभिषेक की व्यवस्था कर रखी थी। आचार्य श्री के पहुँचते ही भगवान का अभिषेक प्रारंभ हो गया। दस बजने को थी। अभिषेक होते ही गंधोदक ले आपने साथ चल रहे साधु-साध्वियों को चर्या के लिए जाने को कहा व आप ससंघ तेरापंथी कोठी की ओर चल दिए। मना करने पर भी कई साधु भी संघ को तेरापंथी कोठी पहुँचाने आए।

तेरापंथी कोठी

आपने तेरापंथी कोठी के पिछले दरवाजे से प्रवेश किया। साथ आए साधुओं को विदा किया। सबसे पहले आप लोगों ने विशाल मानस्तंभ की वंदना की तत्पश्चात अन्य मंदिरों के दर्शन किए। यहाँ भी भव्य मंदिर व मनोज्ञ प्रतिमाएँ हैं। यहाँ पर सबके रुकने के लिए एक बड़े से प्रवचन हॉल में व्यवस्था की गई थी। मंच के ऊपर भगवान महावीर की प्रतिमा विराजित है। आचार्य श्री की आज्ञा से अभिषेक हुआ।

तत्पश्चात शुद्धि आदि की क्रियाएँ कर संघ आहार चर्या के लिए निकल पड़ा। आहार चर्या के बाद सामायिक, स्वाध्याय हुआ। तभी आचार्य श्री भरत सागरजी के साथ संघ 'तीस चौबीसी' के निर्माण स्थल पर पहुँचा। साथ में प्र.ग. आर्यिका विजयामति माताजी भी थी। सीधा सर्वेक्षण कर आप संघ के साथ तीनमूर्ति आश्रम की ओर गए। दर्शन के पश्चात वहाँ विराजित आचार्य श्री सन्मतिसागरजी (भिंड) ने आपसे पास ही खाली पड़ी भूमि के उद्धार की बात कही। आचार्य श्री व माताजी ने तत्काल भूमि निरीक्षण व परीक्षण कर वहाँ (1) आचार्य श्री आदिसागरजी, (2) आचार्य श्री महावीर कीर्तिजी व (3) आचार्य श्री विमलसागरजी की 'मूर्तित्रय' विराजमान करवाने की स्वीकृति दे दी। भूमि शुद्धिकरण का कार्यक्रम भी 8 मई को दे दिया। उस दिन गणिनी आर्यिका विजयामति माताजी की जन्म जयंती थी।

मूर्तित्रय भूमि शुद्धिकरण

आनन-फानन सारी तैयारियाँ की गई और 8 मई को भूमि शुद्धिकरण की विधि संपन्न कराने के साथ आर्यिका विजयामाताजी की जन्म जयंती भी बड़े हर्ष-उल्लास के साथ मनाई गई। इस कार्यक्रम में भी सम्मेदशिखरजी में विराजित अधिकांश साधु संत व बड़ी संख्या में श्रावकगणों ने भाग लिया। बड़े-बड़े वक्ताओं के बीच प्रतिभा के धनी युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी को भी बोलने का अवसर दिया गया। उनकी सारभूत बातों को सुन श्रावकों और साधुओं ने उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की। उनकी वाणी में सागर सी गहराई, आकाश सी ऊँचाई व हिमालयी शुभ्रता परिदर्शित हो रही थी। यौवन का उत्साह उफान पर था। एक साथ कई रूपों में उनका व्यक्तित्व दृष्टिबोधित हो रहा था। समाधिस्थ कर देने वाले उनके सशक्त प्रवचन में जागरण के संदेश के साथ उनकी अनन्य गुरुभक्ति, माताजी के प्रति भावभरी विनयांजलि व समस्त आचार्यों व महामुनियों व चतुर्विध संघ के प्रति प्रगाढ़ श्रद्धा व आदरांजलि थी। मुनि श्री ने इस प्रवचन द्वारा सब पर अपने वृहद आगम ज्ञान, विलक्षण प्रतिभा व योग्यता, विद्वता व कुशल वक्तृत्वकला की छाप सबके हृदय पर

अंकित कर दी।

साढ़े चार बजे सभा विसर्जित होने के तत्काल बाद आचार्य संघ ने तेरापंथी कोठी की ओर प्रस्थान कर दिया। प्रतिक्रमण में सारा संघ उपस्थित था (संख्या साधुओं की 85)। प्रतिक्रमण पश्चात 'शाश्वत धाम वंदना' की चर्चा चल पड़ी। क्योंकि हर कोई अविलम्ब तीर्थ वंदना के लिए लालायित था। अब तो उनके लिए एक-एक पल का इंतजार भी भारी था। आचार्य श्री ने भी सबके चेहरों पर झलकती व्यग्रता को पढ़ लिया था। आचार्य श्री ने लघु चर्चा कर कल सुबह यानी 9 मई 1998 प्रातःकाल का समय तीर्थवंदना के लिए निश्चित कर दिया। सबके चेहरे कमलवत खिल गए।

मच्छरों का आनंद

मधुबन में पहली रात मच्छरों ने खूब आनंद लिया। आचार्य देव श्री सन्मतिसागरजी महाराज मानस्तंभ की कटनी पर विश्राम कर रहे थे। जब मुनिश्री वैयावृत्ति करने गए तो लगा कि उन पर झीना काला कंबल पड़ा है, किंतु निकट जाकर देखा तो असंख्य काले मच्छरों का आवरण था किन्तु वे सहजता में थे। इससे मुनिश्री को परिषहजय करने की दृढ़ता मिली।

प्रमुदित मना सारे साधु अपनी चर्योपरांत रात्रि विश्राम करने लगे। यहाँ मच्छरों ने पूरी रात उन्हें तीर्थवंदना के लिए सजग रखा। इस रतजगे में मुनि श्री सुनीलसागरजी की गुरुभक्ति और मजबूत हो गई। वे गुरुदेव की प्रत्युत्पन्नमति व त्वरित निर्णय लेने की क्षमता के कायल हो गए। वे सोच रहे थे कि किसी भी कार्यक्रम का आयोजन- संयोजन- व्यवस्था करवाना उनके लिए चिट्टी उंगली का खेल है। वे घंटा, घड़ी या सुबह-शाम या कल तो दूर तत्क्षण निर्णय ले उसी वक्त शुभ मोहरत देख शीघ्रातीशीघ्र कार्य संपादित करवा देते हैं। विहार में रहते हुए भी उन्होंने एक-दो दिन के वास में बड़े-बड़े कार्यक्रम, वेदी प्रतिष्ठा, मंडल विधान, भूमि शुद्धिकरण जैसे अन्यान्य धार्मिक कार्य बिना आगे टाले अपनी उपस्थिति में ही संपन्न करवा दिए। सचमुच इसी बुद्धि कौशल का प्रतीक है उनका नाम 'आ. सन्मतिसागर'। उनकी तपस्या के साथ उनकी ऐसी ही अनेक योग्यताओं व क्षमताओं के कारण ही आचार्य भगवानश्री महावीर कीर्तिजी ने उन्हें परंपरा के पट्टाचार्य पद पर आसीन किया होगा। सबेरे इतने सारे आचार्य संघों व साधुओं का गुरुदेव की अगवानी के लिए आना और उनके नेतृत्व में इतने उत्फुल्लित हो चलना, उनकी असाधारण योग्यताओं के प्रतीक हैं। ऐसी ही विलक्षण प्रतिभाएँ जगत पूज्य हो जाती हैं। हमें भी गुरुवर की चारित्रिक विशेषताओं का अनुकरण करना चाहिए। उनसे सीख लेना चाहिए। गुरु गुणों का अवगाहन करते-करते वे कब निंद्रादेवी के आगोश में समा गए, पता ही नहीं चला।

9 मई शिखर वंदना

बड़े सबेरे, सूरज निकलने के काफी पूर्व सारा संत समुदाय जाग सामायिक आदि अपने सबेरे की दैनिक प्रक्रियाओं से निपट चुका था। सभी में पर्वत पर चढ़ने व 'सिद्धधाम' की वंदना की आतुरता बढ़ रही थी। पल प्रतिपल उनमें बच्चों की सी व्यग्रता बढ़ती जा रही थी। मुनि श्री सुनीलगसागरजी भी उनमें से एक थे। सभी आचार्य श्री के सामायिक से उठने का इंतजार कर रहे थे।

जैसे ही आचार्य श्री सामायिक से उठे। मुनि श्री सुनीलसागरजी गुरुदेव के पीछे जा खड़े हुए। जैसे ही आचार्य श्री चले, संघ के साथ वे भी गुरुदेव के पीछे-पीछे चल पड़े। करीब एक कि.मी. चलने के पश्चात 'पर्वतराज' की चढ़ाई शुरू हुई। टेढ़े-मेढ़े, ऊबड़-खाबड़, पथरीले, ठंडे रास्ते से चढ़ाई चढ़ रहे थे। चारों ओर घना जंगल था। पशु-पक्षियों की आवाजें आ रही थीं। पहाड़ की चढ़ाई का अब अनुभव होने लगा। चार-पाँच कि.मी. चल चुकने के बाद गंधर्व नाला मिला। थोड़ा और चढ़े कि कलकल की ध्वनि सुनाई दी। यह सीता नाला था। जिस पर पुलिया निर्माण का कार्य

चल रहा था। यहीं पर कुछ दुकानें व भता घर था, जहाँ थोड़ा विश्राम कर यात्री आगे बढ़ते हैं। मुनि श्री को शाश्वत तीर्थ की हर टोंक का इतिहास तो अच्छी तरह पता था, किंतु भूगोल के बारे में जानकारी दिनभर की इतनी व्यस्तताओं के बावजूद भी निकाल ली थी।

कड़ी व लंबी चढ़ाई के कारण संघ आगे-पीछे हो गया। मुनि श्री भी वहाँ जाकर रुक गए, जहाँ से दो रास्ते फटते थे। जिसमें से एक चौपड़ा कुंड होते हुए पहाड़ की वंदना के लिए है व एक पार्श्वनाथ टोंक होते हुए तीर्थ वंदना के लिए। आचार्य श्री पार्श्वनाथ टोंक वाले रास्ते से आगे बढ़ने लगे। कुछ साधु तो आचार्य श्री के साथ आगे बढ़ गए किंतु ऊँची चढ़ाई के कारण मुनि श्री सुनीलसागरजी थोड़े से फासले से पीछे रह गए। पार्श्वनाथ टोंक से दो-ढाई कि.मी. दूरी की बात है। मुनि श्री ने देखा, तीन विशाल काले पालतू भैंसे पूरा रास्ता रोके खड़े थे। प्रायः यात्री चौपड़ा कुंड से होकर ही तीर्थ वंदना करते हैं। इस रास्ते कोई आवाजाही नहीं रहती। अतः भैंसे आराम फरमा रहे थे। न उन्हें कोई हटाने वाला था न कोई टोकने वाला। मुनि श्री सोच रहे थे इतनी ऊँचाई पर इस निर्जन क्षेत्र में ये पालतू भैंसे कहाँ से आए? आसपास एक भी घर-झोपड़ी नहीं। कहीं कोई देवीय चमत्कार तो नहीं। फिर मन ने कहा, 'नहीं यह तो विभ्रम है।' यों भी वे रास्ते में णमोकार महामंत्र का जाप करते जा रहे थे। मंत्र जाप करते हुए झटके से एक जरा सी जगह से निकल आगे बढ़ गए। थोड़ा आगे बढ़कर उन्होंने देखा। वे भैंसे ज्यों के त्यों खड़े हैं किंतु जहाँ से वे निकलकर आए थे वहाँ से निकलने की कोई जगह नहीं थी। वे पुलकित हृदय सोचने लगे, यह तो इस पुण्यभूमि का अतिशय है। जिसके कण-कण पर पावन आत्माओं ने सिद्धत्व प्राप्त किया। उस पावन पूत भूमि पर किसी का अहित नहीं होता। ये भैंसे मुझे सीख देने के लिए ही खड़े हैं कि पर्वतों की ऊँचाई व जिंदगी की ऊँचाई एक सी है, जिस पर जहाँ चढ़ाई मार्ग पर ऐसे अनेकानेक व्यवधान आते हैं, मुश्किल बाधाएँ राह रोककर खड़ी हो जाती हैं। सफल वही व्यक्ति होता है जो सूझबूझ, हिम्मत व साहस से निडर-निर्भीक हो राह निकाल आगे बढ़ जाता है। मात्र बारह घंटों में इस सम्मेद शिखर यात्रा ने मुनि श्री को जिंदगी के दो बहुत बड़े पाठ पढ़ा दिए। जिनकी बुनियाद पर उनके आगे के जीवन की इमारत का भव्य निर्माण हुआ। वरना क्या कारण था कि वे गुरुवर से आठ-दस कदम पीछे रह जाते? वे इतने आत्म तल्लीन हो पहाड़ की चढ़ाई चढ़ रहे थे कि उन्हें पता ही नहीं चला कि आचार्य श्री ने उन भैंसों के खड़े रहते कैसे रास्ता पार किया। हो सकता है आचार्य श्री के निकलने के तुरंत बाद वे जंगलों से निकल आ खड़े हुए हों या दूर-दूर खड़े हों। खैर कुछ भी हो ज्यादा माथापच्ची में पड़ वक्त गंवाने की बजाय वे तेज कदमों से आगे बढ़ गए और अंततः शीघ्र आचार्य श्री के साथ हो लिए। लेकिन वे भैंसें उनके अवचेतन मन में आत्मविश्वास व सजगता पैदा कर गए थे।

आचार्य श्री के साथ मुनि श्री सुनीलसागरजी सहित तीन और साधु थे जो संघ में सबसे पहले प्रभु पार्श्वनाथ के दर पर पहुँचे। टोंक की पहली सीढ़ी पर ही उन्होंने माथा टेक दिया, उनका मन कमलवत मुकुरित हो गया। विघ्नहारी मंगलकारी चिंतामणि पारस प्रभु से मन ही मन यही प्रार्थना करने लगे कि हे प्रभु यह तेरी ही असीम कृपा है कि यौवन की दहलीज पर पैर रखते ही मुझे ऐसे महान गुरु मिल गए कि उन्होंने मुझे वासना के पंक में फंसने से पहले मुक्ति के पंख दे दिगम्बर बना अपने जैसा बना लिया। यद्यपि ऊँचाइयों में पर्वत है। मैं तो जिसकी तहलटी में पड़ा तुच्छ तिनका भी नहीं तथापि मैं उनके प्रति कृत-कृत्य हूँ, उनका चिर ऋणी हूँ। दूसरा उनका मुझ पर परम उपकार, वे मुझे आज आपकी शरण में ले आए। उनका उपकार तो मैं कभी नहीं भूलूँगा न उतार सकूँगा। मेरे गुरु आज मुझे अनंत सिद्धों के दरबार में ले आए। अभी तो मैं तेरे पादमूलों (चरण पादुका) तक पहुँचा भी नहीं हूँ और यहाँ मुझे इतना आनंद, इतना सुख, इतनी शांति मिल रही है तब तो तेरा दर कितना सुख-शांति प्रदाता होगा?

अंतर यात्रा

अंतर की यात्रा करते-करते वे कब पारस प्रभु के बाहरी मंदिर की तीन प्रदक्षिणा गुरुवर के साथ करने लगे, उन्हें पता भी न चला। वे कुछ सीढ़िया चढ़ पारस प्रभु के मंदिर में पहुँच गए। जाते ही उन्होंने प्रभु के चरणों में माथ टेक दिया। मानों उन्हें आज त्रिलोक की सारी निधियाँ मिल गई हों। भावातिरेक में उनकी आँखों से खुशियों के आँसू झलक पड़े जो अपने आप श्रीचरणों में अर्पित हो गए। स्वयं को संयत कर वे प्रभु चरणों में भावना भाने लगे, हे प्रभु! मैं जीवन की खाली झोली लेकर तेरे दर पर आया हूँ। हे! अनंतगुणाधिपति पारस प्रभु! सुना है पारस लोहे को अपने से छूते ही उसे स्वर्ण बना देता है, किंतु प्रभु मुझे स्वर्ण बनने की कोई चाह नहीं। बस प्रभु! चाह एक ही है मैं भी तुझसा पारस बन जाऊँ। बस इस जार-जार (जीर्ण-शीर्ण) जीवन झोली में तेरे अनंत गुणों की अकूत राशि (संपत्ति) में से किसी एकाध गुण का परमाणु प्रमाण अंश इसमें डाल मेरी जीवन यात्रा उपकृत कर देना। प्रभु! तेरे दर पर यह भिक्षुक तेरी निज गुणसंपत्ति के सबसे छोटे अंश के सबसे छोटे अंश को माँगने आया है। ताकि उसका अवलम्बन ले मैं इतना पुरुषार्थ कर सकूँ जिससे एक दिन मैं उस सिद्धालय में आ तेरे पाद पद्मों में जगह पा सकूँ। ऐ! सिद्धालयवासी पार्श्वप्रभु, मैं तेरी अंतिम साधना स्थली, निर्वाण भूमि इस 'पार्श्वनाथ टोंक' से तुझे पुकार-गुहार लगा रहा हूँ। 'अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं मम, तस्मात् कारुण्य भावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर।'

ऐसे ही विशुद्ध भावों, निर्मल परिणामों से वे पार्श्वप्रभु से विनती कर रहे थे, उनकी महिमा का गुणगान कर रहे थे और उनकी कठोरतम साधना के प्रति नत मस्तक हो रहे थे।

प्रभु वंदना से निवृत्त (यद्यपि वहाँ से हटने का उनका मन ही नहीं हो रहा था) हो वे गुरु चरणों में कृतज्ञ भावों से आ बैठे और उनके साथ स्तुतियों के बोल बोलने लगे। सभी त्यागी-व्रतियों के वहाँ एकत्रित हो जाने पर फिर वहाँ से क्षेत्र वंदना शुरू हुई।

भगवान पार्श्वनाथ की वंदना कर संघ के साथ मुनि श्री ने नेमिनाथ, विमलनाथ, सुपार्श्वनाथ, महावीर, शांतिनाथ, सुमतिनाथ, धर्मनाथ, गौतमस्वामी, कुंथुनाथ, नमिनाथ, अरहनाथ भगवान की वंदना की व आचार्य श्री के साथ जल मंदिर पहुँचे। मुनि श्री के साथ-साथ सभी लोग काफी थक चुके थे। यहाँ पर आपने एक शांत-शीतल स्थान पर बैठ संघ के साथ प्रतिक्रमण किया। चूँकि समय अधिक हो गया था, चर्या का समय हो रहा था। अतः आप सभी के साथ गौतम स्वामी टोंक होते हुए चोपड़ा कुंड के लिए चल दिए जो वहाँ से एक-डेढ़ कि.मी. ढलान पर है। वहाँ पहुँच सभी संतों की आहार चर्या हुई। तत्पश्चात सभी साधुवृंद सामायिक में बैठ गए।

दिनभर की तपिश के बाद शाम पाँच बजे से रात्रि में देर तक बारिश होती रही। वातावरण में ठंडक घुल गई और रात में ठंडक अत्यधिक बढ़ गई। वैसे भी शिखरजी में रात्रि से सुबह तक काफी ठंडी रहती है। दिगम्बर साधुओं को इस असह्य ठंड से बचाने के लिए घास व चटाइयों की व्यवस्था की गई। श्री शैल की यह यात्रा-वंदना मानों रात्रि में साधुओं की परीक्षा ले रही थी। वंदना की पूर्व रात्रि (8 मई) बड़े-बड़े मच्छरों के झुंडों के प्रहार परिषह को झेलते बीती और 9 मई की रात्रि ठंड की ठिठुरन के परिषह को झेलते। किंतु इन परिषहों को हँसते- मुस्कुराते फुटबॉल की तरह किक मारते आगे बढ़ना साधुओं की आदत सी बन गई थी। आत्मचिंतन में लीन रहने वाले संतों की वह रात भी आसानी से और रातों की तरह कट गई।

10 मई सबेरे पुनः आप आचार्य श्री संघ के साथ तीर्थ वंदना को चल पड़े। छह बजे भी घने कोहरे के कारण अंधेरा था। श्रावकों द्वारा किए गए टॉर्च के प्रकाश में चोपड़ा कुंड से एक कि.मी. दूरी तय करके आप सब गौतम गणधर टोंक (मंदिर) पहुँचे। आगे की यात्रा यहीं से प्रारंभ होना तय थी।

अत्यधिक सर्दी, ऊपर से घने कोहरे के कारण ठिठुरते-काँपते समस्त दिगम्बर साधुओं ने गौतम गणधर की टोंक से गौतम स्वामी सहित चौबीस तीर्थंकरों के चौदह सौ बावन गणधरों को बड़े भक्तिभाव से बारंबार नमन-वंदन करते हुए अपनी अगली यात्रा का श्रीगणेश किया।

श्री कुंथुनाथ, नमिनाथ, अरहनाथ, श्रेयांसनाथ, पुष्पदंत, पद्मप्रभु व मुनिसुव्रतनाथजी की टोंक से समस्त तीर्थकरों व उनके साथ निर्वाण प्राप्त किए अनंतानंत सिद्ध परमेष्ठियों के दर्शन कर चंद्रप्रभ टोंक पर पहुँचना तो कभी सीढ़ियाँ उतर नीचे पहुँचना फिर चढ़ना। सांप-सीढ़ी के खेल जैसा आनंददायक क्षण रहा था। यहाँ से फिर सीढ़ियाँ चढ़ चंद्रप्रभु टोंक पर पहुँचे। कहते हैं इस चंद्रप्रभ कूट (टोंक-मंदिर) की प्राण-प्रतिष्ठा बलभद्र रामचंद्रजी ने करवाई थी और प्रथम वंदना भी उन्होंने ही की थी। बड़े भक्तिभाव से आपने भी चन्द्रप्रभु व अनंत सिद्धों की वंदना की।

यहाँ से हाँफते-काँपते आपने अत्यधिक ऊँचे पर्वत शिखर पर अवस्थित ऋषभदेव के दर्शन किए। यह टोंक इस बात का प्रतीक है कि भगवान ऋषभ कितने ऊँचे कैलाश पर्वत से निर्वाण को प्राप्त हुए।

ऋषभदेव की टोंक से आपने शीतलनाथ, अनंतनाथ, संभवनाथ, वासुपूज्य व अभिनंदननाथ भगवान की टोंक के दर्शन कर सभी तीर्थंकरों व यहाँ से मुक्त हुई करोड़ों सिद्धात्माओं की बड़ी श्रद्धा भक्ति से वंदना की। अभिनंदन स्वामी की टोंक के आसपास बंदरों के झुंड उछल-कूद कर रहे थे। तीर्थ यात्रियों द्वारा दिये व चढ़ाए जा रहे बादाम-चटख व चावल बड़े आनंद से खा रहे थे।

यहाँ आप आचार्य श्री के साथ जल मंदिर पहुँचे। कल तो सब लोग पूरे पहाड़ की चढ़ाई, फिर पर्वत वंदना की चढ़ाई-उतराई से बहुत थक चुके थे। किंतु चोपड़ा कुंड पर रात्रि विश्राम के कारण पहाड़ की चढ़ाई की थकान आज नहीं थी। इस कारण वंदना अच्छे से हो रही थी। यहाँ पर आप पाँच-सात मिनट रुक आगे धर्मनाथ भगवान की टोंक पर पहुँच गए।

धर्मनाथ, सुमतिनाथ भगवान सहित करोड़ों मुक्तात्माओं की वंदना कर शांतिनाथ भगवान की वंदना कर भगवान महावीर की टोंक पर पहुँचे। महावीर भगवान यों तो पावापुर से मोक्ष गए पर यहाँ इस टोंक से भी उनकी वंदना की जाती है। मुनि श्री ने भी शिखरजी की इस टोंक को ही पावापुर माना, प्रभु के चरणों में अपनी भावांजलि अर्पित की।

यहाँ से चढ़ाई-उतराई, फिर चढ़ाई-उतराई करते श्री सुपार्श्वनाथ, विमलनाथ, नेमिनाथ टोंक को साक्षात गिरनार पर्वत मान नेमिनाथ भगवान व अनेक सिद्धात्माओं की वंदना की। यहाँ अजितनाथ टोंक पर भगवान की वंदना कर सम्मेद शिखर की सर्वोच्च चोटी पार्श्वनाथ की टोंक पर चढ़े। आपने उपसर्ग विजेता, विघ्नहरता, मंगलकर्ता चिंतामणि पार्श्वनाथ की बड़े भक्तिभरे हृदय से चरण वंदना की। उनके चरणों में मस्तक रख रखकर आपने अपनी मुक्ति की मंगल कामना की। संसार के समस्त प्राणियों के लिए भी सुख-शांति की प्रार्थना की। अपने जन्म जन्मांतरों में किए गए पापों, अपराधों की आलोचना- निंदा की जिनके कारण वे आज तक दुःखों भरे संसार सागर में गोते लगा रहे हैं। वे प्रभु से बारंबार विनंती कर रहे थे कि प्रभु मुझे ऐसी शक्ति दे, भक्ति दे, युक्ति दे जिससे मैं पुरुषार्थ कर मुक्ति लक्ष्मी का वरण कर सकूँ।

प्रभु वंदना के बाद आपने आचार्य श्री व संघ के साथ प्रतिक्रमण स्तुति पाठ व भक्ति की। यहाँ से भी संघ के साथ आप चोपड़ा कुंड लौट आए। यहाँ चर्या, सामायिक, स्वाध्याय व प्रतिक्रमण और फिर नित्य नियम क्रियाएँ संपन्न हुई। उसके पश्चात रात्रि विश्राम।

चौदह मई 1998 को परम पावन शाश्वत धाम सम्मेद शिखरजी की पाँचवीं वंदना कर नीचे मधुवन के लिए उतरने लगे। यद्यपि तीर्थवंदना से मन तो भरा नहीं था, पर अब नीचे तो उतरना था। यहाँ वे आचार्य श्री के साथ थे व चौपड़ा कुंड पर संतों की रहने व चर्या की व्यवस्था हो जाने के कारण वे लगातार पाँच वंदना हँसते- मुस्कुराते कर सके। वरना रोज की चढ़ाई में नानी-दादी याद आ जाती। वे बार-बार आचार्य श्री के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट कर रहे थे।

कहने को उनके पैर पहाड़ उतर रहे थे किंतु मन का पंखिड़ा बार-बार श्री शैल के ऊँचे-ऊँचे शृंग शिखरों पर विराजित तीर्थंकरों के चरणों में जा बैठता व बारंबार प्रभु से प्रार्थना करता कि प्रभु मैं भी शीघ्र ही आप जैसी मुक्तात्मा बन सकूँ ऐसी बोधि दे। साधना करने की क्षमता दे। तेरी पावन भूमि पर मेरा तन-मन व आत्मा जितनी विशुद्ध बन गई ऐसी विशुद्धि हमेशा बनी रहे। वे चिंतन करते जा रहे थे कि उनके भावों व परिणामों जैसी निर्मलता, विमलता, शुद्धता इस क्षेत्र पर रही वैसी आज तक कहीं नहीं रही। जैसी शांति का अनुभव यहाँ किया वैसी शांति का अनुभव उन्हें आज तक अन्यत्र कहीं नहीं हुआ। यह सब काल क्षेत्र का प्रभाव है। इतने सिद्धों के निवास की इस भूमि का एक-एक कंकर भगवंत है, पूज्य है तथापि मुझे इस पावन भूमि पर पैर रखकर चलना पड़ रहा है।

तीर्थ वंदना पश्चात चर्चा

दूसरे दिन पंद्रह मई को आचार्य श्री ने सम्मेद शिखरजी का महत्व पूरे संघ को बताया। उन्होंने कहा कि हमारे सभी काल के चौबीस तीर्थंकर अयोध्या में जन्म लेकर सम्मेद शिखरजी से ही मोक्ष जाते हैं।

यह तो काल का प्रभाव है कि इस बार ऐसा नहीं हुआ। कुछ अलग हुआ। शास्त्रों में कहा गया है इस भूमि पर जन्म लेने वाला प्रत्येक जीव कभी न कभी निश्चित ही मोक्ष जाता है। भले ही वह कितने ही जन्म क्यों न ले ले। इसके अलावा भी उन्होंने सम्मेद शिखर की पावनता व वंदना से संबंधित कई बातें शिष्यों व श्रावक-श्रोताओं को बताई (जिसका विशद वर्णन- मेरी सम्मेद शिखर यात्रा- पृष्ठ 42-43 लेखक मुनि श्री सुनीलसागरजी में है)।

शांतिनाथ निर्वाण महोत्सव

ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्दशी को पर्वतराज पर भगवान श्री शांतिनाथ का जन्म, तप व निर्वाण कल्याणक आचार्य श्री के सान्निध्य में मनाना निश्चित हुआ। अतः त्रयोदशी को ही आचार्य श्री ससंघ चोपड़ा कुंड पर पहुँच गए। दूसरे दिन चौदस को रास्ते में पड़ने वाली समस्त टोंकों के दर्शन कर निर्वाण लाडू चढ़ाया। सभी मुनिगणों ने शांति निधि शांतिनाथ भगवान की भक्तिपूर्वक स्तुति वंदना की। शेष टोंकों के दर्शन कर संघ पुनः चोपड़ा कुंड पर आ गया। साधु गणों ने बड़े आनंदपूर्वक भक्ति भाव से पर्वत की तीन वंदना की व तेरा पंथी कोठी को लौट आए।

पर्वतराज की तीन और वंदनाएँ कर लेने पर मुनिराज सुनीलसागरजी बहुत प्रसन्न थे। उन्हें ऐसा लग रहा था मानो त्रैलोक्य की सारी निधियाँ उन्हें मिल गई हों।

श्रुतपंचमी महोत्सव

30 मई 1998 ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी- श्रुत पंचमी का महामहोत्सव सम्मेदशिखरजी- मधुवन में आचार्य श्री सन्मतिसागरजी की अगुवाई में भव्य पैमाने पर मनाया गया। इस दिन आचार्य तपस्वी सम्राट सन्मतिसागरजी के मार्ग निर्देशन में त्रिमूर्ति मंदिर में आचार्य श्री आदिसागर (अंकलीकर) आचार्य श्री महावीर कीर्तिजी व आचार्य श्री विमलसागरजी की मूर्तियों को अंकन्यास विधि कर सूरिमंत्र दे प्राण प्रतिष्ठा कर पूज्य बना दिया गया।

इस पावन प्रसंग पर तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी, आचार्य श्री संभवसागरजी, आचार्य श्री भरतसागरजी, आचार्य श्री शीतलसागरजी, आचार्य श्री कुमुदनंदनीजी, आचार्य श्री सन्मतिसागरजी (भिंड), आचार्य श्री तपसागरजी ससंघ करीब 80-85 साधु व प्रथम गणिनी आर्यिका विजयमति माताजी ससंघ सहित व अन्य कई आर्यिका- क्षुल्लिका माताएँ उपस्थित थे।

इस अवसर पर श्रावक श्रेष्ठी श्री शिखरचंदजी पहाड़िया, त्रिलोक गोधा, रतनलाल बड़जात्या (जयपुर), महेंद्र हंडावत

(उदयपुर), मनोज जैन (धनबाद), विजय जैन (इंदौर), प्रमोद जैन (दिल्ली) आदि देश के कोने-कोने से पधारे अनेक श्रीमंतजन उपस्थित थे।

इस अवसर पर शास्त्राधिराज 'षट्खंडाम' का स्मरण कर उसके प्रणेता आचार्य श्री धरसेन, पुष्पदंत व भूतबली को स्मरण कर इस दिन की महत्ता पर विद्वतगणों ने विशद् प्रकाश डाला। इसी दिन आचार्य श्री आदिसागर (अंकलीकर) का आचार्यपद पदारोहण होने पर उन्हें भी विनयांजलि अर्पित की गई। कुछ संतों के केशलोंच भी हुए। श्रुतस्कंध विधान भी संपन्न हुआ। इस अवसर पर मुनि श्री सुनीलसागरजी ने भी प्रभावोत्पादक उद्‌बोधन से सभी को मंत्रमुग्ध कर दिया।

अंत में आचार्य श्री सन्मतिसागरजी (तपस्वी सम्राट) को सम्मेद शिखर में चातुर्मास करने के लिए निवेदन कर श्रीफल अर्पित किया गया किंतु आचार्य श्री ने स्वीकृति नहीं दी।

मुनि श्री सुनीलसागरजी के लिए सौ- सवा सौ साधु-साध्वियों का यह जमावड़ा विस्मयकारी था। वे बड़ी तल्लीनता से देख रहे थे कि सारे आचार्यगण बिना किसी मतभेद, पंथभेद या मनभेद के मिल-जुलकर आचार्य श्री के दिशा-निर्देशन में सारी गतिविधियाँ, क्रियाएँ त्वरित निपटा रहे थे। सारे आचार्यों की विद्वत्ता, कुशलता व वात्सल्य का यह अनूठा संगम था। जिधर देखो उधर साधु ही साधु दिख रहे थे। इतना वृहद संत समागम उनके जीवन की अविस्मरणीय घटना थी।

अब सारा संत समुदाय बाजों-गाजों के साथ जुलूस के रूप में चल पड़ा। जिनकी 'वसतिका' (संत निवास) आती गई वे उधर मुड़ते गए। आचार्य श्री के साथ मुनि श्री भी तेरापंथी कोठी आ गए।

शिखरजी से विहार

31 मई 1998 को शिखरजी के 25 दिनी मंगल प्रवास के पश्चात आचार्य श्री ने ससंघ उस पावन भूमि से विदा ली। विहार से पूर्व सभी ने भावभीने हृदय से पर्वतराज और उस पावन भूमि को वंदन नमन किया।

मुनि श्री सुनीलसागरजी ने भी भरे हृदय से उस श्री शैल को नमन किया। उनकी आँखें छ्लक आई। क्या पता अब कब सौभाग्य जागेगा तब पुनः इस पर्वतराज की वंदना का सुअवसर मिलेगा। भले ही भौतिक रूप से मैं इस पर्वतराज से दूर रहूँ, पर यह सदैव मेरे हृदय कमल पर विराजित रहेगा। मैं रोज इसकी भाव वंदना करता रहूँगा। यहाँ से मुक्त हुए अनंत सिद्धों को सदा हृदय में बसाए रख नित सिद्धत्व प्राप्ति के प्रयत्न में संलग्न रहूँगा।

वे सारे के सारे आचार्यगण, साधु-साध्वियाँ जो आचार्य संघ की अगवानी करने, अभिनंदन करने आए थे, आज भी वे सब इस विदा वेला में उनके पीछे खड़े थे। सभी दूर तक आचार्य श्री के साथ चले। आचार्यश्री ने रुककर सबको वापस विदा किया।

आचार्य श्री के साथ अन्य संतों के चरण, रज को रजत करते आगे बढ़ रहे थे। पीछे खड़े संतों/श्रावकों ने देखा, वे चरण आगे बहुत आगे बढ़ते जा रहे थे। पीछे रह गया था धूल का गुबार। धीरे-धीरे वे अब आँखों से ओझल हो गए थे।

श्रावकगणों ने दौड़कर उस रज को माथे लगाई और चल पड़े। अपने पूज्य श्रमणाचार्यों के पीछे।

सूरज ढलान पर था। चौपायों के घर लौटने का समय निकट आ रहा था और दूर-दूर गए पंछी अपने घोंसलों की ओर लौटने के लिए आतुर थे। पर ये संत जिनका न घर था, न द्वार... उन्हें कहीं कोई आकुलता- व्याकुलता न थी। जहाँ सूरज ढलने को हुआ रुक गए। वहीं सामायिक प्रतिक्रमण करने, रात्रि विश्राम करने।

सम्मेद शिखर के पच्चीस दिनी प्रवास में मुनि श्री सुनीलसागरजी को जब भी समय मिलता वे मौन धारण कर चिंतन, मनन, मंथन व आत्म साधना में खो जाते। वे अपने को धन्य मानते कि उन्हें इस अनंत सिद्धों की पवित्र भूमि पर इतने

दिन रहने का सौभाग्य मिला। दिगम्बरत्व के बिना कोई आत्मा परमात्मा नहीं बन सकती। उनका कितना परम सौभाग्य है कि सद्गुरु ने अविलंब उन्हें मुनि दीक्षा ही दे दी। अब मुझे यदि दिगम्बर जिन साधु बनने का परम सौभाग्य मिल ही गया है तो मैं इस भेष में इतनी साधना करूँ कि एक दिन मैं भी सिद्ध पद प्राप्त कर लूँ। द्रव्य, क्षेत्र व काल का प्रभाव था कि उन्हें ऐसे कितने ही सुंदर सुविचार आते रहते। वे प्रभु से प्रार्थना करते रहे कि हे प्रभु दूर-दूर से आकर, जिन आत्माओं ने साधना कर यहाँ सिद्धत्व का साध्य पा लिया, मैं भी उनके जैसी साधना कर सकूँ। और वे रात-दिन उन अनंत सिद्धों की आराधना करते रहते, उनके गुणों का ध्यान करते रहते।

मुनि श्री सुनीलसागरजी द्वारा शौरसेनी प्राकृत भाषा में रचित 'परमेट्ठी थुदी' में सिद्धों की स्तुति, हमेशा उनके मुख पर रहती-

'णट्ठट्ठकम्मं विगदं-सरीरं, गुणट्ठ-पत्तं थिर अप्पभावं।
देहप्पमाणं सुविसुद्ध-सत्तं, णमामि सम्मं सिरिसिद्ध सिद्धं।।'

जो नष्टानष्ट कर्म अर्थात ज्ञानावरण आदि आठ कर्मों से रहित हैं, विगत शरीर अर्थात शरीर रहित हैं, सम्यक्त्व आदि अष्ट गुणों को प्राप्त, आत्म स्वभाव में स्थिर, शरीर-प्रमाण शुद्ध आकार वाले तथा अत्यंत विशुद्ध आत्मा वाले हैं, उन सिद्ध भगवान को मैं नित्य नमन करता हूँ। इस आशा अपेक्षा से कि एक दिन मेरी आत्मा भी उनके जैसी विशुद्ध हो जाये!

31 मई शिखरजी विहार पश्चात

सम्मेद शिखरजी से विहार कर सायंकालीन विश्राम में संजय झांझरी, सुबोध झांझरी, आमोद कानोड़िया एवं सुमेर चूड़ीवाल ने आचार्य श्री से पुनः सम्मेद शिखरजी में चातुर्मास करने का आग्रहपूर्ण निवेदन किया तथा चित्राबाई व अनेक आचार्यों की मंशा बताई। किंतु आचार्य श्री ने स्पष्ट मना कर दिया।

सूर्यास्त हो जाने के कारण आचार्य संघ सामायिक में बैठ गया।

सबेरे गिरडीह के लोगों ने श्रीफल अर्पित कर उन्हें धन्य करने का आग्रह किया। आचार्य श्री ने यहाँ दो दिन मंगलवास किया। दोपहर विहार कर रहे थे कि एक निर्जन स्थान पर अंधेरा छाने लगा। अतः आचार्य श्री वहीं खेत की तपी उबड़-खाबड़ भूमि पर खड़े हो सामायिक करने लगे। उनका अनुशरण संघस्थ साधुओं ने भी किया। साथ चल रहे श्रावकगण आचार्य श्री के इस अकस्मात निर्णय से सन्न रह गए। उन्होंने तत्काल येन-केन-प्रकारेण माताजी के लिए थोड़ी दूर एक झोपड़ी में व्यवस्था की। दो युवा मोटर साइकिल से वापस गिरडीह भागे व साधुओं के लिए चटाइयाँ आदि की व्यवस्था की।

आज मुनि श्री सुनीलसागरजी को धरती का बिछौना व अंबर का ओढ़ना अपने लिए सार्थक लगा। रातभर चंद्रकिरणें उन पर क्षीर (दूध) ढुलकाती रहीं और सबेरे उषा अपनी लाली से (कभी न नहाने वाले) इन दिगम्बर संतों को नहलाने लगी।

श्रीसंघ ने यहाँ से चलकर देवघर में दो दिन वास किया। यह देवघर वह भूमि है जहाँ पैंतीस-चालीस वर्ष पूर्व परम विद्वान परंपरा के द्वितीय पट्टाचार्य श्री महावीर कीर्तिजी महाराज का ब्राह्मणों से वाद हुआ था। जिसमें आचार्य श्री विजयी हुए थे। उनकी स्मृति में आचार्य श्री ने यहाँ आचार्य श्री आदिसागर व आचार्य श्री महावीर कीर्तिजी की चरण पादुकाएँ यहाँ के पार्श्वनाथ मंदिर में विराजित करवाई। यहाँ से संघ ने मंदारगिरि निर्वाण क्षेत्र के लिए विहार कर दिया।

मंदारगिरि निर्वाण क्षेत्र

देवघर से मंदारगिरि विहार में आचार्य संघ ने रात्रि विश्राम एक बंगालियों के मंदिर में किया। दिगम्बर साधुओं की कठोर साधना देख वे काफी प्रभावित हुए व साधुओं के लिए रात्रि विश्राम की अच्छी से अच्छी व्यवस्था की।

यहाँ से आप शाम को मंदारगिरि की तलहटी में बसे बाँसा गाँव पहुँच गए जहाँ पर दो मंदिर, धर्मशाला व ठहरने की अच्छी व्यवस्था है। यह एक अद्‌भुत संयोग था कि पहुँचने वाले दिन से दूसरे दिन मंदारगिरि मंदिर में वासुपूज्यस्वामी की प्रतिमा स्थापित करने की द्वितीय वर्षगाँठ थी।

संघ संचालक श्री त्रिलोकजी ने सबेरे आचार्य श्री के सान्निध्य में रथयात्रा का आयोजन करवा डाला। क्षेत्रवासियों के लिए तो यह महोत्सव बन गया व आचार्य श्री के सान्निध्य में सोने में सुहागा हो गया। रथ में भगवान महावीर की प्रतिमा विराजमान कर दो-ढाई कि.मी. दूर पहाड़ तक तो पहुँच गई। अब मूर्ति ऊपर ले जाने की बात आई। आचार्य श्री का आगमन व प्रतिष्ठा की द्वितीय वर्षगाँठ होने से आसपास का जैन समाज उमड़ पड़ा। श्रावकगण प्रतिमा को पहाड़ी पर ले गए।

अभिषेक पूजा विधान आदि अनेक धार्मिक कार्यों ने उत्सव को महोत्सव बना दिया। युवा उत्साही मुनि श्री सुनीलसागरजी हर कार्यक्रम में आगे रह कुशल नेतृत्व करते मार्गदर्शन देते रहते व युवाओं को प्रेरित करते रहते।

मंदारगिरिजी (निर्वाण स्थली) से चम्पापुर सिद्ध क्षेत्र

मंदारगिरि से विहार कर आप संघ के साथ चम्पापुर सिद्धक्षेत्र के लिए चल दिए। आपने देखा कि जब संघ भागलपुर की सीमा पर पहुँचा तो भागलपुर समाज व चम्पापुर सिद्धक्षेत्र दोनों के अधिकारीगण आचार्य श्री की अगवानी के लिए आ गए। आचार्य श्री ने पहले सिद्धक्षेत्र के दर्शन कर पश्चात भागलपुर जाने की बात कही, जिसे समाज ने सहर्ष स्वीकार कर लिया।

आचार्य श्री ने भागलपुर वाले रास्ते से न जाकर चम्पापुर जाने के लिए दूसरा रास्ता चुना जो अति संवेदनशील रास्ता माना जाता है। भागलपुर समाज के श्रावकों ने आचार्य श्री से उस रास्ते से न जाने का बहुत आग्रह किया, किंतु आचार्य श्री तो उसी रास्ते से चल पड़े। पीछे पीछे संघ। साँसें रोककर समाज ने बड़ी हिफाजत से जैसे-तैसे रास्ता पार करवाया। हर पल उन्हें किसी अनहोनी का डर सता रहा था। जैसे ही शांति से रास्ता पार हुआ तब कहीं जाकर सबकी जान में जान आई। सबने जोर से वासुपूज्य स्वामी का जयकारा लगाया और आगे बढ़ गए।

चम्पापुर में आपने सभी चैत्य-चैत्यालयों व जिनालयों की वंदना की। चम्पापुर बड़ी मनोरम जगह है। भागलपुर के लोगों के अत्यधिक आग्रह पर आपका चातुर्मास करने का इरादा भागलपुर हो गया, क्योंकि बड़े संघ के हिसाब से वह अच्छी जगह है।

किंतु जब पता चला कि वहाँ पानी की व्यवस्था नहीं है तब पुनः चम्पापुर धर्मशाला व पदाधिकारियों व श्रावकों ने चम्पापुर चातुर्मास करने के लिए आचार्य श्री को श्रीफल अर्पित किया। पर आचार्य श्री ने स्वीकृति नहीं दी थी। साधना पर काल क्षेत्र का भी प्रभाव पड़ता है। इस दृष्टि से भागलपुर की बजाए पावन पूज्य सिद्ध क्षेत्र चम्पापुर श्रेष्ठ था।

द्वितीय चातुर्मास चम्पापुर
17 जून 1998 से 12 नवंबर 1998

अंततः दो दिन पैदल यात्रा में चालीस कि.मी. पद विहार कर 17 जून 1998 को मुनि श्री ने वासुपूज्य भगवान की जन्म एवं निर्वाण स्थली, प्राचीन नगरी चम्पापुर में आचार्य श्री के श्रीसंघ के साथ मंगल प्रवेश किया। आपने वहाँ के

विशाल मंदिरों व चैत्य-चैत्यालयों के दर्शन किए।

चम्पापुर में आप श्रीसंघ के साथ भागलपुर के समाज के आग्रह पर तेरापंथी कोठी में रुके। बीसपंथी कोठी भी बड़ी है। यहाँ भागलपुर के श्रावक आचार्य संघ को भागलपुर ले जाने व चातुर्मास करवाने के लिए डटे हुए थे। इतने बड़े संघ की व्यवस्था की दृष्टि से भागलपुर में बड़ा जैन समाज होने व उनकी अटूट श्रद्धा भक्ति देख आचार्य श्री ने पुनः भागलपुर में चातुर्मास करने का मन बना लिया, किंतु जब चम्पापुर धर्मशाला के पदाधिकारियों ने बताया कि वहाँ धर्मशाला में एक ही कुआं है। वह भी सूख गया है। पानी की व्यवस्था न के बराबर है। तब कहीं जाकर आचार्य श्री ने अपना इरादा बदल दिया।

तब तुरंत चम्पापुर के पदाधिकारियों तथा सुश्रावकगण श्री रतनलालजी विनायक्या , श्रीचंद पाटनी, निर्मलचंद्र बड़जात्या, विजय रारा, भागचंद पाटनी आदि समर्पित मुनिभक्तों ने आचार्य श्री से ससंघ चातुर्मास चम्पापुरी सिद्धक्षेत्र में करने का निवेदन व आग्रह करते हुए तत्काल उनके श्रीचरणों में श्रीफल अर्पित किये। समय व परिस्थितियाँ देख आचार्य श्री ने सहर्ष स्वीकृति दे दी। आचार्य श्री की स्वीकृति पा श्रावकों व साधुओं में हर्ष की लहर व्याप्त हो गई। श्रावकों के साथ साधुगण भी सिद्धभूमि में सिद्धों की आराधना करते हुए चातुर्मास करना चाहते थे।

मुनि श्री सुनीलसागरजी की तो इच्छा पहले से ही भगवान वासुपूज्य की इस मनोरम चम्पापुर नगरी में ही चातुर्मास करने की थी, सो पूर्ण हो गई। वे यहाँ वासुपूज्य स्वामी के चरणों में साधना-आराधना करना चाहते थे। उन्हें अनुभूत हुआ था कि सिद्ध क्षेत्र सम्मेद शिखर में परिणामों में कितनी शुचिता व निर्मलता आ गई थी। मार्ग में भी थी पर जस की तस नहीं। वे अभी-अभी भागलपुर की सीमा से होकर आए थे। जो विचार भावना भागलपुर की सीमा में थी, चम्पापुर की सीमा में आते ही उनके भावों की परिणति भगवान वासुपूज्यमय हो गई, बदलकर निर्मल हो गई।

वे एक बार पुनः मंदारगिरि से चम्पापुर आते वक्त पद विहार में आती-जाती विचार उर्मियों में खो गए।

ज्यों-ज्यों चम्पापुर निकट आता गया, उनके मन की पुलक बढ़ती गई। चम्पापुर का स्मरण होते ही उनके मानस पटल पर भगवान वासुपूज्य के अलावा, श्रीपाल- मैना सुंदरी, सेठ सुदर्शन, राजा दधिवाहन- रानी पद्मावती का पुत्र करकंडु, सुमुख वनमाला, धर्मरुचि मुनि, राजा मेघवाहन, सुभग ग्वाला, राजा मघवा- रानी श्रीमती एवं उनकी पुत्री रोहिणी, सेठ भानुदत्त- सेठानी सुभद्रा व पुत्र चारूदत्त, राजा श्रेणिक, चंदनबाला कुणिक आदि आदि अनेक पुराण पात्र चित्र पटल की तरह एक-एक कर उभरने लगे। वे चम्पापुर से संबंधित अनेकानेक महापुरुषों की महानता में खो गए। वे सोच-सोच कर अपने को कृतकृत्य मान रहे थे कि कितनी पावन भूमि है यह यहाँ करीब-करीब प्रत्येक तीर्थंकर का समवशरण आया है और आज उन्हें भी यहाँ आने का सुअवसर मिला है।

तीर्थंकर महावीर का समवशरण तो यहाँ कई बार आया है ऐसे शास्त्रों में उल्लेख मिलते हैं। भगवान के दिव्य उपदेशों से प्रभावित होकर राजा दधिवाहन, स्वाति दत्त, अजात शत्रु, करकंडु, सुबुद्धि आदि अनेक महापुरुषों ने यहाँ संयम का पथ अंगीकार कर आत्मकल्याण किया।

मुनि श्री प्रसन्न थे कि मुझे भी इस चातुर्मास में ऐसी इस महान नगरी में चातुर्मासिक साधना अपने गुरुवर के सान्निध्य में वासुपूज्य स्वामी की चरण निश्रा में करने का अवसर मिला है।

जब 1998 का चातुर्मास चम्पापुर में निश्चित हो गया तब संघ संचालक त्रिलोकचंद्रजी गोधा भी निश्चिंत हो गए। वे भी कुछ कारणों से आचार्य श्री का इतने बड़े संघ के साथ भागलपुर में चातुर्मास करने के पक्ष में नहीं थे। त्रिलोकचंद्रजी गोधा (जयपुर) स्वनामधन्य ऐसे सुश्रावक थे जो आचार्य श्री के प्रति पूर्णतः समर्पित थे। वे अपना घर-बार, कामकाज सब कुछ छोड़ आचार्य संघ को पद विहार कराते, शाश्वत तीर्थधाम सम्मेद शिखरजी की निर्विघ्न यात्रा संपन्न करा, पंच तीर्थ-पावापुर, कुंडलपुर, राजगृही, मंदारगिरि होते हुए चम्पापुर तीर्थ क्षेत्र तक ले आए थे।

अब उनको पूर्ण विश्वास हो गया कि पूज्य गुरु संघ का भगवान वासुपूज्य स्वामी त्रिलोकीनाथ की शरण में चातुर्मास निर्विघ्न सानंद संपन्न हो जाएगा। बड़ा महलहरा से चम्पापुर तक की यात्रा में उन्होंने संघ की खूब वैयावृत्ति की, प्रत्येक साधु का ख्याल रखा। हर साधु उनकी सेवा, मधुर व्यवहार व दूरगामी सोच का कायल हो गया। उन्होंने आचार्य श्री से नमन करते हुए विदा माँगी।

आचार्य श्री व सभी साधुओं ने उन्हें ढेर सारे आशीर्वाद दिए। वे विलक्षण प्रतिभा के धनी नवदीक्षित युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी की असाधारण प्रतिभा से काफी प्रभावित थे। वे अक्सर आचार्य श्री को कहा करते, ''आचार्य श्री आपको तो हीरा मिल गया है हीरा! जीवंत हीरा। ये मुनि महाराज बहुत आगे जाएँगे। विद्वता के साथ इनमें विनम्रता, सेवा भावना व कर्मठता इतनी अधिक है कि ये संघ का नेतृत्व करने में भी सक्षम हैं।'' आचार्य श्री मुस्कुराते हुए कहते, ''असली जौहरी हूँ, परख कर लाया हूँ। देखना ये कितना आगे बढ़ेंगे। मैं रहूँ या नहीं रहूँ। मेरी बातों को याद रखना।''

त्रिलोकजी ने नम आँखों से वहाँ से विदा ली। आचार्य श्री कह रहे थे, ''ऐसे श्रावक बिरले मिलते हैं!'' सभी संतों ने मुक्त हृदय से आशीर्वाद दिया व कहा ''ऐसे ही संतों की सेवा करते रहना व आत्म कल्याण करना।''

त्रिलोकजी भरे हृदय से जा रहे थे व जब तक संतों का दर दिखता रहा। पीछे मुड़-मुड़कर देखते रहे।

चूँकि अब चातुर्मास तय हो चुका था। अतः मुनि श्री सुनीलसागरजी इत्मीनान से वहाँ के मंदिरों के दर्शन करने लगे। उन्होंने देखा मूल मंदिर जो सहस्त्र वर्ष पुराना है, में वासुपूज्य भगवान की लालवर्ण की बड़ी मनमोहक प्रतिमा है। यह मंदिर अत्यंत प्राचीन है। कई-कई बार इसका जीर्णोद्धार कराकर नया रूप दिया जा चुका है। दूसरा मंदिर भी वासुपूज्य स्वामी का ही है। तीसरा मंदिर विशेष महत्व का है। यह बड़ा कलात्मक व प्राचीनतम है। यहाँ विराजित भगवान ऋषभदेव की मूल प्रतिमा कलाकारी का अद्वितीय उदाहरण है। चौथे मंदिर की भी बड़ी सुंदर समवशरण रचना है। यहाँ प्राचीन चौबीसी भी है जिसकी प्रतिमाएँ कुषाणकालीन या गुप्तकालीन है। कृत्रिम जल मंदिर भी है। यहाँ पर सैंतालिस वेदियों में भगवान विराजित हैं। इस क्षेत्र की और भी कई विशेषताएँ हैं जिसका विशद वर्णन मुनि श्री ने 'अनूठा तपस्वी' पृष्ठ 175-176 में किया है।

सूर्योदय से भाग्योदय

सूर्योदय की मंगल बेला में सुप्रभात स्तोत्र के साथ मौन खोलकर मुनिश्री संघ सहित गुरुचरणों में सामूहिक भक्ति पाठ हेतु विराजते थे। एक तरफ तपस्वी सम्राट का तेजस्वी ललाट तो दूसरी तरफ पूर्व की ओर से लालिमा के साथ सूर्य को धीरे-धीरे ऊर्ध्वगमन करते हुए देख मुनिश्री सुनीलसागरजी के मन में सहज रूप से विचार चलते हैं कि जैसे सूर्य का उदय व विकास हो रहा है, वैसे ही मेरे गुणों का विकास हो रहा है। प्रतिदिन यह सम्यक विचार वास्तव में चरितार्थ होता हुआ दिखाई दिया। जैसे विचार वैसा ही व्यक्तित्व निर्माण होता है। इस सिद्धांत को दृढ़ता से मानने वाले मुनिश्री के मन में किसी भी निमित्त को पाकर यकायक उपजी यह सकारात्मक सोच उनके जीवन में गुण रूपी संपदा को निमंत्रित करती रही। सोच जीवन में सच बनती ही है, सदैव वही सोचो जो चाहिये, वैसी ही कल्पना करो, ऊर्जा डालो, मन की इस शक्ति से अच्छी तरह से परिचित मुनिश्री ने चंपापुर से ही गुरु शरण में सूर्योदय से भाग्योदय की बुनियाद अपने अंतर में डाल ली। **'प्रत्येक विचार अपने भाग्य का निर्माण करता है'**, मुनिश्री के जीवन का परम सूत्र था, मुनिश्री की सोच बदली, सितारे बदल गए। वे बहुत सजग रहते थे। कुछ ही वर्षों में सुनील रूपी दिवाकर का उदय हुआ। जो आज 'महाविज्ञ' के रूप में विश्वविख्यात है।

गुरु सपना साकार

गुरु मुख से पूर्वाचार्यों के प्रसंग संस्मरण पुनः-पुनः श्रवण कर सतत स्मरण उन आदर्श पथ चरित्र को अंगीकार कर छोटी वय में दीक्षा के कुछ ही महीनों में युवा मुनिश्री ने आचार्य गुरु जैसे तपस्वी सम्राट का अधूरा सपना/कार्य पूरा करने का बीड़ा उठा महान कार्य के शुभारंभ की नींव रखी। मुनिश्री के हृदय में तन-मन व रग-रग में पूर्वाचार्यों पर अटूट श्रद्धा व समर्पण भाव था। जन-जन में उनके आदर्श चरित्र की प्रभावना की प्रबल भावना उनके मन में रहती थी। जो उनके चिन्तन की आँच में पकती रही और मुनिश्री ने दूसरे चातुर्मास में आचार्यश्री आदिसागर अंकलीकर का विशेष चरित्र 'विश्व का सूर्य' लिखकर गुरु, समाज व श्रमण संस्कृति पर महान उपकार किया। ऋण चुकाने का प्रयास किया। जिसने कल उसी पथ पर चलकर उन्हें उस पद के योग्य बना दिया। आपने बाद में आचार्यश्री महावीर कीर्ति के जीवन चरित्र को 'दूसरा महावीर' और तपस्वी सम्राट आचार्यश्री सन्मतिसागरजी के जीवन चरित्र को 'अनूठा तपस्वी' के रूप में सृजित किया और समाज के सम्मुख लाए।

चम्पापुर में प्रभु दर्शन के साथ-साथ मुनि श्री ने अपने गुरु आचार्य श्री की अनूठी तपस्या के भी दिव्य दर्शन किए। अष्टाह्निका के आठ उपवासों के बाद एकांतर उपवास करते हुए पर्युषण महापर्व के ग्यारह उपवास भी उन्होंने एक साथ किए। नौवें उपवास से उनका स्वास्थ्य बिगड़ने लगा, फिर भी वे अपने संकल्प पर अडिग रहे व ग्यारह उपवास कर डाले। फिर एकांतर उपवास व अष्टाह्निका में आठ उपवास। फिर भी स्वाध्याय के साथ सारी नित्य क्रियाएँ जस भी तस होती रही। अष्टाह्निका में उनकी प्रेरणा से सिद्ध चक्र महामंडल विधान संपन्न हुआ। इसके अलावा भी आए दिन विधान होते रहते। जिनमें युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी की मुख्य भूमिका रहती। वे सारे कार्य संभाल लेते।

आचार्य श्री उपवासी रहते हुए भी उपदेश देते। संघस्थ मुनियों के साथ पंचास्तिकाय शास्त्र का स्वाध्याय विवेचन करते। इस प्रकार धर्म नगरी चम्पापुरी में धार्मिक वातावरण में आचार्य श्री के साथ मुनि श्री का चातुर्मास धर्म लाभ लेते हुए सानंद संपन्न हो रहा था।

मुनि श्री सुनीलसागरजी ने स्वयं भी कई शास्त्रों का अध्ययन- स्वाध्याय किया व अपने ज्ञान को समृद्ध किया। सिद्ध चक्र के विधान में बार-बार उनके सामने कर्म सिद्धांत पर विश्वास रखने व जिन गुरु पर दृढ़ आस्था रखने वाली, कुष्टि पति पर गंधोधक छिड़कती व प्रभु अभिषेक के गंधोदक से श्रीपाल का कुष्ट निवारण करने वाली सहिष्णु मैना सुंदरी व कुष्टि श्रीपाल का चरित्र उभर आता। अक्सर उनके चिंतन में कोई न कोई पुराण पुरुष आकर उनके मनन-चिंतन को प्रखर कर जाता। वे अक्सर जीवन की असारता- अनित्यता का चिंतवन करने लगे। वे सोचते! ओहो! काल के क्रूर प्रहारों से वह वैभवशाली ऐतिहासिक चम्पापुर नगरी आज इतिहास बन गई। वे महापुरुष भी स्थूल रूप से नहीं बच पाए लेकिन शास्त्र पुराणों में संचित-अंकित उनकी मूर्तियाँ आज भी जनमानस में विराजित सुरक्षित जन-जन को प्रेरित कर रही!

मुनि श्री समवशरण मंदिर के दर्शन करने जब भी जाते वे यहाँ आए भगवान महावीर के समवशरण में खो जाते। सोचते संभवतः मैं भी उनके समवशरण में गया होऊँगा लेकिन उनका सदुपदेश मैंने अनसुना कर दिया होगा व नहीं चेता और अब तक भटक रहा हूँ। आज गुरुकृपा से उस प्रतीक स्वरूप बने इस चम्पापुरी में मुझे उसी समवशरण में शरण पाने व दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। हे प्रभु तू मेरे ज्ञान चक्षु खोल देना, मुझे आत्म जागृति देना ताकि तब तक तेरे पदचिह्नों का अनुचर बना रहूँ, जब तक कि मैं इस भवकारा से न छूट जाऊँ।

जब भी नित्य क्रियाओं से मुनि श्री निवृत्त होते वे अधिकांश समय मौन ले लेते और ध्यान, मनन, चिंतन व मंथन में लग जाते। आचार्य श्री जो पढ़ाते उसे अपने जीवन में भी उतारते और कई स्तोत्र व शास्त्रों की गाथाएँ, श्लोक सूक्तियाँ अर्थ सहित कंठस्थ कर लेते। इस चातुर्मास में पंचास्तिकाय (आचार्य कुंदकुंद लिखित) का पाठन गुरुदेव ने करवाया।

आपने उसका विशद व गहन अध्ययन किया। अथक पुरुषार्थ कर आप गुरुवर जिस ग्रंथ को पढ़ाते उसमें निष्णात हो जाते। आपने अपनी सारी युवा ऊर्जा ज्ञान प्राप्ति व ध्यान में झोंक दी। तीक्ष्ण बुद्धि, विद्यार्जन में लगन व कड़ी मेहनत से आप गुरुदेव के प्रिय पात्र बन गए।

इसके अलावा भी वे गुरुदेव की प्रेरणा से कराए जाने वाले सारे कार्यों में आगे रहते। आचार्य श्री हर छोटी-बड़ी बातें मुनि श्री सुनीलसागरजी को बताते। वे उन्हें हर दृष्टि से योग्य मुनि मानते थे और मुनि दिनोंदिन अपने रत्नत्रय में वृद्धि करते रहे। आचार्य श्री के दीक्षा दिवस पर उन्हें 'श्रमण चक्रवर्ती' की उपाधि से विभूषित किया गया और वे अपने भाग्य की सराहना करते कि उन्हें ऐसे गुरु प्राप्त हो गए। उस दिन भी सभा में आपने अपने छोटे से प्रवचन द्वारा सभी विद्वतजनों द्वारा अपना लोहा मनवा लिया। गुरु के प्रति जो हृदयोद्गार प्रगट किए वे उनके सच्चे समर्पण के प्रतीक थे।

जब भी युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी भगवान वासुपूज्य के दर्शन करने जाते तब उनके चरणों में बैठ उनकी भक्ति में लीन हो वे 'वासुपूज्य- त्थुदी' स्तुति करने लगते।

जिदांतगं बम्महमाण-घादं। भव्वांबुजाणीग-विवोहगं च।
देविंद-पुज्जं भुवणत्तयेसं। तं वासुपुज्जं पणमामि पुज्जं।।

जो मृत्यु को जीतने वाले हैं, काम के मान का घात करने वाले हैं, भव्य रूपी कमल समूह को प्रबोधन करने वाले, देवेंद्र पूज्य और तीन भुवन के स्वामी हैं ऐसे वासुपूज्य भगवान को मैं प्रणाम करता हूँ।

मुनि श्री चाहे मंदिर में वासुपूज्य भगवान की निश्रा में बैठे होते या अपने कक्ष में जब मौन ध्यान मग्न होते तब भी वे नित्य ही प्रभु की स्तुति करते कि हे वासुपूज्य प्रभु- तुम कुमार्ग को नष्ट करने में समर्थ हो, जन्म, जरा, मृत्युरूपी तीन नगरों को ध्वंस करने वाले पूज्यातिपूज्य हो, अनेकांत विद्या का प्रकाशन करने वाले हे वासुपूज्य भगवान मेरा आपको बारंबार प्रणाम हो।

हे! प्रभु आप श्रेष्ठ सुधर्म मार्ग के प्रकाशक, निरंजन व प्रशांत रूप हो, हे प्रभु मेरा भी धर्म मार्ग हमेशा प्रकाशमान रहे। मैं ऐसी साधना करूँ कि मैं अपने में आपके गुण प्रकट कर सकूँ। आपके समान बन सकूँ। उस सिद्ध भूमि का ऐसा प्रभाव था कि ध्यानावस्था में मुनि श्री की मनोभूमि- सिद्धभूमि वत बन जाती। वे सिद्ध वासुपूज्य भगवान को बारंबार नमन करते नहीं अघाते। हर बार वे जिनेंद्र प्रभु के सहस्त्र गुणों में से कुछ गुणों का हमेशा चिंतन करते रहते।

17 जून से 12 नवंबर 1998 तक आचार्य संघ का मंगल प्रवास चम्पापुर में रहा। इस अवधि में युवा मुनि सुनीलसागरजी सबके प्रिय पात्र बन गए। जिस कार्य क्षेत्र में उन्हें अनुभव नहीं होता वहाँ भी वे आगे रहते व बड़ों तथा आचार्य श्री से पूछकर कार्य पूर्ण कर लेते। कभी किसी को शिकायत का मौका नहीं देते। आचार्य श्री भी उनकी ललक, सकारात्मक सोच तथा कार्य के प्रति उद्दाम लालसा देख कठिन से कठिन कार्य उन्हें सौंप देते। उन्हें मुनि श्री की योग्यता पर पूरा भरोसा था और मुनि श्री थे कि हँसते- मुस्कुराते उसे चुटकी में निपटा देते। वे श्रावकों तथा संघस्थ साधुओं को देख, अपनी कमियों को निकाल देते व दूसरों की अच्छाइयों को ग्रहण कर लेते। इस प्रकार वे आत्मबल को पुष्ट, दृष्टिकोण को परिष्कृत करते आत्म कल्याण ही जीवनोद्देश्य मानने लगे। स्वयं को इस प्रकार उन्होंने हर क्षेत्र में पारंगत करने का कोई मौका हाथ से न जाने दिया।

आहार की घटना

चित्रकार तो सिर्फ तस्वीर बनाते हैं, गुरु तो शिष्य की तकदीर बनाते हैं। बस चाहिये सुनीलसागरजी जैसी विनम्रता व पुरुषार्थ, फिर भाग्य भी साथ देता है। चाहे कितनी ही होशियारी हो, गुरु के सामने न दिखाना, उनकी हर चेष्टा हमें

एक संस्कार व सही आकार देती है। ऐसा पक्का विश्वास रखने वाले मुनिश्री कभी चूके नहीं। स्वयं तो आपबीती से एक बार की गलती में संभल जाते थे, साथ ही किसी के साथ कुछ प्रसंग बने तो ऐसा नहीं उसे हीन समझना या मजाक करना, अपितु उससे भी वे स्वयं के लिए शिक्षा ग्रहण कर लेते थे। चंपापुर की बात है कि एक मुनिराज आहार चर्या हेतु गए, खूब चक्कर लगाए, पर विधि न मिलने से मंदिरजी में वापस आकर बैठ गए। आचार्यश्री का उपवास था, भक्तों द्वारा उन तक बात पहुँची।

गुरुदेव ने कहा- मुनिश्री से कह दो कि आहार को उठ जाएँ। उस दिन वह आहार करके आए, दूसरे दिन भी ठीक रहा। तीसरे दिन पुनः वही प्रतिक्रिया हुई, बात आचार्यश्री तक फिर पहुँची। उन्होंने कहा- विधि नहीं मिली, बढ़िया हुआ। करने दो उपवास, अपने आप सब मिलने लगेगी। यही शिक्षा मिली कि गुरुदेव एक-दो बार संभालते हैं, बाद में बार-बार नहीं। मुनिश्री का मानना है कि साधना में प्रदर्शन न हो, सहजवृत्ति से आत्मदर्शन ही सच्ची प्रभावना है। यही सहज वृत्ति व सरलता उन्हें ऊँचा उठाती रही, आगे बढ़ाती रही और आज वे बिना दर्शन-प्रदर्शन के ऊँचाइयों के क्षितिज छू रहे हैं।

चम्पापुर चातुर्मास की परम उपलब्धि उनके लिए पंचास्तिकाय का स्वाध्याय एवं विवेचना थी। मुनि श्री ने कई प्रश्नों, शंकाओं आदि के माध्यम से मात्र गूढ़ गहन अध्ययन ही नहीं किया अपितु उसे अच्छी तरह हृदयंगम भी किया।

उन्होंने बड़े समर्पण व विनीत भाव से गुरुवर से जो अध्ययन किया, बिना कहे ही उनके अनुशासित जीवन का प्रतीक बन गए। इसी अध्ययनशील प्रवृत्ति के कारण वे गुरुवर के साथ-साथ अन्यान्य संतों के कृपा पात्र भी बन गए। इतने बड़े व अनुभवी संघ में नवदीक्षित युवा मुनि ने अपनी लगन, कर्मठता, दृढ़संकल्प, अच्छाइयों व श्रेष्ठ भावनाओं के कारण विशिष्ट स्थान पा लिया था। चम्पापुर धर्मशालाओं के पदाधिकारियों, श्रावकों व आने वाले यात्रियों को भी वे चुम्बक की तरह अपनी ओर आकर्षित कर लेते। सच बात है व्यक्ति अपनी अच्छाइयों व श्रेष्ठ भावनाओं से दूसरों के दिलों को जीत लेता है।

चातुर्मास समाप्ति पर अपनी विशिष्ट छाप सब पर छोड़ आपने 12 नवंबर को चम्पापुर से विदा ली। सच बात है अच्छे लोग जाने के बाद भी अपने सद्कार्यों, सदाचार व सद्व्यवहार की सुरभि अपने पीछे छोड़ जाते हैं।

भागलपुर मंगल प्रवेश
13 नवंबर 1998

चातुर्मास से वंचित भागलपुर के सुश्रावकों की भक्ति-निष्ठा व अनुनय-विनयपूर्ण आग्रह पर आचार्य श्री के संघ ने भागलपुर में मंगल प्रवेश किया। कोतवाली चौक के पास जिस मंदिर में संघ का वास था, आपने देखा कि वहाँ हजार वर्ष से भी पुरानी अनेकों प्रतिमाएँ हैं जिससे मंदिर की प्राचीनता का पता चलता है।

पूर्व तय कार्यक्रम के अनुसार 14 से 20 नवंबर तक भागलपुर वासियों की धार्मिक आस्था को देखते हुए 'धर्म शिक्षण शिविर' का आयोजन किया गया, जिसमें आपकी अहं भूमिका रही। शिविर की विशिष्टता रही कि इसके मध्य ही मुनि श्री अमरसेन एवं श्री सूरसेन की सल्लेखना पूर्वक समाधि हो गई।

घटना यों घटी कि मुनि श्री अमरसेन, श्री समन्वयसागरजी, श्री समयसागर, आर्यिका कैलासमति एवं सम्मेदशिखरमति माताजी तथा क्षुल्लक श्री वीरनंदीजी सम्मेद शिखरजी से चम्पापुर तीर्थ वंदना तथा आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के दर्शन के लिए चले थे। रास्ते में मुनि अमरसेन का स्वास्थ्य खराब हो गया, लेकिन आचार्य श्री का विहार हो जाने से कहीं वे दर्शन से वंचित न रह जाएँ, यह सोचकर वे तीव्रगति से चलते ही रहे। कहीं आराम करने रुके नहीं। जैसे-तैसे एन 12 नवंबर के दिन ही वे चम्पापुर पहुँच पाए।

अमरसेन मुनि का स्वास्थ्य अत्यधिक खराब होने से मुनि श्री सुनीलसागरजी उनकी सेवा सुश्रुषा में सबसे आगे थे। सबके साथ उन्होंने उनकी यथायोग्य सेवा सुश्रुषा की। दूसरे दिन प्रातः आचार्य संघ विहार कर भागलपुर पहुँच गया, किंतु नवागत संघ तीर्थ दर्शन के लिए चम्पापुर में ही रुक गया।

किंतु मुनि श्री अमरसेन का स्वास्थ्य अत्यधिक खराब हो जाने पर उनकी इच्छानुसार श्रावकगण उन्हें भागलपुर आचार्य श्री के पास ले आए। आते ही उन्होंने गुरुवर से कहा, ''यह शरीर अब ज्यादा नहीं चलेगा, मुझे सल्लेखना दे दीजिए।''

आचार्य श्री ने उनका हृष्ट-पुष्ट शरीर देखते हुए व डॉक्टर की राय जानकर उन्हें मना किया, किंतु जैसे उन्हें तो मृत्यु का पूर्वाभास हो गया हो, अपनी बात पर अड़े रहे। अंततः गुरुवर ने उन्हें दो माह की नियम सल्लेखना देकर प्रथम उपवास उसी दिन करने को कहा।

उन्होंने आचार्य श्री को अपना गुरु मान पिच्छी उठा नमोस्तु कर आज्ञा स्वीकार कर ली। उनमें अब खड़े रहने की भी क्षमता नहीं थी। मुनि श्री सुनीलसागरजी व कुछ साधु मिलकर उन्हें जिन दर्शन को ले गए व फिर उनके कमरे में ले जाकर लिटा दिया। मुनि श्री सुनीलसागरजी दिनभर अधिकांश समय उनके पास ही रहे। शाम सात बजे से उनका स्वास्थ्य गिरने लगा। मुनिवृन्द उनके पास आ गया। रात बारह बजे उनके श्वांसों का क्रम टूटने लगा। आचार्य श्री के श्रीमुख से महामंत्र सुनते-सुनते चतुर्विध संघ की साक्षी में रात्रि एक बजे पद्मासन में आत्मध्यान पूर्वक उन्होंने देह त्याग दी।

इधर क्षुल्लक वीरनंदीजी जिनका स्वास्थ्य थोड़ा गड़बड़ चल रहा था, अचानक उनकी भी तबीयत बिगड़ गई, ऊर्ध्वश्वांस चलने लगी। आचार्य श्री से उन्होंने तत्काल मुनि दीक्षा ली। उनका नाम मुनि श्री सूरसेन रखा गया। घंटे भर बाद णमोकार महामंत्र सुनते हुए सल्लेखनापूर्वक उनकी भी समाधि हो गई। गृहस्थावस्था में आप मुनि श्री अमरसेन के पुत्र थे। इस प्रकार एक घंटे के अंतराल में गृहस्थाश्रम के पिता-पुत्र व श्रमणावस्था के दो साधुओं की समाधि हो गई।

सबेरे हजारों लोगों की साक्षी में दो विमानों में उनकी पार्थिव देह का चम्पापुर ले जाकर विधि विधानपूर्वक अग्नि संस्कार किया गया। यह अनहोनी घटना क्या श्रावकों और क्या साधुओं, सभी को जीवन की नश्वरता का बोध दे गई और शिक्षण प्राप्त कर रहे शिविरार्थियों को तो मानो जीवन की अनित्यता का साक्षात जीवंत प्रयोग बता गई। इस विहंगम दृश्य को देख उपस्थित जन समुदाय की आँखों से अश्रुधार बहने लगी।

मुनि श्री सुनीलसागरजी एक साथ अपने सामने दो-दो संतों की पार्थिव देह को देख स्तब्ध थे। वे सोच रहे थे, ''यह मैं ही हूँ।'' यह अनहोनी घटना मेरे साथ भी किसी भी क्षण, किसी भी पल घट सकती है। आज पुनः वे अतीत के उस मृत्युबोध में खो गए जिससे उन्हें जीवन से विरक्ति हो गई थी। संसार से वैराग्य हो गया और उन्होंने जिनमुनि दीक्षा धारण कर ली। आज वही 'मृत्युबोध' उनमें 'आत्मबोध' की चेतना भर रहा था। यद्यपि वे जाग्रत थे फिर भी उन्हें झकझोर रहा था, जाग्रत कर रहा था। उनका चिंतन चल रहा था 'मृत्यु', 'अनुलंघनीय' है। अतः हमें ईमानदारी से अपनी 'कर्तव्य भूमिका' को निर्वहित करना चाहिए। वे सोच रहे थे कि चाहे कैसी भी, कितनी भी विपरीत परिस्थिति हो, हमें अपने आत्मबल, अपने मनोबल व अपनी संकल्पशक्ति को नहीं मरने देना चाहिए। हमें हमेशा समभाव, जिनवचन तथा धर्मध्यान से जुड़े रहना चाहिए क्योंकि इनसे न कोई जला है, न कोई आहत हुआ है, न ही कोई नष्ट हुआ है। अतः चिन्मय होने के लिए इस मृण्मय को हमेशा इस अमृत के प्याले को पिलाते रहना चाहिए। चिंतन करते-करते वे इतने आत्मस्थ हो गए कि उनका कुछ समय के लिए बाहरी जगत से तादात्म टूट गया।

22 नवंबर 1998 पुनः चम्पापुर पदार्पण

13 नवंबर से 21 नवंबर 1998 तक भागलपुर में धर्म प्रभावना कर संघ के साथ आप 22 नवंबर को पुनः चम्पापुर पहुँचे। जिनेश्वर की वंदना के पश्चात आपने संघ के साथ समाधिस्थ मुनिद्वय की निषिधिका की वंदना की।

यहाँ से दोपहर में विहार कर संघ के साथ आप धर्म प्रभावना करते सुल्तानगंज, मुंगेर, सुंदरपुर, मोहकपुर, बालगूडर, मराची, मेकरेडी होते हुए 'बाढ़' पहुँचे। चूँकि असामाजिक तत्वों की गतिविधियों के कारण इस क्षेत्र में दिगम्बर साधुओं का विहार नहीं होता है। अतः समाज निर्ग्रंथ संतों को अपने बीच पा काफी प्रसन्न था।

30 नवंबर को 'बाढ़' प्रवेश के वक्त आप क्या देखते हैं कि धीमी गति से सामने से आ रहे ट्रक के बीच गलत साइड से आने वाला एक साइकिल सवार घुस गया। ट्रक चालक लाख प्रयासों के बावजूद भी उसे नहीं बचा सका। क्षणभर में एक जीवन लीला देखते ही देखते समाप्त हो गई। अभी दो संतों का मृत्युबोध तो वे विसरा भी न पाए थे कि उनका संवेदी मन इस दर्दनाक हादसे से तड़फ उठा। एक साथ अनित्य, अशरण, संसार व एकत्व भावना ने उनको झकझोर दिया। वे सोचते रह गए कि महाकाल के महाविप्लव के आगे वे सब बेबस रह गए। उनमें से कोई भी उसे नहीं बचा पाया।

यद्यपि उनके मन में राग तो नहीं था, पर इस दुःखद घटना को देख, संसार की असारता से द्रवित अवश्य था। बाढ़ में आपने देखा- वहाँ दो बड़े-बड़े खंडहरनुमा जिन मंदिर हैं। पहले मंदिर की लम्बी चौड़ी ऊँची वेदी पर तीन इंच से लेकर तीन फुट तक करीब अस्सी प्रतिमाएँ हैं। इसके बाजू में एक चबूतरे पर चतुर्मुखी मूर्ति के साथ 24-25 पार्श्वनाथ सहित पद्मावती या चौबीसी की मूर्तियाँ रखी हुई हैं। जो धूल धूसरित थी। इस मंदिर की देखभाल एक ब्राह्मण करता था। इस मंदिर से लगभग सौ मीटर की दूरी पर दूसरा मंदिर स्थित है, जिसमें भी 12-13 प्रतिमाएँ हैं। इस मंदिर में भगवान पर पड़े मल-मूत्र को देखकर मुनि श्री का मन दुःखी हो गया।

बाढ़ गाँव के एकमात्र जैन परिवार से ज्ञात हुआ कि उनके पूर्वजों ने इन मूर्तियों को निकट बहती गंगा नदी से प्राप्त किया था। नाव में भरी ये मूर्तियाँ यहाँ कहीं से आई थी। किसी को आज तक पता नहीं कि कब व क्यों इन मूर्तियों को बहाया गया था। 'बाढ़' ग्राम में उपेक्षित पड़ी इन प्रतिमाओं की पूजा उपासना व विनय करने वाला कोई नहीं है। नित नूतन प्रतिमाओं का निर्माण कर नए-नए भव्य जिनालय बना भव्यातिभव्य पंचकल्याणक कराने वाले समाज के श्रेष्ठीगणों, विद्वानों, पंडितों, साधुओं, किसी का ध्यान इस ओर नहीं है, न ही यहाँ के जीर्ण-शीर्ण मंदिरों का जीर्णोद्धार कर प्रतिमाओं की व्यवस्था पर किसी का ध्यान है।

आज जब देश में जगह-जगह नवनिर्माण व पंच कल्याणकों की बाढ़ सी आ गई है तब समाज से अपेक्षा है कि 'बाढ़ ग्राम' में पड़ी इन उपेक्षित मूर्तियों को लाकर प्रतिष्ठित कर एक मंदिर में मात्र एक मूर्ति ही विराजित कर दी जाती तो कब से वे पूज्य मूर्तियाँ मंदिरों की वेदिकाओं में सुशोभित हो जाती।

जिस दुःखी हृदय से मुनि श्री ने 30 नवंबर को इस 'बाढ़' ग्राम में प्रवेश किया था, वैसे ही दुःखी मन से (मूर्तियों की उपेक्षा देख) उन्होंने संघ के साथ वहाँ से विहार कर दिया।

बाढ़ ग्राम से संघ के साथ विहार कर आप बरिसायारपुर पहुँचे वहाँ से फतुहा जाना था, पर वहाँ असामाजिक तत्त्वों ने पाँच हत्याएँ कर दीं। अतः संघ को एक छोटे से गाँव (राह में पड़ने वाले) में रात्रि विश्राम करना पड़ा। वहाँ भी शराबियों ने रात्रि भर काफी उत्पात मचाया। जैसे-तैसे सबेरे संघ के साथ 12 कि.मी. चलकर कबीर मठ पहुँचे। मठवासियों ने संघ की खासी आवभगत की। यहाँ पर पटना से आए श्रावक श्रेष्ठी श्री रतनलालजी गंगवाल, शांतिलालजी गंगवाल, अशोक बड़जात्या, नंदलाल पहाड़िया ने अच्छी गुरु भक्ति की व गुलजारबाग (पटना) पधारने के लिए श्रीफल भेंट किए।

8 दिसंबर 1998
पटना प्रवेश से 13.1.1999 तक

8 दिसंबर 1998 को मुनि श्री आचार्य संघ के साथ हजारीबाग पहुँचे। पटना का उपनगर गुलजार बाग सेठ सुदर्शन की निर्वाण स्थली है।

प्रवेश के समय आपने आचार्य श्री के साथ पटना शहर के तीन जिन मंदिरों के दर्शन किए। पहला मंदिर कचौड़ी वाली गली का जिन मंदिर है। इसकी दशा गृहस्थ के टूटे-फूटे मकान से भी बुरी है। लोहे की चार चादरों के नीचे करीब चालीस प्रतिमाएँ विराजित हैं। इस मंदिर पर एक परिवार ने कब्जा कर रखा है और वह कुछ करने नहीं देता। दूसरा मंदिर काली बीवी वाला मंदिर ठीक-ठाक है, पर बहुत अच्छा नहीं व तीसरा पंचायती मंदिर है। वह भी कामचलाऊ है। इन मंदिरों की स्थिति ने पटना के गौरवशाली इतिहास को धूमिल कर दिया है।

गुलजार बाग प्रवास

पटना के गुलजार बाग में रेल पटरी के पार तालाब के बीच एक ऊँची पीठ पर महामुनि श्री सुदर्शन की चरण पादुकाएँ हैं। कमलदहजी नाम से प्रसिद्ध यह निर्वाण स्थली पावापुर के जल मंदिर का स्मरण करा देती है।

पटना गुलजार बाग के जैन मंदिर की धर्मशाला में आप आचार्य संघ के साथ 8.10.1998 से 13.1.1999 तक विराजमन रहे। इस प्रवास में आप प्रतिदिन निर्वाण स्थली के दर्शन को जाया करते थे तथा संघ के साथ 'समयसार' महाग्रंथ की दो टीकाओं का स्वाध्याय किया। जो आपके जीवन की बहुत बड़ी उपलब्धि रही। इस प्रवास में आपने आचार्य श्री की समय समायोजन दक्षता, नेतृत्व क्षमता, कर्तव्यनिष्ठा व समर्पण की सहजता आत्मसात की। वे आचार्य श्री के प्रति श्रद्धा से अभिभूत थे कि कैसे वे विहार की घुमक्कड़ जिंदगी की थकान के बाद भी समयसार को पढ़ते-पढ़ाते भी हैं और जीते भी हैं।

मुनि श्री संवेगसागरजी की समाधि

पटना समाज के निवेदन पर आप आचार्य संघ के साथ 13 जनवरी 1999 को कांग्रेस मैदान के पास जैन भवन पहुँचे। 14 जनवरी को दोपहर में संघस्थ वयोवृद्ध मुनि श्री संवेगसागरजी की पाँच उपवास पूर्वक समाधि हो गई। वे कुछ दिनों से अस्वस्थ चल रहे थे। आप राजस्थान के बांसवाड़ा जिले के आनंदपुरी से थे। आपका अंतिम संस्कार गुलजार बाग में सुदर्शन स्वामी की निर्वाण स्थली के पास ही किया गया।

मुनि श्री संवेगसागरजी की बीमारी, चिता की उठती लपटों व वृद्धावस्था ने युवा मुनि को पुनः जन्म-जरा-मृत्यु का बोध दे उनके वैराग्य को खाद-पानी दे दिया। वे सोचने लगे-

माली आवत देखकर, कलियन करी पुकार।
फूले-फूले चुन लिये, काल हमारी बार।।

और जुट गया उनका चिंतक मानस, संयम, श्रुत साधना और अन्वेषी मन उस चैतन्य महास्त्रोत से अहर्निश झरते 'शम नीर' से अपनी प्यास बुझाने।

राष्ट्रीय विद्वान गोष्ठी (पटना)

15 से 17 जनवरी तक यहाँ एक विशाल भवन के हाल में 'आचार्य श्री महावीर कीर्ति राष्ट्रीय संगोष्ठी' का आयोजन

हुआ, जिसमें देश के 40 मूर्धन्य विद्वानों व पंडितों ने हिस्सा लिया। इसी सुप्रसंग पर युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी की अनुपम कृति 'विश्व का सूर्य' का भव्य लोकार्पण हुआ। युवा मुनि ने इस विद्वत गोष्ठी में अपनी विद्वता का मौन परिचय दिया।

माघ शुक्ल सप्तमी को गुरुवर आचार्य श्री सन्मतिसागरजी की इकसठवीं जन्म जयंति का शानदार भव्य आयोजन भी युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी के नेतृत्व में भव्यातिभव्य रूप में मनाया गया। आपने आचार्य श्री के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हुए कहा कि तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सुख मार्ग का प्रदर्शन करने वाले, गुरु के गौरववर्द्धक, शांतिमूर्ति, दयामूर्ति, मंगलमूर्ति, निजानंद में लीन भव्यजीवों के हितैषी, महाज्ञानी, सूरिश्रेष्ठ आचार्य गुरु की मैं मन, वचन, काय से त्रिकाल वंदना करता हूँ। आप सम्यक् समता के नायक, स्वाध्याय में सदालीन, शास्त्रोपदेश देने वाले, दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तप व वीर्याचार सहित पंचाचार संयुक्त चतुर्विध संघ के नायक हैं। ऐसे स्थिर बुद्धि, धीर-वीर, महाव्रती, महामौनी, सन्मतिदायक आचार्य श्री सन्मति गुरु की मैं बारंबार वंदना करता हूँ।

पटना में धर्म प्रभावना

धर्म प्रभावनारत रहते हुए आचार्य संघ के साथ आपने कांग्रेस मैदान के विशाल पांडाल में 15 फरवरी को आचार्य श्री आदिसागरजी का भव्य समाधि दिवस मनाया। जिसमें तत्कालीन राज्यपाल श्री सुंदरसिंहजी भंडारी व विधानसभा अध्यक्ष श्री रामनारायण यादव गुरु दर्शन का पुण्योपार्जन करने पधारे थे। पटना में लगभग 75 दिनों तक धर्म प्रभावना करते हुए आत्म कल्याण में रत रह आपने आचार्य संघ के साथ 16 फरवरी 1999 को आरा के लिए विहार कर दिया। यहाँ पर आप अपनी प्रखरता, तेजस्विता और ओजस्विता की छाप समाज पर छोड़ गए। यहाँ पर आपने आत्म साधना व ज्ञान साधना भी बहुत अच्छी तरह से की।

आरा- मंगल प्रवेश

पटना से तीन दिन में 50-60 कि.मी. चलकर आचार्य संघ का आरा के धनुपुरा में भव्य मंगल प्रवेश हुआ। यहाँ के तीन विशाल जिन मंदिरों के दर्शन किए। यहाँ पर पंडिता चंदाबाई बालिका आश्रम में संघ की आहार चर्या हुई। यहीं पर आदिनाथ नेत्रहीन शिक्षा निकेतन है। आहार चर्या पश्चात् दोपहर में बालिका आश्रम में स्थित 25 फीट ऊँची भगवान बाहुबली की प्रतिमा का अभिषेक देख, संघ ने आरा नगर में मंगल प्रवेश किया। विशाल जनसमूह ने भव्य अगवानी की। यहाँ बाबू हरप्रसाद जैन धर्मशाला के जिनालय एवं वहाँ शिखरजी की रचना के दर्शन कर संघ वहीं ठहर गया। दूसरे दिन 'जैन सिद्धांत भवन' के विशाल सरस्वती भंडार का आपने निरीक्षण किया।

आरा में करीब 48 से अधिक जिनालय व प्रत्येक चार-छह घर के बाद गृह चैत्यालय हैं, जो भव्य हैं। यहाँ जितने जिनालय हैं उतनी ही लोगों में देव, शास्त्र, गुरु के प्रति असीम श्रद्धा भक्ति है। आचार्य श्री ने यहाँ फाल्गुनी अष्टाह्निका के आठ उपवास किए और बड़े भक्तिभाव से सिद्धचक्र महामंडल विधान संपन्न हुआ। आचार्य श्री के दिशा-निर्देशन में आप सभी कार्य संपन्न कराते रहे व हर कार्य में आगे रहते। चारों ओर आपके नाम की ही गूंज रहती थी।

ऋषभ जयंति से महावीर जयंति तक

चैत्र कृष्णा नवमी ऋषभ जयंति के उपलक्ष्य में वीर कुंवरसिंह यूनिवर्सिटी आरा के तत्वावधान में आचार्य श्री की प्रेरणा से एक सत्रीय एक विद्वत गोष्ठी का आयोजन हुआ। जिसमें कुलपति ने भी तथ्यात्मक विचार व्यक्त किए। सभी ने ऋषभदेव का प्रागैतिहासिक पुरुष, श्रमण संस्कृति के प्रवर्तक के रूप में तथ्यात्मक विश्लेषण किया। इस गोष्ठी में

मुनि श्री सुनीलसागरजी ने भी अपने प्रभावोत्पाद विचार रखे। इसके पश्चात चैत्र शुक्ल त्रयोदशी के पाँच दिवसीय महावीर जयंति के कार्यक्रम पश्चात वैशाख वदी नवमी को आचार्य श्री महावीर कीर्तिजी की जन्म जयंति हर्षोल्लास से मनाई गई। इस दिन को ऐलक सूर्यसागरजी ने आचार्य श्री से मुनि दीक्षा लेकर सुरदेवसागर नाम पा यादगार बना दिया। अक्षय तृतीया की दोपहर पश्चात आपने संघ के साथ आरा से 180 कि.मी. दूर चंद्रपुरी सिंहपुरी के लिए विहार कर दिया। कुल मिलाकर पटना व आरा में धर्मप्रभावना के क्षेत्र में युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी का महता योगदान रहा। इतने बड़े संघ के साथ रहते हुए भी अल्प समय में आपने समाज पर अपने दर्शन, ज्ञान व चारित्र की सम्यक्त्वता की विशिष्ट छाप छोड़ी।

चंद्रपुरी सिंहपुरी

आचार्य संघ आरा से ब्रह्मपुर, डुमरावगढ़, बक्सर होते हुए समस्तीपुर के पंचायत भवन पहुँचा। जहाँ पर आचार्य श्री के शिष्य मुनि श्री सुविधिसागरजी महाराज राजस्थान से दो हजार कि.मी. लंबा पद विहार करते हुए गुरुदर्शन की उत्कट प्यास लिए आकर ठहरे थे। मुनि श्री ने गुरुदर्शन से अपने को धन्य किया। अभी शिष्य की दर्शन की प्यास बुझी भी ना थी कि रात्रि विश्राम कर संघ ने विहार कर दिया। मोहम्मदाबाद, गाजीपुर, साम्हाबाद होते हुए संघ के साथ आप चंद्रोही (चंद्रपुरी) 30.4.1999 को पहुँचे।

चंद्रावती गाँव (चंद्रगिरि) मुख्य सड़क से एक कि.मी. अंदर है, जो भगवान चंद्रप्रभु की जन्मस्थली है। यहाँ गंगा के किनारे 1913 में आरा के रईस प्रभुदासजी द्वारा निर्मित एक जिनालय है। यहाँ एक लघु विधान भी आपने करवाया। अपराह्न में यहाँ से सिंहपुरी के लिए संघ के साथ आपका विहार हो गया। चंद्रपुरी से सिंहपुरी, 17 कि.मी. व बनारस से 3 कि.मी. दूर है।

सिंहपुरी आज सारनाथ के नाम से प्रसिद्ध है। सारनाथ (सिंहपुरी) में भगवान श्रेयांसनाथ के गर्भ, जन्म, तप व कैवल्य चार कल्याणक हुए। यहाँ के जिनमंदिर में इकतीस इंच ऊँची संवत 1881 की श्यामवर्ण श्रेयांसप्रभु की प्रतिष्ठित मनोहारी प्रतिमा विराजमान हैं।

मंदिर के पास ही 103 फीट ऊँचा स्तूप है। पुरातत्व विभाग इसे अशोक निर्मित मानता है। स्तूप के सामने सिंहद्वार के दोनों स्तंभों पर चार सिंह, नीचे धर्मचक्र व दांई ओर बैल व घोड़े की मूर्तियाँ हैं। सिंहत्रयी भारत का राष्ट्र चिह्न है जो नोट पर भी छपा है। यहाँ बौद्ध धर्म का बड़ा प्रभाव है। यहाँ के संग्रहालय में अनेक जैन मूर्तियाँ हैं। इससे सिद्ध होता है कि प्राचीनकाल में यहाँ जैन धर्म का काफी प्रचार-प्रसार रहा होगा।

1999 बनारस चातुर्मास
भदैनी घाट से 2.5.99 भेलुपुर में प्रवेश

सारनाथ (सिंहगिरि) से विहार कर संघ बनारस में मैदागिन धर्मशाला में ठहरा, जो चौराहे पर स्थित है। इस विशाल धर्मशाला व महावीर दिगम्बर जैन मंदिर का निर्माण सन् 1824-25 में लाला बिहारीलाल ने अपनी सारी संपत्ति लगाकर करवाया था। रात्रि विश्राम पश्चात बुलानाला स्थित जैन मंदिर के दर्शन पश्चात संघ के साथ आप भदैनी घाट पहुँचे।

भदैनी घाट प्रभु सुपार्श्वनाथ की गर्भ, जन्म, तप व कैवल्य चार कल्याणक स्थली है। यहाँ दो जिन मंदिर- प्रथम आरा के रईस बाबू प्रभुदास द्वारा निर्मित (सन् 1856) है। दूसरा बाबा छेदीलाल द्वारा 1895 में निर्मित है। इसमें भगवान सुपार्श्वनाथ की अनेक प्राचीन मूर्तियाँ व चरण स्थापित हैं।

मुनि श्री ने देखा कि भदैनी घाट पर ही इन मंदिरों से लगा हुआ स्याद्वाद संस्कृत महाविद्यालय है, जिसकी स्थापना

सौ वर्ष पूर्व श्री गणेशप्रसादजी वर्णी ने एक रुपए से की थी। जिन शासन व संस्कृति की यह अद्वितीय धरोहर आज अपनी दयनीय दशा पर आँसू बहा रही है। नितनूतन निर्माण करने वाले समाज के पुरोधाओं में से किसी की नजर इस ओर नहीं गई है। चूँकि मुनि श्री सुनीलसागरजी ने अपना सारा ज्ञानार्जन भी श्री गणेशप्रसाद वर्णी संस्कृत विद्यालय मोराजी, सागर जो उन्हीं के द्वारा स्थापित था, में किया था। अतः उन्हें श्री गणेशप्रसाद वर्णीजी के महान अवदानों के प्रति विशेष लगाव, सन्मान व आदर है। वे वर्णीजी के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित कर रहे थे कि वे आज जो कुछ भी हैं, इस दिगम्बर भेष में हैं, वर्णीजी द्वारा स्थापित विद्यालय में प्राप्त शिक्षा का ही सुफल है।

जिस महाविद्यालय ने देश को अनेक विद्वान व संस्कृत के प्रकांड पंडित दिए, संघ के साथ मुनि श्री ने उसका सूक्ष्म निरीक्षण किया। यहाँ से 2.5.1999 की मंगलबेला में भेलुपुर समाज ने संघ की धूमधाम से भव्य अगवानी की। यह स्थान पार्श्वनाथ की जन्म स्थली है। यहाँ पर पार्श्वप्रभु के गर्भ, जन्म, तप व केवलज्ञान कल्याणक हुए। यहाँ नवनिर्मित विशाल जिनालय में पार्श्वप्रभु की मनोहारी प्रतिमा के दर्शन किए। प्राचीन दि. जैन मंदिर पर श्वेतांबर समाज ने अधिकार कर लिया है।

वाराणसी
2.5.1999 से 31.12.1999 तक

3.1.2000 को विहार

तीर्थंकरों के जन्म लेने, उनके चरण पड़ने व उनका कर्मक्षेत्र होने से जो भूमि परमपावन, अतिशययुक्त पूज्य व तीर्थ क्षेत्र बन गई, उस परम पूज्य पावनतम भूमि के कण-कण को चूमकर (छूकर) उठते मारुत के झोके जब बनारस की ओर बढ़ रहे मुनि श्री सुनीलसागरजी को छू जाते, वे बड़े भावविभोर हो जाते। वे अपना अहोभाग्य मानते थे कि आचार्य गुरु के सत्संग के साथ उन्हें इस मोक्षदायिनी भूमि पर आने का सुअवसर मिला है। बनारस में मंगल प्रवेश को वे अपने जीवन का मंगल प्रसंग मान रहे थे।

वे अपना सौभाग्य मान रहे थे कि जिस बनारस में जैन धर्म के चार तीर्थंकरों का जन्म हुआ है, उसकी पुण्यमयी माटी को उन्हें मस्तक पर लगाने का पुण्यशाली क्षण प्राप्त हो रहा है। वे सोचते हुए आनंदित होते जा रहे थे कि जैन धर्म के सातवें तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ भगवन ने भदैनी में, आठवें तीर्थंकर चंद्रप्रभु ने चंद्रपुरी (चंद्रावती/चौबेपुर) में, ग्यारहवें तीर्थंकर श्रेयांसनाथ ने सिंहपुरी (सारनाथ) में एवं तेइसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथजी ने भेलुपुर क्षेत्र में अवतरित हो, क्षेत्र को महापूज्य तीर्थ बना दिया है। जो भूमि चार-चार तीर्थंकरों की जन्मभूमि हो उसकी महत्ता व पवित्रता वर्णनातीत व शब्दातीत है। अपने ज्ञान के आधार पर मुनि श्री सोच रहे थे कि वैदिक साहित्य में काशी/बनारस को शाश्वत तीर्थ कहा गया है। मेरे लिए भी बनारस शाश्वत तीर्थ बन गया है। इस पावनतम भूमि में श्री सुपार्श्वनाथ एवं श्री पार्श्वनाथ भगवान के गर्भ, जन्म, तप व ज्ञान कल्याणक हुए हैं। वे गदगद हो रहे थे कि इस भूमि का संबंध कई-कई महापुरुषों से रहा है। दो-तीन चक्रवर्तियों की राजधानी का गौरव प्राप्त करने के साथ महान आचार्य श्री समन्तभद्र स्वामी ने इसी बनारस में चंद्रप्रभु की प्रतिमा प्रगटाकर अपनी जिनभक्ति से जिनशासन की शाश्वतता को अक्षुण्ण बनाए रखा।

बनारस भेलुपुर में मंगल प्रवेश, चातुर्मास

भदैनी घाट से 2.5.1999 को भेलुपुर में प्रवेश के वक्त समाज की संतों के प्रति आस्था, भक्ति व समर्पण भाव को देख आचार्य श्री सन्मतिसागरजी अपने बड़े संघ के 19 पिच्छीधारक साधुओं के साथ श्री दिगम्बर जैन पार्श्वनाथ

तीर्थक्षेत्र भेलुपुर में ठहर गए। वहाँ के समाज के प्रतिनिधियों श्री रिखबदासजी, चंद्रभान सिंघई व आनंदजी के आग्रह पर 'अष्टपाहुड़' की वाचना की स्वीकृति दे दी।

अष्टपाहुड़ की वाचना

10 मई 1999 से आत्मानुभवी व आत्मचिंतक आचार्य श्री सन्मतिसागरजी ने जीवन यात्रा के इस पड़ाव पर श्रमणों व साधकों दोनों को आत्मबोधि देने वाले आचार्य कुंदकुंद देव रचित महान ग्रंथ 'अष्टपाहुड़' की वाचना भेलुपुर मंदिर में प्रारंभ की। इस वाचना में मुनि श्री सुनीलसागरजी का आत्ममंथन व आत्म साधना साथ-साथ चलती रहती। वे ध्यानस्थ मुद्रा में सोचते रहते कि अभी तक मैंने यात्राएँ ही यात्राएँ- बाहरी यात्राएँ ही की हैं। अब मुझे स्वयं के निकट आने व स्वयं को पाने के लिए इस बाहरी यात्रा (1. पद विहार, 2. संसार भटकन) के साथ अंतर की यात्रा को सम्यक आयाम देना है। एक मुमुक्षु का कर्तव्य है कि वह आत्म परिष्करण में सतत संलग्न रहे। आचार्य पूज्यपाद स्वामी एवं पू. अमृताचार्य स्वामी के अनुसार मुझे भी हमेशा पंच पापों से विरक्त रहते हुए मोक्षमार्ग की सम्यक् साधना करना चाहिए। मुनि श्री ने इस वाचना में आत्मावलोकन व आत्म शुद्धि का अलौकिक ज्ञानार्जन किया।

चूँकि इस ग्रंथ की चालीस दिनी वाचना का समापन 10 जून 1999 श्रुतपंचमी को एक स्थान पर रहकर हुआ। अतः मुनि श्री ने इसका गूढ़ गहन अध्ययन किया। वाचना के पूर्व व पश्चात वे इसको बड़ी तल्लीनता से पढ़ते व आत्मसात करते, अपनी कमियों को हटा कर्मों की निर्जरा करते रहते। वे इस वाचना को अपने लिए भव बंधन की कारा से मुक्ति का साधन मानते थे।

इस बीच मुनि श्री वाराणसी-बनारस से संबंधित जैन संस्कृति का भी विस्तृत अध्ययन व एक शोध छात्र की तरह रिसर्च करते रहे। इस प्रकार वे समय के एक-एक क्षण का सदुपयोग करते रहे। वे अधिकांश समय मौन साधना में रहकर अपने कार्य करते रहते। बहुत जल्दी ये युवा संत सबके लिए रोल मॉडल बन गए। 18 से 20 जून तक श्रुतपंचमी महापर्व के अनेक कार्यक्रम जैसे विशेष दिवस, विधान व विद्वत संगोष्ठी का आयोजन हुआ। जिसमें आपने पूर्ण तैयारी के साथ अपनी उपस्थिति दर्ज करवाई। 'पार्श्वनाथ' संगोष्ठी में भी विद्वतजनों के साथ आपने अपने विचार व्यक्त किए। विद्वता, कुशल वक्तृत्वता व निश्च्छलता से युवा मुनि श्री सुनीलसागर जनता के चहेते बन गए तथा समाज में एक प्रभावोत्पादक स्थान बना लिया। समाज में नवोन्मेष संचारित करने वाले के रूप में आप जाने जाने लगे।

मुनि श्री सुनीलसागरजी का अपने आचार्य गुरु के साथ श्रुतपंचमी महोत्सव के आखरी दिन वहाँ के पार्श्वनाथ वाचनालय के विशाल सभागार में मंगल उद्‌बोधन हुआ। केशलोंच के बाद ही संघ समाज द्वारा की गई व्यवस्था के अनुसार पास ही संवत 1825 में श्री खड़गसेन उदराज द्वारा निर्मित श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर में दर्शनार्थ पहुँचा और वहाँ बनी धर्मशाला में व्यवस्थित हो गया। इससे समाज की आचार्य संघ को चातुर्मास करवाने की मनसा आभासित हो रही थी। यह धर्मशाला भेलुपुरा मंदिर के पास ही है व संतों की साधना के लिए यह शांत, एकांत व अनुकूल स्थान है।

वक्त गुजरते देर न लगी। समय का पंछी पंख पसारे उड़ता चला जा रहा था। सारी संत चर्याएँ विधिवत चल रही थी। आचार्य श्री का 'आत्मकल्याण' की उपलब्धि की दिशा में 'परमात्म प्रकाश' ग्रंथ पर उपदेश चल रहा था। इस ग्रंथ के संदर्भ में मुनि श्री की संकल्प-विकल्पों पर आचार्य श्री से विस्तृत चर्चाएँ होती रहती थीं और वे अपने ज्ञान दर्शन और चारित्र में नित नूतन निखार लाते रहे। पूर्व में चम्पापुर से काशी (बनारस) के बीच आप इसी प्रकार पांडव पुराण, श्रीपाल चरित्र, प्रद्युन चरित्र, हनुमान चरित, महापुराण आदि प्रथमानुयोग के शास्त्रों का स्वाध्याय कर अपने रत्नत्रय को दृढ़ करते रहे। भागलपुर में 'जिनधर्म रहस्य' व आचार्य श्री विमलसागरजी महा. की डायरियों का स्वाध्याय आपके लिए

काफी महत्वपूर्ण रहा। गुलजार बाग में ग्रंथाधिराज 'समयसार' का स्वाध्याय शुरू होकर बनारस में समाप्त हुआ। इस महान ग्रंथ ने भेद विज्ञान पर आपके ज्ञान चक्षु खोल दिए। आपने अनुभूत किया कि जिस प्रकार महान ग्रंथ समयसार के टीकाकार श्री जयसेनाचार्य व श्री अमृतचंद्राचार्य ने आगम के स्वर्ण में सुगंध भर दी है, इसी प्रकार आचार्य योगेन्दु के 'परमात्मप्रकाश' ग्रंथ के स्वाध्याय व अध्ययन से आपको ऐसा प्रतीत हुआ मानो इसमें कुंदकुंद देव का 'मोक्षपाहुड़' ही समाहित हो गया है। अस्तु!

समयसार वाचना

20 जुलाई 1999 से अष्टाह्निका महापर्व पर आचार्य श्री ने एकांतर उपवास चलते रहने के बावजूद तिथि बढ़ने से एक साथ नौ उपवास किए।

आठवें उपवास 27 जुलाई को आचार्य श्री ने सकल दिगम्बर समाज भेलुपुर व बनारस के बार-बार आग्रह पर चातुर्मास स्थापना विधि संपन्न की।

गुलजार बाग से शुरू 'समयसार' का स्वाध्याय 30 जुलाई 1999 को समाप्त होते ही सबेरे 'परमात्म प्रकाश' व दोपहर में अकलंकदेव द्वारा लिखे ग्रंथ 'तत्त्वार्थ राजवार्तिका' का स्वाध्याय प्रारंभ हुआ। मुनि श्री सुनीलसागरजी के लिए इन ग्रंथों का ज्ञान दुग्ध धवल झरनों से झरते शीतल निर्मल नीर की तरह मन को शांति शुकुन देने वाला तथा पावन करने वाला था। स्वाध्याय में उन्होंने अपनी कितनी ही शंकाओं का समाधान किया व ज्ञानी गुरु से कितनी ही बातें जानी, समझी, परखी व हृदयंगम कर अपना मुक्ति मार्ग प्रशस्त करते रहे। लेकिन उनकी ज्ञान पिपासा कभी शांत नहीं होती थी। वे मात्र ज्ञानार्जन ही नहीं करते अपितु आचार्य श्री के साथ संघस्थ साधुओं से भी चर्चा करते रहते व स्वयं तो अपने ज्ञान को पुष्ट करते। उन्हें भी कठिन विषय सरलता से समझा स्पष्ट कर देते। कभी वे कातंत्ररूपमाला के प्रकरणों का अध्ययन भी संघस्थ साधुओं को कराते। उनकी चर्चाओं के विषय अधिकांशतः स्वाध्याय किए जा रहे या किए जा चुके ग्रंथों के प्रकरण होते थे। उनकी विशेषता रही कि जिन ग्रंथों का स्वाध्याय होता था, उसका वे पूर्व व पश्चात् गहन अध्ययन करते। उनसे संबंधित लेखन करते। इस प्रकार वे अपने सरस्वती के भंडार को भरते जाते व समय-समय पर इस खजाने को लुटाते रहते। यही नहीं अपितु अपनी तीक्ष्ण बुद्धि का सदुपयोग कर अनेक गाथाएँ कंठस्थ कर लेते थे। जिनका वे अपने प्रवचनों में उपयोग कर अपने आगम ज्ञान को पुष्ट करते।

आज हम उनके जो सारगर्भित आत्मदर्शन कराने वाले वात्सल्य से ओतप्रोत प्रवचन सुनते हैं। इसके पीछे भूत में गुरु सान्निध्य में किए ज्ञानार्जन की तल्लीनता है। आध्यात्म रस के रसिक, मुक्तिपथ के राही मुनि श्री ने गुरु द्वारा परमात्मप्रकाश के ज्ञान से अपना आत्मप्रकाश प्रारंभ किया। तत्त्वार्थ राजवर्तिका के अध्ययन से अपनी भावनाओं की शुचिता को सम्हालने की विधा सीख अपने भावों को निर्मल करते रहे। कुल मिलाकर उनका स्वाध्याय और अध्ययन उनके ज्ञान, ध्यान एवं तप को मजबूत करने वाला सिद्ध हुआ।

वसुनंदि श्रावकाचार वाचना

9 अगस्त 1999 से आचार्य वसुनंदी रचित ग्रंथ 'वसुनंदि श्रावकाचार' का वाचन आरंभ हुआ। यह कृति वसुनंदी आचार्य की अति लोकप्रिय कृति है। इसमें कुछ विशेष बातों का उल्लेख है। यह तीन नामों से प्रसिद्ध है- (1) उपासयज्झयणं (2) उपासकाध्ययन या उपासकाचार (3) वसुनंदि श्रावकाचार। इस ग्रंथ में कुल 546 गाथाएँ हैं जो 650 श्लोक प्रमाण हैं। वसुनंदि आचार्य का काल 12वीं शताब्दी पूर्व ठहरता है।

मुनि श्री सुनीलसागरजी विशेष रुचि के साथ इस विशिष्ट ग्रंथ का अध्ययन करते थे। रात्रि में वे इस ग्रंथ की टीका का लेखन भी करते थे। वे प्रत्येक ग्रंथ का गहराई से अध्ययन कर आत्मसात करते थे। उत्तरोत्तर उनका ज्ञान वृद्धिगत होता जा रहा था। तीक्ष्ण बुद्धि होने के कारण उन्हें याद भी शीघ्र हो जाता था। इस प्रकार वे प्रमाद रहित हो कठिन से कठिन ग्रंथ का स्वाध्याय व अध्ययन करते। गुरुवर से शंका समाधान करते अपने ज्ञानाकाश को विस्तीर्ण करते रहे।

इस चातुर्मास में अध्ययन, लेखन व साधना के साथ-साथ युवा मुनि ने जगह-जगह बिखरी व उपेक्षित पड़ी जैन मूर्तियों को देख बनारस से संबंधित जैन इतिहास की खोज खबर ली। बनारस के जैन इतिहास संबंधी शोधार्थियों, शोधकर्ताओं व पुरातत्व विभाग के अधिकारियों को बुला बनारस के बारे में जानकारियाँ प्राप्त कीं। जिसका उन्होंने काशी दर्शन में विस्तार से वर्णन किया है। इससे उनकी जैन इतिहास के प्रति अभिरुचि प्रकट होती है।

वे अपनी पदयात्राओं को सिर्फ रास्ता नापने वाला न समझ मार्ग में पड़ने वाले स्थानों, मंदिरों आदि का सूक्ष्म अवलोकन कर उसे लिपिबद्ध करते रहते। उनके लिए वक्त कम पड़ता था। ज्ञान के न जाने कितने नद-नाले उनमें आ आकर मिलते जा रहे थे और वे असीम ज्ञानामृत सागर बनते जा रहे थे।

इन्हीं दिनों सूर्यग्रहण पड़ा जो विशेष चर्चा का कारण था। त्वरित प्रतिक्रिया देने वाले संत ने तभी 'जैन दर्शन में सूर्यग्रहण' नामक लेख लिखा। प्रत्येक कार्यक्रम में मुनि श्री बढ़-चढ़कर अपनी उपस्थिति दर्ज कराते, लोगों व विद्वतगणों पर अपने विचारों की विशिष्ट छाप छोड़ते। आलस से उनको सख्त नफरत थी। कई-कई बार वे अपने ज्ञानवर्द्धक प्रवचनों से समाज को दिशा बोध देते रहते। उनके प्रेरक उद्‌बोधन समाज की दिशा व दशा बदलने वाले होते थे।

दीक्षा

22 अगस्त को केशलोंच का कार्यक्रम था। जो बहुत पहले से तय था कि तभी अचानक बेलगाँव से आए एक श्रावकबंधु ने दीक्षा लेने की मनसा व्यक्त की व उन्हें ऐलक दीक्षा मिल गई। इस प्रकार केशलोंच कार्यक्रम और अधिक भव्य हो गया।

दसलक्षण पर्व में दीक्षा

इसी तरह 14 सितंबर 1999 को दसलक्षण पर्युषण पर्व प्रारंभ हुए। अष्टाह्निका की तरह एक तिथि बढ़ गई। आचार्य श्री ने 11 उपवास की साधना प्रारंभ कर दी। आचार्य श्री ने ग्यारह उपवास बाद 25 सितंबर को एलक सुभद्रसागर, एलक सुरकीर्ति व ब्र. संजय भैया को मुनि दीक्षा दी व नाम रखे- मुनि श्री सुभद्रसागर, मुनि श्री सुरकीर्ति व मुनि श्री सकलकीर्ति।

मुनि श्री सुनीलसागरजी हर छोटी-बड़ी घटना पर गहन चिंतन करते रहते। वे आज भी चिंतन कर रहे थे कि आचार्य श्री इतनी बड़ी तप साधना के बाद उपवासी होते रह भी मुमुक्षुओं को मुनिदीक्षा दे मुक्ति पथ के राहियों के लिए मुक्ति मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं। इस प्रकार संघ में संयमियों की संख्या वृद्धिगत होती जा रही थी। वहीं साधुओं की समाधि भी हो रही थी।

गृहस्थ जीवन के भाई संजय के एक्सीडेंट की घटना

बनारस में संघ विराजमान था। दीक्षा के दो ही वर्ष हुए थे। मुनिश्री सुनीलसागरजी परिषह जय पूर्वक मोक्षमार्ग में प्रगति कर रहे थे। तभी उनके गृहस्थ परिवार में बहुत बड़ी परीक्षा व संकट की घड़ी आ गई। 800 कि.मी. दूर सागर

में संजय भैया (दूसरे नंबर के भाई)इंजीनियरिंग कॉलेज तरफ बाइक से जा रहे थे कि आचनक ट्रक से भयंकर टक्कर हुई। पूरी ट्रक उनके उपर से गुजर गई। रास्ते पर से लोगों ने उन्हें तत्काल अस्पताल पहुँचाया, स्थिति बहुत गंभीर थी। बड़े से बड़े डॉक्टर ने उम्मीद छोड़ दी थी। इतनी दूर विराजे तपस्वी सम्राट गुरुवर को आभास हुआ। उन्होंने तुरंत ही पिताजी भागचंदजी (हाल क्षुल्लक सुखदसागरजी) के लिए संदेशा भिजवाया कि धैर्य रखो, घबराना नहीं। गेहूँ के सात दाने एक कपड़े में बाँधकर संजय भैया के सिरहाने रख दो। प्रतिदिन उसे देखना, यदि कम हो जाए तो बताना। वैसे ही किया। रोज दाने देखते रहे, अदृश्य दिव्य कृपा दृष्टि से उन दानों में धीरे-धीरे चमक बढ़ रही थी, धवल हो रहे थे। माता-पिता ने अपने जिगर के टुकड़े बड़े बेटे संदीप को गुरु सन्मतिसागरजी के चरणों में समर्पित कर दिया था। अब घर की सारी जिम्मेदारी संजय पर थी और वह कुछ बने उससे पूर्व यह घटना अकस्मात से घट गई। पूरा परिवार चिंतित था। वहाँ मुनिश्री को कुछ भी पता नहीं था। परम पिता आचार्यश्री सन्मतिसागरजी ने दोनों तरफ संभाला, उन्होंने मुनिश्री की निस्पृहता को जानते हुए उन्हें कुछ भी बताया नहीं, पर उनकी कृपा से वहाँ स्थिति सुधार पर थी। 17 दिन पूर्ण रूप से कोमा में रहने के बाद कुछ हलन-चलन दिखी। फिर आठ दिन बाद उस सिरहाने के नीचे सूखी जगह पर रखे वे दाने अंकुरित हुए, उस दिन संजय भैया को पूर्ण होश आ गया। गुरु कृपा से अनमोल जीवन पाया, स्वस्थ धर्मात्मा सुश्रावक यशस्वी जीवन के साथ आज पूरा परिवार व्यवस्थित रूप से स्थित है। घटनाक्रम के 6 माह बाद हल्के रूप से बात मुनिश्री को पता चली एवं बड़े महाराजजी ने मुनिश्री से कहा कि संजय को प्रतिष्ठाचार्य की लाइन में आगे बढ़ाना चाहिये। मुनिश्री ने कुछ लक्ष्य न दिया, पहले से ही वे परिवार से अत्यंत विरक्त रहे, कभी उसमें उलझना नहीं, न ही घर परिवार की विशेष रुचि या चिंता की या घर भरने वाला कोई काम ही किया। सारा विश्व ही परिवार है। जहाँ कल्याण ही प्रशस्त भावना है। परिवार से वही साधारण श्रावक सम मर्यादित व्यवहार व आशीर्वाद।

(यह पूरी घटना तो संजय भैया ने स्वयं बताई वरना अभी तक इतनी बड़ी बात किसी को पता नहीं है।)

धन्य है तपस्वी सम्राट की अलौकिक अदृश्य दिव्य शक्ति व कृपा व चर्या चक्रवर्ती श्री सुनीलसागरजी की साम्य विरक्ति।

इस दुर्घटना में पुत्र के इलाज के लिए पिता भागचंदजी ने अपनी अधिकांश अचल संपत्ति दाँव पर लगा दी पर न तो स्वाभिमानी पिता ने आचार्यश्री से समाज से मदद दिलवाने की याचना की न ही मुनिश्री सुनीलसागरजी (बेटे) से। निस्पृही विरक्त मुनिश्री ने भी इस अपने गृहस्थ जीवन के परिवार पर आई महाविपदा में मदद के लिए न ही समाज से कुछ कहा न ही आचार्यश्री से कुछ अरज की। ऐसी ही मोहातीत मुनिश्री सुनीलसागरजी जैसी आत्मा परमात्मा बनने की ओर अग्रसर होती रही है।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि गुरुभाई के विरक्त जीवन व पिताजी के भी विरक्त होने से प्रेरित वे संजय भैया (मुनिश्री के भाई) भर छोटे-बड़े व्रत पालते हैं। सबसे छोटे भाई विनय ने भी ब्रह्मचर्य व्रत ले लिया है।

अहा! एक विरक्त बेटे ने संपूर्ण परिवार का मुक्तिपथ प्रशस्त कर दिया।

हर चातुर्मास में माता-पिता का दर्शनार्थ आना होता था, दो-चार दिन सेवा करते बड़े महराजजी का आशीर्वाद प्राप्त करके धन्य हो जाते। उदयपुर 2003 की बात है कि तपस्वी सम्राट गुरुवर ने भागचंदजी से पूछा कि आपकी कितनी प्रतिमा है? सरलमना पिताजी ने कह दिया- एक भी नहीं। गुरुदेव ने पूछा- कितनी लोगे? तो कहा- जो आप दे दो। गुरु आशीष से माँ मुन्नीदेवी व पिताजी को सात-सात प्रतिमा लेने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

अनहोनी : बालक का कुएँ में गिरना

11 अक्टूबर भेलुपुर मंदिर के मानस्तंभ जिनबिम्ब का वार्षिक अभिषेक महोत्सव का पावन प्रसंग था। इंद्रध्वज

मंडल के विधान के ध्वजारोहण की मंगल विधि संपन्न हो रही थी कि एक अनहोनी घट गई। एक 8-9 वर्ष का बालक खेलते-खेलते वहीं 50 फीट गहरे कुएँ में गिर गया। जिसे कुछ लोगों ने गिरते हुए देख लिया था। एक क्षण भी विलंब किए बिना लोगों ने रस्से से बंधी बाल्टी कुएँ में डाल उसे सकुशल बाहर निकाल लिया। मुनि श्री के आदेश से णमोकार मंत्र की आराधना शुरू हो गई थी। उसी का अतिशय था कि बालक की जान बच गई।

वसुनंदी श्रावकाचार टीका लेखन

मुनि श्री सुनीलसागरजी रात के करीब दो बजे 'वसुनंदी श्रावकाचार' की टीका का लेखन कर रहे थे कि अचानक संघस्थ मुनि श्री सहजसागरजी घबराकर उठ गए व काँपने लगे तथा जोर-जोर से रोने लगे। उन्होंने देखा मुनि श्री शुभसागरजी उनकी सेवा कर रहे हैं और वे रोए ही जा रहे हैं।

वे अत्यधिक भयभीत थे। मुनि श्री उनकी पीठ सहलाने लगे व मौन ही उनसे रोने का कारण पूछा। पर वे इतने भयभीत थे कि बोल ही नहीं पा रहे थे। मुनि श्री ने उन्हें वापस लिटा दिया व णमोकार महामंत्र का पाठ करते हुए उन्हें सहलाने लगे। उन्हें जब तक नींद न लग गई तब तक मुनि श्री सुनीलसागरजी उनकी वैयावृत्ति करते रहे।

सबेरे सामायिक से निवृत्त होते ही मुनि श्री के पूछने पर वे रात वाली घटना सुनाने लगे। उन्होंने कहा कि ''उन्होंने रात को बहुत बुरा सपना देखा। किसी ने मुझे जोर से दबा दिया। बैंडबाजे बज रहे हैं, लोग 'रामनाम सत्य' है जोर-जोर से बोल रहे थे। दो अर्थियाँ लेकर लोग मेरी ओर आ रहे थे। एक पर मुर्दा बंधा हुआ था, दूसरी खाली थी। उसी खाली अर्थी पर वे मुझे बाँधने लगे। मैं चिल्लाने-रोने लगा, पर वे नहीं माने अपितु मुझे अर्थी पर बांध तेज दौड़ने लगे। रोते-चिल्लाते मेरी नींद टूट गई।''

बात यों थी कि जिस धर्मशाला में संघ ठहरा था, वह सड़क किनारे थी। प्रतिदिन रात-दिन लोग कम से कम 8-10 मुर्दे इसी तरह शोर-शराबे, बैंडबाजे के साथ रोते-दौड़ते हुए हरिश्चंद्र घाट ले जाते। जिसका मनोवैज्ञानिक प्रभाव मुनि श्री पर पड़ा व स्वप्न रूप में प्रगट हो गया और वे डर गए।

निष्ठापन

भेलुपुर बनारसवासी अभी आचार्य संघ के मंगल प्रवेश की यादें ही ताजा करते रहते कि चातुर्मास निष्ठापन का समय आ पहुँचा। दीपावली भगवान महावीर का निर्वाण दिवस चातुर्मास निष्ठापन दिवस के रूप में भी मनाया गया।

मुनि श्री सुनीलसागरजी संघ के साथ भदैनी घाट (गंगातट) भगवान सुपार्श्वनाथ की जन्म स्थली के दर्शन के लिए गए। वहाँ पर आपने स्याद्वाद महाविद्यालय की भव्य/विशाल लायब्रेरी का अवलोकन भी किया।

कुल मिलाकर बनारस चातुर्मास मुनि श्री के जीवन के लिए मील का पत्थर साबित हुआ। यहाँ आपने ज्ञान, ध्यान व साधना से अपने व्यक्तित्व का चहुँमुखी विकास किया। कई-कई क्षेत्रों में आपके लिए यह चातुर्मास महत्वपूर्ण रहा। यहाँ आपके व्यक्तित्व निखार ने दूरगामी प्रभाव छोड़े। यहाँ आपने स्वाध्याय किया, अध्ययन किया, साहित्य सृजन किया व खास बात कि जो पढ़ा, सीखा उसे गुना, आत्मसात किया, चर्या में उतारा और औरों को रोचक तरीके से बांटने लगे, जनहृदय में बिठाने लगे।

16 नवंबर 1999 से 24 नवंबर 1999 तक अष्टाह्निका महापर्व पर हर बार की तरह इस बार भी तिथि बढ़ने से आचार्य श्री ने नौ उपवास किए। 20 नवंबर को मुनि श्री के नेतृत्व में आचार्य गुरु का दीक्षा दिवस बड़ी धूमधाम से मनाया गया।

13 से 31 दिसंबर 1999
चन्द्रपुरी-सिंहपुरीवास- 17 दिन

13 दिसंबर 1999 को आप संघ के साथ सारनाथ (सिंहपुरी) भगवान श्रेयांसनाथ के गर्भ, जन्म, तप व केवल्य कल्याणक स्थल पर पहुँचे। यह पवित्र स्थान बनारस से 6-7 कि.मी. दूर है। यहाँ पर संघ के साथ आपका 17-18 दिन तक मंगल प्रवास रहा। यहाँ आपका हर क्षण चिंतन चलता रहता कि हे प्रभु! मैं हमेशा आत्मा की गोद में पलता, मुक्ति मार्ग पर शिशु सा निश्च्छल चलता रहूँ। अभी तो मुझे घुटने टेक सरकना भी नहीं आया है। मैं सुरतरु सा ऊँचा उठूँ और मेरे जीवन वृक्ष पर दर्शन, ज्ञान व चारित्र के फूल खिलते रहें, फूल लदे रहें। मेरे अंतर में मुक्ति का शाश्वत द्वीप जलता रहे। हे प्रभु मैं स्वयं जलूँ और अंतिम सांस तक जग को प्रकाश दूँ।

ऐसी शुभ लेश्याओं के साथ सिंहपुरी की पवित्र भूमि में मुनि श्री ने शीत के दिन अति धार्मिकता के साथ व्यतीत किए। निश्चित ही उनके मनोभावों पर काल-क्षेत्र का प्रभाव रहा और भावों की ऐसी ही शुभ व पवित्र परिणति बनी रही।

* * *

1 जनवरी 2000 का सूरज मुनि श्री के लिए नई ऊर्जा, नया संदेश व नया उत्साह लेकर अम्बर के आँगन में प्रकट हुआ। औरों की तो बात नहीं, मुनि श्री को उसमें कुछ अलग ही नव्यता व भव्यता दिखाई दी। तत्क्षण उन्होंने ऊर्जस्वी सूरज की तरह स्वयं को भी सबसे अलग नव्य-भव्य बनाने का संकल्प लिया। वे कुछ क्षणों के लिए आँखें मूंदे, बैठ गए। उन्हें लगा, 'उनके रोम छिद्रों से सहस्त्रों स्वर्ण किरणें आ-जा रही हैं व यत्र-तत्र-सर्वत्र बिखर रही हैं। कुछ क्षणों के लिए उन्होंने स्वयं को स्वर्ण आभा से दीप्त पाया।' आँखें खोली- पुलकित मन से प्रकृति का स्वागत करते हुए मन ही मन देव-शास्त्र-गुरु को नमन किया व अपनी नित्य क्रियाओं में लग गए।

पार्श्वनाथ जन्म कल्याणक भेलुपुर

1 जनवरी 2000 की संध्या को आपने पुनः भगवान पार्श्वनाथ की जन्म स्थली भेलुपुर में पदार्पण किया।

2 जनवरी 2000 को भेलुपुर पार्श्वनाथ मंदिर में आपके नेतृत्व व मार्गदर्शन में भगवान पार्श्वनाथ की जन्म कल्याण जयंति बड़े हर्षोल्लास व भव्य आयोजन के साथ मनाई गई। प्रातः अभिषेक पूजा व दोपहर शोभायात्रा निकली। आचार्य संघ साथ होने से शोभायात्रा की महिमा बढ़ गई।

क्षेत्र के मुस्लिम भाइयों के विशेष आग्रह पर जुलूस मुस्लिम मोहल्ले से निकला। मुस्लिम भाइयों के आग्रह पर आधा घंटा भजन भक्ति की गई व फिर नाचते-गाते शोभायात्रा आगे बढ़ गई। आत्मविभोर हो मुनि श्री सुनीलसागरजी इस धर्म प्रभावना का हिस्सा बने रहे।

संध्या ढल रही थी। उदास अस्ताचलगामी सूरज धीरे-धीरे अपने गंतव्य की ओर बढ़ रहा था। हर कोई अपने-अपने गंतव्य तक पहुँचने को उतावले थे। पक्षी चहकते हुए घोंसलों की ओर लौट रहे थे, चौपाये घर की ओर। व्यथित सूरज अपनी रतनारी आँखों से देख रहा था। इन संतों का न कोई घर न कोई घाट फिर भी ये कल अपने अगले पड़ाव पर चल देंगे। मेरी तरह यात्रापथ पर आरूढ़ रहना इनका भी धर्म है। तभी तो ये सहज व पवित्र बने हुए हैं।

पता नहीं कब संतों के चरण धर्मशाला की तरफ बढ़ प्रतिक्रमण के लिए रुक गए थे और इधर नियति नटी का नृत्य-वह दिव्य प्रकाशपुंज प्रभाकर घने अंधेरे में विलीन हो चुका था।

3 जनवरी 2000 भेलूपुर से विहार मैदागिन

3 जनवरी 2000 को मुनि श्री सुनीलसागरजी संघ के साथ भेलूपुर से विहार कर मैदागिन पहुँचे। मैदागिन काशी का हृदयस्थल है। यहाँ महावीर स्वामी का विशाल मंदिर व धर्मशाला है। समाज भी यहीं अधिक संख्या में है।

नरवाली (राज.) से कुछ श्रावक- श्राविकाएँ संघ के विहार की व्यवस्था लेकर मैदागिन आ पहुँचे। मैदागिन के 4-5 दिन के प्रवास में उन्होंने आचार्य श्री से नरवाली (राज.) विहार करने की अनुनय विनय की। आचार्य श्री का अभी मैदागिन रुकने का ही विचार था। तब मुनि श्री ने गुरुदेव से कहा कि ये लोग संघ को लिवाने चम्पापुर में भी दो-तीन बार आ चुके हैं। सारनाथ में इनके आग्रह पर आपने इन्हें व्यवस्था लेकर आने को कहा था सो ये इतनी दूर से व्यवस्था लेकर आए हैं। यह कह मुनि श्री मौन हो गए। इस पर आचार्य श्री रुष्ट हो गए। आहार के पश्चात विहार कर आचार्य संघ 10 जनवरी 2000 को शिवपुरी पहुँचा।

सबेरे हाथ को हाथ न सूझे ऐसा घना कोहरा तथा कड़ाके की ठंड थी। ऐसे में विहार चल रहा था। सामने से आते वाहन के हार्न की आवाज भी अत्यधिक पास आ जाने पर पता चलती थी। ऐसी भीषण सर्दी में ये दिगम्बर संत अपने यात्रा पथ पर विहार कर रहे थे। मुनि श्री स्वयं क्रिया निवृत्ति के लिए बैठे तब उनका बायां हाथ सुन्न हो गया। जैसे-तैसे एक डेढ़ घंटे बाद हाथ में थोड़ी हलचल आई। आहार चर्या के पश्चात पुनः उस बर्फ सी ठंडी धरती पर नंगे पैर वे दिगम्बर साधु चल रहे थे।

रास्ते में न कहीं किसी श्रावक का घर था न ही कोई मंदिर या अन्य व्यवस्था। ऐसी स्थिति में श्रावकगण आगे निकल गए व रात्रि विश्राम के लिए मुनि श्री संघ के साथ एक टूटे-फूटे स्कूल में रुक गए। साधुओं की सुरक्षा व्यवस्था को दृष्टिगत रख, उन्हें इस भयंकर सर्दी से कुछ राहत दिलाने युवा मुनि ने स्कूल के खिड़की-दरवाजों को जस-तस पैक किया। पर ठंड कोई रुकने वाली थी। भेद विज्ञान के ज्ञान से मन को समझाते रात बीती।

प्रातःकाल फिर विहार हो गया। रास्ते में सड़क पर लूना घुमाता एक शराबी, मुनि श्री सुनीलसागरजी के पास आ पहुँचा। उनके साथ चार-छह साधु और थे। उसने मुनि श्री की ओर मुखातिब हो पूछा, ''तुम लोग नंगे क्यों घूमते हो? शर्म नहीं आती?'' मुनि श्री ने समझाने की दृष्टि से कहा कि ''हम भगवान महावीर के अनुयायी हैं। अतः नग्न रहते हैं।''

वह फिर बोला, ''तुम्हें ऐसे नहीं घूमना चाहिए। बुद्ध का धर्म स्वीकार कर लो व कपड़े पहन लो।''

मुनि श्री उसकी बात अनसुनी कर आगे बढ़ गए, तब वह लपककर फिर आया व मुनि श्री का हाथ पकड़ लिया। उसके कुछ कहने के पूर्व ही मुनि श्री ने झटके से हाथ छुड़ा लिया व सारे साधु तेजगति से आगे बढ़ने लगे। उससे किसी भी प्रकार की बहस नहीं की क्योंकि आचार्य श्री का संघ को सख्त आदेश था कि मार्ग में आने वाले व्यवधान को अनदेखा कर विहार करते रहो। किसी मुसीबत को मोल नहीं लेना है।

निरंतर विहार चल रहा था कि एक दिन रास्ते में एक नील गाय मरी पड़ी दिखी, जिसके पेट में हथियार से छेदकर दिया था। थोड़ी दूर पहुँचे थे कि वाहन की चपेट में आ एक मरा कुत्ता पड़ा मिला। ये दृश्य देख मुनि श्री का संवेदी मन संसार की असारता व भयावहता से द्रवित हो उठा।

लगभग दस दिन तक विहार कर विभिन्न गाँवों में होते हुए आप संघ के साथ अयोध्या के निकट दर्शन नगर पहुँचे। मुनि श्री जैसे पदविहारी का काम तो चलना था। 22 जनवरी को संघ ने भगवान ऋषभनाथ, अजितनाथ, अभिनंदननाथ, सुमतिनाथ व अनंतनाथ तीर्थंकरों व भरत, बाहुबली तथा भगवान राम की जन्म भूमि अयोध्या में मंगल प्रवेश किया। आदि विधाता ऋषभदेव ने इसी अयोध्या की महान भूमि से देशवासियों को असि-मसि-कृषि की शिक्षा दी थी।

अयोध्या प्रवास में सर्वप्रथम आपने अयोध्या रेलवे स्टेशन से एक कि.मी. दूर रायगंज में 1965 में आचार्य श्री

देशभूषणजी की प्रेरणा से बने आदिनाथ जिनालय में 31 फीट ऊँची आदि प्रभु की खड़गासन मनोज्ञ मूर्ति के दर्शन किए। पास ही साढ़े पाँच-साढ़े पाँच फीट ऊँची अभिनंदननाथ, सुमतिनाथ, अजितनाथ, अनंतनाथ व चंद्रप्रभु की संगमरमर की खड़गासन प्रतिमाओं के दर्शन से स्वयं को कृतार्थ किया। 1992 में पू. गणिनी ज्ञानमति माताजी की प्रेरणा से समवशरण मंदिर व तीन चौबीसी मंदिर का निर्माण हुआ।

इसके बाद आपने कटरा मोहल्ले में स्थित विशाल आदिनाथ जिनालय के दर्शन किए (1952 में निर्मित)। यहाँ एक धर्मशाला भी है। इसमें भी यहाँ जन्मे तीर्थंकरों की मूर्तियों के साथ अन्य मूर्तियाँ भी हैं।

कटरा मोहल्ले में ही स्कूल के पास अभिनंदननाथ की टोंक (मंदिर) है। इसी मंदिर के पास शीतलमुनि की टोंक है जिसमें उनके चरण चिह्न हैं। आपने भक्तिभाव से दर्शन किए।

सरयू नदी के किनारे राजघाट पर अनंतनाथ भगवान की टोंक में उनके चरणचिह्न अंकित हैं, जिसका दर्शन कर आप कृत-कृत्य हो गए।

संघ के साथ आपने बकसरिया टीला (बेगमगंज) में अजितनाथ भगवान की टोंक में स्थापित चरण चिह्नों पर माथा टेका।

इसके बाद आपने स्वर्गद्वारी मोहल्ले में शाहजूरन के टीले पर, मस्जिद के पीछे भाग में स्थित आदिनाथ जन्म स्थान टोंक के दर्शन किए, जहाँ एक बंद कमरे में आदिनाथ भगवान के चरण चिह्न हैं। अयोध्या से छह कि.मी. दूर फैजाबाद में भी विशाल दर्शनीय जैन मंदिर के आपने दर्शन किए।

अयोध्या पहुँचने के दूसरे दिन पुनः नरवाली के श्रावक-श्राविकाओं की 15 सदस्यीय टीम आचार्य संघ को वहाँ ले जाने आ पहुँची। दुर्भाग्य से सासाराम शहर के बाहर गुंडों ने उनका दो-तीन लाख का नकदी जेवर लूट लिया किंतु गुरु भक्तों की कोई जनहानि नहीं हुई। उसी जगह चार दिन बाद गुंडों ने चार लोगों की हत्या कर दी।

अयोध्या प्रवास- पाँच दिनी अयोध्या के मंगल प्रवास के अंतिम दिन 26 जनवरी 2000 को अयोध्या में आचार्य श्री महावीर कीर्तिजी महाराज का जन्म दिवस बड़ी धूमधाम से मनाया गया, जिसमें मुनि श्री ने भी अपना प्रवचन कुशल वक्तृत्व शैली में देकर समाज पर अपनी विद्वत्ता की छाप छोड़ी। 27 जनवरी को संघ का अयोध्या से विहार हो गया।

अयोध्या से विहार

रास्ते में मुनि श्री ने देखा एक गरीब ठंड से ठिठुरती, फटेहाल, वृद्ध महिला लकड़ी के गट्ठर बेच रही थी। संत संघ को पास आता देख बड़ी श्रद्धा भक्ति से उसने दर्शन कर अपने पास रखा एकमात्र 20 रु. का नोट संत चरणों में चढ़ा दिया। मुनि श्री ने उस वृद्धा के भक्ति भाव व दानप्रवृत्ति से अभिभूत हो वे रुपए उसे वापस लेने को कहा व वे संघ के साथ आगे चल दिए। रात्रि विश्राम सहादतगंज नामक एक छोटे से गाँव में हुआ।

रत्नपुरी

फैजाबाद अयोध्या से 6 कि.मी. दूर है। यहीं से नेशनल हाईवे पर 21 कि.मी. दूर रौनाही गाँव से अंदर दो कि.मी. कच्चे मार्ग से होते हुए रत्नपुरी, रत्नपुर या रत्नवहपुर (प्राचीन नगरी) पहुँचे, जहाँ धर्मनाथ भगवान के चार कल्याणक हुए। जनश्रुति के अनुसार इस गाँव में कुम्हार जाति के लोग नागकुमार देवता के शाप के कारण नही रहते। सरयू के दूसरे किनारे पर एक धर्मनाथ भगवान के छोटे से मंदिर में दर्शन किए। यहाँ पार्श्वनाथ व धर्मनाथ की दो मूर्तियाँ सन 1133 की है। यहाँ एक शिलालेख है।

इस मंदिर से थोड़ा ऊँचाई पर स्तूपाकार एक मंदिर है, जहाँ धर्मनाथ भगवान के चरणचिह्न हैं। यहाँ पर संघ ने रात्रि

विश्राम किया। यहाँ की परंपरा के अनुसार सबेरे 108 कलशों से भगवान का दुग्धाभिषेक हुआ।

संघ का सुमेरगंज की ओर विहार हो रहा था कि रास्ते में एक ढाबे से एक आदमी निकलकर आया व बोला, ''बाबा लोगों रुको। चाय पी लो।''

आचार्य श्री के साथ चल रहे मुनि श्री सुनीलसागरजी ने कहा, ''हम चाय नहीं पीते हैं।''

''तो दूध पी लो।'' ''वह भी नहीं पीते।''

''ऐसा कैसे होगा? आपको दूध पीना पड़ेगा।'' तब आचार्य श्री ने समझाया व कहा ''साथ चल रहे इन युवकों को दूध पिला दो।''

उसने सबको दूध भी पिलाया व दो-तीन लीटर पॉलीथिन में भरकर दे दिया।

बाराबंकी

सुमेरगंज से विहार करता हुआ संघ बाराबंकी की तरफ आगे बढ़ रहा था। बाराबंकी से 7 कि.मी. पहले बाराबंकी के कुछ श्रावकगण संघ की अगवानी व व्यवस्था के लिए आए। संघ की रात्रि विश्राम व्यवस्था श्री बिंद्रा कोल्ड स्टोरेज में की गई। यहाँ मुनि श्री ने गरीब मजदूरों को हाड़तोड़ मजदूरी करते देखा। उनका विह्वल मन उन गरीब मजदूरों के प्रति करुणा से भर गया। यहाँ 'चारित्र सार' ग्रंथ का स्वाध्याय हुआ।

3 जनवरी को संघ का बाराबंकी में मंगल प्रवेश हुआ। यहाँ के 110 घरों में से 20 घरों में साधुओं की आहारचर्या चौके लगाकर करवाई गई।

मौसम खराब था। भयंकर सर्दी में भी संघ का लखनऊ की तरफ विहार हो रहा था। 6 फरवरी को इंदिरा नगर होते हुए संघ के साथ मुनिवर लखनऊ पहुँचे। लखनऊ के एक सप्ताह के प्रवास में 12 फरवरी को मुनि श्री के नेतृत्व में आचार्य श्री की जन्म जयंति धूमधाम से मनाई गई। मुनि श्री के ज्ञानवर्द्धक प्रवचन से समाज लाभान्वित हुआ।

आनंदपुरी-कानपुर

13 फरवरी को घने कोहरे व हाड़तोड़ ठिठुरन भरी ठंड के बीच इन दिगम्बर संतों का आनंदपुरी की ओर विहार हो गया। 17 फरवरी को उन्नाव होते हुए आनंदपुरी पहुँचे। मुनि श्री ने रास्ते में बड़ा प्रदूषित वातावरण देखा। ऐसा अभी तक के विहार में पहली बार देखा था। वहाँ के मंदिर की दशा भी ठीक नहीं थी, न ही श्रावकों की विचारधारा। कुछ अजीब सा वातावरण था। मंदिर का नाम 'महावीर जैन मंदिर' होने के कारण वहाँ विराजित तीन फीट पार्श्वनाथ प्रतिमा का फन हटाकर उस प्रतिमा पर वे सिंह का चिह्न अंकित कराना चाहते थे। ऐसा विचित्र वातावरण मुनिवर ने पहली बार देखा। उन्हें समझाना या कुछ कहना भैंस के आगे बीन बजाने जैसा था। फिर भी यहाँ बने एक हॉल में संघ का मंगल प्रवास रहा।

3 मार्च को आचार्य श्री आदिसागरजी की समाधि दिवस पर एक साथ 18 साधुओं का केशलोंच हुआ जो एक अद्‌भुत दृश्य था।

21 मार्च को आचार्य श्री का अष्टाह्निका के आठ उपवासों का पारणा कराकर नरवाली के श्रावकगण जो संघ को लिवाने चौका लेकर आए थे व साथ चल रहे थे, खाली हाथ लौट गए।

मुनि श्री सोच रहे थे जिनके पास कोई खास श्रद्धा भक्ति नहीं उन्हें गुरु सान्निध्य बिन माँगे मिल रहा था और जो परम मुनि भक्त लंबे अरसे से गुरु पर अंध श्रद्धा रखे, लिवाने आए, पर सौभाग्य न मिला। अपना-अपना पुण्य।

9 अप्रैल को आचार्य श्री विरागसागरजी, जिन्होंने आचार्य गुरु श्री सन्मतिसागरजी से बुढ़ार में क्षुल्लक दीक्षा ली थी,

दर्शन के लिए झांसी से कानपुर आए। 3-4 दिन पश्चात उन्होंने लखनऊ की ओर विहार कर दिया। कुछ साधुओं के साथ मुनि श्री सुनीलसागरजी उन्हें छोड़ने गए। अप्रैल की भीषण गर्मी तिस पर उपवासी मुनि श्री सुनीलसागरजी की तवे से तपती धरती पर चलने से हालत बिगड़ गई। उन्हें लू लग गई। कमरे में शवासन की स्थिति में लेट सामायिक करने लगे। सामायिक में वे इतने मगन हो गए कि उन्हें कब निंद्रा आ गई या मूर्च्छित हो गए पता ही नहीं चला।

जब आर्चाश्री को इसका पता चला तो वे दो-तीन श्रावकों को लेकर आए व उनकी वैयावृत्ति करवाने लगे। थोड़ी थकान कम हुई और वे होश में आए। पर आँखें नहीं खुल रही थी। वे फिर से सामायिक करने लगे। जब थोड़ा ठीक लगा व आँखें खोली तो देखा आचार्य श्री खुद खड़े रहकर श्रावकों से उनकी वैयावृत्ति करवा रहे हैं। वे झटके से उठे व अपनी चौकी आचार्य श्री को बैठने को दी। वे बैठ गए व आचार्य श्री ने उन्हें पुनः लिटा दिया। पर मुनि श्री में भी बैठने की ताकत नहीं थी। आचार्य श्री थोड़ी देर में उन्हें आशीर्वाद देकर क्या चले गए, उनके ऊपर तो शीतलता की वृष्टि होने लगी। धीरे-धीरे उनका ताप कम होता चला गया और वे अपने आपको स्वस्थ महसूस करने लगे।

उनका चिंतन चल रहा था, ''देखो गुरुवर तो हर अष्टाह्निका में आठ व दसलक्षण पर्युषण पर्व के दस उपवास एक साथ करते हैं। फिर अक्सर उनका एकांतर उपवास तो रहता ही है, तिस पर अनाज का त्याग, फिर भी पद विहार, वाचना, स्वाध्याय, उपदेश, विधान मंडल, सारी क्रियाएँ भी सतत चलती रहती हैं। मैंने कभी उनको आकुल-व्याकुल या आज मेरी तरह पस्त होते नहीं देखा। मुझे भी अपने मनोबल को व स्वयं को गुरुदेव जैसा मजबूत बनाना है। यह अटल सत्य है कि एक संन्यासी के रूप में अंदर-बाहर की यात्रा हमेशा- हमेशा जारी रहेगी, जिसका एकमेव उद्देश्य मात्र कल्याण ही कल्याण है- स्व का भी और पर का भी। और अगली सुबह वे इन संकल्पों के साथ तरोताजा होकर उठे कि जीवन यात्रा पथ पर वे गुरुदेव का अनुगमन करेंगे। बाहरी यात्रा में भले ही वे औरों के साथ हों, किंतु अंतर की यात्रा तो उन्हें अकेले ही तय करना है, जिसे दृढ़ता व शुचिता के साथ करते कर्म मल को धोते रहना है।

महावीर जयंति- दीक्षा

16 अप्रैल को महावीर जयंति पर कुछ भक्तों ने कुछ नियम लिए। 23 अप्रैल को वैराग्य भावना लिए दिल्ली से आई सुश्राविका गंगाबाई ने आचार्य श्री से क्षुल्लिका दीक्षा ली, नाम रखा गया संभवमति क्षुल्लिका। मुनि श्री ने आज भी गुरुदेव से त्वरित निर्णय ले 'शुभस्य शीघ्रम्' करने का पाठ पढ़ा। उन्होंने शिक्षा ग्रहण की कि कभी भी आचार्य श्री व्यवस्था का हीलाहवाला देकर किसी कार्य को आगे के लिए नहीं टालते हैं। जो भी काम आया उसे हाथोंहाथ निपटा देते हैं। उन्होंने कई-कई बार देखा कि पद विहार में भी समाज के आग्रह पर वे प्रवचन भी दे देते हैं, मंडल विधान भी करवा देते हैं और उसी दिन आगे के लिए पद संचलन (विहार) भी कर देते हैं। इन सब कार्यों में जब से वे संघ में दीक्षा लेकर आए हैं उनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इस प्रकार जीवन को ऊँचाइयों पर ले जाने वाले छोटे-मोटे सबक वे रोज गुरु सान्निध्य में मात्र सीखते ही नहीं अपितु जीवन मंत्र बना आत्मसात करते स्वयं को साधना पथ पर तरासते जा रहे थे। सच है जिसमें सीखने की लगन व ललक होती है, वही आगे चलकर औरों को सीख दे सकता है। सिखा सकता है। इस प्रकार मुनि श्री नित नूतन पथ्य लेते पथ को पाथेय बनाते आगे बढ़ते जा रहे थे। गुरुवर व संघस्थ साधुओं के छोटे से छोटे कार्य से भी वे प्रेरणा लेते रहते थे।

आज की क्षुल्लिका दीक्षा पर उनका चिंतन चल रहा था कि जब तक मनुष्य जीवन में संयम-नियम धारण नहीं करता, उसका जीवन व्यर्थ है। वह पशुवत है। व्रत संयम ही हमारे चारित्र को मांजकर चमकाते हैं व मुक्ति मार्ग प्रशस्त करते हैं।

कानपुर प्रवास में संघ के साथ आपने काफी धर्म प्रभावना के कार्य किए। कानपुर के उपनगरों में विहार करते हुए आपने कई अजैन परिवारों को जैन धर्म की ओर सिर्फ अभिमुख ही नहीं किया अपितु उन्हें कट्टर जैनी बना दिया।

16 मई 2000 जनरलगंज

कानपुर के आनंदपुरी में आप संघ के साथ करीब 88 दिन रहे व चारों तरफ काफी धर्म प्रभावना की। यहाँ से 16 मई को जनरलगंज के लिए संघ के साथ विहार कर दिया। 6 जून को जनरलगंज में श्रुताराधना महापर्व श्रुतपंचमी महोत्सव धूमधाम से मना। 21 दिनी प्रवास पश्चात 9 जून को प्रातः 6 बजे संघ ने फजलगंज के लिए विहार कर दिया। वहाँ महावीर रोलिंग मिल में मिल मालिक धूपचंद संजय कुमार जैन के आग्रह पर दो दिन रुके। मिल में बड़ी-बड़ी भट्टियों में नया-पुराना लोहा पिघलाकर सांचों में ढाला जाता था।

शौच क्रिया के लिए जाते वक्त मुनि श्री सुनीलसागरजी ने देखा कि धधकती आग की भट्टियों के पास मजदूर कितनी मेहनत से काम कर रहे थे। उन्हें यह देख नरक की उष्णता की वेदना याद हो आई। उन मजदूरों के प्रति करुणा से उनका गिरि गुहा सा कोमल मन सिहर उठा। वे सोचने लगे एक तरफ आराम तलब मालिक व दूसरी तरफ वे मेहनतकश मजदूर। कर्मन की गति न्यारी है। सभी को अपने-अपने कर्मों का फल भोगना पड़ता है। फजलगंज से विहार करते हुए आप रतनलाल नगर पहुँचे।

जनरलगंज प्रवास के दौरान 3 जून को आपने आचार्य संघ के साथ वहाँ के सोनगढ़ मान्यता वालों द्वारा निर्मित शांतिनाथ जिनालय के दर्शन किए। जिनालय की भव्यता तथा श्रावकों की मुनि संघ के प्रति श्रद्धा भक्ति देख आप अभिभूत थे। यहाँ से आप रतनलाल नगर पहुँचे।

13 जून
रतनलालनगर से विहार

रतनलाल नगर से बिना बताए ही आचार्य संघ का प्रातः 13 जून को विहार हो गया। वहाँ से 7 कि.मी. दूर शिव मंदिर में आहार चर्या हुई। कानपुर से बार-बार श्रावकगण चातुर्मास का निवेदन करने आ रहे थे। यहाँ भी फिर से आकर श्रावकगण आचार्य श्री से काफी अनुनय विनय करने लगे व सारी तैयारियों के बारे में बताने लगे।

आचार्य श्री ने उनसे मुनि श्री सुनीलसागरजी से बात करने को कहा। श्रावकों को बात बनती नहीं लग रही थी, तभी उनमें से एक उत्साही श्रावक ने कहा, ''महाराजजी सभी लोग बार-बार चातुर्मास करने की विनय लेकर आ रहे थे। मैं 15 दिन से बाहर था, इसलिए न आ सका। अब मैं आ गया हूँ। आप सबसे निवेदन करता हूँ कि आप कानपुर में ही सकुशल चातुर्मास संपन्न करें।''

तब मुनि श्री सुनीलसागरजी ने कहा, ''अभी आप कह रहे हैं। मैं आ गया हूँ इसलिए कानपुर चातुर्मास कीजिए। बीच में यदि आप कहने लगे कि मैं फिर से बाहर जा रहा हूँ आप चातुर्मास छोड़ कहीं और चले जाइए। फिर क्या होगा?''

सब लोग हँसने लगे। अंततः कानपुर पीछे छूट गया।

कानपुर से विहार

कानपुर से विहार करते हुए संघ कई अजैन मंदिरों, आश्रमों, स्कूल वगैरह में रुककर आगे बढ़ रहा था। मुनि श्री सुनीलसागरजी ने देखा कि लोगों में दिगम्बर संतों के प्रति अपार श्रद्धा भक्ति थी। मठों, मंदिरों के पंडित पुजारी व बड़े-

बड़े लोगों ने न सिर्फ ठहरने की ही व्यवस्था की, अपितु संघ को आगे तक छोड़ने भी आए व अगले पड़ाव पर भी ठहरने की व्यवस्था की।

अब विहार में रास्ते में पानी भी गिरने लगा था, फिर भी संघ का पद संचलन चलता रहता था। संतों के विहार करते हुए यदि रास्ते में पानी आ जाए तो चलने का निषेध नहीं है। हाँ पानी गिर रहा हो उसमें वे विहार नहीं कर सकते।

उपसर्ग

भौपदा से जब विहर करता हुआ संघ मबइया की ओर जा रहा था, तब रास्ते में नारायण गाँव से आधा कि.मी. पहले दो युवक मोटरसाइकिल पर आए और दिगम्बर संतों को देख जोर-जोर से अट्टाहस करते हुए चले गए। आचार्य श्री ने किसी अनहोनी की आशंका से सभी को मौन रहने का इशारा किया।

जैसे ही संघ गाँव से गुजरने लगा 15-20 युवक सड़क के दोनों ओर खड़े हो, संतों को गालियाँ देते हुए उपहास करने लगे। इतने में पान की दुकान से 3-4 लड़के संतों को गाली देते हुए संतों की तरफ लपके। उनमें से एक के हाथ में कुल्हाड़ी थी। वह मुनि श्री सुनीलसागरजी की बाजू में चलने लगा। आचार्य श्री बीच में व उनके बाजू में जयपुर के श्रावक तिलोकचंदजी थे। दो तीन साधु पीछे चल रहे थे। बाकी साधु बहुत पीछे थे।

मुनि श्री के मन में विकल्प आने लगा कि यदि लड़के ने गुरुदेव पर कुल्हाड़ी से वार किया तो मैं आगे आ जाऊँगा। सभी साधु मौन णमोकार महामंत्र की आराधना करते ईर्यापथ पर चल रहे थे। मंत्र के प्रभाव से वह लड़का कुछ न कर सका व साथियों के साथ एक जगह रुक गया।

आचार्य श्री पीछे चल रहे टीकमगढ़ के सनत कुमारजी को पीछे रह गए सारे साधु जब तक नहीं आ जाएँ, वहीं रुकने का कह आगे बढ़ गए व आधा कि.मी. दूर चंद्रबलि नदी का पुल पार कर मबईया पहुँच गए। लेकिन उन्हें पीछे आ रहे संघ की चिंता थी।

अन्य साधुओं को देख वे क्रूर युवा और उग्र हो गए व संतों पर छींटाकसी करने लगे। तब सनतजी ने वहाँ चबूतरे पर बैठे एक बुजुर्ग मुस्लिम चाचा से बातचीत की व उन युवाओं को समझाने को कहा। चाचा उनकी बातों से प्रभावित हुए व उन लड़कों को लताड़ लगाई व कहा, ''ये जैन संत हैं, इन्हीं की प्रेरणा से होने वाले कार्यक्रमों में हमारे हाथी, घोड़े, बाजे जाते हैं। हमें रोजी-रोटी मिलती है।'' और उन्होंने उन युवकों को समझा-बुझाकर भगा दिया। जब सारा संघ सकुशल गंतव्य तक पहुँच गया तब कहीं आचार्य श्री के चेहरे से चिंता की लकीरें मिटने लगी। यह तो सबने देखा था कि विहार के वक्त गाँव के बाहर एक पेड़ के नीचे एक हाथी बैठा था, जो शुभ का सूचक था।

मुनि श्री का तो यही मानना था कि तपस्वी सम्राट की तपस्या के प्रभाव से ही यह बहुत बड़ी अनहोनी टल गई।

छतरपुर के श्रावकों का आगमन

विहार करते संघ बड़ा महलरा पहुँचा। वहाँ प्रातःकालीन स्वाध्याय चल रहा था कि छतरपुर से गाड़ियाँ भर- भरकर श्रावकगण वहाँ आ पहुँचे। एक तो उन्हें मोदहा की घटना का पता चल गया था। अतः वे संघ को अब अकेले विहार नहीं करने देना चाहते थे। दूसरा वे संघ को चातुर्मास के लिए छतरपुर का निवेदन करने व श्रीफल अर्पित करने आए थे।

मलहरा से 8 कि.मी. निवारी तक छतरपुर के श्रावकगण संघ के साथ चले। वैयावृत्ति करते हुए पुनः उनके प्रमुख श्री देवेंदर डेवड़िया, ज्ञानचंदजी, रतनलालजी, गोपीचंदजी, महेशजी आदि ने गुरुदेव से काफी अनुनय विनय की कि वे ससंघ छतरपुर पधारें।

छतरपुर के श्रावकों के संकल्प श्रद्धा व समर्पण से आचार्य श्री व समस्त मुनि संघ अभिभूत था। इधर लगातार बारिश हो रही थी। अतः आगे जाना भी संभव नहीं था। अतः आचार्य श्री ने मुस्कराते हुए मौन स्वीकृति दे दी। छतरपुर वासियों में खुशी की लहर दौड़ गई। सब योग संयोग की बात थी।

छतरपुर चातुर्मास

किसी एक नहीं, न जाने कितने-कितने जीवों के प्रबल पुण्योपार्जन से किसी भूमि पर ऐसे महान तपस्वी साधुओं के चरण पड़ते हैं। 26 जून 2000 की प्रातः सूरज अपनी सोनेरी किरणों के साथ छतरपुर की धरती पर अवतरित हुआ। उधर प्रज्ञा के महासूर्य ने निवारी से 8 कि.मी. चलकर उस सोनेरी धरती पर मंगल पदार्पण किया। इन रत्नत्रयधारी साधकों के चरण चूम-चूमकर छतरपुर की धरती के कण-कण कृत-कृत्य हो रहे थे।

भव्य अगवानी व हर्षोल्लास के साथ संघ ने छतरपुर के नेमिनाथ दिगम्बर जैन जिनालय में प्रवेश कर जिनेंद्र देव के दर्शन किए। प्रवचन सभा में मुनि श्री सुनीलसागरजी ने भी अपना प्रेरक बोधिलब्धि उद्‌बोधन दिया। जिसे सुन पहले ही दिन समाज संघ के प्रति वारा-न्यारा हो गया और युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी का कायल।

यहाँ पुनः कानपुर से पधारे श्रावकों ने चातुर्मास के लिए निवेदन करते हुए श्रीफल चढ़ाया। वहीं छतरपुर के श्रावकों ने भी अपनी पूर्ण श्रद्धा भक्ति व आस्था प्रकट कर श्रीफल अर्पित किया। आचार्य श्री ने आशीर्वचन में कहा कि अब कानपुर वापस आना संभव नहीं है। वैसे चातुर्मास स्थापना को 20 दिन शेष हैं। यदि छतरपुर के श्रावकों की ऐसी ही श्रद्धा भक्ति रही तो यहीं चातुर्मास संपन्न होगा। इस प्रकार उन्होंने उहापोह की स्थिति टाल दी।

इसके पश्चात पहली विशाल धर्मसभा 30 जून व दूसरा त्रिदिवसीय चातुर्मास प्रतिष्ठापन कार्यक्रम आयोजित हुआ। इनमें मुनि श्री के समसामयिक उद्‌बोधनों से समाज काफी प्रभावित हुआ। अब तो हर धर्मसभा में समाज को मुनि श्री सुनीलसागरजी के प्रेरक उद्‌बोधन का बेसब्री से इंतजार रहता। आचार्य श्री भी उन्हें ज्यादा वक्त देने लगे थे।

क्षुल्लिका दीक्षा

19 जुलाई को विशाल धर्मसभा में ब्र. रजनी दीदी ने क्षुल्लिका दीक्षा ग्रहण की। नाम रखा गया श्रेयांसमति क्षुल्लिका। त्यागी व्रती परिवार वृद्धिगत हुआ।

विभिन्न धार्मिक आयोजन, शिक्षण शिविर, गोष्ठियाँ आदि द्वारा धर्म प्रभावना करते हुए 26 अक्टूबर 2000 की भोर में चातुर्मास निष्ठापन विधि संपन्न हुई। यह दिन महावीर निर्वाण महोत्सव था, दीपावली का शुभ दिन।

इस दिन इस प्रसंग पर मुनि श्री ने कहा कि ''भगवान महावीर जिस प्रकार इस दिन संसार से मुक्त हुए थे, ठीक वैसे हीआज संघ इस स्थान विशेष से मुक्त हुआ। हमें आज संकल्प लेना चाहिए कि हम भगवान महावीर के सिद्धांतों को पालेंगे, जीवन में उतारेंगे तथा अपने जीवन में रत्नत्रय के दीप जलाएँगे। इस प्रकार अपना जीवन सार्थक करेंगे।''

इन्ही दिनों आचार्य श्री कुशाग्रनंदीजी महाराज 400 कि.मी. दूर कोड़हार (इलाहाबाद) से चलकर गुरु दर्शन को आए। इसी प्रकार गणिनी विजयमति माताजी भी गुरु दर्शनार्थ पधारी।

16 नवंबर 2000 को कानपुर के राजकुमार ने मुनि दीक्षा ली तथा सागर के ब्र. ने क्षुल्लक दीक्षा ली। दोनों के नाम आचार्य श्री ने मुनि सन्मानसागर व क्षुल्लक सन्मार्गसागर रखे। संघ परिवार को आज दो सदस्यों की वृद्धि का सौभाग्य प्राप्त हुआ। आज दो देहधारियों ने विदेह बनने के पथ पर कदम रखा।

22 नवंबर को पुनः एक युवा मुमुक्षु मुक्ति पथ पर अग्रसर हुआ। आचार्य श्री ने क्षुल्लक दीक्षा देकर नाम क्षुल्लक सुरत्नसागर रखा। ये क्षुल्लकजी मरसलगंज (शिकोहाबाद) के मुनि श्री सौभाग्यसागरजी के गृहस्थावस्था के पुत्र हैं।

इन दीक्षा कार्यक्रमों में मुनि श्री ने अपने उद्बोधन में दीक्षार्थियों की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए कहा कि ''व्यक्ति संसार बढ़ाने व सांसारिक सुख प्राप्ति के लिए जितना पुरुषार्थ करता है। उससे आधा भी यदि वह अपने आत्महित के लिए कर ले तो उसे निश्चित ही मोक्ष लक्ष्मी की प्राप्ति हो सकती है। इन लोगों ने मुक्ति मग की ओर कदम बढ़ाए हैं, प्रशंसनीय श्लाघ्य है। उत्तरोत्तर आत्मकल्याण में वृद्धि हो।''

आचार्य श्री से आज्ञा लेकर चातुर्मास अवधि में मुनि श्री सुनीलसागरजी विभिन्न कक्षाएँ (श्रावकों की) लेते रहे। 28 नवंबर को संघ ने शहर से दो कि.मी. दूर डेरा पहाड़ी पर प्रवास किया। श्रावकों के आग्रह पर मुनि श्री यहाँ भी कक्षाएँ लेते रहे क्योंकि श्रावकगण यहाँ भी उसी उत्साह से कक्षाओं में आते रहे।

लगातार अंतराय

डेरा पहाड़ी के प्रवास के दौरान मुनि श्री सुनीलसागरजी को लगातार छह दिन तक आहार में अंतराय होते रहे। समस्त संघ में खलबली मच गई। उनका स्वास्थ्य दिन पर दिन गिरता जा रहा था। यद्यपि उनका मनोबल मजबूत था, पर देह को तो भोजन पानी की जरूरत होती है, जो नहीं मिल पा रहे थे। मुनि श्री को काफी कमजोरी आ गई थी। वे बड़ी मुश्किल से चल पा रहे थे। सातवें दिन आचार्य श्री स्वयं उन्हें अपने साथ आहार के लिए ले गए। निरंतराय आहार चर्या हो गई। छठवें दिन एक श्रावक मुनि श्री से बोलकर गया था कि मेरे घर आज तक किसी संत को आहार चर्या में अंतराय नहीं हुआ। यदि आपका आहार मेरे यहाँ होता तो आपको अंतराय न होता। मुनि श्री मुस्करा दिए। बोले कुछ नहीं।

आठवें दिन संयोग से उसी श्रावक के घर आहार चर्या में मुनि श्री को पुनः अंतराय हो गया। और फिर नौवें और दसवें दिन भी मुनि श्री को अंतराय हो गई। संयम की इस कठिन साधना में मुनि श्री समता भाव से अपने कर्मों की निर्जरा करते रहे। जिनके हृदय में करुणा व आँखों में करुणा जल सदा छलकता रहता है, ऐसे तपस्वी गुरु का हृदय शिष्य के प्रति करुणा से आप्लावित हो गया।

आचार्य श्री ने मुनि श्री के अंतराय कर्म के उपशमन के लिए सकल संघ को रोज तीन-तीन णमोकार महामंत्र की मालाओं का जाप करने को कहा। ग्यारहवें दिन आचार्य श्री ने सबसे पहले आहारार्थ मुनिश्री को उठने की आज्ञा दी। मुनि श्री की हालत बहुत खराब हो गई थी। मुनि श्री सुंदरसागरजी उनके साथ आहार चर्या में गए। अंततः ग्यारहवें दिन सबकी दुआओं से मुनि श्री की आहार चर्या निरंतराय संपन्न हुई।

मुनि श्री के अंतराय की चर्चा सिर्फ छतरपुर में ही नहीं आसपास भी फैल गई। इन्हीं अंतराय के दिनों आचार्य श्री कुशाग्रनंदीजी के तीन-चार शिष्य डेरा पहाड़ी पर आकर मुनि श्री से कहने लगे, गुरुवर यह स्थान ठीक नहीं है। आप शहर चलें, सब ठीक हो जाएगा। जब आहार ठीक होने लगे पुनः हम आपको यहाँ लिवा लाएँगे। हमसे आपकी स्थिति देखी नहीं जा रही है।

मुनि श्री मुस्कराये बोले, ''तुम जैन दर्शन को समझते हो? कर्मों का फल तो जीव को भोगना होता है, उसमें स्थान क्या करेगा। मैं कहीं भी चला जाऊँ, कर्म मेरा पीछा कहीं नहीं छोड़ेंगे। यह तो मेरा सौभाग्य है कि बिना अधिक तपस्या या पुरुषार्थ किए मेरे अंतराय कर्म की निर्जरा हो रही है।'' इस प्रकार इस विषमतम परिस्थिति में मुनि श्री ने समता भाव रखने का एक बहुत बड़ा पाठ पढ़ा। वे चिंतन करते रहते कि जब अनुकूलता में कोई व्याकुलता नहीं हुई तो इस प्रतिकूलता में व्याकुलता कैसी? मैंने अज्ञानवश जिनके निमित्त ये कर्म बंध किए हैं उनसे मैं क्षमा माँगता हूँ। प्रभु! मेरी सदा सद्बुद्धि रहे ताकि मैं भूल से भी कोई भूल न करूँ। किसी के लिए अंतराय का निमित्त न बनूँ। किसी के अंतराय के लिए कृत, कारित, अनुमोदना का पात्र न बनूँ।

छतरपुर के मंगल प्रवास में मुनि श्री कहने को तो सबके साथ थे किंतु थे अकेले। 'एकोऽहं' 'शुद्धोऽहं', 'बुद्धोऽहं'

के चिंतन की आत्म चेतना से वे अपनी व औरों की आत्मभूमि कहो या मनोभूमि को मृदु, मंजुल व उर्वर बनाते रहे ताकि उस पर मुक्ति की फसलें लहरा सकें। वे सोचते रहते कि चातुर्मास के पूर्व संत का विचार-प्रवास किसान की तरह भूमि जोतने व उसे समतल बनाने के काम जैसा है! ठोस भूमि पर बीज बोने से कदाचित आर्द्रता पा कोमल अंकुर फूट भी जाए पर वह अंततः कमजोर ही रहता है व सूख जाता है।

ठीक वैसा ही मेरा संत जीवन है और यह पद संचलन निर्बाध चलता रहता है, जो संत जीवन का आवश्यक कर्तव्य है। और वे अपनी मनोभूमि को मजबूत बनाते रहते, समतल बनाते रहते। मुक्ति की फसल काटने के लिए कठिन से कठिन साधना करनी पड़ती है। कषायों की कठोरता को उखाड़ना पड़ता है, क्षमा, मार्दव, आर्जव आदि भावों से मनोभूमि को मंजुल, मृदुल व आर्द्र करना पड़ता है। यह कला तब आती है, निखरती है जब ज्ञानार्जन से अज्ञान के जन्म-जन्मांतरों के पड़े तिमिरांधकार को नष्ट कर दिया जाए। जब तक अपने स्वरूप की, अपने गुणों की पहचान नहीं होगी, तब तक हम कैसे अपने दुर्गुणों का ह्रास कर सत्गुणों को निखारेंगे।

पद संचलन के इस चिंतन को उन्होंने छतरपुर के मंगल प्रवास में अपने व औरों के जीवन के मांगल्य की कामना व मंगल साधना में चरितार्थ करने का प्रयत्न किया। वे जानते थे मात्र कामना से कार्य सिद्धि नहीं होती। सिद्धियों के सिद्ध बनने के लिए तो महावीर जैसी, बाहुबली जैसी कठोर साधना करना पड़ती है। वे स्वयं को इस साधना की पाठशाला के प्ले स्कूल का छात्र समझ, छतरपुर चातुर्मास उन्होंने अपने ज्ञानार्जन, सत्य, शौच, तप, त्याग आकिंचन्य व ब्रह्मचर्य तथा दरश विशुद्धि, विनय संपन्नता वात्सल्य, धर्म प्रभावना जैसी सोलह कारण भावनाओं से अपने चरम लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अपनी 'नींव' को मजबूत बनाने में व्यतीत किया।

* * *

छतरपुर के छः माह के लंबे प्रवास के बाद मुनि श्री ने आचार्य संघ के साथ ब्रजपुर, गंज, बमीठा होते हुए विश्व प्रसिद्ध खजुराहो में प्रवेश किया। यहाँ एक अहाते में स्थित 32 जैन मंदिरों के दर्शन किए। आपने देखा कि खजुराहो जैन पुरातत्व की धरोहर है। रात्रि विश्राम के बाद दूसरे दिन पुनः बमीठा की ओर विहार किया।

* * *

नहीं गए तिगोड़ा

बमीठा से विहार कर नारायणपुर में रात्रि विश्राम कर 1 जनवरी 2001 को आपने संघ के साथ बिजावर की ओर विहार किया।

5 जनवरी 2001 को संघ के साथ आप सिद्धक्षेत्र द्रोणगिरि पहुँचे। वहाँ आर्यिका विजयमति माताजी ससंघ ने आचार्य संघ की अगवानी कर विनयांजलि अर्पित की और सबने तीर्थराज की साथ-साथ वंदना की।

मुनि श्री बड़े खुश थे कि सिद्धत्व प्राप्ति के उद्देश्य से चल रहा यह आचार्य संघ का कारवां नए वर्ष के पहले दिन से सिद्ध क्षेत्र के दर्शन के लिए चल पड़ा। इससे बड़ा शुभ कार्य और क्या हो सकता है। मुनि श्री ने वर्ष की शुरुआत आत्म शांति के लिए पर्वत पर आध्यात्मिक सामायिक से की। विहार हो या विश्राम उनका चिंतन तो हर पल, हर समय आत्मोन्नति का ही रहता। पर्वत पर अवस्थित 35 मंदिरों के दर्शन कर वे जैन संस्कृति की पुरा सम्पदा की धरोहर से अभिभूत थे।

दो दिनी प्रवास के पश्चात आपने द्रोणगिरि से वन्य क्षेत्र के कच्चे कांटों-भाटो भरे रास्ते विहार कर दिया। साधु संघ घने जंगल में पगडंडियों से गुजर रहा था कि काले कपड़ों में कंधे पर बंदूक ताने एक रोबिला व्यक्ति मुनि श्री की तरफ आगे बढ़ा। साथ चलते साधु चुपचाप रहे। उसने मुनि श्री के हाथ में पिच्छी कमंडल देख उनके चरणों में बड़े शांत

भाव से बैठकर नमन किया। मुनि श्री ने उसे सहज भाव से 'धर्मवृद्धिरस्तु' का आशीर्वाद दिया। आशीर्वाद पा कृत कृत्य हो वह जंगल में घुस गया और आचार्य संघ दरगुआ पहुँचा। कच्चे उबड़-खाबड़ रास्ते पर चलने से संतों के पैरों के तलुए छिल गए पर किसी के भी चेहरे पर आकुलता- व्याकुलता की रेखा न थी।

दरगुआ से प्रातः काल संघ हीरापुर पहुँचा। वहाँ मुनि श्री का बड़ा मार्मिक एवं प्रभावी प्रवचन हुआ। मुनि श्री ने कहा कि ''मुझे सद्गुरु मिल गए हैं। मैंने इनसे तो ज्ञान वैभव पाया है व पा रहा हूँ। वही मुझे सांसारिक बंधनों से छुटकारा दिलाकर मेरे चरम लक्ष्य मुक्ति मंजिल तक पहुँचाएगा। बड़े पुण्योदय से ऐसे गुरु मिलते हैं।''

हीरापुर से मुनि श्री सुनीलसागरजी की जन्मभूमि तिगोड़ा मात्र तीन-चार कि.मी. दूर थी। खबर पाते ही तिगोड़ा से सैकड़ों की तादाद में जैन-अजैन लोग तिगोड़ा के रत्न सुनीलसागरजी (संदीप) के दर्शनार्थ उमड़ पड़े। उनके प्रवचन सुन हर कोई उन पर नाज करने लगा। जितनी जबान उतने (संदीप) मुनि श्री सुनीलसागरजी के किस्से। हर किसी की इच्छा थी कि पूरा गाँव/कस्बा अपनी माटी के सपूत इस महात्मा के दर्शन कर ले। इनके चरणों की रज रजत को माथे लगाने का सबको सौभाग्य प्राप्त हो, खेद है जो न आ सका है।

वे सब आचार्य श्री से बड़ी श्रद्धा व विनय भाव से निवेदन करने लगे कि आप तो हमारे महागुरु हैं। आपका ससंघ तिगोड़ा में मंगल प्रवेश हमारे लिए महा उपकारी होगा। आचार्य श्री मुनि श्री सुनीलसागरजी से तिगोड़ा के विशाल मंदिरों के बारे में पूर्व में सुन चुके थे, पर किन्हीं कारणोंवश वे वहाँ नहीं जा पाए। उन्होंने तिगोड़ा के श्रावकों से कहा कि ''तिगोड़ा की भूमि ने मुझे मुनि सुनीलसागर के रूप में एक महान शिष्य रत्न ही नहीं अपितु महारत्न दिया है। इस श्रद्धालु शिष्य में गुरु में निहित ज्ञान को उलीचने की अपार क्षमता है। यह उस निर्मल ज्ञान नीर को उलीच-उलीच कर अपने जीवन की खाली गागर भरता रहा है। मुझे इसे कभी रोकने-टोकने या ऐसा करो, वैसा करो, नहीं कहना पड़ा। पता नहीं यह मुझसे कब, कितना व क्या ग्रहण करता है, पर आज इतनी जल्दी इतने बड़े संघ में रहकर अपनी अलग पहचान बना ली है। यह सब इसकी सीखने की लगन व अकूत श्रद्धा का ही फल है। मैं इस तिगोड़ा के युवा सपूत के इस अल्प दीक्षा काल में ही इसके जीवन की किताब को पढ़कर कह सकता हूँ कि यह अंकलीकर परंपरा के वितान का महत्वपूर्ण आधार स्तंभ है।'' आचार्य श्री का अपने शिष्य के प्रति इतना बड़ा उद्बोधन सुन तिगोड़ावासियों का हृदय गर्व से फूल गया। वे सब आचार्य श्री व मुनि श्री सुनीलसागरजी की जयकारे लगाते हुए आचार्य भगवंत से कहने लगे- ''(संदीप) मुनि श्री सुनीलसागरजी ने हमारा भाल ऊँचा कर दिया। हमारे गाँव के बेटे की इतनी बड़ी संत सभा में आप (गुरु) प्रशंसा कर रहे हैं। इससे बड़ी बात हमारे लिए और क्या हो सकती है?'' इधर संकोची स्वभाव के मुनि श्री सुनीलसागरजी इन बातों को सुन और सकुचा रहे थे।

तिगोड़ावासी बार-बार आचार्य श्री से ससंघ आकर तिगोड़ा की भूमि को पावन व धन्य करने की अनुनय-विनय कर रहे थे। इच्छा होते हुए भी आगे का कार्यक्रम सुनिश्चित होने के कारण योग टल गया। हीरापुर से संघ का विहार करवा तिगोड़ा के कुछ लोग तो अगले पड़ाव तक साथ चले, बाकी निराश तिगोड़ा लौट गए। पर उसके बाद आज तक पट्टाचार्यश्री के चरण तिगोड़ा की उस पावन भूमि पर नहीं पड़े।

विहार

हीरापुर से विहार कर संघ ने गंडोई में रात्रि विश्राम किया। रात्रि में अचानक मुनि श्री सुनीलसागरजी के दाहिने पैर की नस में असहनीय दर्द शुरू हो गया। अगले पड़ाव बकस्वाहा से आए हुए श्रावकों ने पैर की मालिश कर काफी वैयावृत्ति की पर मुनि श्री को जरा भी आराम न हुआ।

ऐसी ही असहनीय पीड़ा में आप सबेरे संघ के साथ बकस्वाहा पहुँचे, वहाँ से बम्हौरी के उबड़-खाबड़, छोटे-बड़े

कंकड़-पत्थरों व कांटों से पटे पड़े कच्चे रास्ते से विहार कर दिया। दुबली गाय को सौ उपाधि वाली बात मुनि श्री के लिए चरितार्थ हो रही थी, लेकिन ये मुक्ति पथ के राही बड़े समता भाव से भेद-विज्ञान के सिद्धांत की तराजू पर स्वयं को तौलते आगे बढ़ रहे थे। हर कदम पर टीस निकलने वाली वेदना हो रही थी। लेकिन जब वे साथ चल रहे साधुओं के पगतलों के खून रिसते घावों को देखते तो अपना पहाड़ सा दुःख उनके आगे राई-रत्तीभर भी नहीं लगता। वे सोचते हुए आगे चलते जाते कि यह शरीर का/पुद्‌गल का विषय है आत्मा को कहाँ कष्ट हो रहा है।

पर शरीर तो शरीर है। जिस सड़क पर डामर नाम मात्र को नहीं थी, उखड़ चुकी थी, उस पर लंगड़ाते पैर घसीट-घसीटकर चलते-चलते तलुए जगह-जगह से छिलकर व खून बहने से लाल हो गए थे। साथ चल रहे श्रावक बंधु चाहते थे कि मुनि श्री पांव ठीक होने तक रास्ते में कहीं रुक जाएँ। पर वह अलबेला मुक्ति पथ का पथिक इतनी सी विषम परिस्थिति में कहाँ बीच राह में रुक सकता था।

वे रुके नहीं, बिना उफ, शिकवे शिकायत किए समता भाव से चलते रहे। दो घंटों में पार कर लेना वाला 12 कि.मी. का रास्ता मुनि श्री ने जैसे-तैसे घिसटते-घिसटते छह घंटों में पूरा किया।

गाँव वालों ने गाँव के एकमात्र डॉक्टर से सभी संतों के पैरों का उपचार करवाया। मुनि श्री की स्थिति किसी से देखी नहीं जा रही थी, पर वे शांत भाव से सारी पीड़ाएँ पी रहे थे। पर देखने वाले कर ही क्या सकते थे। सहना तो भुक्तभोगी को ही पड़ता है।

एक दिन छोड़ फिर वैसे ही कच्चे, कंकर, पत्थरों से पटे उबड़-खाबड़ मार्ग से विहार हो गया। एक साथ परिषह की अग्नि परीक्षा। मुनि श्री के चेहरे पर जरा सी भी शिकन नहीं थी। एक-एक डग रखना भारी पड़ रहा था। तीर सी चुभती बर्फीली ठंडी हवा, शीत का कहर, रोग की पीड़ा, पदतलों में पड़े घाव-तृण स्पर्श भी रुह कंपा देता था- तथापि वे चल रहे थे बड़े शांत भाव से। संयम की पराकाष्ठा थी। साथ चल रहे श्रावकों की आँखों से भी आँसू छलक पड़ते थे, पर वे संयम, तप, त्याग के शूरमा निराबाध अपनी राह पर चल रहे थे व सोच रहे थे- यही मुक्ति पथ है जो इतना आसान नहीं है। सच है जो चलता है वही राह की कठिनाइयाँ समझता है।

नैनागिरि रेशिंदीगिरि

आचार्य श्री कुछ साधुओं के साथ नैनागिरि पहुँच गए। वहाँ विराजित आचार्य श्री देवनंदीजी ने ससंघ उनकी अगवानी की। जब वे पर्वत से नीचे उतर रहे थे तभी हमेशा सबसे आगे रहने वाले मुनि श्री सुनीलसागर देर से लड़खड़ाते पहाड़ पर चढ़ रहे थे। उन्होंने आचार्य श्री का आशीर्वाद प्राप्त किया और पुनः चढ़ने लगे। तब गुरुदेव ने देवनंदीजी से भरे दिल से कहा- यह मुनि सुनीलसागरजी हैं, अभी अस्वस्थ हैं, वरना साथ ही होते।

नीचे आकर वे दोनों आचार्यों के चरणों में बैठ धार्मिक चर्चाओं में शामिल हो गए। आचार्य श्री देवनंदीजी वास्तुशास्त्र के ज्ञाता हैं। आपने उनसे मंदिर के वास्तु का ज्ञान प्राप्त किया, जिसे आपने बाद में 'अनूठा तपस्वी' कृति पृ. 259-260 पर इसे अंकित किया है।

नैनागिरि को रेशिंदीगिरि भी कहते हैं। यहाँ से वरदत्तादि पाँच मुनियों ने सिद्ध पद प्राप्त किया है। यहाँ पर पार्श्वप्रभु का समवशरण भी आया था। आपने यहाँ अवस्थित 50 जिन मंदिरों की वंदना की। पैरों की हालत वैसी ही थी।

यहाँ एक सिद्ध शिला भी है। मुनि श्री ने पैरों में इतनी तकलीफ के बाद भी आहारचर्या पश्चात इस सिद्ध शिला पर बैठकर सामायिक करने का संकल्प लिया। धर्मशाला से एक कि.मी. दूर इस स्थान के लिए मुनि श्री एक श्रावक के साथ उस सिद्ध शिला तरफ चल दिए, किंतु राह भटक जाने के कारण सामायिक नदी में ही एक शिला पर बैठकर करना पड़ी। बाद में कुछ ग्रामीणों की मदद से वे उस सिद्ध शिला की पहाड़ी पर पहुँचे। जाप किया। ध्यान किया।

चिंतन-मनन किया।

नैनागिरि से आप आचार्य संघ के साथ कुंडलपुर वाले बाबा के दर्शनार्थ पहुँचे। बाबा के चरणों में श्रद्धा से अभिभूत अपनी भावनाएँ कविता के रूप में अर्पित की। कुंडलपुर के बड़े बाबा के दर्शन आप गृहस्थावस्था में भी कर चुके थे। तभी से आपकी बड़े बाबा के प्रति असीम श्रद्धा थी।

कुंडलपुर में आठवीं-नौवीं शती से लेकर अठारहवीं शती तक के 63 मंदिर हैं, जिनकी आपने बड़े भक्ति भाव से वंदना की। यदि पगतलों में फूटे छालों के घावों की वेदना न होती तो प्रभु भक्ति में और अधिक अनुकूलता होती।

सागर का गौरव- संस्कृत विद्यालय

कुंडलपुर से गढ़ाकोटा होते हुए आचार्य संघ के साथ आपने 25 जनवरी 2001 को सागर के गणेशप्रसाद वर्णी दिगम्बर जैन संस्कृत महाविद्यालय में शाम चार बजे बड़ी धूमधाम से मंगल प्रवेश किया। यहाँ आचार्य संघ को लाने में महाविद्यालय के पदाधिकारियों की अहम भूमिका रही। प्रवेश के साथ ही प्रवचन में मुनि श्री ने भी अपने विचार रख अपने महाविद्यालय के नाम को चार चाँद लगा दिए, जहाँ से उन्होंने शिक्षा ग्रहण की थी।

वे सब गौरवान्वित थे कि उनकी संस्था का एक मेघावी सुसंस्कारवान छात्र संदीप आचार्य संघ का एक विद्वान, प्रभावी व्यक्तित्व व विलक्षण प्रतिभा संपन्न दिगम्बर संत है जो संयम की साधना की जीवटभरी डगर पर बड़ी आस्था व निष्ठा के साथ चल पड़ा है। वे संदीप के छात्र जीवन की आत्मीयता, सरलता व मानवीय सरोकारों की भूरि-भूरि प्रशंसा करते नहीं अघाते थे। उनका मानना था कि मुनि श्री सुनीलसागरजी सफलता के सोपानों पर चढ़ते हुए, आत्मलक्ष्य को प्राप्त करते इस संस्था को गौरवान्वित करेंगे।

इधर मुनि श्री सुनीलसागरजी अपने छात्र जीवन के मार्गदर्शक, सच्चे हितैषी गुरु प्राचार्य दयाचंद्रजी साहित्याचार्य, मोतीलालजी साहित्याचार्य एवं वीरेंद्रकुमारजी शास्त्री के प्रति कृत-कृत्य थे। उनके मानस पटल पर चलचित्र की तरह अतीत के वे सारे दृश्य उभरने लगे, जब वे उनके सच्चे हितैषी गुरु कितनी तन्मयता से उन्हें ज्ञानामृत का रसपान कराते थे। उनके दिए सच्चे ज्ञान ने ही उनके वैराग्य को पुख्ता किया। उन्हें संयम के पथ पर आरुढ़ होने, उनका मनोबल मजबूत किया। वे अपने लौकिक जीवन के गुरुओं के प्रति कृतज्ञ थे, जिन्होंने उन्हें जीवन के हर क्षेत्र में निष्णात कर निष्ठावान बना दिया था। उसी की बदौलत उन्हें मुनि दीक्षा मिल सकी और वे गुरुवर के चहेते शिष्य बन गए। वे सोच रहे थे आज का उनका संयममय जीवन इन्हीं लौकिक जीवन के गुरुओं के दिए ज्ञान का मधु निचोड़ है जिसकी बदौलत उनका वैराग्य प्राणवंत हुआ है।

महाविद्यालय के मंगल प्रवास में इन विद्वानों के साथ नित्य तत्त्वज्ञान की चर्चाएँ होती थीं, जिसमें श्रुतसागर उलीचा जाता था। विद्वानगण गुरु मुनि श्री सुनीलसागरजी की विद्वता, पकड़, स्मृति के कायल हो गए, जिन्होंने अपनी प्रतिभा की दिन-दूनी रात चौगुनी बढ़ोतरी की। उन्हें तो पहले से ही विश्वास था कि मुनि श्री सुनीलसागरजी असाधारण व अलौकिक, प्रथम दर्जे की प्रतिभा है। आज तो उस ज्ञान भास्कर के आगे वे नतमस्तक थे। वे बार-बार मुनि श्री को विनयावत नमोस्तु करते थे। यद्यपि वे मुनि श्री के संयममय जीवन के प्रति विनय भाव लिए सजग थे किंतु फिर भी उन सभी विद्वतगणों के मन में यह बात चलती रहती थी कि कहीं अपने भूतपूर्व शिष्य के प्रति अत्यधिक आसक्तिवश मुनि श्री का कोई अविनय न हो जाए।

इधर आचार्य भगवन भी इस विद्वतगोष्ठी से बड़े प्रसन्न होते थे व उन विद्वानों से कहते रहते कि ''आप लोग जैन धर्म के रत्नों का उत्खनन ही नहीं कर रहे हैं अपितु उन्हें तराश भी रहे हैं। आपने ऐसा ही महारत्न सुनीलसागर मुझे दिया है। आप जैसे श्रमण संस्कृति के उन्नायकों पर मुझे तो क्या समूचे जैन जगत को नाज है। मुझे विश्वास है कि यह नन्हा

विटप अपने ज्ञान, वाणी कौशल, विनम्रता व आत्मानुशासन से सारी वानस्पतिक सत्ता को अपने में सन्निहित कर लेगा अर्थात भविष्य में परम सत्ता प्राप्ति के लक्ष्य के साथ आध्यात्मिक जगत की महासत्ता को भी धारण करेगा।''

''अंततः मैं तो यही कहूँगा कि आप जैसे पंडितों के समूह की सद्सत्ता ही सुनीलसागर में आई है।'' आचार्य श्री रोज होने वाली इस विद्वत् गोष्ठी से काफी खुश थे।

वर्णी भवन

इन दिनों मुनि श्री सुनीलसागरजी के लिए वर्णी भवन 'महागुरुद्वारा' बन गया था। एक साथ लौकिक जीवन के गुरुओं व संयममय साधना के गुरु का महामिलन शिष्य के शिक्षा ग्रहण साधना के प्रांगण में हो रहा था।

संयोग से पूज्य गुरुदेव का जन्म जयंति दिवस 1 फरवरी 2001 को आया, जिसे वर्णी भवन में मुनि श्री की प्रेरणा से भव्यातिभव्य रूप में मनाया गया। श्री गणेश प्रसाद वर्णी दिगम्बर जैन महाविद्यालय व गणेश वर्णी बाल संस्कार केंद्र के छात्रों ने आचार्य श्री के जीवनवृत्त पर एक नाटक का मंचन किया। इस अवसर पर काव्य रचना कर मुनि श्री ने गुरुवर के प्रति भावभीनी विनयांजली अर्पित की।

कभी-कभी तो भावातिरेक में मुनि श्री भूल जाते कि वे संत हैं, अपितु वहीं के छात्र हैं। वहाँ के चप्पे-चप्पे से जुड़ी यादें जब तब उनके मन-मानस में उमड़-घुमड़ आती। वे अपने माता-पिता व शिक्षकों का उपकार मानते कि उन्हें यहाँ इतनी छोटी उम्र में भी पढ़ने को भेजा व शिक्षकों ने बड़े मनोयोग से उन्हें पढ़ाया वरना वे कभी भी संत नहीं बन सकते। यहाँ तक नहीं पहुँच पाते।

मुनि श्री जितने दिन वर्णी भवन महाविद्यालय में रहे वे सोचा करते कि यहाँ के ये महान गुरु हमेशा उसे प्रगति पथ पर बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करते रहते तथा इन्होंने ही मुझे सफलता प्राप्ति के गूढ़ सूत्र दिए। इन्होंने ही मुझे अपना आत्मबल पहचानने का ज्ञान दिया था। ये हमेशा हमें समझाते थे कि 'मन' में बहुत बड़ी शक्ति है। ऊँचे मनोबल वाला व्यक्ति निश्चित ही अपने लक्ष्य तक पहुँच जाता है। यहीं पर मैं इनसे हमेशा सुना करता था ''मन के हारे हार है, मन के जीते जीत।''

और एक-एक कर वे घटनाएँ उनकी आँखों के सामने चलचित्र की तरह उभर आती जो उनके वैराग्य की मनोभूमि को आर्द्र करती रही और एक दिन विरक्त संत बनने में मददगार रही।

इस महाविद्यालय व उन गुरुओं के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करते सोचते कि वे आज जो कुछ हैं उसकी नींव की ईंट तो यहीं की लगी है। जीवन को निखारने की कला आध्यात्म से आती है जो यहीं से तो सीखी है। इन्हीं लोगों ने समझाया था कि हमारे अंदर अपरिमित शक्ति व उर्जा का भंडार है जो आत्मविश्वास के साथ इस भंडारण का उपयोग करता है, वह सफलता के सोपान पर चढ़ता जाता है। आत्मविश्वास और दृढ़ संकल्प सफलता के दो सबल स्तंभ है। ये लोग हमेशा हम विद्यार्थियों में पढ़ाई के साथ-साथ आत्मविश्वास जगाते रहे तथा संकल्प शक्ति भरते रहे। इन गुरुओं ने मुझमें जो संस्कार, चिंतन व जीवन मूल्यों का रोपण किया, उसी की बदौलत मैंने आत्म कल्याण के मार्ग का न सिर्फ चयन किया, अपितु उस पर चल पड़ा और आज यह संयममय पथ मेरा जीवन है। मैं इन लोगों के लिए यही कहूँगा कि ये उन लोगों में से हैं जो बिना रिश्तों के भी रिश्ते निभाते हैं। ऐसे लोग परम उपकारी होते हैं। मैं इनका हृदय से ऋणी हूँ। मेरे व्यक्तित्व निर्माण व निखार में कभी इन्होंने माली की भूमिका निभाई तो कभी कुम्हार की तो कभी शिल्पी की तो कभी लुहार की। मैं खुशनशीब हूँ कि मुझे गृहस्थ जीवन में इतने महान शिक्षक मिले। देखो जिन्हें कभी मैं नमन करता था, उन्होंने ही मुझे ऐसा ज्ञान दिया, ऐसी बोधि दी कि आज मैं संसार तज संन्यासी बन गया और ये मेरे आगे नतमस्तक हैं।

वर्णी भवन के जिस हाल में कभी वे अपने शिक्षकों के उद्‌बोधन सुनते थे। आज उसी भवन में बैठे उनके मुखारबिंद से झरती अमृतवाणी को सुन समाज कृत-कृत्य था और सारे शिक्षक गदगद। आचार्य श्री के सान्निध्य में वर्णी भवन में जितने भी कार्यक्रम हुए, उन सब में मुनि श्री ने बड़े उत्साह से बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। विरक्ति के इस पड़ाव पर भी उन्हें वर्णी भवन व उस संस्कृत महाविद्यालय से अपनत्व महसूस हो रहा था। राग नहीं। यह सरस्वती का पावन मंदिर उनके लिए सबसे बड़ा तीर्थ था और वे सारे के सारे सम्माननीय शिक्षक इस तीर्थ के रक्षक संरक्षक थे। इसी तीर्थ ने उन्हें आत्मोद्धारक बना दिया था।

प्रवचन विहार- मिलन तीर्थदर्शन

2 फरवरी को आखिर वर्णी भवन से विहार कर आचार्य संघ के साथ आप सागर के कटरा बाजार आ गए, जहाँ आचार्य श्री के पहले आपके भी प्रवचन हुए। आपके प्रवचन से प्रभावित हो लोगों ने गुजरात के कच्छ में आए 26 जनवरी के भूकंप पीड़ितों के लिए काफी दान दिया।

यहाँ से दोपहर में राहतगढ़ के लिए विहार हुआ। जहाँ पहुँचने पर पुष्पगिरि प्रणेता आचार्य श्री पुष्पदंतसागरजी के सुयोग्य शिष्यद्वय मुनि श्री प्रज्ञासागरजी व श्री प्रसन्नसागरजी ने संघ की आत्मीय अगवानी की। मुनि श्री की उन दोनों से विशेष चर्चा हुई। विहार के वक्त वे दोनों कुछ दूर छोड़ने भी गए व अपनी शालीनता का परिचय दिया। वे भी मुनि श्री सुनीलसागरजी की विद्वता, मृदु भाषण, सरलता, सद्‌व्यवहार व निरहंकारिता से काफी प्रभावित हुए।

ग्यारसपुर

वहाँ से मीरखेड़ी व आगरौद होते हुए ग्यारसपुर पहुँचे। वहाँ दक्षिण में पहाड़ी पर मालादेवी व उतरते हुए मैदान में वज्रमठ के दो दिगम्बर जैन मंदिरों के दर्शन किए। उच्चकोटी की प्राचीन कला के कारण ये दोनों मंदिर पुरातात्विक संपदा है। यहाँ पर एक छोटे से संग्रहालय में कई जैन प्राचीन मूर्तियों के अवशेष संग्रहित है। कोई जाए या न जाए इतिहास व पुरातत्व में विशेष रुचि रखने वाले मुनिवर हर छोटे-बड़े उन स्थानों पर जरूर गए जहाँ दिगम्बर जैन प्राचीन मंदिर, प्राचीन मूर्तियाँ व संग्रहालय थे। जिनमें दिगम्बर जैन तीर्थंकरों की मूर्तियाँ, मंदिरों के अवशेष रखे थे। इसके आधार पर आपने अपने यात्रा विवरणों को पुस्तकाकार दे इतिहास के लिए श्रमण संस्कृति की प्राचीनता का दस्तावेज तैयार कर दिया। कालांतर में मुनि श्री ने अपनी पदयात्रा के विवरण जिन पुस्तकों में लिखे हैं, वे श्रमण संस्कृति की प्राचीनता पर शोधार्थियों व आलेख लिखने वालों के हित में मील का पत्थर साबित होगी।

यहाँ से संघ के साथ प्राचीन चंद्रगुप्त मौर्य की नगरी विदिशा पहुँचे। यहाँ मंदिर में 8वीं सदी की व चंद्रगुप्त मौर्य द्वारा स्थापित चंदाप्रभु की मूर्ति विराजमान है।

विदिशा से 10-11 कि.मी. दूर बौद्ध स्तूपों की नगरी सांची होते हुए संघ ने भोपाल की ओर विहार किया। यहाँ भी आपने जैनत्व की प्राचीनता को तलाशा व पाया कि प्राचीन समय में जैन धर्म पूरे देश में कितना अधिक फल-फूल रहा था।

भोपाल प्रवेश

भोपाल के श्रावकों की अगवानी में 17 फरवरी को संघ ने शंकराचार्य नगर में प्रवेश किया। समाज के अनुरोध पर प्रातः 18 फरवरी को भोपाल के हबीबगंज जैन मंदिर के लिए प्रस्थान कर दिया। यहाँ श्रावकों ने संघ की भव्य अगवानी की।

विभिन्न महोत्सवों, आचार्य श्री के व्रत उपवासों के धर्ममय वातावरण में धर्म प्रभावना करते हुए एक माह कहाँ व्यतीत हो गया, पता ही न चला। समाज युवा मुनि की नेतृत्व क्षमता, वक्तृत्व शैली, विद्वता, शिष्टता, सौम्यता का कायल हो गया। युवा लोग तो उनके आगे-पीछे लगे रहते।

18 फरवरी को संघ ने हबीबगंज में मंगल प्रवेश किया था और 18 मार्च आदिनाथ भगवान की जन्म जयंति मना आप संघ के साथ दिगम्बर जैन मंदिर चौक बाजार, प्रवास के लिए आ गए। यहाँ के श्रावकों का काफी आग्रह था।

2600वीं महावीर जयंति/शासन की भागीदारी

आदिनाथ से महावीर जयंति तक नित्य विशाल धर्मसभा में आचार्य श्री के साथ युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी व अन्य संतों के प्रवचन होते रहे। आप अपने संक्षिप्त किंतु सारगर्भित आत्म कल्याणकारी प्रवचनों से समाज को समाधिस्थ दशा तक पहुँचा देते थे। लोग बड़ी तन्मयता से आपके प्रवचन सुनते थे। लोगों को आपके प्रवचनों का इंतजार रहता था, क्योंकि आपके प्रवचन सुन हर किसी को लगता कि आप उसके मन की बात कहते हैं। किंतु आपका उद्देश्य तो समाज को मुक्ति पथ पर आरूढ़ करना था।

17 दिन कब बीत गए पता ही नहीं चला और महावीर जयंति आ गई। 2600वीं महावीर जन्म जयंति होने की वजह से इस वर्ष पूरे देश में बड़ी धूमधाम से मनाई जा रही थी। देश के प्रधानमंत्री अटलबिहारी वाजपेयी इस महोत्सव के अध्यक्ष थे।

भोपाल में भी इस अवसर पर आचार्य श्री की प्रेरणा व मुनि श्री सुनीलसागरजी के मार्गदर्शन में नव्य-भव्य व विशिष्ट रूप में महावीर जयंति 6 अप्रैल को मनाई जा रही थी। सुबह 10 बजे तात्कालीन मुख्यमंत्री श्री दिग्विजसिंह ने आकर आचार्य श्री व संघ का दर्शन-नमन किया। भगवान महावीर की आरती वंदना की। वे आचार्य श्री के चरणों में बैठे विनती करने लगे, ''महाराजजी, हमारे लिए कोई आज्ञा हो?''

आचार्य श्री ''न्याय नीति से शासन करना, यही आज्ञा है एवं आशीर्वाद है।''

मुनि श्री आचार्य श्री के पास बैठे प्रदेश के मुखिया व संघ के मुखिया का वार्तालाप करीब से सुन रहे थे।

इसके बाद आचार्य श्री की आज्ञा से मुख्यमंत्रीजी द्वारा मुनि श्री सुनीलसागरजी की काव्यकृति 'अहिंसावतार' का लोकार्पण किया गया। जिसमें 26 कविताओं के माध्यम से वीर महिमा का गुणगान किया गया है। यहीं मुख्यमंत्री ने जैन समाज को अल्पसंख्यक घोषित किया। व 'अहिंसात्मक उपलब्धियों' के लिए एक लाख रु. का 'अहिंसा पुरस्कार' सरकार की ओर से घोषित किया गया।

दोपहर की धर्मसभा में पुनः मुनि श्री की दूसरी कृति 'कालजयी कविताएँ' का विमोचन किया गया। 6 मई को चौक मंदिर से झिरनो मंदिर के लिए विहार हुआ। 27 मई को वहाँ श्रुतपंचमी महापर्व मनाया गया। यहाँ पर हबीबगंज, चौक मंदिर, झिरनो मंदिर के श्रावकों ने चातुर्मास स्थापना के लिए श्रीफल भेंट किए।

आचार्य श्री ने मई की भीषण गर्मी में उसी दिन 27 मई को भोपाल से सिद्धवरकूट के लिए विहार कर दिया। तब मुनि श्री सुनीलसागरजी के लगातार दो अंतराय हो गए थे। परिषह क्षमता की अग्नि परीक्षा देते हुए वे समता भाव से विहार कर रहे थे। इतना ही नहीं संघ के साथ वे कंकर-पत्थरों से पटे पड़े जंगली रास्ते से मुश्किल से चलकर आगे बढ़ रहे थे।

जस-तस आप आचार्य श्री के साथ रामपुरा नर्मदा के तट पर बने एक हिंदू मंदिर तक पहुँचे, जहाँ रात्रि विश्राम किया। यहीं से सिद्धवरकूट के लिए आगे चलना था। किंतु यकायक तेज आँधी व भीषण मेघ गर्जना के साथ तेज बारिश होने लगी। पानी अधिक गिर जाने से आगे के सारे रास्ते बंद हो गए। अतः आप आचार्य संघ के साथ नाव में

बैठकर सिद्धवरकूट पहुँचने के लिए बाध्य थे। सिद्धवरकूट पहुँचकर आचार्य श्री ने नाव में बैठने के कारण प्रायश्चित स्वरूप एक उपवास किया व सभी साधुओं को प्रायश्चित दिया।

इधर सिद्धवरकूट में प्रवेश के वक्त गुप्तिनंदीजी महाराज के साथ इंदौर, सनावद, बड़वाह आदि शहरों से आए श्रावकगणों ने आचार्य संघ की भव्य अगवानी की व धूमधाम से सिद्ध क्षेत्र पर ले गए।

सिद्धवरकूट तीन दिन मंगल प्रवास के बाद आप संघ के साथ सनावद पहुँचे। अनेक त्यागी, व्रतियों व मुनियों की जन्म भूमि सनावद किसी तीर्थ क्षेत्र से कम नहीं है। श्रमण संस्कृति की उन्नायक महान विभूतियाँ आचार्य श्री वर्द्धमानसागरजी, मुनि श्री श्रेष्ठसागरजी, चारित्रसागरजी, अमेयसागरजी, प्रबोधसागरजी, प्रशस्तसागरजी, क्षुल्लक मोतीसागरजी इसी पावन माटी की देन हैं।

2001 मुनि श्री को अलग चातुर्मास की आज्ञा

22 जून को आचार्यश्री संघ के साथ खरगोन पहुँचे। चातुर्मास स्थापना तिथि निकट जान आपने खरगोन में चातुर्मास करने का निश्चिय किया। किंतु कुछ अनुकूलता न होने पर इरादा बदल दिया। उज्जैन से भी बार-बार श्रावकगण चातुर्मास स्थापना के लिए श्रीफल भेंट करने आ रहे थे। पुनश्च श्रावकों ने श्रीफल भेंटकर चातुर्मास के लिए प्रार्थना की।

तब आपने युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी, श्री सुंदरसागरजी व दो माताजी को उज्जैन चातुर्मास स्थापना का आदेश दे दिया। मुनि श्री सुनीलसागरजी तो आदेश पा हक्के-बक्के रह गए। उनकी आँखों से आँसू बहने लगे। उन्होंने संघ के साथ ही चातुर्मास करने की इच्छा जताई। आखिर वे गुरु थे। उन्होंने अपनी गुरुता जताते हुए कहा, ''आदेश का पालन करो। बाद में संघ में बुला लेंगे। जब तक कंधे पर भार नहीं पड़ेगा, तब तक व्यक्तित्व में उभार नहीं आएगा।''

वे कोई साधारण गुरु नहीं थे। उन्होंने विगत चार वर्षों में शिष्य को अच्छी तरह ठोक-बजाकर परख लिया था। उन्होंने देखा था पैरों में असहनीय पीड़ा होने के बाद भी कांटों-भाटों भरे कच्चे पथरीले रास्ते पर शिष्य सुनीलसागर निराकुल भाव से चल लेता है, बिना उफ किए। यही नहीं लड़खड़ाते-लंगड़ाते नैयनागिरि का पहाड़ भी ऐसी हालत में चढ़ लेता है। पग तलुओं में घाव, खून रिस रहा है, पर धन्य है इसकी समता और धन्य है इसकी सहनशीलता, बिना किसी शिकवा शिकायत के विहार कर लेता है। उन्होंने यह भी देखा था दो-दो दिन लगातार अंतराय होने के बावजूद भीषण गर्मी में दोपहर में भी पद विहार में सबसे आगे रहता है। उन्होंने अति निकट से देखा था कि वह जब चिंतन की गहराइयों में खो जाता है तब बाह्य जगत से उसका तादात्म्य टूट जाता है। और ज्ञान! ज्ञान के क्षेत्र में क्या कहना? उसने गृहस्थ जीवन में जो ज्ञान प्राप्त किया, उसे और गहरा करता रहा और संन्यस्थ जीवन में प्राप्त ज्ञान को आत्मसात कर स्वयं व औरों के जीवन का कल्याण करता रहा है। गुरु के दिशा-निर्देशन में चारित्र को तो उसने तप, त्याग संयम की भट्टी में तपाकर कुंदन कर लिया। जैसे रामकृष्ण परमहंस विवेकानंद के विलक्षण गुणों को जानते थे, गुरु द्रोणाचार्य अर्जुन की धनुर्विद्या को पहचानते थे, गुरु धरसेन, पुष्पदंत व भूतबलि की असाधारण क्षमता पहचान गए थे, वैसे ही तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी शिष्य मुनि सुनीलसागर की अद्‌भुत प्रतिभा व प्रगाढ़ समर्पण भाव व मेधा शक्ति को समझते- जानते थे।

उन्होंने मात्र उज्जैन वासियों के आग्रह व अनुनय-विनय से प्रेरित हो मुनि श्री सुनीलसागरजी, संग सुंदरसागरजी को यह आदेश नहीं दिया था अपितु बहुत दूर की सोची थी। दूरदर्शी आचार्य श्री जानते थे कि शिष्य सुनीलसागर में गजब का आत्मविश्वास, उच्च मनोबल व दृढ़ संकल्प शक्ति हैं। निश्चित ही यह एक दिन उपलब्धियों के कीर्तिमान रचेगा। वह अपनी असीम आत्म शक्ति, अपरिमित उर्जा तथा अपना मूल्य समझता है। अध्यात्म के पथ पर चलते हुए यह इसके लिए स्वयं को निखारने व जगत कल्याण करने का सुअवसर है। योग्य शिष्य को जीवन में आगे बढ़ने के लिए योग्य

अवसर देना गुरु का कर्तव्य है।

इधर मुनि श्री सुनीलसागरजी गुरुदेव के विचारों से अनजान सोच रहे थे कि उनसे अनजाने में हुई किसी त्रुटि का गुरुवर द्वारा दिया जा रहा यह प्रायश्चित तो नहीं। यद्यपि वे संघ का हर कार्य व गुरुदेव का हर कार्य व वैयावृत्ति आगे होकर उत्साह से कर लेते थे। वे इतने कम समय में इतने परिपक्व हो गए थे कि बिना किसी मार्गदर्शक के हर काम करने में सक्षम थे, पर विनीत, शील स्वभावी होने के बावजूद भी पग-पग पर गुरुवर का मार्गदर्शन लेते रहते थे। अतः वहाँ स्वयं की जिम्मेदारी का कभी प्रश्न ही नहीं उठा। गलती होने पर गुरुदेव सब संभाल लेंगे। अतः वे बेफिक्र थे। पितृतुल्य गुरु की छत्रछाया में उन्हें कोई चिंता नहीं थी। वे सोच रहे थे कि इतने बड़े व पुराने दीक्षित साधुओं को छोड़ मुझे ही गुरुदेव ने उज्जैन चातुर्मास की आज्ञा क्यों दी? गुरुदेव का आदेश अब उनके लिए ब्रह्म वाक्य बन गया।

गुरु दर्शन व संघ के बिना अकेले रहने की तो उन्होंने कल्पना भी नहीं की थी। अब चार महीने गुरु दर्शन बिना बिताना कितना कठिन काम है।

एक बार अधीर हो शिष्य ने गुरुदेव की ओर देखा और कहा, ''गुरुदेव!'' शिष्य के जीवन की किताब अच्छी तरह पढ़-बाँच- समझने वाले उन महान गुरु ने इतना ही कहा, ''यह गुरु वचन, आज्ञा और आदेश है, पालन करो।'' गिरी गुदा की तरह अंदर से कोमल, ऊपर से कठोर गुरु से ज्यादा कौन अपने शिष्य को जानता था। उन्हें शिष्य पर पूरा भरोसा था कि वह अपनी विलक्षण प्रतिभा, असाधारण बुद्धि बल, संतोष, वात्सल्य भाव, सहानुभूति, संयम व सदाचार से इस चातुर्मास की गंगा को अच्छे से पार कर लेगा व परंपरा की उज्ज्वलता में चार चाँद लगा देगा। वे इन भावविह्वल पलों में शिष्य से ज्यादा बात कर उसके मनोबल को कमजोर होने देना नहीं चाहते थे। इतने कम समय में इसने अपने गुणों से मेरे तो क्या पूरे मुनि संघ के हृदय में जो जगह बना ली है, दोनों के लिए यह जुदाई असहनीय है (पीड़ादायी है)।

पर विरक्त वीतरागता के पथ पर चलने वाले पथिकों के लिए यह मोह, यह राग कैसा? बिना एक पल गंवाए वह महामनीषी उठ खड़े हुए, अशीषते हाथों से शिष्य को विदा दी।

नयन नीर से गुरुपद पखार शिष्य एक बार जी भरकर गुरु मुख कमल निहार लेना चाहता था, पर डबडबाई आँखों के धुंधले दर्पण में तस्वीर साफ दिखाई नहीं दे रही थी, बिना एक क्षण गंवाए आँखें पोंछ गुरुवर की परम पावन मुख मुद्रा को नैनों के रास्ते हृदय में उतारा, हृदय के सिंहासन पर विराजित किया व मन ही मन कहा, ''गुरुदेव अब आप हमेशा- हमेशा मेरे मनमंदिर में विराजित हो गए हो, अब कैसी दूरी? अब मुझे कोई चिंता नहीं। अब हर समय आप हृदय में विराजमान मेरे साथ हैं।''

तथापि शिष्य संत हैं तो क्या? है तो मनुष्य, मन भारी व कदम भारी थे।

खरगोन से उज्जैन के लिए विहार

पुनः मुनि श्री सुनीलसागरजी ने उज्जैन चातुर्मास के लिए प्रस्थान हेतु भरे नयनों व भारी मन से गुरु चरणों में माथा टेक विदा माँगी। हृदय की व्यथा आँखों से छलकती गुरु चरण पखार रही थी। गुरुवर ने शिष्य को छाती से लगा लिया। शिष्य की सावन-भादौ बनी आँखों से झरते आँसुओं से गुरु ने शिष्य के हृदय की भावना की भाषा पढ़ ली। उन्होंने समय की नजाकत समझ, कठोरता का लबादा ओढ़ कहा, ''अरे तुम विरक्त दिगम्बर संत हो। यह राग और मोह कैसा? कब तक गुरु की वैशाखियों के सहारे चलते रहोगे? लोग तो संन्यास लेने के दूसरे दिन अलग विहार करने की सोचने लगते हैं और तुम्हें तो मैं स्वयं यह आज्ञा दे रहा हूँ। जाओ, मन छोटा मत करो। खूब धर्म प्रभावना करो। मैंने जो तुम्हें दिया है व तुमने जो मुझसे प्राप्त किया है- वह जी भरकर खर्च करो। जगहित में बाँट दो। वैसे तुम स्वयं योग्य हो। तुम्हें कुछ समझाने-सीख देने की मैं आवश्यकता नहीं समझता। दिगम्बर संत तो सिंह प्रवृत्ति के होते हैं। निर्भीक होकर विहार

करो व चातुर्मास करना। सब अच्छा होगा। यही मेरा मंगलमय आशीर्वाद है। और उन महातपस्वी ने दोनों हाथ ऊपर उठाकर आशीर्वाद दिया व तुरंत वहाँ से विहार करने का आदेश दिया।''

एक बार पुनः बड़ी श्रद्धा व आदर से गुरुवर को निहारा, विरह-विह्वल पलों में धैर्य व विवेक की पतवार थामे स्वयं को मजबूत कर, लम्बे-लम्बे डग भरते वह युवा संत, अपने अभीष्ट पथ पर चल पड़े। पीछे धूल के गुबार उड़ रहे थे। धीरे-धीरे वे तस्वीरें आँखों से ओझल हो गई।

विहार

कहने को दोनों मुनियों के लिए रात्रिविश्राम था, पर मुनि श्री सुनीलसागरजी के गुरु संघ के वियोग से बेचैन मन को विश्राम कहाँ? यादों के आँधी-तूफान बार-बार उठ-उठकर आते और अंदर तक हिला जाते। वे उठकर बैठ गए, गुरुदेव की तस्वीर मानस पटल पर उभरी, 'याद आया, वे कहा करते थे मन भटके तो मन के मनकों को माला के मनकों के फेरने में उलझाओ, माला फेरते-फेरते मन प्रभुमय हो जाएगा। सारे दुःख शिकवा शिकायत समाप्त हो जाएँगे।'

तभी उन्होंने देखा मुनि सुंदरसागरजी भी उठकर बैठे थे। इशारों-इशारों में बात हुई। दोनों का एक-सा हाल था और वे दोनों जप-तप-ध्यान में मगन हो गए।

रोज की तरह आज भी पक्षी चहक रहे थे, मुर्गे बांग दे रहे थे। मारुत पंखे झल रही थी, पौ फट रही थी, पर आज की भोर कल तक की सुबहों से अलग थी। पुनः मुनि श्री एक बार अतीत की भँवरों में गोते लगाने लगे।

कल तक विहार में इतने बड़े संघ के साथ चलते थे। आचार्य श्री का आदेश पाते ही सब चल पड़ते थे। वे अक्सर आचार्य श्री के दाएँ-बाएँ ही रहते थे।

आज! किसका आदेश? किसकी आज्ञा? किसके आजू-बाजू चलना? सबेरे के पथ संचलन से पूर्व एक बार फिर शिष्य के नेत्र सजल हो गए। लेकिन अगले ही पल स्वयं को संभाला! मुक्ति पथ का राही तो अकेला ही चलता है। गुजरी हुई जिंदगी को याद करने से कोई फायदा नहीं। प्राची से सूरज की रतनारी रश्मियाँ नया संदेश लेकर उतर रही है। आज से मेरे जीवन की भी एक नई प्रभात शुरू हो रही है। नई गति, नई ताल, नए छंद, नई लय, नई चाल, नए उत्साह के साथ इस नए रास्ते पर चातुर्मास के शुभारंभ के कार्य में अभी इसी पल से जुट जाना है। गुरुदेव ने कहा था, ''कब तक गुरु सान्निध्य की वैशाखियों के सहारे चलोगे? स्वावलंबी बनो।'' ''पर गुरुदेव! आपका सान्निध्य मेरे लिए वैशाखियाँ नहीं जीवन की पाठशाला है व हमेशा रहेगी। उसमें जो कुछ सीखा अर्जित किया है, उसी के संबल व आत्मविश्वास से मैं अकेला इस नव पथ पर चल पड़ा हूँ। आशीर्वाद दो। मेरी यात्रा सफल हो।'' और वह नवपथ का नव राही अपने अंतर मंदिर में विराजे गुरु को नमन कर चल पड़ा अगले पड़ाव पर। जिंदगी के नए मोड़ पर।

राह चलते युवा मन, युवा संत, युवा विचार कई शंका-कुशंकाओं से घिर जाता था किंतु उनकी अपने कार्य के प्रति प्रतिबद्धता आ गई थी। उन्हें लगा अन्य दिनों की बजाय अब उनमें कोई अलौकिक दैवीय शक्ति उत्पन्न हो गई है। वे अपने उद्देश्य के प्रति कटिबद्ध या संकल्पबद्ध हो गए कि चातुर्मास मुझे नहीं, चातुर्मास समाज को कराना है। अपने साथ-साथ समाज को भी, सुधी श्रावकों को भी आत्मकल्याण के पथ पर चलाना है। हे जिनेंद्र देव तू साहस दे, धीरज दे, मैं बिना विचलित हुए अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकूँ। अपने कर्तव्य पथ पर चल सकूँ और अन्यान्यों को भी अपने कर्तव्य, जीवन लक्ष्य की याद दिला सकूँ।

कुछ श्रावकों के साथ मुनि श्री उज्जैन की ओर बढ़ रहे थे। शुरू-शुरू में एक-दो दिन बड़ा सूना-सूना व अकेलापन लगता रहा, पर फिर परिस्थिति को स्वीकार कर लिया। यथार्थ ने जीने की नई राह दिखा दी। पद संचलन के एकांत के अवकाश के क्षणों में उनका मनन, चिंतन व मंथन मुखर हो जाता। **वे अपने जीवन के बही खातों को खोल-**

खोल अपनी अच्छाइयों-बुराइयों का लेखा-जोखा करने लग जाते, इसलिए नहीं कि अपनी अच्छाइयों, गुणों को देख कर फूल कर कुप्पा हो जाएँ, अपितु इसलिए कि इन सद्‌गुणों का समाज निर्माण, समाज कल्याण व आत्मकल्याण में कैसे व कहाँ उपयोग किया जाए। अपनी दुर्बलताओं, कमजोरियों व कमियों को कैसे समाप्त किया जाए। कहीं इनका दुरुपयोग न हो जाए, जिससे चर्या पर धब्बा लग जाए। आत्म विकास का यह स्वर्णिम अवसर है। मुझे अपना दर्पण स्वयं बनना होगा, अपने लिए भी, समाज के लिए भी। आज मैं व्यक्ति और संत दोनों रूपों में समाज के सम्मुख खड़ा हूँ। यदि व्यक्ति के रूप में संत का चरित्र उज्जवल व धवल होगा तब समाज उसे देख, सुधार की दिशा में स्वयमेव अपना कदम बढ़ाएगा। संत का चारित्र समाज के लिए आदर्श व अनुकरणीय होता है। अच्छे व्यक्तियों से ही अच्छा समाज बनता है। अच्छे समाज से ही अच्छे राष्ट्र का निर्माण होता है। अच्छे राष्ट्र से विश्व में सुधार संभव हो सकता है। आज जीवन का बहुत बड़ा फार्मूला उनके हाथ आ गया था, क्योंकि संघ में रहकर कभी ऐसा चिंतन उन्होंने किया ही नहीं था।

वे विहार में सोचते जाते कि मैंने जो कुछ आचार्य गुरुवर से सीखा है उसकी जुगाली तो करना ही है, उसे तो समाज को बाँटना ही है, लेकिन मुझे अब अपने पुरुषार्थ से ही स्वयं व समाज का विकास करना है। मेरी ऐसी कोई चाह नहीं है कि उज्जैन चातुर्मास से मैं अपनी अलग पहचान बनाऊँ, लोग मेरे नक्शे कदमों पर चलें, मेरा जीवन लोगों के लिए मिसाल बन जाए अपितु मेरी चाह है कि मैं समाज के लिए मुक्ति की उस राह का निर्माण कर सकूँ जिस पर डग भरते लोग अपने अभीष्ट लक्ष्य को प्राप्त कर सकें। यदि इस चातुर्मास में मेरे सद्‌प्रयासों व सद्‌प्रेरणा से एक भी आत्मा संयम के पथ पर अग्रसर होती है तब महावीर तपोभूमि उज्जैनी (अवंतिका नगरी) में मेरा चातुर्मास करना, तपस्या करना सार्थक हो जाएगा।

विहार- नगर प्रवेश

और वे संयमी श्रमण गुरु आज्ञा को शिरोधार्य कर उज्जैन की तरफ बढ़ रहे थे। अंततः नगर प्रवेश की पावन बेला आ गई। अभी तक तो उन्होंने गुरुदेव के साथ नगर प्रवेश किया था, उनके पीछे चलते थे, लेकिन इस वक्त वे मुनि श्री सुंदरसागरजी व दो माताजी नगर प्रवेश कर रहे थे। बड़ा अजीब लग रहा था, पर! कुछ कर भी तो नहीं सकते थे।

इधर उत्कर्ष की नगरी अवंतिका, सेठ सुकुमाल की नगरी उज्जैनी, श्रीपाल मैनासुंदरी की महाअर्चना (सिद्धचक्र) की नगरी उज्जैनी के हजारों श्रद्धालु, भक्तगण गाजों-बाजों, धर्म ध्वजा, पताका फहराते जयकारों के साथ युवा संत की अगवानी के लिए उपस्थित थे। गुरु गुणगान के जितने मुँह उतने चर्चे। वे आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के प्रति कृत-कृत्य थे कि उन्होंने अपने प्रियाग्र व कुशाग्र शिष्यों को उज्जैन चातुर्मास के लिए भेजा है।

भव्य अगवानी व उमड़ते जनसैलाब के साथ मुनिद्वय ने नगर प्रवेश कर जिन मंदिर में जिनदेव के दर्शन किए। यहीं 4 जुलाई को चातुर्मास स्थापना की।

इस प्राचीनतम गौरवमयी नगरी में आपने ऐतिहासिक चातुर्मास कर अपनी योग्यता, प्रतिभा से इस ऐतिहासिक नगरी का गौरव बढ़ा दिया।

आपने स्वयं में छिपे अनंत ऊर्जा के भंडार को इस चातुर्मास में प्राणीमात्र पर न्योछावर कर दिया। आपने अपने अलौकिक सामर्थ्य के खजाने को खर्च करना शुरू कर दिया। मन के मर्म को छू लेने वाले, आत्मबोधि देने वाले प्रवचनों से सोए जनमानस को जाग्रत किया। ग्रंथ वाचना द्वारा आपने मुमुक्षुओं की राह में ज्ञान का प्रकाश पथरा दिया। विभिन्न शिविरों के आयोजन द्वारा समाज में संस्कारों के बीजारोपण का कार्य किया। एक सच्चे शिष्य के नाते आपने गुरु द्वारा दिए ज्ञान को प्राणी मात्र के कल्याण में लगा दिया।

उज्जैन में आपकी जितनी भव्य अगवानी हुई थी, आपने अपने दर्शन, ज्ञान व चारित्र की रत्ननिधि से उसे उतना ही भव्य व प्रभावोत्पादक बना दिया। यही कारण था कि आपके प्रवचन सुनने व दर्शनार्थ जनसैलाब तो उमड़ता ही रहा, वी.वी.आई.पी. जैसे नगर पालिका अध्यक्ष, विधायक (वर्तमान/भूतपूर्व), मंत्रियों, अधिकारयों व अजैन साधु-संतों व मंडलेश्वरों का भी आवागमन होता रहा। सभी लोग इन युवा संत की विलक्षण प्रतिभा व असाधारण व्यक्तित्व के कायल थे। आपकी रचनात्मक गतिविधियाँ भी सतत चलती रहीं।

सारे पर्व समाज ने आपकी प्रेरणा से बड़े उत्साह से कुछ हटकर मनाए। संपूर्ण चातुर्मास में आपकी प्रेरणा व दिशा निर्देशन में कई शिक्षाप्रद कार्यक्रम होते रहे। षट्लेश्या पर रंगों के माध्यम से ध्यान शिविर का आयोजन भी हुआ, जिसमें लोगों को आनंद तो आया, परिणामों को सुधारने की सीख भी मिली।

कुल मिलाकर अकेले मुनि श्री सुंदरसागरजी के साथ किया गया उज्जैन चातुर्मास सफल रहा। इसमें आपने अपनी प्रतिभा का पूर्ण दोहन कर समाज कल्याण के लिए अधिक से अधिक देने का प्रयास किया।

इधर आचार्य गुरुवर का चातुर्मास बड़वानी चल रहा था। वहाँ के सारे समाचार आपको मिलते रहते। यहाँ से आपकी गतिविधियों की खबरें गुरुवर तक पहुँचती रहती। वे शिष्य मुनि श्री सुनीलसागरजी की भूरि-भूरि प्रशंसा करते कहते कि ''वह मेरी उम्मीद से भी अधिक खरा उतर रहा है। वह श्रमण संस्कृति का भावी भास्कर सिद्ध हो तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं। उसमें असीम संभावनाएँ हैं।'' ऐसे शिष्यों पर ही गुरु को नाज होता है।

जैसे-जैसे चातुर्मास समाप्ति की बेला निकट आती जा रही थी, मुनि श्री की गुरुदर्शन की व्यग्रता व विह्वलता बढ़ती जा रही थी क्योंकि गुरु दर्शन किए छह महीने होने को आए थे। आचार्य श्री उन दिनों पावापुर सिद्धक्षेत्र में मानस्तंभ महामस्तकाभिषेक में पहुँचने वाले थे।

वहाँ पहुँचने के उद्देश्य से 21 दिसंबर 2001 को गुरुदर्शन की उत्कट अभिलाषा लिए आपने उज्जैन से मंगल विहार कर दिया। ऐसे आध्यात्म के उद्‌भट विद्वान, प्राणीमात्र के परम हितैषी युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी को समाज अपने से जुदा करना नहीं चाहती थी, पर बहते पानी की तरह रमते जोगी को आँखों से अश्रुनीर बहाते हुए विदा करना पड़ा और वह युवा संत अपने व्यक्तित्व व कृतित्व की अमिट छाप उनके सबके हृदयों में छोड़ आगे बढ़ गए। आगे भी तो राह के कांटे-भाटे व आत्मानुप्रेक्षीजन उनका इंतजार कर रहे थे।

इंदौर प्रवास

उज्जैन से 21 दिसंबर 2001 को विहार कर आप इंदौर पधारे। इंदौर में मल्हारगंज बीसपंथी मंदिर में आपका तीन दिन मंगल प्रवास रहा। यहाँ धर्म प्रभावना देख कई मंदिरों से आमंत्रण लेकर श्रावकगण आए व श्रीफल भेंट किए। एल.आई.जी. महावीर चैत्यालय (आचार्य श्री की प्रेरणा से बना एकमात्र चैत्यालय) के सुश्रावकों के अत्यधिक आग्रह पर आपने मल्हारगंज मंदिर से वहाँ के लिए विहार किया।

कांच मंदिर, समवशरण मंदिर के दर्शन कर इंद्र भवन में निर्मित मंदिर में दर्शनार्थ गए। यहाँ स्वनामधन्य इंदौर गौरव पं. श्री रतनलालजी शास्त्री से आपकी गहन धर्म चर्चा हुई। यहाँ से आप कल्याण भवन के मंदिरों के दर्शन कर अनूप भवन पहुँचे, जहाँ वयोवृद्ध श्री देवकुमारसिंह कासलीवालजी ने सपरिवार आपकी भव्य अगवानी की।

उन्होंने मुनि श्री को अपने गृह चैत्यालय के दर्शन करा निर्माणाधीन रजत समवशरण दिखाया। आपने उसमें कुछ खामियाँ देख, सुधरवाने का सुझाव दिया। जब आप समवशरण कक्ष से नीचे उतर रहे थे तब वयोवृद्ध देवकुमारसिंह कासलीवाल धीरे-धीरे सीढ़ियाँ उतर रहे थे। उनके घुटनों में काफी तकलीफ हो रही थी। तब आपने वात्सल्य भावना से उनका हाथ थाम लिया व नीचे उतरने लगे। तब उनका बेटा अजित कासलीवाल आगे आया व बोला, ''लाइये

महाराजजी मैं इनका हाथ पकड़ लेता हूँ।''

मुनि श्री ने बड़ा गूढ़ जवाब दिया, ''तुम्हारे पकड़ने व हमारे पकड़ने में बड़ा अंतर है। तुम इनका हाथ पकड़ोगे तो संसार की तरफ खीचोगे व हम पकड़ेंगे तो मोक्ष की तरफ ले जाएँगे।'' मुनि श्री के इस उद्‌गार से प्रभावित सभी के चेहरे खिल गए और कासलीवालजी तो गदगद हृदय से गुरुचरणों में गिर गए। जाने को उद्दत गुरुचरण पकड़ लिए व विनती करने लगे, ''महाराजजी अगला चातुर्मास यहीं करिये।''

मुनि श्री ने विनोद में कह दिया, ''यहीं करवाओ तो सोचूँगा।'' पर देवकुमारसिंहजी कहाँ मानने वाले थे तपाक से बोल पड़े ''मैं यहीं करवाऊँगा। आप बस हाँ कर दीजिएगा।'' देवकुमारसिंहजी मुनि श्री को उदासीन आश्रम की ओर ले जा तो रहे थे पर क्षणभर के इस सान्निध्य में गुरु वात्सल्य से इतने अभिभूत हो गए कि विदा की बेला में वे अपने आँसुओं को नहीं रोक पा रहे थे। उन्हें लग रहा था उनका बेटा उनसे दूर जा रहा है।

यहाँ से आपने उदासीन आश्रम तुकोगंज जिनमंदिर के दर्शन किए। यहाँ पर आपने अमर ग्रंथालय व कुंदकुंद ज्ञानपीठ का अवलोकन किया। ब्रह्मचारीगण के आग्रह पर रात्रि विश्राम वहीं पर किया। सिरि भूवलय ग्रंथराज पर काम कर रहे डॉ. महेन्द्र मनुज ने इस ग्रंथराज के बारे में मुनि श्री को रात्रि में दो घंटे तक जानकारी दी। जिसे नौवीं सदी में आचार्य श्री कुमुदेंदु द्वारा केवल अंकों में लिखा गया है। इस अद्‌भुत ग्रंथ में 718 भाषाएँ, सभी विद्याएँ, संपूर्ण जैनागम व अनेक विलुप्त ग्रंथ गर्भित हैं। इस ग्रंथ की अनेक विशेषताएँ हैं।

यहाँ से चल इंदौर में एकमात्र गुरु स्मृति चिह्न, उनकी प्रेरणा से निर्मित एल.आई.जी. कॉलोनी महावीर चैत्यालय के दर्शन कर, दो दिन रुके। यहाँ आपके मन को असीम शांति का अनुभव हुआ। लगा गुरु निश्रा में ही आ गए हों। इंदौर में आपके दर्शन के लिए भक्तों की भीड़ उमड़ पड़ी। कॉलोनियों से लोगों में आपको ले जाने की होड़ मची थी, किंतु समयाभाव होने के कारण यहाँ से आप विजयनगर पंचबालयति मंदिर के दर्शन कर सात जनवरी 2002 को ऊन पावागिरि पहुँचे, जहाँ पहले से ही गुरुदेव विराजमान थे। आचार्य श्री व सिद्धक्षेत्र की वंदना के साथ-साथ महोत्सव के सभी कार्यक्रमों में आपने उत्साहपूर्वक भाग लिया। गुरु दर्शन से मन गदगद व रोम-रोम पुलकित था।

मुनि श्री के दृढ़ आत्मविश्वास एवं उत्कृष्ट उपलब्धियों को देख 10 जनवरी 2002 को विहार से पूर्व आचार्य श्री ने मुनि श्री सुनीलसागरजी व सुंदरसागरजी को पुनः महावीर जयंति तक निमाड़ क्षेत्र में ही धर्म प्रभावना का आदेश दिया और उन्होंने कसरावद के लिए विहार कर दिया।

आचार्य श्री के मंगल आशीर्वाद से मुनि श्री का उत्साह द्विगुणित हो गया और ये युवा मुनि और अधिक जोश से समाज हित कार्य करने लगे। उन्हें अपने अंतस में लहराती 'महाशक्ति' के 'महासागर' का आभास होने लगा। वे अपने अंतर में छुपे उर्जा के अजस्त्र भंडार को लुटाने उद्धत हो गए। उनमें समतामूलक समाज निर्माण की भावना प्रबल थी।

ऊन पावागिरि

आचार्य श्री का तो विहार हो गया, अब ऊन पावागिरि में मुनि श्री सुनीलसागरजी, सुंदरसागरजी के अलावा श्री गुप्तिनंदीजी व गणिनी आर्यिका विजयमति माताजी रह गए।

गुरु सान्निध्य का वह बसंत तो पलक झपकते ही बीत गया। अब पुनः स्वयं की जिम्मेदारियों के साथ जीना शुरू कर दिया। संघ के साथ रहने के अनुभव, समन्वय, सामंजस्य, समता व सहनशीलता जैसे गुणों में उनका उज्जैन का चातुर्मास निर्बाध संपन्न हो गया। यद्यपि उनमें दृढ़ आत्मविश्वास व संकल्प शक्ति तो पहले से ही थी, तभी तो वे संयम के कठोर पथ पर चल दिए। अब वही शक्ति वृद्धिगत होती उन्हें प्रगति पथ पर आगे बढ़ने के लिए और अधिक प्रेरित करने लगी।

लक्ष्य विहीन व्यक्ति जीवन के चौराहे पर बैठा सोचता रहता है किधर जाऊँ? क्या करूँ? ऐसे अनेकों विकल्पों में घिरा, पथ भ्रमित हो भटकता, अमूल्य जीवन खो देता है! किंतु युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी जैसे संत जिनका लक्ष्य मात्र और मात्र आत्मकल्याण व विश्व कल्याण था, अभीष्ट लक्ष्य के साथ जीवन पथ पर अग्रसर हो गए। उन्हें हमेशा इस बात का ध्यान था कि एक साधारण मनुष्य अपने श्रेष्ठ कार्यों से महापुरुष बन जाता है और श्रेष्ठ साधु व सज्जन पुरुष भी अपने निकृष्ट कार्यों से पतित हो, शैतान बन जाता है। अतः वे हर पल अपने दर्शन, ज्ञान व चारित्र पर सम्यक्त्वता का पहरा बिठाए रखते ताकि भूल से भी कोई भूल न होने पाए। अब अपना गुरु उन्हें स्वयं बनकर स्वयं का मार्ग प्रशस्त करना था। वाणी के धनी, प्रतिभावान, सहृदय संत, जन हृदय में सहजता व सरलता के प्रतीक बने आगे बढ़ रहे थे।

* * *

अभी तक मुनि श्री सुनीलसागरजी ने गुरु सान्निध्य की खुशी व धार्मिक कार्यक्रमों की व्यस्तता के कारण अपना (देह) ख्याल ही नहीं किया था। बिना विश्राम के अस्त-व्यस्त विहार की लंबी चलाई, तिस पर ठिठुरा देने वाली ठंडी व अत्यधिक थकावट के कारण आपकी देह निढाल सी हो गई। सर्दी, खांसी, बुखार के साथ आधा शीशी (आधा सिर दर्द) की समस्या हो गई। सूरज उगते ही सिर की पीड़ा भयंकर होती जाती। असहनीय पीड़ा व ज्वर से वे छटपटाने लगते। भले ही स्वयं का आत्म नियंत्रण था पर देह तो देह ही है। चाहे श्रमण की हो या श्रावक की पीड़ा तो सबको एक सी ही सहनी पड़ती है। आप समता भाव से सब कुछ सहन कर रहे थे।

साधुओं और श्रावकों से आपकी पीड़ा देखी नहीं जा रही थी। सबने अपने- अपने तरीके से आपका उपचार व खूब वैयावृत्ति की। अंततः बाह्य निमित्तों व मुनि श्री के असाता वेदनीय कर्म की निर्जरा के पश्चात ही आराम मिला। धीरे-धीरे जीवन की गाड़ी पटरी पर आने लगी।

अहिंसा महाभियान

आचार्य श्री के विहार पश्चात गणिनी आर्यिका विजयमती माताजी का केशलोंच हुआ। बीमार होने के बावजूद भी मुनि श्री ने उपदेश दिया। आपके मूल्यपरक उपदेश का समाज पर अच्छा प्रभाव पड़ा। सभा विसर्जन पश्चात मुनि श्री सुनीलसागरजी ने मुनि श्री सुंदरसागरजी व माताजी के साथ लोनारा की ओर विहार कर दिया तथा गुप्तिनंदीजी ने भीकनगाँव की ओर तथा माताजी वहीं रुक गईं।

प्रथम रात्रि विश्राम कुमुदवाड़ा में किया, जहाँ पाटीदार समाज की बहुलता है। प्रातः लोनारा तक विहार (7 कि.मी.) में पूरा गाँव साथ चल रहा था। वहाँ एक जैन मंदिर व 6-7 जैन घर ही हैं। आपके प्रवचन वहाँ के राम मंदिर में अहिंसा व दया पर हुए। लोनारा के साथ आसपास गाँव के लोग भी प्रवचन में उमड़ते थे।

मुनि श्री के प्रवचनों व उनकी उदारता तथा सहृदयता से प्रभावित हो ग्रामीणजन उनके अति निकट आ गए। मुनि श्री के दया व अहिंसा पर दिए प्रवचनों से प्रेरित हो कुछ ग्रामीणों ने मुनि श्री से कहा ''यहाँ (लोनारा में) तो खास हिंसा नहीं होती पर पास के बगवा गाँव में सैकड़ों बकरों की बलि दी जाती है। आप इस प्रथा को बंद करवा दीजिए। यहाँ पिछले वर्ष से ही यह कार्यक्रम शुरू हुआ है।''

तभी एक युवक ने कहा कि ''हमारे इस गाँव में भी सूअर जिंदा जला दिए जाते हैं व बाजार के दिन बकरे काटे जाते हैं। पहले हमारे गाँव का पाप कर्म बंद होना चाहिए इसके बाद अन्य जगह का।''

मुनि श्री पशुबलि व हत्या की बात सुन अंदर तक द्रवित हो गए। उन्होंने त्वरित निर्णय लिया कि मुझे मूक पशुओं की हत्या रोकना चाहिए व ग्रामीणों के अंधविश्वास को तोड़ना चाहिए।

मुनि श्री लोनारा में दो-तीन दिन ही रुकने वाले थे किंतु हजारों मूक पशुओं की बलि प्रथा (निमाड़ क्षेत्र में) की बात सुन वे लोनारा में ही रुक गए। लोनारा व कुमुदवाड़ा के अधिकांश ग्रामीण मुनि श्री के परम भक्त हो गए थे। वे मुनि श्री की बातों से सहमत थे। अतः ग्रामीणों का साथ व विश्वास ले इसी गाँव से उन्होंने अपने 'अहिंसक आंदोलन' की शुरुआत की। युवा मुनि ने गाँव के युवकों में जोश फूंक दिया। अधिकांश ग्रामीण अहिंसा के पक्षधर थे अतः रोज दोपहर में दो से चार बजे तक मुनि श्री के अहिंसा, दया व करुणा पर जोशीले प्रवचन होते थे। मानो उन्होंने अहिंसा की रणभेरी बजा दी। आसपास के गाँवों से लोग ट्रैक्टरों में भर-भरकर मुनि श्री के प्रवचन सुनने आते थे। हर किसी के मुँह पर 'नंगे बाबा' का ही नाम था।

मुनि श्री ने योजनाबद्ध तरीके से अपना अहिंसा व जीवदया अभियान शुरू किया। जीव दया पर उनके कारुणिक व मर्मस्पर्शी जोशीले प्रवचन दोपहर दो से चार बजे तक चलते थे। सुनते-सुनते लोगों की आँखों से आँसू बहने लगते। माँस भक्षण व जीव हत्या के दोष से हृदय पश्चाताप से भर जाता। लोग रोते-रोते गुरु चरणों में गिर जाते और अपने पापों का प्रायश्चित करते। प्रवचन पश्चात गुरुचरण छूने लोगों की कतार लग जाती। कई तो परिवार के परिवार ने जैन आचरण अपना लिया जो आज तक अपने नियमों पर दृढ़ हैं व मुनि श्री के दर्शन को आते हैं। कई लोगों ने मांस-मदिरा का त्याग कर दिया। इस 'महा अभियान' में मुनि श्री सुंदरसागरजी ने भी मुनि श्री सुनीलसागरजी का साथ दिया। अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता, पर भाड़ में फूटने वाला हर चना अकेला ही होता है। मुनि श्री ने अभियान तो स्वयं छेड़ा, पहला कदम स्वयं उठाया, पर सबको साथ लेकर।

वे तुलसीदासजी के दोहों से अपनी बात प्रारंभ करते-

'दया धरम का मूल है पाप मूल अभिमान
तुलसी दया ना छोड़िये, जब तक घट में प्राण।'

यहाँ वर्णी भवन (स्कूल) में पढ़ी लौकिक शिक्षा भी इस अभियान में काफी काम आ रही थी। वे अपने प्रवचनों में बड़े-बड़े संतों, महंतों, कबीर, तुलसी, सूर, गुरुनानक आदि की जीव दया व करुणा पर कही उक्तियाँ व उनके इस क्षेत्र में किए कार्यों के दृष्टांत दे देकर जन हृदय में अहिंसा की भावना कूट-कूटकर भर रहे थे। मानो लोनारा में आने का उनका एकमात्र लक्ष्य 'पशु बलि' व 'पशु हत्या' रोकना ही हो गया था।

वे सोचते, मैं भगवान महावीर का अनुयायी हूँ। उन्होंने पशु बलि रोकने के लिए राजभवन के सुखों का उत्सर्ग कर दिया और विश्व में दया व अहिंसा का डंका बजा दिया। संयोग कहो या इन निरीह, बेजुबान, निरपराध पशुओं का पुण्य कहो, मेरा यहाँ आना हुआ। जितना संभव हो सकेगा, मैं इस कुप्रथा को रुकवाने की चेष्टा करूँगा।

मुनि श्री के प्रवचनों को सुन-सुन एक विशाल जनसमुदाय इस अहिंसा अभियान के लिए उठ खड़ा हुआ, किंतु कतिपय शक्तिशाली लोग, पोंगे पंडित जो लोगों को अपनी दुकानदारी चलाने के लिए बरगलाने लगे। मुनि श्री के विरुद्ध जहर उगलने लगे। मुनि श्री ने सोचा, मात्र बातों से, प्रवचन से काम नहीं चलेगा न पूर्ण होगा। जन हृदय में यद्यपि दया अहिंसा के संस्कारों का बीजारोपण तो हो गया है, पर मेरे यहाँ से जाने के बाद पुनः ये लोग थोड़े समय बाद पुनः उसी रास्ते पर चल पड़ेंगे। अतः अब मुझे रचनात्मक कदम उठाना होगा।

मुनि श्री के इस अभियान के चर्चे दूर-दूर तक होने लगे। मीडिया ने भी इसे खूब प्रसारित-प्रचारित कर हवा दी। उनसे प्रेरित होकर गायत्री परिवार एवं अनेक संस्थाएँ व संगठन मुनि श्री से जुड़ गए।

बगवा के मेले में दी जाने वाली पशु बलि रोकने के लिए आपने बगवा के वरिष्ठजनों व सरपंच को बुलाकर चर्चा की। लेकिन बहुत बुलाने के पश्चात भी बंजारा प्रमुख पन्नालाल नहीं आया।

अंततः लोनारा से बगवा जो 5 कि.मी. दूर है, लोनारा से बगवा तक अहिंसा रैली का आयोजन कर बगवा में धर्मसभा

करने का निश्चित हुआ।

13 जनवरी 2002 को एक विशाल रैली में सभी जाति, धर्म व वर्ग के विभिन्न गाँवों के हजारों लोग मुनि श्री के पीछे पैदल चल पड़े। बगवा के मेला प्रांगण में 16 जनवरी सायंकाल विशाल धर्मसभा का आयोजन हुआऔर प्रवचन दया धर्म पर हो रहे थे। मुनि श्री ने जीव दया संबंधी इतने कारुणिक प्रसंगों का हृदयस्पर्शी वर्णन किया कि आसपास गाँवों से व दूर-दूर से आए 4-5 हजार ग्रामीणों की आँखों से अश्रुधार बह चली। बगवा व टांडा की आबादी करीब तीन हजार ही है। पशु बलि के झंडेदार, अहिंसा के घोर विरोधी बंजारे भी (जो उस क्षेत्र में बहुसंख्यक हैं) मुनि श्री के प्रवचन सुनने अधिकाधिक संख्या में आए।

दूसरे दिन शीतलहर की ठिठुरन में भी सुबह 8 बजे उसी मेला प्रांगण में प्रवचन हुआ। आज का प्रवचन हिंसा के विरोध में और अधिक सख्त, क्रांतिकारी व जोशीला था। महावीर के ये महावीर अनुयायी खम्म ठोककर इस अहिंसा महाभियान में कूद पड़े।

अपनी धर्मसभा में उपस्थित हजारों श्रोताओं (जो कि अजैन थे) से कहा, ''आप जिस जगदम्बा को बलि चढ़ाते हैं उस जगदम्बा का अर्थ होता है जगत की अम्बा अर्थात पूरे विश्व की माता। अर्थात वह सारे संसार के, सारे प्राणियों की माता है। हमारी, तुम्हारी, पशु-पक्षियों, जलचर, थलचर, नभचर सभी जीवों की माता हुई।'' आपने श्रोताओं से बड़े मार्मिक शब्दों में पूछा, ''आप ही बताइये क्या कोई माता अपनी संतानों का खून पीती है? संतानों का खून पीकर तृप्त होती है?''

श्रोताओं की ओर से जोर-जोर से आवाजें आने लगी, ''नहीं, कदापि नहीं।''

मुनि श्री ने कहा कि ''आप मूक पशुओं की बलि के नाम से निर्ममता से हत्या करते हैं। उनके श्राप के कारण ही आप तीन वर्ष से अनावृष्टि व दुर्भिक्ष जैसी स्थिति की पीड़ा सहन कर रहे हैं। यदि आपने पशु हिंसा (बलि देना) नहीं रोकी तो आगे इससे भी भयानक हाल होंगे।''

''कुछ पाखंडी साधुओं/बाबाओं ने पैसा कमाने के लिए देवी-देवताओं को प्रसन्न करने के नाम पर यह पशु बलि प्रथा चला रखी है। जिसे 'माँ' कहते हो उस जगदम्बा के सामने उसकी संतानों को मारते हो- माँ दुःखी होगी या प्रसन्न।''

''माँ तो भक्तों की भक्ति व साधना से खुश होकर आशीर्वाद देती है। मन की मुरादें बिना माँगे ही पूरी कर देती हैं। आपके शब्दों में कहूँ तो माँ भक्ति की प्यासी है, न कि खून की। अतः माँ के सामने यह जघन्य अपराध करना छोड़ें। जीव हिंसा न करने का प्रण लो। देखिए फिर आपके यहाँ पानी बरसता है या नहीं। निश्चित पानी बरसेगा, यह मेरा निमाड़ की जनता को इस विशाल धर्मसभा में आशीर्वाद है।''

''यदि आपको बलि देना है तो पाखंड की बलि दो, बकरों की, मूक पशुओं की नहीं।''

दूरदर्शी मुनिवर ने मेला प्रारंभ होने के ठीक एक माह पहले यह जन जाग्रति अभियान छेड़ा था। पशु बलि प्रथा उस क्षेत्र की जड़ों में गहराई तक पहुँच गई थी, जिसे समाप्त करना कोई आसान काम नहीं था। अतः मुनि श्री ने आगामी 17 फरवरी को होने वाले मेले को लक्ष्य बनाकर अपना अभियान शुरू किया था।

जिस जगह पशु बलि चढ़ाई जाती थी, उसी मेला प्रांगण में 'पशु बलि प्रथा' के विरोध का सूत्रपात कर मुनि श्री सुनीलसागरजी सैकड़ों लोगों के साथ पद संचलन कर लोनारा आ गए।

मुनि श्री की बातों का पूरे निमाड़ क्षेत्र पर (जिसे मीडिया ने काफी प्रचारित-प्रसारित किया) इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि 60-70 प्रतिशत लोग बलि प्रथा के विरोधी हो गए व मुनि श्री के पास आ-आकर अहिंसा का संकल्प लेने लगे।

ज्यों-ज्यों मेला निकट आता गया, त्यों-त्यों मुनि श्री अपने प्रवचनों में पशु बलि के विरोध में उग्र होते गए। मुनि श्री

सुंदरसागरजी का उन्हें पूर्ण सहयोग मिल रहा था। वे भी अहिंसा के बारे में प्रवचन दे रहे थे। मुनि श्री के मुखारबिंद से निकलते धुआंधार प्रवचनों को सुनने सारे निमाड़ क्षेत्र से लोगों की भीड़ जुटती थी।

अधिकांश लोग यह हिंसा नहीं चाहते थे किंतु समाजों के प्रमुखों के भय से बोल नहीं पाते थे। उन्हें जबरन व मजबूरन यह कृत्य करने को बाध्य होना पड़ता था। उन्हें तो लग रहा था मुनि श्री उनकी तरफ से बोल रहे हैं। उन्हीं के मन की बात कर रहे हैं।

वे चाहते थे कि कैसे भी हो ये बाबा पशु बलि रुकवा कर पशुओं की खून की बहती नदी को रोके तथा उन्हें दुष्ट बाबाओं व ढोंगी साधुओं के चंगुल से किसी भी तरह छुड़ाए। जहाँ हजारों समर्थक उठ खड़े हुए थे, वहीं कुछ विरोधी भी थे। वे कहते थे , ''कौन हमारी पुरातन पशु बलि प्रथा को रोक सकता है।''

मुनि श्री को भी उनके परमभक्त शिष्य (अजैन) पल-पल की सूचना देते रहते थे। मुनि श्री कहते थे कि ''अच्छे लोग अधिक होते हैं, बुरे लोग कम। ये कम लोग ही अपने बुरे व गलत कामों से समाज की नाक में दम कर देते हैं। समाज सुधार करना है, समाज से बुराइयाँ हटाना है तो बुराइयों से नफरत करो, बुरे लोगों से नहीं। पापों से घृणा करो पापी से नहीं।''

मेला प्रारंभ के एक माह पहले 16-17 जनवरी को ही आपने बगवा मेले में (17 से 28 फरवरी के बीच) होने वाली पशु बलि के विरोध में अहिंसा का शंखनाद कर दिया। आपको बताया गया कि ''बगवा में इन ग्यारह दिनों में बगवा व आसपास के गाँवों से ही नहीं, दूर-दूर से आकर बकरों की बलि देते हैं। इस प्रकार वहाँ हजारों बकरे कटते हैं।'' यह सुन मुनि श्री का रोम-रोम काँप उठा।

लोनारा पहुँच कर मुनि श्री चुप नहीं बैठे। इधर मीडिया की सक्रियता से अपने आप उनके अभियान का प्रसार हो रहा था, लेकिन वे इतने से संतुष्ट नहीं थे। वे इस हिंसा को जड़ से समाप्त कर देना चाहते थे।

फिर से लोनारा के राम मंदिर में यथावत प्रवचन शुरू हो गया। यद्यपि मुनि श्री एकांत में केशलोंच करते थे किंतु जन भावना को ध्यान में रख व गाँववासियों के आग्रह पर 20 जनवरी 2002 को आपने जनसभा में केशलोंच किया, जिसमें शास्त्र भेंट की बोली स्थानीय हुकुमभाई पटेल ने ली तथा मद्य, मांस, मधु व तम्बाकू का त्याग किया। उनके साथ अनेक लोगों ने त्याग किया। केशलोंच में खरगोन जिले के अनेक श्रेष्ठी व सम्माननीय जैन (कम) अजैन (अधिक) आए थे, जिन्होंने विनयांजलि अर्पित की। जिला स्तरीय व जनपद के राजनेताओं की उपस्थिति में दस स्थानीय परिवारों ने जैन आचरण स्वीकार किया।

आपकी प्रेरणा, मार्गदर्शन, प्रयासों से अहिंसा आंदोलन का दूसरा चरण प्रारंभ हुआ। पद संचलन आपके जीवन की अभिन्न चर्या है अतः आपने सोचा कि भगवान महावीर की तरह गाँव-गाँव भ्रमण कर जन-जन से संपर्क कर अहिंसा के प्रति जन जागृति पैदा की जाए। एक जगह बैठकर उपदेश देने से काम नहीं चलेगा।

आपने सोचा कि वक्त पर पुरुषार्थ का सही उपयोग करने से लक्ष्य की प्राप्ति निश्चित होती है। 17 फरवरी बसंत पंचमी से बंजारों की बलि प्रथा का जघन्य हिंसक काम शुरू होने वाला था। जिस कुप्रथा की जड़ें जमीन में इतनी गहरी पैठ बना चुकी हो तथा बंजारा जाति क्षेत्र की सबसे दबंग जाति हो, जो संख्या में अधिक हो, उसके इस काम को रोकना टेढ़ीखीर था। क्षेत्रों के पंचों व सरपंचों का कहना था महाराजजी इन बंजारों से पार पाना कठिन है। आकाश के तारे तोड़ लाने व समुद्र में आग लगा देने का जोश व उत्साह रखने वाले युवा संत कब मानने वाले थे। उनके जीवन की डिक्शनरी में असंभव शब्द तो था ही नहीं। वे तो हमेशा यही कहते- ''हमें अपने लिए कुछ नहीं चाहिए। हम तो इन बेजुबान पशुओं की रक्षा करना चाहते हैं।''

ग्राम सम्पर्क जनजागृति

बिना विलंब किए 26 जनवरी 2002 से आपने जीवों पर करुणा व संवेदना जगाने 'ग्राम संपर्क जनजागृति' अभियान शुरू कर दिया।

लोनारा में प्रवचन के बाद आपने डोंगरगाँव व दशंगा में जाकर प्रवचन किए। साथ में सैकड़ों ग्रामीण चल रहे थे। आसपास के गाँवों के ग्रामीणजन अपने यहाँ की भी हिंसक व अन्य बुराइयाँ मिटाने, युवा मुनि को आग्रह, अनुनय विनय करते रहे। मुनि श्री तो स्वयं ही एक स्वस्थ अहिंसक व संवेदनशील समाज का निर्माण चाहते थे। वे हर गाँव जा रहे थे।

दशंगा में रात्रि विश्राम कर डाबरी जाना था, बेगंदावासी आ गए। मुनि श्री ने उन्हें निराश नहीं किया। 3 कि.मी. अलग से चलकर वहाँ गए। वहाँ लोगों को मद्य, मांस, तम्बाखू, बीड़ी का त्याग करवा प्रवचन दे डाबरी पहुँचे। जहाँ सोमवार को हाट के दिन 25-30 बकरे कटते हैं।

आपने जीव हिंसा पर बड़ा कारुणिक प्रवचन दिया जिसे सुनकर पत्थर भी पिघल जाए। ग्रामीणों का हृदय परिवर्तन हुआ। आपने उनका भय दूर किया कि बलि न देने से माताजी नाराज हो जाएगी और उनका अहित हो जाएगा। आपने भोले भाले ग्रामीणों को समझाया कि ''हिंसा कोई धर्म नहीं है। अहिंसा व दया सबसे बड़े धर्म हैं। हिंसा तो महापाप है। हम स्वयं जीये और औरों को भी जीने दें। सबको जीने का अधिकार है, फिर पशु हत्या (मारने) का अधिकार किसने दिया? आप इन्हें मारो नहीं, इन्हें जीवन दान दो। आप इन्हें इतनी क्रूरता से मारते हो, अगले जन्म में ये मनुष्य बनेंगे और आप बकरा! और ये भी आपको उतनी क्रूरता से मारेंगे! सोचो! क्या तुम भी बकरा बन कटना चाहोगे?''

लोगों की संवेदना आँखों से बह निकलती थी व कई-कई लोग उसी वक्त हिंसा न करने का संकल्प लेने लगे।

28 फरवरी को आप बामंदी पहुँचे। वहाँ जैन परिवार व अप्रतिष्ठित मंदिर था। जिसे श्रावकों के आग्रह पर 15-17 मई को प्रतिष्ठित करवाने का कह 8 फरवरी को खरगोन के लिए विहार कर दिया। जहाँ आप 10 फरवरी को पहुँचे। आपके इस 'अहिंसा ग्राम संपर्क अभियान' से 90 प्रतिशत जनबल अहिंसा के पक्ष में हो गया। 17-18 संगठन भी आपके इस अहिंसक अभियान से जुड़ गए।

इधर मेला उत्सव निकट आ रहा था। उधर आपका अभियान जोर पकड़ता जा रहा था। अब जो 10 प्रतिशत बलि देने के पक्षधर थे उनका हृदय परिवर्तन करना था। अब आपके साथ बहुत बड़ी शक्ति थी जिसका फायदा उठा बड़े-बड़े नेताओं व केंद्रीय मंत्रियों से इस संबंध में फोन से चर्चा की। मेनका गाँधी ने अच्छा सहयोग दिया। हाईकोर्ट की भी शरण ली गई। शाम को णमोकार महामंत्र का सामूहिक पाठ होने लगा।

अंततः धीर-वीर गंभीर मुनि श्री का पुरुषार्थ परवान चढ़ा और (मेले 17 फरवरी के मात्र तीन दिन पहले) 14 फरवरी को प्रातः इंदौर हाईकोर्ट के फैसले का परिणाम पता चला कि 17 फरवरी से 28 फरवरी तक बगवा में होने वाली 'बलि प्रथा' पर रोक लगा दी गई है। लोगों में हर्ष व्याप्त हो गया।

लोगों का कहना था कि महाराजजी ये शेष हिंसक लोग इतने दबंग हैं कि अपनी झूठी आन-बान-शान के लिए हाईकोर्ट के आदेश को कचरा पेटी में फेंक अपने हिंसक कामों को अंजाम देने से नहीं चूकेंगे। इनकी दबंगता के आगे शासन- प्रशासन भी कुछ नहीं कर सकता। नेताओं को वोट चाहिए। इन्हें तो जेल जाने से भी गुरेज नहीं है। अतः हमें कोर्ट के आदेश को अंतिम नहीं मानना चाहिए। आपको मेला प्रांगण या आसपास के गाँव में रहना चाहिए। लोग आपकी बातें मानते हैं, नेताओं, कार्यकर्ताओं की नहीं। अतः अब इन शेष दिनों आपको उस क्षेत्र में होना चाहिए।

मुनि श्री को यह बात रास आई तथा इससे पूर्व आपने उस क्षेत्र में रहने का ग्रामीणों को वचन भी दिया था। अतः 14 फरवरी को ही आपने त्वरित पद विहार लोनारा की ओर कर दिया।

मात्र एक दिन में 38 कि.मी. की दुरूह-दुष्कर पदयात्रा मूक जीवों की रक्षा के लिए कर 15 फरवरी को प्रातः आप लोनारा पहुँचे। हजारों ग्रामीणों ने आपकी अगवानी की। लोगों की निगाहें मुनि श्री पर थी।

इधर अब तक हिंसा के विरुद्ध मुनि श्री के दिए प्रवचन अखबारों में छपते थे किंतु आज के अखबार में उनके प्रवचन के ठीक नीचे बलि प्रथा से संबंधित बड़ा सा विज्ञापन छपा था, हाईकोर्ट के आदेश को कूड़े में फेंककर।

शाम को 2.35से 4 बजे तक धर्मसभा श्रीराम मंदिर में अपार जनसमूह के बीच हुई। इसी बीच हिंसा के झंडाबदर कुछ लोग ट्रैक्टर-ट्रॉली में गुप-चुप गाँव में प्रवेश कर धर्मसभा तक पहुँच कर गाली-गलौच व नारेबाजी करने लगे। ये वे लोग थे जिन्होंने बलि प्रथा को दुकानदारी बना रखी थी। इन्हीं के उकसावे पर कुछ बंजारे हंगामा खड़ा किए हुए थे। जब उनको उच्च न्यायालय की निषेधाज्ञा का हवाला दिया गया तो वे बौखला गए। अहिंसा के समर्थकों ने उन्हें भगा दिया। तब वे गाँव के चौराहे पर जाकर अनाप-शनाप बोलने लगे। वहाँ उनकी सुनने वाला कोई नहीं था। सारे के सारे लोग मुनि श्री की धर्मसभा में पहुँचे हुए थे।

16 फरवरी की जनसभा में मुनि श्री ने आह्वान कर, बलि प्रथा के विरोध में अहिंसक आंदोलन को साकार करने 17 फरवरी को बगवा जाने के लिए तैयार रहने को कहा।

इधर अखबारों में प्रकाशित हुआ कि बंजारों ने मुनि श्री को धमकी दी है कि यदि बगवा आए तो उनके साथ बुरा व्यवहार होगा, किंतु मुनिद्वय अवश्य जाएँगे। काफी समय से शासन-प्रशासन इस क्षेत्र में सक्रिय था किंतु 'मुनि श्री के बगवा जाने की बात पक्की होने' की खबर से अधिकारी वर्ग हरकत में आ गया।

एस.डी.एम. व एस.डी.ओ.पी. लेबल के अधिकारी सैकड़ों पुलिस दल के साथ लोनारा मुनि श्री की सुरक्षा के लिए पहुँच गए। वे बार-बार मुनि श्री को समझा रहे थे कि ''वे बगवा न जाएँ। वहाँ भी सुप्रीम कोर्ट के आदेशानुसार बलि प्रथा रोकने के लिए पुलिस दल तैनात है।''

वे लोग व क्षेत्र के कई वरिष्ठ व गणमान्य जन, गाँवों के पंच-सरपंच इकट्ठे होकर मुनि श्री को वहाँ न जाने के लिए समझा रहे थे कि ''सरकारी व्यवस्थानुसार वहाँ पशु बलि नहीं होने दी जाएगी।''

''यदि आप वहाँ गए और व्यवस्था के बावजूद भी आपके साथ कोई अनुचित व्यवहार वे लोग कर बैठे तब आपके समर्थक चुप नहीं बैठेंगे और आपके इस अहिंसक आंदोलन को हिंसक व उग्र होते देर न लगेगी। आप चाहें तो अपने गुरु की आज्ञा ले लें उसके बाद ही कोई कदम उठाएँ। यद्यपि हम आपको खरोंच तक नहीं आने देंगे।''

सभी के अनुनय विनयपूर्वक किए आग्रह को मुनि श्री न टाल सके। धरमपुरी फोन लगाकर आचार्य श्री से संपर्क साधकर पूछा गया।

उनका जवाब था, ''वहाँ की परिस्थिति के बारे में मुझे बराबर जानकारी नहीं है। अतः धर्म सम्मत जो उचित हो, वही करें।''

चारों तरफ की परिस्थितियों का आकलन कर तथा अधिकारियों व समाज सेवकों व वरिष्ठजनों के अत्याग्रह पर आपने बगवा जाना निरस्त किया। आपने कहा, ''ठीक है, यदि हमारे वहाँ जाने से हिंसा भड़कती है तब इसके जिम्मेदार हम होंगे। यदि हमारे वहाँ गए बिना भी पशु बलि नहीं होगी, ऐसा शासन आश्वासन दे रहा है तो हम वहाँ नहीं जाएँगे। हमारा उद्देश्य सफल हो गया। फिर इसे तूल देने का कोई मतलब नहीं।''

विहार तो करना ही है बगवा नहीं तो कहीं अन्यत्र। इधर सारे एकत्रित अधिकारियों व वरिष्ठ नागरिकों ने खरगोन आने के लिए मुनि श्री को श्रीफल भेंट किए।

17 फरवरी को बगवा नहीं खरगोन की तरफ मुनि श्री ने अहिंसा रैली के साथ विहार कर दिया। मुनि श्री की हिफाजत के लिए विहार में उनके आगे-पीछे चार-चार लाल बत्ती गाड़ियाँ व सौ पुलिस वाले चल रहे थे।

इस अहिंसक अभियान के तहत विगत एक माह से तो निरंतर पूरे निमाड़ क्षेत्र के शासकीय अधिकारी, कर्मचारी, समाज के वरिष्ठ, खास व आमजन मुनि श्री के सान्निध्य में व सामीप्य में आते रहे जिससे उन्हें मुनि श्री की चर्या के रूप में दिगम्बर संतों की अनुपम संयममय साधना का पता चला- जैसे एक ही बार निश्चित अवधि में आहार चर्या करना, सामायिक, प्रवचन, रात्रि में मौन व मात्र शिलातल्प पर या चटाई पर सोना। बाकी अनेक परिषह सह आत्म कल्याण के साथ प्राणी मात्र का कल्याण करना। जीवों की रक्षा स्वयं तो करना, औरों को भी प्रेरणा देना।

चारों तरफ मुनि श्री की कहने व करने की चर्या की एकरूपता की प्रशंसा के चर्चे थे। आज एक नग्न पिच्छी कमंडलधारी संत ने दिखा दिया था कि महत्व इस बात का नहीं कि आदमी के पास क्या है अपितु महत्व इस बात का है कि वह क्या है? और मुनि श्री ने इतनी प्रतिकूल परिस्थिति में भी अपनी हिम्मत, आत्मविश्वास, इस्पाती इरादों व दृढ़ संकल्प शक्ति से अपने कार्य (अहिंसा अभियान) को अमलीजामा पहनाया। सफलता पाई। इस कार्य ने उन्हें क्षेत्र का विशिष्ट पुरुष, 'क्रतुमयः पुरुष' बना दिया। वे अपनी अच्छी सोच, हित-मित व प्रियवाणी व अच्छे व नेक कार्यों से जनहृदय के बेताज सम्राट बन गए थे। कठिनाइयों से जूझकर उनके जीवन का रंग निखरा, उनकी सामर्थ्य कुंदन सी तपकर कांतिमान हो आई।

निमाड़ के 'बगवा' में उन्होंने अहिंसा, प्रेम, करुणा, जीवदया, 'जीओ और जीने दो', 'प्राण उन्हें भी वैसे प्यारे, जैसे हमें हमारे हैं' की आधारशिला रख, हृदय में उन मूक बलि पर चढ़ने वाले पशुओं (विशिष्ट रूप से बकरों) के प्रति करुणा व आँखों में करुणा जल लिए सजल नेत्रों से लोनारा से खरगोन के लिए विहार कर दिया। इस क्षेत्र में उनका कार्य संपन्न हो चुका था। उन्होंने निमाड़ क्षेत्र से विदाई के वक्त धर्मसभा में हजारों हजार लोगों से कहा कि ''एक दिगम्बर संत की मर्यादाओं के निर्वहन के लिए मैं एक जगह अधिक दिनों तक नहीं रह सकूँगा, किंतु जिस अहिंसा महाअभियान का यहाँ से शुभारंभ हुआ है उसे यथावत चालू रखना। मेरा आप सबको विशिष्ट संगठनों को अंतिम संदेश है कि मैंने यहाँ अहिंसा की जो अलख जगाई है उसकी अखंड ज्योति को आगे भी जलाए रखना है। गाँव-गाँव घूमते हुए जन-मन में इस ज्योति की दीवट को जलाना है।''

विह्वल हृदय, आँखों से सावन भादौं की बरसात करते भारी हृदय से भारी कदमों से सैकड़ों नहीं हजारों की संख्या में लोग (जो जैन नहीं थे) मुनि श्री को विदाई देने उनके पीछे-पीछे चल रहे थे। क्या अधिकारी, क्या कर्मचारी और क्या वर्दीधारी, क्या समाज के श्रेष्ठी, आम क्या खास क्या, वरिष्ठ क्या, कनिष्ठ क्या, बच्चा-बूढ़ा-जवान, स्त्री-पुरुष हर कोई अपने सारे विशिष्ट- अतिविशिष्ट कार्य छोड़कर मुनि श्री के पद संचलन में साथ था।

पुलिस अधिकारियों व जनता-हर किसी के मुख से यही निकल रहा था ऐसे निष्काम, निस्पृही संत तो हमने आज तक नहीं देखे हैं। ऐसे ही 'निस्वार्थ' महापुरुष 'सर्वार्थसिद्धि' (सबके हित) व सर्वोदय (सबके अभ्युदय) के काम कर सकते हैं। श्रद्धावनत भक्त उनके चरणों में माथा टेक-टेक उनकी राह रोक रहे थे। लेकिन वे महायोगी, सबको अशीषते सबके मंगल की कामना करते लंबे-लंबे डग भरते आगे और आगे बढ़ गए। क्षेत्र, काल व परिस्थितियों का अच्छी तरह निरीक्षण-परीक्षण कर वर्तमान प्रासंगिकता को ध्यान में रख जीवन लक्ष्य निर्धारित कर उन्होंने अपना सफर शुरू कर दिया। उन्होंने अपने फौलादी इरादों व दृढ़ इच्छा शक्ति से निश्चित कर लिया था कि किसी भी परिस्थिति में हतोत्साहित होकर रुकना नहीं है, चुप नहीं बैठना, पुरुषार्थ से इस अहिंसा यात्रा को आगे बढ़ाना है क्योंकि दूर-दूर से आए ग्रामीणों द्वारा उन्हें पता चल गया था कि 'पशु बलि' की कुप्रथा पूरे क्षेत्र में फैली है। उन्हें अशिक्षित, अज्ञानी ग्रामीणों के अंधविश्वास को तोड़ना था। उन्हें अहिंसा का मार्ग अपनाने के लिए प्रेरित करना था।

एक-डेढ़ कि.मी. चलकर वे रुक गए। पीछे मुड़कर देखा। विशाल जनसैलाब 'जीओ और जीने दो', 'प्राण उन्हें भी वैसे प्यारे जैसे तुम्हें तुम्हारे हैं' के नारे लगाता उनके पीछे उमड़ पड़ा है।

उन महाऋषि ने दोनों हाथ ऊपर कर सबको मंगल आशीर्वाद दिया व सबको अपने-अपने गाँव लौट जाने का आग्रह किया। इस संकल्प के साथ कि ''वे इस अहिंसा अभियान को जारी रखेंगे। व्यक्तिगत रूप से या सामूहिक रूप से कोई भी पशु बलि जैसे जघन्य पाप में कभी भी शामिल नहीं होंगे। अपने प्राणों की तरह पशुओं (प्राणी मात्र) के प्राणों की रक्षा करेंगे। यही जीव हित में मेरा आग्रह है। आप सब लौट जाइये।'' और वे महायोगी अपने अभीष्ट लक्ष्य को लिए आगे बढ़ गए।

पीछे छूट गई उन दृढ़ संकल्पवान निर्भीक 'कर्मयोगी' की यशगान गाथा। जयकारों के साथ लोगों ने देखा- उन दो महामुनियों के चरणचिह्न धूल भरी धरती पर अंकित होते पीछे छूटते जा रहे थे और वे आगे बढ़ते जा रहे थे। धीरे-धीरे धूल के गुबार में साथ चलती शासकीय अधिकारियों व कर्मचारियों के चार पहिया वाहन, एक सैकड़ा पुलिसकर्मी व गुरु भक्तों की टोलियों के साथ वे दिव्य तेज मूर्तियाँ आँखों से ओझल हो गई।

पीछे छूट गए सारे आम व खास जन की आँखों से गुरु वियोग में सावन भादौ बरस रहा था। हृदय भाव विव्हल वे गुरु आज्ञा को शिरोधार्य कर लोनारा की ओर लौट रहे थे।

इस प्रकार निमाड़ के मंगल प्रवास में मुनि श्री ने ग्रामीण समाज को शराब, मांस व मधु का त्याग करवा श्रेष्ठ आचार संहिता दी। उनके जीवन को सुख- शांतिमय बनाने की कुंजी दी। कालांतर में लोगों ने पाया कि शराब व मांस के छोड़ने से उनके घरों में सुख-शांति व समृद्धि की फसलें लहलहाने लगी है। मांस त्याग से 'पशु बलि' चढ़ाना अपने आप छूट गया। बलि के लिए चढ़ाए जाने वाले पशुओं को खरीदने का रुपया भी उनका बचने लगा। सब दूर उन्हें लाभ ही लाभ था। घर-घर जन-धन व चौराहे- चौराहे पर मुनि श्री के जाने के बाद भी उनकी जीव दया की चर्चा की बातें चला करतीं। वे बार-बार उन्हें हृदय से धन्यवाद देते कहते रहते कि ''बाबा यदि यहाँ दो-चार महीने और रुक जाते तो पशुओं के साथ हमारा भी बड़ा कल्याण होता। पर वे किसी के भी रुकाये नहीं रुके... ऐसे बाबा तो हमने आज तक नहीं देखे।''

खरगोन

17 फरवरी की शाम व 18 फरवरी की सुबह में एक साथ 38 कि.मी. का पद संचलन कर, वह भी रास्ते में एक जगह प्रवचन करते हुए आप खरगोन पहुँचे। आहार चर्या खरगोन में ही हुई। किंतु नियति की कठिन परीक्षा, लंबी चलाई के बाद थके-हारे मुनि श्री को प्रथम ग्राम में ही अंतराय हो गई। लोगों की आँखों से आँसू के झरने फूट पड़े। दूसरे दिन दो कि.मी. दूर आहार चर्या के लिए गए। वहाँ भी दूसरे ग्रास में अंतराय हो गई। जिस किसी ने भी बात सुनी, सबके मुँह से यही निकल रहा था कि भूखे-प्यासे बाबा कैसे रहते होंगे। लोग झुंड के झुंड बना सामूहिक रूप से अपने- अपने भगवान से प्रार्थना कर रहे थे कि बाबा का अगले दिन का आहार अच्छे से हो जाए। ग्रामीणजन समझ गए थे कि मुनि श्री के भोजन करने को आहार कहते हैं। अंतराय का अर्थ भी वे अपनी तरह से समझते थे कि किसी कारणवश बाबा भोजन करना बंद कर देते हैं, मात्र कुल्ला करते हैं, पानी भी नहीं पीते। नियति एक अनासक्त योगी की कठिन अग्नि परीक्षा ले रही थी। वे लौटे व समभाव से सामायिक में बैठ गए। इधर 17 फरवरी को थोड़ी लेकिन 18 फरवरी को जोरदार बारिश हुई। ऐसी वर्षा विगत तीन वर्षों से उस क्षेत्र में नहीं हुई थी। मुनि श्री ने भविष्यवाणी की थी कि यदि आप पशु बलि प्रथा बंद कर देंगे तो निश्चित ही आपके क्षेत्र में पानी बरसेगा। हाथ कंगन को आरसी क्या? लोगों में हर्ष के साथ मुनि श्री व दयामय अहिंसा धर्म के प्रति और अधिक प्रगाढ़ आस्था हो गई।

मुनि श्री सुनीलसागरजी अब जैन मुनि नहीं जन मुनि बन गए। खरगोन जैसी जगह में भी उनकी धर्मसभा में दो-तीन हजार श्रोता पिन ड्राप साइलेंस के साथ धर्मामृत का पान करते व अपनी शराबखोरी, बीड़ी-सिगरेट पीना व मांस

भक्षण जैसी बुराइयाँ छोड़ते जा रहे थे। मुनि श्री भी एक बुराइयों से मुक्त समाज रचना द्वारा समाज को नई दिशा व नई सोच दे, उसकी दशा सुधार में प्रयत्नशील थे।

उधर खरगोन में मुनि श्री के आगमन के साथ खलबली मच गई कि मुनि श्री बगवा के बाद खंडवा के गंभीरपुरा में हजारों की संख्या में कटने वाले बकरों की हत्या रोकने के लिए ही खरगोन आए हैं। अंततः मुनि श्री की प्रेरणा से किए गए प्रयत्नों व प्रवचनों के प्रभाव से उस वक्त पशु हत्या पर रोक लग गई।

अपने अहिंसा अभियान को (जिसकी उस क्षेत्र को जरूरत थी) जारी रखते हुए 24 फरवरी को खरगोन से विहार कर खामखेड़ा दो दिन में पहुँचे।

खामखेड़ा से पीपलगोन, वहाँ से कसरावद होते हुए अहिंसक समाज का निर्माण करते 18 अप्रैल को आप बड़वानी पहुँचे। विहार में छोटे से छोटे गाँव में भी आप धर्मसभा कर ग्रामीणों को संबोधते, उनकी बुराइयाँ छुड़ाते आगे बढ़ रहे थे। जैन समाज के घर तो कहीं-कहीं ही वह भी अंगुलियों पर गिनती के थे, अजैनों की ही संख्या अधिक थी और वे ही लोग परम मुनिभक्त व गुरु के प्रति पूर्ण समर्पित लोग थे। जैनत्व के ज्ञान के बिना भी वे मुनि श्री को भगवान तुल्य पूजते थे। वे उन्हें प्राणीमात्र के सच्चे हितैषी समझते थे। उन भोले-भाले ग्रामीणों का मानना था कि भगवान ही सबका भला करते हैं और ये बाबा भी हम सबका भला कर रहे हैं। बिना किसी से कुछ माँगे। दिनभर भूखे-प्यासे रह, चौबीस घंटों में एक बार खड़े-खड़े ये भोजन करते हैं। ऐसे बाबा हमने पहली बार देखे हैं। मुनि श्री जिधर से गुजरते, लोग उनके चरणों में लोट जाते।

गुरु मिलन

18 अप्रैल को रात्रि विश्राम आपने बड़वानी में किया। वहाँ सूचना मिली कि सुबह आचार्य श्री सन्मतिसागरजी गुरुदेव बावनगजा से पार्श्वगिरि पहुँच रहे हैं। मुनिद्वय व आचार्य श्री सिद्धांतसागरजी ससंघ ने विशाल जनसमुदाय के साथ पार्श्वगिरि जाकर गुरु संघ की अगवानी की। उनके साथ बालाचार्यश्री योगीन्द्रसागरजी व गणिनी आर्यिका विजयमती माताजी भी थीं।

पार्श्वगिरि में पंचकल्याणक महोत्सव की तैयारियाँ जोर-शोर से चल रही थी। वहीं जंगल में एक ओर मुनि वसतिका का निर्माण किया गया, जिसमें संघ का निवास रहा।

पार्श्वगिरि में सात मंदिरों का निर्माण हो चुका है जिसमें गुरु मंदिर के साथ कुछ अन्य मंदिरों की प्राण प्रतिष्ठा हो चुकी है। गुरु मंदिर में इंद्रजीत, मेघनाद, कुंभकर्ण के साथ आचार्य श्री आदिसागर अंकलीकर, आचार्य श्री महावीर कीर्तिजी व आचार्य श्री विमलसागरजी की प्रतिमा विराजमान है।21 से 27 अप्रैल सन् 2002 को हुई जिनबिम्ब प्रतिष्ठा में देश के गाँव-गाँव, नगरों, महानगरों तथा देश के कोने-कोने से आकर श्रावकों ने भाग लिया और पुण्यार्जन किया। भीषण गर्मी में कुछ प्रतिकूलताओं के बावजूद उत्सव सानंद सफलतापूर्वक संपन्न हुआ।

बामंदी में विहार

पार्श्वगिरि से संघ के साथ विहार कर आप बड़वानी आए। जहाँ बामंदी वालों के बार-बार आग्रह पूर्ण निवेदन पर प्रतिष्ठा कार्य संपन्न कराने मुनि श्री सुनीलसागरजी व सुंदरसागरजी को बामंदी जाने का आदेश दे आचार्य श्री ने बेड़िया (गुजरात) की ओर विहार कर दिया।

थोड़ी दूर संघ के साथ विहार कर एक चौराहे से आप दोनों मुनिराज व गणिनी आर्यिका विजयमति माताजी ससंघ अंजड़ के लिए मुड़ गए। अंजड़ में एक जीनिंग फैक्टरी में तीन-चार दिन माताजी के साथ तत्त्वचर्चा का दौर चलता

रहा व धर्म लाभ लेते रहे। वहाँ से माताजी ने मांगीतुंगी के लिए विहार कर दिया और आपने अंजड़ दिगम्बर जैन मंदिर के लिए।

अंजड़ से आपने ठीकरी के लिए विहार किया। रास्ते में श्रावकों की गाड़ी से मुनि श्री की चटाई का थैला उड़ गया। अंधेरा होने पर रात्रि विश्राम जंगल में एक श्मशान के पास ही किया। साथ चल रहे श्रावकों ने आगे आधा कि.मी. दूर एक गाँव में रात्रि विश्राम के लिए कई बार आग्रह किया किंतु समय की मर्यादाओं का ध्यान रख आपने मनाकर दिया। दोनों संत एक गर्म पत्थर शिला पर बैठकर सामायिक करने लगे। चटाइयाँ तो थी नहीं सो श्रावक बिछाते क्या।

जैसे ही ग्रामीणों को पता चला वे दौड़े-दौड़े आए व भोजन-पानी, बिस्तर आदि की व्यवस्था की बात करने लगे। कुछ ग्रामीण बोले यदि बाबा रात्रि में नहीं चलते हैं तो हम इन्हें उठाकर ले चलते हैं। उन्होंने उठाने की तैयारी कर ली। किंतु साथ चल रहे श्रावकों ने उन्हें श्रमणाचार की बातें बताई। जैन मुनियों की ऐसी अभूतपूर्व साधना से अभिभूत वे मुनिद्वय को साष्टांग नमन करने लगे। कुछेक साथ चल रहे श्रावकों को साथ लेकर गए व मुनि श्री के रात्रि विश्राम के लिए लकड़ी के पाटों की व्यवस्था की। तभी एक पुलिस वैन भी आ पहुँची व मुनि श्री की कुशलता व व्यवस्था से संतुष्ट होकर चली गई।

अंततः खुले आकाश के नीचे हवाओं की चादर ओढ़े मुनिराजों ने जंगल में ध्यानस्थ हो रात बिताई। उन्हें विशेष अनुभव हुआ कि योगी कैसे जंगल में रात बिताते होंगे।

यहाँ से दिनांक 15 से 17 मई तक बामंदी में होने वाले त्रिदिवसीय वेदी प्रतिष्ठा महोत्सव के लिए आप साटकुर होते हुए पहुँचे। आपके सान्निध्य में यह वेदी प्रतिष्ठा सानंद संपन्न हुई।

वेदी प्रतिष्ठा महोत्सव में एक दिन अविवेकी श्रावकों ने आपको प्रवचन पांडाल में तवे जैसे तपते तखत पर ले जाकर बैठा दिया। ऊपर से भी सूर्य कहर बरपा रहा था। इस परिषह को शांत भाव से सहते हुए आपके सान्निध्य में सारी क्रियाएँ व प्रवचन संपन्न हुए। यहाँ पर भीकनगाँव व बाकानेर समाज के श्री विमल झांझरी, अशोक झांझरी व अतुल कासलीवाल ने वेदी प्रतिष्ठा में सान्निध्य के लिए श्रीफल अर्पित किया।

पुनः बामंदी से गलत जानकारी के कारण आप कच्चे उबड़-खाबड़ कांटों-भाटों से पटे रास्ते से 12 कि.मी. चलकर कसरावद पहुँचे। लोगों की लापरवाही व अव्यवस्था के कारण ज्यादा चौके होने के बाद भी दोनों मुनियों का पड़गाहन एक ही चौके में हो गया। श्रावकों की नासमझ, असावधानी व अविवेक के कारण दोनों संतों का प्रारंभ में ही अंतराय हो गया। भूखे-प्यासे संत ऐसे दुरूह मार्ग से तपती धरती पर नंगे पैरों से चलकर जस-तस गंतव्य तक पहुँचे, तिस पर कर्मोदय के भीषण प्रहार से प्रारंभ में ही अंतराय। सुधी श्रावकों का हृदय द्रवित हो गया व आँखें पनियाली। वे दुःखी हृदय से सोच रहे थे कि कैसे वे इस प्रचंड ग्रीष्म में भूखे-प्यासे चौबीस घंटे बिताएँगे और इधर मुनिराज समता भाव से इसे कर्म निर्जरा का निमित्त मान रहे थे।

अंतराय के कारण दोनों मुनिराज आहार चर्या से जल्दी लौटकर आ गए। तब उनकी श्रावकों के साथ मंदिर के वास्तु की चर्चा चल पड़ी। मुनि श्री ने कई वास्तुदोष बताए तब श्रावकों ने पुनर्वेदी प्रतिष्ठा की तिथि माँगी। आपने 10 से 12 जून को उपयुक्त समय बताया। दिनांक 28 मई को आप पुनः पिपलगोन पहुँचे।

दिनांक 8 जून को कसरावद के लोग वेदी प्रतिष्ठा के लिए आपको लेने आए। 9 जून को विहार कर रात्रि विश्राम गाँव के बाहर एक स्कूल में किया। सामायिक के बाद श्रावकों/युवकों ने मुनिद्वय की वैयावृत्ति करते हुए क्षेत्र में व्याप्त मावले के भय का जिक्र किया। जो बच्चों को उठाकर/आदमी को मारकर/घायल कर क्षणभर में गायब हो जाता है? उसका मुख शेर जैसा व धड़ आदमी जैसा होता है।

रात्रि 10 बजे ग्रामीणजन हाथ में डंडे व फरसे लेकर आ पहुँचे। उन्हें देख मुनि श्री किसी अनहोनी घटना घटने से

आशंकित हो गए। किंतु शांत भाव से उन्होंने मुनिद्वय से पूछा, ''बाबा क्या आपका रात्रि विश्राम यहीं होगा।''

मौन साधकों ने हाँ में सिर हिला दिया।

''तब तो मावले से आपकी रक्षा व हिफाजत की जवाबदारी हमारी है। हमें इधर के भी चक्कर लगाते रहना पड़ेगा।'' दो-तीन ग्रामीण डंडे लेकर रुक गए व रातभर जागते रहे।

पुनः उन्हें चतुर्थकाल की साधना याद हो आई। सबेरे एक व्यक्ति ने बताया कि यहाँ से करीब 100 मीटर की दूरी से एक विचित्र जानवर यहाँ से भागते हुए, जाता हुआ दिखा था।

15 जून को कसरावद से आप 18 से 20 जून तक भीकनगाँव में होने वाली वेदी प्रतिष्ठा में, विहार में रास्ते में तेज बारिश हो जाने के बावजूद भी पहुँचे। प्रतिष्ठा आपके सान्निध्य में सानंद संपन्न हुई। आपकी प्रेरणा से मेन रोड का नाम 'महावीर मार्ग' घोषित किया गया।

अब आपका मन गुरु दर्शन को आतुर हो गया। आपने श्री सुंदरसागरजी से यह बात कही। तभी श्रावकों से आपको ज्ञात हुआ कि आचार्य श्री का स्वास्थ्य खराब चल रहा है। अतः आपने दिनांक 20 जून को ही दोपहर बाद विहार करने का निश्चय कर लिया। किंतु अंतराय हो जाने के कारण श्रावकों ने किसी भी हालत में विहार नहीं करने दिया। दिनांक 21 जून को आपको आहार में पुनः अंतराय हो गया। निश्चित था कि श्रावकगण ऐसी परिस्थिति में भूखे-प्यासे मुनि को दूसरे दिन बिना निरंतराय आहार कराए विहार नहीं करने देंगे। अतः दिनांक 21 जून को श्रावकों को बिना कोई संकेत दिए दो दिन के भूखे-प्यासे आपने विहार कर दिया। यहाँ से आप खरगोन होकर सिद्धक्षेत्र ऊन पावापुरी पहुँचे। दर्शन प्रतिक्रमण कर दोपहर में फिर विहार कर दिया।

द्रुतगति से गुरुदेव के निकट पहुँचने के उद्देश्य से आप श्रावकों द्वारा निर्धारित गाँव में रात्रि विश्राम के लिए नहीं रुके और आप 3-4 कि.मी. और आगे चल दिए। आगे कोई व्यवस्था न होने पर एक टूटे प्रतिक्षालय में, अंधेरा होने को था, इसलिए रात्रि विश्राम के लिए रुक गए। आनन-फानन में साथ चल रहे श्रावकों ने जैसी बनी वैसे सफाई व्यवस्था की। आप सामायिक में बैठे ही थे कि जोरों से पानी बरसने लगा। यहाँ वहाँ से पानी आ रहा था। कुछ गंदे शराबी व भिखारी भी वहाँ आकर पसर गए। इधर बदबू, उधर मूसलाधार बारिश, जैसे-तैसे रात बिताई।

सुबह पानी रुका तो आपने पुनः विहार कर दिया। थोड़ा चले कि रात्रि की तरह और अधिक तेज मूसलाधार बारिश होने लगी, पर आपका विहार चल रहा था। आगे गाँव के प्रतीक्षालय में पानी रुकने का इंतजार करने लगे। एक महिला आई पूछा, ''बाबा चाय बना लाऊँ?'' आपने कहा ''हम तो 24 घंटे में एक बार ही आहार लेते हैं। बीच में कुछ खाते-पीते नहीं।'' वह आश्चर्य से चरणों में नमन कर वहाँ से चली गई।

जुलबानियां में लोनारा के परम मुनिभक्त कुछ गुर्जर भाई मुनि श्री के विहार में साथ चलने आ गए। रास्ते में एक बड़ा गाँव पड़ा। वहाँ कुछ लोग मुनि श्री को देख हँसी-मजाक करने लगे। मुनि श्री उनकी ओर ध्यान दिए बिना चुपचाप चल रहे थे। तभी पीछे से आकर एक जीप रुकी। जिसमें से तीन-चार मोटे आदमी उतरे। उन्होंने घूरकर उन हँसने वालों को देखा और वे वहाँ से नौ दो ग्यारह हो गए और वे मुड़कर मुनि श्री की ओर झपटे। वे कुछ सोच-समझ पाते इससे पहले वे सबके सब मुनि श्री के चरणों में सड़क पर ही लेटकर नमोस्तु करने लगे। तभी पीछे से 8-10 श्रावक और आ गए और वे भी इसी प्रकार नमोस्तु करने लगे। तब तक गाँव में सड़क किनारे खड़े व घरों के बाहर खड़े खुसर-पुसर करते लोग भी दौड़े चले आए और उसी तरह संत द्वय के चरणों में नमन करने लगे।

उनमें से एक ने सबका परिचय देते हुए बताया कि हमारे महाराज साहब भी इसी रास्ते आ रहे हैं। हम उनके दर्शन करने गए थे। पुण्योदय से आप जैसे दिगम्बर संतों के दर्शन हो गए। उनमें से एक भाई ने कहा, ''महाराज साहब, आप

रात्रि विश्राम गाँव में मेरे मकान में करिएगा। हम सब भी श्वेताम्बर जैन समाज से ही हैं।'' महाराजजी ने कहा कि चातुर्मास के लिए हमें बहुत दूर जाना है अतः और आगे तक चलेंगे।

तब जीप में 3-4 लोग आगे चले गए व बाकी सब 3 कि.मी. उनके साथ-साथ चले। आगे जाने वालों ने जंगल में बने एक कॉलेज में मुनि श्री के रात्रि विश्राम की व्यवस्था कर उन्हें आगे दूर तक कोई व्यवस्था न होने का हवाला कर वहीं रोक दिया। उनकी मुनियों के प्रति अनन्य श्रद्धा भक्ति देख आप वहीं रुक गए।

रास्ते में बारिश होने से मुनि श्री गीले तो पहले ही थे। जंगल में तेज हवा चलने के कारण काँपने लगे। उन श्रावकों ने बड़े विनय से सूखे कपड़ों से मुनिद्वय को पोंछा व वैयावृत्ति करने लगे। उनमें से दो-तीन लोग साथ चल रहे श्रावकों से गरम पानी करवाकर ले आए व मुनिद्वय के ठंडे हो गए पैर सेंकने लगे ताकि उन्हें गर्मी आ सके। राह चलते इन अजनबियों की अनन्य गुरु भक्ति की मुनि श्री मुक्त कंठ से प्रशंसा करने लगे। सच है चर्या ही व्यक्ति के चारित्र का पता दे देती है और पूज्य बना देती है।

उन्हें जाने का संकेत कर आप सामायिक/प्रतिक्रमण में बैठ गए, तभी कुछ शराबियों ने आ उत्पात मचाया। कुछ कह रहे थे ''हमने आपको पिछले गाँव में देखा था व सुना था आप सबके दुःख दूर कर देते हैं। इसलिए आपके पीछे दौड़े चले आए हैं। आप हमारे दुःख दूर कर दो। हमें लाटरी का कोई नंबर बता दो।'' मुनि श्री ने उन्हें मांस व शराब का त्याग करने व वहाँ से चले जाने को कहा।

दूसरे दिन सुबह आपने अंजड़ की ओर विहार कर दिया। बरसात के कारण बिलों से निकल सड़कों पर आए साँप, बिच्छू व अन्य जीव-जंतु सैकड़ों की तादाद में वाहनों तले कुचले पड़े थे। निरीह जीवों की ऐसी दुःखद मृत्यु से उनका मन प्राणी मात्र के प्रति करुणा से भर गया। इसी प्रकार उन्होंने विहार में कहीं निर्दयी लोगों को मोटरसाइकिल पर दोनों बाजू पैर बाँधकर लटकाकर दो-दो सूअर ले जाते देखा जिनका सिर व मुँह जमीन से रगड़ता लहूलुहान हो रहा था। तो कहीं जख्मी तड़फते बैल, गायें सड़क पर पड़े मिले। जिनके बारे में कई हृदय विदारक बातों की जानकारियाँ मिली। उन्हें देख आपका चिंतन चलता रहा था कि ओहो! मैंने भी पशु योनि के ऐसे असहनीय दुःख देखे होंगे, जिनका वर्णन छहढाला में आया है।

''वध बंधन आदिक दुःख घने
कोटि जीभ से जात न भने।''

अब मनुष्य जन्म पाकर जिस महान पुण्योपार्जन से मैंने ये महाव्रत धारण किए हैं, दिगम्बर मुनि मुद्रा धारण की है, इसे मुझे सार्थक करना है। कर्मनिर्जरा कर भव बंधन काटना है, अनंत सुख व अनंत शांति प्राप्त करना है। दीन मूक पशुओं की ऐसी दशा देख दया से द्रविभूत मुनिवर ने निश्चित किया कि मैं ऐसी साधना करूँगा कि सदा सर्वदा के लिए इस पशु पर्याय (तिर्यंचगति) से मुक्ति पा लूँ।

ऊन पावागिरि सिद्धक्षेत्र से अंजड़, अंजड़ से बड़वानी, बड़वानी से बावनगजा, चूलगिरि, पार्श्वगिरि की वंदना कर बरसते पानी में ही पुनः बड़वानी पहुँचे। जहाँ जून में आग उगलती धरती और अंगारे बरसाते अम्बर तले, पदतलों में पड़े छालों के पड़ने पर 'अहिंसा महाभियान' के तहत आपका चरण चक्रमण चलता रहा। अक्सर एक साथ दो-दो अंतराय के बाद भी आप चलते रहे, उपदेश देते रहे। और अब आँधी-तूफानों के बीच, गिरते पानी में और अंतराय के सिलसिले के बीच गुरुवर की अस्वस्थता का समाचार सुन आपका चरण चक्रमण अथक अबाध चल रहा था।

आपको ज्ञात हो गया था कि बेड़िया में जयसागरजी को पुनर्दीक्षा देकर व पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करवाकर आचार्य श्री पावागढ़ में विराजमान हैं। आज पुनः आपको श्रावकों से पता चला कि आचार्य श्री 6-7 दिन अभी पावागढ़ ही रहेंगे तथा आचार्य श्री का स्वास्थ्य अब ठीक है। जानकर आपके मन को तसल्ली हुई।

बड़वानी से दूसरे दिन चिखल्दा की ओर दोपहर एक बजे सामायिक के बाद निराहार विहार कर दिया। फिर कुक्षी, तालनपुर व अलीराजपुर से विहार कर आपने गुजरात की सीमा में प्रवेश किया। रास्ते में मील के पत्थरों पर लिखे अंकों व अक्षरों से कुछ गुजराती अंक व अक्षरों का ज्ञान मुनि श्री ने प्राप्त कर लिया।

रात्रि विश्राम एक स्कूल में किया। सामायिक के बाद आपने देखा कि जिस कक्ष में ठहरे थे उसकी दीवारों पर गुजराती में अंक व अक्षरों की तालिका बनी हुई थी। साथ-साथ बहुत से पशु-पक्षियों, फल-फूलों व उपयोगी वस्तुओं के नाम लिखे हैं। एक घंटे के अभ्यास से आपको अक्षर व अंक का ज्ञान हो गया। अब रास्ते में बोर्डों व दीवारों पर लिखे विज्ञापन भी वे सहज रूप से पढ़ने लगे। इस प्रकार आपने चलते-फिरते काम चलाऊ गुजराती सीख ली।

भाषा ज्ञान विशिष्टता

महान व सफल पुरुष की यह बहुत बड़ी विशेषता होती है कि उनकी सोच का दायरा बहुत विशाल होता है। जैसे कि मुनिश्री। उनका मानना है कि जहाँ से जितना मिले, सीखो, जानो, अपनाओ। इससे व्यक्तित्व में विशिष्टता आती है। सुनीलसागरजी जिस प्रांत में जाते, बहुत जल्द वहाँ की भाषा सीख जाते हैं। यह गुण आपकी ग्रहणशीलता व लचीलेपन की द्योतक है। आपकी सोच है कि प्रांत, जाति आदि से सीमित व संकुचित नहीं रहना, जहाँ जैसा है वैसा ढल जाना, ऐसा इंसान हर जगह अपनाया जाता है।

अपने में रमने वाले पूज्यश्री दुनिया में कब कहाँ क्या हो रहा है, उन्हें पता रहता है। इस संसार की विचित्रता व उठापटक इन सबसे बेखबर हो स्वयं को सतत खबरदार करते, वैराग्य वर्धन करते एवं अपने प्रवचनों में ऐसे लेटेस्ट प्रसंग द्वारा जन जागृति लाना व समाज को उचित मार्गदर्शन देना आप अपनी नैतिक जिम्मेदारी मानते हैं। कई बार आप जिस प्रांत में जाते हैं वहाँ की भाषा में भी धर्मोपदेश देते हैं। आज कम से कम आठ भाषाओं पर पूज्यश्री की अच्छी पकड़ है।

रास्ते में अधिकांश जगह दिगम्बर जैन श्रावकों के एक भी घर नहीं थे। पाटीदार समाज का बाहुल्य अधिक था व कहीं-कहीं श्वेताम्बर समाज के श्रावक भी थे जिनका खास वर्चस्व था। वे विहार में साथ चलते व मुनिद्वय की आहार चर्या व रात्रि विश्राम के लिए स्थान की व्यवस्था करते, प्रवचन कराते व बाजों-गाजों के साथ अपने गाँवों से विदा करते। मुनिचर्या से अनजान लोग दिन व रात्रि विश्राम में चाय/दूध व भोजन व्यवस्था का आग्रह करते थे। मना करने के बावजूद भी साथ चल रहे श्रावकों की व्यवस्था व आहार चर्या के लिए पानी, फल, दूध आदि की व्यवस्था भी अपनी ओर से कर अहोभाग्य समझते थे। कई अनुकूलताओं/ प्रतिकूलताओं के बीच भी समभाव से रह आप विहार करते रहे। हर पड़ाव पर शराबियों से भेंटवार्ता होती रही, लेकिन गुजराती ठीक से नहीं आने के कारण उनकी बातें बड़ी मुश्किल से समझ में आती थी। वहीं पगडंडियों से बीहड़ जंगलों के बीच होते हुए भी आपका विहार होता रहा।

बस्ती-बस्ती, गाँव-गाँव, नगर-डगर, वन-उपवन, झाड़-झंखाड़, कांटों-भाटों, नदी-पहाड़ लांघते, प्राणी मात्र के साथ-साथ जड़-चेतन को अशीषते आप अपने गंतव्य की ओर आगे बढ़ रहे थे।

गुरु दर्शन

जैसे-जैसे पावागढ़ निकट आता जा रहा था वैसे-वैसे आपकी गुरु दर्शन की व्यग्रता बढ़ती जा रही थी। अंततः 6 जुलाई सन् 2002 को आप पावागढ़ से तीन कि.मी. दूर एक गाँव में रात्रि विश्राम के लिए पहुँचे। आचार्य संघ में भी आपके आगमन के समाचार से हर्ष की लहर व्याप्त थी।

पावागढ़ में आचार्य श्री के दर्शनार्थ रतलाम व सूरत से आए कुछ श्रावकगण मुनिद्वय की अगवानी के लिए आ

पहुँचे। सामायिक के बाद बड़े भक्ति भाव से खूब वैयावृत्ति की।

दूसरे दिन प्रातः ब्राह्मीवेला में सूरज की सोनेरी किरणों के साथ आपका पद संचलन शुरू हो गया। पंछी चहक रहे थे, मंद-मंद मारुत के झोके शीतलता प्रदान कर बह रहे थे। मन छोटे बालक की तरह गुरु दर्शन के लिए मचल रहा था। पांवों को पंख लग गए थे। क्या पता अब कैसा होगा गुरुवर का स्वास्थ्य। कितने दिनों पश्चात गुरुवर का सान्निध्य पाने की खुशी में वे अतिशीघ्र पावागढ़ की पवित्र भूमि पर चलते-चलते, पूछते-पूछते उस मंदिर में पहुँच गए, जहाँ गुरु निवास था।

जिनवंदना कर श्रावकों से पूछते-पूछते आप गुरु कक्ष में पहुँच गए। उनके पावनपूत चरणों में नमन किया। खुशी के आँसुओं से पाद प्रक्षालन अपने आप हो गया। इतने दिनों बाद तपोपूत गुरु के पावन चरणों को छूकर व उनकी शांत सौम्य मुद्रा के दर्शनकर उनकी खुशी का पारावार न था।

आचार्य श्री ने आशीर्वाद देते हुए पूछा, ''अरे, तुम इतने शीघ्र आ गए। श्रावकगण तो तुम्हारी अगवानी के लिए गए हुए हैं। रास्ते में ही मिल गए होंगे।''

आपने कहा, ''नहीं तो! हमें तो कोई श्रावक नहीं मिला।''

तब कुछ स्थानीय लोगों ने कहा, ''महाराजजी दूसरे रास्ते से आ गए। वे लोग दूसरे रास्ते से गए हैं इसलिए मिलन नहीं हुआ।''

आचार्य श्री ने मुस्कराते हुए कहा (पूछा), ''इतनी भी क्या जल्दी थी?''

पर आचार्य श्री क्या जाने शिष्य हृदय की गुरुदर्शन की अधीरता व व्यग्रता। पश्चात आपने संघस्थ साधुओं व माताजी से आपका यथायोग्य दर्शन मिलन हुआ। बहुत दिनों बाद आज आपने आचार्य गुरु के साथ प्रतिक्रमण किया। बड़े दिनों बाद अपने चहेते सौम्य, सरल स्वभावी युवा मुनि को पुनः अपने बीच पा ससंघ साधुओं की बांछे खिल गईं। सभी के चेहरे से आत्मीयता व प्रसन्नता झलक रही थी।

सिद्धक्षेत्र वंदना

9 जुलाई 2002 को गुरु आज्ञा लेकर आप पावागढ़ सिद्धक्षेत्र पहाड़ वंदना के लिए चल पड़े। यहाँ से रामचंद्रजी के दोनों पुत्र अनंगलवण व मदनांकुश मोक्ष गए थे। यहाँ पहाड़ पर सात जिन मंदिरों के दर्शन किए। कहा जाता है कि यहाँ बावन जिनालय थे जिनमें से कुछएक खंडहर के रूप में अवशेष हैं। मुनि श्री ने देखा कि उनकी दीवारों पर जगह-जगह जिन प्रतिमाएँ उकेरी हुई हैं।

चूँकि मुनि श्री दोपहर साढ़े तीन बजे मुनि श्री सुंदरसागरजी के साथ पहाड़ वंदना के लिए गए थे अतः आचार्य श्री ने रात्रि विश्राम पहाड़ पर ही करने को कहा था। किंतु आपको विहार में लंबी चलाई की आदत हो गई थी। अतः आप शीघ्र ही पहाड़ पर चढ़ते हुए पावागढ़ के विशाल जिन मंदिर तक पहुँच गए। यही यहाँ का मूल मंदिर है।

यहाँ बैठकर आपने महाभक्ति भाव से सिद्ध वंदना की व अपने शुद्धात्म स्वरूप का चिंतन किया। प्रभु से उनकी तरह स्वयं का भी जन्म-जरा-मृत्यु का रोग मिटने व स्वपर कल्याण की प्रार्थना। कुछ देर वहाँ बैठकर शांत भाव से स्वानुभूति का चिंतन किया और फिर पीछे के रास्ते पहाड़ से नीचे उतरकर गुरु चरणों में आ गए।

आचार्य श्री व श्रावकगण सभी मुनि श्री के इतना शीघ्र पहाड़ से उतरकर आने पर आश्चर्यचकित थे। आखिर उनकी रगों में युवा रक्त बह रहा था। इसका परिचय सबको मिल गया।

मुनि श्री ने गुरुवर से बड़े विनयावनत हो कहा, ''तीर्थ वंदना बहुत अच्छे से हो गई इसलिए रात्रि गुरु चरण तीर्थ में बीते इस वास्ते पर्वत पर न रुक समय था अतः हम आ गए। इतने दिनों बाद गुरु चरण सान्निध्य प्राप्त हुआ है इसलिए

गुरु चरणों में ही रात्रि विश्राम की उत्कट इच्छा थी।''

आचार्य श्री शिष्य के समर्पण भाव से गदगद हो गए। वे मात्र मुस्कराकर रह गए।

शिष्य के चेहरे पर गुरु निश्रा में आ जाने पर विगत रास्ते की लगातार लंबी चलाई की थकान कपूर की तरह उड़ गई। उनके हृदय का संतोष चेहरे से स्पष्ट झलक रहा था।

नरवाली विहार

10 जुलाई प्रातः नरवाली (राज.) से दो युवक पारस व महेंद्र आचार्य श्री के दर्शनार्थ आए। आचार्य श्री ने पूछा ''कहाँ से आए?''

दोनों युवकों ने कहा, ''आचार्य श्री हम नरवाली से आपके दर्शनार्थ तथा आपको लेने आए हैं। सबकी इच्छा है आप नरवाली पधारें।''

पावागढ़ की अव्यवस्थाओं को देखते हुए आचार्य श्री ने नरवाली जाने की हाँ ही नहीं की, उसी दिन दोपहर में विहार करने की घोषणा कर दी। नरवाली के श्रावकगण चम्पापुर से आचार्य श्री को नरवाली लाने के लिए उनके पीछे पड़े थे। वे थोड़े-थोड़े दिनों के अंतराल में नरवाली से आचार्य श्री को लिवाने आते रहे। इसीलिए महेंद्र व पारस से चर्चा के दौरान पूछा था कि अचानक आज कैसे चले आए। और उनका उत्तर सुन अबकी बार आपने नरवाली वालों को निराश नहीं किया।

आचार्य श्री की घोषणा सुन उन दोनों युवकों की तो खुशी का पारावार नहीं था। उन्होंने तत्काल मोबाइल से नरवाली सूचना दे दी। इधर पूरा का पूरा संघ अचम्भे में था कि अचानक यह असंभव कार्य कैसे संभव हो गया। मुनि श्री सुनीलसागरजी तो बेहद खुश थे। उन्होंने कई बार नरवाली के श्रावकों की अकूत भक्ति, श्रद्धा व गुरु के प्रति समर्पण भाव देखा था। चम्पापुर में तो उन्होंने भी उनके निमंत्रण की बात आचार्य श्री के सम्मुख रखी थी।

यह तो नरवाली के लोगों का असीम पुण्योदय था कि अचानक उन्हें यह महासंयोग प्राप्त हो गया। स्वाभाविक ही था कि बारिश का मौसम था, चातुर्मास स्थापना को चंद दिन ही बचे थे और भर बारिश में इतने बड़े संघ को लेकर 240-50 कि.मी. दूर नरवाली पहुँचना कठिन काम था। पर गुरुदेव की आज्ञा शिरोधार्य कर तत्काल सारी तैयारियाँ हो गईं।

जैसे ही तीर्थ की कमेटी व ट्रस्टीगणों तथा आसपास के श्रावकों को इस बात का पता चला वे दौड़े-दौड़े चले आए व अनुनय-विनयपूर्वक आग्रह करने लगे कि आचार्य श्री भर बारिश में नरवाली पहुँचना असंभव है। नरवाली बहुत दूर है, आप यहीं सानंद चातुर्मास कीजिएगा। श्रावकगण आचार्य संघ को इस मौसम में विहार कर इतनी दूर किसी भी हालत में जाने देना नहीं चाहते थे किंतु मुनि श्री सुनीलसागरजी को पूर्ण विश्वास था कि गुरुदेव अपना निर्णय नहीं टालेंगे।

अंततः वही हुआ। श्रावकों के अनुनय, विनय व आग्रह के बीच समय बीत रहा था। एक ओर श्रावकगण आचार्य श्री को जाने देना नहीं चाहते थे, वहीं दूसरी ओर आचार्य श्री अपने निर्णय पर अडिग थे। आखिर नरवाली का प्रबल पुण्य भारी पड़ा और आचार्य श्री ने पौने पाँच बजे नरवाली के लिए जिन दर्शन कर विहार कर दिया। अचानक विहार की बात सुन जनसैलाब उमड़ पड़ा। बारिश का मौसम देख सुरक्षा की दृष्टि से पुलिस बल भी साथ चल रहा था।

* * *

बड़वानी से लगातार 30-35 कि.मी. प्रतिदिन पद संचलन कर मुनि श्री सुनीलसागरजी 9 जुलाई की प्रातः ही पावागढ़ पहुँचे थे। दिन में पहाड़ वंदना की व दूसरे दिन 10 जुलाई की शाम के विहार में पुनः 12 कि.मी. चलकर

एक गाँव में रात्रि विश्राम किया। उनके पद तलुए छिल गए थे। पिंडलियाँ सूज गई थीं।

मुनि श्री सोच रहे थे कि अच्छा हुआ 9 जुलाई को ही उन्होंने शाम को पहाड़ की वंदना कर ली। उन्होंने कल्पना भी नहीं की थी कि अचानक नरवाली के युवा गुरु दर्शन को आएँगे, वो भी मात्र दो ही और आचार्य श्री उनके आग्रह पर इतना शीघ्र निर्णय ले लेंगे, जबकि चम्पापुर व अन्य स्थानों पर वे चौके लेकर विहार कराने आए थे लेकिन गुरुदेव ने उन्हें हर बार खाली हाथ लौटा दिया। मुनि श्री को खुशी थी कि आज उनकी मन की मुराद पूरी होने जा रही है।

लोगों का बार-बार कहना था ऐसी बारिश के मौसम में आचार्य श्री को यहीं पावागढ़ या आसपास ही कहीं अब चातुर्मास करना था। इतने बड़े संघ को लेकर इतनी दूर पैदल जाना खतरे से खाली नहीं है। वे न जाने कितने विघ्नों की लिस्ट गिना रहे थे, पर मुनि श्री को तो अपने गुरु पर अंधश्रद्धा थी। सबसे पहले उन्होंने ही कहा, ''गुरुवर जो निर्णय लेते हैं सही होता है। उनका अतिशय प्रभाव ही ऐसा है कि हर बाधा उनसे डरकर दूर भाग जाती है। गुरु की छत्र छाह सिर पर है तो फिर कोई बाधा, बाधा नहीं रहती। उन्होंने ऐसे ही निर्णय नहीं ले लिया, उनका लंबा जीवनानुभव है। विहार तो हम यों ही करते रहते हैं तो फिर इस विहार में क्या अलग।'' चूँकि मुनि श्री सुनीलसागरजी के विहार (म.प्र. से गुजरात) में रास्ते में कई जगह बारिश होती रही। कई बार तो विहार किया कि बारिश शुरू हो गई और पूरे रास्ते पानी में भीगते, ठिठुरते चलते रहे। रात्रि में जंगल में या गाँव बाहर टूटी-फूटी स्कूलों, प्रतीक्षालयों में छतों व खिड़कियों या टूटी-फूटी दीवारों से अंदर आते पानी के बीच थोड़ी सी सूखी जगह देख बैठे-बैठे ध्यान मग्न हो 'रात्रि विश्राम' किया। वे तो हर परिस्थिति में समभाव से रहे। वे सोच रहे थे चलो नरवाली तक बारिश में विहार का आनंद तो अलग ही है। उनके लिए तो बारिश में विहार करना अब साधारण सी बात थी।

चातुर्मास स्थापना को देखकर रोज सुबह 10-12 कि.मी. तथा दोपहर 12-13 कि.मी. इस तरह 25 कि.मी. आचार्य संघ प्रतिदिन चल रहा था। इधर मुनि श्री एक तो आचार्य श्री की अस्वस्थता देख तथा दूसरा वे पहले से ही आचार्य श्री के साथ ही अक्सर चलते थे। अतः इस बार तो वे विशेष रूप से आचार्य श्री के साथ छाया की तरह चल रहे थे। मौसम भी प्रतिकूल था अतः वे थोड़ा सा भी आगे-पीछे हो जाते तो पुनः कृशकाय गुरु के साथ हो जाते।

पाछेला, सिमलिया, कालीडूंगरी, देवगढ़ आदि होते हुए आप लीमखेड़ी पहुँच रहे थे कि दाहोद से बसें भर-भरकर श्रावकगण लीमखेड़ी आपको लिवाने आ पहुँचे। चूँकि आपने पूर्व में दाहोद चातुर्मास किया था, अतः वहाँ आपके परम भक्तों की अच्छी खासी संख्या थी। उन्हें पूर्ण विश्वास था कि ऐसी बारिश में आचार्य श्री आगे नहीं जा पाएँगे। अतः उन्होंने दाहोद चातुर्मास स्थापना हेतु आचार्य श्री को श्रीफल भेंट किए। आखिर उन्हें निराश ही लौटना पड़ा। नरवाली वालों की लंबी साधना सब पर भारी पड़ती जा रही थी।

जैसे ही आचार्य श्री ने पावागढ़ में नरवाली चातुर्मास की घोषणा की वैसे ही दूसरे दिन नरवाली से 40-50 युवा व श्रावक-श्राविकाएँ आचार्य संघ के विहार व आहार चर्या के लिए आ पहुँचे थे, जो नरवाली तक साथ थे। रास्ते में उनकी संख्या बढ़ती गई। यही नहीं जिस कस्बे, गाँव, नगर, बस्ती से आचार्य श्री का ससंघ विहार होता था वहाँ के लोग भी संघ की अगुवाई व विदाई में साथ चलते थे। इस प्रकार लोगों की संख्या बढ़ती जा रही थी। जगह-जगह आचार्य संघ का भव्यातिभव्य स्वागत हो रहा था। जन सैलाब तो इस कदर उमड़ रहा था मानो चातुर्मास के लिए ही संघ का नगर प्रवेश हो रहा है। चातुर्मास स्थापना के लिए अर्पित श्रीफलों के ढेर व जन भावना को देख नरवाली वाले आकुल-व्याकुल हो जाते। बार-बार साथ चल रहे श्रावकों को लगता कि कहीं कोई उनका हक ना छीन ले।

अंततः फूलपरी, लीमड़ी, भीलकुआं, कलिंजरा, बड़ोदिया, बांसवाड़ा, खमेरा होते हुए मंजिल के निकट पहुँच गए। खेमरा से विहार कर संघ का रावतपुरा में रात्रि विश्राम था।

अक्सर रात्रि विश्राम में साथ चल रहे युवाओं का टोला मुनि श्री सुनीलसागरजी की वैयावृत्ति के लिए आ पहुँचता।

रावतपुरा में भी युवा, मुनि श्री के निकट आ बैठे। उनमें से महावीर बोला, ''महाराजजी 10 दिन में 240 कि.मी. की कठिन चलाई कर ली। अब तो पाँवों ने जवाब दे दिया। पाँवों में फफोले हो गए हैं।''

तब दूसरे ने कहा, ''अब तो मंजिल 10-15 कि.मी. दूर ही है। यहाँ तक तो आ गए। अब शिकायत कैसी?''

तब तीसरा बोला ''अरे सुनीलसागरजी महाराजजी के चरण तो देखो! उनके पगतलुओं को तो देखो। ये तो नंगे पाँव कितनी दूर से लगातार बिना एक दिन विश्राम किए चले आ रहे हैं। इनके पैर सूज गए हैं। पगतलों से खून रिस रहा है। अक्सर दो-दो दिन लगातार इनको अंतराय हो जाता है। फिरभी ये बिना शिकवा-शिकायत, आकुल-व्याकुल हुए बिना भूखे-प्यासे मुस्कराते रहते हैं।''

सब आपस में बात कर रहे थे। हमें तो थोड़ा सा कष्ट भी सहन नहीं होता और हम अपने दुखड़ों की पंचायत करने बैठ गए हैं। महाराजजी भी तो इंसान हैं, पर देखो इतने कष्ट व पीड़ा के बाद भी इनके चेहरे पर शिकन तक नहीं है। वे तो 500-700 कि.मी. लगातार चल कर यहाँ आए हैं। निश्चित ही मुनि श्री के पैरों में कष्ट है पर कितनी समता व शांति है इन्हें। हम तो इन्हें अपने दुःख-दर्द सुना अपना दिल का गुबार हल्का कर लेते हैं, पर हमने इन्हें कभी किसी से अपनी कोई तकलीफ बताते-सुनाते नहीं देखा। इस प्रकार वे आपस में गुरुदेव की इतनी कठिन साधना की चर्चा कर रहे थे।

इधर मुनि श्री संघ के साथ चल तो रहे थे पर अब पूर्व की व पावागढ़ से यहाँ तक की लगातार लंबी चलाई के कारण उनके पैरों ने भी जवाब दे दिया था।

लेकिन बहुत दूर से ही आचार्य संघ की अगवानी में उमड़ते श्रावक समूह के हर्षोल्लास, उमंग, खुशी व आत्मीयता के ज्वार को देख मुनि श्री सुनीलसागरजी की थकान काफूर हो गई। नरवाली का हर श्रावक एक-एक साधु की कुशलक्षेम पूछता, चरण छू-छूकर अपने आपको कृत-कृत्य मान रहा था। जो भी मुनि श्री सुनीलसागरजी के चरण छूता, उनके पगतलों के घाव, सूजे हुए पैर देख ठिठक जाता। महाराजजी को कितनी पीड़ा होती होगी। ऐसी स्थिति में भी वे 25-30 कि.मी. पैदल रोज कैसे चले होंगे। उनकी ऐसी स्थिति देख लोगों की आँखें भर आती। लोग मरहम लाकर हौले से गुरु चरणों में लगाने की कोशिश करते। किंतु इन फक्कड़ संत को इसकी परवाह कहाँ?

और जब 12 दिन में 250 कि.मी. की पावागढ़ से पदयात्रा कर संघ ने 22 जुलाई 2002 को नरवाली की धरा को धन्य किया तो वहाँ की रज का कण-कण गुरु चरणों का स्पर्श पा चंदन बन गया, जिसे विशाल जुलुस के साथ आचार्य संघ को लिवाने आए भक्तगण माथे लगा रहे थे। बड़ा मनोरम वातावरण था। आकाश से हल्की फुहारें गुरुओं के आगमन पर पुलक प्रकट कर रही थी। मंद-मंद मारुत के झोके गुरु आगमन का संदेश दूर-दूर, द्वार-द्वार तक ले जा रहे थे। गाजे-बाजों के साथ अगवानी के लिए आया जनसमूह जिधर दृष्टि डालो उधर दिखाई दे रहा था। राजस्थान की भूमि पर इतने बड़े संघ के आगमन की खुशी में दूर-दूर से श्रावकगण दौड़े चले आए थे।

नरवाली चातुर्मास

स्वावलंबी, स्वाधीन, शांत प्रवृत्ति वाले मुनिश्री शुरू से अपना केशलोंच स्वयं ही करते। बिना कहे, बिना मतलब किसी में हस्तक्षेप करना नहीं, और मौका (अवसर) मिले तब बिल्कुल चुकना नहीं। गुरु शरण में अत्यंत शांत साधना जैसे कोई संघ में हो ही नहीं और गुरु आज्ञा से बाहर गए कि जोरदार धर्म प्रभावना का डंका बजा दिया। महती प्रभावना कर लौटे मुनिश्री का लक्ष्य अब विशेष साधना व अध्ययन की ओर था, सो नरवाली चातुर्मास में आपश्री ने पूरे चार माह मौन साधना रखी थी। नरवाली के भक्त आज भी इस बात को याद करते कहते हैं कि मुनिश्री सुनीलसागरजी का एक भी प्रवचन नरवाली वालों ने नहीं सुना। अब चतुर्थ पट्टाचार्य सुनीलसागरजी का एक चौमासा चाहिये। बड़े संघ

में मौन रहकर भी आप अलग ही चमकते थे। दैनंदिनी लेखन से आपने 'यात्रा के संस्मरण' पुस्तक का लेखन किया।

23 जुलाई 2002 आषाढ़ शुक्ल चतुर्दशी को अपार जनसमूह के बीच विशाल पांडाल में चातुर्मास कलश स्थापना की विधि संपन्न की गई।

आपने देखा नरवाली के श्रावक- श्राविकाएँ काफी धार्मिक हैं। आचार्य श्री के बोधिपरक प्रवचनों को सुन तथा आचार्य श्री के उपवासों से प्रेरित हो नरवाली के 90 श्रावक- श्राविकाओं ने दो प्रतिमा धारण की।

नरवाली के इस चातुर्मास में आपने (मुनि श्री सुनीलसागरजी) ने देखा कि लोग मात्र विद्वता की नहीं चारित्र की पूजा करते हैं। तपोनिष्ठ आचार्य श्री का संयम देख कितनों ने प्रतिमा धारण कर ली। प्रायः नरवाली के बच्चे से लेकर बूढ़े तक ने कोई न कोई नियम लिया। शूद्र जल का त्याग तो प्रत्येक परिवार ने कर दिया। यद्यपि मुनि श्री अपनी चर्या के प्रति सख्त तो थे ही पर वे और अधिक अच्छी तरह पालने लगे। क्योंकि संत का दर्शन, चिंतन व ज्ञान की सम्यकता समाज के लिए अक्श (आइने) का काम करते हैं। आचार्य श्री के साथ-साथ मुनि श्री सुनीलसागरजी भी अपने दर्शन, ज्ञान व चारित्र की सम्यक्त्वता के कारण समाज के प्रेरक बने हुए थे। युवा चेतना के संप्रेरक व धर्म प्रभावना के क्षेत्र में अग्रणी, युवा मुनि ने अपने असाधारण कार्यों से समाज के हृदय में अपना विशिष्ट स्थान बना लिया। संघ के साथ रहकर भी समाज पर आपके व्यक्तित्व व कृतित्व की अच्छी धाक जम गई।

मुनि दीक्षा

पर्युषण पर्व 11 सितंबर को प्रारंभ हुए। उत्तम त्याग के दिन टूंडला निवासी श्री रामबाबू ने आचार्य श्री से मुनि दीक्षा ग्रहण की। नाम श्री सुकौशलसागर मुनि रखा गया।

20 सितंबर से आचार्य श्री ने 10 उपवास किए। 8वें उपवास 28 सितंबर को फिर एक मुनि दीक्षा बक्सीपुर जिला एटा निवासी टुंडला के 60 वर्षीय श्री रामरतन की मुनि दीक्षा हुई। नाम सुकुमालसागरजी रखा गया। इस प्रकार दो लोगों के लिए गुरु चरण का सान्निध्य आत्मोद्धार का कारण बना।

चातुर्मास में बड़े-बड़े कार्यक्रमों के आयोजन के साथ भी मुनि श्री का स्वाध्याय निरंतर चलता रहता व आचार्य श्री द्वारा कराए जाने वाले स्वयंभू स्तोत्र, स्तुतिशतक, आराधनासार आदि ग्रंथों का संस्कृत टीका सहित स्वाध्याय भी संपन्न हुआ। जिसमें आप की गहरी रुचि रही। जिसके चिंतन के माध्यम से आप अपने भावों की परिणति का परिमार्जन करते रहे।

6 दिसंबर 2002 मार्गशीर्ष शुक्ला दोज को आचार्य श्री आदिसागरजी के दीक्षा स्मृति के दिन चातुर्मास निष्ठापन कर पिच्छी परिवर्तन किया गया।

उदयपुर की ओर विहार

पिच्छी परिवर्तन पश्चात आपने आचार्य संघ के साथ नरवाली से विहार कर दिया। पावागढ़ से नरवाली विहार के 12 दिन के अलावा उज्जैन चातुर्मास से अब तक का यह आपका गुरु संघ के साथ पुनः विहार था। तीन-तीन दिन पारसोला, मुंगाणा व खुन्ता में रुकते हुए 18 दिसंबर को आप धरियावाद पहुँचे। नरवाली की ही तरह यहाँ भी आपका भव्यातिभव्य स्वागत हुआ। यहाँ के धर्मप्राण समाज ने आपकी प्रेरणा से अष्ट दिवसीय ऋषिमंडल विधान का आयोजन किया। चूँकि विहार में भी और प्रवास में भी, आपका अध्ययन, स्वाध्याय व लेखन यथोचित जारी रहता रहा। मार्ग के अवरोध कभी आपके लेखन में बाधा न बन सके। थकान हो या अंतराय की व्याकुलता, आपके लिए कोई मायने नहीं रखती और आप सतत अपने अनुभव, श्रुताध्ययन के निचोड़ को पुस्तकाकार रूप देते हुए माँ जिनवाणी की सेवा करते

रहे।

1 जनवरी 2003 को आपकी कृति 'यात्रा के संस्मरण' (जिसमें मुनि श्री ने सन् 1999 मई वाराणसी (उ.प्र.) से नवंबर 2002 नरवाली (राज.) तक 41 माह की मंगल यात्रा के वृतांत का लेखा-जोखा लिखा है) का भव्य समारोह में विमोचन हुआ। जिसमें समाज के बाहर के कई गणमान्यजन, राजनेता व उद्योगपति पधारे थे।

2 जनवरी 2003 को धरियावाद से मंगल विहार कर आप गुरु संघ के साथ लसाड़िया, कूण, गुड़ेल, गुड़ली, कुराबड़, साकरोदा, देवारी होते हुए आयड़ पहुँचे। यहाँ आचार्य श्री शांतिसागरजी ने चातुर्मास किया था, जिनकी वहाँ एक सुंदर खड्गासन प्रतिमा भी है। यह स्थान अब उदयपुर में शामिल हो गया है।

लब्ध प्रतिष्ठित गणमान्य व्यक्तियों, राजनेता, उद्योगपतियों व विशाल जनसमूह की अगवानी में 19 जनवरी 2003 को आपने गुरु महाराज के साथ नगर प्रवेश किया। नगर भ्रमण करता, बाजो-गाजों के साथ जुलुस हुमड़ भवन पहुँचा, जहाँ गणिनी आर्यिका सुपार्श्वमति माताजी ने आचार्य संघ की अगवानी की। आपने आचार्य श्री के साथ-साथ समस्त मुनिगणों की कुशलक्षेम पूछी। आपने युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी की वक्तृत्व शैली, विद्वता व साहित्य साधना की भूरि-भूरि प्रशंसा की जिनके बारे में आपने काफी कुछ विशेष सुन रखा था। अब साक्षात युवा मुनि को देखने, उनके प्रवचन सुनने व कठिन साधना व चर्या को देख आप उनके व्यक्तित्व, कृतित्व, विद्वता व ज्ञान से काफी प्रभावित हुईं। आपने आचार्य श्री से कहा कि युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी आगे चलकर काफी प्रगति करेंगे।

21 से 23 जनवरी तक त्रिदिवसीय आचार्य महावीरकीर्तिजी समाधि महोत्सव मनाया गया, जिसमें दूर-दूर से लोग सम्मिलित होने आए। स्थानीय उदयपुर के महाराजा महेंद्रसिंह मेवाड़ा तथा महंत मुरली मनोहर शास्त्री के साथ विशाल जनसमुदाय शामिल हुआ। इस ऐतिहासिक विनयांजलि सभा में आपने जैनधर्म के परिप्रेक्ष्य में आचार्य श्री महावीर कीर्तिजी के असाधारण व्यक्तित्व व साधना पर विस्तृत प्रकाश डाला। इस प्रकार हर जगह आप गुरु संघ के साथ रहते हुए भी अपनी श्रम साधना से अपनी अलग पहचान बनाते हुए समाज पर अपने प्रभाव की छाप छोड़ते रहे। अक्सर लोगों से सुनने मिल जाता था कि छोटे महाराज (मुनि श्री सुनीलसागरजी) भी बहुत विद्वान है। अच्छा प्रवचन देते हैं। युवा वर्ग तो टोलियाँ बंद उनके आगे-पीछे घूमता रहता।

मुनि सुनीलसागरजी की प्रेरणा व मार्गदर्शन ले उदयपुर के श्रावकों ने माघ शुक्ल सप्तमी को आचार्य श्री सन्मतिसागरजी का 65वाँ जन्म जयंति दिवस का समारोह 6 से 8 फरवरी तक विशाल पैमाने पर मनाया जिसमें देश के कोने-कोने से आचार्य भक्त सम्मिलित हुए और राजस्थान के तो गाँव के गाँव उमड़ पड़े।

इस अवसर पर आचार्य गुरु के शिष्य आचार्य श्री सिद्धांतसागरजी, आ. चंद्रसागरजी, बालाचार्य योगीन्द्रसागरजी विशिष्ट रूप से उपस्थित रहे। प्रभावी व्यक्तियों में तत्कालीन खेल मंत्री रघुवीर मीणा, विधायक, सांसद व कई अधिकारीगण उपस्थित थे। कई विद्वान, पंडित व दूर-दूर के ग्राम, नगर, कस्बों के समाज के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, मंत्री आदि विशिष्ट लोग उपस्थित थे व आचार्य श्री के प्रति विनयांजलि अर्पित की। इस पावन प्रसंग पर आपने भी अपने हृदय की आस्था व श्रद्धा बड़े भक्ति भाव से गुरु चरणों में विनयांजलि के रूप में समर्पित की, जिसे लोग मंत्रमुग्ध हो सुनते रहे और मुनि श्री के साथ सारा जनसमुदाय गुरुचरणों में विनयावनत हो गया। सारा वातावरण गुरुमय हो गया।

आपने अपने गुरुवर के स्वस्थ व लंबे जीवन के साथ उनके लिए मुक्ति की कामना करते हुए जिनेंद्रदेव से प्रार्थना की कि जब तक मुझे मुक्तिश्री की प्राप्ति ना हो तब तक ऐसे ही महा तपोनिष्ठ जगत पूज्य गुरुदेव का चरण सान्निध्य प्राप्त होता रहे।

इस अवसर पर आपकी कृति 'विश्व का सूर्य' का विमोचन भी किया गया। एक साहित्य सजर्क के रूप में आपकी समाज में गहरी पैठ जम चुकी थी। श्रुत साधक, चर्यासाधक व आत्माराधक के रूप में आपकी ख्याति दूर-दूर तक

फैल रही थी।

इसी महीने 26 से 28 फरवरी तक एक त्रिदिवसीय विद्वत गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें देश के कोने-कोने से बड़े-बड़े विद्वान, पंडित व बुद्धिजीवी आमंत्रित थे। हर सत्र में आपने विषय से संबंधित अपने विचार रखे। सभी ने आपकी विद्वता व गहन गंभीर ज्ञान का लोहा मान लिया।

जिनवाणी के लाल मुनिश्री सुनीलसागरजी के मन में सतत यह प्रशस्त भावना रहती कि वह माँ जिनवाणी की सेवा किस रूप से करे, कैसे उपकार चुकाएँ, जन-जन में जिनवाणी को कैसे जयवंत करें। प्राकृतिक जीवन शैली प्रिय मुनिश्री को प्रकृति ने यह सुअवसर झीलों की नगरी उदयपुर में प्रदान किया। सर्वाधिक प्राचीन भाषा, प्रभु महावीर की भाषा, गणधरों ने जिसे लिखा, ऐसी प्राकृत भाषा को अच्छे से सीखने का सौभाग्य आपको प्राप्त हुआ। प्राकृत भाषा विद्वान प्रो. उदयचंदजी जैन आचार्यश्री के दर्शनार्थ पधारे। तब आचार्यश्री के कहने पर मुनिश्री को समय देकर प्राकृत भाषा का विशेष अध्ययन कराया। फिर तो क्या था, मुनिश्री की कलम रुकने का नाम न लेती। एक के बाद एक प्राकृत रचनाएँ निसृत होने लगी। मानो कुंदकुंदाचार्य ही नीचे उतर आए हों। भावणासारो 'भारदी थुदी' की रचना के साथ अनेक स्तुति, ग्रंथ, पद्य आदि की अविरल पुरुषार्थ द्वारा प्राकृत भाषा में रचना कर प्राकृत भाषा को जीवंत करने का जो आपने उद्यम किया है वह सराहनीय व अनुकरणीय है।

गुरु आज्ञा से हर धर्म, संप्रदाय के हर विधा के साहित्य का आपने अध्ययन किया। गुरुदेव दीक्षा आदि मुहूर्त प्रायः आपसे ही निकलवाते थे।

उदयपुर चातुर्मास में एक दिन एक श्रावक से मुनिश्री ने कुछ लिखने के लिए पेन माँगा तो उसने इससे-उससे माँगकर शोर मचाया, तब मुनिश्री ने मन में यह संकल्प कर लिया कि आइंदा किसी से कुछ माँगना नहीं। उदयपुर चातुर्मास में आपके पिता भागचंदजी व माता मुन्नीदेवी ने तपस्वी सम्राट से सात प्रतिमा के व्रत स्वीकार किये।

शीतकालीन वाचना में गुरुवर ने त्रिलोकसार, समाधितंत्र व इष्टोपदेश का स्वाध्याय संस्कृत टीका के साथ कराया, जिसका आपने गहरी रुचि के साथ अध्ययन किया। संस्कृत व प्राकृत का विशद ज्ञान होने के कारण आपको अर्थ समझने में जराभी कठिनाई नहीं आई। यही नहीं आपने इष्टोपदेश व समाधितंत्र कंठस्थ कर लिए। जिन्हें अपने प्रवचनों में धाराप्रवाह बोलने लगे। आचार्य श्री भी आपकी योग्यता, श्रमसाधना, लगन व कुशाग्र बुद्धि की अक्सर प्रशंसा करते रहते। कुशल वक्ता के रूप में जब आप धर्मोपदेश देते, आचार्य श्री के चेहरे की चमक व मौन खुशी देखते ही बनती थी।

प्रगति आश्रम

4 अप्रैल को श्रावक श्री महावीर मिंडा के निवेदन पर आप आचार्य संघ के साथ 'प्रगति आश्रम' गए। यह संस्था युवतियों को आश्रय दे शिक्षा का प्रबंध करती है। यहाँ एक चैत्यालय व निर्माणाधीन समवशरण का कार्य देखा। यहाँ प्रेरणास्पद उद्‌बोधन दिया। हर विषय पर आपकी गहरी पैठ व गूढ़, गहन, विशुद्ध ज्ञान देख क्या विद्वतजन व क्या साधारणजन हर कोई दांतों तले उंगली दबाने लगता।

15 अप्रैल को 'गोवर्धन विलास' में आयोजित महावीर जयंति के उपलक्ष्य में सामूहिक कार्यक्रम में आप सम्मिलित होने गए। वहाँ भगवान महावीर के सिद्धांतों व 'जियो और जीने दो' पर आपने धाराप्रवाह प्रभावोत्पाद उद्‌बोधन के माध्यम से जैन धर्म की महिमा मंडित की। आपने कहा कि ''वर्तमान में 'शव' होती मनुष्यता को पुनर्जीवित कर उसमें 'शिवत्व' का प्राण मंत्र फूंकने के लिए भगवान महावीर के सत्य, अहिंसा, दया, प्रेम के सिद्धांत महावीर के युग से भी ज्यादा प्रासंगिक है। मात्र भगवान महावीर के अहिंसा के सिद्धांत को अपनाने से ही विश्व शांति कायम रह सकती है।''

19 अप्रैल को पुणे लार्सुणे की ब्र. नेहा दीदी (संगीता) आचार्य संघ के दर्शन के लिए आई। आचार्य संघ के दर्शन कर उनके भाव बदल गए। उन्होंने आचार्य श्री को दीक्षा के लिए श्रीफल अर्पित किया और अचानक 20 अप्रैल को दीक्षा की स्वीकृति मिल गई।

24 अप्रैल 2003 में 'प्रगति आश्रम प्रांगण' में आचार्य श्री महावीर कीर्तिजी के जन्म जयंति महोत्सव के दिन उन्हें क्षुल्लिका दीक्षा दे दी गई। आचार्य श्री ने कहा श्री छगनलाल विमलाबाई की यह बेटी विदेशों में भी धर्म प्रचार करेगी।

मुनि श्री ने इस पुण्य सुयोग पर अपने उद्बोधन में कहा कि ''भाड़ में चना फुटाने वाला चने फोड़ते समय चनों को कपड़े से दबाता रहता है। फिर भी फुटाने में से एकाध चना बाहर फूटकर उछलकर आ ही जाता है। ठीक वैसे ही ब्र. नेहा दीदी भी उन हजारों-लाखों लोगों में से एक है जो सारी मोह-माया, रिश्ते-नातों के बंधन तोड़ फुटाने (भाड़ में फूटकर बाहर आने वाला चना) की तरह आगे आ संयम के पथ पर अग्रसर हो गई।'' मुनि श्री ने कहा कि ''नेहा दीदी की तरह संसार में किसी भी क्षण व्यक्ति को वैराग्य हो सकता है और वह संसार सागर से पार उतर सकता है।''

27 अप्रैल को मुनि श्री गुरुसंघ के साथ हिरणमगरी सेक्टर 11 में 'महासमिति' के अधिवेशन में गए। 4 मई को अक्षय तृतीया का महापर्व बड़े भक्तिभाव से आपके मार्गदर्शन में संपन्न हुआ। एक तरह से आचार्य श्री अब अपने सारे कार्यों की बागडोर युवा मुनि के हाथों सौंपकर निश्चिंत हो गए थे।

14 मई श्रुतपंचमी को सेक्टर 11 में विहार कर पाँच दिवसीय प्रवास के बाद आपने आयड़ में प्रवेश किया।

यहाँ के लम्बे प्रवास में गुरु आज्ञा से आपकी प्रेरणा व मार्गदर्शन में अनेक धार्मिक कार्यक्रमों, मंडल विधान एवं कलशारोहण का आयोजन हुआ जिसमें डूंगरपुर, सागवाड़ा, सलूम्बर, उदयपुर के भक्तगण व श्रावक श्रेष्ठी पधारे। काफी तादाद में आ-आकर समाज ने चातुर्मास के लिए श्रीफल भेंट किए। अंततः उदयपुर चातुर्मास की घोषणा हो गई।

2 जुलाई 2003 की प्रातःकालीन मंगल वेला में मुनि श्री आचार्य संघ के साथ विभिन्न वाद्य यंत्रों व विशाल जनसमूह के साथ 'पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर' मंडी की नाल पहुँचे। 6 जुलाई को वहीं पास स्थित हूमड़ भवन में चातुर्मास स्थापना के निमित्त पहुँचे।

12 जुलाई की पावन पुण्य बेला में 'हूमड़ भवन' के विशाल प्रांगण में चातुर्मास स्थापना विधि संपन्न हुई व मंगल कलश स्थापना हुई।

इसी अवधि में शीतकालीन वाचना के बाद आचार्य गुरु ने 'योगसार प्राभृत' और 'अध्यात्म अमृत कलश' की वाचना संस्कृत टीका सहित की थी, वह भी उदयपुर चातुर्मास स्थापना पश्चात ही पूर्ण हुई। वाचना के बाद आप (मुनि श्री) इन ग्रंथों का कई-कई बार गहन अध्ययन कर हृदयंगम करते थे उसके बाद उन पर मनन, चिंतन व मंथन चलता रहता था। तीक्ष्ण बुद्धि के कारण कई गाथाएँ व अंश कंठस्थ कर लेते थे। जिनके माध्यम से वे आगम के गूढ़ गहन प्रसंगों की सटीक व सरल व्याख्या कर धर्मोपदेश के माध्यम से समाज को समझाते थे।

संघ में रहते हुए उनका उद्देश्य गुरु से ज्ञानार्जन करना था। यद्यपि आप कई प्रश्न पूछते थे किंतु इतना बड़ा संघ व गुरुदेव द्वारा निरत वाचना में इतने गूढ़ गहन ग्रंथों का अध्ययन कराने के कारण तथा अन्य साधु संतों द्वारा पूछे जाने वाले व दिए जाने वाले प्रश्नों उत्तरों से भी आपके ज्ञान में वृद्धि होती जा रही थी। आपने देखा कि चाहे जंगल में विश्राम हो, अनुकूल- प्रतिकूल परिस्थितियाँ हो, विहार हो तब भी आचार्य श्री वाचना व स्वाध्याय के लिए वक्त निकाल लेते थे। वहाँ, पैदल चले हैं, थक गए हैं, आज स्वाध्याय नहीं, आराम होगा, ऐसा तो कभी किसी ने सोचा ही नहीं।

मुनि श्री स्वयं जीवन का एक-एक अमूल्य क्षण ज्ञानार्जन में बीता, उसे स्वयं की और औरों की आत्मोन्नति में प्रवचनों, संबोधनों के माध्यम से उपयोग में लाते थे। चूँकि विद्यार्थी जीवन में भी उन्हें बहुत अच्छे शिक्षक/गुरु मिले थे जिनसे वर्णी भवन विद्यालय में उन्होंने धार्मिक ग्रंथों व संस्कृत व प्राकृत का अध्ययन किया था। अतः मुनि श्री समय

का सदुपयोग कर साथ-साथ संस्कृत व प्राकृत भाषा जो हमारी मूल भाषा है, जिसमें हमारे सारे ग्रंथ लिखे हैं, उनका गहन अध्ययन कर पारंगत होते गए। यही कारण है कि बाद में उन्होंने कई ग्रंथ संस्कृत व प्राकृत में लिखे। मुनि श्री प्रत्येक क्षेत्र में स्वयं को कठिन साधना की भट्टी में तपा रहे थे, जिससे उनके व्यक्तित्व में कुंदन कांति का सा निखार आता जा रहा था। और वे महान गुरु उन्हें (शिष्य) को आगे बढ़ने का हर मार्ग सुलभ कराते जा रहे थे। वे शिष्य की अद्‌भुत प्रतिभा व कठिन साधना के कायल थे।

चातुर्मास स्थापना के बाद 19 जुलाई 2003 से 'धवलाजी' पुस्तक छह की वाचना प्रारंभ हुई। इसे आचार्य वीरसेन ने षट्खंडागम जीवस्थान नामक प्रथम खंड की चूलिका के रूप में लिखा है। इसमें अनेक महत्वपूर्ण विषयों के बारे में लिखा गया है। आपकी कई दिनों से इस ग्रंथ को गुरुमुख से पढ़ने-सुनने की इच्छा थी। आपके ही अति आग्रह से प्रेरित व ज्ञान पिपासा को शांत करने गुरुवर के द्वारा इस महाग्रंथ का वाचन शुरू हुआ था।

गुरु निश्रा में महान ग्रंथों का ज्ञानार्जन करते हुए आपने अपने अंदर एक अलौकिक सामर्थ्य के खजाने को ढूंढ लिया। आपने समझ लिया कि आपमें अनंत शक्ति का ऊर्जा भंडार भरा पड़ा है। मुझे तो बस अपनी इस अंतः शक्ति को अनावृत व जागृत करना है और उन्होंने अपनी सारी श्रम साधना अपने अंतस की महाशक्ति को मात्र पहचानने ही नहीं प्रयोग में भी लगा दी। उनके उत्साह-उल्लास में कई-कई गुना वृद्धि होने लगी। नकारात्मकता तो थी ही नहीं फिर अंश मात्र होगी वह भी कहाँ विलोपित हो गई पता ही न चला। उनके बढ़ते आत्मविश्वास से कई-कई उपलब्धियाँ उन्हें प्राप्त होने लगी, जिसका उन्हें तो पता नहीं था किंतु व्यवहार, आचरण व प्रवचनों में प्रगट होती रहती थी।

धवला पुस्तक छह की वाचना 19 जुलाई से प्रारंभ होकर 4 अक्टूबर तक चली। आचार्य धरसेन द्वारा दिए ज्ञान व आचार्य पुष्पदंत व भूतबलि द्वारा लिपिबद्ध 'षट्खंडागम' ग्रंथ के 'जीवस्थान' नामक प्रथम खंड की चूलिका के रूप में आचार्य वीरसेन स्वामी ने यह धवला ग्रंथ लिखा है। इसमें अनेक महत्वपूर्ण विषयों पर प्रकाश डाला गया।

शिष्यों की जिज्ञासा शांत करते हुए आचार्यश्री ने बताया कि 'षट्खंडागम' छह भागों में लिपिबद्ध है इसलिए इसे षट्खंडागम कहते हैं। ये आगम के छह भाग (1) जीवट्ठाण (जीव स्थान), (2) खुद्दाबंध (क्षुद्रकबंध), (3) बंध सामित्त (बंध स्वामित्व), (4) वेयणा (वेदना), (5) वग्गणा (वर्गणा) और (6) महाबंध है। पाँच खंडों पर लिखी गई टीका 16 भागों में व महाबंध की सात पुस्तकें अलग से हैं। आचार्य श्री ने छटे भाग का स्वाध्याय शुरू करवाया था। मुनि श्री सुनीलसागरजी की इच्छा थी कि वे समस्त भागों का स्वाध्याय स्वयं करें। ताकि वे आगम की गूढ़ गहनता को समझ सकें। आचार्य श्री तो अभी सिर्फ एक भाग का विस्तृत अध्ययन करा रहे हैं। मुनि श्री नित प्रति अपने ज्ञानवर्धन में सक्रिय थे और उसके आधार पर अपनी चर्या मजबूत व परिणामों की विशुद्धि बढ़ाते रहे। आचार्य श्री की आज्ञा व प्रेरणा से आप अन्य भागों का अध्ययन करने लगे व समय-समय पर गुरुदेव का मार्गदर्शन लेते रहे।

निरंतर स्वाध्याय व ज्ञानाभ्यास से हर विषय पर आपकी गहरी पैठ हो गई। ज्ञान का विशद् भंडार आपके पास संचित होने से आपमें आत्मविश्वास कूट-कूटकर भरने लगा। धाराप्रवाह आगमोक्त दिए जाने वाले प्रवचनों को सुन-सुन क्या श्रावक और क्या श्रमण- सबके भावों की परिणति विशुद्ध व विमल होने लगी।

अब चाहे गोष्ठियाँ हों या विद्वत सभा, शिविर हो या अन्य कोई बड़ा से बड़ा आयोजन, आपका धुआंधार प्रवचन लोगों के हृदय में अच्छे से बैठ जाता। अब तो स्थिति यहाँ तक हो गई थी कि धर्मसभा में लोगों को आपके प्रवचनों का बेसब्री से इंतजार रहता था।

उदयपुर में आयोजित (12 अक्टूबर) 'अहिंसा राष्ट्र की आधारशिला' विषय पर सार्वजनिक सभा में आपने अपने सारगर्भित विचार व्यक्त किए। आचार्य श्री के आशीर्वचन के पूर्व आपके द्वारा लिखित 'संक्षिप्त जैन इतिहास' कृति का लोकार्पण हुआ।

14 नवंबर को ब्र. माणिकलाल हापड़िया की मुनि दीक्षा होकर उनका नाम मुनि सुखसागर रखा गया। इस कार्यक्रम में केंद्रीय समाज कल्याण मंत्री कैलाश मेघवाल तथा विधायक त्रिलोक पूर्विया भी उपस्थित थे। इस महोत्सव में उनके द्वारा मुनि श्री की प्राकृत में लिखि कृति 'भावणासारो' का विमोचन हुआ।

इधर आचार्य श्री सन्मतिसागरजी की प्रेरणा से लोग दीक्षा ले संयम के पथ पर अग्रसर हो आत्मकल्याण कर रहे थे और एक तरफ मुनि श्री सुनीलसागरजी मेघ की तरह उनसे ज्ञानार्जन कर आत्मकल्याण के साथ-साथ विश्व कल्याण में अपना योगदान दे रहे थे। गुरु की कृपा से वे अपनी ज्ञान निधि बढ़ा भी रहे थे, बांट भी रहे थे। वे चुपचाप गुरु के दर्शन, ज्ञान, चारित्र, व्यक्तित्व व कृतित्व का विहंगावलोकन कर स्वयं का आत्मावलोकन करते थे, निरीक्षण-परीक्षण करते थे और फिर कहीं वे स्वयं को उस कसौटी पर कसते थे। स्वयं को अपनी साधना की पावक में इतना तपाते थे ताकि त्याग, तप व संयम के मुद्‌गर की मार सह खुद को कुंदन सा निखार सके।

पिच्छिका परिवर्तन

श्री आ. आदिसागरजी (अंकलीकर) दीक्षा दिवस पर आयोजित विशाल कार्यक्रम में 28 नवंबर 2003 को भव्य पिच्छिका परिवर्तन हुआ। आचार्य संघ के समस्त साधुवृन्दों के इस भव्य पिच्छिका परिवर्तन समारोह में राजस्थान कांग्रेस अध्यक्ष सुश्री गिरिजा व्यास, विधानसभा प्रतिपक्ष नेता श्री गुलाबचंद कटारिया, विधायक त्रिलोक पूर्विया, भाजपा अध्यक्ष कुंतीलाल जैन के अलावा उदयपुर के सारे उपनगरीय जैन समाज के अध्यक्ष, मंत्री व विशिष्ट, आम, खास हजारों लोग उपस्थित थे। इस अवसर पर इतने संतों के होते हुए भी आपको विशेष रूप से धर्मसभा को संबोधित करने का अवसर मिला। समाज में एक विलक्षण प्रतिभायुक्त संत के रूप में आपकी विशिष्ट पहचान हुई। मधुरवाणी में युवा ओज और जोश से भरे आपके प्रवचन उदयपुर में काफी चर्चित व लोकप्रिय रहे।

विहार

28 नवंबर को 'हूमड़ भवन' से संघ विहार कर चेतन प्रकाश जैन उपनाम 'महावीर भगत' के सहेली नगर स्थित नवनिर्मित भवन में ठहरा। जहाँ गृह जिनालय की स्थापना के कार्यक्रम का आयोजन हुआ। यहाँ आचार्य श्री के शिष्य श्री जयसागरजी व बालाचार्य श्री योगींद्रसागरजी का भी आगमन हुआ। श्री महावीर भगत के आग्रह पर संघ का यहाँ 22 (बावीस) दिनों तक मंगल प्रवास हुआ। यहाँ आचार्य श्री ने 'सवार्थसिद्धि' ग्रंथ की वाचना प्रारंभ की। यह ग्रंथ आचार्य पूज्यपाद द्वारा तत्त्वार्थ सूत्र ग्रंथ पर रची गई टीका है।

मुनि श्री ने वाचना/स्वाध्याय में पाया कि इसमें विषय का स्पष्टीकरण है। शब्द सौष्ठव तथा व्याकरण व्युत्पत्ति आदि अनेक विशेषताएँ हैं। इस कारण यह टीका स्वतंत्र ग्रंथ का बोध कराती है। अतः पूज्यपाद की तपस्या के ताप से निखरा यह ग्रंथ मूलतः पठनीय, मननीय, ग्रहणीय है। मुनि श्री (सुनीलसागरजी) हर वाचना दिल व दिमाग से मन लगाकर पढ़ते। गुरु मुखारविंद से अपनी शंकाओं का समाधान बड़े ध्यान से सुनते तथा यदा-कदा अन्यान्य द्वारा पूछे प्रश्नों का समाधान भी मन लगाकर सुनते।

आचार्य श्री एक के बाद एक ग्रंथ का पाठन करा मेघ की तरह ज्ञानामृत की वृष्टि कर रहे थे और इधर शिष्य मुनि श्री सुनीलसागर अपनी मन मृदा को मृदु, नम व मुलायम करने का प्रयास कर रहे थे। आत्म चिंतन के बीज बो रहे थे ताकि उस पर मुक्ति की फसल लहलहा सके।

यहाँ से आप संघ के साथ विहार कर आयड़ होते हुए निकटवर्ती कानपुर ग्राम पहुँचे। आपने ग्रामवासियों की असीम गुरु भक्ति व समर्पण देखा। संघ की व्यवस्था में यह गाँव, जहाँ छोटा-सा जैन समाज रहता है, ने नगरीय व्यवस्था को

भी मात दे दी। यहाँ संघ समाज के मुखिया थावरचंद के घर में ही ठहरे थे। आचार्य संघ के प्रवास के दौरान उनकी माँ सीरियस हो गई। उन्होंने उनको आचार्य श्री के दर्शन कराए। आचार्य श्री ने उनकी स्थिति देख उन्हें 'सल्लेखना' लेने की सलाह दी, किंतु परिजनों की इच्छा थी (लोक व्यवहार से) कि एक बार डॉक्टर को दिखा दें, फिर जैसा भी आप कहेंगे वैसा करेंगे। वे उन्हें लेकर गाँव के बाहर तक ही पहुँच पाए कि उन्होंने णमोकार का जाप करते हुए अपनी अंतिम श्वांस छोड़ी। रोना-धोना मच गया। लाश घर लाए व अंतिम संस्कार किया गया। उनके कार्यक्रम में शामिल होने पास के गाँव से एक वृद्ध आया था। घर जाकर तीसरे दिन उसने भी अंतिम श्वांस छोड़ दी। मुनि श्री ने उसे णमोकार महामंत्र का जाप करते रहने का नियम दिलाया था। सो उसने अंतिम वक्त णमोकार मंत्र जपते हुए अपने प्राण त्यागे।

मुनि श्री सुनीलसागरजी संसार की अनित्यतता के बारे में सोचने लगे। वे दो आत्माएँ- अभी कुछ समय पूर्व उनके जीवन दीप जल रहे थे, मृत्यु की आँधी ने एक झटके में बुझा दिए। कल जो देह गुरु चरणों में माथा झुका रही थी, आज वही देह प्राण निकलते ही लाश बन गई, जिसे छूने पर लोग नहाते हैं। यह सुंदर देह निर्जीव होते ही पलभर में कितनी अपावन बन जाती है। थावरचंदजी से आचार्य श्री माँ को सल्लेखना दिलाने की बात कह रहे थे, पर वे डॉक्टर को दिखाने ले गए। रास्ते से ही लौटना पड़ा। जैसी जीव की गति होती है वैसी ही मति हो जाती है और वह वृद्ध। इतनी दूर से उस घर के शोक में सम्मिलित होने आया, उनसे णमोकार मंत्र के जाप का नियम लिया और जाप जपते-जपते चल बसा। यही संसार है। सब कुछ यहाँ छूट जाना है, सुंदर देह भी। कुछ साथ नहीं जाता। फिर भी नासमझ जीव सदा तेरी-मेरी का, राग-द्वेष का, धन-दौलत कमाने का ताना-बाना बुनता रहता है। उसकी तृष्णा का कभी अंत नहीं होता। माया ठगीनि हमेशा ठगती रहती है और अंततः वह भोला प्राणी ठगाता ही रहता खाली हाथ चला जाता, कुछ भी साथ में नहीं जाता। कभी जन्म-मरण के कुचक्र से बचने/छूटने का पुरुषार्थ नहीं करता। और संसार में भटकता दुःख पाता रहता है और मुनि श्री इस प्रकार बारह अनुप्रेक्षाओं के चिंतन में तल्लीन हो निज स्वभाव में खो गए।

वे सोच रहे थे मृत्यु का तीर तरकश लिए यमराज सामने खड़ा है, पर किसी को डर नहीं लगता। किसी के मातम में शोक मनाने वाला स्वयं को अमर सोचता है, पर लौटते ही... नादान मनुष्य! व्यर्थ में हीरा नर जन्म गंवा देता है और चौरासी के चक्कर खाता फिरता है। नानाविध दुखों से विकल होता रहता है। अस्तु यहाँ रोज गाँव के मध्य संतों के प्रवचन होते थे। मुनि श्री सुनीलसागरजी के सिर में यहाँ 15-20 दिनों से भयंकर पीड़ा थी व आँखों में भी दर्द था। संघस्थ साधुओं को उनकी चिंता होने लगी। 17 जनवरी 2004 को इस छोटे से गाँव कानपुर में एक विशाल धर्मसभा हुई जिसमें राज्य व केंद्र के बड़े-बड़े नेतागण, एस.पी., कमीश्नर आदि अधिकारीगण तथा राजनैतिक व सामाजिक कार्यकर्ता उपस्थित थे। स्वास्थ्य ठीक न होने के बावजूद भी मुनि श्री ने बोधिपरक व प्रेरणादायी प्रवचन दिया।

यात्रा सतत जारी थी। आाचर्य संघ के साथ आप कानपुर गाँव से विहार कर 21 जनवरी 2004 को लकड़वास ग्राम पहुँचे, जहाँ समाज के करीब 15 घर व दो जिन मंदिर थे। पद संचलन में आपने देखा कि गाँवों के लोगों में गुरु के प्रति प्रगाढ़ भक्ति भावना व समर्पण है। यही कारण था कि प्रकृति के आँचल में बसे इस गाँव में संघ 8 दिन प्रवास कर नौवें दिन 29 जनवरी को विहार कर पगडंडियों से होते हुए 30 जनवरी को प्रातः देवारी पहुँचा।

लकड़वास प्रवास में एक दिन आहार के पूर्व एक श्रावक के हाथ में अखबार के कागज की पुड़िया देख गुरुदेव गुस्सा होकर बोले- किसकी दवा है? उसे इतना भी पता नहीं कि अखबार का नहीं, भूरा (ब्राउन) कागज उपयोग करना चाहिये। जब श्रावक ने कहा- सुनीलसागरजी की दवा है तो गुरुदेव एकदम चुप हो गए। उन्हें पता था कि सुनीलसागर का दो माह से आधा सिरदर्द है और दवा की परवाह भी नहीं करता है।

तभी सुनीलसागरजी ने मन में सोच लिया कि आज से दवा नाम की चीज का त्याग और उन्होंने इतना बड़ा नियम ले लिया। चूँकि दो दिन बाद ही एक ग्रामीण ने आकर उनके कानों में कोई पत्तों का रस डाला और सिरदर्द ठीक हो

गया।

देवारी में उदयपुर के टाया परिवार द्वारा 'टाया आई हॉस्पिटल' जनकल्याण हेतु संचालित है। संघ के आवास की व्यवस्था टाया परिवार ने यहीं की। हॉस्पिटल के मालिक झमकलालजी टाया (जैन) ने आचार्य श्री से सभी साधुओं की मशीन से आँखों की जाँच कराने का निवेदन व आग्रह किया। उन्होंने कहा कि आप तो विहार करते हुए इधर से गुजर रहे थे। यह तो हमारा सौभाग्य है कि आपके चरण यहाँ पड़ गए। इतने संतों का नेत्र परीक्षण कराने का पुण्यशाली अवसर हमें कहाँ मिलेगा? आप कृपया आज्ञा दीजिए।

आचार्य श्री की आज्ञा से अधिकांश संतों का नेत्र परीक्षण किया गया। कुछ को जरूर समस्या थी। झमकलालजी ने बताया कि यहाँ कम मूल्य पर नेत्र परीक्षण व ऑपरेशन होते हैं। गरीबों का इलाज निःशुल्क किया जाता। निःशुल्क शिविर भी लगते हैं। यही नहीं देव पूजा के लिए यहाँ एक जिनालय है, जिसमें 15 फीट ऊँची पार्श्वनाथ भगवान की खड़गासन, मनोज्ञ प्रतिमा विराजमान है। सभी लोग प्रभु चरणों में यहीं सामायिक करते थे।

बली

यहाँ से संघ के साथ 4 फरवरी को विहार करते आप साकरोदा, कुराबड़ दो-दो दिनी प्रवास के बाद 'बली' नामक गाँव में पहुँचे। समाज के आग्रह पर आप संघ के साथ 18 फरवरी तक वहीं रुक गए। भोले-भाले, सीधे-साधे ग्रामीण श्रावकगण जो भौतिक विभ्रमों से कोसों दूर थे। उनको देखकर ऐसा नहीं लगता था कि वे सुसंपन्न हैं क्योंकि संघ व्यवस्था व अन्य बोलियाँ लाखों में ले रहे थे। मुनि श्री सुनीलसागरजी की प्रेरणा व आचार्य श्री के आशीर्वाद से वहाँ के मंदिर के जीर्णोद्धार की रूपरेखा हाथोंहाथ बन गई व दानदाताओं ने जीभर कर दान दिया। उनका कहना था कि उनका महान पुण्योदय व सौभाग्य था कि इतने बड़े संघ का वहाँ मंगल पदार्पण हुआ व प्रवास रहा।

18 फरवरी को गाँव के खेत के विशाल प्रांगण में आयोजित धर्मसभा में समाज प्रमुख ने कहा कि तपोनिधि आचार्य श्री व उनके श्रीसंघ के चरण पड़ने से तथा इतने संतों का आशीर्वाद पा यह 'बली' ग्राम 'महाबली' हो गया।

इस पर आशीर्वचन में कुशल प्रवक्ता मुनि श्री सुनीलसागरजी ने कहा कि ''बली ग्राम के सीधे, सरल, स्वभावी, सादा जीवन एवं उच्च विचार वाले 'दानवीर' श्रावकों की दानमयी प्रवृत्ति के कारण भी यह 'बली' गाँव 'महाबली' हो गया है। हम सब संतों का आशीर्वाद है कि यह 'महाबली' ग्राम नित नई ऊँचाइयाँ छूता रहे और यहाँ के श्रावकों का मन ऐसा ही सरल-तरल बना रहे। ये और अधिक उन्नति कर धर्म ध्वजा फहराते रहे। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में यहाँ का श्रावक 'महाबली' बन अपना आदर्श उपस्थित करे।''

सलूम्बर

19 फरवरी को 'बली' ग्राम से संघ के साथ विहार कर मुनि श्री सुनीलसागरजी छोटे-छोटे गाँव जगत, रोड़दा, दाँतीसर, करावली आदि में धर्म प्रभावना करते हुए 17 मार्च 2004 को सलूम्बर पहुँचे। जहाँ धूमधाम से संघ का नगर प्रवेश हुआ।

आपके मार्गदर्शन में यहाँ 21 से 30 मार्च तक जिन सहस्त्रनाम महामंडल विधान संपन्न हुआ, जिसमें अच्छी खासी धर्म प्रभावना हुई। 3 अप्रैल को महावीर जयंति प्रतिवर्ष की अपेक्षा और अधिक वृहद पैमाने पर हर्षोल्लास के साथ मनाई गई। आपकी सक्रियता, रुचि व योग्यता को देख आचार्य श्री हर कार्य में आपको ही नेतृत्व सौंप आगे रखते थे। आप कभी किसी कार्य के लिए ना-नुकुर या बहानेबाजी नहीं करते अपितु आपकी तो यही कोशिश रहती कि आपको हर कार्य करने को मिले। आप हर चुनौती में अवसर तलाशते थे। यद्यपि चुनौतियाँ व कठिनाइयाँ मनुष्य का मनोबल

कमजोर करने का काम भी करती है किंतु आप श्री तो ऐसे इस्पाती इरादे वाले संत हैं कि हिमगिरि सी ऊँची कठिनाइयाँ आपके मजबूत इरादों व कर्मठता के आगे हिम सी पिघल कर पानी-पानी होती रहती थी। **यही कारण था कि आप अपने पुरुषार्थ के बल शुरू से हर क्षेत्र में ज्ञान का पुंज समेटते, अनुभवों को आकार देते प्रगति पथ पर आगे बढ़ रहे थे। आपका आत्मविश्वास इस कदर बढ़ता जा रहा था कि आपको कठिन से कठिन कार्य करने में भी कोई कठिनाई नहीं आती।** अपनी कुशलता, योग्यता, मृदुवाणी, मृदुल व्यवहार, मिलनसारिता व नेतृत्व क्षमता से बड़ा से बड़ा काम भी आसान हो जाता था। आचार्य श्री को अपने इस सुयोग्य शिष्य पर गर्व था। वे अपने शिष्य की कार्य कुशलता, सूझ-बूझ व चुनौतियों को चुनौतने की क्षमता से स्वयं को गौरवान्वित समझते थे। मुनि श्री गुरु मनसा से अनजान बड़े उत्साह व लगन से संघ का हर उत्तरदायित्व निभाते चले जा रहे थे और इधर तपस्वी सम्राट परंपरा के भावी भास्कर को बाल रूप में संस्कार दे चमका रहे थे। यद्यपि वे महागुरु जानते थे सूरज तो स्वयं प्रतापी होता है।

सुयोग्य शिष्य

युवा मुनिश्री सुनीलसागरजी अपनी विनम्रता, मेहनत, पुरुषार्थ, मृदु व्यवहार व मधुर वाणी व आज्ञा पालन के कारण आचार्यश्री सन्मतिसागरजी के विशाल संघ में उनके होनहार, प्रभावी, लाड़ले, विशिष्ट व चहेते शिष्य रहे हैं। ऐसे में वहाँ समन्वय के साथ इतना लम्बा समय गुरु शरण में रहना, अपने आप में एक आदर्श है। शिष्य के विशेष गुणों का परिचायक है। मुनिश्री का सोच था कि गुरुदेव की मुझ पर विशेष कृपा है, मेरा परम सौभाग्य है, किंतु इसका मतलब यह कदापि नहीं कि इतराते रहना या मान में फूलकर कुप्पा हो अन्य दूसरे साधर्मियों को कुछ न समझना। उन्होंने छोटे-बड़े जो जिस संस्कार व भावना वाला है, उसे जानकर उनके साथ पूर्ण विनय सेवा, प्रेम में कभी कोई कमी नहीं आने दी।

समस्या तब होती है जब आप खास बनना व दिखाना चाहते हो, स्वार्थ सिद्ध करना हो। यहाँ तो मुनिश्री की अत्यंत शांत निःस्वार्थ साधना, जिसमें सबको अवसर मिले, सब आगे रहें, सीखें यह सद्भावना व उदारता रहती जिस कारण कहीं किसी को कभी भी दिक्कत नहीं आती थी। चार बर्तन हों तो वे बजते ही हैं, बर्तन खाली हो तो ज्यादा आवाज करते हैं किंतु भरे बर्तन में कुछ नहीं होता। कुछ हुआ तो भी समझौता व समता भाव, छोटे बनकर क्षमा भाव व पूर्ण समर्पणता यह विशाल संघ में रहने के कुछ टिप्स हैं जो मुनिश्री ने अपनाए हुए थे। यही कारण है कि मुनिश्री पूरे संघ से प्रेम व सम्मान पाते रहे तथा बड़े महाराजजी की समाधि के पश्चात संघ हो या संघपति या समाज, सबने एक स्वर में एक ही नाम लिया था सुनीलसागरजी! पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी होंगे।

वैसे अपने में ही रहने, कोई साधर्मी विकल्प में दिखे तो वात्सल्य पूर्ण स्थितिकरण करना वरना कोई हस्तक्षेप या पंचायत या शिकायत का कोई काम नहीं। प्रतिस्पर्धा नहीं, परस्परता से आगे बढ़ना, न किसी से ईर्ष्या, न होड़, अपनी मंजिल, अपनी दौड़ से निरंतर आगे बढ़ना यह आपके जीवन का मूल मंत्र था, आज भी है।

इतनी छोटी वय के होने के बावजूद बड़े महाराजजी अनेकों बार मुनिश्री से सलाह लेते, चर्चा करते व नए दीक्षार्थियों की जवाबदारी आपको सौंप देते थे।

रीछा-विहार

14 अप्रैल 2004 को आचार्य श्री के साथ सलुम्बर से विहार कर पास के ही ग्राम टोडा में संघ का पदार्पण हुआ। यहाँ पर रीछा ग्राम के श्रावकगणों ने मुनि श्री सुनीलसागरजी को वहाँ के जिनालय के शिलान्यास कार्यक्रम में सान्निध्य

प्रदान करने के लिए भेजने की आचार्य श्री से प्रार्थना की। आचार्य श्री जानते थे कि शिष्य सुनीलसागर की चारित्रिक निष्ठा, गंभीरता व आध्यात्मिकता के कारण समाज पर अभूतपूर्व प्रभाव है। उनकी विद्वता व शिष्ट सौम्य व्यवहार के कारण बड़े-बड़े पंडित, विद्वान, नेता व समाज के लब्ध प्रतिष्ठित लोग उनसे प्रभावित होकर उनसे मिलते हैं, चर्चा करते, मार्गदर्शन लेते हैं। पंडित व ज्ञानीगण उनके विशद आगम ज्ञान का दोहन करते हैं। उन्हें अपने इस विलक्षण मेधा शक्ति व व्यवहार कुशल, सदाचारी, सौम्य शिष्य पर नाज था। उन्हें तो पूर्ण विश्वास था कि मुनि सुनीलसागरजी वहाँ अच्छी धर्म प्रभावना करेंगे। अतः उन्होंने मुनि श्री सुनीलसागरजी व सुंदरसागरजी को उनके साथ रीछा के श्रावकों के साथ भेज दिया।

रीछा की धरती पर मुनि श्री सुनीलसागरजी के चरण क्या पड़े! वहाँ तो बहारें ही बहारें आ गईं। मेरी ये पंक्तियाँ साकार हो उठी-

''जहाँ पड़ते चरण इनके बुझे मन दीप जलते हैं
मरुधर में भी पग धर दे वहाँ पर फूल खिलते हैं।''

रीछा में मुनि श्री ने अपनी क्षमता, योग्यता, ज्ञान आदि का पूर्ण दोहन कर समाज पर खूब करुणा, कृपा बरसाई। लोग इस हद तक आपसे प्रभावित हुए कि आनन-फानन 4 मई से 18 मई तक धर्मज्ञान पूजन प्रशिक्षण व ग्रीष्मकालीन शिक्षण शिविर का आयोजन किया गया। सिर्फ रीछा ही नहीं आसपास से भी हर आयु वर्ग के लोगों ने जिसमें भाग लिया। मुनि श्री की दिन दूनी रात चौगुनी प्रसिद्धि बढ़ती जा रही थी। आपने समाज पर अपने असाधारण व्यक्तित्व की छाप इस कदर छोड़ी कि लोग आपको छोड़ने को तैयार नहीं होते।

सच है, मेहनत व पुरुषार्थ करने वाले हाथों को ही सफलता के मोती प्राप्त होते हैं। गहरे पानी में डुबकी लगा-लगाकर जिसने खोजा वे ही मोती बटोर-बटोर कर ऊपर आए। लेकिन जो साधना व पुरुषार्थ करने से डरकर किनारे पर बैठे रहे, डूबने से डरते रहे, आत्मविश्वास खोते रहे, वे दुनिया में कुछ भी नहीं खोज पाए। सृजन- विसर्जन माँगता है। जब तक बादल खाली नहीं होंगे तब तक धरती तर नहीं होगी, फसलें नहीं हरियाएँगी। अंधेरे की कालिमा को चीरने के लिए सूरज को अपने डेरे से बाहर निकलना होगा। तट को तीरथ करने सरिता का प्रवाहमान बने रहना होगा। रुक गई कि गंदा पोखर बन गई। मुनि श्री सुनीलसागरजी का चिंतन ऐसा ही आकाश की ऊँचाई छूने वाला, विष्णु सा विराट व चाँद-तारों से भी आगे बढ़ने वाला था। ऐसे चैतन्य में चेतना जगाने वाले चिंतन को लेकर वे युवा यशस्वी मनस्वी संत अपने जीवन पथ पर अभीष्ट लक्ष्य के साथ आगे बढ़ रहे थे।

इसी बीच 21 मई को मुनि श्री सुविधिसागर का ससंघ रीछा में आगमन हुआ। आप दोनों मुनियों ने समाज के साथ उनकी अगवानी की। 21 मई को आचार्य संघ के रीछा आगमन पर आप सबने उनकी भावभीनी भव्य अगवानी की। आचार्य श्री शिष्य की समाज पर गहरी पैठ देख गदगद हो गए। 24 मई को श्रुतपंचमी पर्व आपके मार्गदर्शन में सोल्लासपूर्वक मनाया गया।

आचार्य श्री वर्द्धमानसागरजी का मिलन

13 जून को संघ के साथ पद विहार कर निठुआ गामड़ी में आपने रात्रि विश्राम किया। सबेरे श्री संघ के साथ पारसोला की ओर विहार किया, जहाँ आचार्य श्री वर्द्धमानसागरजी महाराज ससंघ तपोनिष्ठ आचार्य श्री सन्मतिसागरजी (ससंघ) की अगवानी के लिए बेताब थे। वे प्रातःकालीन बेला में पारसोला से दो कि.मी. दूर चलकर मिलन हेतु बनाए गए पांडाल में आकर बैठ गए। उनके लिए आचार्य श्री से मिलन का एक-एक पल का इंतजार युगों सा लंबा प्रतीत हो रहा था। वे श्रावकों से उनके एक-एक पल की जानकारी ले रहे थे। अंततः जब उनसे न रहा गया, तब आचार्य श्री की

अगवानी के लिए पांडाल से उठकर पुनः चल दिए। उधर आचार्य श्री सन्मतिसागरजी ससंघ उनसे मिलन की आकांक्षा में झपाटे से आगे बढ़ रहे थे। मानो दोनों आचार्यों के पैरों में गतिचक्र लग गए हों। अनजाने ही हृदय की तीव्र भावनाएँ उन्हें एक-दूसरे से मिलने के लिए बेचैन किए दे रही थी। दोनों ओर से पद संचलन तेजी से हो रहा था।

अंततः एक स्थान पर दोनों आचार्यों का महामिलन हो ही गया। मौन ही मौन दोनों ने एक-दूजे के हृदय की भाव भाषा पढ़ ली। 14 जून 2004 सुबह आठ बजे दो युवाचार्यों के महामिलन का आत्मविभोर कर देने वाला यह अविस्मरणीय दृश्य मुनि श्री सुनीलसागरजी के साथ हजारों- हजार भाग्यशाली आँखों ने देखा। चारों ओर जय जयकारे गूंज रही थीं। त्रिपरिक्रमा व त्रिभक्तिपूर्वक आचार्य श्री वर्द्धमानसागरजी ने आचार्य श्री सन्मतिसागरजी की वंदना की। सारे लोग दोनों आचार्यों के प्रति श्रद्धा से अभिभूत थे। आस्था का सैलाब उमड़ पड़ा। दोनों संघ के साधुओं ने भी आचार्य वंदना के बाद आपस में अप्रतिम वात्सल्य के साथ आपस में वंदना-प्रतिवंदना की। मुनि श्री सुनीलसागरजी अपार जनसमूह के साथ इस विहंगम दृश्य को देख स्वयं को धन्य मान रहे थे।

पारसोला के तीन जिनालयों के दर्शन कर आचार्य संघ अपार जनसमूह के साथ 'सन्मति भवन' पहुँचा। जहाँ आचार्य श्री सन्मतिसागरजी, आचार्य श्री वर्द्धमानसागरजी व गणिनी आर्यिका सुपार्श्वमति माताजी के प्रवचन हुए।

दोपहर 3 से 5 बजे दो घंटे दोनों संघों के बीच तत्त्व चर्चा चली, जिसमें मुनि श्री सुनीलसागरजी ने अनेक प्रश्न पूछकर समस्त साधुओं को चकित कर दिया। यद्यपि तपस्वी सम्राट के संघस्थ मुनि आर्यिका उनकी विलक्षण प्रतिभा से परिचित थे, पर आज पूछे गए उनके प्रश्नों से उनके अकूत गूढ़-गहन अध्ययन का पता चला। माताजी व आचार्य श्री वर्द्धमानसागरजी ने आचार्य भगवान श्री सन्मतिसागरजी से कहा आपका यह शिष्य बहुत आगे बढ़ेगा। आपको तो शिष्य रूप में महारत्न प्राप्त हो गया है जो कालांतर में परंपरा का मुकुट मणि बनेगा। कौन जानता था कि वह भविष्यवाणी सच साबित हो जाएगी।

दूसरे दिन आचार्य श्री ने संल्लेखनारत आर्यिका सुप्रभामति माताजी को आशीर्वाद एवं संबोधन दिया, जिनालयों का दर्शन करते हुए नरवाली के लिए विहार कर दिया।

दो आचार्यों के इस 22 घंटों के महामिलन में मुनि श्री सुनीलसागरजी ने देखा कि इन दो आचार्यों में कितना वात्सल्य, आपस में एक-दूसरे के प्रति कितना विनय और वैयावृत्ति के गुण हैं। गुरुवर आचार्य श्री सन्मतिसागरजी की सरलता, हृदय की उदारता व विशालता से तो वे परिचित थे ही किंतु माताजी व आचार्य श्री वर्द्धमानसागरजी की आचार्य संघ के प्रति इतनी प्रगाढ़ विनय व सहृदयता देख पुलकित हो उठे। उनका रोम-रोम आचार्य भक्ति करने लगा। वे उनके प्रति विनयावनत थे।

दोनों आचार्यों व माताजी के सत्संग की अल्पावधि में मुनि श्री सुनीलसागरजी ने पाया कि महापुरुषों का जीवन चरित्र हमें हमारे जीवन को उदात्त व दृष्टिकोण विशाल बनाने की प्रेरणा देता है, उन्हें अपने विद्यार्थी जीवन में पढ़ी तुलसीदासजी की ये पंक्तियाँ याद हो आई-

उज्ज्वल चरित सिखाते हमको, हम भी बन सकते नित उज्ज्वल
जग से जाते समय भूमि पर छोड़े चरण चिह्न निर्मल
चरणचिह्न वे देख कदाचित उत्साहित होवे भाई
भवसागर की चट्टानों से नौका जिनकी टकराई!

युग के महान आचार्यों का मिलन व सान्निध्य मुनि श्री को वात्सल्य, सरलता व एक-दूसरे के प्रति सम्मान व विनय का बहुत बड़ा पाठ पढ़ा गया। वे सोच रहे थे व्यक्ति जितना बड़ा होता है उतना ही वह नम्र व मृदा सा मृदुल होता है। अपने जीवन के पृष्ठों में उन्होंने इस घटना को कनक कलम (यद्यपि संत तो अकिंचन्य, अपरिग्रही होते हैं पर...) से

अंकित कर दी। ये अविस्मरणीय पल सदा-सदा के लिए हृदयांकित हो गए। वे सोच रहे थे महापुरुषों का जीवन सदैव अनुकरणीय होता है। समय-समय पर उनका चरण सान्निध्य प्राप्त होते रहना चाहिए जो जीवन के उत्कर्ष के लिए प्रेरक का काम करता है। सोई सम्मूर्च्छना से जगा आत्म जागृति कराता है ताकि स्वयमेव ही हम प्रकाश की ओर चल पड़ते हैं।

नरवाली- प्रतिष्ठा महोत्सव

पारसोला से विहार कर श्रीसंघ नरवाली पहुँचा, जहाँ नवनिर्मित नंदीश्वरदीप जिनालय की 18 से 20 जून तक प्रतिष्ठा संपन्न हुई। इसमें सारी क्रियाएँ मुनि श्री सुनीलसागरजी ने गुरु आज्ञा से संपन्न कराई। मुनि श्री गुरु निश्रा में रहकर चाहे बड़ा से बड़ा विधानमंडल हो या मंदिर शिलान्यास, वेदी प्रतिष्ठा हो या पंचकल्याणक प्रतिष्ठा या बड़ी से बड़ी धर्मसभा में संबोधन का कार्य, मुनि श्री हर कार्य में विशेष रूप से पारंगत हो गए थे। उनके कुशल नेतृत्व में प्रत्येक कार्य सफल भी होता व प्रशंसनीय भी। दिन पर दिन उनका आत्मविश्वास बढ़ता जा रहा था जो अच्छी बात का सूचक था। आचार्य श्री शिष्य की दिन दूनी रात चौगुनी प्रगति देखकर फूले नहीं समाते थे। कार्य के प्रति उनका उत्साह, लगन व उद्दाम लालसा देख वे मुनि सुनीलसागरजी को प्रोत्साहित करते रहते। गुरु के प्रोत्साहन से प्रेरित वे कई गुना अधिक जोश से काम करते।

15 वर्ष पूर्व दीक्षित मुनि श्री सुविधिसागरजी जिनकी तर्क विवेचना व ज्ञान के क्षेत्र में गहरी पैठ है, अपने छोटे संघ को लेकर आचार्य श्री के साथ नरवाली प्रतिष्ठा महोत्सव में पहुँचे। 20 जून प्रतिष्ठा के अंतिम दिन विशाल जनसमुदाय के बीच उनकी योग्यता देख उन्हें आचार्य पद से सुसंस्कारित किया। अब मुनि श्री सुविधिसागरजी आचार्य श्री सुविधिसागरजी हो गए थे।

मुनि श्री इस घटना से आचार्य गुरु की त्वरित निर्णय क्षमता व व्यक्ति की पहचान की अद्‌भुत शक्ति के कायल हो गए। वे इस बात से अभिभूत व अत्यधिक प्रभावित थे कि गुरुदेव किसी कार्य को कभी आगे नहीं टालते। उनके अनुसार शुभस्य शीघ्रम्। कल किसने देखा है। सरल हृदय आचार्य श्री योग्य व्यक्ति को आगे बढ़ाने के लिए मार्ग प्रशस्त करते रहते हैं। उनका सिद्धांत सब आगे बढ़ें, योग्यता की परचम फहराएँ।

खमेरा चातुर्मास 2004

पिछले नरवाली चातुर्मास से ही खमेरावासी 2004 का चातुर्मास खमेरा करवाने के लिए आचार्य श्री के पीछे लगे हुए थे। आप संघ के साथ 21 जून को विहार कर 23 को खमेरा पहुँचे। नगर प्रवेश पर आपकी अभूतपूर्व अगवानी व संघ का भव्य अभिनंदन हुआ। ध्वजा पताका, निशान, गाजों-बाजों के साथ नगर भ्रमण कराते श्रावकगण आपको जिन मंदिर लाए। एक जुलाई 2004 को चातुर्मास स्थापना की मंगलमय विधि संपन्न हुई। चातुर्मास स्थापना महोत्सव दो जुलाई को गुरु पूर्णिमा, तीन जुलाई को वीरशासन जयंति व चार जुलाई को मंदिर के सामने खाली भूखंड पर नमिनाथ भगवान के जिनालय के शिलान्यास कार्यक्रम के साथ चार दिन तक वृहद पैमाने पर संपन्न हुआ।

गुरु पूर्णिमा के दिन पूजनीय गुरुदेव के करकमलों से शिष्य मुनि श्री सुनीलसागरजी की कृति 'भावणासारो' (प्राकृत भाषा में रचित) भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित संस्करण का लोकार्पण हुआ। गुरु से प्राप्त ज्ञान को लिपिबद्ध कर वे यों ही ग्रंथों का रूप देते साहित्य सृजन करते रहते, जिनमें उनकी आत्मकल्याण व जनकल्याणी भावना सन्निहित रहती।

यहीं पर गुरु पूर्णिमा से ही आचार्य अमितगति द्वारा रचित भगवती आराधना की छायारूप कृति 'मरणकंडिका' का स्वाध्याय/वाचन शुरू हुआ।

मुनि श्री गहरी रुचि से तल्लीन हो इस ग्रंथ का अध्ययन करते रहे। इस अत्यंत सुंदर ग्रंथ में सल्लेखना संबंधित प्रायः सभी विषयों का संक्षिप्त किंतु स्पष्ट उल्लेख है। मुनि श्री ने पाया कि इस ग्रंथ की शैली और रूपांतरण अद्वितीय है इसलिए विद्वज्जनों ने इसे स्वतंत्र ग्रंथ के रूप में मान्यता दी है। संत समाज में यह ग्रंथ अति लोकप्रिय है क्योंकि संत जीवन उत्सव की तरह जीते हुए मृत्यु को महोत्सव बनाने (सल्लेखना लेने) की हर संत की इच्छा रहती है।

7 अगस्त को निर्माणाधीन जिनालय में विराजमान करने नमिनाथ भगवान की मूर्ति लेने श्रावकगण जयपुर गए। 9 अगस्त को 43 इंच ऊँची मूर्ति लेकर खुली कार में लौटे। जगह-जगह मूर्ति की भव्य बधावणी हुई। वेदी में विराजमान करने तक 11 अगस्त से निरंतर प्रतिमा का घृताभिषेक चलता रहा।

सुवीरसागरजी की दीक्षा

बरायठा (सागर) के किशोर ब्रह्मचारी (जन्म 20 फरवरी 1986) आशीष (दसवीं पास) की 22 अगस्त को ऐलक दीक्षा संपन्न हुई। नाम ऐलक सुवीरसागर रखा गया।

26 अगस्त से मुनि श्री सुनीलसागरजी ने उन्हें विशेष रूप से कातंत्र व्याकरण का शिक्षण देना प्रारंभ किया।

5 सितंबर 2004
सर्वधर्म सभा

5 सितंबर को निर्माणाधीन मंदिर प्रांगण में सर्वधर्म समभाव सभा का आयोजन हुआ। इस विशाल सभा में जिले के कलेक्टर व पुलिस अधीक्षक श्री पद्मचंद काला पुलिस दल-बल के साथ उपस्थित रहे। इस विशाल महासभा में 10 साधुओं का केशलोंच हुआ। मुनि श्री सुनीलसागरजी ने 'सर्वधर्म समभाव' के परिप्रेक्ष्य में भगवान महावीर के सिद्धांतों पर आधारित 'अहिंसा व सदाचार' पर विभिन्न ग्रंथों के सूत्रों, दृष्टांतों आदि के आधार पर प्रभावोत्पादक शैली में अपना उद्‌बोधन देकर जैन धर्म को महिमामंडित किया। मुनि श्री की विलक्षण प्रतिभा व वक्तृत्व शैली की चारों ओर भूरि-भूरि प्रशंसा होने लगी। हर किसी को लग रहा था कि मुनि श्री उनके मन की ही बात कह रहे हैं। कलेक्टर साहब व अधीक्षक महोदय का कहना था कि 'अहिंसा' पर इतना सटीक व सारगर्भित प्रवचन उन्होंने प्रथम बार युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी के श्रीमुख से सुना।

* * *

18 सितंबर 2004 से खमेरा चातुर्मास में आत्म शुद्धि का महापर्व पर्युषण पर्व प्रारंभ हुआ। इस दिन उदयपुर रेंज के आई.जी. वीरेंद्र गोदिका तथा पुलिस अधीक्षक श्री पद्मचंद काला पुलिस लवाजमे के साथ विशाल धर्मसभा में आचार्य संघ के दर्शनार्थ खमेरा पहुँचे। आचार्य श्री के साथ संघस्थ साधुओं का आशीर्वाद लिया और प्रवचन सुनने बैठ गए।

उत्तम क्षमा पर्व पर वे मुनि श्री सुनीलसागरजी का प्रवचन सुन गदगद हो गए। मुनि श्री ने कहा कि ''क्षमा वीरस्य भूषणम्। क्षमा कायर को नहीं अपितु उस भुजंग को शोभती है जिसके कंठ में गरल है। दुश्मनों को क्षमा कर दे वही वीर है।'' दस लक्षण का प्रथम दिन उत्तम क्षमा से प्रारंभ होता है। उन्होंने सूक्तियों, शास्त्र दृष्टांतों व ओजस्वी वाणी में उत्तम क्षमा धर्म की विवेचना कर लोगों को क्षमा भाव धारण करने के लिए प्रेरित किया। उनकी बातें लोगों के हृदय में गहरी बैठ गई। मुनि श्री के प्रवचन सुन दोनों अधिकारियों ने भी कहा कि युवा संत के बोधामृत प्रवचन सुन हमारा आना और अधिक सार्थक हुआ।

इन्हीं दोनों अधिकारियों की उपस्थिति में मुनि श्री की दो पुस्तकों 'जैनाचार विज्ञान' तथा 'मेरी सम्मेद शिखर यात्रा'

का लोकार्पण हुआ। अंत में आचार्य श्री ने आशीर्वचन में मुनि श्री की कर्मठ साधना, लगन, सृजनक्षमता का बखान किया।

मुनि श्री का साहित्य सृजन व प्रकाशन सतत हो रहा था। निरंतर स्वाध्याय व अध्ययन से शास्त्रों का गूढ़-गहन अध्ययन कर अपना ज्ञानार्जन बढ़ाते जा रहे थे। उनकी यशकेतु दिग दिगन्तों में फहराने लगी। वे आचार्य श्री के सुयोग्य युवा शिष्य के रूप में अग्रणी माने जाने लगे। आचार्य श्री के बाद उनकी पूछ परख बढ़ने लगी, लेकिन वे इन सबसे अनजान निरहंकारी रहे। वे गुरु सेवा व संघ सेवा में लगे अपना कर्तव्य निर्वहन करते रहे।

लोग बांसवाड़ा, उदयपुर व अन्य दूरदराज क्षेत्रों से बसों में भर-भरकर आने लगे। छोटे से खमेरा में जिधर देखो उधर जनसैलाब ही जनसैलाब दिखता। खमेरा के मुनि भक्त श्रावक उनका यथाशक्ति अतिथि सत्कार किया करते। हर दिन 5-10 बसें व नेता, विधायक, अधिकारी या प्रतिष्ठित व्यक्तियों का तांता लगा रहता। मुनि श्री के प्रवचन रोज होते और लोग इस वाणी के धनी, साहित्य संपदा के कुबेर, ज्ञानवंत मुनि के प्रवचन समाधिस्थ हो सुनते रहते। हर किसी के मुँह पर युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी का ही नाम रहता। उनकी प्रशंसा करते लोगों की जुबान नहीं थकती।

दीक्षा व समाधि

29 अक्टूबर को मुंगाना के सुश्रावक श्री सोहनलालजी पचोरी ने जिन्होंने 10-12 वर्ष पहले आचार्य श्री से सात प्रतिमा का व्रत ग्रहण किया था, अस्वस्थता व वृद्धावस्था देखते हुए अपने जीवन के अंतिम दिनों में आचार्य श्री से मुनि दीक्षा धारण की व दीक्षा लेते ही यम सल्लेखना घोषित कर दी। 4 नवंबर को संध्या 4.30 बजे पद्मासन में बैठ परम शांत भाव से पंचपरमेष्ठी का ध्यान करते हुए उनकी समाधि हो गई। मुनि श्री का नाम सुरम्य सागरजी रखा गया था।

मुनि श्री ने कहा- जीवन के अंतिम दिनों में ही सही, संयम धारण कर महाव्रती बन इस जीव ने अपना आत्म कल्याण कर लिया। धन्य हैं ऐसे जीव। जैसी गति होती है वैसी ही मति हो जाती है, तभी तो मुनि श्री सुरम्यसागरजी ने मृत्यु के मात्र 6 दिन पहले ही गुरु शरण में आकर दीक्षा की याचना की। गुरुवर आचार्य सन्मतिसागर भगवन ने ही उन्हें ऐसी सन्मति दी। गुरु महिमा अपरम्पार है। संसार में भटकते प्राणी की भटकन मिटा दी। उस जीव का उद्धार कर दिया। मुनि श्री ने यह भी कहा कि गृहस्थ के द्वारा मरण पर्यन्त जो पाप संचित किया जाता है, उस सब पाप को एक रात्रि का दीक्षित साधु भस्म कर देता है। उनके पुत्रों पं. बदामीलाल आदि ने उनके भावों की अनुमोदना की और सेवा भी की।

चातुर्मास विसर्जन

12 नवंबर 2004 को खमेरा चातुर्मास विसर्जन की विधि संपन्न हुई। सामायिक के बाद भगवान महावीर का निर्वाणोत्सव मनाया गया।

मुनि श्री ने चातुर्मास निष्ठापन के कुछ दिन पूर्व ही 'गोम्मटसार कर्मकांड' का स्वाध्याय 'तत्त्वार्थ सूत्र' का संयोजन तथा 'प्राकृत बोध' का लेखन कार्य पूर्ण कर लिया। उनके द्वारा ली जाने वाली 'सर्वार्थ सिद्धि' व कातंत्रव्याकरण की कक्षाएँ यथावत चलती रही।

व्रतग्रहण- 19 नवंबर से आचार्य श्री ने अष्टाह्निका व्रत (आठ उपवास) शुरू कर दिए। 25 नवंबर को मुनि श्री सुनीलसागरजी के साथ कुछ और साधुओं ने आचार्य श्री से 'चारित्र शुद्धि व्रत' के '1234' उपवास करने का नियम/संकल्प ग्रहण किया। आचार्य श्री ने आशीर्वाद प्रदान करते हुए सबसे कहा कि कोई किसी भी प्रकार की जल्दबाजी व स्पर्धा मत करना। यथाशक्ति व्रत करना। तिथियों के पचड़े में भी मत पड़ना किंतु फिर भी अष्टमी व

चतुर्दशी को व्रत करना श्रेष्ठ है। धर्म ध्यान में व्रत बाधा न पड़े, ध्यान रखना। जबकि वे स्वयं अष्टाह्निका के आठ उपवास कर रहे थे।

इधर भगवान नमिनाथ के पंचकल्याणक की तैयारियाँ जोर-शोर पर थी। 2 दिसंबर को जिनबिम्ब को नवनिर्मित जिनालय की मूल पीठ पर विराजमान किया गया।

6 दिसंबर को आचार्य श्री चंद्रसागरजी व आचार्य श्री सुविधिसागरजी ससंघ (40 पिच्छीधारी साधुओं का संघ के साथ) खमेरा आगमन पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में हुआ जो दिनांक 8 से 13 दिसंबर तक निर्धारित था।

8 दिसंबर को घटस्थापना कार्यक्रम हुआ। इसी दिन मुनि श्री ने 'चारित्र शुद्धि' व्रत का प्रथम उपवास किया। 'गोम्मटसार कर्मकांड' द्वितीय भाग का स्वाध्याय प्रारंभ हुआ।

8 दिसंबर को ही तीन भव्यजीव मुक्ति मार्ग पर आरूढ़ हुए। इस दिन जलेसर के क्षुल्लक सुध्यानसागरजी तथा जैतपुर बूँदी के महावीर प्रसाद (55 वर्ष) को आचार्य श्री ने मुनि दीक्षा तथा क्षुल्लिका श्रेयांसमति को आर्यिका दीक्षा दी। इनके नाम क्रमशः मुनि सुप्रमाणसागर, मुनि सुप्रसन्नसागर एवं आर्यिका सुविश्वासमति रखा। जब भी कोई व्यक्ति दीक्षा लेकर आत्मकल्याण के मार्ग पर अग्रसर होता, मुनि श्री सुनीलसागरजी को बड़ी खुशी होती। वे उनकी दीक्षा की हृदय से अनुमोदना करते।

पंचकल्याणक में कई विधायक, मंत्री, नेता, अधिकारी व उद्योगपतियों का आगमन हुआ। तपकल्याणक के दिन मुनि श्री सुनीलसागरजी द्वारा व्याख्यायित 'वसुनंदी श्रावकाचार' का विमोचन हुआ। राजस्थान सरकार के मंत्री भवानी जोशी ने विनयांजलि प्रस्तुत की व पुस्तक विमोचन किया।

14 दिसंबर को खमेरा से विहार कर आप गुरु संघ के साथ पीपलखूंट, सुहागपुर होते हुए अरनोद (25 को) पहुँचे। यहाँ दो ऐलक दीक्षाएँ हुईं जिनके नाम सुदक्षसागरजी व सुलक्ष्यसागरजी रखे गये।

2004 के आखिरी दिन 31 दिसंबर को आपने संघ के साथ विहार कर रात्रि विश्राम गाँव के एक स्कूल में किया। जिस रात नए वर्ष के आगाज में भोगीजन पंचतारा होटल में डिस्को पर थिरकते मौजमस्ती में रात बिता कर्म बंधकर रहे थे। वहीं ये सांसारिक सुख-भोगों से विरक्त दिगंबर संत सूने पड़े स्कूल में शिलापट पर बैठे आत्माराधना करते कर्म निर्जरा करने में तल्लीन थे। एक ओर भौतिकता की चकाचौंध में भोगियों के नए वर्ष का जश्न मन रहा था तब दूसरी तरफ ध्यानस्थ साधुगण आत्मकल्याण का आनंद उत्सव मना रहे थे। भोगी भव भटकन बढ़ाने वाले आनंद में मग्न थे और ये योगी भव बाधा नष्ट करने वाले निजानंद में रमण कर रहे थे।

2005 : 1 जनवरी नया वर्ष

1 जनवरी 2005 की प्रातःकालीन मंगलमय बेला में संघ कुलथाना छोटे से ग्राम की ओर बढ़ रहा था और उधर ढोल-ढमाकों के साथ नाचते-गाते लोगों का हुजूम आचार्य संघ के स्वागत व अगवानी के लिए आगे बढ़ रहा था। गाँव व आसपास से आए लोगों का समूह उमड़ पड़ा। गाँव के गाँव खाली हो गए।

चित्तौड़गढ़ जिले के गाँव कुलथाना का भाग्य भास्कर मुस्करा रहा था। इसका विशेष कारण आचार्य श्री का 15 वर्ष पश्चात लम्बी दूरी तय कर इस गाँव में पुनः आगमन हो रहा था। दूसरी मुख्य बात इस माटी के तीन सपूतों ने बरसों पूर्व संसार तज, संन्यास धारण कर आत्म कल्याण का मार्ग अपना इस धरा को धन्य कर दिया था। श्रमण संस्कृति के इतिहास में इन मुमुक्षुओं ने इस गाँव का नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित कर दिया।

सूरज अपनी लाल किरणों से कुलथाना की धरती को चूम रहा था, जिसकी रज में लोटपोट कर मुनि श्री शुभसागरजी (श्रावक बसंतीलाल), मुनि श्री सुखसागरजी व आर्यिका श्री शीतलमति माताजी बड़े हुए और उसे रजत

व पावन बना दिय था। पंछी इन महान तपस्वियों के स्वागत में चहक-चहक कर अपनी खुशी जता रहे थे। शीतल हवा मंद मंथर गति से थिरकती इन संयमियों की देह को छूती, इनका देह से विदेही बनने का शुभ संदेश दिगदिगंतों में पहुँचा रही थी। प्रकृति का कण-कण इन कुल दीपकों पर नाज करता प्रफुल्लित था। ऐसे परम आनंददायक वातावरण में उन पावन पूत आत्माओं के अभिनंदन में जड़-चेतन दोनों ही आह्लादित थे।

भोले भाले ग्रामवासियों के आत्मीय अभिनंदन को देख मुनि श्री सुनीलसागरजी भावविभोर हो गए। सच है कौन ऐसा होगा जो अपने इन आत्मीय स्वजनों को आत्मोन्नति के पथ पर अग्रसर होते देख हर्षित व आनंदित न होगा। कुलथाना से भी ऐसी ही हर्षोल्लास की लहरें उठ रही थीं।

श्रमण संस्कृति के साधकों को जन्म देने वाली उर्वरा इस छोटे से गाँव की पुण्य धरा पर आचार्य संघ का 20 दिनी प्रवास रहा। जिसने पुनः एक बार इतिहास रच दिया। 15 वर्ष पूर्व आचार्य श्री के आगमन पर पूरे गाँव ने अशुद्ध जल का त्याग किया था व कितनों ने व्रत नियम लिए थे। पू. शरणमति माताजी (केशरबाई) भी मुनि श्री शुभसागरजी की गृहस्थ जीवन की धर्मपत्नी इसी गाँव की सन्नारी रही। 19 जनवरी को मुनि श्री सुखसागरजी की प्रेरणा व आचार्य श्री के आशीर्वाद से उनके गृहस्थ जीवन की दो वृद्धा ब्रह्मचारिणी बहनों, मोहनबाई व राजीबाई ने क्षुल्लिका दीक्षा ले अपने लिए आत्म कल्याण का मार्ग प्रशस्त कर लिया व एक बार पुनः इस गाँव के गौरव में अभिवृद्धि की। इस अवसर पर राजस्थान के गृहमंत्री गुलाबचंद कटारिया पधारे थे। इस छोटे से गाँव ने श्रमण संस्कृति को इतने वीतरागी संतों को देकर व व्रती नियमधारी श्रावकों को देकर एक अनुकरणीय आदर्श उपस्थित किया है। यह पवित्र, पुण्य, पावन भूमि इन महान आत्माओं की जन्म भूमि होने के कारण तीर्थ क्षेत्र के रूप में वंदनीय व नमनीय है।

20 जनवरी को अभिजित मुहूर्त में मुनिसुव्रतनाथ भगवान सहित सभी जिनबिम्बों को वेदी में विराजित कर कुलथाना के मंगल विश्राम को विराम दे, 21 जनवरी को प्रातः बोधियुत प्रवचन दे, दोपहर बाद संघ ने पुनः पद संचलन शुरू कर दिया।

सुपथसागरजी की समाधि

यहाँ से मुनि श्री संघ के साथ पद संचलन करते हुए कुलथाना की बहू व नांदवेल की बेटी शरणमति माताजी के गृह ग्राम नांदवेल पहुँचे। यहाँ भी संघ का पूर्ववत भव्य आदर सत्कार हुआ। यहाँ पर क्षुल्लक संस्कारसागरजी का स्वास्थ्य बिगड़ने लगा। उन्होंने कुलथाना में ही आचार्य श्री से सल्लेखना ले, तीन उपवास रखे थे। दूसरे दिन उन्हें मुनि दीक्षा दे दी गई। मुनि श्री सुनीलसागरजी सतत उनकी वैयावृत्ति में लगे थे। उनका नाम मुनि सुपथसागर रखा गया। उसके बाद एक दिन के अंतराल से दूध-पानी ही आहार में लेते थे।

30 जनवरी को उन्होंने दो-तीन घूंट पानी ही आहार में लिया। उनकी व्याकुलता बढ़ने लगी। उन्होंने सर्दी अधिक होने से धूप में लेटने की इच्छा व्यक्त की। मुनि श्री ने दो-तीन साधुओं को साथ लेकर उन्हें धूप में लिटाया। फिर थोड़ी देर बाद उन्होंने आचार्य श्री के पास जाने की इच्छा व्यक्त की। उन्हें मुनि श्री वहाँ लेकर गए। वहीं पर सकल संघ की उपस्थिति में आत्म संबोधन व महामंत्र सुनते-सुनते परम शांत भाव से उन्होंने देह त्याग दी। शाम को ही उनका अंतिम संस्कार कर दिया गया।

दूसरे दिन धर्मसभा में आचार्य श्री महावीर कीर्तिजी का समाधि दिवस मनाया गया और मुनि श्री सुपथसागरजी को श्रद्धांजलि अर्पित की गई। इस अवसर पर मुनि श्री सुनीलसागरजी ने पूज्यपाद स्वामी के समाधि तंत्र की गाथा के माध्यम से अपनी बात रखते हुए कहा कि ''समाधि मरण या सल्लेखना में साधु के मन में विषयों के प्रति आसक्ति को दूर

करने का अभ्यास किया/कराया जाता है जिससे देह में मरण का संशय व मन में संक्लेश की वृद्धि न हो। उस दुःख को जीतने वाले साधु धीरे-धीरे आहार, आसन व निद्रा को जीतकर अपनी आत्मा को साध लेते हैं।'' धर्मसभा में प्रतापगढ़ समाज ने श्रीफल अर्पित कर आचार्य श्री से प्रतापगढ़ आने के लिए बारम्बार विनती की। किंतु आचार्य श्री ने उनका निवेदन स्वीकार नहीं किया।

रतलाम प्रवास

1 फरवरी 2005 को आप श्रीसंघ के साथ नांदवेल से मावता, कालूखेड़ा, मागरखेड़ा, रवींद्र आश्रम, नामली होते हुए रतलाम पहुँचे। रतलाम मंगल प्रवेश पर संघ का भव्य अभिनंदन व स्वागत हुआ। हजारों की संख्या में संघ की अगवानी में लोग दौड़ पड़े। गुरु के प्रति श्रद्धा और आस्था का सैलाब उमड़ पड़ा।

9 फरवरी से विशाल पांडाल में प्रवचन शृंखला शुरू हुई। यहाँ अन्य अनेक बड़े-बड़े कार्यक्रम भी संपन्न हुए। यहाँ के दिगम्बर जैन बीस पंथी मंदिर में 'चारित्र शुद्धि विधान' (13 से 17 मार्च तक) बड़ी धूमधाम से संपन्न हुआ, जिसमें समाजजनों ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया।

समाधि- 13 मार्च को रात्रि 9.53 पर संघस्थ आर्यिका करुणामति माताजी की सात उपवास की दृढ़ साधना करते हुए समता भाव पूर्वक समाधि हो गई।

वहीं 25 मार्च को जावरा की मुन्नीबाई की क्षुल्लिका दीक्षा संपन्न हुई। उनका नाम क्षुल्लिका साधनामति रखा गया।

* * *

रतलाम से विहार

कहीं एक दिन, कहीं दो दिन, कहीं कुछ दिन रुक धर्म प्रभावना करता पद संचलन करता आचार्य संघ का काफिला 28 मार्च को रतलाम से चल पड़ा अगले पड़ाव की ओर। मुनि श्री ने देखा कि रतलाम में ही जहाँ एक माताजी की समाधि हो गई तब दीक्षा लेकर एक अन्य माताजी का संघ में आगमन हो गया। जीवन मरण या जीव के आवागमन का यह चक्र अनंत काल से चल रहा है। इसी को समाप्त करने एक भव्य जीव दीक्षा लेकर समाधिपूर्वक मरण-वरण करता है तो दूसरा भव्य जीव दीक्षा लेकर आत्मोद्धार के पथ पर चल पड़ता है। अनादिकाल से संसार में भटकते प्राणियों को अपनी भव बाधा मिटाने का एकमात्र यही सच्चा मार्ग है।

रतलाम से धरणा, रातकंडा, मुलथान, बदनावर होते हुए आप संघ के साथ आहू पहुँचे। रास्ते में किसी दिगम्बर श्रावक का घर न होने के कारण श्वेताम्बर जैन श्रावकों व दिगर जाति के समाजों ने आचार्य संघ की हर जगह भव्य अगवानी भी की और व्यवस्था भी। जहाँ से 5 अप्रैल को राजा भोज की धार (धारा) नगरी में मंगल प्रवेश किया। यह नगरी भक्तामर स्तोत्र के रचयिता आचार्य मानतुंग व शुभचंद्र आचार्य जैसे महान साधकों के कारण जैन इतिहास में विशेष महत्व रखती है।

22 अप्रैल को महावीर जयंति धार में मनाकर 23 को संघ विहार कर 25 अप्रैल को मांडू पहुँचा। कहा जाता है किसी वक्त यहाँ 7 लाख जैनी एवं 700 जैन मंदिर थे। आज भी यहाँ खुदाई में जहाँ-तहाँ जैन मूर्तियाँ जमीन से निकलती हैं।

27 अप्रैल को मांडव से संघ ने तारापुर के लिए विहार किया जो 16 कि.मी. दूर था। रास्ते में कोई गाँव न था। अंधेरा होने आया था। अतः संघ एक पहाड़ी मैदान पर रुक गया। श्रावकों ने भाग-दौड़ कर टेंट की व जनरेटर की व्यवस्था की किंतु तेज हवा व आंधी से सारी व्यवस्था नेस्तनाबूत हो गई। मुनि श्री, आचार्य श्री, कुछ श्रावकों व साधकों ने बैठे-बैठे रतजगा करते हुए अंधेरे में रात बिताई। सबेरे सामायिक व प्रतिक्रमण कर संघ तारापुर की ओर चल दिया।

मुनि श्री सोच रहे थे मुक्तिपथ के राही के लिए क्या धर्मशाला? क्या जंगल सभी एक से ही हैं। वे कभी किसी धर्मशाला में तो कहीं श्रावकों के घर (व्यवस्थित) तो कहीं विहार में टूटे-फूटे भवन या खेत में तंबू के नीचे आहार ले लेते हैं या रात्रि विश्राम कर लेते हैं। अनुकूलता हो या चाहे जितनी प्रतिकूलताएँ। वे हर परिस्थिति में निर्लिप्त भाव से निजानंद में लीन योग साधना से कर्म निर्जरा करते हैं। श्रावकों के घर आहार होने पर न उन्हें कोई खुशी होती न जंगल में अव्यवस्थाओं के बीच कोई दुःख। वे तो आत्म साधना के लिए पेट की गाड़ी को चलाने के लिए पेट्रोल माने आहार क्रिया संपन्न करते हैं। हर अवस्था में वे सम व निर्लिप्त भावना से आत्म साधना में रत रहते हैं।

एक मई को संघ धरमपुरी पहुँचा, जहाँ से 5 मई को आप संघ के साथ 160 कि.मी. की पदयात्रा भरी गर्मी में करते हुए 17 मई को सोनगिर पहुँचे। आपने मध्यप्रदेश से महाराष्ट्र में प्रवेश कर लिया था। सोनगिर की पुण्य धरा पर अनेक त्यागी व्रतियों ने जन्म ले, व्रत-नियम लेकर अपना मानव जीवन सार्थक कर इस धरा को धन्य कर दिया। तारापुर से सोनगिर तक, सेंधवा को छोड़ कहीं भी समाज का एक भी घर नहीं। संतों के लिए व्यवस्था क्या और अव्यवस्था क्या? निष्काम निराकुल शांत भाव से वे चलते रहे। धरमपुरी में जन्मे आचार्य श्री महावीर कीर्तिजी के परम शिष्य आचार्य श्री वर्द्धमानसागरजी महाराज के चरण वहाँ के एक विशाल किंतु पुराने मंदिर में एक आले में विराजमान हैं, देखकर मुनि श्री का मन दुःखी हो गया। अपने महान आचार्य की उनकी ही जन्म भूमि में इतनी उपेक्षा? समाज की साधुओं के प्रति विनय भावना की कमी इससे स्पष्ट झलकती है।

महाराष्ट्र की ओर

25 मई को मालेगाँव में प्रवेश किया। 28 मई को वहाँ के 'शांतिवन' नामक स्थान के जिनालय के दर्शन किए। यहाँ आचार्य श्री शांतिसागरजी ने दो चातुर्मास किए थे इसलिए इस स्थान का नाम 'शांतिवन' रखा गया है।

यहाँ से दिनांक 28 मई को ही विहार कर आप नांदगाँव पहुँचे। यह स्थान मुनि श्री चंद्रसागर व मल्लिसागर की जन्म स्थली है। यहाँ से कोपरगाँव में प्रभावना करते हुए 'ॐ गुरुदेव आश्रम' कोपरगाँव आप 9 जून को पहुँचे। 'ॐ गुरुदेव' बाबा व उनके शिष्यों ने आचार्य संघ व समस्त मुनियों की भाव विभोर हृदयों से अगवानी की। आचार्य श्री की आरती की व एक भवन में रात्रि विश्राम के लिए संघ को ले गए।

सामायिक से पूर्व बाबा ने मुनि श्री से जैन दर्शन व तत्त्व चिंतन पर अच्छी खासी चर्चा की। मुनि श्री ने जैन धर्म के मूल सिद्धांतों से उनका अच्छी तरह सरल शब्दों में परिचय करवाया। उन्हें 'ज्ञानार्णव' ग्रंथ भेंट किया। मुनि श्री से चर्चा कर उन्हें काफी संतुष्टि और खुशी मिली। उनका मन वहाँ से हटने को नहीं हो रहा था, पर समय की मर्यादा थी। मुनि श्री के सामायिक का समय हो गया था। दो महात्माओं ने एक-दूसरे को अपने विचारों का आदान-प्रदान किया। ॐ गुरुदेव युवा संत सुनीलसागरजी की असाधारण विद्वता व विलक्षण प्रतिभा से आश्चर्यचकित थे। उन्होंने उनके आगम ज्ञान की मजबूत पकड़ का लोहा मान लिया। मुनि श्री ने भी अत्यधिक कम समय में उन्हें गूढ़ गहन तत्त्वज्ञान की भूमिका समझा संतुष्ट किया।

वे मुनि श्री के विचारों से इतने अधिक प्रभावित हुए कि सबेरे-सबेरे प्रतिक्रमण के समय आ गए व आचार्य श्री की निश्रा में शांत भाव से बैठे रहे। प्रतिक्रमण विधि देखते रहे। प्रतिक्रमण पश्चात् उन्होंने आचार्य श्री को वहीं उनके आश्रम में चातुर्मास करने का निवेदन किया व उस विशाल आश्रम को पूरे संघ को दिखाया। आचार्य श्री ने बड़ी नम्रता से आगे के कार्यों का हवाला देते हुए अपनी असमर्थता प्रकट की और मुनि श्री ने संघ के साथ विहार कर दिया। बाबा भी काफी दूर तक संघ के साथ चले। रास्ते में मुनि श्री से चर्चा करते रहे। अंततः आचार्य श्री के आग्रह पर वे लौट गए। आश्रम के बाबा की मुनि श्री ने जैन धर्म के प्रति ऐसी रुचि जगा दी कि उनकी प्यास बुझ नहीं पा रही थी। वे

आत्म तृप्ति व ज्ञान प्राप्ति के लिए चातुर्मास न सही कुछ रोज आचार्य संघ को अपने आश्रम में रोकना चाहते थे व युवा मुनि से ज्ञानार्जन करना चाहते थे, पर उनकी मनसा पूरी न हो सकी।

शिरडी के शांतिनाथ

कोपरगाँव से मुनि श्री ने संघ के साथ शिरडी पहुँचकर शांतिनाथ जिनालय के दर्शन किये। 12 जून श्रुतपंचमी व आचार्य आदिसागर (अंकलीकर) आचार्य पदारोहण दिवस पर आपने एक विशाल धर्मसभा को संबोधित किया। आचार्य श्री ने आशीर्वचन कहे। इस सभा में दूर-दूर के लोगों के अलावा नेता, संस्थाओं के अध्यक्ष व उद्योगपति आए थे। मुंबई के भी कई गणमान्य, श्रेष्ठीजन व उद्योगपति आए। उदयपुर, खमेरा व मुंबई वालों ने चातुर्मास करने का निवेदन करते हुए आचार्य श्री के चरणों में श्रीफल अर्पित किए। कोपरगाँव व श्रीरामपुर वालों ने भी अपनी अर्जी लगाते हुए श्रीफल अर्पित किए।

अंततः मुंबई वालों का प्रबल पुण्य का पलड़ा भारी रहा और आचार्य श्री ने उदगाँव (सांगली) की ओर जाने का विचार बदल मुंबई चातुर्मास की संभावित घोषणा कर दी। मुंबई के श्रावक-श्रेष्ठीगण खुशी से झूम उठे।

सिद्ध क्षेत्र गजपंथा

19 जून 2005 को शिर्डी से आप सिद्ध क्षेत्र गजपंथा (म्हसरूल) नासिक पहुँचे। मुनि श्री ने ऊँची-ऊँची, सीढ़ी वाले पर्वत की तीन वंदनाएँ की। आचार्य श्री ने दो। तीन दिनी मंगल प्रवास में एक दिन आचार्य श्री के साथ आपने पहाड़ की परिक्रमा भी लगा ली। अब तो मुंबई के श्रावकों का आना-जाना शुरू हो गया।

तीन दिनी प्रवास के बाद गजपंथा से 22 जून को विहार कर रात्रि विश्राम एक गुरुद्वारे में किया। यहाँ से आप संघ के साथ बरसते पानी में इगतपुरी पहुँचे, जहाँ संघ एक भवन में ठहरा। वहाँ श्वेताम्बर समाज के कमल मुनि 'कमलेश' आचार्य संघ के आगमन का समाचार सुन दौड़े-दौड़े चले आए। संघ को स्थानक ले गए, मुनि श्री से विशेष चर्चा की व स्थानक में प्रवचन कराए।

यहाँ से विहार कर रात्रि विश्राम की व्यवस्था किसी रईश के खाली घर में रखी गई थी। मुनि श्री ने पूर्व के विहार की अनेक जगहों का स्मरण हो आया। कहीं गंदा यात्री प्रतीक्षालय, कहीं खंडहरनुमा भवन, कहीं खेत तो कहीं खुला मैदान और आज जंगल में बना यह फार्म हाउस। संत तो हर परिस्थिति में एक से रहते हैं। न उन्हें अच्छी व्यवस्था से राग होता है ना ही व्यवस्था न होने पर मन में किसी प्रकार का क्षोभ आता है।

इस भवन में मुंबई से श्री शिखरचंद पहाड़िया समेत कई श्रावकगण पहुँचे। सबने पुनः चातुर्मास हेतु श्रीफल भेंट किए व चातुर्मास व्यवस्था संबंधी चर्चाएँ कीं।

भिवंडी

इगतपुरी से विहार कर आप संघ के साथ 28 जून को बरसते पानी में शहापुर पहुँचे। पानी के कारण चिकने फर्श पर मुंबई के मुनि भक्त वयोवृद्ध श्री प्रकाशचंदजी छाबड़ा फिसल कर गिर पड़े। लाइट न होने से वे स्वयं को संभाल नहीं पाए।

बारिश से मुनि श्री की चटाई गीली हो गई थी। अंधेरे के कारण ठीक से दिखी नहीं। मुनि श्री सो गए। रास्ते की थकान के कारण थोड़ी देर तो मुनि श्री को नींद आ गई, पर कुछ ही समय बाद चटाई के गीलेपन व हजारों चींटियों के आक्रमण व दंश के कारण वे उठ बैठे। उनकी पूरी पीठ चींटियों के काटने से लाल हो सूज गई। उन्होंने चटाई एक

तरफ फोल्ड करके रख दी व लालटेन से चींटियों को देखा। वे वहाँ से हटकर स्वच्छ व सूखे स्थान पर शांत भाव से ध्यान में बैठ गए। इसी अवस्था में ध्यानस्थ रह रात बिताई। जब अर्द्ध रात्रि में आचार्य श्री ने उन्हें ध्यानस्थ मुद्रा में बैठा देखा, उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। जब प्रातः उन्होंने आचार्य श्री से रात्रि घटना का वृतांत बता, प्रमादवश या निंद्रा में अनजाने हुई होगी चींटियों की विराधना के लिए प्रायश्चित माँगा। शिष्य की चारित्र चर्या के प्रति सतर्कता व कठोरता देख आचार्य गुरु मुक्त कंठ से मुनि श्री की प्रशंसा करने लगे।

30 जून को शहापुर से भिवंडी आप संघ के साथ पहुँचे। पानी जोरों से बरस रहा था। जिस मार्ग से आपने शहर में प्रवेश किया वहाँ सड़क के दोनों बाजू मांस-मछली की दुकानें थीं। रास्ता गंदगी से पटा पड़ा था। भयंकर गंदगी व बदबू से जी मिचलाने व सर फटने लगा। बारिश के कारण सड़क का बेहाल था। बमुश्किल संभल-संभल कर सारे संत चल रहे थे। जस-तस संघ ने जिनालय के एक विशाल कम्पाउंड में प्रवेश किया। जिनेंद्र देव की प्रशांत मुद्रा देख सारी जुगुप्सा की भावना तिरोहित हो गई। किंतु फिर भी कुछ लोगों को गंदगी व बदबू से उल्टी हो गई। ऐसा दृश्य सबने विहार में पहली बार देखा था।

मंदिर से लगे भवन में संत आवास था। यहाँ मंदिर के विशाल कम्पाउंड में भी चौके लगते थे व बाहर भी। एक दिन कमल मुनि 'कमलेश' भिवंडी में भी संत आवास पर पधारे। आचार्य दर्शन के साथ वे मुनि श्री सुनीलसागरजी से भी मिलने आए थे, यहाँ भी उन्होंने उनसे अच्छी खासी तत्वचर्चा की इसके बाद संत आवास की व्यवस्था का भी मुआयना किया। वे तो संघ को स्थानक में लिवा ले जाने की मनसा में आए थे। किंतु आचार्य श्री व मुनि श्री ने उन्हें आश्वस्त किया कि यहाँ सब ठीक है।

फिर भी दो प्रवचन मंदिर प्रांगण में व एक प्रवचन स्थानक में आचार्य श्री, मुनि श्री सुनीलसागरजी व कमलेश मुनि श्री के साथ-साथ हुए। मुनि श्री सुनीलसागरजी ने कहा कि ''पंथ भले अलग-अलग हो पथ तो सबका एक ही है। मंजिल सबकी एक है- मुक्तिश्री। हम सब भगवान महावीर के उपासक हैं, उनके अनुयायी हैं। उनकी विरासत के वारिस हैं जिसे हम सब महावीर के उपासकों को मिलकर सुरक्षित व संरक्षित रखना चाहिए।''

कमलेश मुनि श्री ने भी ऐसी ही उदात्तता दिखाई व जैन धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए व जैन समुदाय की उन्नति के लिए धार्मिक एकता पर जोर दिया।

भिवंडी से 8 जुलाई को विहार कर आप संघ के साथ कोल्हार, पुणे रोड, सुधांधु आश्रम, पीयूषपाणी (श्वेताम्बर तीर्थ) होते हुए मीरा रोड जैन मंदिर पहुँचे। यहाँ एक श्वेताम्बर भाई ने अपना विशाल भूखंड दिगम्बर जैन मंदिर बनाने के लिए दान कर अपने विशाल हृदय का परिचय दिया है। मुनि श्री ने उस सहृदय श्रावक को आशीर्वाद दिया।

यहाँ से आप दहीसर पहुँचे। 17 जुलाई को विशाल हाल में केशलोंच का कार्यक्रम रखा गया। इस विशाल धर्मसभा में पूरे मुंबई शहर के उपनगरों के प्रतिनिधि आचार्य श्री को श्रीफल अर्पित करने आए।

यहीं दहीसर में आचार्य श्री के बहुत पुराने भक्त वयोवृद्ध पं. श्री कपूरचंदजी अपने पुत्र माणकचंद के साथ संघ के दर्शनार्थ आए। आचार्य श्री ने उन्हें अपने पास बिठाया।

वे कहने लगे, ''इच्छा तो मेरी दीक्षा लेने की है, पर इस वृद्धावस्था में मुझे कौन सम्हालेगा?''

आचार्य श्री के पास बैठे मुनि श्री सुनीलसागरजी ने देखा कि गुरुदेव सहजभाव से कह रहे थे ''मैं सम्हालूँगा। ये सब साधु सम्हालेंगे।'

तपाक से मुनि श्री सुनीलसागरजी ने कहा, ''आप चिंता मत करो मैं चौबीस घंटे आपके पास रहूँगा।''

आचार्य श्री ने मुस्कराते हुए उन्हें आश्वस्त किया। उन्होंने सिर हिलाया और आशीर्वचन लेकर चले गए। वे परम समर्पित मुनि भक्त हैं।

अतः आचार्य श्री जैसे तपस्वी सम्राट का उन पर वात्सल्य उमड़ना स्वाभाविक था। शिष्य मुनि श्री जानते थे कि जिस श्रावक को दीक्षा देकर गुरु जिसकी सेवा की जिम्मेदारी ले रहे हैं, निश्चित ही वह श्रावक असाधारण व्यक्तित्व का धनी है।

मुंबई चातुर्मास 2005

18 जुलाई को संघ दहीसर से आदिनाथ नगर पहुँचा। यहाँ कमरों में पानी भरा था तथा कीचड़ था। ठीक से बैठने की जगह भी नहीं थी। बरसात में वहाँ चातुर्मास कैसे करते। जैसे-तैसे आहार चर्या यहीं से संपन्न हुई। इसके पूर्व मुनि श्री ने कमरों के बारे में आचार्य श्री को बताया था व अन्य स्थान पर ठहरने को कहा था। आहारचर्या से आते ही आचार्य श्री मुनि श्री सुनीलसागरजी व अन्य कुछ साधुओं को लेकर बोरीवली पहुँचे। यहाँ मंदिर के पास ही ओमप्रकाशजी जैन ने संघ के आवास के लिए अपना तिमंजिला मकान खाली कर रखा था, सबने देखा व सबकी सहमति स्वीकृति में बदल गई। और अंततः चातुर्मास के लिए संघ का यहीं आवास रहा और वहाँ चार माह तक प्रवचन की श्रृंखला चलती रही।

20 जुलाई अषाढ़ चतुर्दशी के दिन आचार्य श्री ने अपने कक्ष में ही चातुर्मास विधि संपन्न कराई। इस अवसर पर चातुर्मास कमेटी के अध्यक्ष आर.के. जैन, कार्याध्यक्ष शिखरचंद पहाड़िया, महामंत्री अनिल स्वरूपचंद, कोषाध्यक्ष माणकचंद कपूरचंद, उपाध्यक्ष ओमप्रकाश जैन, रमणलाल दोषी व ज्ञानचंद मिंडा आदि उपस्थित थे। चातुर्मास कलश सुमेरचंद मदनलाल चूड़ीवाल कलकत्ता ने स्थापित किया। सारे कार्यक्रम व प्रवचन आदिनाथ नगर (नंदीश्वर मंदिर) के विशाल पांडाल में संपन्न हुए।

दीक्षा- 19 अगस्त को ब्र.पं. कपूरचंदजी जैन ने आखिर मुनिदीक्षा व ब्र. सज्जनबाई माणिकचंद काला ने आर्यिका दीक्षा ग्रहण कर ली। आचार्य श्री नित नवीन दीक्षाएँ दे रहे थे और संघ में संयमियों की वृद्धि होती जा रही थी। वहीं दूसरी ओर इतने बड़े संघ में संतों की समाधि भी हो रही थी।

19 अगस्त रक्षाबंधन को दो दीक्षाएँ हुईं और 28 जुलाई को क्षुल्लिका साधनामति माताजी बेहोश होकर गिर गई। अचेतन अवस्था में उन्हें आचार्य श्री के पास लाया गया। दिन बीत गया व रात्रि 12 बजे उनका देहावसान हो गया। प्रातः आदिनाथ नगर में उनकी अन्त्य विधि संपन्न की गई।

दिनांक 29 को अतिवृद्ध मुनि श्री श्रेयांससागरजी (पं. कपूरचंदजी जैन) ने आचार्य श्री से यम सल्लेखना ग्रहण की और 1 सितंबर को बड़े समता व साम्य भाव से पद्मासन मुद्रा में बैठकर आचार्य श्री से संबोधन सुनते हुए 4.15 बजे देह त्याग दी। मुनि श्री सुनीलसागरजी ने जैसा उन्हें विश्वास दिलाया था वैसी ही उनकी सेवा की। उन्होंने दिनरात एक कर वयोवृद्ध विद्वान साधु की सेवा कर मुनि श्री श्रेयांससागरजी के गृहस्थावस्था में पूछे गए प्रश्न ''मैं वृद्ध हूँ, दीक्षा लेने पर यहाँ मेरी कौन देखभाल करेगा?''

का मौन उत्तर दे दिया और आचार्य गुरु ने अपने शिष्यों के प्रति जो विश्वास जताया था, उसे सच साबित कर दिया। आचार्य श्री स्वयं सेवाभावी थे इसीलिए तो उनके संस्कार शिष्यों में आ गए थे। सब ने मुनि श्री की इस श्रेष्ठ साधना को प्रणाम किया। इस प्रकार मुनि श्री अपनी चर्या, अपने व्यवहार, अपनी सेवा भावना व अपने नम्र व सहयोगी स्वभाव के साथ अकूत ज्ञान के भंडार होने के कारण पूरे संघ के चहेते बन गए थे।

29 अगस्त 2005 में मुनि श्री श्रेयांसागरजी की समाधि अभी-अभी अत्यंत शांत भाव से मुनि श्री की आँखों के सामने हो गई तभी उनके ही साथ दीक्षित वयोवृद्ध आर्यिका माताजी श्री श्रेयांसमतिजी ने भी आहार-पानी का त्याग कर चतुर्विध संघ की उपस्थिति में आचार्य श्री से यम सल्लेखना ग्रहण कर ली।

6 सितंबर को अपराह्न तीन बजे समताभाव से णमोकार महामंत्र का जाप करते हुए उन्होंने भी नश्वर देह का त्याग

कर दिया।

माताजी की भी ऐसी उत्तम समाधि देख सभी साधु ऐसी ही अपनी समाधि की भावना भाने लगे। एक घंटे बाद चार बजे आदिनाथ नगर में उनकी देह अग्नि को समर्पित की गई।

इस तरह मुंबई चातुर्मास में 9 दिन में तीन साधुओं की समाधि हो गई।

मुनि श्री सुनीलसागरजी आज रातभर नहीं सो सके। वे संसार की अनित्यता का चिंतवन करते रहे। वे सोच रहे थे कि देखो माताजी व मुनि महाराज की गति सुधरनी थी इसलिए वे अपने जीवन के अंतिम पड़ाव पर जीर्ण-शीर्ण काया लेकर भी गुरु दर्शन को आए और इन जगहितकारी गुरु ने ऐसी प्रेरणा दी व धर्म साधना का मार्ग इतना सुलभ बना दिया कि उन्होंने मृत्यु से कुछ दिन पूर्व ही दीक्षा लेकर, संयम की साधना करते हुए सल्लेखना पूर्वक समाधि साध ली। चेतन अवस्था में ऐसा मरण तो महामरण है, जिन्हें मृत्यु के समय ऐसे महान आचार्य के संघ का सान्निध्य प्राप्त हुआ। धन्य है ये महान आत्माएँ।

दिनांक 8 से 16 सितंबर तक पर्युषण महापर्व सोल्लास मनाया गया। इस बार पर्युषण में आचार्य श्री के लगातार बारह उपवास हो गए। 17 को पारणा हुआ।

संघ ने बरसते पानी में मुंबई में मंगल प्रवेश किया था, तब से पर्युषण भर भी पानी बरसता रहा। लोगों का कहना था कि पर्युषण में पहली बार इतनी बारिश हुई। वरना पर्युषण में तो कभी बारिश होती नहीं है।

चातुर्मास निष्ठापन

जहाँ आचार्य श्री व उनके सुनीलसागरजी जैसे शिष्य हों वहाँ मांगलिक कार्य तो होते ही रहते हैं। आचार्य संघ के चातुर्मास स्थापन से निष्ठापन तक अनेक माँगलिक कार्य, विधान आदि संपादित होते रहे। 31 अक्टूबर को भगवान महावीर की निर्वाण बेला में चातुर्मास निष्ठापन विधि संपन्न हुई।

7 से 14 नवंबर को सिद्धचक्र महामंडल विधान का आयोजन था। 9 नवंबर को लिंकनमक्की जिला सागर (कर्नाटक) के श्रावक भरतराज को एलक दीक्षा प्रदान की गई। उनका नाम ऐलक समग्रसागर रखा गया।

15 नवंबर को पूर्णाहूति के दिन कई लोगों ने प्रतिमाएँ धारण की। उनमें इंदौर की मोहनबाई दोषी भी शामिल थी जिन्होंने बाद में पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी से दीक्षा ले सल्लेखना ग्रहण कर समाधि मरण किया।

आचार्य श्री निश्चयसागरजी (मासोपवासी) के चारित्र शुद्धि व्रत के उपलक्ष्य में समाज ने चारित्र शुद्धि विधान का आयोजन 25 से 29 नवंबर तक रखा।

27 नवंबर को आचार्य श्री ने दो दीक्षाएँ दी। पहली खमेरा में दीक्षित ऐलक सुवीरसागरजी को मुनिदीक्षा देकर नाम वही रखा व दूसरी क्षुल्लिकाश्री शुभमति की माताजी ब्र. विमलाबेन छगनलाल दोषी (लासूर्णे) को क्षुल्लिका दीक्षा देकर उनका नाम क्षुल्लिका स्वस्तिमति रखा गया।

1 से 5 दिसंबर 2005 को आचार्य श्री के सान्निध्य व आशीर्वाद तथा मुनि श्री सुनीलसागरजी के कुशल नेतृत्व में आदिनाथ नगर के नंदीश्वर मंदिर में श्रीमज्जिनेंद्र चंद्रप्रभु नंदीश्वर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव का भव्यातिभव्य रूप में आयोजन हुआ। मुंबई के इतिहास में ऐसा आयोजन 'न भूतो न भविष्यति' ऐसा लोगों का कहना था।

पोदनपुर दर्शन

प्रतिष्ठा महोत्सव सम्पन्न होने के बाद मुनि श्री सुनीलसागरजी एक दिन कुछ मुनियों को साथ ले गुरु आज्ञा लेकर मुंबई में आचार्य श्री नेमिसागरजी द्वारा संस्थापित प्रसिद्ध त्रिमूर्ति मंदिर पोदनपुर गए, जहाँ आपने भगवान ऋषभदेव, भरत

व बाहुबलि तथा चौबीसी के दर्शन किए। मुनि श्री ने देखा कि क्षेत्र के पदाधिकारियों की मनमानी के कारण यह सुरम्य तीर्थ अच्छी तरह विकसित नहीं हो पाया है। मुनि श्री के लिए इतने बड़े महानगर में इतने बड़े तीर्थ की उपेक्षा मन को कचोटने वाली बात लगी। क्षेत्र के विकास के लिए वे महत्वपूर्ण सुझाव व मार्गदर्शन दे आए।

मलाड गोरेगाँव अंधेरी

नवनिर्मित नंदीश्वर द्वीप मंदिर आदिनाथ नगर की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा सानंद संपन्न करा मुनि श्री आचार्य संघ के साथ मलाड़ पहुँचे। जिनालय के दर्शन किए। वहाँ से 15 दिसंबर को गोरेगाँव के सौ वर्ष पुराने जिन मंदिर के दर्शनकर संघ मंदिर के सामने एक पुराने बंगले में ठहरा।

यहाँ के दस दिनी मंगल प्रवास में मूलाचार का वाचन प्रतिदिन चलता रहा। वाचन से मुनि श्री का मनोबल और अधिक मजबूत हुआ। ज्ञान की खिड़कियाँ खुलने लगी। शांति विधान भी संपन्न हुआ। यहाँ से आप 25 दिसंबर को गोरेगाँव से विहार कर अंधेरी पहुँचे। वहाँ जिनालय के पास एक सिंधी भाई ने अपना सात मंजिला भव्य भवन आचार्य संघ को ठहरने हेतु उपलब्ध कराया जिसमें तल मंजिल के आधे कमरों का भी उपयोग नहीं हुआ। बाकी बिल्डिंग खाली पड़ी रही। इसी तरह एक मुस्लिम भाई ने माताजी के लिए अपना बड़ा सा घर दे दिया। किसी ने एक पैसा भी किराया समाज से न लेकर धार्मिक समभाव व सहिष्णुता का परिचय दे संतों के प्रति अपनी श्रद्धा व विनय अर्पित किए। सिख भाई व मुस्लिम भाई की इन जैन संतों के प्रति सहृदयता से गदगद मुनि श्री सोच रहे थे कि सच्ची मानवता तो यही है। जाति, धर्म व सम्प्रदाय के नाम पर लड़ने व खून-खराबा करने वाले हम नहीं, कोई और है।

28 दिसंबर 2005 वर्ष की विदा वेला में मुनि श्री सुनीलसागरजी की प्रेरणा व मार्गदर्शन में वहाँ के बड़े प्रांगण में एक विशाल 'सर्वधर्म सम्मेलन' का आयोजन हुआ। इसमें सभी समाजों के धर्म गुरुओं का आगमन हुआ। कई मायनों में यह धर्म सम्मेलन अति महत्वपूर्ण रहा। इसमें धर्मगुरुओं के अलावा कई राजनेता, सांसद प्रिया दत्त (सुनील दत्त की पुत्री, संजय दत्त की बहन), विधायक, गीतकार, संगीतकार व मुंबई के बड़े से बड़े लोग पधारे। मुनि श्री सुनीलसागरजी के विशेष प्रवचन हुए जिसमें मुनि श्री ने भगवान महावीर के पंच सिद्धांतों अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह व ब्रह्मचर्य की आधुनिक युग में प्रासंगिकता पर प्रभावी वक्तव्य दिया व कहा कि ''इन सिद्धांतों को अणु-परमाणु परिमाण प्रभाव भी हम अपने जीवन में उतार लें तो यह सारा सामाजिक वितंडावाद समाप्त हो जाएगा। हर धर्म इन्हीं सिद्धांतों को मानता है। इन्हीं पर चलता है। सारे धर्म ईश्वर तक पहुँचने के अपने-अपने तरीके/रास्ते हैं। हमारी पूजा/इबादत/ प्रार्थना की विधि अलग हो सकती है पर हम पुकारते तो उसी एक ईश्वर को है।''

सारे धर्म गुरुओं व प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने आचार्य श्री के साथ-साथ मुनि श्री से विशेष चर्चा की। वैसे आचार्य श्री का सारा कार्य मुनि श्री ही देखते थे। वे हमेशा उनके साथ रहते थे।

कुल मिलाकर मुंबई चातुर्मास मुनि श्री सुनीलसागरजी के लिए मील का पत्थर साबित हुआ। यहाँ उन्हें अपने व्यक्तित्व को निखारने का हर वो अवसर मिला, जिसे उन्होंने अपनी श्रेष्ठ साधना से सार्थक किया। मुनि श्री का मानना था कि ''योग्य पुरुषार्थ से ही कार्य सिद्धि होती है। मात्र मन में विचारते रहने से नहीं। निरंतर पुरुषार्थ कर छोटे-छोटे कीड़े भी भारी वृक्ष को खोखला कर डालते हैं, तब इस पुरुषार्थी व्यक्ति के लिए ख्याति, मान सम्मान व जीवन का परम लक्ष्य मुक्ति पाना असंभव नहीं है।'' इस प्रकार वे मुनि श्री जो शरीर की चिंता से निरपेक्ष, दक्ष, चतुर, निरंतर उद्यमशील, पुण्य कर्म से युक्त, धीरज की प्रतिमूर्ति। असंभव को संभव कर दिखाने वाले थे। ऐसे उन युवा मुनि श्री के प्रति जन हृदय की आस्था, श्रद्धा व समर्पण निरंतर बढ़ता जा रहा था और वे नित-नई ऊँचाइयाँ छूते जा रहे थे।

1 जनवरी 2006
पार्ला- जुहू चौपाटी

मुनि श्री सुनीलसागरजी 1 जनवरी 2006 को आचार्य संघ के साथ अंधेरी से पार्ला जुहू चौपाटी पहुँचे। यहाँ जिनालय के दर्शन कर 3 जनवरी को सांताक्रूज से होते हुए खार पहुँचे। आपने देखा कि समुद्र किनारे लोगों ने कितनी गंदगी फैला रखी थी। जिससे चारों ओर बदबू फैल रही थी। मुनि श्री ने साथी संतों से कहा, ''इससे तो हमारे गाँव अच्छे।'' आप खार प्रकाशचंद छाबड़ा के ग्रह चैत्यालय जा रहे थे, तब अनिल शाह ने आचार्य श्री से एक घर की तरफ संकेत कर कहा कि ''वह आशा पारीख (अभिनेत्री) का घर है।'' तब आचार्य श्री ने कहा- ''ये बातें सुनीलसागरजी को बताओ।''

तब सब हँस दिए। इस पर आचार्य श्री ने गंभीर होकर कहा कि ''सुनीलसागर हमेशा कहते हैं कि हमें विहार करते हुए उस स्थान की सांस्कृतिक, पुरातात्विक, धार्मिक, ऐतिहासिक या अन्य विशेष बातें अवश्य जाननी चाहिए। हमारी जिज्ञासाएँ शांत होती हैं, कई नई जानकारियाँ मिलती हैं। हमारी जैन संस्कृति के भी चिह्न मिल जाते हैं। कई चीजें हमारे वैराग्य को भी पुष्ट करती हैं। आप लोग उनकी लिखी पुस्तकें पढ़ो, उसमें उसने हर जगह का विस्तार से वर्णन किया। बड़े मेहनती हैं। उनका विहार मात्र पद घर्षण नहीं, अपितु जीवन के प्रति एक सार्थक संदेश लिए होता है। प्रवचनों में वे विहार के इन अच्छे-बुरे अनुभवों व बातों का जिक्र कर समाज सुधार की बात करते हैं।''

आप बांद्रा होते हुए एलफिस्टन जा रहे थे। आपने देखा रास्ते में ट्रकों पर बड़े-बड़े ड्रम रखे थे, तभी चढ़ाते वक्त एक ड्रम गिर कर फट गया। चारों तरफ मछलियाँ बिखर गईं व तड़फने लगी। इस हृदय विदारक दृश्य को देख आपका संत हृदय करुणा से भर गया। आप दुःखी थे कि आप इन निरीह जीवों के लिए कुछ नहीं कर पा रहे हैं। तिर्यंचगति के दुःख को देख मन क्षुब्ध हो गया। क्या पता मैं भी पिछले जन्मों में कितनी बार इस पर्याय में आ लोगों की रसना इंद्रिय की लोलुपता शांत करने ऐसी मौत मरता, अनंत दुःख सहता, भव व्यर्थ करता रहा हूँ। आज मुझे न जाने कितने जन्मों के सार्थक पुण्य से यह संत जीवन मिला है, अपने व्रत-नियम, धर्म कार्य व दृढ़ संकल्प से इसे सफल बना परमात्म तत्त्व प्राप्ति का लक्ष्य बना आगे बढ़ना है। इस प्रकार युवा मुनि अपने श्रेष्ठतम लक्ष्य के साथ आगे बढ़ रहे थे।

आगे आप जा रहे थे कि देखा कि पाँच फीट की छोटी सी जगह में 8-10 लोग रह रहे थे। ताड़देव के चैत्यालय के दर्शन कर वहाँ के विशाल जैन बोर्डिंग को देखा। उसका रास्ता, हाल व दुर्दशा देख आपका मन फिर से एक बार रो उठा। सोचने लगे, देखो बुजुर्गों ने कितनी बड़ी जगह इस महानगर में दान कर यह बोर्डिंग बनवा दिया, किंतु बोर्डिंग चलाने वाले कोई ध्यान नहीं दे रहे हैं। बोर्डिंग वालों की लापरवाही व अव्यवस्था के कारण संघ को 'सांई बाबा मांगलिक हाल' में ठहरना पड़ा जो वहाँ के जैन व्यवस्थापकों के लिए शर्म की बात है।

सामाजिक अव्यवस्था, विषमता तथा जीवों के प्रति क्रूर मानवीय व्यवहार देख आपका हृदय द्रवित हो गया। कहाँ 5 फीट की कोटड़ी में 8-10 लोग रह रहे हैं और कहाँ छात्रावास का वह उपेक्षित पड़ा विशाल भूखंड स्वार्थ की खींचतान में ठीक से उसका सार-संभार नहीं हो पा रहा था। ऐसे प्रसंगों को वे अपनी धर्मसभा के उद्बोधनों में जब-तब उठाते रहते हैं व समाज को सही दिशा बोध दे अपने कर्तव्यों के प्रति आगाह करते रहते हैं। राह में दिखते इन सामाजिक स्वार्थों के खेल, अव्यवस्थाओं, धार्मिक क्षेत्रों की उपेक्षाओं व अन्यान्य छोटी-बड़ी बातों से युवा मुनि का गर्म खून खौल उठता। प्रवचनों में उनकी आवाज बुलंद हो जाती, संत जीवन की मर्यादाओं के अनुकूल वे अपनी वाणी पर संयम रखते, जितना संभव हो सकता, सुधार की दिशा में कदम बढ़ाते, अच्छे हाथों में व्यवस्था की जिम्मेदारी सौंप धार्मिक क्षेत्रों के विकास का योगदान देते आगे बढ़ जाते।

ताड़देव से विहार कर (रात्रि विश्राम के बाद) 5 जनवरी को आप आचार्य संघ के साथ गुलाबवाड़ी भूलेश्वर पहुँचे।

वहाँ आपने चंद्रप्रभू जिनालय, पार्श्वप्रभु जिनालय व रत्नपाषाण निर्मित चौबीसी के दर्शन किए। यहाँ से करीब पौन कि.मी. दूर निमाड़ी वाड़ी में आचार्य संघ के ठहरने की व्यवस्था थी।

8 जनवरी को आपने गुलाबवाड़ी से थोड़ी दूर कालवादेवी रोड स्थित मुंबई के सबसे बड़े श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन जिनालय की मनोहारी प्रतिमा के दर्शन किए। उस शांत प्रतिमा से झलकती वीतरागता पर मनोमुग्ध हो आप प्रभु चरणों में ही बैठ प्रभु की पावन प्रतिमा के माध्यम से अपनी आत्मा में विराजे प्रभु के दर्शन करने लगे। आप इतने अधिक आत्मस्थ हो गए कि स्वयं भी उस अचल पाषाण प्रतिमा से स्थिर हो गए। आधे घंटे बाद साथ के किसी साधु ने झकझोर कर आपको उठाया तब कहीं आपकी तंद्रा टूटी। उन्होंने कहा, ''प्रभु तुझे देखते- देखते मैं तो अपने अंदर के प्रभु में तेरी पावनता, वीतरागता, शांत मुद्रा निहारने लगा। मुझमें व तुझमें कोई अंतर नहीं पर अंतर है तो यही कि पुरुषार्थ कर तू जितेंद्रिय भगवान बन गया। आज मैं तुझसे यही वर माँगता हूँ कि मैं भी तुझसा पुरुषार्थ कर तुझसा बन सकूँ।''

मुनि श्री के अनुसार वह मंदिर जितना मनोज्ञ था उतनी ही मनोज्ञ उसमें विराजित प्रतिमाएँ थीं। मुनि श्री ने इस मंदिर की कई विशेषताएँ रेखांकित की। इसकी शीर्ष मंजिल पर वह चैत्यालय है जो आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराज की सम्मेद शिखर यात्रा में साथ चलता था, जिसमें चाँदी की समवशरणनुमा वेदी पर चंद्रप्रभु भगवान की स्फटिक प्रतिमा विराजमान है। दूसरी विशेषता कि आचार्य श्री की प्रेरणा से ताम्रपत्रों पर उकेरा गया 'धवला महाग्रंथ' भी यहाँ विराजमान है। तीसरी बात की यह विशाल और सुंदर मंदिर परम मुनिभक्त व आचार्य श्री शांतिसागरजी के संघ संचालक जवेरी श्री घासीलाल पूनमचंदजी का बनवाया हुआ मंदिर है। पंचायती मंदिर नहीं। इसलिए भी इसकी देख-रेख व रखरखाव बहुत अच्छा है। यही कारण है कि इस मंदिर की गिनती मुंबई के भव्य मंदिरों में की जाती है। मुनि श्री को समझते देर न लगी कि इन्हीं कारणों से यहाँ उनमें इतनी पवित्र ऊर्जा का संचार हो रहा था।

रविवार को प्रवचन माधव बाग हिंदू मंदिर में रखा गया, जहाँ काफी तादाद में हिंदू धर्मावलंबियों ने प्रवचन सुना, आत्मसात किया व नियम के महत्व को समझा व छोटे-छोटे किंतु दिलचस्प नियम लिए, जैसे आज एक घंटा पंखे की हवा नहीं खाएँगे। एक घंटे तक अन्न-जल नहीं लेंगे। एक घंटे तक किसी से लड़ाई-झगड़ा नहीं करेंगे। कुछ राहगीर जो चलते हुए प्रवचन सुनने रुक गए थे, उन्होंने भी एक घंटा जुआ-सट्टा न खेलने, शराब नहीं पीने या एक घंटा गाली-गलौच न करने जैसे अनेक नियम लिए। कई लोगों ने तो हास्य में ही ये नियम ले लिए पर मुनि श्री तो चले गए, लोगों ने ये नियम हमेशा के लिए अपना लिए। उनके जीवन की दशा व दिशा बदल गई।

मुनि श्री सुनीलसागरजी के सुधारवादी प्रवचनों का इस तरह तात्कालिक प्रभाव पड़ा। मुनि श्री संतुष्ट थे कि छोटे-छोटे नियम लेने वाला व्यक्ति एक दिन मुनि बनने जैसा बड़ा नियम भी ले लेता है। उनका दृष्टिपात स्वयं की ओर चला गया। बचपन में जिन छोटे-छोटे नियमों के सोपानों पर वे चढ़ते रहे वे एक दिन बड़े बन गए और उन्हें मुनिपद के सौपान पर चढ़ा दिया। बड़ा होना व चलना सिखाने वाला नन्हा कदम एक दिन दौड़ना भी सिखा देता है। समाज सुधार की दिशा में नया प्रयोग मिला।

मुनि श्री मुम्बादेवी रोड के सीमंधर जिनालय भी गए। एक दिन आपने आचार्य संघ के साथ 'निमाड़ीबाड़ी' से 'कपोलबाड़ी' प्रवास के लिए प्रस्थान कर दिया। यह मंदिर के थोड़ा निकट है।

19-20 जनवरी 2006 को आचार्य श्री महावीर कीर्तिजी की समाधि दिवस पर दो दिन विद्वत गोष्ठी के चार सत्र आयोजित हुए। प्रत्येक सत्र में मुनि श्री सुनीलसागरजी ने विषय से संदर्भित सारगर्भित प्रवचन दिए। इसमें पूरे हिंदुस्तान से विद्वतगण पधारे थे। सब पर युवा मुनि की विद्वता, श्रुतज्ञान, वक्तृत्व शैली, व्यवहार कुशलता, मृदुवाणी व सरलता का अच्छा प्रभाव पड़ा। मुनि श्री के इस विराट व्यक्तित्व के आगे विद्वत् अपने को बौना समझने लगे।

दीक्षा और समाधि

बोरीवली की वयोवृद्ध श्राविका श्रीमती प्रेमकुमारी कासलीवाल ने 26 जनवरी 2006 को भारत के गणतंत्र दिवस पर विषम स्वास्थ्य एवं पारिवारिक स्थिति में आचार्य श्री से आर्यिका दीक्षा ग्रहण की तथा 30 जनवरी (शहीद दिवस, गाँधी पुण्यतिथि) की प्रातः प्रतिक्रमण पश्चात स्वाध्याय व आत्मबोधि के प्रवचन, संबोधन सुनते हुए बड़े शांत भाव से उन्होंने समाधिमरण किया और नश्वर देह त्याग दी। मात्र घंटे भर बाद ही अपार जनसमूह के बीच उनकी अन्त्य विधि संपन्न कर दी गई।

उसी दिन दोपहर में पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन देहरासर की वर्षगाँठ का जो पहले से आयोजित कार्यक्रम था। उसकी दोपहर की धर्मसभा में दिवंगत दिव्य आत्मा आर्यिका श्रीमती माताजी को श्रद्धांजलि अर्पित की गई।

चंद दिनों पूर्व दीक्षा आज फिर समाधि। मुंबई चातुर्मास में पूर्व में भी दीक्षा- समाधि की घटनाएँ मुनि श्री सुनीलसागरजी के सम्मुख घटती रही, जिन्हें देख उनके मन में वैराग्य के प्रति दृढ़ता और अधिक मजबूत होती जा रही। अपने शाश्वत स्वरूप का बोध होने से अब वे ज्यादा प्रमादी नहीं होते थे।

जन्म-मृत्यु, संयोग-वियोग, मिलन- बिछोह के संसार के इस खेल ने ही तो उनके मन की मिरदा (मृदा) को इतना मुलायम कर दिया था कि उस पर आज जो संयम का पौधा लहलहा रहा है, उसकी कोपलें फूटी थीं।

वे चिंतन कर रहे थे कि जो लोग जीवन का लक्ष्य सामने रखकर अपने विचारों की आचार संहिता घड़ते हैं वे ही वयोवृद्ध श्राविका प्रेमकुमारी कासलीवाल, श्राविका विमलाबाई काला, पं. कपूरचंदजी जैन आदि वयोवृद्ध, अस्वस्थ व अन्यान्य शारीरिक समस्याग्रस्त होते हुए भी अति संपन्न आर्थिक स्थिति होने के बावजूद अपना अंतिम लक्ष्य दीक्षा व संयम धारण करना, प्राप्त करते हैं। सारी सुख-सुविधाओं के बावजूद भी इन्होंने गुरु निश्रा में आकर तत्वज्ञान की प्रसादी प्राप्त की। योग में परमानंद माना और अपनी मनोवीरता से अपने सर्वोच्च लक्ष्य को हासिल किया।

उन्हें भर्तृहरि का उपदेश याद आ गया ''भोग में रोग का भय है, कुल को नष्ट होने का भय है, चंचला लक्ष्मी को राजभय है, मन में दीनता का भय है, बल को शत्रु का भय है, रूप से स्त्री को भय है, गुणी को दुष्टों का भय है और इस काया पर काल का भय है। संसार की सारी वस्तुओं में भय व्याप्त है। एकमात्र वैराग्य अभय है।''

धर्मसभा में मुनि श्री सुनीलसागरजी ने दिवंगत माताजी को श्रद्धांजलि देते हुए उपरोक्त बात दोहराते हुए कहा कि ''श्रीमती माताजी ने उस अभय वैराग्य को प्राप्त कर दीक्षा धारण कर अपना आत्मकल्याण का मार्ग प्रशस्त कर लिया।''

मुनि श्री के लिए आज का दिन काफी विरक्ति भरा था। उन्होंने अपने उद्बोधन में मुंबई के जवाहरात के व्यापारी व आत्म जवाहरात को पहचानने में निष्णात श्रीमद् राजचंद्रजी (शतावधानी रायचंदभाई- गाँधीजी के आध्यात्मिक गुरु) की बात को आज गाँधीजी की पुण्य तिथि पर प्रकट करते हुए कहा कि ''एक बार श्रीमद् राजचंद्र मुंबई में अपने दोस्त के साथ घूमते हुए श्मशान घाट पहुँच गए। उन्होंने दोस्त से पूछा, 'यह क्या है?' उसने उत्तर दिया, 'श्मशान घाट।' वीतरागी श्रीमद् राजचंद्र ने बड़े मार्मिक शब्दों में कहा, 'मुझे तो पूरी मुंबई नगरी श्मशान जैसी दिखती है।' इस प्रकार वीतरागी राजचंद्र को संसार के प्रति अणु प्रमाण भी मोह नहीं था।''

इसी प्रकार माताजी व अन्य श्रेयांससागरजी महाराज व श्रेयांसमति माताजी ने मृत्यु से कुछ दिनों पूर्व दीक्षा ग्रहण कर सल्लेखना पूर्वक समाधि ली। वे समझ गए थे कि सच्चा सुख तो इंद्रियातीत है। हमारी उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि तो यही है कि 'उन्हें उनका अभीष्ट लक्ष्य- मुक्तिश्री की प्राप्ति हो।' की कामना करें।

प्रवचन सुनते हुए जनसमुदाय के हृदय में वैराग्य उमड़ आया। सभी लोग युवा मुनि के इस वैराग्यमय भाव प्रवण उद्बोधन को समाधिस्त हो सुनते रहे। तभी मुनि श्री ने समय की नजाकत देख व मंदिर की प्रतिष्ठा की जयंति पर्व के

परिप्रेक्ष्य में अंतिम वाक्य से लोगों की तंद्रा तोड़ दी।

''अरे भाई समाधि तो माताजी की हुई है और आप लोग हैं कि बिना दीक्षा लिए... ।'' एक हँसी का फव्वारा फूट पड़ा और वातावरण थोड़ा सामान्य हुआ।

घाटकोपर

ताड़देव, गुलालबाड़ी, भूलेश्वर, कालबादेवी जिनालय में दर्शन, धर्म प्रभावना, भव्य जीवों की दीक्षा- सल्लेखना कराते श्री संघ के साथ आप घाटकोपर पहुँचे। (30 जनवरी अपराह्न को ही विहार करके)

यहाँ आप सर्वोदय हॉस्पिटल के प्रांगण में बने विशाल भवन में संघ के साथ रुके। यहाँ 3 फरवरी 2006 को रखियाल निवासी मुंबई मीरा रोड प्रवासी रसिक, चंद्रकांत व अश्विन गाँधी की माँ ब्रह्मचारिणी मंगूबाई ने क्षुल्लिका दीक्षा ग्रहण की। उनका नाम संयममति माताजी रखा गया। आज फिर एक भव्यात्मा सांसारिक सुखों का व्यामोह छोड़ मुक्ति मार्ग पर अग्रसर हो गई।

घाटकोपर में ही मुनि श्री सुनीलसागरजी के नेतृत्व मार्गदर्शन व प्रेरणा से आचार्य गुरु की जन्म जयंति विशाल स्तर पर मनाई गई। गुरु महिमा का बखान करते हुए उन्होंने आचार्य श्री को अपना परम हितैषी बताया। उन्होंने अपने गुरुदेव का जो गुणगान किया उसका सार मेरे शब्दों में यही था कि

''मसि सात समन्दर की करले, इनके न गीत लिख पायेंगे
ये गुण के पारावार गुरु इनका न पार पा पायेंगे
ज्ञानी, ध्यानी पर हितकारी, उपदेश 'मुक्ति' का देते हैं
जो पांव चरण हो गए उन्हें, छूकर भी ना छू पायेंगे।''

(विशेष : ये पंक्तियाँ मैंने सर्वप्रथम आचार्य श्री को ही अर्पित की थी।)

8 फरवरी 2006 से श्रवणबेलगोला का महामस्तकाभिषेक शुरू हुआ। श्रावकों ने धर्मसभा में बड़ा प्रोजेक्टर लगा दिया जिस पर महामस्तकाभिषेक का सीधा प्रसारण दिखाया गया। प्रवचन के लिए बुलाए गए संघ ने अभिषेक देख आत्म शुद्धि बढ़ाई। आचार्य श्री तो झलक देखकर चले गए। इसके पश्चात वहाँ बगीचे में विराजित बाहुबलि प्रतिमा का भी महामस्तकाभिषेक हुआ। यहीं पर एक टेकरीनुमा सर्वोदय तीर्थ एक श्वेताम्बर परिवार ने विकसित किया है। उसमें दिगम्बर जैन मंदिर बड़ा सुंदर है। आपने उस क्षेत्र की प्रत्येक चीज/विशेषता का सूक्ष्म निरीक्षण परीक्षण कर क्षेत्र विशेष के बारे में ज्ञानवृद्धि की और उसे अपने लेखन में भी उत्कीर्ण किया।

विक्रोली-एरोली

मुनि श्री सुनीलसागरजी 9 फरवरी 2006 को दोपहर तीन बजे घाटकोपर 'सर्वोदय' भवन/तीर्थ/हॉस्पिटल से श्री संघ के साथ पुनः अगले पड़ाव के लिए चल पड़े। दिगम्बर मुनि की तो चर्या यही है। न ठौर न ठिकाना।बस्ती-बस्ती, गाँव-गाँव, नगर- नगर, डगर- डगर धर्म की अलख जगाते ये अक्खड़ अनासक्त योगी निरंतर चलते रहते हैं। जब पैर चलते हैं तब भी या बैठते, उठते, सोते हों तब भी आत्म परिभ्रमण तो उनका हर वक्त चलता ही रहता है। चरेवेति-चरेवेति प्रचलाम् निरन्तरम् उनका जीवनोद्देश्य है। सरोवर के रुके पानी की तरह वे अपने मन को, जीवन को, राग-द्वेष, कषायों की गाद से उथला करना नहीं चाहते। वे तो निर्झर का निर्मल क्षीर है, सरिता का बहता स्वच्छ पानी है जिससे वे औरों के भी मन के मैल को धो देते हैं।

मुनि श्री कहने को वे संघ के संतों के साथ चल रहे थे वस्तुतः चल तो वे अकेले ही रहे थे। अकेले ही अकेले से

बतिया रहे थे। स्वयं ही स्वयं से स्वयं के जीवन का लेखा-जोखा माँग रहे थे। कर्मों का हिसाब-किताब कर रहे थे- किस को जोड़ना है, किसको घटाना है, किसको गुणा करके बढ़ाना है, किसमें किसका भाग दें, कम करना है...। आदि आदि। बीच- बीच में साथियों से बात भी कर लिया करते थे ताकि रास्ते की लंबाई, दुरूहता कम हो सके। वैसे ऐसा उनका कोई इरादा नहीं था फिर भी साथियों के साथ सफर करने से सफर आसानी से कट जाता है।

दिगम्बर साधु तो हमेशा सफर पर ही रहता है। तिस पर पद विहारी। इसीलिए श्रमण परंपरा में एकल विहारी साधु का निषेध है। किंतु मुनि श्री तो संघ के साथ ईर्यापथ देखकर चल रहे थे।

तभी उन्होंने देखा उस फोरलेन सड़क पर बाजू से एक मोटर सवार युवक निकला। वह थोड़ा आगे निकल गया पर पीछे मुड़-मुड़कर इतने सारे पद विहारी, पिच्छी कमंडलधारी दिगम्बर साधुओं को देख रहा था। तभी पीछे से आ रही एक जीप ने उसे टक्कर मार दी। वह गिर गया। यह देख साथ चल रहे श्रावक व युवा दौड़ पड़े। जीप वाले को भी इतने लोगों व संतों को देखकर रुकना पड़ा। मुनि श्री के कहने पर तुरंत कुछ युवक उसी जीप में उस अनजान घायल युवक को लेकर हॉस्पिटल पहुँचे। उसकी मोटर साइकिल श्रावकों ने वहीं साइड में खड़ी कर दी। मुनि श्री आगे बढ़ गए। युवकों ने लौटकर रास्ते में बताया कि वह युवक ठीक था इसलिए हम आ गए।

मुनि श्री ने बताया कि ''हम सब उसकी कुशलता के लिए रास्तेभर णमोकार महामंत्र का जाप करते आ रहे हैं।'' तभी एक युवक ने कहा, ''इसीलिए उस युवक को कुछ नहीं हुआ। यह महामंत्र का महाप्रभाव ही है कि वह बच गया व शीघ्र उसको उपचार मिल गया व इतने लोग हॉस्पिटल ले जाने वाले। समस्त साधुओं के पुण्य का ही फल है।''

* * *

शाम होते-होते संघ विक्रोली पहुँचा। वहाँ रात्रि विश्राम कर सबेरे पुनः एरोली के लिए विहार कर दिया। एरोली में भव्य अगवानी के साथ श्री संघ का मंगल प्रवेश हुआ। थोड़ी देर बाद आचार्य श्री के साथ मुनि श्री ने निर्माणाधीन मंदिर के विशाल भू-खंड का निरीक्षण किया। 13 फरवरी को विशाल पांडाल में भूखंड का भूमिपूजन हुआ। गुरुदेव के आदेश से मुनि श्री के निर्देशन में पं. प्रदीपजी मधुर ने सारी क्रियाएँ संपन्न कराई।

प्रवचन, पूजा-अर्चना के माध्यम से काफी धर्म प्रभावना हुई। यहाँ अष्टदिवसीय प्रवास के बाद 14 फरवरी को प्रातः आप संघ के साथ विहार कर ठाणे पहुँचे।

ठाणे

मुनि श्री ने संघ के साथ ठाणे के जिनालय के दर्शन किए। ठाणे रोड पर संघ की आहार चर्या हुई। मुनि श्री सुनीलसागरजी की पारखी निगाहों ने देख लिया कि ठाणे में 300 जैन श्रावकों के घर होने के बावजूद भी समाज संगठित नहीं है। लोगों को ठीक से पता भी नहीं चला कि इतने बड़े आचार्य के इतने बड़े संघ का नगरागमन हुआ है। जैसे-जैसे लोगों को मालूम पड़ता गया वैसे-वैसे लोग दर्शन को आते-जाते रहे। अधिकांश लोगों को संघ की व्यवस्था से कोई सरोकार नहीं था। संगठन के अभाव में कोई समाज का मुखिया नहीं था जिस कारण समाज अस्तित्वहीन सा दिखाई देने लगा। मुनि श्री सोचने लगे कि यदि इतना बड़ा समाज संगठित हो जाए तो अपनी कितनी बड़ी ताकत दिखा सकता है। यदि इतना बड़ा समाज संगठित होकर अपने धर्मगुरु की अगवानी करने पचरंगी ध्वज के साथ आता तो धर्म की कितनी प्रभावना होती?

उन्होंने अपने पद विहार में कई-कई जगह देखा है कि 5-7 जैन घरों के श्रावकों ने संगठित हो वह माहौल बना दिया कि जैनियों की अपेक्षा अजैनों की संतों के प्रति आस्था भक्ति प्रगाढ़ रही। उन्होंने व्रत, नियम लिए। वे आज भी यहाँ तक गुरु दर्शन को चले आते हैं और एक ये हैं। जैनी होकर भी जैन संतों के प्रति इनमें श्रद्धा भक्ति नहीं है।

मुनि श्री ने अपने संक्षिप्त उद्बोधन में समाज को संगठित होकर रहने के लिए कहा। उन्होंने कहा 'संघे शक्ति कलौयुगे।' उन्होंने समाज को लताड़ते/आड़े हाथों लेते हुए कहा कि ''ऐसा मृत प्रायः समाज हमारी महान संस्कृति की रक्षा कैसे करेगा। यदि यहाँ का समाज संगठित नहीं हुआ तो हमारी सांस्कृतिक धरोहर खो बैठेगा। किसी न किसी को आगे आकर इस दिशा में कदम उठाना पड़ेगा।'' उन्होंने अपने ओज व जोश पूर्ण प्रवचनों से समाज को जाग्रत किया, सामाजिक चेतना की लहर फैलाई। समाज चेता, पर संस्कार सिंचन के सतत प्रयास की आवश्यकता है।

19 फरवरी 2006 को श्रवणबेलगोला महामस्तकाभिषेक का अंतिम दिन था। इस दिन वहाँ पर गणिनी प्रमुख विजयमति माताजी का प्रातः 9.50 पर सम्मेद शिखर की भाव वंदना करते हुए समाधिमरण हो गया। उन्होंने नौ बजे फोन से आचार्य श्री से कहा, ''अब पद त्याग का आशीर्वाद दो।'' आचार्य श्री ने आशीर्वाद देते हुए ''आत्म स्थिरता बढ़ाने'' को कहा।

बसई

यहाँ से 20 फरवरी को माणकचंद कपूरचंद के फार्म हाउस रत्नद्वीप पर आहार चर्या हुई। यहाँ पर फिल्मों की शूटिंग भी होती है। यहाँ से शाम को बसई पहुँचे। यहाँ प्रवचन सभा में दो दिनों तक दो सत्रों में माताजी (विजयमति) को श्रद्धांजलि अर्पित की गई।

पहले दिन माताजी को संघपति अजित कासलीवाल, आर.के. जैन, शिखरचंद पहाड़िया, चिंतामणि बज, सुमेरचंद चूड़ीवाल, महेंद्र बंडी, कमल बड़जात्या आदि ने श्रद्धांजलि दी। दूसरे सत्र में साधुओं, आर्यिकाओं ने अपने संस्मरण सुनाए।

युवा मुनि श्री श्रद्धा से अभिभूत सब सुनते रहे। पहली बार उन्होंने इतनी बड़ी (दो सत्रों में चलने वाली) श्रद्धापूरित भावनाएँ किसी माताजी के प्रति सुनी थी। आचार्य श्री का उनके प्रति इतना सम्मान अभिभूत कर देने वाला था। निश्चित ही माताजी का व्यक्तित्व व कृतित्व विलक्षण व असाधारण था, तभी तो वे प्रथम गणिनी पद पर सुशोभित हुई।

नाला सोपारा

6 मार्च को मुनि श्री संघ के साथ नाला सोपारा पहुँचे। यहाँ के 20 दिनी प्रवास में आचार्य श्री के अष्टाह्निका के आठ उपवास भी इतनी भीषण गर्मी में संपन्न हुए। यहीं सनत दोषी की माताजी ने आचार्य श्री से सात प्रतिमा धारण की व तीन साधुओं के केशलोंच हुए।

विरार

यहाँ से 27 को प्रातः विहार कर आप गुरु संघ के साथ विरार पहुँचे। यहाँ एक विशाल जिन मंदिर में जिनेंद्र देव के दर्शन किए। वर्ष प्रतिपदा (गुड़ी पड़वा, नववर्ष) सुप्रसिद्ध दानवीर श्री ज्ञानचंदजी किशनचंदजी मिंडा ने क्षुल्लक दीक्षा ली। ज्ञानचंदजी की धर्म परायणता, दानवीरता तथा लोकप्रियता के कारण इस अवसर पर सारे मुंबई महानगर के उपनगरों के श्रावक श्रेष्ठी व धर्मप्रेमी लोग उपस्थित थे। श्री आर.के. जैन ने बताया कि मिंडाजी ने मंदिर, मूर्ति, धर्मशाला के निर्माण के साथ-साथ शिक्षा व स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी खूब दान किया। यही नहीं उन्होंने एक पूरी ट्रेन सम्मेद शिखर यात्रा के लिए निकाली थी।

क्षुल्लक दीक्षा के बाद ज्ञानचंदजी का नाम सतसागर रखा गया। साथ संघस्थ क्षुल्लिका संभवमती माताजी को आर्जिका दीक्षा दे वही नाम रखा। संभवमति माताजी ने सल्लेखना का नियम ले आचार्य श्री से केवल जल व दूध

ग्रहण करने का नियम लिया। वह भी एकांतर से। दीक्षा के बाद उन्होंने मात्र 3 बार ही आहार लिया। 7 अप्रैल को उन्होंने यह कहकर कि ''इस शरीर को कितना भी खिलाओ-पिलाओ साथ जाने वाला नहीं। न कभी इसकी भूख मिटेगी।'' स्वेच्छा से आचार्य श्री व चतुर्विध संघ की साक्षी में अन्न-जल का त्याग कर सल्लेखना धारण कर ली।

मुनि श्री ने देखा कि इन लोगों में विरक्ति की भावना तो बहुत पहले से थी किंतु गृहस्थी की वैतरणी पार करते-करते समय लग गया फिर भी अंततः जीवन के अंतिम पड़ाव पर संसार त्याग संन्यास ले ही लिया। जिनका भवितव्य अच्छा होता है उन्हें ही ऐसा साधु समागम प्राप्त होता है।

11 अप्रैल महावीर जयंति के दिन माताजी का 5वाँ उपवास चल रहा था। प्रातः जब संघ अभिषेक देख रहा था तब यहाँ के क्षेत्रीय विधायक हितेंद्रसिंह ठाकुर बिना किसी सूचना के पधारे। आज भी उस क्षेत्र में उनका दबदबा राजा-महाराजाओं जैसा ही था। वे कहीं जाते नहीं थे, किंतु महावीर जयंति व इतने सारे संतों के आगमन पर साधुओं का दर्शन लाभ व आशीर्वाद लेने आ पहुँचे। जिनका क्षेत्र में एकक्षत्र राज्य चलता था वे चुपचाप भगवान महावीर व आचार्य संघ की छत्र छाया में आकर चुपचाप बैठ गए। जैसे ही समाज के विशिष्टजनों को पता चला, वे दौड़े आए व अभिषेक पश्चात उन्हें आचार्य श्री के पास ले गए। उन्होंने श्रीफल अर्पित कर आशीर्वाद लिया। उन्होंने अपने संक्षिप्त से उद्‌बोधन में भगवान महावीर के सिद्धांतों सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह व ब्रह्मचर्य की आधुनिक परिप्रेक्ष्य में महत्ता बताते हुए विश्व शांति व प्रेम के लिए इन सिद्धांतों की आवश्यकता बताई। आपने संतों को हाथ जोड़कर नमन करते हुए कहा कि ''आप जैसे दिगम्बर साधु 24 घंटों में मात्र एक बार खड़े-खड़े भोजन करते हैं तथा बिना जूते-चप्पलों के पैदल ही चलते हैं। ऐसी कठिन साधना मैंने अन्यत्र नहीं देखी। मैं आपकी साधना को हृदय से नमन करता हूँ।''

लोगों ने तालियों की गड़गड़ाहट से उनका स्वागत किया। समाज ने पचरंगी दुपट्टे से उनका सम्मान किया। आचार्य श्री ने आशीर्वाद देते हुए कहा कि ''एक सशक्त नेता होने के नाते आपके पास अधिकार भी है, शक्ति भी। इसका उपयोग आप धर्म व समाज की रक्षार्थ करें।''

विधायकजी वापस आकर बैठे ही थे कि उनके साथ आए 10-12 दबंगों में से एक धीरे से बोला, ''विधायकजी यहाँ कहाँ नंगों के बीच ले आए?'' विधायकजी ने झिड़कते हुए आँख दिखाकर चुप रहने को कहा। आसपास बैठे लोगों ने यह दृश्य देखा भी और सुना भी।

उन्होंने पचरंगी झंडा दिखाकर शोभायात्रा/जुलूस को रवाना किया व कुछ दूर रथ के साथ चले। उनके आगमन से क्षेत्र में अच्छी खासी धर्म प्रभावना हुआ। दोपहर की धर्मसभा में क्षुल्लक सभ्यसागरजी की दीक्षा हुई।

संभवमति माताजी की समाधि

इधर माताजी अत्यंत कृशकाय हो गई थीं। उनसे बैठते नहीं बनता था। वे लेटे-लेटे ही सामायिक व प्रतिक्रमण करती थीं। उन्हें आचार्य श्री, मुनि श्री सुनीलसागरजी व अन्य साधु- साध्वियाँ संबोधती, स्तुति पाठ सुनाती। मुनि श्री सुनीलसागरजी ने सबसे कहा था कि ''उन्हें अकेला नहीं छोड़ना। हमेशा संबोधते रहना या सुनाते रहना।''

माताजी अक्सर मुनि श्री सुनीलसागरजी से कहा करती थी कि ''देखो आचार्य श्री तो अक्सर 8-8,10-10 व 12 तक उपवास कर लेते हैं, मैंने तो जीवन में कभी दो उपवास भी नहीं किये।''

मुनि श्री ने 14 अप्रैल को माताजी से कहा, ''माताजी, देखो आज आपका भी आठवाँ उपवास है। आप तो वो संभवमति हैं जिसने हर असंभव संभव कर दिया।'' परिहास में उन्होंने कहा, ''आप भी आचार्य श्री के उपवास तक पहुँच गईं।''

सब लोग हँस दिए तो माताजी भी मुस्करा दी। उनके चेहरे से यह बात सुनते ही खुशी झलकने लगी। लेकिन उन्होंने

थोड़ा सा हाथ उठाकर ना करने का प्रयास किया। मुनि श्री को समझते देर न लगी।

सुनीलसागरजी ने उनसे कहा, ''आप सच कह रही हैं। आचार्य श्री की बराबरी हम-तुम तो क्या, अन्य कोई बड़ा से बड़ा साधक भी वैसी तप- साधना में नहीं कर सकता।''

सुनते ही माताजी को संतोष हुआ। दोपहर तक उनकी श्वांसों का आरोह-अवरोह बिगड़ने लगा। खबर होते ही आचार्य श्री के साथ सारे साधुगण आ गए। वे चैतन्य अवस्था में थी। कभी आचार्य श्री तो कभी सुनीलसागरजी उन्हें संबोधते जा रहे थे तो कभी समवेत स्वर में णमोकार महामंत्र सुना रहे थे। सुनते-सुनते बड़े शांत परिणामों से सल्लेखना पूर्वक माताजी ने समाधिमरण प्राप्त किया। संभवमति माताजी ने सल्लेखना ले मृत्यु को महोत्सव बना असंभव को संभव कर दिया था। मुनि श्री के मुख से निकल गया ''संभवमति के लिए कुछ भी असंभव नहीं।''

पूणे की ओर

19 अप्रैल को आप संघ के साथ विहार कर नाला सोपारा होकर बसई पहुँचे। यहाँ से पूणे की ओर विहार हो गया। भायंदर वाले गाड़ी खराब होने के कारण एक घंटा लेट पहुँचे। वे संघ को भायंदर ले जाना चाहते थे। हाय रे दुर्भाग्य! तब तक संघ ने पूणे की ओर विहार कर दिया था।

सबने जाकर आचार्य श्री के पैर पकड़ लिए व भायंदर आने के लिए विनती करने लगे। बात बनती न देख वे सुनीलसागरजी के पास पहुँचे। कुछ लोग चरणों में माथा टेक रोने लगे। पर गुरु आज्ञा के आगे वे अवश थे।

वाह रे! दुर्भाग्य। महा अंतराय। आपके पुण्य में कमी है तभी तो इतना पास आने पर भी आपको आचार्य संघ का सान्निध्य प्राप्त नहीं हो सका। कम से कम समाचार तो भेज देते, तब कुछ विचार भी किया जाता। अब तो कुछ नहीं हो सकता। जिसको सान्निध्य प्राप्त करना है, विहार में साथ चले, पूणे में आकर सत्संग करे।

युवा मुनि की बात सबको अपील कर गई। प्रायश्चित स्वरूप भायंदर से कोई न कोई विहार में साथ रहा। जो बच गए थे उन्होंने पूणे जाकर संत समागम का धर्म लाभ लिया। लेकिन घर के बाहर से इतने बड़े आचार्य संघ का निकल जाना, शूल दंश की तरह उनके मन में चुभता रहा। यह पूरे गाँव के अंतराय कर्म का उदय था। सोच-सोचकर सब प्रायश्चित करते रहते।

संघ 23 अप्रैल को पुनः माणकचंदजी के फार्म हाउस पहुँचा। यहाँ आहार चर्या हुई। मुनि श्री ने देखा कि वहाँ दिनभर फिल्मी गानों की शूटिंग से शोर-गुल होता रहा। यहाँ से संघ के साथ आप चिंचोली फाटा, शंखेश्वरधाम, अक्षयधाम, चंद्रप्रभु धाम होते हुए रास्ते में महाराष्ट्र के किसी मंत्री के बंगले पर रुके। जहाँ आहार चर्या व सामायिक कर शाम को मुंब्रा पहुँचे।

वहाँ बाहुबली भगवान की विशाल प्रतिमा के दर्शन किए। मूर्ति व परिवेश देखकर आपको गोमटेश बाहुबली का स्मरण हो आया। उपेक्षित पड़े इस तीर्थ को देख मुनि श्री का हृदय दुःखी हो गया। उन्होंने देखा कि क्षेत्र की 13-14 एकड़ जमीन के बीच-बीच में से लोगों ने रास्ते बना लिए हैं। कुछ भूखंड पर अनैतिक तत्वों ने कब्जा कर लिया है। आदिनाथ नगर की मल्टियों पर किराएदारों ने कब्जा कर लिया है। करोड़ों-खरबों की भूमि समाज की सतर्कता बिना किसी दिन समाज के हाथों से चली जाएगी।

मुनि श्री को इस भूमि को देख पोदनपुर में उपेक्षित पड़ी ऐसी ही विशाल भूमि की याद हो आई। इन दोनों क्षेत्रों को मुंब्रा और पोदनपुर (तीन मूर्ति) की मुंबई महानगर के पास होते हुए भी इतनी दुर्दशा हो रही है। कमेटी या ट्रस्ट के मेंबरों की लापरवाही, सही नियोजन का अभाव व समर्पण की भावना किसी में न होने के कारण अरबों की भूमि पास होने के बावजूद भी क्षेत्र का विकास नहीं हो रहा है। कमेटी के मेंबरों की एकता न होने या स्वार्थपरता से या अनिच्छा

के कारण ही क्षेत्र उजाड़ सा पड़ा है। तीर्थ क्षेत्र रक्षा कमेटियों को चाहिए कि वे इस ओर ध्यान देकर, इतने बड़े भूभाग पर सुनियोजित विकास करे, इससे क्षेत्र को आय भी होगी, सुरक्षित रहेगा और क्षेत्र सुंदर बन सकेगा। यात्रियों को अपनी ओर आकर्षित करेगा। यहाँ विद्यालय, अस्पताल आदि भी बनाए जा सकते हैं। इतने बड़े महानगर में इतना विशाल भूखंड विभिन्न प्रकल्पों के लिए इनके लिए वरदान बन जाएगा।

पनवेल

27 अप्रैल को यहाँ से आप संघ के साथ पनवेल पहुँचे। यहाँ पर 80 के करीब प्रवासी जैन परिवार हैं पर ये भी असंगठित, अस्तित्वहीन से। यहाँ एक मंदिर तक नहीं है। कुछ लोगों ने आगे आकर अब कहीं मंदिर के लिए जमीन खरीदी है। संघ के पनवेल में प्रवेश पर समाज के 80 घरों में से एक भी व्यक्ति इतने बड़े आचार्य संघ की अगवानी के लिए नहीं आया। इससे तो वे अजैन लोग अच्छे थे जो इतने सारे जैनियों के साधु बाबा जा रहे हैं कहते हुए साधुओं के चरणों में श्रद्धा भक्ति से माथा टेक रहे थे। कुछ लोग कह रहे थे अरे! अपने यहाँ तो बड़ी संख्या में जैनी लोग रहते हैं, पर एक भी नहीं दिख रहा है। कैसे हैं ये जैनी? इतनी दूर से इतने सारे साधु आए हैं, पर ये लोग उन्हें रुका भी नहीं रहे हैं।

मुनि श्री सुनीलसागरजी ने संगठित समाज की ताकत भी देखी थी और आज पनवेल जैसे स्थान के बिखरे समाज की दयनीय दशा भी देख रहे हैं। उन्हें भायंदर के समाज की संगठित मुनि भक्ति याद हो आई। वे लोग कितनी दूर से संघ को लिवाने आए थे, किंतु पुण्य संयोग न होने से उनके भायंदर के समाज को संघ का समागम नहीं मिल सका और वे कितने दुःखी हो गए। और एक यह पनवेल का समाज उन्होंने अपने संघस्थ साधुओं से कहा कि देखो- ''यह गंगा हिमालय से उतर इनके घर आई है फिर भी ये अभागे इसमें अपने मन का मैल नहीं धो पा रहे हैं। यदि इनमें एकता होती, संगठन होता तो बड़ा से बड़ा काम भी आसानी से कर सकते थे। पर ये हैं कि संगठन, सूझबूझ व विवेकशील नेतृत्व के अभाव में इतने बड़े आचार्य संघ की व्यवस्था की जिम्मेदारी कहीं हम पर न आ पड़े, सोचकर दूर भाग रहे हैं। हतभागी लोग।''

मुनि श्री चिंतित थे कि यदि पनवेल के जैन समाज की ऐसी ही मनोवृत्ति व मनोदशा रही तो इधर से विहार करता हुआ एक भी दिगम्बर संत यहाँ नहीं रुक पाएगा। यद्यपि अभी यहाँ जिन मंदिर भी नहीं है। साधु संतों के सान्निध्य व धार्मिक उपदेशों बिना इनमें संस्कारों का बीजारोपण नहीं हो सकेगा और अज्ञानी लोग धर्मविमुख हो राह भटक जाएँगे।

यदि सामान्यजन होते तो उनके मन में समाज के संतों के प्रति ऐसे व्यवहार से क्षोभ व क्रोध उत्पन्न हो जाता पर यहाँ तो वात्सल्य वारिधि मुनि श्री सुनीलसागरजी का हृदय उनके लिए करुणा से भर गया। इतने अधिक परिवार होने के बावजूद भी पनवेलवासियों ने संघ को न रुकाया न ही ठहरने व आहार चर्या की व्यवस्था की।

संघ के साथ मुनि श्री शाम को 6 कि.मी. व सुबह 12 कि.मी. इतनी भयंकर गर्मी में चलकर पनवेल से आगे एक पेट्रोल पंप पर रुके व वहीं सबकी आहार चर्या हुई।

इतनी भीषण गर्मी में इतनी चलाई से साधुगण त्रस्त हो गए। आचार्य श्री की तबीयत अधिक खराब हो गई। अत्यधिक गर्मी में विहार कर आने के बाद साधुओं का आहार भी ठीक से नहीं हो पाया। थोड़ा-थोड़ा आहार ले साधुगण बैठ गए। ऐसी स्थिति में कोई व्यवस्थित जगह होती तो श्रावकगण रात्रि विश्राम के लिए वहीं रुका देते, पर ऐसी कोई व्यवस्था नहीं थी।

अतः रात्रि विश्राम के लिए अगले पड़ाव के लिए आपने संघ के साथ विहार कर दिया। अक्सर विहार में आप आचार्य श्री के साथ ही रहते, किंतु कभी-कभी थोड़ा आगे-पीछे भी हो जाते। गुरुदेव का स्वास्थ्य ठीक न जान आप

उनके साथ ही चल रहे थे। एक जगह वे लघुशंका के लिए जाने लगे। गर्मी चढ़ने से उन्हें तीव्र बुखार था। पैर लड़खड़ा रहे थे, फिर भी चल रहे थे कि अचानक उनका पैर फिसल गया। साथ चल रहे श्रावक उन्हें संभालते तब तक तो वे गिर पड़े। उन्हें दो-तीन जगह चोट लगी। बड़ी विडम्बना थी, न तो आचार्य श्री रुक कर वहीं बैठना चाहते थे, नहीं आसपास ऐसी जगह ही थी जहाँ उन्हें जबरन ही सही, थोड़ी देर बिठाया जा सके। फिर भी मुनि श्री ने एक स्थान को थोड़ा साफ कर आचार्य श्री को बिठाना चाहा। पर वे तपोनिष्ठ आचार्य, दृढ़ प्रतिज्ञ बिना रुके ऐसी हालत में भी धीरे-धीरे विश्राम स्थल तक पहुँचे।

इस दिन भीषण गर्मी के प्रकोप से दो-तीन साधु और गिर गए। आग बरसते सूरज ने उनकी दिगम्बर देह झुलसा दी। आहार चर्या भी ठीक से नहीं हो पाई और फिर चल पड़े अगले गंतव्य की ओर भूखे-प्यासे। प्यास से प्राण हलकान को आ गए। भूख प्यास का परिषह तो वह संयम लेने के दिन से ही सहन करते हैं पर आज प्रचंड गर्मी, तिस पर लगातार चलाई। संत हैं तो क्या? संत भी तो मनुष्य हैं, प्राणी हैं। उस पर भी पर्यावरण व वातावरण का वैसा ही प्रभाव पड़ता है जैसा अन्य जीवों पर।

आचार्य श्री व संघस्थ साधुओं की स्थिति देख अब तो सदा शांत व समताभाव धारण करने वाले युवा मुनि का हृदय आक्रोश से भर गया। वे कहने लगे कि ''इनमें इतना भी व्यवहार, विवेक नहीं था, इतना भी सूझबूझ नहीं थी कि उन्होंने अपने शहर से जा रहे इतने बड़े आचार्य संघ को अनदेखा कर दिया। इतने बड़े तपोनिष्ठ साधक आचार्य गुरुदेव श्री सन्मतिसागरजी जिनके दर्शन को पूरे देश के आम क्या और खास क्या? सारे लोग दौड़े चले आते हैं और ये उत्तरदायित्वहीन जन, जो श्रावकों की श्रेणी में तो नहीं ही आते, इतने हृदयहीन हो गए थे? इनके हृदय में क्या गुरु भक्ति रंच मात्र भी नहीं थी। यदि ये अपने श्रावकोचित कर्तव्य का पालन करते तो आचार्य श्री व अन्य साधुओं को ऐसी स्थिति में विहार नहीं करना पड़ता। समाज का संतों के प्रति दायित्व निर्वहन नहीं करना, यह एक बहुत बड़ी चिंता का विषय है।''

विश्राम स्थल पर रात्रि को मुनि श्री ने आचार्य श्री की वैयावृत्ति करना चाही, पर उन्होंने उन्हें आराम करने को कहा। युवा मुनि ने अन्य साधुओं की वैयावृत्ति की। सभी की व्यवस्था का मुआयना किया। उसके पश्चात ही स्वयं ने विश्राम किया। वे आचार्य श्री की करुणा के बारे में सोच रहे थे। गुरुदेव जानते हैं कि मैं भी उतना थक गया हूँ, गर्मी से त्रस्त हूँ जितना और लोग।

मुनि श्री सोच रहे थे कि आज सारे साधुगण संघ के साथ चल रहे थे तो सबकी कहीं न कहीं, कैसी भी व्यवस्था हो तो गई यदि साधु दो-तीन या एकल विहारी होता तो क्या हाल होता।

आज मुझे पनवेल की घटना से एक और वाकया याद आ गया। जब मैं अपनी कृति- एक और मुक्तिदूत, मुनि श्री पुलकसागरजी की जीवनगाथा लिख रही थी। मुनि श्री पुलकसागरजी ने किसी स्थान से दोपहर बाद एक और साधु के साथ विहार किया। लापरवाह व उत्तरदायित्वहीन समाज ने यह कहकर मुनि श्री को विदा कर दिया कि चटाई, पाटे हम गाड़ी से अगले पड़ाव तक पहुँचा देंगे। संतश्री का विहार हो गया और समाज के लोग संत प्रवास स्थान पर ताला ठोक कर घर चल दिए। उन्होंने संतों की रात्रि विश्राम की भी व्यवस्था नहीं की। स्थान विशेष के समाज का एक भी व्यक्ति मुनि श्री के साथ अगले पड़ाव तक नहीं चला। यह तो अच्छा था कि कुछ युवा पिछले पड़ावों से साथ चल रहे थे। अंधेरा घिरने को था ही अतः संत एक टूटे-फूटे स्कूल में रुक गए। वहाँ पड़ी टूटी झाडू से साथ चल रहे दो-तीन युवाओं ने थोड़ी सफाई की ताकि वे सामायिक कर सकें। साधु ऐसे ही धूल धूसरित खुरदरी जमीन पर ध्यानस्थ हो बैठ गए। रात के नौ-दस बज गए। चारों ओर अंधेरा व सन्नाटा। पर चटाई- पाटों का कोई अता न पता। उन्होंने अपने शहर में अपने घर फोन किया। रात को बारह-एक बजे के करीब कुछ स्त्री-पुरुष चटाइयाँ व पाटे लेकर आए। संतों की ऐसी

स्थिति देख महिलाएँ रोने लगीं। साथ लाई टार्च के उजेले में सारी व्यवस्था की व वहाँ के श्रावकों की भूल के लिए उन्होंने माफी माँगी। और इस परिवार ने मुनि श्री को गंतव्य तक पहुँचाने में अहम भूमिका अदा की। हम श्रावकों का परम कर्तव्य है कि हमें संयमधारी हमारे निर्ग्रन्थ मुनियों के आहार, विहार व विश्राम की समुचित व्यवस्था करना चाहिए।

रात में मुनि श्री सुनीलसागरजी यह सोचते-सोचते कि हमारे लिए माणकलाल के फार्म हाउस 'रत्नद्वीप' का विश्राम हो या भर दोपहर में लू लपटों से झुलसते पेट्रोल पंप पर विश्राम एकसा है, निद्रादेवी के आगोश में समा गए।

खोपोली

पनवेल से संघ खोपोली पहुँचा। यहाँ 30-40 घर समाज के हैं किंतु संघ की व्यवस्था से पल्ला झाड़ते 3-4 लोग ही मुनि दर्शन को आए। यह देख युवा मुनि सुनीलसागरजी को आश्चर्य हुआ। उनकी चिंतन धारा बहने लगी, ''गंगा पाप को, चंद्रमा दाह को और कल्पवृक्ष दरिद्रता को हरने वाले हैं किंतु आचार्य श्री जैसे तपोनिष्ठ, चारित्र चूड़ामणि, ज्ञान दिवाकर संत और उनके संघ का दर्शन मात्र इन तीनों को एकसाथ समाप्त करने वाला है। किंतु ऐसे इन करमजलों के लिए क्या कहा जाए? संत सरिता का रेला द्वार की देहरी छू रहा है, पर ये हैं कि अपने पापों के प्रक्षालन के लिए बाहर ही नहीं निकल पा रहे हैं। वाह रे कर्म की लीला।''

किंतु इस क्षेत्र से विहार के पूर्व अनुभवों से मुनि श्री ने पाया कि इस क्षेत्र में सामाजिक व धार्मिक चेतना जागृति का अभाव है। उन्हें कोई ऐसा योग्य नेतृत्व नहीं मिला जो इनकी सोई चेतना जाग्रत करे। इनमें सोए शिवत्व को जगाए। जैसी निमाड़ (म.प्र.) क्षेत्र में उन्होंने अहिंसा की अलख जगाई थी, वैसी ही श्रावकों के छह आवश्यक कर्तव्यों के प्रति इन्हें जाग्रत व संगठित कर पचरंगी ध्वज तले लाने की जरूरत है? यद्यपि यह काम कोई खास कठिन नहीं है, किंतु मुनि श्री के साथ संघ की मर्यादा व अनुशासन का बंधन है। कैसे भी हो समाज को इस बिखराव से उबार कर किसी भी हालत में संगठित करना आवश्यक व समाज हित में है। पर संघानुशासन में रह उन्हें विहार करना पड़ा।

अब तो आचार्य संघ मुंबई-पूना मार्ग पर विहार करते खोपोली से लोणावाला तक इसी तरह श्वेताम्बर धर्मशालाओं व पेट्रोल पंपों पर रुककर विश्राम कर विहार करता रहा।

खोपोली में श्वेताम्बर धर्मशाला में आचार्य श्री का स्वास्थ्य अत्यधिक खराब हो गया। गिर जाने के कारण कई जगह चोटें आई थीं। मुनि श्री ने जिद करके कुछ साधुओं को साथ ले आचार्य श्री की वैयावृत्ति की किंतु उन्होंने तेल व औषधि नहीं लगवाई तो दर्द कैसे कम होता। श्वेताम्बर समाज व ट्रस्ट के लोग भी आचार्य श्री की कुशल क्षेम पूछने आए व उनके पास बैठे रहे। उन्होंने उनसे इस हालत में विहार न कर वहीं रुकने का आग्रह किया।

तीन बजे लेटे हुए आचार्य श्री उठ बैठे। युवा मुनि श्री चाहते थे कि आचार्य श्री की ऐसी स्थिति में विहार नहीं किया जाए। वे कैसे चलेंगे। आज उन्हें 20 कि.मी. चलना है। उन्होंने प्रश्नसूचक निगाहों से गुरुदेव को देखा। गुरु तो शिष्य के रोम-रोम को पहचानते थे। उन्होंने कहा, ''तुम चिंता मत करो। मैं ठीक हूँ। चल लूँगा।''

''ऐसी स्थिति में कैसे चलोगे गुरुवर'' कहते हुए युवा मुनि का कंठ अवरुद्ध हो गया। आँखों से आँसू ढुलक चरण पखारने लगे। वातावरण गमगीन हो गया।

तभी गुरु शिष्य के कंधे का सहारा ले उठ खड़े हुए। पिच्छी कमंडल उठाया और बोले, ''चलो।'' और चल पड़ा पीछे-पीछे शिष्यों का काफिला।

युवा मुनि श्री ने दो-तीन साधुओं को गुरुवर के साथ चलने का कह बाकी को आगे की ओर विहार करने को कह दिया। अब वे आचार्य गुरु के साथ चलने लगे। खंडाला की ओर जाने वाली 15 कि.मी. लंबी घाटी के पहाड़ी राजमार्ग पर गुरुदेव का इस स्थिति में एक-एक कदम भारी पड़ रहा था। एक बाजू युवा मुनि तथा दूसरी ओर दूसरे मुनि आचार्य

श्री की बाह पकड़ उन्हें चढ़ने में मदद कर रहे थे। आचार्य श्री बार-बार मना कर रहे थे पर मुनि श्री उनकी स्थिति से अच्छी तरह अवगत थे।

आचार्य श्री का चोटिल शरीर ज्वर से तप रहा था। आँखें लाल हो रही थीं। नीचे धरती तप रही थी। ऊपर से आकाश अंगारे बरसा रहा था तिस पर इतनी कठिन व लंबी चढ़ाई। कभी युवा मुनि की निगाहें सड़क की लंबाई नापती थी तो कभी गुरुदेव के लड़खड़ाते भारी कदमों की क्षमता। और फिर उनकी विह्वल नजरें समता मूर्ति गुरुवर के शांत सौम्य चेहरे पर टिक जाती। परिषह विजेता उन महाऋषि के चेहरे पर आकुलता- व्याकुलता की हल्की सी रेखा भी नहीं थी।

इधर उग्र कर्मों की लू लपटें और उधर प्रचंड गर्मी की लू लपटें, चोटिल व लड़खड़ाते कदमों से गुरुदेव ने सहनशीलता की हदें ही पार कर दी। दोनों बाजू थामे एक ओर युवा मुनि श्री व दूसरी ओर अन्य साधु उन्हें थामे चल रहे थे। थोड़ी-थोड़ी देर में ज्वर के कारण मूर्च्छा सी आ जाती, पांव घिसट जाते और वे पुनः चौंककर आँखें खोल ठीक से चलने लगते। सुबह आहार में भी वे थोड़ी सी छाछ व पानी ही ले पाए थे वह भी ठीक से नहीं। शरीर में पानी की कमी भी होती जा रही थी। दो तीन बार उन्हें शौच के लिए भी जाना पड़ा। डायरिया जैसा हो गया। अब तो उनके पैरों में मानो ताकत ही नहीं थी। अपने गुरु की ऐसी स्थिति देख युवा मुनि की आँखें व दिल बार-बार भर आता था। वे भी बहुत थक गए थे लेकिन गुरु की पीड़ा के आगे वे अपनी पीड़ा को भूल ही गए।

अब तो मुनि श्री को चिंता सताने लगी कि कैसे इस हालत में गुरुदेव इतना लंबा सफर तय कर पाएँगे। आचार्य श्री शौच के लिए गए और आपने वहाँ जितने भी साधु व श्रावक थे सबसे णमोकार महामंत्र का जाप करते रहने को कहा। क्योंकि अब इस विहार के सफर को इस महामंत्र का जहाज ही पार उतार सकता है।

आचार्य श्री शौच से आए, तब युवा मुनि सुनीलसागरजी ने कहा, ''गुरुवर, थोड़ी देर बैठ जाइये, फिर चलते हैं।''

''नहीं! चलते हैं। मुझे कुछ नहीं होगा। मैं चल लूँगा। संध्या का वक्त है। अंधेरा घिर आएगा।''

लड़खड़ाते कदमों से गुरुदेव चल रहे थे। दोनों बाजू से दो सशक्त समर्पित युवा शिष्य सम्हाले जा रहे थे। और उधर गुरुभक्त शिष्यों का अपने गुरुदेव के आरोग्य लाभ की कामना से मन ही मन णमोकार जाप चल रहा था।

श्रावकगण आपस में खुसर-फुसर कर रहे थे कि इस स्थिति में गुरुवर 4-5 कि.मी. भी संध्या तक चल पाए तो बहुत बड़ी बात है। और उधर युवा मुनि ने मोर्चा संभाला। उन्होंने सबके हौसला बढ़ाते हुए कहा, ''अब गुरुदेव का ज्वर कम हो रहा है? जल्दी ही गंतव्य तक पहुँच जाएँगे।''

गति वही! वे ही लड़खड़ाते- घिसटते गुरुदेव के कदम। कभी तंद्रा कभी चौकन्नापन। कैसे वे संध्या पूर्व 10 कि.मी. की पहाड़ी घाटी की चढ़ाई पार कर अगले विश्राम स्थल दस्तूर गाँव के बजरंग मंदिर के सामने बने चौकसी भवन में पहुँच गए, पता ही नहीं चला। पर मुनि श्री सुनीलसागरजी इसे णमोकार महामंत्र के जाप का प्रभाव ही मान रहे थे।

संघस्थ साधु- साध्वियाँ भी अभी-अभी वहाँ पहुँचे थे। आचार्य श्री को इतना शीघ्र आया देख सभी की खुशी का पारावार न था।

सबको आश्चर्य था कि ऐसी हालत में कैसे गुरुदेव इतना जल्दी वहाँ पहुँच गए। मुनि श्री सुनीलसागरजी तो इसे किसी महान चमत्कार से कम नहीं मानते थे। उन्होंने कहा ''जिस स्थिति में हम जहाँ थे- वहाँ गुरुदेव का वहाँ से इतना शीघ्र यहाँ आ पाना नितांत असंभव था। निश्चित ही गुरुदेव के साथ कोई दैवी शक्ति है और णमोकार महामंत्र के जाप का महाप्रभाव कि वे इतना शीघ्र यहाँ आ गए।''

आते ही आचार्य श्री को लिटा दिया गया। सब कह रहे थे, ''हम सब आचार्य श्री की कुशलता के लिए रास्तेभर णमोकार महामंत्र की आराधना करते रहे।''

कुछ भी हो, णमोकार महामंत्र के महाप्रभाव, त्यागी तपस्वी संतों की गुरु के प्रति श्रद्धा भक्ति व समर्पण तथा मंगल

कामनाएँ व तपोनिष्ठ गुरु की स्वयं की तपः पूत साधना से ही यह चमत्कार हुआ था। जो सुखद था।

इस सुखद संयोग से सबकी थकान कहाँ गायब हो गई, संघ के लिए यह भी चमत्कार था। गुरुआज्ञा से मुनि श्री सुनीलसागरजी ही सबको प्रतिक्रमण करवा रहे थे।

खंडाला-लोनावाला

चढ़ाईदार दुरूह मार्ग तय कर विपरीत परिस्थितियों में गुरुदेव को लेकर जिस दस्तूर ग्राम में मुनि श्री ने रात्रि विश्राम किया था, पौ फटते ही वहाँ से आपने आचार्य संघ के साथ विहार कर दिया।

निकले तो सब साथ थे किंतु अस्वस्थ आचार्य श्री धीरे-धीरे चल रहे थे। मुनि श्री सुनीलसागरजी, एक-दो साधु व कुछ एक श्रावकगण छोड़कर बाकी संघ गुरु आदेश पर आगे निकल गया।

मुनि श्री आचार्य गुरु की बाह पकड़ 'खंडाला टनल' नामक पहाड़ी सुरंग, जो 30 मीटर चौड़ी व 300 मीटर लंबी पहाड़ी को खोदकर बनाई थी को धीरे-धीरे पार कराने लगे। उस पहाड़ी गुफा पर चलते-चलते गुरुदेव हाँफ जाते थे। पर यह गनीमत थी कि प्रातः का समय था, वातावरण में ठंडक थी, ऊपर से गुफा।

विधि की विडम्बना देखो। इतने शिष्यों को बांह पकड़ संसार समुद्र से खींच बाहर निकाल दीक्षा दे भवसागर पार कराने के जो निमित्त थे, आज शारीरिक अस्वस्थतावश उनके वे ही शिष्य उन्हें बांह पकड़कर साथ चल रहे थे। सच है गुरु शिष्य का संबंध तो नदी नाव का संयोग है। जहाँ शिष्य ऐसे महान उपकारी, रत्नत्रयधारी गुरु को प्राप्त कर धन्यता महसूस कर रहे थे वहीं गुरु भी मन ही मन युवा मुनि सुनीलसागर जैसे समर्पित, योग्य व परम गुरुभक्त शिष्य को पा निहाल हो रहे थे। शिष्य व गुरु दोनों आपस में एक-दूसरे के प्रति कृत-कृत्य थे।

खंडाला टनल पार कर मुनि श्री ने खंडाला की घुमावदार घाटियाँ, कल-कल, छ्ल-छ्ल कर बहते झरने, चारों ओर हरियाली ही हरियाली, बड़ी मनोरम प्राकृतिक छटा देखी, वे सोचने लगे इसीलिए लोग सैर-सपाटे के लिए यहाँ आते हैं। पिक्चरों की शूटिंग यहाँ होती है। पर अगले ही पल वे सोचने लगे कि हम जैसे विरक्त संतों के लिए क्या खंडाला और क्या श्मशान दोनों एक से हैं।

खंडाला से होते हुए आप लोनावाला पहुँचे, जहाँ आचार्य संघ के साथ एक श्वेताम्बर भाई के खाली बंगले में रुके। यहाँ से कामशेत होकर तलेसर पहुँचे। मुनि श्री ने देखा कि वहाँ अंजन शलाका व श्वेताम्बर मंदिर की प्रतिष्ठा हो रही थी। उन्हें अनेक श्वेताम्बर साधु मिले। अनेक श्वेताम्बर साधुओं ने अभिवादन किया। महान आचार्य श्री सन्मतिसागरजी का नाम सुन श्वेताम्बर साधु, कार्यक्रम के पदाधिकारीगण व प्रतिष्ठा में पधारे लोग संघ के दर्शनार्थ आए। पदाधिकारियों व साधुओं ने आचार्य श्री से चर्चाएँ कीं। अस्वस्थता व कमजोरी की वजह से वे बोल नहीं पा रहे थे। अतः मुनि श्री सुनीलसागरजी ही अधिकांश चर्चा कर रहे थे। युवा मुनि की विद्वता तथा प्रत्युत्पन्न मति से सबके सब अभिभूत थे। एक बड़े श्वेताम्बर साधु महाराज ने आचार्य श्री से कहा, ''आपको योग्य व होनहार अद्भुत शिष्य मिला है।'' और और... भी बहुत कुछ। स्थानीय लोगों ने बताया कि यहाँ 25-30 महाराष्ट्रीयन दिगम्बर जैन समाज के घर हैं।

आचार्य श्री से स्वास्थ्य लाभ के लिए कुछ दिन वहाँ रुकने का आग्रह कर वे सब चले गए। मुनि श्री सोचने लगे समाज के इतने घर होने के बावजूद भी समाज का एक व्यक्ति भी आचार्य संघ की खोज-खबर लेने नहीं आया। ये श्वेताम्बर समाज के लोग बिना भेदभाव जगह-जगह संघ की अगवानी कर विश्राम की व्यवस्था कर रहे हैं, आगे की भी व्यवस्था कर देते हैं और ये दिगम्बर समाज के लोग। क्या हो गया है इनको। इतने कृतज्ञ और उत्तरदायित्वहीन।

तभी उन्होंने स्वयं को विकल्पों के घेरे से बाहर निकाला। अरे! मुझे परिणाम दूषित करने की क्या आवश्यकता। आचार्य श्री की तप साधना का इतना प्रभाव है कि अपने आप जगह-जगह व्यवस्था हो रही है और जहाँ नहीं होती है

वहाँ जंगल में भी आचार्य श्री के खड़े रहते ही मंगल हो जाता है। तभी उन्होंने देखा कि कुछ श्वेताम्बर साधु प्रतिष्ठा स्थल से तेज गति से आचार्य श्री के दर्शन को आ रहे हैं। उनके पीछे कुछ श्रावकगण भी थे। जैसे-जैसे प्रतिष्ठा स्थल (मंदिर) पर लोगों को इतने बड़े मुनिसंघ के आगमन की बात पता चली व आचार्य श्री के अस्वस्थ होने की खबर लगी, श्रावकगण तो क्या साधुगण भी कार्यक्रम के बीच से उठ-उठकर आने लगे। साधुओं को युवा मुनि सुनीलसागरजी की असाधारण प्रतिभा का पता चला तब वे उनसे भी मिलने को उत्सुक थे।

पूना

सबके साथ रहकर भी सबसे हटकर मुनि सुनीलसागरजी अपनी अलग से पहचान बना लेते थे। अपरिमित गुणों व ज्ञान के भंडार होने के कारण लोग सहज ही उनकी ओर खिंच चले आते थे। लोनावाला से विहार कर आपने संघ के साथ पूना के उपनगर निगड़ी पहुँच वहाँ महावीर उद्यान के महावीर जिनालय के प्रभु महावीर के दर्शन किए।

यहाँ पर 11 मई को उदयपुर के स्व. अनूपलाल हंडावत की धर्मपत्नी, ब्र. कमलाबाई की क्षुल्लिका दीक्षा हुई। उन्हें सहस्त्रमति माताजी नाम दिया गया। फिर एक भव्य आत्मा ने यह मानकर दीक्षा ग्रहण कर ली कि धर्म मेरा जलाशय है, अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह व ब्रह्मचर्य मेरे जीवन के शांति तीर्थ हैं तथा आत्मा की प्रसन्नता ही जीवन की वह निर्मल धारा है जिसमें नहा आत्मा कर्म मल से मुक्त होती है। अर्थात संयम के पथ पर चल कर पाप मुक्त हो कर्म निर्जरा की जा सकती है।

निगड़ी से माणिक बाग

निगड़ी में 10 दिन प्रवास के बाद विहार करते हुए आपने रात्रि विश्राम एक श्वेताम्बर जैन विद्यालय में किया। यहाँ ट्रस्ट के एक वयोवृद्ध अधिकारी आचार्य श्री की कुशलक्षेम पूछने आए। उन्होंने आचार्य श्री से जैन विद्यालयों के प्रचार-प्रसार के साथ उनके माध्यम से भगवान महावीर के सिद्धांतों के प्रसार की बात कहते हुए कहा कि इस क्षेत्र में संतों की भी महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है।

अस्वस्थतावश आचार्य श्री ने तो कुछ नहीं कहा, युवा मुनि श्री ने ही जवाब दिया कि ''हम पदविहारी संत जगह-जगह भगवान महावीर के संदेशों का ही तो प्रचार- प्रसार करते हैं। सिर्फ प्रवचन ही नहीं देते, समाज के चारित्र शुद्धि का काम भी करते हैं। लोगों से मांस-मदिरा व तम्बाखू छुड़ाते हैं। शाकाहार का नियम दिलाते हैं। उन्हें संस्कारित कर नेक इंसान बनाने का प्रयत्न करते हैं। यह सुधार व जन जागृति अभियान सतत बिना रुके चलता रहता है।'' वे वयोवृद्ध अधिकारी युवा मुनि श्री की बातों से प्रसन्न हो यह कहते हुए उठ खड़े हुए कि ''आप जैसे योग्य युवा संतों द्वारा समाज का अच्छी तरह उत्कर्ष हो सकता है।''

यहाँ से विहार कर पुनः रात्रि विश्राम आपने औंध में एक श्वेताम्बर जैन महावीर विद्यालय में किया। यह स्थानकवासी समाज द्वारा संचालित है, जहाँ छात्रावास भी है।

16 मई को आप संघ के साथ पूणे के केंद्र स्थल सिंहगढ़ रोड के माणिक बाग के जिनालय पहुँचे। जहाँ निर्माण कार्य जारी था। पिछले भाग में मंदिर की अस्थायी व्यवस्था थी। यहाँ आपने संघ के साथ भगवान शांतिनाथ का मोक्षकल्याणक व श्रुतपंचमी महोत्सव मनाया। 17 साधुओं का केशलोंच भी हुआ।

लासुर्णे की ओर

2 जून को पुनः मनमौजी साधुओं का काफिला चल पड़ा लासुर्णे की ओर। आप लोग 7 जून को 'नीरा' पहुँचे।

यह वही 'नीरा' नगर है जहाँ चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागरजी का कई बार प्रवास रहा तथा जहाँ वात्सल्य दिवाकर विमलसागरजी संघ का चातुर्मास हुआ था। यहाँ 40 परम मुनि भक्त परिवारों का समाज है। यहाँ दो मंजिला विशाल जिनालय तथा दो आधुनिक शैली की मुनि वसतिकाएँ हैं। ये वसतिकाएँ नीरा समाज की अकूत मुनि भक्ति व गुरु सेवा की कहानी कह रही थी। पूरे समाज ने संघ के साधुओं को हाथों-हाथ लिया, खूब वैयावृत्ति की। श्रावकों ने आचार्य संघ के आगमन पर हृदय से अगवानी की व विदाई के समय विहार में अगले पड़ाव पर साथ चले व रात्रि विश्राम की व्यवस्था की।

मुनि श्री सोच रहे थे कि दो-चार जगह ही छोड़कर बाकी सब जगह पंथ व आम्नाय को भूल श्वेताम्बर समाज ने ही इतने बड़े आचार्य संघ की अगवानी की। हर जगह ठहरने की पूर्ण व्यवस्था की। श्रावक तो ठीक जहाँ-जहाँ श्वेताम्बर साधुगण थे, वे भी आचार्य श्री के दर्शनार्थ आए, अस्वस्थता में उनके हालचाल पूछे, पास बैठे रहे। युवा मुनि श्री जो छाया की तरह गुरु के पास रहते थे, उनसे धर्म चर्चा की। कितने विशाल व उदात्त हृदय ये लोग हैं।

युवा मुनि का यह भी चिंतन चल रहा था कि विहार में कितनी प्रतिकूलताएँ व अव्यवस्थाएँ थीं। न ठीक से रात्रि विश्राम की व्यवस्था थी न आहार चर्या की। किंतु इन परिस्थितियों में भी संघ का कोई भी साधु-साध्वी बिना किसी शिकवा- शिकायत किए समता भाव से प्रसन्न चित्त विहार कर रहा है। मेरी तरह ये सबके सब मुक्ति पथ के पथिक सांसारिक सुखों का त्याग कर विरक्ति के कठिन खुरदरे चट्टानी मार्ग पर चल पड़े हैं। आत्म कल्याण के साधकों के लिए यह परिषहजन्य कठोर साधना मुक्ति का सहज मार्ग है। ऐसी किसी कठिनाई से ये साधक कभी नहीं डरते, चलते रहकर आत्म साधना करते रहते हैं।

संघ के साथ आपका विहार चल रहा था। आप हमेशा आचार्य श्री की छत्र-छाह में ही उनके आजू-बाजू चलते। इधर कभी बादल छा जाते और मौसम में ठंडक ला देते तो कभी नीरभ्र आकाश से मनमानी पर उतर सूरज अंगारे बरसा धरती को भट्टी सा तपा देता, जिस पर नंगे पैर चलते ये दिगम्बर अवधूत ये अक्खड़ संत अपने सफर पर आगे बढ़ते रहते हैं।

कभी पणदरे, बड़गाँव, बारामती की सीमा पर समाज द्वारा किया गया स्वागत, पाद प्रक्षालन, पूजा, आरती स्वीकारते, रात्रि विश्राम करते तो कभी चंदू काका के बगीचे, पेट्रोल पंप, सरकारी गेस्ट हाउस या श्वेताम्बर विद्यालय के खंडहरनुमा विद्यालय में चर्या पूर्ण करते आप संघ के साथ अपने संयम के पथ पर अग्रसर थे। आप बिना किसी आकुलता-व्याकुलता के, बिना किसी खेद के समता व शांत भाव से पथ की बाधाओं को पार करते कर्तव्य निर्वहन कर रहे थे। विकट परिस्थितियों में दिगम्बर भेष में नंगे पैर अब तक आपने काफी लंबी दूरी तय कर ली थी। अब विहार में अनुकूलता प्रतिकूलता आपके लिए कोई मायना नहीं रखती थी। पद विहार तो आपकी चर्या थी।

लासुर्णे चातुर्मास : 2006

लासुर्णे से काफी दूर संघ की अगुवाई के लिए समाज मंगल वाद्यों के साथ पहुँच गया। जैसे ही संघ ने लासुर्णे की धरती पर चरण रखे, जयकारों से आकाश गूंज गया। समाज की खुशी का पारावार नहीं था क्योंकि इतनी लम्बी दूरी तय करते ग्रीष्म के प्रचंड उत्ताप को सहते, अस्वस्थ स्थिति में भी, चोटिल शरीर, लड़खड़ाते कदमों से पार कर, महा तपोनिष्ठ साधना के सूर्य आचार्य श्री सन्मतिसागरजी ने ससंघ लासुर्णे की धरती पर चरण रख इसे पावन कर दिया था। उनकी खुशी द्विगुणित इसलिए भी थी कि इस विरक्ति की उर्वरा भूमि ने जिन दो 'नारी रत्नों' को पैदा किया था, वे भी इन्हीं आचार्य श्री से दीक्षित हो अपने महान गुरु के साथ अपने गृह नगर पधारी थीं। वे थी क्षुल्लिका शुभमति व स्वस्तिमति माताजी।

लोगों की आँखें व्यग्रता से अपने शहर की इन पुण्य सलिला बेटियों के दर्शन को तरस रही थी। इधर भीड़ में माताजी को ढूंढते मोहीजन कह रहे थे माताजी हमारी बहन हैं, ननद हैं, मौसी हैं आदि आदि। लेकिन उन विरक्त माताजी को किसी से कोई मोह नहीं था। वे सभी को अलिप्त भाव से एक सा आशीर्वाद दे रही थीं। अब उनके लिए कोई बंधु-बांधव नहीं था। नीड़ से उन्मुक्त आकाश में उड़े पंछी की तरह अब उनका कोई स्वजन नहीं था। देह को भी जो अपना नहीं मान तपस्या से तपा रही थीं, फिर अन्यों से कैसा मोह। वे तो बहुत पहले ही मोह-माया के बंधन तोड़ चुकी थीं। अन्यों की तरह आचार्य संघ के साथ विहार करते-करते वे भी आज यहाँ आ पहुँची थीं।

आचार्य श्री के मंगल प्रवास में लासुर्णे के मुनि भक्त श्रावकों ने हर दिन ढेरों श्रीफल भेंटकर मंगल चातुर्मास की प्रार्थना की। इचलकरंजी से भी भक्तगण गाड़ियाँ भर-भरकर आ रहे थे व चातुर्मास की प्रार्थना कर रहे थे।

मुनि श्री के अनुसार लासुर्णे के श्रावकों की पूरे संघ के प्रति अप्रतिम भाव भक्ति, सुध-बुध खो देने वाला समर्पण तथा तन-मन-धन सब कुछ गुरु सेवा में न्योछावर कर देने की ललक देखते ही बनती थी। पूरा समाज गुरुमय हो गया था। संतों के जागने पर उनकी सुबह व उनके सो जाने के बाद उनकी रात शुरू होती थी। दिनभर चकरघिन्नी से वे संघ के लिए घूमते ही रहते। बिना किसी स्वार्थ, सम्मान, प्रशंसा के गुरु सेवा में लगे रहते। ऐसी गुरु सेवा मुनि श्री ने अन्यत्र कहीं नहीं देखी थी। इस प्रकार समाज की एकता व श्रावक-श्राविकाओं की सरलता व भोलेपन ने आचार्य श्री का हृदय जीत लिया।

इसी बीच युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी ने आचार्य भगवान से कहा कि ''देखो एक ये लासुर्णे के 40 घर का समाज, पूरा का पूरा नगर गुरु भक्ति व सेवा में लगा है। और विहार में आए वे गाँव, नगर वहाँ भी समाज के 40-50 घर थे, जिनमें से दो-चार लोग ही दर्शन को आए थे और कई जगह तो लोगों ने मुँह दिखाई की भी रस्म अदा नहीं की। भर गर्मी में पेट्रोल पंपों पर संघ को आहार चर्या करनी पड़ी या श्वेताम्बर जैन समाज ने रात्रि विश्राम की व्यवस्था की।''

आचार्य श्री ने भी लासुर्णे समाज के समर्पण की भूरि-भूरि प्रशंसा की। आचार्य श्री समझ गए थे कि शिष्य सुनीलसागर क्या कहना चाहते हैं?

आज फिर समाज ने आचार्य श्री के आगे श्रीफलों का अंबार लगा चातुर्मास करने की प्रार्थना की। निर्मोही किंतु वात्सल्य रत्नाकर का हृदय आखिर समाज ने जीत ही लिया और लासुर्णे में चातुर्मास की घोषणा कर दी। आज इचलकरंजी से भी श्रावकों ने आकर गुरु चरणों में अपनी अर्जी लगाई थी। पर श्रीफल चढ़ाने का फल तो किसी एक को ही मिलना था।

ऐसा नहीं कि आचार्य श्री ने उनको नजर अंदाज किया। वे इचलकरंजी के श्रावकों की भक्ति से भी अभिभूत थे। पर चातुर्मास तो दो में से एक जगह ही होना था। उदास श्रावकगण मुनि श्री सुनीलसागरजी की निश्रा में बैठे थे। मुनि श्री उनकी पीड़ा समझ रहे थे। मुनि श्री ने वातावरण को हलका करने के लिए कहा, ''ऐसा लगता है तुम लोग किसी की मैयत में आए हो।'' लोगों की हँसी का फव्वारा छूट गया। ''अरे! महाराजजी, आप भी मजाक करते हैं।'' महाराजजी ने मुस्कराते हुए कहा, ''उदास होने की क्या जरूरत है, यहाँ आते-जाते रहना, प्रेम भाव बढ़ाए रखना, श्रीफल अर्पित करते रहना। संभवतः अगले चातुर्मास के लिए इचलकरंजी का नंबर लग जाए।'' मुनि श्री ने श्रावकों का मन हलका कर दिया। वे खुशी-खुशी लौट गए।

चातुर्मास स्थापना 2006

10 जुलाई 2006 को आचार्य श्री के 7वें उपवास के दिन चातुर्मास स्थापना विधि संपन्न हुई। आचार्य श्री ने मुनि सुनीलसागरजी को विधि संपन्न कराने व कलश स्थापना में आगे रखा। गुरु पूर्णिमा व वीर शासन जयंति भी उस विशाल

पांडाल में बड़े उत्साह से मनाई गई।

मुनि श्री ने देखा कि संघ में आए दिन दीक्षा व समाधि होती रहती थी। युवा मुनि समाधि सल्लेखना लेने वाले मुनि, व्रति माताजी की विशेष देखभाल करते। उनकी वैयावृत्ति, संबोधन, उद्‍बोधन, सामायिक कराना आदि क्रियाएँ स्वयं आगे होकर कराते थे। वे हर काम में आगे रहते। उन्हें किसी को कुछ नहीं कहना पड़ता। उनके रहते आचार्य श्री निश्चिंत थे।

30 जुलाई रविवार श्रावण शुक्ला पंचमी (नाग पंचमी) के दिन संघस्थ वयोवृद्ध क्षुल्लक श्री सभ्यसागरजी की मुनि दीक्षा हुई। महावीर जयंति पर (चार माह पूर्व) ही उन्होंने अपने गृह नगर विरार में अपने जीवन के अंतिम पड़ाव पर आत्म कल्याण के लिए दीक्षा ले संयम का मार्ग अपनाया था। अब समाधि सल्लेखना के लिए उन्होंने मुनि दीक्षा ली। उनका नाम मुनि सभ्यसागरजी रखा गया। इसी दिन एक और क्षुल्लकजी ने ऐलक दीक्षा ली। उनका नाम प्रशांतसागरजी हो गया।

आचार्य श्री के अलावा विद्वान युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी भी संघस्थ साधुओं के लिए कक्षा लेते थे। मुनि श्री फिलवक्त वृहद द्रव्य संग्रह की कक्षाएँ ले रहे थे। जिसमें वयोवृद्ध क्षुल्लक मुनि श्री सभ्यसागरजी व क्षुल्लक प्रशांतसागरजी भी एकाग्रता से अध्ययन कर आत्माराधना करते रहे।

वयोवृद्ध मुनि सभ्यसागरजी ने 1 व 5 अगस्त को थोड़ा दूध, पानी लिया उसके बाद उन्होंने गुरुवर से यम सल्लेखना ले ली। उन्होंने अन्न, जल का त्याग कर दिया। उनके धर्म ध्यान में मुनि श्री बराबर मदद कर रहे थे। उन्हें संबोधते, णमोकार मंत्र सुनाते, बारह भावनाओं का चिंतन कराते। वे रात-दिन आत्माराधना में लीन रहते। मुनि श्री कई बार रात में उठकर उन्हें देखने जाते। उन्होंने 13 अगस्त को सल्लेखना पूर्वक समाधिमरण प्राप्त किया। उस समय भी युवा मुनि ही उनके पास थे। इस प्रकार मुनि सुनीलसागरजी को अच्छे से ज्ञान हो गया था कि समाधि के वक्त साधु को कैसे संबोधा व आत्म चिंतन में लीन किया जाता है।

चातुर्मास में आत्माराधना करते पर्युषण पर्व आ गए। हर वर्ष की तरह आचार्य श्री ने 10 उपवास किए। युवा मुनि सुनीलसागरजी अपनी आवश्यक क्रियाओं के पश्चात् जो भी समय मिलता गुरु सेवा कर गुरु की छत्र छाया में व्यतीत करते। कभी धर्म चर्चा तो कभी शंका समाधान, कभी वे आचार्य श्री से आत्मानुभव की बातें सुनते, तो कभी आचार्य श्री उन्हें सुनाने को कहते। धर्ममय वातावरण में 10 दिन कहाँ बीत गए पता ही नहीं चला। 10 उपवास के पारणे का पुण्य लाभ श्रावक रत्न हीरालाल गाँधी को मिला। आहार चर्या निर्विघ्न संपन्न होने से गाँधी परिवार अपने को धन्य मान रहा था।

महावीर निर्वाणोत्सव 20 अक्टूबर दीपावली के दिन चातुर्मास निष्ठापन विधि संपन्न हुई। इसी दिन जयपुर की ब्र. बहन अनोपदेवी घड़ीवाला ने अपने मन-मस्तिष्क को परिष्कृत व पवित्र करने तथा आत्मोपलब्धि की शक्ति में वृद्धि करने आचार्य श्री से क्षुल्लिका दीक्षा ग्रहण कर ली। उनका नाम सुधर्ममति माताजी रखा गया। इस प्रकार अब आचार्य संघ में 25 पिच्छीधारी साधु हो गए।

आचार्य श्री के सान्निध्य एवं प्रेरणा तथा युवा मुनि सुनीलसागरजी के दिशा-निर्देशन में 23 नवंबर को सिद्धचक्र महामंडल विधान धूमधाम से प्रारंभ होकर निर्विघ्न संपन्न हुआ।

गुरु सान्निध्य में बिताए चंद वर्षों की तप, त्याग व संयम की साधना से युवा मुनि सुनीलसागरजी का व्यक्तित्व कुंदन सा निखरता जा रहा था। उन्होंने अपने अंतःकरण में भरे ऊर्जा एवं शक्ति के अपरिमित भंडार को पहचान लिया था और अपने अंतर की इस दिव्य शक्ति को ही अपने जीवनोत्थान का अमोघ अस्त्र बना लिया। इसीलिए वे निरंतर प्रगति पथ पर अग्रसर, उपलब्धियों के कीर्तिमान रचते जा रहे थे, फिर चाहे वह आत्मोपलब्धि हो या लौकिक जगत के लिए किए

गए कल्याण कार्यों की उपलब्धि।

उनके दृढ़ आत्मविश्वास, उच्च मनोबल, सकारात्मक सोच, उत्साह व उत्फुल्लता, पुरुषार्थ परायणता, सहृदयता, सेवाभाव, ईमानदारी, व्यवहार कुशलता व विश्वसनीयता ने क्या तो आचार्य श्री सन्मतिसागरजी, क्या आचार्य संघ और क्या श्रावकगण उन्हें सभी का चहेता बना दिया। हर किसी की जुबान पर मुनि श्री सुनीलसागरजी का नाम रहता। वे कभी किसी को निराश नहीं करते। वे अपने विवेक बुद्धि, मृदु व्यवहार, मीठी वाणी व कर्तव्य परायणता से हर किसी को संतुष्ट कर देते। छिद्रान्वेषी भी उनके दोष तलाशते- तलाशते उनके प्रशंसक बन जाते। उनका जीवन वह मान सरोवर बन गया था जिसमें गुणों के कमल खिल रहे थे। जिसे देख हर किसी का मन प्रफुल्लित हो जाता।

उनके जीवन का आदर्श भगवान महावीर के बाद यदि कोई था तो सिर्फ और सिर्फ आचार्य भगवन, गुरुवर तारणहार, महा तपोनिष्ठ श्री सन्मतिसागरजी। उनके लिए तो वे अपार प्रेरणा के स्त्रोत थे, हैं व रहेंगे। निराशा के क्षणों में गुरुवर का जीवन उनके लिए प्रेरणा का महा संबल बन जाता। उनके दर्शन से ही उनके दिन की शुरुआत होती थी।

कई बार उनके इस समर्पण व अपरिमित गुरुभक्ति को देख आचार्य श्री कहते, ''इतना मोह और राग संतों को नहीं करना चाहिए।''

तब वे कहते ''कैसा मोह और कैसा राग? आप ही मेरे लिए वे आदर्श पुरुष हैं जिनकी इतनी कृपा मुझ पर है कि मैं आपकी निश्रा में रहता हूँ। आपका सत्संग करता हूँ। आपका वात्सल्य पाता हूँ। यह मेरा राग नहीं, आपके सत्संग से जीवन सुधार का प्रयास है।''

आचार्य श्री हँसकर कह देते, ''इसे किसी भी बात को किसी भी तरह नहीं करने को समझाओ तो यह अपने तर्क से उसे उलट ही देता है, चुप करा देता है और रात-दिन मेरी सेवा सुश्रुषा व देखभाल में डटा रहता है।''

आचार्य श्री से ज्यादा कौन युवा मुनि को जान सकता था। उनका जरा सा भी स्वास्थ्य खराब हुआ कि उनके पास रह रतजगा करना तो उसके बाएँ हाथ का खेल है। दिन में भी वह बिना किसी शिकवा- शिकायत के अपनी चर्या करता रहता है। किसी को कानोंकान खबर नहीं पड़ती कि वह रातभर जागा है। सचमुच यह तो मेरा श्रवणकुमार है। ऐसा शिष्य पाना बड़े सौभाग्य की बात है। आचार्य श्री के लिए तो मुनि श्री एक आदर्श व श्रेष्ठ शिष्य थे ही। पूरे संघ में साधुओं की दृष्टि में भी वे अनुकरणीय आदर्श थे। समाज के लिए वे छोटे महाराज के रूप में लोकप्रिय थे। मुनि श्री के जीवन की वृद्धिगत होती उपलब्धियाँ गुरु कृपा से प्राप्त महा अमृत फल थे।

संघ में भी वे हित-मित-मृदु भाषी के रूप में जाने जाते थे। उनके शब्द नपे-तुले होते थे। विनम्रता, सौम्यता, शिष्टता व शालीनता के साथ सबसे मधुर व आदर्श व्यवहार करने से वे सबके चहेते बने हुए थे, फिर क्या माताजी और क्या मुनिगण या क्षुल्लक, ऐलक, ब्रह्मचारीगण/ नवदीक्षितों व ब्रह्मचारीगणों को बड़ी लगन से पढ़ाकर ज्ञानार्जन कराते थे। उनके लिए तो मुनि श्री रोल मॉडल थे।

श्रावकों के साथ भी उनका व्यवहार बहुत अच्छा था। जहाँ जाते युवकों की टोलियाँ उनके आगे-पीछे लगी रहती। साधुओं के साथ-साथ श्रावकगण भी उनकी कक्षा में पढ़ते थे व आज भी पढ़ते हैं। जैन दर्शन, तत्त्व चिंतन व आगम का तो उनमें अकूत ज्ञान खजाना भरा पड़ा है, इसके साथ ही उनको ज्योतिष, हस्तरेखा, वास्तु, मंदिर वास्तु, मूर्ति निर्माण आदि अनेक विधाओं में महारत हासिल है। यद्यपि वे इन पचड़ों में नहीं पड़ते हैं पर जरूरतमंद की करुणावश सहायता कर देते हैं। पर हाँ मंदिर व मूर्ति के वास्तु दोष को वे अच्छा नहीं मानते थे। नूतन मंदिर निर्माण में वे भूमि के साथ मंदिर निर्माण में पूरा वास्तु श्रावकों को समझाते हैं क्योंकि मंदिर व मूर्ति के वास्तु का प्रभाव, मंदिर निर्माण, समाज व प्रतिष्ठा कराने वाले मुनियों, पंडितों पर भी पड़ता है।

युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी ने दीक्षा लेकर जो अपना मुक्ति प्राप्ति/आत्म कल्याण का लक्ष्य निर्धारित किया था उस

पर उन्होंने योजनाबद्ध तरीके से मंजिल की तरफ बढ़ने का सफर शुरू कर दिया। विवेक व दूरदर्शिता से सफर तय कर आज वे यहाँ तक पहुँच गए। संघ में रहकर संघ के अनुशासन में आबद्ध रहकर भी वे सारे कार्य करते थे जो अन्य साधुगण करते हैं, लेकिन उनके सारे कार्य उनसे हटकर कुछ विशेष होते थे। उन्होंने अपनी विशिष्ट कार्य पद्धति से अपनी अलग ही पहचान बना ली। उनकी साधना, उनकी आराधना, उनका पुरुषार्थ तन्मयता की पराकाष्ठा को छू जाता है। दिन में तो उनके काम संघ के विधि विधान के अनुसार होते किंतु रात्रि में निंद्रा पर विजय प्राप्त कर अपनी योग साधना में डूब जाते। अपना सब कुछ भूल प्रभु से एकाकार हो जाते और चिन्तन करते, ''प्रभु! जो तू है वही मैं हूँ- हूँ स्वतंत्र, निश्छल, निष्काम। प्रभु तेरा दर्शन, तेरा ज्ञान, तेरा चिंतन, तेरा चारित्र ही मेरा चारित्र है- बस, मात्र मैं तुझसा बनने के लिए ही मुनि बन इस विरक्ति के पथ पर अग्रसर हुआ हूँ। मेरा एक ही लक्ष्य है- तेरे समान बन जाऊँ, तेरी मूर्ति को व गुरु की जीवन्त मूर्ति को देख स्वयं की अंतर ज्योति जगाऊँ। और उस ज्योति कलश से छलकते प्रकाश में 'परमात्म प्रकाश' तक पहुँच जाऊँ।''

लासुर्णे पंचकल्याणक

2 से 6 दिसंबर तक चलने वाला पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव शुरू हो गया। तीसरे दिन युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी दीक्षा कल्याणक की तैयारियाँ आचार्य श्री के आदेश से देखने गए हुए थे।

आचार्य श्री ने अपने कक्ष में संघ के कुछ वरिष्ठ साधुओं, माताजी व समाज के श्रावक श्रेष्ठीजनों व चातुर्मास कमेटी के पदाधिकारियों को बुलाया। सभी समझ रहे थे आचार्य श्री पंचकल्याणक के बारे में कुछ कह रहे होंगे।

आचार्य श्री ने सबकी ओर मुखातिब होकर कहा कि ''युवा मुनि सुनीलसागरजी में विचारों की विशुद्धि, ज्ञान की गहराई तथा चारित्र की चमक है। इस प्रकार उनका रत्नत्रय सशक्त है। वे हर दृष्टिकोण से योग्य हैं चाहे श्रावकों की दृष्टि से हो या श्रमणों की। पिछले काफी दिनों से मैं अस्वस्थ चल रहा हूँ। सुनीलसागर में वे सारे गुण व योग्यताएँ हैं जो आचार्य बनने के लिए आगमोचित है। मैं अपने आचार्य पद का भार उसके सशक्त कंधों पर डालना चाहता हूँ। मुझे विश्वास है कि इसका वह अच्छी तरह निर्वहन कर लेगा। यही नहीं मैं अपने पट्टाचार्य पद का दायित्व भी उसके मजबूत हाथों में सौंप निर्भार होना चाहता हूँ ताकि शांतिपूर्वक निर्विकल्प हो आत्माराधना कर सकूँ।'' किसी के पास प्रश्नचिह्न नहीं था। आचार्य श्री ने कहा ''वह अपनी कुशलता व नेतृत्व क्षमता से संघ का संचालन बहुत अच्छे तरीके से कर लेगा।' सबने समवेत स्वर में युवा मुनि को आचार्य पद प्रदान करने की खुशी-खुशी स्वीकृति प्रदान की। किंतु यह भी कहा कि गुरुवर अभी तो आप पूर्ण स्वस्थ हैं। अतः पट्टाचार्य पद आप अपने पास ही रखिए। अभी-अभी पट्टाचार्य पद का त्याग करने में शीघ्रता न कीजिए। भले ही उन्हें आचार्य पद प्रदान कर दीजिए। मुनि श्री सुनीलसागरजी में 'पद' की पात्रता व योग्यता दोनों है। उनके आचार्यत्व में समाज को अच्छी दिशा मिलेगी।

श्रावक रमेश गाँधी भी बैठे थे बोले, ''गुरुवर, मुनिवर सुनीलसागरजी को आचार्य पद यहाँ पर ही दिया जाएगा। यह लासुर्णे की धरती सदा-सदा के लिए धन्य हो जाएगी। जब भी मुनि श्री का इतिहास लिखा जाएगा, लासुर्णे का नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित किया जाएगा। किंतु आपका यहाँ से पट्टाचार्य पद त्याग कदापि नहीं। आपके पद त्याग के लिए हमारा यह छोटा-सा शहर याद किया जाए- नहीं। अतः आप पट्टाचार्य पद त्याग की बात छोड़ दीजिए।'' और वे भाव विह्वल हो गए। आचार्य श्री द्वारा पट्टाचार्य पद छोड़ने की बात सुन आँखें छलक पड़ी।

जब प्रतिक्रमण के लिए युवा मुनि सुनीलसागरजी आए तब आचार्य श्री ने उन्हें पूरे संघ को प्रतिक्रमण करवाने की आज्ञा दी। उन्हें यह बात समझ में न आई कि आज तो आचार्य श्री पूर्ण स्वस्थ हैं फिर क्यों मुझे प्रतिक्रमण करवाने का कह रहे हैं। उन्हें लगा, सारे लोग उन्हें कुछ अलग नजरों से देख रहे थे। खैर! उन्होंने आचार्य श्री की शैली में ही हूबहू

संघ को प्रतिक्रमण करवाया। आचार्य श्री बार-बार मानो उनका निरीक्षण- परीक्षण कर रहे थे।

प्रतिक्रमण पश्चात आचार्य श्री ने उनसे अपने मन की बात कही। अचानक शांत सौम्यमूर्ति युवा मुनि के होंठों से जोर से निकल गया- ''अप्रत्याशित! असंभव! मुझे तो कोई पद नहीं चाहिए। उन्होंने गुरुवर के पैर पकड़ लिए व विनती करने लगे कि मुझसे जाने-अनजाने होने वाली किसी गलती की इतनी बड़ी सजा मत दीजिए। मुझे तो कोई पद नहीं चाहिए। मैं तो आपका छोटा-सा सेवक, शिष्य हूँ। मुझे आपकी सेवा में रहने दीजिए। मुझे तो बस आपके ये दो पद ही (चरण) चाहिए और कुछ नहीं।''

आचार्य श्री ने उन्हें समझाते हुए कहा कि ''तुममें पात्रता व योग्यता है इसलिए इतना बड़ा पद प्रदान कर रहा हूँ। यह प्रसादी थोड़ी है जो रास्ते चलते को बाँट दी जाए। यह तो श्रमण परंपरा का सबसे बड़ा दायित्व है जो योग्यतम साधु को ही दिया जा सकता है, ऐरे-गेरे नतथुखैरों के लिए यह पद नहीं है।'' आचार्य श्री ने कहा, ''मेरी आज्ञा का पालन करो।'' मुनि श्री ने विनीत हो उत्तर दिया, ''आपका हर आदेश शिरोधार्य है। हर आज्ञा सिर-आँखों पर किंतु 'यह नहीं'। आप इसके लिए भले ही बड़ा प्रायश्चित दे दें।''

युवा मुनि रुआंसे हो गए। गिड़गिड़ाते हुए बोले ''पट्टाचार्य पद! मैं हरगिज कभी नहीं लूँगा। मैं बौना आपके चरणों की धूल आपसे ऊँचा कैसे उठ सकता हूँ? हमारे पट्टाचार्य तो आप ही रहेंगे।'' आचार्य श्री के अत्यधिक दबाव के कारण अंततः अनचाहे- अनमने मन से उन्हें स्वीकृति प्रदान करनी पड़ी। इस अप्रत्याशित घटना से मुनि श्री हतप्रभ थे। आचार्य पद प्राप्ति की महत्वाकांक्षा तो उनकी कभी नहीं रही। वे तो आत्मकल्याण व लोक कल्याण के कार्यों में लगे रहते।

पंचकल्याणक के अंतिम दिन 6 दिसंबर को मुनि श्री का आचार्य पदारोहण दिवस तय हो गया। युवा मुनि के आचार्य पद ग्रहण की बात हवा की तरह द्रुतगति से चारों दिशाओं में फैल गई। हर किसी से यही कहते सुना गया, ''मुनि श्री में योग्यता है।''

आचार्य कक्ष से निकलकर वे अपने कक्ष में अनमने मन से चले गए। इस आचार्य पद की घोषणा ने तो पलभर में उनका चैन छीन लिया। उनकी अशांति बढ़ती जा रही थी। मानसिक रूप से वे इस पद के लिए कदापि तैयार नहीं थे। वे चुपचाप बैठ गए। उनके साथ कुछ श्रावकगण भी थे। जो विश्वसनीय व समझदार थे। मुनि श्री ने उनसे कहा कि ''वे आचार्य श्री से इस कार्य में जल्दबाजी न करने को कहें। मैं तैयार नहीं हूँ। अन्य योग्य पात्र को इतना बड़ा पद प्रदान करें। मैं इस पद का निर्वहन नहीं कर पाऊँगा।''

उन श्रावकों ने उत्तर दिया, ''आपकी आज्ञा है। हम आचार्य श्री तक आपकी बात पहुँचा देंगे। पर वे मानेंगे नहीं।''

मुनि श्री ने कहा, ''मैं भी जानता हूँ कि 6 दिसंबर आचार्य पद दिया जाना तय है, टलना नहीं है। इस बार आप मेरी ओर से रिक्वेस्ट कर इस कार्यक्रम को निरस्त करवा देंगे तो बड़ी मेहरबानी होगी।''

मुनिश्री ने 4 दिसंबर को केशलोंच भी कर लिया कि कार्यक्रम टल जाए। अंततः सब कुछ तय शुदा होने के बाद भी युवा मुनि की बात मान ली गई। पदारोहण निरस्त तो नहीं हुआ पर आगे बढ़ा दिया गया। तब कहीं जाकर मुनि श्री के अशांत मन को शांति मिली और वे निराकुल हो आत्मचिंतन में तल्लीन हो गए।

प्रतिष्ठा सानंद संपन्न हुई। प्रतिष्ठा में पधारे औरंगाबाद के सकल जैन समाज ने आचार्य श्री को ससंघ वहाँ आने के लिए श्रीफल भेंट किए। आचार्य श्री ने स्वीकृति दे दी।

लासुर्णे से आप संघ के साथ छोटे-छोटे विभिन्न गाँव-कस्बों को पार करते हुए 25 दिसंबर को पैठण (प्रतिष्ठानपुर) पहुँचे। रास्ते में 10-12 घरों के समाज के गाँव में भी मुनि भक्त श्रावकों ने संघ का यथायोग्य स्वागत व व्यवस्था की। रात्रि विश्राम व आहार चर्या में मुंबई से पूणे विहार के रास्ते जैसी दिक्कतें नहीं आई। मुनि श्री को आश्चर्य हो रहा था कि दोनों जगहों के श्रावकों के सोच में इतना अंतर क्यों है? शायद उस भूमि व वातावरण का ही प्रभाव उनकी

मनोवृत्तियों पर है। उनका कोई दोष नहीं। जगह-जगह उपदेशों/ प्रवचनों के माध्यम से मुनि श्री जड़ होते चेतन में चेतना फूंकते, मूल्यहीन होते समाज में जीवन मूल्यों के प्रति जागृति लाते, संस्कार शून्य होते समाज में श्रेष्ठ संसकरों का बीज वपन कर सींचते आगे बढ़ जाते। वे धार्मिक चेतना बिना निष्प्राण होती जीवित लाशों में शिवत्व का बीज मंत्र फूंक शव होते मनुष्य में प्राण भरते जा रहे थे।

पैठण (प्रतिष्ठानपुर)

25 दिसंबर को आपने आचार्य संघ के साथ गोदावरी नदी के किनारे बसे पैठण (प्रतिष्ठापुर) में प्रवेश किया। प्रवेश पूर्व गोदावरी का लंबा पुल पार करते ही वहाँ ठहरे आचार्य श्री सिद्धांतसागरजी धूमधाम से आचार्य श्री जो कि उनके गुरु हैं ऐसे अपने महान गुरुवर व गुरु संघ की अगवानी के लिए आए। दोनों संघों का हर्ष व उत्साह देखते ऐसा लग रहा था मानो दो महासागरों की उत्ताल तरंगों का महा मिलन हो रहा है।

पैठण के विशाल दो मंजिला मंदिर में मुनिसुव्रतनाथजी की अतिशयकारी मनोज्ञ प्रतिमा विराजमान हैं। शनि अरिष्ट निवारण हेतु शनिवार व अमावस्या को यहाँ दूर-दूर से जैन- अजैन पूजा-अर्चना को आते हैं। मेले सा लग जाता है।

वैसे यहाँ हर दिन लोगों की भीड़ बनी रहती है। यह स्थान बड़ा मनोरम है। पैठण औरंगाबाद से दक्षिण में 50 कि.मी. दूर है। आज यहाँ फिर औरंगाबाद से श्रावकों ने आकर आचार्य श्री से वहाँ पधारने का निवेदन किया। आचार्य श्री ने कहा, ''कचनेर दर्शन के बाद ही आएँगे।''

28 को पैठण से अपने संघ के साथ विहार कर दिया। गुरुदेव का स्वास्थ्य तो पूरे चातुर्मास में नरम-गरम चलता रहा। आज विहार में भी स्वास्थ्य ठीक नहीं था। युवा मुनि गुरुदेव के साथ ही चल रहे थे। उनका ज्वर बढ़ता जा रहा था। सारा संघ बाड़ी ग्राम जहाँ प्रवास था, आहार चर्या के लिए चल दिया। पर जैसी मुनि श्री को आशंका थी, इतनी अस्वस्थता में भी गुरुदेव ने उपवास रख लिया। यह तो गनीमत थी कि रात्रि विश्राम वहीं किया वरना वे कैसे विहार में चल पाते। यहाँ से 30 दिसंबर शाम आचार्य श्री आर्यनंदीजी की जन्म भूमि ढोरकिन पहुँचे। यहाँ एक सुंदर जिनालय है। मुनि श्री चिंतन कर रहे थे कि इस छोटे से कस्बे/गाँव की उर्वर भूमि ने इतने बड़े आचार्य को जन्म दे श्रमण संस्कृति के इतिहास में अपना नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित करा लिया।

कचनेर की ओर

1 जनवरी 2007, नववर्ष की प्रातः की मनोमुग्धकारी बेला चर-अचर सभी के मनों को पुलकित कर रही थी। सूरज अपनी सोनेरी किरणों से धरती के कण-कण को सुनहरी आभा दे रहा था। ताल दे-दे थिरकते वृक्षों से उठती मंद-मंद मारुत के झोके राह चलते तपस्वियों को छू-छूकर वातावरण को पावन बना रहे थे। वृक्ष पल्लव ताल दे दे थिरक रहे थे। पंछी अपने मधुर कलरव की संगीतमय ध्वनि से लय ताल में संगीत छेड़ रहे थे। मानो नववर्ष की मधुर बेला में प्रकृति में इन तपस्वियों के स्वागत की होड़ा-होड़ी मची थी। कहीं दूर सरोवरों में सरोज खिल रहे थे। प्रवहमान सरिताओं के आँचल हवाओं से लहरायमान थिरक रहे थे। इस अपूर्व प्राकृतिक सौंदर्य ने क्या चर, क्या अचर, क्या साधु, क्या श्रावक हर किसी के मनमानस में पुलक भर तरोताजा कर दिया था।

इधर युवा मुनि भी नए उत्साह, नई ऊर्जा, नई गति, नई ललक के साथ अपने गंतव्य पथ पर आगे बढ़ रहे थे। नववर्ष की इस नूतन बेला में वे नए जोश, होश और नए ओज के साथ चल रहे थे। उनकी चाल से ऐसा लग रहा था मानो उनके फौलादी कदमों में नई गति आ गई हो। सबके साथ चलते हुए भी वे सबसे अलग अपरिमित आत्मविश्वास से भरे दिखाई दे रहे थे।

कचनेर में भी 1 जनवरी 2007 को मुनि श्री विभवसागरजी विशाल जनसमूह के साथ आचार्य संघ की अगवानी को आए। गाजो-बाजों के साथ आप संघ के साथ कचनेर के जिनालय पहुँचे। वहाँ चिंतामणि पार्श्वनाथ की शांत वीतरागी मुद्रा के दर्शन कर पपीहे की प्यास की तरह मुनि श्री सुनीलसागरजी की प्रभु दर्शन की प्यास उपशमित हुई। अभिषेक देख मन प्रफुल्लित हो उठा।

कचनेर महाराष्ट्र का महावीरजी है। यहाँ स्वप्न द्वारा 300 वर्ष पूर्व प्रगट हुई यह प्रभु पार्श्वनाथजी की 17 इंच ऊँची प्रतिमा बड़ी अतिशय व चमत्कारी है। यहाँ भी बारहों महीने भक्तों की भीड़ लगी रहती है। इस चमत्कारी बाबा का इतिहास भी अनूठा है। (पढ़िये- अनूठा तपस्वी पृ. 334, आचार्य सुनीलसागर)

कचनेरजी में आचार्य संघ के साथ आपका चार दिनी प्रवास रहा। पहले दिन प्रतिक्रमण, दूसरे दिन पाक्षिक प्रतिक्रमण व तीसरे दिन औरंगाबाद की एक वृद्ध माँ की क्षुल्लिका दीक्षा हुई। उनका नाम सुहर्षमति माताजी रखा गया। चौथे दिन दो वर्ष पूर्व कचनेर में ही समाधिस्थ आचार्य श्री महावीर कीर्तिजी से दीक्षित मुनिसुव्रतमति माताजी की चरण पादुका उनकी पुत्री संघस्थ ब्र. निर्मला लोहाड़े द्वारा विराजमान की गई।

यहाँ मुनि श्री ने अपने गुरुदेव की एक और विशेषता रेखांकित की कि वे माताजी को भी उतना ही सम्मान देते हैं जितना मुनियों को। यही बात उन्होंने गणिनी आर्यिका विजयमति माताजी की समाधि पर आयोजित दो दिनी श्रद्धांजलि सभा में भी रेखांकित की थी। संघ में भी वे ये ही बातें देखते आ रहे हैं। मुनि श्री ने इस अवसर पर कहा कि आत्म कल्याण के मार्ग पर चलने वाली सारी आत्माएँ एक सी हैं। चाहे वे मुनि हो या माताजी। सब अपनी साधना व पवित्र भावनानुसार अपने एक मात्र 'मुक्ति प्राप्ति' के लक्ष्य की ओर बढ़ते हैं।

औरंगाबाद में प्रभावना

7 जनवरी को उषा की अरुणिम लाली ने औरंगाबाद की सीमा पर प्रथम बार पदार्पण करने वाले अनूठे तपस्वी आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के चरणांबुजों का अपनी अरुणिमा से स्वागत किया। आचार्य संघ के स्वागत में बैंडबाजों व णमोकार भक्ति मंडल के साथ अपार जनसमूह, त्यागी, तपस्वी, संयमी आचार्य संघ के स्वागत में उमड़ पड़ा। किसी आचाार्य संघ का औरंगाबाद में ऐसा भव्य मंगल प्रवेश पहली बार हुआ था। एक चौराहे पर मुनि श्री विमदसागरजी एवं मुनि श्री सुवंधसागरजी ने भी गुरु संघ की अगवानी की। वहाँ राजा बाजार स्थित शांतिनाथ जिनालय के दर्शन कर आप मुनि संघ के साथ वहीं रुक गए।

औरंगाबाद में आचार्य संघ के आगमन पर लोग इस कदर उमड़ पड़े मानो पंचम काल में भगवान महावीर का समोशरण ही आ गया हो। लोगों की उफान लेती श्रद्धा भक्ति देख मुनि श्री अभिभूत थे।

8 जनवरी 2007 से वहाँ शहागंज के आचार्यकल्प चंद्रसागर प्रवचन हाल में दैनिक प्रवचन के रूप में संत वाणी की पीयूष वर्षा होने लगी। लोगों को गुरुओं की शरण में आकर ऐसा लगता था मानो सांसारिक दुःखों की दाह से झुलसे लोगों ने तरुवर की सघन छाया पा ली हो। गुरुवाणी की शीतल जाह्नवी में नहा शीतलता पा ली। उस पावन निर्झर से झरते वचनामृत नीर में जन मन के मैल धुलने लगे। संयम के ताप में तपे इन तपस्वी संतों के समागम से वातास में पवित्रता घुल गई।

हर दिन किसी न किसी धार्मिक आयोजन ने औरंगाबाद को धर्म नगरी बना दिया। हर कार्यक्रम व प्रवचन में मुनि श्री सुनीलसागरजी की विशिष्ट भूमिका रहती थी। उन्होंने अपनी विद्वता, समाज व धर्म सापेक्ष चिंतन, सक्रियता, वैचारिक सुसंगतता व स्पष्टता के कारण चंद दिनों में ही लोगों के दिलों में अपनी पैठ जमा ली। उनका कीर्तिरथ नित नए आयामों को छूने लगा।

13 जनवरी को मुनि सौभाग्यसागरजी का गुरुदर्शन के लिए आगमन हुआ। 15 जनवरी को मुनि विभवसागरजी का। 16 को श्वेताम्बर समाज (स्थानकवासी) के युवा संत श्रुतमुनि अक्षय मुनि और सौरभ मुनि ने आचार्य भगवंत से आशीर्वाद लिया। चर्चा में युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी विशेष रूप से उपस्थित थे। श्वेताम्बर मुनि सुनीलसागरजी से इतने अधिक प्रभावित हुए कि उनसे पुनः मिलने का वादा कर लौट गए। जो भी नया संत, विद्वान या पंडित आता मुनि श्री के विलक्षण व्यक्तित्व व व्यवहार से अभिभूत हुए बिना नहीं रहता।

इधर औरंगाबाद प्रवेश के दूसरे दिन ही प्रकाश अजमेरा ने मुनि श्री से कहा कि ''25 जनवरी को आपका आचार्य पदारोहण है।'' मुनि श्री ने कहा ''नहीं ऐसी कोई बात अब नहीं है। यह तो पहले की बात है। मैंने गुरुदेव को मना कर दिया था।'' तब अजमेराजी ने कहा, ''मेरी जानकारी में ऐसा ही है।''

मुनि श्री की औरंगाबाद में भी अच्छी खासी प्रभावना हो गई थी। 18 जनवरी को राजेंद्र दर्डा आचार्य दर्शन को आए तब समाज अध्यक्ष श्री डी.बी. कासलीवाल उन्हें युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी के पास लेकर आए व मुनि श्री की प्रशंसा के पुल बाँधते हुए कहा कि ''इन्हें 25 जनवरी को आचार्य पद दिया जाएगा।'' सारी चर्चाओं से अनभिज्ञ मुनि श्री ने फिर वही बात दोहरा दी कि ऐसा कुछ नहीं है। विधायकजी के जाने के बाद कासलीवालजी ने मुनि श्री से कहा कि ''आचार्य श्री कह रहे थे, युवा मुनि आचार्य पद पाने की कसौटी पर खरे उतरते हैं। उनके हौसले बुलंद हैं। वे जीवन मूल्यों की पैरवी करते हैं। इनमें लहरों के साथ समुद्र पा जाने के इस्पाती इरादे हैं। यह वह सूरज है जो आसमान को नाप सकता है। यह वह जुगनू है जो अंधेरे से टक्कर ले सकता है। यह वह दीपक है जो तूफानों को मात दे सकता है और यह वह नन्हीं झुक जाने वाली दूब है जिस पर से बड़े-बड़े जल प्रवाह गुजर जाने के बाद भी वह जस की तस अपना अस्तित्व बचा खड़ी हो जाती है। यह जमीन से जुड़ा साधु है। इसमें जमीन से शक्ति सोख प्राण फूंकने की योग्यता है। इसमें अनुशासित हृदय है, अनुशासित दिमाग है व अनुशासित दृष्टि भी। इसमें चट्टानों से शंकर गढ़ने की क्षमता है। भले वह आज मेरी छत्र छाया में छुई-मुई सा नाजुक ही क्यों न दिखता हो पर है इस्पाती इरादों वाला। आने वाले समय में यह लोक कल्याण के लिए महती भूमिका निभाएगा। और भी... अनेक बातें वहाँ अन्य लोग भी आपके बारे में कह रहे थे। कुल मिलाकर आप आचार्य पद के योग्य पात्र हैं।''

मुनि श्री ने उन्हें फिर से आश्वस्त किया कि ''यह सच नहीं है। आप इस मुगालते में मत रहो।''

24 जनवरी को मुनि सिद्धांतसागरजी ने मंच पर बैठे हुए मुनि श्री सुनीलसागरजी से पुनः उन्हें आचार्य पद प्रदान करने संबंधी बात की चर्चा की। तब मुनि श्री ने यह कह कर कि ''मुझे आचार्य पद नहीं चाहिए। मैं तो गुरु सेवा करना चाहता हूँ।'' अपनी जगह पर जाकर बैठ गए। कुछ देर बाद पुनः सिद्धांतसागरजी ने उन्हें बुलाया व कहा कि ''आचार्य श्री की स्वयं की इच्छा है। आपको आचार्य पद देने के पीछे निश्चित ही उनकी कोई मंशा होगी। वे बताते नहीं पर उनकी सोच दूरगामी है। आप क्यों असहमत हैं? साधु तो आचार्य पद पाने के लिए तरसते हैं और आप हैं कि इस जिम्मेदारी से दूर भाग रहे हैं। यह सर्वविदित है कि आपमें योग्यता है तभी तो इतने साधुओं के बीच आपको आचार्य पद दिया जा रहा है। रेवड़ियों की तरह बांटा थोड़े ही जा रहा है। आप वे विरले साधु हैं जिसे यह महान सौभाग्य प्राप्त हो रहा है। आपको इस पद को सहर्ष स्वीकार कर गुरु आज्ञा शिरोधार्य करना चाहिए।''

मुनि श्री सुनीलसागरजी आचार्य पद की गरिमा जानते थे। वे तो इसे मात्र साधुओं व श्रावकों की इच्छा समझ रहे थे। उन्होंने तो इस बात को कभी गंभीरता तो क्या हल्केपन में भी नहीं लिया। एक-दो बार बात सुनी और आई-गई हो गई। उसके बाद कभी उस बात का जिक्र भी नहीं हुआ और आज अचानक फिर सामने आ गई। वे तो अभी तक यही भूले बैठे थे कि इतिहास का वह पन्ना तो कब का बंद हो गया। पिछले महीने चली बात का तो उनकी मनाही (अस्वीकृति) से तब ही पटाक्षेप हो गया था। उन्हें क्या मालूम था कि शोला राख के नीचे दबा पड़ा था जो राख के

हटते ही आज पुनः धधक उठा।

वे तभी मंच पर ही गुरुवर के सन्निकट पहुँचे व हाथ जोड़कर बड़े विनम्र भाव से पूछा कि ''क्या यह बात सच है?''

आचार्य श्री ने मौन रहकर ही चेहरे पर हल्की सी मुस्कान लाकर अपनी अभीप्सित स्वीकृति जता दी। तब मुनि श्री इतना ही बोल पाए कि ''जिसमें मेरा हित हो, गुरुदेव आप वही करें।'' वे पितृ तुल्य गुरु आज्ञा को कैसे टाल सकते थे और वे अपने आसन पर आकर बैठ गए। अब वे इस पद के प्रति गंभीर हो गए थे। यद्यपि वे नहीं चाहते थे कि गुरुदेव के सम्मुख एक उनका अदना-सा शिष्य आचार्य बन जाए। परंपरा में आचार्य तो एक ही होना चाहिए। तभी मंच से 25 जनवरी को मुनि श्री सुनीलसागरजी, मुनि श्री सुंदरसागरजी व मुनि श्री हेमसागरजी को आचार्य पद पर प्रतिष्ठित करने की घोषणा कर दी गई। अभिवादन स्वरूप बहुत देर तक तालियाँ बजती रहीं तथा आचार्य श्री के साथ तीनों भावी आचार्यों के जयकारों से आकाश गूंज उठा। अब मुनि श्री सुनीलसागरजी के पास तर्क देने का अवसर ही नहीं था।

भाग-6

कनक से कुंदन

आचार्य पदारोहण

दूसरे दिन 25 जनवरी 2007, माघ शुक्ल सप्तमी को आचार्य श्री की जन्म जयंति के उपलक्ष्य में विनयांजलि अर्पित की जा रही थी और इधर उस पावन प्रसंग में आचार्य सन्मतिसागरजी गुरुदेव आचार्य पद प्रतिष्ठापन की विधि संपन्न कर रहे थे। **अब क्या कहा जाए कि शिष्य गुरु को इस महान जिम्मेदारी के निर्वहन करने के आश्वासन की गुरु दक्षिणा दे रहे थे या गुरु उन योग्य पात्रों को पात्रता की परीक्षा में उत्तीर्ण होने का प्रमाण-पत्र। आखिर मुनि श्री सुनीलसागरजी की ना नुकूर बिलकुल नहीं चली और उन्होंने गुरु प्रदत्त आचार्य पद सहर्ष स्वीकार कर लिया।** जिस प्रकार आचार्यपद प्राप्ति सहज सुलभ नहीं है ठीक वैसे ही उस पद का निर्वहन भी आसान नहीं। किंतु मुनि श्री सुनीलसागरजी ने दृढ़ निश्चय किया कि वे इस गुरु प्रदत्त महान पद का अपनी अंतः ऊर्जा की अपार शक्ति, दृढ़ मनोबल, विवेक, विनम्रता व पुरुषार्थ से निर्वहन करते हुए गुरु पद चिह्नों पर चलते रहेंगे। समस्त साधुगणों व समाजजनों ने यह कहते हुए इस पद की अनुमोदना की कि मुनि सुनीलसागरजी तो इस पद के योग्यतम पात्र हैं।

आज मुनि सुनीलसागरजी के रूप में पुरुष के पुरुषार्थ को पुरस्कार मिल चुका था। पात्र को पात्रता की उपलब्धि व समर्पण को सिंहासन। उन्हें ही नहीं पता था कि उनके संयम का मूल्यांकन हो उन्हें संत जीवन की इतनी बड़ी उपलब्धि इतनी शीघ्र मिल जाएगी। यह उनके आत्मविश्वास के साथ मुक्ति प्राप्ति के लक्ष्य की ओर कदम बढ़ाने का सुखद सुफल था। अब उनके सामने इस पद को दोहरी जिम्मेदारी के साथ आगे निभाने की चुनौती थी।

पद प्राप्ति पश्चात आचार्यश्री सुनीलसागरजी ने अपने प्रथम संक्षिप्त संबोधन में कहा- ''सिद्धि स्वात्मोपलब्धिः''- स्वात्मा की उपलब्धि ही सिद्धि है। फिर भी गुरु ने जो उत्तरदायित्व सौंपा है उस योग्य सामर्थ्य भी वे प्रदान करेंगे और मैं जिनशासन की गौरव गरिमा का ध्यान रखते हुए स्व-पर कल्याण करता रहूँगा।'' इतना बड़ा पद मिलने पर भी उनकी दृष्टि स्वरूप पर ही रही।

इस अवसर पर आचार्यश्री सिद्धांतसागर, मुनिश्री विभवसागर, मुनिश्री विमदसागर आदि 80 पिच्छीधारी साधु उपस्थित थे।

इसी दिन आचार्य श्री सन्मतिसागरजी ने संघस्थ ऐलक समग्रसागर, ऐलक सुशांतसागर व सिद्धांतसागरजी के शिष्य क्षुल्लक शुभमसागरजी को मुनि दीक्षा दे उनका संयम पद और दृढ़ कर उनका जीवन कृतार्थ किया। जिसके साक्षी आचार्य सुनीलसागरजी भी थे। उनके नाम वही रखे। क्षुल्लिका दीक्षाओं में माताजी के नाम क्षुल्लिका सुवीरमति, शांतिमति व सुखदमति रखे गये।

चूँकि 25 जनवरी को कार्यक्रम अति व्यस्त था अतः साधुओं ने 26 जनवरी को भी आचार्य श्री की जन्म जयंति के उपलक्ष्य में विनयांजलि अर्पित की। इसमें आचार्य श्री सुनीलसागरजी के मुनि अवस्था में लिखे गये 'वसुनंदी श्रावकाचार' ग्रंथ का भव्य लोकार्पण हुआ। इसका प्रकाशन समाधिस्थ संभवमती माताजी के परिजनों ने उनकी स्मृति में कराया। मुनि श्री सौभाग्यसागरजी व मुनि श्री शशांकसागरजी को भी उपाध्याय पद के संस्कार दिए गए। आर्यिका सिद्धांतमति, संगममति, सौभाग्यमति, समतामति को गणिनी पद प्रदान किये गये।

9, 10, 19 व 21 फरवरी को विभिन्न धार्मिक कार्यक्रम के आयोजन के बाद आपने आचार्य श्री के साथ रावजी बाजार से आर्यनंदी नगर के लिए विहार कर दिया। यहाँ 23 फरवरी को चंदाप्रभु मंदिर का शिलान्यास हुआ। 24 फरवरी से 4 मार्च तक चलने वाला सिद्धचक्र महामंडल विधान पं. महावीर गींगला व डॉ. संजय शास्त्री तिगोड़ा ने सानंद संपन्न कराया।

आचार्य विरागसागरजी का आगमन 7 मार्च 2007

7 मार्च को अनूठे तपस्वी गुरुदेव श्री सन्मतिसागरजी के परम प्रभावक शिष्य आचार्य श्री विरागसागरजी श्रवणबेलगोला से 2000 कि.मी. लंबी पदयात्रा कर अपने 40 पिच्छीधारी साधकों के संघ के साथ औरंगाबाद पधारे। आचार्य श्री की प्रेरणा से उनकी भव्य अगवानी हुई। आचार्य श्री सुनीलसागरजी भी उनकी अगवानी के लिए अपने गुरु भाइयों के साथ गए।

क्षुल्लक दीक्षा

7 मार्च को ही औरंगाबाद के दुर्घटनाग्रस्त घायल ब्र. पं. हुकुमचंद पांडे की क्षुल्लक दीक्षा हुई। 11 मार्च को मुनि दीक्षा हुई व 14 को समाधि हो गई। आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने रात-दिन उनकी बहुत वैयावृत्ति की तथा णमोकार मंत्र सुनाते व संबोधते रहे। इस प्रकार आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने एक और आत्मा के कल्याण में अपना नैमित्तिक योगदान दिया।

जब संघस्थ साधु वृंद उन्हें आचार्य पद का सम्मान देते तब उन्हें काफी संकोच होता। वे सोचते ये सब तो गुरु भाई बहन हैं, कई तो मुझसे पूर्व दीक्षित हैं। मैं तो इनसे छोटा हूँ। ये सब मेरा अभिवादन कर रहे हैं। लेकिन पद तो पद है। उसकी गरिमा है। भगवान महावीर की श्रमणाचार व्यवस्था में पंचपरमेष्ठी में वे पाँचवें पाए से अचानक तीसरे पाए पर आ गए। अतः जिनागम के अनुसार आचार्य गुरु ने जो मुझे इतना महत्वपूर्ण पद प्रदान किया है वह मुझे शिरोधार्य है। मेरा भरसक प्रयास व पुरुषार्थ रहेगा कि इस 'पद' की गौरव गरिमा दोज के चाँद की तरह वृद्धिगत होती रहेगी।

14 मार्च की रात भी उनकी आँखों से नींद गायब थी। 7 से 14 तक तो वे समाधिसागरजी की सम्हाल व समाधि मरण कराने के लिए जागते रहे किंतु आज समाधिस्थ उन समाधिसागर मुनि ने जीवनकी नश्वरता, अनित्यता व संसार की दशा के चिंतवन में उनकी नींद उड़ा दी। वे सोच रहे थे कि उनके संयम की यह भव्य इमारत ऐसी ही घटनाओं से उपजी संसार से विरक्ति व वैराग्य की नींव पर खड़ी है।

वे और कुछ सोचते इससे पहले ही उनका चिंतन अपने 'आचार्य पद' की ओर मुड़ गया। आगम में निष्णात, शास्त्रों, पुराणों के ज्ञाता, स्वाध्याय जैसे परम तप के तपस्वी युवाचार्य (मुनि) सुनीलसागरजी को अच्छी तरह ज्ञात था कि आचार्य पद पाने के बाद साधु को अपने आचार्य गुरु से अलग प्रतिक्रमण करना होता है। संघ में न रह अलग विहार करना होता है। परिस्थितिवश शायद गुरुदेव ने अभी तक कोई आदेश नहीं दिया है क्या पता किस वक्त उनके ऐसे किसी आदेश का वज्रपात हो जाए और उन्हें अलग विहार करने को मजबूर होना पड़े। वे तो सोचकर ही कांप गए। गुरुवर बिना वे कैसे अकेले रहेंगे।

उन्हें करीब साल भर पहले की घटना याद हो आई। स्वाध्याय के बाद वे आचार्य श्री के पास बैठे तत्त्वचर्चा कर रहे थे। किसी विषय पर बहस छिड़ी। आपने विभिन्न शास्त्रोक्त तर्कों के माध्यम से अपनी बात सत्य सिद्ध कर दी। आचाार्यश्री स्तब्ध थे बोले, ''तुम कंठस्थ करने की इतनी साधना भी करते हो? बहुत अच्छी व बड़ी बात है। यदि शास्त्रार्थ हो तो तुम मुझे हरा दो।'' आचार्य श्री विनोद में बोले थे। यह उनकी शिष्यों को प्रेरित व प्रोत्साहित करने की स्टाइल थी। उन्होंने बात बढ़ाते हुए कहा कि ''मुझे अब तुम पर पूर्ण विश्वास हो गया है। तुम अकेले अब विहार कर अच्छे से धर्म की प्रभावना करते हुए चारित्र पालन कर सकते हो।''

उन्होंने- ''नहीं-नहीं गुरुदेव कहते हुए उनके चरणों में माथा टेक दिया। आपसे अलग होने की तो बात ही नहीं सोच सकता।''

आचार्य श्री मुस्कराते हुए बोले, ''जब मोक्ष मार्ग पर चलने के लिए बाप को छोड़ दिया तब आप (गुरुवर) से कैसा मोह?''

वे सोचने लगे कि आचार्य गुरु के मन में कब से ही उन्हें आचार्य पद देने व बाहर भेजने की बात चल रही थी इसीलिए उन्होंने उचित समय पर उचित कदम उठाया। सोचते- सोचते कब उनकी आँख लग गई पता नहीं। 15 मार्च को भी समाधिसागरजी के कार्यक्रम, प्रवचन व अन्य धार्मिक आयोजन में समय बीत गया। इन दिनों उन्हें गुरु निश्रा में बैठने का अवसर न के बराबर मिला जबकि जिस क्षण वे आचार्य पद पर आरोहित हुए उसी क्षण उन्होंने सोचा था कि अब अधिक से अधिक समय गुरु चरणों में बिताऊँगा। किंतु दुर्घटनाग्रस्त समाधिसागरजी की वैयावृत्ति व समाधि कराने में समय बीत गया।

16 मार्च को आपने अपना अधिक से अधिक समय गुरु सत्संग में बिताया। तत्त्व चर्चा, धर्म प्रभावना के क्षेत्र में प्रभावना की चर्चा की। आपने विनम्र होकर गुरुदेव से निवेदन किया कि ''आचार्य पद पाने के बाद मेरे क्या कर्तव्य होंगे?''

आचार्य श्री ने मुस्कराते हुए कहा, ''मुझे पता था तुम मुझसे यह प्रश्न जरूर पूछोगे।''

''जो दस वर्षों तक छाया की तरह मेरे साथ रहा हो, जिसने अपने यौवन का स्वर्णकाल संयम धारण कर गुरु चरणों में समर्पित कर दिया हो, जो भगवान महावीर के श्रमणाचार से अनुशासित व संस्कारित हो, जिसका ज्ञान, सूर्य सा दीप्त जन मन की चिंता के भ्रमाकाश को छिन्न-भिन्न करने की शक्ति रखता हो, जिसके हृदय में करुणा व आँखों की कोर करुणा जल से आर्द्र हो, जिसका हृदय करुणा से सभर हो, जो श्रीसंघ के प्रति सहृदय हो, जिसका हृदय सागर सा उदार व ज्ञान नीर से अथाह भरा हो उसे मैं क्या कर्तव्य बोध दूँ।'' आचार्य गुरु ने बड़े वात्सल्य भाव से शिष्य से कहा। गुरु जितनी अच्छी तरह से अपने शिष्य को व माता-पिता अपनी संतान को जानते हैं उतनी अच्छी तरह से और कोई नहीं जानता। मैंने तुम्हें कुम्हार की तरह अच्छी तरह ठोक बजाकर, तप, त्याग, संयम, प्रायश्चित, स्वाध्याय, वाचना, प्रवचन (देना) आदि के अलावों में तपा-तपा कर मजबूत कर दिया है। तुम तो पहले से ही 24 कैरेट खरा सोना थे किंतु कसौटी पर कसे जाकर कुंदन कांति से दमक उठे हो। तुम जैसे सुयोग्य शिष्य को मैं क्या कर्तव्य बोध दूँ, क्या ज्ञान बोध दूँ? फिर भी तुम पूछ ही रहे हो तो इतना ही कहूँगा कि

(1) मेरे साथ संघ में रहते हुए जिन बातों से तुम्हारे मन को सुकून पहुँचा हो उसे अपने पास रखना व जिनसे दिल को चोट पहुँची हो उसे छोड़ देना। किंतु दिल को चोट पहुँचने के बाद भी वह तुम्हारी भलाई के लिए कुनैन सी कड़वी हो तो भी उसे हलक में उतार लेना।

(2) पंथ एवं परंपरा के विवाद में मत पड़ना। जहाँ जैसी व्यवस्था है उसे चलने देकर उसमें हस्तक्षेप नहीं करना।

(3) समाज के विवादों में मत पड़ना। अपना लक्ष्य आत्म कल्याण व विश्व कल्याण ही रखना।

(4) आगे होकर विघ्न व आपत्तियों को आमंत्रित नहीं करना किंतु फिर भी आपत्ति आ जाए तो उसे सूझबूझ से निपटाना/हल करना। किसी भी प्रकार के विवाद या वितंडावाद से बचना।

(5) श्रावकों से संसार की बातें नहीं करना। उनसे राग-प्रपंच की बातें नहीं करना। धार्मिक वार्ता में भी सीमित बोलना।

(6) आत्म दृष्टि रख निरंतर आत्म विकास की दिशा में पुरुषार्थ करना।

वाणी वाचस्पति आचार्य गुरु ने शिष्य आचार्य सुनीलसागर को उनके स्वयं के गुणों द्वारा आचार्य पद की श्रेष्ठता का बोधामृत पिला दिया। आचार्य सुनीलसागर समझदार व विवेकी हैं, गुरु जानते थे। अतः उन्हें इशारा काफी था।

अलग विहार

17 मार्च 2007 का सूरज युवाचार्यश्री सुनीलसागरजी के जीवन के लिए नया संदेश लेकर आया था। आज की प्रातः आचार्य श्री को रोज से कुछ अलग बदली-बदली सी लग रही थी। उषा की लाली तो चारों दिशाओं में बिखरी थी, पर उसमें मोहकता नहीं थी, पक्षी चहक तो रहे थे पर उनकी चहक में रोज सी मिठास नहीं थी। पागल हवा बंजारों सी भटकती लग रही थी। क्या पता आचार्य श्री को आज कुछ अच्छा नहीं लग रहा था।

वे मन ही मन सोच रहे थे कि सब कुछ रोज की तरह तो है, फिर भी मन कुछ भारी-भारी, उदास लग रहा है। किसी काम में मन नहीं लगा। मन हल्का करने वे आचार्य श्री के श्रीचरणों में जा बैठे। थोड़ी ही देर में आचार्य श्री हेमसागरजी व आचार्य श्री सुंदरसागरजी भी गुरु सान्निध्य में जा बैठे। युवाचार्य सुनीलसागरजी ने सोचा शायद गुरुवर ने उनको बुलाया होगा। जो भी हो गुरु चरणों में मन को शांति मिली। भटकता मन गुरुमय हो गया। वे मन ही मन गुरु गुणगान कर उनके जैसा बनने की कामना करने लगे।

यह संयोग कहें या दुर्योग आज तीनों नए आचार्य एक साथ गुरु चरणों में आ बैठे थे। आचार्य श्री ने आज गंभीर होकर तीनों आचार्यों से कहा कि आपको आचार्य पद दिया गया है। अब आपको अलग प्रतिक्रमण व विहार करना चाहिए।

मुनि श्री तो सकते में आ गए। उनका चेहरा फक्क हो गया। आँख उठाकर उन्होंने गुरु मुख मुद्रा देखी। उनकी मुद्रा तो वैसी ही थी, पर उन्हें आज उसमें कठोरता दिखी, शायद आँखों का भ्रम था। क्योंकि व्यक्ति जैसा सोचता है उसे सामने वाला वैसा ही दिखाई देता है।

अचानक गुरु के उद्‌गार सुन युवाचार्य के हाथ-पैर ठंडे हो गए। शरीर शिथिल हो गया। मुँह से बोल ही नहीं फूट रहे थे। वे बेबस से आँखों में आँसू भरे गुरु चरणों को निहारते रहे। आँखों से टप-टप आँसू टपकने लगे। गर्म आँसू जब गुरु चरणों पर गिरे तब उन्होंने युवाचार्य की तरफ देखते हुए बोला, ''अरे! तुम रो रहे हो। किसी आचार्य को यह शोभा नहीं देता।''

आचार्य श्री की बात सुनते ही ऐसा न जाने क्या हुआ कि युवाचार्य में ऐसा शक्ति का संचार हुआ कि उनके शिथिल हुए हाथों में ताकत आ गई। वे हाथ जोड़कर बोले, ''गुरुदेव हमसे जो भी गलतियाँ हो उन्हें माफ कर दो, जितना चाहो कठोर से कठोर प्रायश्चित दे दो, लेकिन इन परम पावन चरणों से हमें दूर न करो।'' और वे कसकर गुरु चरण पकड़ कर कहने लगे ''गुरुवर रोज उठते ही आपकी इस शांत व वीतरागी मुद्रा के दर्शन की आदत हो गई है। आपके दर्शन बिना तो हम प्रातः की कल्पना भी नहीं कर सकते या आपके दर्शन बिन हमारा तो दिन ही शुरू नहीं होगा। मैं आपके बिना नहीं रह सकूँगा।''

वे आँखों में आँसू भरे याचक बन गुरुवर की ओर देखने लगे। आखिर वे तो गुरु थे। उनकी गुरुता अपने आप प्रकट हो गई। शिष्यों के बार-बार निवेदन और प्रार्थना का उन पर कोई असर नहीं हुआ और कठोर होकर उन्होंने कहा, ''आप तीनों के लिए मेरी यही आज्ञा व आदेश है।''

एक ओर विरक्ति का मार्तंड महागुरु तपोनिष्ठ आचार्य और दूसरी ओर गुरुमय हो चुका शिष्य, जो लोहे सा गुरु के चुम्बकत्व से चिपका रहना चाहता था। जो गुरु बिना अपने जीवन की कल्पना ही नहीं कर सकता था। यद्यपि ज्ञानी भी था। किंतु गुरु के अनुराग व समर्पण की बदरी ने सारे ज्ञान को आच्छादित कर दिया। गुरु निश्रा में ही रहना चाहता था।

पर वे योगीश्वर! वे तो अटल थे अपने निर्णय पर। पद दिया है, स्वीकार किया है तो पदार्पण तो करना पड़ेगा ही। जिन शासन में ही क्या लौकिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पदोन्नति पा व्यक्ति को अन्यत्र जाना पड़ता है। हाँ कुर्सी खाली होने पर जरूर उसका लाभ मिल सकता है। पर यहाँ तो ऐसी कोई बात नहीं थी।

शिष्य भी जानते थे कि पद पाया है तो पदार्पण तो करना ही होगा और स्वयं को मजबूत तो किया। जहाँ तक गुरु कृपा है, वहाँ तक उनकी छत्र छाह मिलती रहेगी सोचकर मन को संतोष था। किंतु आज गुरु की छाह का बादल छट गया और शिष्य के सब्र का बांध टूट गया। बार-बार निवेदन करने पर भी गुरु गुरु ही बने रहे। उनका दिल नहीं पसीजा। पसीजता भी कैसे? श्रमणाचार की व्यवस्था का पालन करना व करवाना आचार्य के नाते उनका कर्तव्य था। कल इसी शिष्य ने आचार्य पद पाने के बाद गुरु से अपना कर्तव्य बोध पूछा था। आज गुरु ने जवाब दे दिया था।

जब सारी संभावनाएँ समाप्त सी हो गई तब युवाचार्य सुनीलसागरजी समेत दोनों आचार्यों ने अलग-अलग प्रतिक्रमण किया। युवाचार्य का मन आज प्रतिक्रमण में नहीं लगा। उनके लिए प्रतिक्रमण एक औपचारिकता भर थी जिसका प्रायश्चित भी उन्हें करना था।

युवाचार्य सुनीलसागरजी की ऐसी विषादमय स्थिति देख गुरु दर्शन को संघ सहित आए आचार्य श्री विरागसागरजी ने उन्हें बहुत समझााया। शास्त्रों की गाथाओं और सूत्रों के माध्यम से उन्हें कर्तव्य बोध दिया। उन्हें इस स्थिति से उबारने का प्रयत्न किया। जैन दर्शन का वास्ता दिया और कहा कि ''आचार्य पद दिए जाने के बाद हमने भी तो वह सब किया जो गुरु का आदेश था। आचार्य पद ग्रहण करने के बाद यह सब स्वाभाविक है। आचार्य गुरु के रहते यदि शिष्य उनका दिया आचार्य पद ग्रहण करता है तो आगमानुसार उसे अपनी क्रियाएँ अलग करना होती है। शुरू शुरू में तुम्हें यह सब अच्छा नहीं लगेगा, बाद में तो आदत हो जाएगी। अभी तुम पर गुरु की छाप गहरी है, समय के प्रवाह में यह धुंधली पड़ती जाएगी। समय बहुत कुछ ठीक कर देता है। फिर तुम सा आगम व चारों अनुयोगों का ज्ञाता भाव विह्वल हो गुरु राग से उबर न पाए, यह तो मुझे कुछ ठीक नहीं लगता।''

आचार्य विरागसागरजी के शिक्षा बोध ने उनकी चेतना जाग्रत कर दी।

युवाचार्य भी सब कुछ जानते थे पर उन महायोगी गुरु से बिना डोर के ऐसे बंध थे कि डोर छूट ही नहीं रही थी। आस बाँधे वे गुरुवर के आगे-पीछे डोलते रहे। अपना अधिक से अधिक समय गुरु चरणों में व्यतीत करने लगे। ऊपर से शांत किंतु अंदर से गुरु वियोग की पीड़ा उफान ले रही थी।

वे इस उहापोह में थे कि क्या करें, क्या न करें कि 20 मार्च की प्रातः आचार्य गुरु ने औरंगाबाद के उपनगर मोहनलाल नगर की ओर विहार कर दिया। युवाचार्य भी उनके साथ गए पर थोड़ी दूर साथ चलने के बाद गुरु ने उन्हें लौटा दिया व कहा कि अलग विहार करो। गए तो उत्साह से थे पर लौटते वक्त पैर मानो भारी हो गए। जस-तस संत वसतिका में वापस आए। औरंगाबाद से उनका विहार जटवाड़ा के लिए हो रहा था।

खा जाने वाला सन्नाटा पसरा था। दिल को रुला दे ऐसी उदासी छाई थी। उजड़े उद्यान सी वीरानी ने उनको अंदर तक हिलाकर रख दिया। सूनी आँखें चारों ओर गुरु को खोज रही थी। वे आँखें मूंदे बढ़ गए। माँ जिनवाणी का आलम्बन लिया। माँ ने अपने ज्ञान वात्सल्य की सारी ममता उन पर उंडेल दी। मानों वे माँ के अंक में खो गए। माँ थपथपा रही थी। धीरे-धीरे विषाद के बादल छंटने लगे और वे दिव्य ज्ञान पुंज में नहा गए। होंठ बुदबुदाए ''मैं स्वयं के अंतस में पड़े मोह व राग का पर्दा हटाऊँगा। तभी तो औरों को ज्ञान का प्रकाश बाँट सकूँगा।''

गुरु विहार

गुरुजी ने ठीक ही कहा था, अरे निर्मोही! तू घर-बार, माँ-बाप, भाई-बहन, धन-दौलत सब कुछ तुच्छ तिनके सा त्याग साधु बन गया तो गुरु से मोह कैसा? वे मोहातीत गुरु कल्याण के मार्ग पर आगे बढ़ गए, पीछे मुड़कर एक बार भी नहीं देखा जबकि उन्होंने मुझे बेटे-सा वात्सल्य दिया था और मैं उनके विछोह में दुःखी हो रहा हूँ। संयम पथ के राही का क्या यही आचरण है कदापि नहीं। मैं उनके प्रिय व समर्पित शिष्यों में से हूँ। गुरु धरसेन से निस्पृही आचार्य

गुरु ने मुझमें भी आगे कोई संभावना देख, यह पद प्रदान कर मेरी व धर्म की भलाई देखी होगी। वरना चाहते तो वृद्धावस्था में मुझे अपने साथ ही रखते।

अब तक मैं उनकी छत्र छाह में पलता रहा, उनके चरण चिह्नों पर चलता रहा, उनके मार्गदर्शन में आगे बढ़ता रहा। उनकी सीख से शिक्षा ग्रहण करता रहा। उन्होंने दर्शन, ज्ञान व चारित्र का सम्यक् बोध दे मुझे इतना सभर कर दिया, इतना सुनम्य बना दिया, इतना स्वशासित बना दिया, हर क्षेत्र में इतना आत्मनिर्भर कर पारंगत कर दिया ताकि अपना रास्ता स्वयं बनाकर अकेला चल सकूँ। उन्हें मुझ पर इतना विश्वास था। मुझे भी उनके विश्वास पर विश्वास है। मैं अपने कर्म व सिद्धांतों से कभी उनके इस 'सुविश्वास' को खंडित नहीं होने दूँगा।

युवाचार्य अपने आसन पर बैठ गहन चिंतन में डूब गए। मैं अकेला ही चला था इस पथ पर। बिल्कुल ठीक-न पिच्छी पकड़ना आती थी न कमंडलु सम्हाल पाता था। आहार चर्या में तो हाथ कांप जाते थे। अनजान, अजनबियों के साथ अनजान रास्ते पर चल पड़ा। पीछे जो छूटा था उसका तो तनिक भी दुःख नहीं था किंतु जब प्यासे कंठ, पगतलों में छाले लिए गर्मी-सर्दी की परवाह किए बिना पथरीली जमीन पर चला, तब भी सागर को मात कर दे इतना उत्साह भरा था मुझमें। इसी उत्साह, साहस, लगन व साधना की बदौलत संयम के इम्तिहान में मुझे उत्तीर्ण मान गुरु द्वारा यह आचार्य पद का सर्टिफिकेट दिया गया है। देने वाले तो देकर चले जाते हैं पर लेने वाले पर निर्भर है कि वह उस तमगे को तस्वीर में मढ़ाकर दीवाल पर टांग देता है या उस तमगे से अपनी तदबीर के बल अपनी व औरों की तकदीर सँवारता है। मुझे अपनी ही नहीं एक संत के नाते संसार के दुःखों से कुलबुलाते प्राणियों की भी तकदीर संवारना है।

तभी पास ही पेड़ के नीचे चहचहाती, शोर मचाती चिड़िया ने उनका ध्यान अपनी ओर खींच लिया। वह चोंच मार-मार कर नीचे धरती पर फुदकते अपने नन्हे बच्चे को उड़ना सिखा रही थी। उड़ान भरने- भराने की जद्दोजहद में उनके शोर ने आचार्य श्री को अपनी ओर देखने के लिए विवश कर दिया। अंततः बच्चा अनंत खुले आकाश में उड़ गया। माँ हसरतभरी निगाहों से उसे देखती रही। उसके हाव-भाव से बच्चे से बिछुड़ने का जितना दुःख प्रकट हो रहा था, उससे ज्यादा खुशी उसकी पहली कामयाबी पर हो रही थी। मुनि श्री ने उस नन्ही चिड़िया को अपना गुरु मान उससे दुःख से मुक्ति का मार्ग खोज लिया। अब एक बार फिर युवाचार्य ने उस चिड़िया को देखा- वह वहाँ नहीं थी। आँखें उठाकर आसमान की ओर देखा- एक नन्हा परिंदा पंख फैलाए आसमान में उड़ रहा था। माँ और बच्चा अपने-अपने रास्ते पर चले गए थे।

युवाचार्य भी अब बहुत हल्के हो गए थे। गुरु विछोह का दुःख तो अभी भी मन को साल रहा था किंतु कर्तव्य बोध व अंतश्चेतना ने दुःख को अपने पर हावी नहीं होने दिया। उन्हें भी अपना रास्ता अब स्वयं तय करना था। पिछले दस वर्षों से गुरु का वे अनुकरण कर रहे थे, पर! अब? स्वयं ही स्वयं का गुरु बनना था। सारे निर्णय स्वयं करना थे।

तभी नए आचार्य श्री सुंदरसागरजी भी आ गए। बालाजी नगर के श्रावक पहले ही आचार्य श्री के चरणों में बैठे थे। उन्होंने बालाजी नगर आने का निमंत्रण दे श्रीफल अर्पित किए। युवाचार्य ने अपनी स्वीकृति दे दी।

सारी चर्याएँ यथावत संपन्न करते हुए आप आचार्यद्वय ने शाम को बालाजी नगर के लिए विहार कर दिया।

हर रात की तरह आज भी संध्या ढली, रात आई। आगम के ज्ञाता, कर्म सिद्धांत के निष्णात युवा आचार्य को अपने चारों ओर विराना देख गुरु संघ बिना रात्रि श्रीहीना लग रही थी। मन बार-बार उदास हो जाता था। यद्यपि गुरु मूर्ति हृदय में बसी थी किंतु आँखें उन्हें भौतिक रूप से देखने को तरस रही थी, हाथ चरणों की ओर वैयावृत्ति के लिए बढ़ जाते जो छूकर भी नहीं छू पाते थे। शरीर भिन्न, आत्मा भिन्न का महाज्ञाता, उपदेशक, वह महाज्ञानी योगी भी स्वयं को न सम्हाल पा बार-बार गुरु वियोग में विह्वल हो जाता था। पर अगले ही पल वह स्वयं को संभाल लेता था। मोहातीत वह मुक्तिपथ का राही था। हम संसारी और उन विरक्त वीतरागी संन्यासी में यही तो अंतर था।

प्रतिकूल मनोदशा में भी साधु की सारी चर्याएँ यथावत चलती रही। कहीं तिल तुष मात्र भी कमी नहीं। अब गुरु या गुरु भाई कहाँ? जो उनकी गलतियाँ बताते। अब तो स्वयं ही अपनी कमियाँ/गलतियाँ तलाशनी थी।

रात गहराती जा रही थी। आँखों में नींद नहीं थी। अर्द्ध निशा के सन्नाटे में आज उन योगीश्वर के आत्मचिंतन के साथ जीवन के यथार्थ का चिंतन भी चल रहा था। कल 21 मार्च की नई प्रभात उनके लिए नए जीवन का नया संदेश लेकर आएगी उसके पूर्व उन्हें अपनी तैयारी करनी होगी।

औरंगाबाद बालाजी नगर की रात
20 मार्च 2007 विहार के बाद पहली रात

20 मार्च/आज की रात युवा आचार्य सुनीलसागरजी के लिए बड़ी महत्वपूर्ण व निर्णायक रात थी। खुद का सिंहावलोकन, आत्मावलोकन, समीक्षा, मूल्यांकन व शक्ति को यथार्थ की तराजू पर तोल अपना सही 'वजन' ज्ञात कर कदम उठाकर आगे बढ़ने की प्रेरणा देने वाली रात थी।

सबसे पहले उन्होंने अपने जीवन, अपने कार्यों व अपने व्यवहार की अच्छी बातों, सकारात्मक पहलुओं व विशिष्ट विशेषताओं का विहंगावलोकन किया ताकि उन पर और अधिक ध्यान दे उनके सहारे वे आगे के जीवन को सहज, सरल, सुगम बनाकर निर्बाध गति से अपना व समाज का हित कर सकें।

फिर उन्होंने अपनी उन जिम्मेदारियों पर एक नजर डाली, जिसे पूरे मन से निभाते रहे जिन पर खरे उतरते रहे। जिनके कारण उन्हें सराहना मिली, उनकी विशिष्ट पहचान बनी, व्यक्तित्व सशक्त बना। एक लंबी लिस्ट बन गई। बहुत सारे प्लस पॉइंट मिले उन्हें। उन्हें प्राप्त आचार्य पद भी इन्हीं जिम्मेदारियों के निर्वहन का एक प्रमुख कारण रहा। श्रमण, श्रावक, जिनवाणी व जिनधर्म के प्रति वे समर्पित भाव से कठिन जिम्मेदारी उठाते रहे। आज वे अपनी स्वयं की विशेषता के कारण प्रसन्न थे क्योंकि जीवन में हमने जो कुछ अर्जित किया है। विपदा/अकेले होने पर वही संपत्ति मौके-बेमौके काम आती है। वे अपनी पीठ थपथपा रहे थे 'अच्छा हुआ सुनीलसागर, मुनि जीवन में हर जिम्मेदारी निभाने में आगे रहा। उन्होंने यह भी निश्चित किया कि अवसर आने पर वे समाज के सामने इनका जिक्र करते रहेंगे ताकि इनसे प्रेरणा ले और बड़ी जिम्मेदारी संभाल सके व आगे बढ़े तथा समाज भी उनसे प्रेरित हो संतों के श्रेष्ठ कार्यों को संपन्न कराने आगे आए व अपनी विशेषताएँ बढ़ाए।

एक संत, एक आचार्य के नाते समाज व संतों को आपसे क्या- क्या अपेक्षाएँ हैं, क्या-क्या आशाएँ हैं, लोग क्या चाहते हैं? उम्मीदें रखते हैं। मुनि श्री सोच रहे थे मुझसे ज्यादा अच्छे से मुझे कौन जान सकता है? वे अपनी क्षमता, आत्मविश्वास व विशेषताओं से स्वयं का मूल्यांकन करने लगे कि वे इन आशा-अपेक्षाओं को पूरा करने में कहाँ तक खरे उतर सकते हैं। आपसे जिनकी उम्मीदें बंधी है आप उनकी उम्मीदें कहाँ तक समझ सके हैं/सकते हैं। अपने मूल्यांकन से उनके सामने अपने प्लस पॉइंट्स का अम्बार लग गया।

अपनी ताकत को पहचानते ही उनमें नई ऊर्जा और नए उत्साह के संचार के साथ आगे बढ़ने की हौसला अफजाई हो गई। चुनौतियों को चुनौतने की ताकत आ गई। जिंदगी की जद्दोजहद से जूझना उनके लिए बहुत आसान हो गया।

मुनि श्री अपने आकलन पर स्तब्ध थे। ओहो! मेरे पास तो कुछ नहीं था उस गुणनिधि गुणागार ने मेरे जीवन कोषालय में गुणों का अम्बार लगा दिया और मैं आज तक अनजान बना रहा। आज उन्हें पहली बार अनुभव हुआ कि देने वाला अपनी दी गई वस्तु/गुण का जितना महत्व जानता है, लेने वाला नहीं। देखो उन परम उपकारी गुरु को, उन्होंने मुझे जो कुछ दिया, वह तो बेहिसाब है। उन्होंने तो जाते वक्त मेरी ओर पीछे मुड़कर भी नहीं देखा। निश्चित ही उनका मुझ पर विश्वास था। अब उदासी व दुविधा का कोहरा छन्न वातावरण छूट गया था। गुरु के दिए इतने अवदानों से सुसंपन्न साधु

को शून्य से शिखर तक पहुँचना आसान है।

अभी तक पद का भार उनके लिए हौआ बना हुआ था। दर्शन, चिंतन ने उन्हें निर्भार बना दिया। निर्भार होते ही वे आत्मतोष से भर गए। धीरे-धीरे पलकें भारी होने लगीं और वे निद्रादेवी के आगोश में समा गए।

21 मार्च की प्रातः। अंबर के आँगन में दिवाकर धरती के लिए दिव्य संदेश ले उग आया था। इधर धरती के सूर्य आचार्य श्री सुनीलसागरजी अपने दीप्त आभामंडल के साथ अपने पथ पर अग्रसर थे। दूसरे दिन प्रातः आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने मुनि श्री सुप्रसन्नसागरजी के साथ उल्कानगरी व आचार्य श्री सुंदरसागरजी ने निराला बाजार की ओर विहार कर दिया। कठोर, खुरदरी, चट्टानी धरती। यत्र-तत्र बिखरी धूल, कांटे कंकर और उस पर चल रहा था मुक्तिपथ का राही नंगे पैर, दिगम्बर भेष में। जड़ चेतन को धन्य करता निर्मल मना मुनि निर्भार चरण चक्रमण कर रहा था। श्रद्धा से भरे पेड़-पौधे, लता वल्लरियाँ झुक-झुककर उनका अभिवादन कर रहे थे। पेड़ों के पत्ते ताल दे दे थिरक रहे थे। पक्षी स्वागत गान कर रहे थे। हरकारा हवाएँ उनके संयम की सौंधी सुगंध दसों दिशाओं में पहुँचा रही थी। इधर जड़ कहे जाने वाले कांटे कंकर, रजकण उनके पद तलों में चिपक- चिपक कर स्वयं को कृतार्थ कर रहे थे। उन बेचारों को क्या पता कि गुरु के प्रति अर्पण के रूप में उनकी चुभन इन चुपचाप चल रहे संतों के लिए कितनी कष्टदायी होगी।

नया अध्याय

इस प्रकार युवाचार्य सुनीलसागरजी के जीवन का नया अध्याय शुरू हो गया। उधर आचार्य श्री सन्मतिसागरजी का मंगल विहार एलोरा के दो दिनी प्रवास के बाद कन्नड़ की ओर हो गया और इधर युवाचार्य ने औरंगाबाद की उल्कानगरी से सुप्रसन्नसागरजी व कुछेक श्रावकों के साथ एलोरा के लिए विहार कर दिया। वे चाणक्यपुरी, हड़को- सिड़को, जटवाड़ा होकर ऐलोरा पहुँचे। इतिहास, पुरातत्व व श्रमण संस्कृति के इतिहास में गहरी रुचि रखने के कारण आपने 4-5 दिन गुफाओं का गहन निरीक्षण करते हुए अवलोकन किया। (इसका वर्णन अनूठा तपस्वी पेज 339-40 में आचार्य सुनीलसागरजी ने विशद रूप से किया है।) अत्यधिक गर्मी में लगातार चलते रहने के कारण मुनि सुप्रसन्नसागरजी का स्वास्थ्य बिगड़ गया।

एलोरा प्रवास में 31 मार्च को आपके सान्निध्य व प्रेरणा से महावीर जयंति महोत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया गया। आचार्य श्री के नेतृत्व में अनेक कार्यक्रम हुए। श्रावकों ने उस दिन आचार्य श्री का 11वाँ दीक्षा दिवस भी बड़े उत्साह व भक्तिभाव से मनाया। एलोरा के इतिहास में ऐसी महावीर जयंति पहली बार मनाई गई। आचार्य पद पाने के बाद आपके सान्निध्य में यह प्रथम व सफल आयोजन संपन्न हुआ।

एलोरा के 9 दिनी मंगल प्रवास में धर्म प्रभावना करने के बाद 4 अप्रैल 2007 को आपने पंढरपुर (औरंगाबाद) की ओर विहार कर दिया। मुनि श्री सुप्रसन्नसागरजी का स्वास्थ्य लगातार गिरता जा रहा था। दौलताबाद के पास अबदीमंडी ग्राम में साधुओं की आहार चर्या हुई। आहार के बाद उन्हें वमन हो गया। उनके स्वास्थ्य में जरा भी सुधार नहीं हो रहा था अपितु गिरता ही जा रहा था। पूरे दिन वे मंदिर में लेटे रहे।

लेकिन उनका मनोबल मजबूत था। वे बड़े शांत व समता स्वभावी थे अतः उनकी शारीरिक पीड़ा/वेदना आचार्य श्री को समझ नहीं आई। उन्होंने समझा कि भीषण गर्मी में विहार करने से उन्हें लू लग गई होगी व प्यास के कारण इनका ये हाल हुआ है। अनुकूलता में ठीक हो जाएगा और आचार्य श्री ने शाम को उनके साथ विहार कर दिया।

दूसरे दिन सुबह भी स्वास्थ्य ठीक न होने के बावजूद भी मुनि श्री ने आचार्य श्री के साथ आगे की यात्रा के लिए विहार कर दिया। श्रावकों द्वारा सही रास्ता नहीं बताने के कारण मुनिद्वय राह भटक गए व रास्ता लंबा हो गया। सूरज ने अपना प्रचंड प्रकोप दिखाना शुरू कर दिया। भूखे-प्यासे, बीमार मुनि सुप्रसन्नसागरजी को त्रस्त व व्याकुल कर दिया।

बड़ी मुश्किल से जस-तस वे गंतव्य तक पहुँच पाए। आहार भी उनका ठीक से नहीं हो पाया। वे दिनभर समता भाव से लेटे रहे, णमोकार महामंत्र का जाप करते रहे।

दूसरे दिन फिर उनका आहार डॉ. राजेंद्र काला के यहाँ हुआ। आज भी वे अत्यधिक कमजोरी व बेचैनी की वजह से थोड़ा सा आहार लेकर बैठ गए। अब वे आगे चलने में बिल्कुल असमर्थ थे। वे लोग डॉ. राजेंद्र काला के यहीं रुके थे। सोचा था शाम को विहार कर देंगे। पर अब समस्या बढ़ गई। आचार्य श्री ने कहा कि गृहस्थ के मकान पर हम मुनियों को रुकना ठीक नहीं है। जैसे-तैसे बड़ी मुश्किल हालत में वे आचार्य श्री के पीछे चलकर मंदिर पहुँचे। वहाँ एक आधा बना हुआ मकान था। कोई अन्य व्यवस्था न होने पर उन्हें वहाँ रुकना पड़ा। मुनि श्री तो जाते ही वहाँ लेट गए। उनकी हालत बहुत खराब थी। न उनसे उठते बनता था न बैठते। वे लेटे रहे। आचार्य श्री उनकी सेवा सुश्रुषा में बराबर जुटे हुए थे।

7 अप्रैल को प्रातः वे उठकर बैठ गए व बिना चश्मे के स्वाध्याय करने लगे जबकि चश्मे के बिना वे पढ़ नहीं सकते थे। उन्होंने आचार्य श्री से भी कहा कि मुझे बिना चश्मे के भी अच्छी तरह दिखाई दे रहा है। आचार्य श्री को कुछ शंका हुई फिर भी तसल्ली देते हुए कहा आप जल्दी ठीक हो जाएँगे। आज आपका आहार डॉ. राजेंद्र बड़जात्या के यहाँ हुआ पर आप ठीक से आहार नहीं ले पाए। आचार्य श्री को स्थिति डांवाडोल लगी। आचार्य श्री ने उनसे पूछा, ''समाधिमरण की तैयारी है?'' तब उन्होंने हाँ में जवाब दिया।

विधि की विडम्बना। दो-दो डॉक्टर रहते हुए भी किसी के दिमाग में नहीं आया कि उन्हें दिखाकर जाँच करवा लें। एक वैद्य की दवा चल रही थी, पर वह भी बिना किसी बीमारी के पता किए।

8 अप्रैल को उन्हें थोड़ी ठंडक पहुँचे व ऊर्जा प्राप्त हो सोचकर आहार में गन्ने का रस दिलाया। थोड़ा सा रस व पानी लेकर वे बैठ गए। उन्होंने आहार का त्याग कर दिया। सुबह में डॉ. खून एवं पेशाब जाँच करने ले गए थे। रिपोर्ट दोपहर में लेकर आए। तब तक आहार में गन्ने का रस दिया जा चुका था। जाँच में उनकी शुगर 870 आई। सुनते ही आचार्य श्री सकते में आ गए। सुनते ही कई डॉक्टर मुनि श्री के पास आ पहुँचे। पर सभी अवश थे। कुछ नहीं कर पाए।

ऐसी स्थिति में भी उनका होश बना हुआ था। आचार्य श्री ने शाम को उनको लघु प्रतिक्रमण करवाया। गुरुजनों से परोक्ष रूप से क्षमा मंगवाई व उन्हें यम सल्लेखना दे दी। वे समता व सरलता से सब कुछ करते रहे। शारीरिक पीड़ा व्याकुलता की रेखा अपने चेहरे पर नहीं उभरने दी। तभी विशुद्धसागरजी के पास से आए ब्रह्मचारी ने उनसे आचार्य सुनीलसागरजी से भी क्षमा माँगने को कहा।

उनकी चेतना जाग्रत थी। लेटे हुए ही वात्सल्य भाव से दोनों हाथों से पिच्छी लेकर हाथ जोड़कर उनसे मौन क्षमा माँगी। आचार्य श्री उनको नियम पूर्वक सामायिक कराने लगे। वे आत्मचिंतन में डूब गए। आचार्य श्री उनके पास ही बैठे रहे। एक पल को भी वहाँ से नहीं हटे। मुनि श्री की अस्वस्थता की खबर चारों तरफ फैल गई। अरिहंत नगर से मुनि श्री सच्चिदानंदजी भी आ गए। दोनों ने उन्हें संभाला, संबोधा, णमोकार महामंत्र सुनाने लगे। सुनते-सुनते ही उनका उर्ध्वश्वांस चालू हो गया। कई डॉक्टरों व सैकड़ों श्रावकों की उपस्थिति में णमोकार सुनते-सुनते चैतन्य अवस्था में अत्यंत शांत भाव से उन्होंने देह त्याग दी। सुनकर श्रावक दौड़े चले आए। आचार्य श्री ने रातभर उस निश्चल देह के पास बिताई। श्रावकगण आते-जाते रहे। णमोकार मंत्र रात भर उनके पास चलता रहा।

उनकी समाधि की खबर सुन आसपास के कई क्षेत्रों से श्रावकों का सैलाब उमड़ पड़ा। अधिकांश जगहों में तो वे विहार करके ही आए थे अतः श्रावकगण उनकी सरलता, शांत स्वभाव व साधना से काफी प्रभावित थे। अंततः 9 अप्रैल प्रातः 8.30 बजे हजारों श्रावकों की साक्षी में उनकी देह मंदिर प्रांगण में ही चिता को समर्पित कर दी गई।

10 अप्रैल को आपका विहार बालूज की ओर हो गया। आप अकेले थे अतः मुनि श्री सच्चिदानंदजी आपके साथ हो गए। दस दिनी प्रवास के बाद छावनी होते हुए 9 मई को अरहंत नगर पहुँचे। इसके पूर्व 25 अप्रैल से 5 मई तक शिवाजी नगर रुके। आर्यिका राजश्री माताजी की सल्लेखना जारी हो जाने से आप राजा बाजार पहुँचे। 7 मई को उनकी समाधि हो गई।

9 मई को आचार्य श्री सुनीलसागरजी व 13 को आचार्य श्री गुप्तिनंदीजी ससंघ अरहंत नगर पहुँचे। 5 दिन दोनों संघ साथ रहे फिर आचार्य गुप्तिनंदीजी 18 मई को वहाँ सोलह दिवसीय शांति विधान प्रारंभ करवा कर कचनेर चले गए। जबकि आचार्य सुनीलसागरजी ने पूरे समय सान्निध्य प्रदान किया। 1 जून से 3 जून तक आयोजित दक्षिण भारतीय पाठशाला शिक्षक प्रशिक्षण शिविर में भी आपने सान्निध्य प्रदान किया। यहाँ से 4 जून को आप कचनेर पहुँचे।

अडूल चातुर्मास 2007

7 जून को आप कचनेर से अडूल पहुँचे। श्रावकों की भक्ति व आग्रह से अभिभूत आपके अडूल में चातुर्मास करने का योग बन गया। आपके आचार्य पद ग्रहण के बाद यह पहला चातुर्मास था। यहाँ अच्छी धर्म प्रभावना की, अनेक धार्मिक कार्यक्रमों का आयोजन हुआ। स्वाध्याय व वाचना में श्रावकों ने बड़ी तादाद में हिस्सा लिया।

आपने बड़े आत्मविश्वास के साथ अपना जवानी का सारा जोश होशपूर्वक आत्मसाधना में लगा दिया। चारों युवा मुनि श्री द्वारा अपनी विद्वता, उदारता व रचनात्मक कार्यों द्वारा समाज कल्याण में स्वयं को खपा देने के कारण चारों ओर आपकी यशकीर्ति पताका फहराने लगी। हर किसी के मुँह से यही निकलता साधु हो तो आचार्य श्री सुनीलसागरजी जैसा। दूर-दूर से लोग उनके दर्शनार्थ आते रहे।

ब्र. हुकुमचंद भैया उनसे इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने आचर्यश्री से 21 नवंबर को क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण कर ली। उनका नाम क्षुल्लक सुयोगसागर रखा गया। यह आपके द्वारा दी गई प्रथम दीक्षा थी।

अडूल वासी आपसे इतने अधिक अभिभूत थे कि उन्होंने अपने यहाँ नवनिर्मित हो रहे जिन मंदिर की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा आपसे ही करवाने का निर्णय लिया। आपने स्वीकृति दे दी। बड़े ठाठ-बाट से 24 से 28 फरवरी तक आपके सान्निध्य में प्राण प्रतिष्ठा का कार्यक्रम संपन्न हुआ।

पूरे चातुर्मास के दौरान आप गुरुवर सन्मतिसागरजी के बारे में छोटी से लेकर बड़ी बातें ज्ञात करते रहे। उनके व्रत उपवास, आहार चर्या, पारणा, मंडल विधान, उनके द्वारा दी गई दीक्षाएँ, समाधि, साधुओं के केशलोंच से लेकर उनके स्वास्थ्य की हर जानकारी वे पूरे चातुर्मास में प्राप्त करते रहे। वे अपने यहाँ से श्रावकों को उनके दर्शनार्थ भी भेजते रहते थे जिनसे आँखों देखी गुरुदेव की कुशलक्षेम ज्ञात हो जाती थी। उन्हें अपने गुरुवर के स्वास्थ्य की चिंता हमेशा रहती। श्रावकों के माध्यम से वे थोड़े-थोड़े समय के अंतराल में अपना नमन संदेशा भेजते रहते।

वात्सल्य पूरित गुरु भी उन्हें हर आने-जाने वाले के साथ आशीर्वाद भेजते। उनकी खोज खबर लेते रहते व पूछते रहते कि उन्हें कोई परेशानी तो नहीं। चातुर्मास अच्छे से हो रहा है कि नहीं आदि आदि। और कह देते कि ''आचार्य सुनीलसागरजी तो इतने सुयोग्य, व्यवहारकुशल, विनयशील, मृदुल परिणामी व मृदुभाषी हैं कि उन्होंने अपना चातुर्मास अभूतपूर्व बना लिया होगा। वे बहुत योग्य हैं।'' ऐसा वे अक्सर कहा करते थे। वे यह भी कहते कि ''उन्हें कहीं कोई कठिनाई महसूस नहीं होती है अपितु वे तो दूसरों की कठिनाइयों को ही हल किया करते हैं।''

सचमुच युवाचार्य के चरण रखते ही अडूल में मधु मास छा गया था, बहारें आ गई थीं। चारों ओर धर्म की वासंती बयार बहने लगी थी। लोगों के मनों से पाप कषायों के पीले पात झड़ रहे थे और शुभ विचारों व शुभ भावनाओं की कोपलें फूटने लगी थीं। गुरु भक्त व गुरु भक्ति में तल्लीन भक्तों का हृदय आम्र वृक्षों सा बौरा गया था। धार्मिक आयोजनों

के बहुरंगी बिखरे पुष्पों ने चातुर्मास के बसंत की शोभा कई गुना बढ़ा दी थी। सारा वातावरण गुरुमय हो गया था।

पंचकल्याणक में आसपास के कई जगह से लोग आए थे। हर कोई अपने यहाँ युवाचार्य को ले जाने के लिए श्रीफल अर्पित करते। अनुनय विनय व आग्रहपूर्वक उन्हें आमंत्रित करते।

-सूर्य जितना धीरे-धीरे ऊपर चढ़ता है फिर उतना ही ज्यादा चमकता है। बस वैसे ही आचार्यश्री की छोटे से गाँव अडूल से चातुर्मास का शुभारंभ स्थायी कार्य कर गया।

-निस्पृहता का प्रतीक जब जहाँ जैसा स्थान प्रदान किया जाए, कभी कोई याचना या शिकायत नहीं। वहाँ बहुत ज्यादा मच्छरों का उपद्रव था, पर किसी श्रावक से कभी कुछ न कहना।

-साधना व स्वाध्याय का प्रभाव बच्चे-बच्चे पर, पूरे गाँव में जैन-अजैन में रहा।

-अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी अध्यात्म योगी पूज्यश्री को एक बार भयंकर सिरदर्द के साथ एकदम चक्कर आ गया। बेहोश हो गए। जैसे ही थोड़ा होश आया कि यही चिंतन चल रहा था- 'मैं ज्ञानानंद स्वभावी हूँ।' सतत आत्मलक्ष्यी निर्मल सहज साधना आपके लिए प्रभावना की भूमिका तैयार कर रही थी।

-आचार्य पद में प्रथम चातुर्मास की विशेष उपलब्धि यही रही कि उस छोटे से गाँव से सबसे अधिक बाल ब्रह्मचारिणी बेटियाँ आज पूज्यश्री के संघ में आर्यिका माताजी एवं प्रतिमा व्रतों के साथ गुरु शरण में साधनारत है।

अंततः अपने साथ चातुर्मास कर रहे मुनि श्री सच्चिदानंदजी को विदा कर क्षुल्लकजी के साथ आपने पाचोड़ के लिए विहार कर दिया। विश्व कल्याण की भावना लिए वे धरती की धूल, कांटों, भाटों, राह में पड़ते नदी-नालों, झीलों, सरोवरों, वन, उपवन, पहाड़, पठार, पशु-पक्षी, समस्त त्रस-स्थावरों को अशीषते उनके कल्याण की मंगल भावना भाते पथ पर चलते अगले पड़ाव की ओर अग्रसर थे।

नापता वामन डगों से धरा की चारों दिशा
आत्मरस की मधुर बूंदे बांटता पथिक चला
विरक्ति की शुभ्रता ले मुक्तिकामी चल पड़ा
कर दिया बौना अगर बाधा बना मेरू खड़ा

वे छोटे-बड़े पहाड़, वे पेड़-पौधे मौन-मौन उन्हें पुनः पधारने का मानो निमंत्रण दे रहे थे। और उनसे अपनी मौन मूक व्यथा भी कहते जा रहे थे। हे तपस्वी! जब तुम अगली बार आओगे, क्या पता हम अपने भाव चक्षु से तुम्हें निहार पाए या नहीं। या तब तक हममें से ना जाने कौन-कौन मानव की सुख-सुविधा के लिए की जा रही किसी विकास यात्रा की बलि चढ़ चुके होंगे।

मुनि श्री ने अपने पद विहार में देखा कि जगह-जगह विशाल पेड़ कटे हुए धराशायी पड़े थे। वे तो संत थे, साधारण आदमी भी यदि सड़क निर्माण या सड़क चौड़ीकरण के नाम पर हुई उनकी दुर्दशा देख ले तो उसका दिल रो उठे। पर्यावरण को तहस-नहस करते स्वार्थी मानव के हाथों कटे पड़े वृक्षों को देख युवाचार्य का हृदय बार-बार द्रवित हो उठता था। पहाड़ों के सीने पर पड़ते कुदाल के प्रहारों से उनका मन विह्वल हो जाता। कहीं पहाड़ खोदकर तो कहीं चट्टानों को डाइनामाइट से उड़ा उनके सीने चीर सड़कें बना दी गई थीं। बदहाल होती प्रकृति को वे अपने पद विहार में जितने करीब से देख रहे थे और व्यथा को अनुभव कर रहे थे, रेल, मोटर या हवाई सफर करने वाला क्या उतने करीब से उतनी आत्मीयता से क्या उन्हें देख पाएगा? क्या उसकी संवेदनाएँ पिघलेंगी? नहीं। सिर्फ पदविहारी संतों को छोड़ सांसारिक व्यामोह में पड़े संसारी लोगों के पास इतना वक्त कहाँ? जब वृद्ध माता-पिता की पीड़ा सुनने उनके पास समय नहीं तब इन पेड़-पौधों की रुककर कौन व्यथा सुनेगा?

पद संचलन करते संतश्री सोचते जा रहे थे कि रे स्वार्थी आदमी! आज प्रकृति व पर्यावरण को जो तू यों क्षत-विक्षत

कर रहा है। इन विशाल घने वृक्षों को जमींदोज करते तेरा ह्रदय नहीं कांप रहा है। एक दिन इनके अभाव में प्राणवायु बिना तू तड़प-तपड़ कर मर जाएगा। प्रचंड ग्रीष्म में यदि तेरी चमचमाती कार बिगड़ गई तब ए.सी. में रहने वाले मनुष्य। आग उगलती धरती व अंगारे बरसाते आकाश तले लू-लपटों से घिरा, तुझे कहीं पनाह नहीं मिलेगी। और यदि मूसलाधार बारिश हुई तो पहाड़ों की बहती मिट्टी, टूटती चट्टानें जो कहर बरसाएँगी वह दासतां वचनों से परे है।

अंतर्द्वंद्व लिए उन एकेंद्रिय स्थावर जीवों पर रास्ते भर उनकी करुणा बरसती रही। प्रकृति के प्रति ह्रदय में करुणा और आँखों में करुणा जल लिए पद विहार करते आगे बढ़ते जा रहे थे।

2008- सोलापुर की ओर

1. गेवरई : मई 2008 में आचार्य श्री का सोलापुर की तरफ अडूल से विहार हो रहा था। रास्ते में गेवरई (महावीर नगर) में आचार्य श्री मानस्तंभ के दर्शन कर रहे थे। इतने में आचार्य सूर्यसागरजी भी विहार करते हुए वहाँ आ पहुँचे। वे आचार्य श्री से पद में व उम्र में बड़े थे। जैसे ही आचार्य श्री सुनीलसागरजी मानस्तंभ के दर्शन कर खड़े हुए तभी आचार्य श्री सूर्यसागरजी ने आचार्य श्री सुनीलसागरजी को साष्टांग नमस्कार किया।

आचार्य सुनीलसागरजी ने कहा, ''आप यह क्या कर रहे हैं? आप तो हमसे बड़े हैं। नमस्कार तो हमें आपको करना चाहिए।''

इस पर आचार्य सूर्यसागरजी बोले, ''आप आचार्य श्री के प्रिय व विलक्षण प्रतिभावान शिष्य हैं। आपकी विद्वत्ता के नगाड़े चारों ओर बज रहे हैं। आज नहीं तो कल, आपको नमस्कार तो करना ही है, अतः आज से ही क्यों न शुरुआत कर दें क्योंकि आचार्य श्री सन्मतिसागरजी की गद्दी के मालिक आप ही हैं, इसमें किसी को कोई शंका नहीं।''

आचार्य श्री सूर्यसागरजी की भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हुई और आचार्य श्री सुनीलसागरजी को ही पट्टाचार्य पद पर पदासीन किया गया।

आचार्यश्री सूर्यसागरजी ने आचार्यश्री सुनीलसागरजी से बात-बात में कहा कि आप सोलापुर तरफ न जाएँ तो अच्छा रहेगा, वहाँ कोई रोटी को भी नहीं पूछता।

आचार्यश्री उस समय कुछ न बोले। उनकी आत्मविश्वास भरी स्मित मुस्कान मानो कह रही हो कि देखो, आगे क्या होता है।

युवाचार्य श्री सुनीलसागरजी को अपने दर्शन, ज्ञान व चारित्र की सम्यकता पर दृढ़ विश्वास था और इसी विश्वास के बल पर उन्होने इस सोच के साथ इस चुनौती को भी स्वीकार कर लिया कि जहाँ श्रमण संस्कृति व गुरु परम्परा की प्रभावना की जरूरत है वहीं कदम बढ़ाना है। आचार्यश्री का सार्थक रूप से समाज को लाभान्वित करना ही अब लक्ष्य बन गया था।

इसका सुफल शीघ्र ही नजर आया। सोलापुर में तो रोटी खिलाने लाइन लगी ही सही, आचार्यश्री की ऐसी प्रभावना रही कि कट्टरपंथी भी पानी-पानी हो गए व श्रवणबेलगोला की हजारों कि.मी. लम्बी यात्रा करवाकर आहार चर्या संपन्न करवाई।

2. बीड़ : बीड़ में क्षुल्लक अतुलसागरजी गोमटेश्वर से चारूकीर्तिजी भट्टारक का सूचना संदेश लेकर विद्युतलताजी सोलापुर के पास आए कि आचार्य श्री सुनीलसागरजी महाराज अच्छे श्रुतज्ञानी, संस्कृत व प्राकृत भाषा के प्रकांड विद्वान, अध्यात्म पुरुष, आगम चर्यानुकूल आचरण वाले संत हैं। आप उनका लाभ लेने उनका चातुर्मास सोलापुर में करवा धर्म प्रभावना करें।

आचार्य श्री को अपने गुरु से अलग विहार करते अभी ज्यादा समय नहीं हुआ था। मात्र एक वर्ष पश्चात अब अकेले

दूसरा चातुर्मास होने वाला था। सोलापुर समाज उनसे वर्षायोग प्राप्ति की याचना करने आए और भट्टारक श्री चारूकीर्तिजी स्वामी का संदेश सुनाते हुए सोलापुर चातुर्मास करने के लिए अनुनय विनय की।

आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने तो कभी भट्टारकजी से तत्त्वचर्चा की ही नहीं फिर उन्हें श्री सुनीलसागरजी के बारे में इतना अधिक कैसे पता? सोचकर उनको आश्चर्य हुआ।

ज्ञानी गुणी की कीर्ति तो पुष्प सुरभि की तरह अपने आप दिग् दिगन्तों को महका देती है। विद्वानों की तो हर कहीं पूजा होती। उक्ति सत्य है।

''स्वदेशे पूज्यते राजा, विद्वान् सर्वत्र पूज्यते।''

सोलापुर चातुर्मास 2008

अडूल 2007 का चातुर्मास समाप्त कर आचार्य श्री महाराष्ट्र के गाँव नगर, बस्ती डगर, वन उपवन, पहाड़-पठार, नदी-नाले पार करते अपनी जीवन यात्रा व पद यात्रा साथ-साथ कर रहे थे। आपने रास्ते में देखा व अनुभव किया कि हमारी महान संस्कृति के गौरवपूर्ण पृष्ठ अतीत बन इतिहास में खोते जा रहे थे। लोक मंगल व आत्म मंगल की भावना लिए उनके बढ़ते कदम जब तक ठिठक जाते। उन्होंने देखा कि हमारे लोक मंगलकारी कई सांस्कृतिक अनुष्ठान हेय व अप्रासंगिक हो गए हैं। जीवन मूल्यों का आलोक धुंधलाता चला जा रहा है।

वे सुप्त प्राय धार्मिक, सांस्कृतिक व सामाजिक चेतना जागृत करते, सम्यक जीवन दृष्टि देते लोकमानस में बौद्धिक सामंजस्य पैदा करते पद विहार कर रहे थे। आपने हर कदम पर पश्चिमीकरण के उन्माद की आहट सुनी जिसके प्रभाव में हमारे आदर्श, आस्था, श्रद्धा व जीवन मूल्यों के किले ध्वस्त होते जा रहे हैं। कुकुरमुत्ते की तरह 'मौत के नाम पर मुआवजे' की संस्कृति के आ जाने से होती जा रही जीवन की मूल्यहीनता से आप विचलित हो जाते। बचपन की मासूमियत को धूर्त हाथों चालाकी से छिनता देख आपकी कसमसाहट बढ़ जाती।

अब आपके लिए देश का हर नगर-डगर, बस्ती- गाँव सब एक जैसे थे। दिगम्बर संत की मर्यादा में रहते आप कभी टूटी झोपड़ी में, तो कभी जंगल में खंडहरनुमा भवन में, कभी बिना खिड़की- दरवाजों के स्कूल में तो कभी अच्छी धर्मशालाओं में ठहरते आत्महित व लोकहित साधना करते पथ पर बढ़ते जा रहे थे। आपके लिए यह सामाजिक विखंडन एक विचारणीय प्रश्न बन गया। आपने सोचा 'अप्प दीपो भव'। अपनी आत्मा को दीपक बनाए बिना विश्व कल्याण नहीं हो सकता। दीप से ही दीप जलता है। ज्ञान के प्रकाश से ही आचरण सुधरता व संवरता है? आपने आलोक की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती की साधना के माध्यम से अपने प्रवचनों व उपदेशों द्वारा 'एक प्रार्थना प्रकाश के लिए' द्वारा जनमानस को चैतन्य करने, मानव जीवन को सहज व सरल बनाने तथा उत्कृष्ट मूल्यों की प्रतिस्थापना का अभियान छेड़ दिया।

आपने अपने मंगल विहार में विभिन्न प्रांतों, जगहों, स्थानों की भिन्न-भिन्न बोलियों, खान-पान, वेशभूषा, रीति- रिवाज, परंपराओं आदि आदि के माध्यम से भारतीय संस्कृति में अनेकता में एकता की विष्णु सी विराटता के दिग्दर्शन किए। कहीं आपने वृक्षों पर चहकते पंछियों के बसेरे देखे तो कहीं सन्नाटे भरते अनमने उदास जंगल। कहीं पवित्र नदियों के देवत्व की आस्था में डुबकी लगाता जन सैलाब देखा तो कहीं मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारों, प्रार्थना घर में आरती, अजानों, गुरु शबदवाणी व प्रार्थना के पवित्र स्वर सुने। कहीं आपने हमारा पुरातात्विक वैभव देखा तो कहीं लोक नृत्यों व लोकगीतों में व्याप्त हमारी जीवंतता देखी।

जिस धागे से हमारी अनेकता में एकता की संस्कृति बंधी है वह धागा हमारी आस्था और विश्वास का धागा है, मर्यादा व प्रेम का धागा है, पुलक व प्रसन्नता का धागा है, सुरक्षा के संकल्प का धागा है, हमारी सांस्कृतिक विरासत के

वितान का ताना- बाना है। किंतु आज वैश्वीकरण की स्वार्थी चालबाजियाँ या तो इस धागे को तोड़ने की कुचेष्टाएँ कर रही हैं या अपने देशों के नकली धागे पतंग के मंजे की डोर के रूप में भेज हमारे गले काटने के कुत्सित प्रयासों में लगी है। हमारी आध्यात्मिक, दया, प्रेम व करुणामयी संस्कृति पर यांत्रिक संस्कृति हावी होती जा रही है और दिशाहीन नई पीढ़ी तैयार हो रही है। दीवाली का दीप पाहुना की तरह हमारे संस्कार व संवेदनाएँ पाहुने बनते जा रहे हैं।

मुनि श्री ने हमारी सांस्कृतिक विरासत के ह्रास (विघटन) को बहुत करीब से देखा। उनका अपनी हर रचनात्मक गतिविधि द्वारा यही प्रयास रहा कि वे हमारी रीती होती जा रही जीवन गगरिया को जीवन मूल्यों के निर्मल जल से आपूरित कर दे। वे सतत प्रयत्नशील रहे कि माल (शॉपिंग कॉम्प्लेक्स) माफिया व मुआवजा संस्कृति ईमानदारी, प्रेम, सदाचार व सत्यनिष्ठा, अहिंसा, अचौर्य व अपरिग्रह के सिद्धांतों से हतोत्साहित हो।

आचार्य श्री लोगों को समझाते चले कि धर्म होगा तो ही धार्मिकता आएगी और धार्मिकता से जीवन सरल व सामंजस्यपूर्ण बन सकेगा। मुनि श्री वैश्वीकरण, शहरीकरण, औद्योगिकीकरण, यंत्रीकरण के चोर जो हमारी सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, आर्थिक जीवन की गठरी के पीछे पड़े हैं, वे अपनी आगमोक्त वाणी से हमारा इन चोरों से पीछा छुड़ा रहे हैं। इस प्रकार आचार्य श्री ने पदविहार से लोक जीवन की दुखती नस को पकड़ा है और अपनी सात्विक वाणी से समाज का उपचार करते एक स्थान से दूसरे स्थान पर जा रहे हैं।

एक जगह से दूसरी, दूसरी से तीसरी जगह भयंकर सर्दी व भीषण गर्मी व वर्षा का परिषह सहते वे पद विहार कर, जाते रहे। अंततः महाराजजी ने सोलापुर में चातुर्मास करने का समाज का आग्रह स्वीकार कर लिया।

जुलाई सन् 2008 आषाढ़ शुक्ल चौदस को विशाल जनसमूह के बीच सोलापुर के श्री स्वयंभू पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन कासार मंदिर में चातुर्मास कलश स्थापना की गई।

यहाँ आपने कुछ अलग माहौल देखा। जहाँ तक श्रावकगण साधुओं के प्रति समर्पित थे तो कुछ पर कट्टरवाद का पानी चढ़ा हुआ था। सैद्धांतिक व आध्यात्मिक स्वाध्याय करने वाला समाज अपने को प्रकांड आत्मज्ञानी मानता था। कतिपय बुद्धिजीवी मुमुक्षु अपनी भगवान आत्मा के सिवा किसी को कुछ नहीं समझते थे। समाजजन ज्ञान की बातें तो करते किंतु चारित्र की नहीं।

आचार्य श्री को पहले से ही कुछ समझदार हितचिंतकों ने सोलापुर की स्थिति के बारे में बता वहाँ चातुर्मास न करने का आग्रह भी किया था। आचार्य श्री ने कहा, ''जो भ्रमित है उनका भ्रम तोड़ सही मार्ग दिखाना मेरा कर्तव्य है। जो ज्ञानी तो है किंतु ज्ञान का सही उपयोग नहीं कर रहे हैं, उस ज्ञान को आचरण में नहीं उतार रहे हैं। मैं उन्हें भी उन्हीं के ज्ञान से सच्चा पुरुषार्थ करने का प्रयत्न करना समझाऊँगा/सिखाऊँगा। आचार्य श्री ने भी ठान लिया कि अब चातुर्मास तो सोलापुर में ही होगा।

एक ओर युवा जोश व उत्साह से भरे तथा दूसरी ओर महा तपस्वी आचार्य गुरु श्री सन्मतिसागरजी के मार्गदर्शन में प्राप्त ज्ञान ने उनके आत्मविश्वास में दृढ़ता ला दी थी। चातुर्मास कलश स्थापना के माध्यम से आपने कट्टर पंथवाद के गढ़ में निर्भीक हो प्रवेश किया।

आध्यात्मयोगी, चतुरानुयोगों में निष्णात, ज्ञानोपयोगी, कुशलवक्ता आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने कलश स्थापना के दूसरे दिन से ही अपनी धीर, गंभीर व शीतल वाणी में समाजजन को प्रवचनसार का जीवंत स्वरूप बड़ी सरल भाषा में बताना शुरू किया। प्रवचनसार पर इतना बोधवर्द्धक, सुरोच्य व गहन गंभीर प्रवचनों के बारे में सुन कट्टरपंथियों में खलबली मच गई। शुरू-शुरू में वे स्वाध्यायी ज्ञानी पंडित कहाए जाने वाले लोग छुप-छुप कर आचार्य श्री के प्रवचन सुनते थे। उनकी मनसा थी कि प्रवचनसार जैसे गूढ़ गहन ग्रंथ का उनको क्या ज्ञान होगा? जरा भी चूके कि बस... फिर तो उनकी कमी हमारे हाथ आ जाएगी। किंतु प्रवचनसार पर आचार्य श्री की मजबूत पकड़ है, वे प्रवचनसार की

मात्र वाचना नहीं करते, उसे जीवन में भी उतारते हैं यह जान कट्टरपंथी भी शुरू-शुरू में उनकी परीक्षा लेने के बहाने आते थे, लेकिन दूसरे दिन अपने साथ दस और साथियों को लाते थे। आचार्य श्री के मुखारबिंद से प्रवचनसार की व्याख्या सुन उनकी आँखें खुल गई। वे आचार्य श्री से विविध प्रश्न पूछते। उनके सटीक उत्तर पा वे गदगद हो जाते। आचार्य श्री के ज्ञानालोक के आगे उनका ज्ञान फीका पड़ने लगा। अब तो वे शंका समाधान के माध्यम से अपनी ज्ञान पिपासा शांत करने लगे। अपने कोमल हृदय, करुणा व मृदुवाणी से आचार्य श्री ने उन सबका हृदय जीत लिया। अब वे आचार्य श्री के ज्ञान के कायल हो उनके परम भक्त बन गए। उन्हें पटरी पर लाने के लिए आचार्य श्री ने कठिन पुरुषार्थ किया। अंततः आचार्य श्री के दर्शन, ज्ञान व चारित्र की सम्यक्त्वता से प्रभावित हो वे कहने लगे आचार्य श्री ने हमारे ज्ञानचक्षु खोल दिये। हमारा मतिभ्रम तोड़ दिया। हमें सही व सच्चा रास्ता दिखा दिया। ऐसे गुरु का चरण सान्निध्य पा उनकी विचारधारा तो क्या भावधारा व भवधारा सुधर गई।

आचार्य श्री सुनीलसागरजी के दर्शन, ज्ञान व चारित्र की सम्यकता का सोलापुरवासियों पर ऐसा जादू चला कि सोलापुर का जैन समाज आचार्य श्री सुनीलसागरमय हो गया। उनके ज्ञान के अतलांतों को छू लेने वाली हिलोरों में सब निमज्जित हो गए। अंततोगत्वा उनके शांत व मृदु स्वभाव, मधुरवाणी व श्रुत मंथन से प्राप्त अथाह ज्ञान के नवनीत को बाँटने की कला के आगे वे सारे के सारे लोग नतमस्तक थे जिनके शीश कभी गुरु चरणों में झुकने को तैयार न थे/सकुचाते थे।

निःसंदेह आचार्य श्री को समाज को पटरी पर लाने के लिए काफी मशक्कत करनी पड़ी, पर उन्होंने हार नहीं मानी। वे लगे रहे। इसके साथ ही विभिन्न धार्मिक आयोजनों द्वारा भी धर्म प्रभावना की। समाज में बच्चों, युवाओं में धार्मिक संस्कार डाले। उन्होंने विभिन्न धार्मिक शिक्षण शिविरों के माध्यम से बच्चों में धर्म की मूल बातों के संस्कारों का बीजारोपण किया। श्रावक संस्कार शिविरों द्वारा श्रावकों को भी जिनागम की बातों से अगवत करा श्रावकाचार के पाठ पढ़ाए। जिससे जितना बन पड़ा उसने उनसे ग्रहण कर अपने को कृतार्थ किया। यहाँ आपकी प्रेरणा से विभिन्न विधान मंडलों के माध्यम से समाज में जयंति, दीक्षा स्मृति दिवस व पुण्यतिथि महोत्सवों के माध्यम से जन-जन को इन महापुरुषों, आचार्यों की विद्वता, तपस्या, धर्म प्रभावना के बारे में बताकर समाज के प्रति दिए गए इनके अवदानों व उपकारों के प्रति कृतज्ञता प्रगट की।

इस प्रकार युवाचार्य ने अपने व्यक्तित्व के प्रभाव से सिद्ध कर दिया कि उनमें मनुष्यों के मनोभावों, परिस्थितियों व उनके अंतर्द्वंद्व व बाह्यद्वंद्व को समझने- परखने की अद्‌भुत क्षमता है व उसे शांति व बुद्धिमानी से सुलझाने की कुशलता भी है।

* * *

सोलापुर चातुर्मास 2008 में नगर भ्रमण करते हुए एक गोशाला में पहुँचे। जीवों के प्रति आपके हृदय में करुणा का सैलाब उमड़ पड़ा। ये वे गायें थी जो आचार्य श्री की प्रेरणा से कत्लखाने पहुँचने से पूर्व ट्रकों को रोककर बचा ली गई थी। वे मूक गायें अपनी आँखों से झरते आँसुओं से अपने पशु जीवन के दुःखों की दर्दभरी दासता बता रही थी। इन अबोली गायों को देख आचार्य श्री का हृदय विह्वल हो गया और पशु जाति की पीड़ा याद कर आँखें छलछला आई।

गौशाला के बाहर विशाल जन समुदाय के बीच 'पशुदया' करुणा व अहिंसा पर आपका मार्मिक प्रवचन हुआ। आपका प्रवचन सुन भगवान महावीर की करुणा याद आ गई। पशु बलि रुकवाने की उनकी बात याद दिलाते हुए आपने गोमाता की रक्षा की प्रेरणा दी। पशुओं के प्रति आपके हृदय से वात्सल्य का झरना छल-छला पड़ा। आपने अपनी पिच्छी का एक पंख निकाल कर दिया। 'गोरक्षा' के नाम पर उसकी बोली लगाई गई जो उस समय 35000/- रुपए में

शशिकांत मोहरे द्वारा ली गई। बोली की वह राशि गोशाला में अभय दान पाई गायों के लिए दे दी गई।

युवा ऊर्जा से सराबोर आचार्य श्री के हृदय में मूक प्राणियों के प्रति प्रारंभ से ही दया, प्रेम, वात्सल्य, करुणा कूट-कूट कर भरी थी, जो पद विहार में अवसर पाते ही फूट पड़ती। जीवों की रक्षा के लिए वे अपनी मुनि पद की मर्यादा में रहकर हर संभव प्रयत्न करते, समाज को प्रेरित करते रहते। इस प्रकार के मूक जीवों के लिए मसीहा के रूप में अवतरित हुए है।

2008 का आपका अध्यात्म नगरी सोलापुर (महाराष्ट्र) का चातुर्मास महती धर्म प्रभावना करते हुए अभूतपूर्व व ऐतिहासिक रहा। जहाँ श्रावकों ने आपसे श्रावकाचार का पाठ पढ़ा वहीं मुमुक्षु आत्मज्ञानी मंडल ने आपकी कड़ी परीक्षा ली। उन्हें युवाचार्य मुनि के ज्ञान का अंदाजा नहीं था। वे सोचते थे कि वे ऐसे ही मुनि बन गए होंगे। जब इन युवा संत मनस्वी ने समयसार की वाचना शुरू कर तत्त्वमयी प्रवचन शुरू किया तो पहले तो वे छुप-छुपकर आचार्य श्री का प्रवचन सुनते। किंतु जब आचार्य श्री की मधुरवाणी, मृदुल व्यवहार प्राणी मात्र के प्रति अथाह वात्सल्य पूर्ण प्रवचन सुना तब उनका अहं कहाँ विगलित हो गया, पता ही नहीं। आचार्य श्री ने उन्हें उन्हीं के ज्ञान बोध से समयसार को जीवन में उतारने व आचरित करने के लिए प्रेरित किया व कहा कि बिना चारित्र के ज्ञान गूंगा है। व्यर्थ है! उनके बंद पड़े नयन व हृदय पट खुल गए। नतमस्तक हो वे आचार्य श्री के परम भक्त बन गए।

सोलापुर चातुर्मास में उन्हें बार-बार अपने गुरु महाराज के वचनामृत याद आ रहे थे। नवदीक्षित युवा मुनि में कठोर संयम साधना के लिए समुद्र की उत्ताल तरंगों सा उत्साह उमड़-उमड़ पड़ता। दीक्षा के तुरंत बाद वे बार-बार अपने एक-दो साथी साधुओं के साथ गुरुवर से उपवास के व्रत की याचना करते रहते। पर आचार्य श्री आपको अक्सर यही कहते, अभी तुम युवा हो। वैसे ही मुनि के अट्ठाइस मूलगुणों की इतनी कठोर साधना है कि अलग से उपवास की जरूरत नहीं। और सुनीलसागर आपको बार-बार/ अक्सर आए दिन अंतराय आते रहते हैं, जो उपवास से भी कड़ी संयम साधना है। उपवास से शरीर क्षीण होता है, सुनीलसागर तुम्हें ज्ञानाराधना की कठिन तपस्या करना है। तुममें कठिन विषय को भी समझने व कंठस्थ कर लेने की विलक्षण प्रतिभा व मेधा शक्ति है। अतः तुम अभी उपवास नहीं ज्ञानाराधना व ज्ञान साधना करो। इस ज्ञान के बल से तुम भविष्य में अपना उद्धार व समाज का बहुत बड़ा उपकार कर सकोगे। बिना अध्ययन किए उद्धार नहीं। तब मुनि सुनीलसागर ने गुरु आज्ञा शिरोधार्य की।

युवाचार्य की आँखों के सामने चित्रपट की तरह वे दृश्य तैरने लगे। युवा मुनि सुनीलसागर अधिकांश समय ज्ञानाभ्यास में बिताने लगे। घंटों वे शास्त्रों का गूढ़ गहन अध्ययन करते। आचार्य श्री भी पढ़ाते, वे स्वयं भी पढ़े हुए का मनन- चिंतन, मंथन करते। गुरुवर से चर्चा करते, शंका समाधान करते, गाथाएँ कंठस्थ करते। गुरुभाइयों से भी ज्ञान की चर्चा करते। जितना हो सके अपना ज्ञान पुष्ट कर आत्मसात करते। इसी का सुफल है कि वे कालान्तर में संस्कृताचार्य, प्राकृताचार्य, साहित्यकार, रचनाकार बन गए और उन्होंने करीब अर्धशतक महान ग्रंथों की रचना कर डाली। आज उन्हें अपने कई महान आचार्यों के ग्रंथों की गाथाएँ कंठस्थ हैं। गुरु प्रेरणा व आशीर्वाद से की गई वह ज्ञानार्जन की कठिन साधना रंग ला रही थी। मंत्र तुल्य गुरुवाणी बार-बार उनके कानों में गूंज रही थी। ''यह ज्ञान तुम्हें एक दिन ऐसा प्रकाश स्तंभ बना देगा जो भटकती व भ्रमित मानवता को दिशा बोध दे उसकी दशा बदल देगा।

एक श्रेष्ठ पिता जिस तरह अपनी संतति के पूर्ण विकास के लिए साधना करता है, मार्गदर्शन देता है वैसे ही आचार्य श्री भी अपने आत्म पुरुषार्थ की कड़ी साधना का आलम्बन ले भव्यों का मार्गदर्शन करने लगे। उनकी मनोवृत्तियों को बदल मनोग्रंथियों पर पड़ी कषायों की, अज्ञान की गांठें खोलने लगे- लेकिन धीरज से, बिना विचलित हुए विवेक बुद्धि से। अंततः साधना सफल हुई। गठानें ढीली हुई, खुली और कई मुमुक्षु वास्तविक मुमुक्षु बन मुक्तिपथ पर चल पड़े।

युवाचार्य के लिए अपने आत्म निरीक्षण, आत्मविश्वास व आत्मशक्ति तौलने की यह चुनौती थी जिसे उन्होंने सहर्ष,

सहज व सरलता से स्वीकारा व साधा व सफल हुए। सोलापुर में उनके ज्ञान, ध्यान, आत्म साधना व रत्नत्रय की यह पहली कड़ी परीक्षा थी जिसे आपने ईर्यापथ पर चलते हुए धीरता से पास किया। अप्रतिम सफलता प्राप्त की और सोलापुर में आपने अपने अर्जित ज्ञान से धर्म ध्वजा फहरा दी। जो आपके जीवन की महानतम प्रथम उपलब्धि थी।

इस चातुर्मास में क्षुल्लक सुयोगसागरजी आपके साथ थे जो सामाजिक गतिविधियों को देख आपसे कहा करते, ''आचार्य श्री अभी यहाँ आपको मौन साधना कम वाग्वाणी साधना अधिक करना है।'' सुन युवाचार्य मुस्कराभर देते।

सोलापुर संस्मरण

सोलापुर में आचार्यश्री के ज्ञान-चारित्र की परीक्षा के अनेक अवसर आए पर वे सदैव खरे उतरे। एक दिन प्रवचन के बाद एक मुमुक्षु श्राविका ने पूछा- क्या साधु हल्दी, टमाटर, पपीता खा सकते हैं?

आचार्यश्री समझ गए कि इस क्षेत्र में इन चीजों को किसी कारणवश अभक्ष्य माना जाता है सो उन्होंने बहुत संक्षिप्त उत्तर दिया कि कहीं इन्हें भक्ष्य माना जाता है और कहीं अभक्ष्य। किंतु हम जब तक इस क्षेत्र में हैं, हमारा त्याग रहेगा। सुलझे हुए इस समाधान से कई लोग बहुत प्रभावित हुए।

एक बार चौके में बीज सहित अमरूद (जामफल) श्रावक ने देना चाहा तब आपने अप्रासुक फल नहीं लिया। बाद में वह श्रावक बोला- मैं तो यूँ ही परीक्षा कर रहा था।

एक अवसर ऐसा आया कि समाज मान्य गाँधी परिवार ने सब चौके बंद रहें व सिर्फ उनका चौका लगे ऐसी बात रखी। तब आचार्यश्री ने यह कहकर उन्हें संबोधित किया कि एक ही चौका लगेगा तो उद्दिष्ट, अन्य राय या वृत्ति परिसंख्यान न मिलने का विकल्प हो सकता है। अतः आप अपना आग्रह छोड़ दें। उन्होंने यह उपदेश स्वीकार कर लिया।

प्रवचन में वे पूरे समाज पर वात्सल्य लुटाते कहते कि मैंने सुना था कि सोलापुर में अधिकांश ज्ञानी व विद्वत् जन हैं। अतः यहाँ समाज के हित में यह चातुर्मास है व धर्मसभा में मैंने प्रवचन में प्रवचनसार जैसे महान ग्रंथ की वाचना ही प्रथम प्रारंभ की। यहाँ के प्रबुद्ध समाज का ज्ञान का उच्च स्तर (स्टैंडर्ड) देख मैंने प्रवचनसार ग्रंथ की वाचना शुरू की। अतः मेरा सोलापुर के समस्त जैन समाज से आग्रह है कि इस प्रवचन माला के माध्यम से ही सही, हम समयसार-आत्मा का चिन्तन अनुशीलन करें, आपसी चर्चा में ज्ञान वृद्धि करें। शंका-समाधान के माध्यम से मन की गाँठें खोलें। मुझे भी यहाँ के विद्वान् पंडितों से कुछ नया सीखने को मिलेगा। मेरा अभिगम 'सीखो-सिखाओ' के माध्यम से आत्मकल्याण के मार्ग का प्रवर्तन करना है। यहाँ न कोई ज्ञान का अहंकार है न महानता दिखाने की लालसा। हमारा तो एकमात्र उद्देश्य भगवान कुन्दकुन्द के बताए मार्ग को 'कुछ हाथों' में सौंप 'कुन्द' होने से बचाकर जन-जन तक पहुँचा सबका मुक्ति मार्ग प्रशस्त करना है। मेरी सोलापुर की समस्त समाज से आशा, अपेक्षा व मनुहार है कि वे इस धर्मसभा में हो रही वाचना में निःसंकोच आएँ। आप श्रावक रूप में और मैं श्रमण रूप में। हम एक साथ शिवपथ पर चलें।

सरल हृदय संत की ये बोधिवर्धक बातें हवा के रथ में आरूढ़ सोलापुर दिगंबर जैन समाज ही क्या, दिगंबर-श्वेतांबर समाज ही क्या, अन्य समाजों के भी द्वार-द्वार, घर-घर दस्तक दे पहुँच गई। और दूसरे दिन से तो धर्मसभा में लोगों का सैलाब उमड़ पड़ा। सांसारिक दुःखों से तप्त संतप्त लोग शांति की तलाश में आचार्य श्री की धर्मसभा को अपनी शरणगाह मानने लगे। उनके हृदय हिमालय से दुग्ध धवल ज्ञान के झरने झर-झर झरते रहते, ज्ञान गंगा प्रवाहित होती रहती व उपस्थित जन समुदाय के मनों के मैल धुलते रहते।

जो लोग मुनियों के कट्टर आलोचक थे, आचार्य श्री के दर्शन को नहीं जाते थे, वे उनके परम भक्त हो गए। उनके घर आचार्य श्री की आहार चर्या होने लगी। वे आरती व वैयावृत्ति भी बड़े भक्तिभाव से करते। आहार चर्या में आचार्य श्री ने देखा कि अधिकांश समाज के चौकों में लिखा था 'अनशन स्वरूपोऽहं।' यहाँ तक तो ठीक, आहार देते वक्त वे

लोग बोलते 'हे स्वामी मनशुद्धि, वचनशुद्धि, कायशुद्धि, आहार-जल शुद्ध है, भोजन ग्रहण कीजिये। 'अनशन स्वरूपोऽहं।' आचार्य श्री ने चौकों में लिखा यह वाक्य पढ़ा तो अच्छा लगा। हमारी आत्मा भोजन नहीं करती पर जब श्रावकगण आहारचर्या के वक्त भी यही बात बोलते तो वे मन्द-मन्द मुस्करा भर देते। भोजन करते हुए हमें यह बात ध्यान रखना है, यह इनकी चेतावनी है।

चातुर्मास के डेढ़-दो माह तक आचार्य श्री ने इस बात का कुछ जिक्र नहीं किया। समयसार वाचना द्वारा उन आत्मज्ञानियों में उन्होंने आत्मज्ञान ठूस-ठूस कर भरने का काम किया। मात्र आत्मज्ञान का भरा भूत उनके दिलो-दिमाग से भगा दिया। उन्हें अब समझ में आ गया कि मात्र ज्ञान से मुक्ति नहीं मिल सकती, चरित्र की भी जरूरत है। आचार्य श्री ने कई आगमोक्त उक्तियों, उदाहरणों द्वारा उनके दिल, दिमाग व हृदय के पट खोल दिये व एक दिन प्रवचन सभा में कहा- ''ज्ञानी! अनशन स्वरूपोऽहं' तुम्हारी बात शत-प्रतिशत सही है। निश्चित ही आत्मा नहीं खाती है, उसे भूख नहीं लगती पर एकाध दिन अनशन उपवासी रहकर तो देखो। तब पता चलेगा कि अनशन तप क्या है? कथनी-करनी में बड़ा अंतर है।

आचार्य श्री की बातों का समाज पर ऐसा जादुई प्रभाव पड़ा कि जो कभी एकासन नहीं करते थे, वे समाज जन आचार्य श्री से व्रत-नियम लेने लगे। इस प्रकार चारित्र सुधार क्रांति के नाम आचार्य श्री का वह चातुर्मास रहा। आज भी सोलापुर समाज प्रतिवर्ष आचार्य श्री के दर्शन को आता है। वे लोग सरल शब्दों में आचार्य श्री को अपना सच्चा हितैषी मानते हैं।

सोलापुर का चातुर्मास आचार्य श्री के लिए ऐतिहासिक इसलिए भी रहा कि यहाँ पर आपने आचार्य पद संभालने के बाद पहली मुनि दीक्षा समाधिसागर को दी और उसी दिन उनकी समाधि भी विधिवत कराई। सोलापुर में आपने दीक्षा देने व समाधि का कार्य एक साथ किया।

दृढ़ संकल्प शक्ति के धनी भगवान बाहुबली के परम भक्त आचार्य श्री की सोलापुर से ही गोम्मटेश बाहुबलि के दर्शन की भावना बलवती होती रही। कोई विकल्प, चिंता या याचना नहीं कि आगे विहार कौन कराएगा, तो व्यवस्था कैसे होगी? पुण्य की परीक्षा देने सिंहवृत्ति युक्त तैयार थे कदम, अचानक विहार कर लिया, आगे श्रावक सब करते गए। आचार्य श्री के प्रति भक्ति के रंग में रंगे सोलापुर के सुश्रावकों ने आत्मीय सहयोग व समर्पण से गुरु की मनोकामना पूर्ण की।

आचार्य श्री 21 दिसंबर 2008 को श्री स्वयंभू पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन कासार मंदिर सोलापुर से विहार कर बाहुबलि नगर गए व करुणावश गोशाला में प्रवचन दिए।

बाहुबलि नगर में शाम को भगवान बाहुबलि की सुंदर व विशाल प्रतिमा के दर्शन कर आपका मन प्रसन्न हो गया। यहीं सामायिक व रात्रि विश्राम किया। यहाँ आपने देखा कि लोगों की भगवद् भक्ति न के बराबर थी। भगवान ही उपेक्षित थे तो गुरु को कौन पूछे। दुनियादारी में फंसे लोगों में आत्मरुचि न के बराबर देख आचार्य श्री का मन खिन्न हो गया। पर उनका यात्रा पथ पूर्व निश्चित था अतः सूरज की पहली किरण, पक्षियों की चहचहाट के साथ आपने पद संचलन कर दिया।

सुपरिणाम यह हुआ कि जब 21 दिसंबर 2008 को आचार्य श्री ने सोलापुर से श्रवणबेलगोला की यात्रा की तब इस 800 कि.मी. लंबी पूर्ण पदयात्रा का सारथ्य इन्हीं सोलापुरवासियों ने बखूबी, बड़े श्रद्धा व समर्पण के भाव के साथ निभाया। इनमें श्रावक श्रेष्ठ सुभाषचंद्र वनकुद्रे परिवार प्रमुख थे जिन्होंने संघपति का दायित्व निर्वहन किया। उनके साथ विलास कंदले, शांतिनाथ मुलगे, प्रवीण लेंगड़े, वीर धवल मेहता, भूषण हुल्ले, महावीर कंदले व सुहास मोहरे (बेलगाँव) परिवार तथा सोलापुर के अनेक सुश्रावक- सुश्राविकाओं की पूरे रास्ते सक्रिय सहभागिता बनी रही। इस कठिनतम यात्रा में इनकी भूमिका अभूतपूर्व तथा प्रशंसनीय रही। ऐसे ही श्रावकों की श्रद्धा समर्पण के बूते संतों की

तीर्थयात्रा संपन्न होती है।

जिन घाटों से संसार तिरे वे घाट तीर्थ कहलाते हैं

संसार सागर से पार उतरने की पुनीत भावना लिए आचार्य श्री सुनीलसागरजी, जिनकी जीवन यात्रा, पदयात्रा से संचरित है, ने गोम्मटेश बाहुबली स्वामी के दर्शन के लिए 21 दिसंबर 2008 को सोलापुर चातुर्मास के बाद श्रवणबेलगोला की ओर विहार कर दिया। पदयात्रा उनके जीवन की अभिन्न चर्या है और जब वह तीर्थ यात्रा हो तो उसकी पावन यादें उनके मन-मानस को विमल-अमल कर तरोताजा कर देने वाली होती हैं। वे बीजापुर, बाबा नगर, जयखंडी, लोकापुर, रामदुर्ग, नरगुंद, लक्ष्मेश्वर, दावणगेरे, होसदुर्ग, आरसीकेरे, चन्नरायपट्टण आदि नगरों से होते हुए 5 फरवरी 2009 को श्रवणबेलगोला पहुँचे। वहाँ श्री धर्मकीर्तिस्वामीजी के नेतृत्व में आपकी भव्य स्वागत के साथ अगवानी हुई। कामजयी महाप्रभु बाहुबली के दर्शन कर उनकी आत्मा उनके अनन्य गुणों की प्राणवायु से उर्जस्वित हो आनंदवन में विचरण करने लगी। वे प्रभु गोम्मटेश की छत्र-छाह में मात्र 2-4 दिन नहीं अपितु 67 दिन रहे। इस मंगलवास में उन्होंने उनके गुणों को अपने जीवन में उतारने का पूर्ण प्रयास किया। वे हर क्षण भगवान बाहुबली के आत्मतत्त्व को आत्मसात करते आत्मानुभव की गहराई में उतरते रहे। अंतर्यात्रा में अवगाहन कर आत्मानंद पाते रहे और उन्होंने गोम्मटेश भक्ति से अभिभूत 'णमो जिणिंद गोम्मटं' तथा 'भद्दबाहुचरियं' जैसी महान रचनाओं का सृजन किया। जो प्राकृत भाषा में लिखी उत्कृष्ट कोटि की रचनाएँ हैं।

श्रवणबेलगोला जाते समय विहार में अनेक संस्मरण बने जिन्हें आपने 'यात्रा अंतर्यात्रा' पुस्तक में लिखा है।

- गोम्मटेश बाहुबली बचपन से ही पूज्यश्री के आदर्श रहे। वर्षों की प्यास व इंतजार, आठ सौ कि.मी. की यात्रा के पश्चात बाहुबली भगवान के प्रथम दर्शन, वह अनुभूति शब्दातीत है। हृदय में ऐसी भक्ति उमड़ आई कि वहाँ उसी वक्त आपने प्राकृत भाषा में 'णमो जिणिंद गोम्मटं' रूप बाहुबली भगवान का स्तुति-गान लेखन किया।
- भट्टारक चारुकीर्तिजी ने जब यह स्तुति पढ़ी तो वे आश्चर्यचकित होने के साथ बहुत अधिक प्रसन्न हुए। एक आचार्य नेमीचंदजी थे जिन्होंने मूर्ति का पंचकल्याणक कर प्राकृत स्तुति लिखी थी जो आज बहुत प्रसिद्ध है। इतने वर्षों बाद प्राकृताचार्य श्री सुनीलसागरजी द्वारा प्राकृत में इतनी सुंदर रचना हुई है। भट्टारक स्वामीजी आचार्यश्री की ज्ञान, चर्या, प्राकृत साहित्य, प्रशांतता, सहजता व सरलता से बहुत अधिक प्रभावित हुए। भट्टारक स्वामी ने स्वयं आपश्री को 'अभिनव नेमीचंद' की उपाधि से अलंकृत किया।
- कोई भी यात्री, मुमुक्षु या वीआईपी भट्टारकजी के पास आते, वह उन्हें एकांत रूप से ज्ञान-ध्यान में रत आचार्यश्री सुनीलसागरजी के दर्शनार्थ व तत्व चर्चा व समाधान हेतु अवश्य लेकर आते।
- गुरु शरण में ही आचार्यश्री को इसका पूरा अभ्यास हो गया था। रह-रह कर उन्हें गुरु उपकार का स्मरण होता, हृदय अनुग्रह से भर जाता कि गुरुदेव ने शुरू से ही सुनीलसागरजी की विद्वत्ता पर बहुत अधिक विश्वास रखते हुए कोई भी विद्वान या जिज्ञासु गुरुदेव के पास आता तो सीधा सुनीलसागरजी के पास भेज देते। इस तरह उन्हें परिपक्व बनाया था कि आज दुनिया में सबके सामने एक विशिष्ट पहचान बनाए हुए हैं।
- रास्ता चलते स्कूल में रुकते उन्होंने आवश्यक कन्नड़ भाषा व लिपि सीख ली। बीजापुर में प्रसन्नसागरजी मुनिवर से मिलन हुआ। उन्होंने आचार्यश्री से सिद्ध भक्ति का अर्थ कर देने के लिए आग्रह किया। जिसे उन्होंने तुरंत स्वीकार कर लिया।
- आचार्यश्री सुनीलसागरजी ने दीक्षा काल से आहार चर्या में दो ही अनाज ग्रहण किये हैं जिसमें प्रायः गेहूँ व मूंग स्वीकार करते हैं। दक्षिण भारत के लोग देश-काल-परिस्थिति अनुरूप यहाँ गेहूँ छोड़कर चावल को आहार में स्वीकार

करते थे। जैसा देश वैसा ढल जाना इस तरह की श्रावक को तकलीफ न हो, अपना नियम भी न टूटे। अपने लिए उद्दिष्ट आहार न बनाना पड़े, श्रावक जो भोजन करता है उसी में से मुनि उचित वस्तु ग्रहण करें, आगमोयुक्त चर्या का परिचय दिया।

-पहाड़ पर रात्रि विश्राम किया, गुड़ी पड़वा (चैत्र शुक्ल एकम) के दिन। इस दिन यहाँ मंगल पुष्करिणी (तालाब) में सहस्र दीपोत्सव कार्यक्रम था। आप सामायिक-स्वाध्याय करके बाहुबली के चरणों में सो गए। दीपोत्सव प्रारंभ हुआ कि किसी अत्यंत भद्र पुरुष (देव) ने आकर जगाया कि दीपोत्सव देखने चलो। तब वे उठकर बैठे ही थे कि वह गायब हो गए।

अभी आचार्य श्री को गोम्मटेश बाहुबली श्रवणबेलगोला पहुँचे जुम्मे-जुम्मे 4 दिन ही हुए थे कि महाराष्ट्र नातेपूते का समाज उनके चातुर्मास का निवेदन लेकर वहाँ आ पहुँचा। तीर्थ दर्शन को आए समाजजन चातुर्मास के लिए अरज कर रहे हैं यह सोचकर आपने उनकी बात टाल दी। किंतु यह क्या, नातेपूते का एक ग्रुप आचार्य श्री के दर्शन निवेदन कर विदा होता तब तक समाज का दूसरा ग्रुप 'श्रीगुरु' को चातुर्मास निवेदन व श्रीफल भेंट करने हजार कि.मी. दूर से आ पहुँचता। यह सिलसिला भगवान गोम्मटेश की निश्रा में ठहरे गुरुवर के मंगलवास के 67 दिनों तक लगातार जारी रहा। महावीर सेना के कर्मठ कार्यकर्ताओं के नेतृत्व में नातेपूते (महाराष्ट्र) समाज ने आचार्य श्री सुनीलसागरजी का नातेपूते (महाराष्ट्र) में चातुर्मास संपन्न कराने का दृढ़ संकल्प ले लिया था।

7 अप्रैल 2009 महावीर जयंती

7 अप्रैल 2009 को भट्टारक श्री चारूकीर्तिजी के नेतृत्व में श्रवणबेलगोला के भव्यतम चामुंडराय मंडप में विशाल जनसमूह के बीच अहिंसा के रक्षक, पशुओं पर करुणा बिखेरने, नारी जाति का कल्याण करने तथा तत्कालीन सामाजिक/ धार्मिक बुराइयों का अंत करने वाले भगवान महावीर स्वामी की जन्म जयंती आचार्य श्री सुनीलसागरजी के सान्निध्य में मनाई गई। इसमें अंतर्मना मुनि श्री प्रसन्नसागरजी व गणिनी आर्यिका सुप्रकाशमति माताजी का भी समाजजनों को सान्निध्य प्राप्त हुआ।

इसी मंडप में महावीर जयंति के दिन दीक्षित आचार्य श्री सुनीलसागरजी व मुनि श्री प्रसन्नसागरजी का भव्य दीक्षा दिवस 'मर्यादा दिवस' के रूप में मनाया गया। यह आपके जीवन का (संत जीवन का) वह महान दिवस है जिस दिन वैराग्य की प्रचंड आँधी ने अनंत काल से आपकी आत्मा को कस कर बांधे रखे मोह-माया की चदरिया के ताने-बाने, छिन्न-भिन्न कर तहस-नहस कर दिए। यह आपके जीवन का गुरु प्रदत्त वह 'दीपदान' दिवस है जिस दिन आपके जीवन में संयम की दीप शिखा प्रज्जवलित हुई थी, जिसने त्याग व तपस्या का स्नेह पा तिल-तिल जलते रह स्वयं में अवस्थित राग-द्वेष व अहं के अज्ञानांधकार को चीर, आपको अतुलनीय आलोक का साम्राज्य प्रदान किया था। इसी दिन विरक्ति की उत्ताल तरंगों के आघात से सांसारिक सुख भोगों व आसक्ति के तम्बूरे के तार, तार-तार हो गए और आपके जीवन में अनासक्ति का अनहद नाद छिड़ गुंजायमान हो गया। मखमली मसनदों से निकल कर आपके पैर दिगम्बरत्व धारण कर, कांटों-भाटों व खुरदरी चट्टानों पर चलने के लिए चरण बन गए जो पूज्य हो गए। आपके लिए अज्ञानांधकार की अमा निशा से निजात पा 'ज्ञानोदय' का सुप्रभात पा प्रभातिया गाने का यह स्वर्णिम दिवस है। एक ओर आपके साथ विशाल जनसमूह जहाँ तीर्थंकर महावीर का जन्मोत्सव मना रहा था वहीं दूसरी ओर आप जैसे संतों के रूप में भावी सिद्धों का 'जन्म दिवस' समाज दीक्षा दिवस के रूप में मना रहा था, लेकिन युवाचार्य चिंतन कर रहे थे कि आज ही के दिन एक संयमी युवा के जीवन का रूपांतरण हुआ था। इसी दिन एक आत्मान्वेषी मुमुक्षु दिगम्बरत्व धारण कर आत्मोपलब्धि की दिशा में उन्मुख हुआ था और आज जीवन के इस सोपान पर पहुँचा है।

इस पुण्यमयी बेला में आज मुनि श्री प्रसन्नसागरजी महाराज व गणिनी आर्यिका सुप्रकाशमती माताजी ने सविनय आपको शास्त्र भेंट किए। क्षेत्र के प्रमुख भट्टारक श्री चारूकीर्तिजी, भानुकीर्तिजी एवं धर्मकीर्तिजी ने संयुक्त रूप से पिच्छी भेंट की। दूर-दूर से पधारे श्रावक श्रेष्ठीगण श्री शैलेष लोहाड़े, श्री सुनील कासलीवाल, श्री राजकुमार गंगवाल, श्री अजय पाटनी (औरंगाबाद), श्री डी.आर. शहा (इंडी.), श्री सोहनलाल सेठी (डीमापुर), राजेश पाटनी, मनोज पाटनी (हैदराबाद) तथा स्थानीय पंचों ने आपकी अष्टांग पूजा की। इस अवसर पर दिल्ली, मुंबई, औरंगाबाद, हैदराबाद, आसाम, बीजापुर आदि कई नगरों से श्रावकगण पधारे थे। सच है संतों के संयम, तप, त्याग व ज्ञान की सौरभ सुरभि से लोग स्वयंमेव खिंचे चले आते हैं।

10 अप्रैल 2009 शुक्रवार शाम को महावीर जयंती के कार्यक्रमों में सम्मिलित गोम्मटेश बाहुबलि की पूजा आपश्री व प्रसन्नमना प्रसन्नसागरजी म.सा. के सान्निध्य में बड़े भक्ति भाव से पर्वत पर ही की गई। संध्या अधिक हो जाने व उतरते में रात्रि हो जाने से आप व श्री प्रसन्नसागरजी दोनों संतों को पहाड़ी पर ही रात्रि विश्राम का असवर मिला। आपने भगवान बाहुबलि की निश्रा में आत्मचिंतन करते हुए रात्रि व्यतीत की।

आमंत्रण पत्रिका में आचार्य श्री का परिचय

भट्टारक चारूकीर्तिजी तक बहुत पहले ही युवाचार्य श्री सुनीलसागरजी की यश सुरभि पहुँच चुकी थी। किंतु जब साक्षात उन्हें आचार्य श्री की निश्रा में बैठने का सुअवसर मिला, उनका चरण सान्निध्य पाया, उनका सत्संग किया, उन्हें अनुभूत हुआ कि युवाचार्य इस युग के ऐसे महान श्रमण साधक हैं, जिनका पल-दो-पल का सान्निध्य जीवन संघर्षों की दुर्गम पहाड़ियों पर चढ़ते हुए हमारी जीवन यात्रा सुगम कर देता है। उनका सत्संग हमें जग के ताप-संतापों की चलती लू लपटों की झुलसन से पड़े हृदय के छालों पर वात्सल्य के शीतल मरहम का लेप कर सहलाने वाला है। उनकी वाणी की भागीरथी की निर्मल 'ज्ञान गंगा' की पवित्र धारा हमारे मनों के मल धो विमल कर हममें शांति, शीतलता व शुचिता भर देती है। व्यक्ति नहीं व्यक्तित्व पूजा जाता है। स्वामीजी आचार्य श्री के कुछ क्षणों के सान्निध्य में ही युवाचार्य श्री सुनीलसागरजी के बहुआयामी व्यक्तित्व, कृतित्व, साधना, सृजन, कवित्व हृदय, विद्वता, प्राकृत के विषद ज्ञान, उत्कृष्ट चिंतन व विचारों से इतने अधिक प्रभावित व प्रेरित हुए कि वे उनसे गहरा तादात्मय अनुभव करने लगे और उनके प्रथम बार श्रमणबेलगोला में पधारने पर उनके सम्मान में उन्होंने 'प्राकृत विद्वत गोष्ठी' का आयोजन किया। आमंत्रण पत्रिका में आचार्य श्री सुनीलसागरजी का जो परिचय छापा गया वह अभिवंदनीय व गौरव-गरिमा युत है।

-------------------------------------* * *-------------------------------------

श्री बाहुबली प्राकृत विद्यापीठ द्वारा आयोजित विद्वत गोष्ठी के अवसर पर आमंत्रण पत्रिका में छापा गया आचार्य श्री का परिचय

सादर अभिवंदना

प्राकृत एवं जैन सिद्धांत के मनीषी साधक सिद्धांत चक्रवर्ती आचार्य नेमीचंद्र की कर्मभूमि श्रवणबेलगोला में संचलित बाहुबली प्राकृत विद्यापीठ के प्राकृत भवन में श्री धवलतीर्थम् परिसर में प्रथम बार पदार्पण करने वाले प्राकृत के सिद्धहस्त कवि, उत्कृष्ट साधक एवं श्रेष्ठ साहित्यकार परम पूज्य आचार्य श्री सुनीलागरजी मुनिराज के सम्मान में समायोजित प्राकृत संगोष्ठी के सुअवसर पर विद्यापीठ के संस्थापक अध्यक्ष परम पूज्य जगद्गुरु कर्मयोगी स्वस्तिश्री चारुकीर्ति भट्टारक महास्वामीजी एवं समस्त ट्रस्टीगणों की ओर से आचार्य श्री का सादर अभिवंदन एवं भावभीना स्वागत।

तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी से 20 अप्रैल 1997 को महावीर जयंती के पावन दिन बरुआसागर (झाँसी) में जैनेश्वरी दिगंबर दीक्षा प्राप्त आचार्य श्री सुनीलसागरजी का गुरुदेव के जन्मदिवस पर उनके ही करकमलों से 25 जनवरी 2007 को औरंगाबाद (महाराष्ट्र) में आचार्य पदारोहण हुआ। आप त्रिभाषाकवि, उद्भट विद्वान, उत्कृष्ट साधक, मार्मिक प्रवचनकार एवं बहुश्रुत साहित्यकार हैं। मध्यप्रदेश के सागर जिलान्तर्गत तिगोड़ा (हीरापुर) ग्राम में 7 अक्टूबर 1977 को जन्म लेने वाले बालक संदीप ने अपने साधक जीवन द्वारा अपने पिता श्री भागचंद जैन एवं माता श्रीमती मुन्नीदेवी को धन्य कर दिया है।

आचार्य श्री की प्राकृत भाषा एवं जैन विद्या पर दो दर्जन से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हैं। यथा- भावणासारो, थुदिसंगहो, अज्झप्पसारो, णीदी संगहो, भावालोयणा, जैनाचार विज्ञान, ब्रह्मचर्य विज्ञान, मानवता के आठ सूत्र, धरती के देवता, विश्व का सूर्य, दूसरा महावीर, अनूठा तपस्वी, वसुनंदी श्रावकाचार (टीका), तत्त्वार्थ सूत्र (टीका), संक्षिप्त जैन इतिहास, मेरी सम्मेदशिखर यात्रा, काशी दर्शन, यात्रा के वृत्तांत, भद्दबाहु चरियं आदि।

-------------------------------------* * * -------------------------------------

11 अप्रैल 2009
श्रवणबेलगोला में 'प्राकृत भाषा के विविध आयाम' गोष्ठी का आयोजन

आचार्य श्री सुनीलसागरजी के सान्निध्य में भट्टारक श्री चारूकीर्ति स्वामीजी ने इस गोष्ठी का आयोजन कराया। संप्रति में आचार्य श्री प्राकृत भाषा के ज्ञाता, प्रकांड विद्वान व एकमात्र साहित्यकार हैं। अतः उनकी प्रतिभा का लोहा मानते हुए भट्टारकजी ने विशेष आग्रह कर इस गोष्ठी के लिए आपको रोक लिया।

इस गोष्ठी में आपके द्वारा रचित ग्रंथ 'भावणासारो' के कन्नड़ संस्करण का विमोचन किया गया, जिसका अनुवाद एवं प्रकाशन स्वामीजी की प्रेरणा से अतिशीघ्र किया गया। इसका अनुवाद देश के जाने-माने प्राकृत के प्रकांड विद्वान डॉ. सी.पी. कुसुमाप्रकाश, संपादन डॉ. एम.ए. जयचंद्रा (बैंलगोर) तथा प्राक्कथन स्वयं भट्टारकजी एवं प्रो. प्रेमसुमन (श्रवणबेलगोल- प्राकृत व अन्य भाषाओं के ज्ञाता) ने किया।

स्वामीजी तथा अन्य विद्वानों ने आचार्य श्री को प्राकृत के सिद्धहस्त कवि, उत्कृष्ट साधक, श्रेष्ठ साहित्यकार व महान सृजक के रूप में आपके बहुआयामी व्यक्तित्व की भूरि-भूरि प्रशंसा की। इस अवसर पर आपको 'प्राकृताचार्य' की उपाधि से अलंकृत किया गया। आपने सभा को 'प्राकृत' में ही संबोधित कर मंगल आशीर्वाद दिया। आप ऐसे पहले संत थे जिन्होंने प्राकृत भाषा में प्रवचन दिया। आपका प्राकृत भाषा में दिया गया सटीक, सारगर्भित विद्वतापूर्ण प्रवचन सुन विद्वत समाज ने दाँतों तले उंगली दबा ली।

इस विद्वत सभा में आचार्य श्री सुनीलसागरजी के अलावा उपाध्याय श्री समतासागरजी, मुनि श्री प्रसन्नसागरजी, ग.आ. सुप्रकाशमति माताजी (ससंघ), तीनों भट्टारक तथा देश के कोने-कोने से पधारे अनेक जाने-माने विद्वान उपस्थित थे।

विद्वत गोष्ठी में उपस्थित आलेख वाचक विद्वान तथा उनके आलेख के विषय की सूची

1. प्रो. हंपा नागराजय्या, बैंगलोर- प्राकृत साहित्य और भारतीय कलाएँ
2. प्रो. एस.पी. पाटील, सांगली- दक्षिण भारत का प्राकृत साहित्य का अवदान
3. डॉ. एम.ए. जयचंद्रा, बैंगलोर- प्राकृत साहित्य और लोक जीवन

4. प्रो. प्रेमसुमन जैन, श्रवणबेलगोल- प्राकृत और अन्य भारतीय भाषाएँ
5. डॉ. एन. सुरेशकुमार मैसूर- प्राकृत साहित्य की कन्नड़ टीकाएँ
6. प्रो. जीवंधर होतपेटि, बैंगलोर- प्राकृत का शिलालेखीय साहित्य
7. डॉ. एस.पी. विद्याकुमार, मूडबिद्री- प्राकृत का कथा साहित्य
8. डॉ. सुषमाजी रोटे, कोल्हापुर- प्राकृत साहित्य में जीवन मूल्य
9. डॉ. सरस्वती विजयकुमार, मैसूर- प्राकृत साहित्य और विज्ञान
10. डॉ. पद्मावतम्मा, मैसूर- प्राकृत साहित्य और गणित
11. डॉ. एम.एस. पद्मा, मैसूर- प्राकृत भाषा के सिद्धांत ग्रंथ
12. डॉ. महेंद्रकुमार 'मनुज', इंदौर- प्राकृत का अभिनव साहित्य

12 अप्रैल 2009

12 अप्रैल 2009 को 'बाहुबली प्राकृत विद्यापीठ' में विद्वत गोष्ठी के तीनों सत्रों का आयोजन हुआ। प्राकृत भवन श्री धवलतीर्थम् के विशाल संसदनुमा हॉल में विद्वानों ने अपने आलेखों का वाचन किया। अंत में आचार्य श्री ने भी प्राकृत भाषा में प्रवचन दिया।

यह संस्थान विशेषतः प्राकृत भाषा के प्रचार-प्रसार व अनुसंधान के लिए कार्यरत है। यहाँ अध्ययन, अध्यापन व परीक्षाओं का निरंतर आयोजन होता रहता है। इसे विश्वविद्यालय बनाने के प्रयास जारी हैं।

इधर भट्टारक चारूकीर्ति स्वामी व अन्य क्षेत्रों के श्रावक श्रेष्ठीजनों व गणमान्य जनों का तीव्र आग्रह था कि वे दक्षिण में ही वहीं आसपास या श्रवणबेलगोला में चातुर्मास करें। उनके जैसे संत कभी-कभी धरती पर अवतरित होते हैं। वे चाहते थे कि चातुर्मास में उस क्षेत्र के लोग भी उनके ज्ञान व विद्वता का लाभ ले सकें। संत एक भक्त अनेक। अंततः बूंद के समर्पण ने सागर का हृदय जीत लिया और आचार्य श्री नातेपूते समाज के श्रद्धा-भक्तिपूर्ण पुरुषार्थ भरे प्रयासों से अभिभूत, उनके निवेदन को न टाल सके। यद्यपि उन्होंने चातुर्मास की स्वीकृति तो नहीं दी, पर इतना जरूर कहा कि सोचेंगे। यहाँ तो उपस्थितजनों की खुशी का पारावार न था, जैसे ही यह समाचार मोबाइल से नातेपूते पहुँचा- वहाँ तो अच्छा-खासा उत्सव ही मन गया। उसी क्षण से समाज ने आचार्यवर के मंगल चातुर्मास की भव्य तैयारियाँ शुरू कर दी। उन्हें आस बंध गई थी कि आचार्य श्री ने सोचेंगे कहा है तो जरूर उनके लिए जगह है।

उधर श्रवणबेलगोला के भट्टारक चारूकीर्तिजी स्वामी के साथ ही कम्बदहल्ली, मैसूर, कनकगिरि, हासन, धर्मस्थल आदि अनेक क्षेत्रों का समाज आचार्य श्री का चातुर्मास अपने यहाँ करवाने के लिए बेताब था। सबको विश्वास था कि इस बार का चातुर्मास तो कर्नाटक में ही होगा, लेकिन जब नातेपूते (महाराष्ट्र) वालों को हरी झंडी मिल गई तो सबके सब मायूस हो गए। फिर भी सबका नेतृत्व करते हुए भट्टारक श्री चारूकीर्ति स्वामीजी ने आचार्य श्री से कर्नाटक में ही चातुर्मास करने के लिए काफी अनुनय-विनय की। उन्होंने गुरुदेव से कहा, ''आप विद्यावाचस्पति, अध्यात्म के उद्भट्ट विद्वान तथा प्राकृताचार्य हैं। दक्षिण में प्राकृत के कई विद्वान हैं। यदि आपका चातुर्मास यहाँ होता है तब हम अपनी आगम भाषा- प्राकृत के विकास के लिऐ काफी कुछ कर सकते हैं। आपके नेतृत्व व मार्गदर्शन की अलग ही बात है। वे अपने गुरुवर तपस्वी सम्राट पट्टाचार्य श्री सन्मतिसागरजी से ज्यादा दिन दूर रहना नहीं चाहते थे। अतः वे दक्षिण यात्रा से शीघ्र लौटना चाहते थे। उन्होंने स्वामीजी से कहा कि ''योग-संयोग होगा तो हम चातुर्मास के लिए पुनः इस परम पावन क्षेत्र पर आएँगे।'' जब स्वामीजी ने देखा कि आचार्य श्री अपने निर्णय से टस से मस होने वाले नहीं हैं तब उन्होंने आचार्य

श्री से भाव विह्वल हो महावीर जयंति (2009) तथा विद्वत गोष्ठी में सान्निध्य प्रदान करने का आग्रह किया जिसे आचार्य श्री ने सहर्ष व सहज स्वीकार कर लिया।

आचार्य श्री सुनीलसागरजी के प्रति अनन्य भक्तिपूर्ण आत्मीयता का मधु नातेपूते के समाजजन की आँखों के झरोखों के छत्तों से झांकता टपक पड़ता था। उनका मौन निमंत्रण उनकी मुख मुद्रा से फूट पड़ता। आचार्य श्री ने कई बार अनुभव किया कि उनकी 'अबोली वाचा' से उनकी आंतरिक आत्मीयता के मौन स्वर गुंजित होते उनके स्वयं के कर्ण कुहरों से टकराते थे। नातेपूते समाज के निवेदन में औपचारिकता का शाब्दिक व बाह्य परिधान नहीं अपितु अंतर से उपजी भाव-भावनाओं की कल-कल करती जान्हवी का पवित्र जल था। आचार्य श्री के चरण सान्निध्य में बैठे नातेपूते समाज की अबोली वाणी गुरुदेव के हृदय में सदा अमृत घोलती रही। गुरुवर के प्रति उमड़ती उनकी श्रद्धा, भक्ति, समर्पण, आस्था के चुम्बकीय आकर्षण से गुरुवर स्वयमेव उनकी ओर खिंचे चले गए।

इधर कर्नाटक के विभिन्न क्षेत्रों व नगरों से बसों व गाड़ियों में भर-भरकर लोग श्रवणबेलगोला आचार्य श्री के दर्शनार्थ आ रहे थे। वे एक पंथ तीन काज एक साथ कर रहे थे। वे तीर्थ दर्शन तो कर ही रहे थे, आचार्य श्री सुनीलसागरजी के असाधारण व्यक्तित्व, विलक्षण मेधा शक्ति व सशक्त सम्यक् रत्नत्रय को देख उनके शीश स्वयमेव गुरु चरणों में नत-नत हो जाते थे। प्रवचन कौशल में निष्णात आचार्य श्री के विद्वतापूर्ण, बोधपरक व आत्मज्ञान से आपूरित प्रवचन सुन वे अभिभूत हो जाते थे। समाज के गणमान्य जन भक्ति भावना से आपूरित गुरु वंदना कर वे अपने-अपने क्षेत्रों में गुरुवर से चातुर्मास करने का निवेदन करते, उनके श्री चरणों में श्रीफल अर्पित करते। श्रीफलों का अम्बार पुजारियों को समेटना भारी पड़ता रहता। नातेपूते से बार-बार आने वाला चंद लोगों का प्रतिनिधि मंडल यह दृश्य अक्सर देखा करता व वे भी पुनः पुनः श्रीफल अर्पित करते, निवेदन यथावत रखते। पर अब उन्हें यह विश्वास होने लगा था कि महाराष्ट्र से इतनी दूर गुरुवर आए हैं तो यहाँ के भक्तगण ऐसे महान गुरु को यहाँ से जाने नहीं देंगे, गुरुवर संभवतः इसी क्षेत्र में चातुर्मास करेंगे। यह देख-देख उनका मन बैठ जाता क्योंकि अभी तक उन्हें आचार्य श्री की ओर से ऐसा कोई संकेत नहीं मिला था। लेकिन वे निराश व निरुत्साहित नहीं हुए। आशा-अपेक्षा नहीं छोड़ी, हार नहीं मानी और आचार्य श्री के श्रवणबेलगोला के 67 दिनों के मंगलवास में उनका बार-बार आकर गुरुदेव के चरणों में चातुर्मास के लिए अनुनय-विनय भरा आग्रहपूर्ण आत्मीय निवेदन अनवरत जारी रहा। वे आचार्य श्री के पीछे लगे ही रहे।

13 अप्रैल 2009 श्रवणबेलगोला से विहार

आचार्य श्री सुनीलसागरजी के उपदेशों में मुखरता, मुखरता में प्रखरता, प्रखरता में प्रांजलता व प्रांजलता में पारदर्शिता थी जिसमें उनके दर्शन, ज्ञान व चारित्र की एकरूपता दृष्टिगत होती थी। उनके इसी गुण व ज्ञान की प्रौढ़ता देख भट्टारकजी मंत्रमुग्ध हो उनके प्रवचन सुनते थे। सभी की दिली तमन्ना थी कि आचार्य श्री सुनीलसागरजी इस बार का चातुर्मास श्रमणबेलगोला या दक्षिण में ही कहीं करें ताकि धर्म, प्राकृत भाषा व संस्कृति के विकास व उन्नयन के क्षेत्र में उनका योगदान क्षेत्र को मिल सके। क्योंकि ऐसे परिष्कृत व गूढ़ गंभीर विचारों वाले ज्ञानी सहृदय संत का समागम बड़ी मुश्किल से उस क्षेत्र को मिला था। पर भट्टारकजी को जब लगा कि आचार्य श्री 13 अप्रैल 2009 को विहार के लिए कृत संकल्पित हैं तब उनकी शानदार विदाई के उपलक्ष्य में उन्होंने एक विशाल सभा का आयोजन आनन-फानन में करवाया।

इस धर्म सभा में आचार्य श्री सुनीलसागरजी की प्रशंसा करते हुए उपाध्याय श्री समतासागरजी ने कहा ''आचार्य श्री का जीवन संयम के सैन्य धर्म से अनुप्राणित है। वे मानवीयता के सच्चे पक्षधर हैं।'' वहीं प्रसन्नमना मुनि श्री प्रसन्नसागरजी ने कहा, ''आचार्य श्री के प्रवचन चिरंतन सत्य को प्रकट करने वाली अभिव्यक्ति है, जिन्हें हम उनकी आत्मचेतना व जीवनानुभव की पूँजी कह सकते हैं।''

गणिनी आर्यिका सुप्रकाशमति माताजी ने उनकी प्रशंसा करते हुए भाव विह्वल होते हुए कहा, ''आचार्य श्री ऐसे आलोकजयी संत हैं, जिन्होंने अपने अंतर्मन में सत्य की जोत जलाकर स्वयं को तो प्रकाशित किया है, साथ ही वे अखिल विश्व को प्रकाश बांट रहे हैं। सच है जो जलता है वो ही दीपक बन आलोक रश्मियाँ बिखेर सकता है।''

भट्टारक श्री धर्मकीर्तिजी ने इस अवसर पर आचार्य श्री के लिए कहा, ''वात्सल्य से आपूरित उनकी वाणी की कोमलता हृदय के मर्म को सहज ही स्पर्श कर लेती है। उनके प्रवचन उनकी यायावरी के सुदीर्घ जीवनानुभवों की पूँजीभूत भावना है।''

विद्वान प्रो. प्रेमसुमन ने आचार्य श्री के लिए कहा, ''विचारों से ही संत का चारित्र चरितार्थ होते देखा जा सकता है। जो गहन गहराई में डूबता है वो ही हीरे खोज पाता है, किनारे पर बैठा रह बातें करने वाला नहीं। आचार्य श्री के लिए वे बातें अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं हैं। वे ज्ञान की गहराई व शब्द कौशल से श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर देते हैं। उनके हृदय से उठती तरंगों से हर हृदय तरंगित हो जाता है। उनके विचारों का गुम्फन पुष्पमाला सा मोहक लगता है। समसामयिक मूल्यों के उद्‌घाटन तथा उन पर त्वरित संप्रेषणीयता ने इन्हें लोकप्रियता के चरम पर पहुँचा दिया है।''

इसी तारतम्य में भाव विह्वल हो भट्टारक चारूकीर्ति स्वामीजी ने कहा, ''आचार्य श्री जहाँ सिद्धहस्त प्रवचनकार हैं वहीं वे बहुत अच्छे सर्जक व साहित्यकार भी हैं। व्यक्ति नहीं, उसका कृतित्व पूजा जाता है। यों तो कई संत हुए हैं, उन्हें कौन जानता है? याद तो वे विरले लोग किए जाते हैं, जो युगामृत होते हैं। जो इस कसौटी पर खरा उतरता है कि उसने सत्य के उद्‌घाटन के लिए कितनी साधना की है? समाज को क्या दिया है व दे रहा है? अपनी अनुभूतियों के रंग में कितनों को रंग पा रहा है? समाज की शांति व समरसता के लिए वह क्या कर रहा है? लोगों को कहाँ तक जोड़ पाया है? कहना न होगा, आचार्य श्री सुनीलसागरजी इस मापदंड पर खरे उतरे हैं। वे समाज को एक सूत्र में बाँधने में सक्षम हैं। लोकमंगल व विश्व कल्याण के लिए किए जाने वाले इनके कार्य हमारी अपेक्षाओं से भी कहीं अधिक है। धवल व्यक्तित्व के धनी ये संत समाज को धवलता व भव्यता प्रदान कर रहे हैं।''

उदास मन/भरे हृदय से स्वामीजी ने कहा कि ''भले अभी आचार्य श्री अपना मंगल विहार करें लेकिन हमारी दिली प्रार्थना व सविनय निवेदन है कि वे चातुर्मास व आगामी अंतरराष्ट्रीय गोष्ठी में हमें अपना मंगल सान्निध्य प्रदान करें।''

अंत में आचार्य श्री ने अपने मंगल उद्‌बोधन में सभी की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए खूब-खूब आशीर्वाद दिया। सबकी सेवा सहयोग के प्रति आभार माना व कहा जिस क्षेत्र का पुण्य संयोग होगा चातुर्मास हो जाएगा।''

13 अप्रैल 2009 को शाम 5 बजे आचार्य श्री ने श्रवणबेलगोल से भगवान बाहुबली को वंदन कर विहार कर दिया। सभी संत व माताजी उनके साथ चले पर थोड़ी दूर चलने के बाद आचार्य श्री ने उन्हें विदा कर दिया। चारूकीर्तिजी भट्टारक स्वामीजी भी भारी मन से आचार्य श्री के साथ चल रहे थे। आचार्य श्री ने आशीर्वाद देकर उन्हें लौट जाने को कहा। गुरु वियोग के क्षणों में स्वामीजी की आँखें छलछला आईं। भर्राए गले से वे इतना ही कह पाए, ''आचार्य श्री चातुर्मास के लिए हम पलक पावड़े बिछाए आपका इंतजार करेंगे। बस आपका आदेश मिलते ही दौड़े चले आएँगे।''

स्वामीजी की गुरु के प्रति श्रद्धा, भक्ति, आस्था व समर्पण से अभिभूत आचार्य श्री ने उन्हें आशीर्वाद देते हुए कहा, ''इसी तरह दिन प्रतिदिन जिनशासन की सेवा में वृद्धिगत रहना व अपना आत्म कल्याण करना व संयम के पथ पर अग्रसर होना।''

सबको विदा कर आचार्य श्री तेज कदमों से अपने गंतव्य की ओर चल दिए। धूल के गुबार में उनकी मंगल मूरत धीरे-धीरे आँखों से ओझल हो गई। लौटते में सब लोगों की चर्चा का एक ही विषय था कि महान पुण्य संयोग से उन्हें ऐसे उद्‌भट विद्वान, आत्मज्ञानी व जगहितैषी आचार्य का समागम मिला। ऐसे पावन क्षण जीवन में कभी-कभी ही मिलते

हैं।

नातेपूते का समाज, पाँच-पाँच, सात-सात लोगों के समूह में श्रवणबेलगोल के आचार्य श्री के 67 दिनी मंगल प्रवास में सतत चातुर्मास हेतु निवेदन करने आते रहे। विहार के तीन दिन पूर्व से ही नातेपूते के श्रावक हाजिर थे। एक हजार कि.मी. दूर से इस बार तो आने वाले नातेपूते के श्रावकों की गुरु भक्ति देखते ही बनती थी। रास्ते में आचार्य श्री की आहार चर्या हेतु वे चौका लेकर आए थे।

नातेपूते समाज का यह अद्वितीय आदर्श उदाहरण था। एक हजार कि.मी. दूर से बार-बार आकर चातुर्मास के लिए याचना करना व वापस आचार्य श्री को एक हजार कि.मी. दूर विहार करा कर ले जाना, छोटी सी जगह नातेपूते के पुरुषार्थी, श्रमशील, समर्पित श्रावकों के ही बस की बात थी। वरना इतना लम्बा विहार बड़ी-बड़ी जगहों के लोगों के हौसले पस्त कर दे। आचार्य श्री तो साधनारत थे ही पर श्रावकों की भी साधना किसी भी रूप में कमतर नहीं थी।

यद्यपि श्रवणबेलगोला छोड़ने पर नातेपूते के श्रावकों में आचार्य श्री के वाक्य 'सोचेंगे' से आशा की एक किरण जागी थी और वहाँ के सभी श्रावकों ने यथाशक्ति सहयोग देकर आचार्य श्री के विहार का जिम्मा उठाया व पूर्ण व्यवस्था कर रहे थे।

17 अप्रैल 2009, श्रीरंग पट्टनम

श्रवणबेलगोला से 60 कि.मी. विहार कर आचार्य श्री के.आर. पेट, रामहल्ली (जैन मंदिर), पांडवपुरा से होकर श्रीरंगपट्टनम पहुँचे। यह ऐतिहासिक स्थान टीपू सुल्तान की राजधानी रही है। यहाँ एक हजार वर्ष पुराना आदिनाथ जिनालय है जिसमें सुंदर आदिश्वर प्रभु की मूर्ति के साथ शास्त्रोक्त खड्गासन चौबीसी विराजित है। सुल्तान के काल में जैनों के साथ दुर्व्यवहार होने के कारण वे शहर छोड़ अन्यत्र चले गए।

शिलालेखानुसार श्रीरंग हिंदू मंदिर का निर्माण 100 जैन मंदिरों को तोड़कर नागमंडल के राज्यपाल हब्बर ने करवाया था।

18 अप्रैल 2009 मैसूर कनकगिरि

श्री रंगपट्टनम से 9 कि.मी. का विहार कर मैसूर श्वेताम्बर मंदिर में रात्रि विश्राम किया। पता चलते ही मैसूर दिगम्बर जैन समाज के श्रावकगण आचार्य श्री को लेने आ पहुँचे।

प्रातःकाल वर्धमानैया बोर्डिंग पहुँचकर श्री पार्श्वनाथ के समवशरण का दर्शन किया। यहाँ पर (इस चैत्यालय में) आदिकुंवर को गोद में लिए माता मरुदेवी की अलभ्य व मोहक मूर्ति है। मैसूर में संतों के ठहरने के लिए उस समय वही एक अनुकूल व योग्य जगह थी।

19 अप्रैल को प्रातः मैसूर से 16 कि.मी. चलकर आप ससंघ कड़कोला पहुँचे। रास्ते में विहार करते हुए सुप्रसिद्ध मैसूर पैलेस देखा। पहले इसमें एक विशाल जिनालय था। बाद में इसे पैलेस के पश्चिम दिशा में स्थानांतरित कर दिया गया। यहाँ शांतिनाथ भगवान की प्राचीन मूलनायक खड्गासन प्रतिमा के साथ अनेक प्रतिमाएँ हैं। मंदिर बोर्डिंग के पास ही है। विहार में रास्ते में लोगों को अहिंसा व शांति के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करते हुए 20 अप्रैल 2009 को आप कनकगिरि तीर्थवंदना के लिए चल पड़े।

इसके लिए नंजनगूड़ जाना पड़ता है वहाँ से एक रास्ता ऊटी व दूसरा चामराज नगर जाता है। कनकगिरि जाने के लिए चामराज जाने वाला रास्ता चुनना पड़ता है। नंजनगूड़ में प्रसिद्ध शिव मंदिर है। यहाँ पर स्थानकवासी जैन धर्मशाला वालों ने आपके ठहरने की व्यवस्था की। रात्रिविश्राम यहाँ से 6 कि.मी. दूर महादेव नगर के एक स्कूल के बरामदे में

किया। पहाड़ी व घने जंगलों वाला क्षेत्र होने से अचानक जोरदार बारिश हो गई। बरामदे में पानी भर गया अतः आपके साथ संघ ने वर्षा, शीत व अन्य अनेकों परिषह सहते, आत्म ध्यानस्थ रह बैठे-बैठे रात बिताई।

प्रातः 10 कि.मी. चलकर मेरले में आहार चर्या की व 8 कि.मी. चल गटवाड़ीपुरा में रात्रि विश्राम किया।

22 अप्रैल 2009 को यहाँ से 11 कि.मी. चलकर प्रातः मलेयूर-कनकगिरि पहुँचे। मलेयूर में 800 वर्ष पुराने आदिनाथ भगवान के जिनालय के दर्शन किए। यहाँ मात्र 8 जैन श्रावकों के घर हैं। यहाँ से दर्शन कर एक कि.मी. दूर चलकर कनकगिरि पहुँचे।

22 अप्रैल 2009 को कनकगिरि की तलहटी में भुवनकीर्ति भट्टारक स्वामी ने आपकी भक्तिभाव से भावभीनी अगवानी की व कनकाद्रि निलय के एक कक्ष में ठहराया। वहीं एक कक्ष में पार्श्वनाथ भगवान की खड्गासन प्रतिमा है। दर्शन पश्चात आहार चर्या की। आहार चर्या पश्चात आप कनकगिरि पहाड़ पहुँचे व बड़े भक्तिभाव से पार्श्वनाथ भगवान के प्राचीन जिनालय का दर्शन कर प्रभु की मनोरम प्रतिमा के सम्मुख सामायिक की।

कनकगिरि सिद्धक्षेत्र है जहाँ से सूर्यपुर के राजा महामुनि सुप्रतिष्ठ तथा ज्ञानचंद्र मुनि मोक्ष गए। कावेरी नदी के तट पर अवस्थित यह तीर्थ क्षेत्र बड़ा मनोरम है। ये क्षेत्र राम-लक्ष्मण व सीता की विहार भूमि भी रहा व यहीं रावण ने अनन्तवीर्य मुनि से स्वदार संतोषव्रत लिया था। यह अनेक मुनियों की समाधि स्थली है। चट्टानों पर उकेरी गई अनेक लघु मूर्तियाँ तथा भट्टारकों की पीठ यहाँ है।

शिखरजी की तरह यहाँ अनेक टोंके बनी हैं। यह आचाार्य पूज्यपाद स्वामी की कर्मस्थली है। यहाँ पर रह उन्होंने अनेक ग्रंथों की रचना की, तपस्या की व यहीं समाधि ली। उनकी चरण पादुका पर्वत की चोटी पर स्थित है। पर्वत की सर्वोच्च चोटी पर एक प्राचीन स्तंभ है। कनकगिरि काफी प्राचीन तीर्थ है। आसपास गाँव में काफी पुरातत्व बिखरा पड़ा है। श्रवणबेलगोल के बाद प्रकृति की सुरम्य गोद में कावेरी के कलकल करते तट पर बसे इस सिद्धक्षेत्र में आचार्य श्री को अनुपम शांति का एहसास हुआ। इस मनोरम स्थली में तीन दिन और दो रात रह आपने आत्मानंद में विहार किया। 23 अप्रैल 2009 को आपने कनकगिरि में कुछ साहित्य सृजन किया, कविताएँ लिखीं। यहाँ आपको दिव्य व अलौकिक आभास हुआ जो शब्दातीत है।

पैर में स्नायु-दर्द होने से आप मुश्किल से यहाँ पहुँचे थे। रात्रि विश्राम भी यहीं किया। लेकिन हुआ यूँ कि आपके निद्रा में जाते ही किसी ने पैर की वैयावृत्ति की, थकान होने के कारण आप आँख बंद किये रहे और वैयावृत्ति के लिए मना करते रहे। जब दो-तीन मिनिट बीत गए तब आपने आँख खोलकर देखा कि कौन है जो हूं...हूं... इशारा करने पर भी पैर खींच रहा है; किंतु वहाँ कोई नहीं था। हाँ, जब सुबह चले तो पैर का दर्द गायब था।

24 अप्रैल 2009 को पुनः कनकगिरि से 10 कि.मी. दूर गटवाड़ा के लिए पद विहार कर दिया। कनकगिरि के दर्शन से मन प्रसन्न व ऊर्जा से भर गया था। दोगुने उत्साह से आप आत्मानंद विहारी रह पद संचलन कर रहे थे। गटवाड़ीपुरा में अजैन भक्तों ने रात्रि विश्राम की व्यवस्था किसी स्कूल में करवाई। पद विहार में जैनेतर समाज की अधिकांशतः जगह बड़ी श्रद्धा व भक्ति भाव से आपके ठहरने , रात्रि विश्राम व आहार चर्या की व्यवस्था करवा रहा था। आप उन श्रद्धालुजनों को मद्य, मांस व तम्बाकू सेवन का त्याग कराते, सदाचार से रहने व अहिंसामयी जीवन जीने की शिक्षा देते रहते थे।

25 अप्रैल को यहाँ से पुनः नेरले, महादेव नगर व नंजनगूड़ से 13 कि.मी. दूर देवी मंदिर में रात्रि विश्राम तक 28 कि.मी. की पदयात्रा तय की। सुबह पुनः पदयात्रा कर तांडवपुर गाँव से 3 कि.मी. दूर एचिगनहल्ली गाँव से कुछ दूर कपिला नदी के किनारे प्राकृतिक छटायुत रम्य एकांत स्थली में एक प्राचीन मंदिर में श्याम वर्ण 3 फुट खड्गासन नेमिनाथ भगवान की मनमोहक प्रतिमा व छह अन्य जिन बिम्बों के दर्शन किए। यहाँ बाहर मानवाकार यक्ष के सामने

घोड़ा बना है। ये प्राचीन भव्य जिनालय हमारी प्राचीन संस्कृति की समृद्धि की कथा कहते हैं। यहाँ से शाम को कड़कोला पहुँचे।

आचार्य श्री के पद विहार व दक्षिण तीर्थ दर्शन में नातेपूते के श्रावकों का सराहनीय योगदान चलता रहा। महावीर सेना के सक्रिय सदस्य व समाज से श्रावक/ श्राविकाएँ बारी-बारी से ग्रुप बनाकर आ- जा रहे थे। मार्ग की व्यवस्था 1008 चंद्रप्रभु जिन मंदिर ट्रस्ट व चंद्रप्रभु पत संस्था कर रही थी।

27 अप्रैल 2009 को अक्षय तृतीया का महापर्व आपने कड़कोला में मनाया। नातेपूते के श्रावकों ने यहाँ भक्तामर महामंडल का विधान किया। 4-5 घर के समाज में यहाँ त्यागी भवन तो हैं पर जिनालय नहीं है। लगातार लम्बी चलाई के कारण पैर में असहनीय दर्द होने के कारण रात्रि विश्राम कड़कोला में ही किया। चुनाव के कारण वहाँ पुलिस प्रशिक्षण भी चल रहा था। जवानों को आचार्य श्री ने भी संबोधित किया। आपने नैतिकता पर उद्‌बोधन दिया। 28 अप्रैल की शाम को मैसूर के लिए विहार कर दिया।

इस प्रकार आचार्य श्री स्वयं के व औरों के जीवन के चलचित्र में चारित्र की सुगंध भरते, पद विहार करते पैरों का असहनीय दर्द सहते उसी रास्ते से पुनः मैसूर पहुँचे। क्योंकि कनकगिरि से उत्तर भारत की ओर जाने के लिए मैसूर आना पड़ता है।

मैसूर में विनोद बाकलीवाल, विश्वसेन, प्रकाशचंद्र तथा सुनील जैन की सक्रियता से आपकी भव्य अगुआई व मंगल प्रवेश हुआ। इन सक्रिय कार्यकर्ताओं के साथ एक श्रावक ने कहा, ''आचार्य श्री आपके पैर में लगातार लम्बा विहार करते रहने के कारण बड़ा दर्द है। आप मैसूर ही रुक जाइये हमें भी वैयावृत्ति व सेवा का अवसर मिलेगा।''

आचार्य श्री आपका स्वास्थ्य ठीक नहीं लग रहा है। तब आचार्य श्री ने कहा कि ''शारीरिक स्वास्थ्य धीरे-धीरे ठीक हो जाएगा। इस शरीर को आराम देने पर यह प्रमादी हो जाता है। अप्रमाद स्वभावी भावना ही हमारे लिए कल्याणकारी है।''

30 अप्रैल 2009 को श्रावकों एवं मुनि श्री प्रसन्नसागरजी के आग्रह पर आप मैसूर के एशिया का नंबर वन चिड़ियाघर देखने गए। किसी ने पूछा ''आचार्य श्री चिड़ियाघर देखने का मन कैसे बना लिया?''

आचार्य श्री ने जू को अपने जीवन दर्शन से जोड़ते हुए बड़ा सुंदर उत्तर दिया, ''शास्त्रों में जीव-जंतुओं की 84 लाख योनियाँ बताई हैं। उनमें से कई प्राणी जू में देखने को मिले। उन जीवों को देखकर, उनकी उदासीनता, पराधीनता, बेचैनी व दुःखों को देखकर वैराग्य को बल मिलता है। तिर्यंच पर्याय के दुःखों का बोध होता है। उनकी विविधता के बोध से यह बोध भी होता है कि मेरा जीवन भी ऐसी ही पर्यायों में रह दुःख भोगता रहा है। इस जू को देखने से मेरा चिंतन पुष्ट व वृद्धिगत हुआ। छल-प्रपंच व मायाचारी से तिर्यंच गति का बंध होता है। मुझे इन कषायों व विकारों से बचे रहना है।''

1 मई 2009 को मैसूर में आचार्य श्री का पुनः प्रसन्नसागरजी से मिलन हो गया था। 1 मई को यहाँ से आपने गोम्मटगिरि व प्रसन्नसागरजी ने कनकगिरि के लिऐ विहार कर दिया।

2 मई गोम्मटगिरि

2 मई 2009 को आप गोम्मटगिरि पहुँचे। पहाड़ी पर हल्के कृष्ण ग्रेनाइट की भगवान बाहुबलि स्वामी की 15 फीट ऊँची मनोहारी प्रतिमा के दर्शन किए। पहाड़ी इतनी छोटी व ऊँची है, मानो बाहुबलि स्वामी की मूर्ति स्थापना के लिए ही प्रकृति ने इस पहाड़ी को बनाया हो। रात्रि विश्राम आपने पहाड़ी पर ही किया। जहाँ शांति का साम्राज्य था।

तलहटी में धर्मशाला में दो मंदिर व चौबीस चरण टोंक हैं। एक ओर नेमिनाथ भगवान के चरण चिह्न बने हैं। आपने

नीचे भी बड़ी श्रद्धा भक्ति से दर्शन किए। 3 मई को नातेपूते के विहार में साथ चल रहे श्रावकों ने गोम्मटगिरि की 15 फीट उतंग भगवान बाहुबलि की प्रतिमा का पूर्णाभिषेक किया। जिसमें मैसूर से आए श्रावक भी सम्मिलित हो गए। यहाँ से दोपहर में विहार कर 10 कि.मी. चल एक स्कूल में रात्रि विश्राम किया। जहाँ मैसूर का अजैन मुनि भक्त श्रावक राह भटक गया था, खोजता- खोजता आ पहुँचा। आचार्य श्री के दर्शन कर कृत-कृत्य हो गया।

4 मई को विहार कर के.आर. नगर के एक श्वेताम्बर जैन के घर आहार चर्या हुई। घर मालिक ने छह माह का रात्रि भोजन त्याग कर, आहार का एक ग्रास देने की मनुहार करते-करते चार वर्ष का रात्रि भोजन त्याग का नियम ले लिया। इस प्रकार विहार में धर्मोपदेश देने के साथ सामाजिक चेतना जागृत करने का काम भी चलता रहा।

आपके पाँव का दर्द लगातार पद संचलन करते रहने से बढ़ता जा रहा था। मैसूर के वैद्य सी.बी. नागराज मंत्र से ठीक करते रहे। इसी दिन मुनि श्री प्रसन्नसागरजी द्वारा कटिहार (कलकत्ता) से भेजे गए दिनेश जैन आए। उन्होंने पैर के शिराजाल की खूब खिंचाई की। उस वक्त तो काफी दर्द हुआ पर फिर कुछ दर्द घट गया। पर संतों के लिए विश्राम कहाँ? इसी असहनीय पाँव पीड़ा में आचार्य श्री ने पद विहार कर दिया।

सायंकाल के इस विहार में मात्र एक डेढ़ कि.मी. चले होंगे कि आँधी-तूफान, ओलों के साथ मूसलाधार बारिश होने लगी। पानी रुकने का नाम नहीं ले रहा था। ऐसे ही मौसम में ठिठुरते- काँपते आप परिषहजयी संत रात्रि विश्राम स्थल पहुँचे। साथ चल रहे श्रावकगण भी भीग गए थे। पैर दर्द व भीगने से आपको बुखार हो आया। पर मुक्ति पथ के पथिक को इसकी परवाह कहाँ? नित्य नियमानुसार आपने सामायिक प्रतिक्रमण व साधना की।

5 मई 2009 शालिग्राम में 13 कि.मी. पद विहार कर पहुँचे। यहाँ सौ घर के समाज में 5 जिन मंदिर हैं। यहाँ विराजित उपाध्याय श्री समतासागरजी ने भी समाज के साथ आपकी भावभीनी अगवानी की। यहाँ के चार मंदिर अनंतनाथ, नेमिनाथ, अनन्तनाथ व आदिननाथ जो पास-पास स्थित हैं, में मूलनायक खड्गासन प्रतिमाएँ हैं। पाँचवें मंदिर के आपको दर्शन न हो सके। दोपहर के प्रवचन के पश्चात पदविहार कर 12 कि.मी. मंगलवाड़ी में एक लिंगायत के नवनिर्मित भवन में रात्रि विश्राम किया। यहाँ नातेपूते से और श्रावकगण आ गए।

6 मई को प्रातः 11 कि.मी. चलकर तालनहल्ली व 19 कि.मी. चलकर होलेनरसीपुरा पहुँचे। यहाँ नेमिनाथ भगवान के प्राचीन जिन मंदिर के दर्शन किए। शुकनासा में 21 लघु जिन प्रतिमाएँ हैं। यह गाँव पूर्व प्रधानमंत्री एच.डी. देवगौड़ा की जन्मभूमि है।

यहाँ से 34 कि.मी. चलकर 8 मई 2009 को आप हासन पहुँचे। विहार में हासन के युवक साथ चल रहे थे। हासन में आपकी भव्य अगवानी हुई। यहाँ दो प्राचीन व एक नवीन मंदिर है। चिक्कबसदि (मंदिर) में आदिनाथ स्वामी व पार्श्वनाथ स्वामी की मूलनायक प्रतिमाओं के दर्शन कर आपका मन गदगद हो गया। दोड्डबसदि यहाँ का सबसे बड़ा मंदिर है जिसमें पार्श्वनाथ भगवान की मूलनायक प्रतिमा तथा बाहुबलि भगवान की 5 फीट ऊँची मनोहारी प्रतिमा है। आपने देखा दक्षिण में भगवान बाहुबलि का बड़ा महत्व एवं उनमें लोगों की गहरी आस्था है। द्वितीय मंजिल पर आसपास से खुदाई में प्राप्त श्री नेमिनाथ व चौबीसी की अन्य प्रतिमाएँ विराजमान हैं। दोड्डबसदि इस क्षेत्र का प्रसिद्ध मंदिर है। इसी के नाम से यह रोड प्रसिद्ध है। यहाँ की धर्मशाला में श्रावकों एवं साधुओं के लिए अच्छी व्यवस्था है। 25 कि.मी. क्षेत्र में फैले इस शहर में जैन लोगों की अच्छी खासी संख्या है। श्रावकगण मुनिभक्त व आस्थावान हैं।

14 मई चारमाड़ी घाटी

हासन से 35 कि.मी. पद विहार कर 14 मई 2009 को आप जनकलु (चारमाड़ी घाटी) पहुँचे। चारमाड़ी घाटी की चर्चा आचार्य श्री अक्सर गुरुदेव श्री सन्मतिसागरजी के मुखारबिंद से सुनते रहते थे। आज आचार्य श्री

सुनीलसागरजी को उस घाटी में चलने का भी व विश्राम करने का अवसर प्राप्त हुआ।

आचार्य श्री ने अभी तक विहार किया उनमें सबसे सुंदर व विशिष्ट यह चारमाड़ी घाट/घाटी दिखी। सुनने व देखने में बड़ा अंतर है। उन्हें घाटी में साक्षात् ऊँचे-मोटे, छोटे-पतले, घने-आछे विविध प्रकार के पेड़-पौधे, वनोषधियाँ, झरझर झरते झरने, तरह-तरह के पशु-पक्षी देखने को मिले। रात्रि में बोलने वाले कीड़े दिन में बोल रहे थे। बड़ा शांत, सुरम्य व एकांत, शिखरजी जैसा पवित्र वातावरण था। रोड का पुनर्निर्माण चल रहा था अतः वाहनों का आवागमन बंद था, मनुष्यों की आवाजाही भी कम होने से वहाँ बिल्कुल कोलाहल न था। मार्ग का पुनर्निर्माण होने की वजह से मनुष्यों का भी वहाँ से गुजरना वर्जित था।

इस प्रकृति के मनमोहक सुरम्य वातावरण में इस घाटी में स्थित अणप्पा स्वामी के मंदिर में आप ठहरे। यहीं आहार चर्या हुई। चर्या में झरनों का पानी ही उपयोग हुआ क्योंकि यहाँ पर झरने का पानी ही उपलब्ध है। जब डॉ. डी. वीरेंद्रजी हेगड़े को आचार्य श्री के उस घाटी में होने की खबर मिली तब आनन-फानन में डॉ. डी. वीरेंद्र हेगड़ेजी ने पुष्पदंत नामक एक व्यक्ति को भेजकर आगे के मार्ग के लिए संघ को निर्माणरत मार्ग से होकर विहार करने की अनुमति की सूचना भेजी। क्योंकि उन्होंने सोचा कि निर्माणरत मार्ग से 16 कि.मी. चलकर ही घाटी पार हो जाएगी वरना संतों को 160 कि.मी. का लम्बा चक्कर लगाकर पद विहार करना पड़ेगा। जो उन दिगम्बर संतों के लिए बड़ा कष्टदायक होगा। हेगड़ेजी का यह सोच सराहनीय है जो हमारे संतों के प्रति इतने अधिक संवेदनशील हैं।

15 मई चारमाड़ी गाँव 16 कि.मी.

निर्माणरत 16 कि.मी. लम्बा रास्ता व तीन हजार फीट ऊँची घाटी की कठिन चढ़ाई चढ़ते आचार्यश्री पैरों में लगातार लम्बा पद विहार करने के कारण हो रहे असहनीय दर्द के बावजूद रास्ता पार कर रहे थे। जंगल इतना सघन कि सूर्य किरणें जमीन का स्पर्श भी नहीं कर पा रही थी। इतने लम्बे-लम्बे पेड़ उन्होंने पहली बार देखे थे। उनकी ऊँचाई देखने के लिए गर्दन ऊँची करने पर गर्दन दुःख जाती थी। करीब एक सत्तर फीट ऊँचे एकदम सीधे खड़े सीधे पेड़ को देखकर तो उनके आश्चर्य का ठिकाना न था। उसकी जड़ें गहरी व तिकोनी आकृति 15 फीट से भी अधिक विस्तृत होगी। निर्माणाधीन होने के कारण वह मार्ग बिल्कुल सुनसान था।

उस कठिन चढ़ाई वाली अनोखी चारमाड़ी घाटी को पार कर आप चारमाड़ी गाँव पहुँचे। वाहनों से सफर करने पर प्रकृति का इतना नैकट्य प्राप्त नहीं हो सकता जितना पद विहार करने वाले संतों को प्राप्त होता है। इसीलिए आपको विविध वनस्पतियों वाले उस जंगल की सूक्ष्म जानकारियाँ मिलती रहीं। गुरुवर के श्रीमुख से इस घाटी के बारे में बहुत बार सुना था, पर आज स्वयं वे उस घाटी में विहार कर साक्षात अनुभव कर रहे थे।

चारमाड़ी गाँव से बेलतंगड़ी के पाँचवीं सदी में बने जिनालय में 6 फीट ऊँची पार्श्वनाथ भगवान की व अन्य प्रतिमाओं के दर्शन करते हुए 16 मई को आप धर्मस्थल पहुँचे।

16 मई धर्मस्थल में प्रवेश

धर्मस्थल में डॉ. वीरेंद्रजी हेगड़ेजी ने आपका भावभीना भव्य स्वागत किया। 250 सीढ़ियाँ चढ़कर रत्नगिरि पर्वत पर अवस्थित 39 फीट ऊँची भगवान बाहुबलि की अर्वाचीन प्रतिमा के दर्शन किए। प्राकृतिक मनोरम वातावरण में स्थित यह मनमोहक प्रतिमा नैनों के द्वार उनके हृदय में उतर गई।

धर्मपरायण सरल स्वभावी धर्मस्थली के धर्माधिकारी पद्मश्री हेगड़ेजी आचार्य श्री को अपने गृह चैत्यालय के दर्शन कराने ले गए। ऊपर की वेदी में पार्श्वनाथ व नीचे की वेदी में आदिनाथ मूलनायक भगवान के दर्शन कर आपकी रास्ते

की चलाई की थकान आपोआप मिट गई। स्वर्ण-रजत, स्फटिक के अलावा वहाँ अनेक रत्न प्रतिमाएँ विराजित हैं।

हेगड़ेजी ने क्षेत्र का परिचय देते हुए अनेक महत्वपूर्ण जानकारियाँ दीं। वहाँ गोशाला, श्रावकों के लिए भोजनशाला हमेशा संचालित होती हैं। उन्होंने आचार्य श्री को उनका पुराना देवताओं के निवास वाला घर तथा चंद्रनाथ स्वामी का जीर्णोद्धारित सुंदर मंदिर, विशिष्ट जानकारियों के साथ दिखाया। रास्ते भर व वसतिका (मंदिर) पहुँचने पर भी आप क्षेत्र की जानकारियाँ देते हुए आचार्य श्री से धर्म चर्चा करते रहे।

धर्मस्थली में श्रीमती हेमावती वीरेन्द्र हेगड़े ने पड़गाहन कर आचार्य संघ की बड़े भक्तिभाव से आहार चर्या संपन्न कराई। उनके धर्मस्थल स्थित जिनालय के दर्शन करने आने वाले प्रत्येक यात्री को जब प्रेम, आग्रह व आदरपूर्वक भोजन कराया जाता है तब वे इन महायात्री, मुक्ति के महापथिक, महामात्र की आहार चर्या से कैसे वंचित रहते? हेगड़ेजी जैसे श्रावक श्रेष्ठ ने तीर्थ क्षेत्र की महिमा बढ़ा दी है।

20 मई 2009 वेणूर

यहाँ धर्मस्थल में हेगड़ेजी के विशेष आग्रह पर आपने प्रसिद्ध कार म्यूजियम, विश्व प्रसिद्ध मंजूनाथ मंदिर, विशाल भोजनालय, सामग्री का विशाल गोदाम आदि विशिष्ट स्थान देखे। शाम को 'मंजूषा' नाम का विशाल पुरातत्व संग्रहालय देखा, जहाँ कुछ प्राचीन जैन मूर्तियाँ भी हैं। आपकी धर्मस्थल की यात्रा बड़ी सार्थक व सफल रही।

शाम को साथ चल रहे नातेपूते व अन्य क्षेत्रों के श्रावकों का हेगड़े दंपति ने सम्मान किया। आचार्य श्री के मौन के बावजूद भी चर्चा की। यहाँ आपने देखा कि अभी भी मनुष्य में मनुष्यता शेष है व हाथी जैसे जानवर भी समझदार हैं।

18 मई उजिरे

धर्मस्थल से आचार्य श्री प्रातः विहार कर 18 मई 2009 को प्रकृति की गोद में पल रहे उजिरे गाँव पहुँचे। यहाँ आप प्राचीनतम व प्रारंभिक सिद्धवन गुरुकुल में ठहरे। प्रकृति के रमणीय प्रांगण में विशाल क्षेत्र में फैला यह 'सिद्धवन' सिद्धालय की याद दिलाने वाला है। यहाँ मुफ्त में पढ़ रहे 300 विद्यार्थियों को देख आपको वर्णी संस्कृत विद्यालय मोराजी की स्मृति ताजा हो गई। इसका निर्माण भी रत्नवर्मा हेगड़ेजी ने करवाया था।

यहाँ विशाल कृषि क्षेत्र के साथ गायों का गोठा (गोशाला) है। यहाँ साँप घूमते रहते हैं पर किसी को काटते नहीं। आचार्य श्री ने भी दिन में दो-तीन बार सांप देखे। यहाँ नेमिसागर वर्णी ने लम्बे समय प्रकृति के निश्छल वातावरण में रह आत्म साधना की तथा विद्यार्थियों को ज्ञान संस्कार भी दिया।

आध्यात्म योग से सुसंपन्न, श्रुत सिद्धांतों में निष्णात तथा संयम की वल्गाओं से चंचल इंद्रिय समूह पर लगाम कसने में पारंगत आचार्य श्री के व्यक्तित्व व कृतित्व से प्रभावित हेगड़े परिवार पुनः शाम को आचार्य दर्शन के लिए उजिरे पधारा। धर्मस्थल में आचार्य श्री का मौन होने से ठीक से चर्चा नहीं हो सकी थी। आचार्य श्री के नेत्रों में दया की सजलता, हृदय में वात्सल्य की आर्द्रता, मन में आत्मकल्याण की दृढ़ता तथा पावों को विश्व कल्याण की तूफानी गति से धावमान देख हेगड़ेजी ने अपना हृदय उनके सम्मुख खोलकर रख दिया। उन्होंने उनसे ऐतिहासिक, धार्मिक, सामाजिक व कई अन्य महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा की। आचार्य श्री को हेगड़ेजी ने ग्रामवृद्धि, व्यसन मुक्ति, स्वयं रोजगार (रूड़सेरी) जैसी अन्य कई महत्वपूर्ण योजनाओं की रूपरेखा बताई व उन पर विस्तृत चर्चा की। आचार्य श्री की विद्वता से प्रभावित हो उनके सुझाव व परामर्श माँगे। आचार्य श्री के बहुमूल्य लोकोपयोगी सुझाव व परामर्श से गदगद हेगड़ेजी का गुरु चरणों में अपने आप माथा झुक गया। उन्होंने कहा कि ''आप जैसे जनहितैषी, निष्काम साधक की प्रेरणा व

आशीर्वाद सदा मेरा सम्बल बना रहेगा और मैं अपनी इन योजनाओं को आपके मार्गदर्शन में कार्यान्वित करता रहूँगा।''

19 मई 2009 को उजिरे से विहार कर आप प्रातः बेतलगंडी तथा शाम को परगंडी पहुँचे। प्राकृतिक सुंदर वातावरण व विशाल प्रांगण में यहाँ 200 वर्ष व इससे भी प्राचीन जिनालयों के दर्शन कर साधना के लिए पवित्र स्थान पा कुछ समय यहाँ आपने आत्म साधना की। हृदय में शीतलता के सोते झरने लगे। साठ घरों के जैन समाज (परगंडी) ने जीविका का अन्य साधन उपलब्ध न होने पर कृषि को ही अपना व्यवसाय बना रखा है। यहीं पर पार्श्वनाथ स्वामी का सौ वर्ष प्राचीन जिनालय है।

20 मई वेणूर प्रवेश

वेणूर में 20 मई प्रातः प्रवेश करते ही एक टेकरी पर तीन प्राचीन जैन मंदिरों के आपने दर्शन किए। पहले मंदिर में छोटी खड्गासन चौबीसी, दूसरा मूलनायक शांतिनाथ स्वामी का मंदिर व तीसरा आदिश्वर स्वामी के प्राचीन मंदिर में प्राचीन आदिनाथ प्रतिमा विराजमान हैं। गाँव से निकलते हुए आप एक ऊँची टेकड़ी पर पहुँचे, जहाँ भगवान बाहुबलि की 35 फीट उतंग प्रतिमा सुशोभित है। 312 वर्ष प्राचीन इस प्रतिमा का निर्माण श्री चामुंडराय के वंशज वीर तिम्मण्ण अजिल राजा ने कराया था। मूर्ति के सामने दो जिनालयों के दर्शन किए जिनके मूलनायक शांतिनाथ व चंद्रनाथ स्वामी हैं। बाहुबलि मूर्ति के पीछे के प्रांगण में भी दो जिनालयों के आपने दर्शन किए जिनमें से एक जिनालय का जीर्णोद्धार चल रहा है। मात्र 10 परिवारों के समाज में यहाँ ये आठ प्राचीन जिनालय हैं। जिनमें से दो का निर्माण सन् 1429 व तीन का सन् 1604 तथा एक का सन् 1621 में हुआ तथा एक का शिलालेख नहीं है, एक का घिस गया है। इस प्रकार आठ जिनालयों के आपने दर्शन किए जो यह दर्शाते हैं कि प्राचीन काल में यहाँ जैन धर्म का अच्छा प्रचार-प्रसार रहा होगा।

22 मई 2009 मूडबिद्री

यहाँ से 10 कि.मी. विहार कर आप परिजे पहुँचे। वहाँ भी टेकरी पर पुष्पदंतनाथ भगवान के प्राचीन जिनालय के दर्शन कर रात्रि विश्राम होशगंडी में एक श्रावक के गृह चैत्यालय में किया। वहाँ से सुबह 6.30 बजे 22 मई को आप मूडबिद्रि (जैन काशी) पहुँचे। वहाँ के भट्टारक श्री चारूकीर्ति स्वामीजी की अगुआई में समाज ने आपका भव्य स्वागत किया। वहाँ तक आपकी यशकीर्ति की सुरभि आपके जाने से पूर्व ही फैल गई थी। मठ मंदिर में विराजित पार्श्वनाथ भगवान के दर्शन किए। स्वामीजी व समाज के आग्रह पर आपने प्रवचन दिया। किंतु आहार में आपको अंतराय हो गया। इसे कर्म निर्जरा का निमित्त मान मन में संतोष धारण कर आप सामायिक में बैठ गए।

सामायिक के पश्चात आपने एक हजार स्तंभों पर निर्मित तीन खंड (मंजिल/तल) वाले विश्व प्रसिद्ध त्रिभुवन तिलक चूड़ामणि मंदिर में विराजमान चंद्रप्रभु की अत्यधिक आकर्षक व अतिशयकारी प्रतिमा के दर्शन किए। जो अष्टधातु की आठ फीट ऊँची प्रतिमा है। गर्भगृह के बाहर भरत बाहुबलि के अलावा अनेक जिन बिम्बों के आपने दर्शन किए। विश्व के इस विशाल जिनालय के पाँच परिक्रमा पथ इसकी अद्‌भुत विशेषता है।

द्वितीय तल (मंजिल) पर आपने 3.5 फीट ऊँची मूलनायक सुपार्श्वनाथ भगवान की श्याम वर्णी चित्ताकर्षक प्रतिमा के अलावा अनेक पाषाण एवं धातुओं की मूर्तियों के दर्शन किए। मूलवेदी के ठीक सामने सहस्त्र कूट (धातुमय) के दर्शन किए। मध्य के दो अहातों में भी दोनों ओर दो वेदियों में विराजमान जिन प्रतिमाओं के दर्शन किए।

तृतीय तल (मंजिल) तो अद्‌भुत है। यहाँ पर 300 पाषाण प्रतिमाएँ तथा कई रत्न मूर्तियाँ हैं। गोमेदवर्णी 2.5 फीट ऊँची चंद्रप्रभु की खड्गासन सुंदर प्रतिमा के दर्शन करते आपकी नजरें नहीं हट रही थी। एक फीट ऊँची 18 स्फटिक

की मूर्तियाँ व स्फटिक की ही सिद्धों की मूर्तियों के दर्शन कर आपका मन पुलकित हो गया। अपने संपूर्ण विहार में ऐसी असाधारण मूर्तियों के दर्शन आपने पहली बार किए। इनके अलावा भी आपने वहाँ कच्चे पन्ने, पांचू, अमृतशिला, मूंगा आदि रत्नों के जिनबिम्ब के दर्शन किए। यह मंदिर हमारी तात्कालिक जैन संस्कृति की समृद्धि का प्रतीक है।

23 मई 2009 को आपने 1000 (एक हजार) वर्ष प्राचीन गुरुबसदि (मंदिर) में नौ फीट ऊँची पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा के दर्शन किए। कहा जाता है कि एक हजार वर्ष पूर्व गुरुबसदि में मंगल प्रवास करने वाले एक मुनि महाराज जब शुद्धि के लिए जंगल गए तब उन्हें जमीन में दबी इस मूर्ति का आभास हुआ। उनके बताए स्थान पर खुदाई करने पर यह प्रभु की मनोज्ञ मूर्ति प्रकट हुई। मूर्ति के 1500 वर्ष प्राचीन होने का अनुमान लगाया जाता है। गुरु को आभास होने के कारण इस मंदिर का नाम 'गुरुबसदि' पड़ गया। पाषाण निर्मित यह द्विमंजिला जिनालय अति सुंदर है। ऊपर की मंजिल पर स्फटिक प्रतिमा, धातु का नंदीश्वर जिनालय व अनेक खंडित प्रतिमाएँ हैं।

प्राचीनकाल की इस समृद्ध परंपरा से प्रेरित हो कुछ वर्षों पूर्व इस मंदिर के पीछे वर्तमान में श्रावकों ने एक रत्नमंदिर का निर्माण करवाया है। इसमें प्राचीन रत्न प्रतिमाएँ विराजमान हैं। कहा जाता है कि तत्कालीन समाज के श्रावक श्रेष्ठ विदेशों में धन कमाने जाते थे जहाँ जिनेंद्र देव की पूजा- आराधना के लिए ये अपने पास रत्न मूर्तियाँ रखते थे व लौटने पर भट्टारकजी को दे देते थे। जिन्हें वे मंदिर में विराजमान कर देते थे। इस प्रकार यहाँ इतनी रत्न मूर्तियों का संग्रह हो गया है।

इस प्रकार यहाँ आचार्य श्री ने 18 जिन मंदिरों के दर्शन किए जिनमें छह जगह चौबीसी है। कुछ मंदिर व्यवस्था के अभाव में ठीक हालत में नहीं हैं।

यहाँ की एक और विशेषता यह है कि यहाँ की पांडु बसदि में प्राचीन सरस्वती भंडार सुरक्षित रखा गया है। धवल, महाधवल व जय धवल के रूप में प्रकाशित ताड़पत्र की मूल प्रति भट्टारकजी के पास सुरक्षित है।

आचार्य श्री ने इन मंदिरों से अनुमान लगाया कि निश्चित ही उस समय दक्षिण में बड़ा व समृद्धिशाली जैन समाज यहाँ रहता होगा। इस प्रकार यह क्षेत्र धर्म, ज्ञान (सरस्वती भंडार) व समाज की आर्थिक समृद्धि का प्रतीक है। भद्रबाहु महाराज इसीलिए अपने बारह हजार शिष्यों के साथ दक्षिण में आ गए थे।

आचार्य श्री ने देखा कि जहाँ मंदिरों में रत्नमूर्तियाँ विराजमान हैं वहीं अम्मनवर बसदि व लेप्पदबसदि (मंदिरों) में अतिप्राचीन मिट्टी की भी भगवान व यक्ष व देवियों की प्रतिमाएँ हैं जो रंगी हुई मालूम पड़ती हैं। ये मूर्तियाँ इतनी अच्छी मिट्टी की बनी हुई हैं कि आज भी यथावत् स्थिति में हैं।

यह क्षेत्र, यहाँ की मूर्तियाँ व मंदिर जितने विशिष्ट हैं, उनके नाम भी वैसे ही विशिष्ट हैं। जैसे (1) अम्मनवर बसदि (2) त्रिभुवन तिलक चूड़ामणि बसदि (3) बड़गबसदि (4) शेट्टर बसदि (5) अम्मनवर बसदि (6) बेट्टेकरि बसदि (7) कोटिबसदि (8) विक्रम शेट्टी बसदि (9) कल्लू बसदि (10) लेप्पदबसदि (11) देरम्मशेट्टी बसदि (12) चोलशेट्टी बसदि (13) महादेव शेट्टी बसदि (14) बैकणतिकारी बसदि (15) केरे बसदि (16) पंडुबसदि (17) श्री जैन मठ (18) श्री जैन पाठशाला बसदि जहाँ मुनि सुव्रतनाथ की अमृतशिला की प्रतिमा है।

कन्नड़ में मंदिर को बसदि कहते हैं। मूडबिद्री के इन मंदिरों के नाम उनके निर्माताओं या दिशाओं के नाम पर रखे गए हैं। बड़े-बड़े शिलालेखों से ज्ञात होता है कि पडुबसदि, गुरु बसदि और अम्मनवर बसदि के अलावा शेष मंदिर मठ स्थापित होने के बाद के बने हैं। ये सातवीं शताब्दि में निर्मित मंदिरों से लेकर चौदहवीं सदी में निर्मित अति प्राचीन मंदिर हैं जिनका समय-समय पर जीर्णोद्धार होता रहा है।

24 मई सहस्त्र दीपोत्सव

इस दिन वहाँ की परम्परानुसार 24 मई को यहाँ सहस्त्र दीपोत्सव था। वहाँ के कन्नड़, प्राकृत, हिंदी व संस्कृत के प्रकांड विद्वान परम धर्मनिष्ठ व सरस्वती उपासक पं. देवकुमार शास्त्री की स्मृति में दक्षिण की रित्यनुसार मरण के 15 दिन बाद चंद्रनाथ बसदि में सहस्त्र दीपोत्सव संपन्न हुआ। भट्टारकजी के विशेष आग्रह पर आचार्य श्री ने अपना मंगल उद्‌बोधन दिया। आचार्य श्री ने बताया कि इन्हीं पंडित देवकुमार शास्त्री व पं. लोकनाथ शास्त्री के विशद विशिष्ट प्रयासों से षट्‌खंडागम दक्षिण से उत्तर और पूरब से पश्चिम तक पहुँचाया गया। आचार्य श्री ने स्वयं शास्त्री की पढ़ाई की है। उन्हें पता है कि हमारी प्राचीन सरस्वती प्राकृत में है। इन महान विद्वान पंडितों ने (दक्षिण के) अपने अथक प्रयासों से अपने ज्ञान से हमारे प्राचीनतम महान ग्रंथ षट्‌खंडागम को हिंदी, कन्नड़ व संस्कृत में लेखन कर जन-जन तक पहुँचाया। निश्चित ही ये हमारे समाज की महा विभूतियाँ वंदनीय नमनीय व स्मरणीय है। इनकी जितनी प्रशंसा की जाए कम है। समाज की अपने इन महान विद्वानों को सहस्त्र द्वीप प्रज्जवलित कर श्रद्धांजलि अर्पित करने का यह अनूठा आयोजन इस बात का प्रतीक है कि उनके द्वारा फैलाया गया ज्ञानालोक सहस्त्रों सहस्त्रों वर्षों तक भटकती मानवता का पथ आलोकित करता रहेगा। ऐसी श्रद्धांजलियाँ ही सच्ची श्रद्धांजलियाँ होती हैं।

27 मई 2009 को भट्टारकजी ने आचार्य श्री की विद्वता व विलक्षणता से प्रभावित हो श्रुतपंचमी के पूर्व दिवस षट्‌खंडागम विद्वत गोष्ठी का आयोजन किया। सच ही 'स्वदेशे पूज्यते राजा, विद्वान् सर्वत्र पूज्यते'। इस गोष्ठी में स्वयं भट्टारकजी (मूडबिद्री के), डॉ. एस.पी. विद्याकुमार, डॉ. टी.वी. नागराज उजिरे, डॉ. एस.पी. प्रभात कुमार, प्रतिष्ठाचार्य पं. सुकुमार उपाध्ये, पंडिता प्रभावती शास्त्री आदि विद्वानों ने भाग लिया। आचार्य श्री ने उस क्षेत्र पर भी अपने मंगल उद्‌बोधन में श्रुत के महत्व, संरक्षण, प्रचार-प्रसार पर प्रकाश डालते हुए अपना मार्गदर्शन व क्षेत्र के विद्वतजनों द्वारा किए जाने वाले कार्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की। आपने कहा कि दक्षिण के इन विद्वानों का पूरा देश चिर ऋणी रहेगा। इन्होंने हमारे प्राचीन महान ग्रंथों को जन-जन तक पहुँचाने में महत योगदान दिया है। हमारी प्राचीन धरोहर को जीवंत बनाए रखने के लिए ऐसी विद्वत गोष्ठियों के आयोजन के सद्‌प्रयास होते रहना चाहिए।

इधर नातेपूते (महाराष्ट्र) के समर्पित गुरुभक्त श्रावक आचार्य श्री की दक्षिण यात्रा के सहभागी बने हुए थे वहीं नातेपूते से कुछ श्रावकगण शिरहट्टी में अवस्थित आचार्य गुरुश्री सन्मतिसागरजी के पास से आचार्य श्री सुनीलसागरजी को सन् 2009 का मंगल चातुर्मास नातेपूते में संपन्न कराने की आज्ञा लेकर आ गए। जहाँ आचार्य सेवा में लगे श्रावकों में 'चातुर्मास' की गुरु आज्ञा की मुहर लग जाने से खुशी व्याप्त थी वहीं नातेपूते में भी खुशी की लहर दौड़ गई। किंतु इधर विहार में जगह-जगह उमड़ते गुरु भक्ति के सैलाब को देखकर आचार्य श्री के साथ चल रहे चंद लोगों का दिल बैठ जाता। कहाँ इतने सारे लोग, नारियल के बागानों के श्रीफलों का ढेर, और कहाँ वे साथ चल रहे गिने-चुने लोग। फिर भी वे समर्पित श्रावक यह सोचकर मन को तसल्ली देते रहते कि भीड़ तो जुटती है वैसे ही बिखर जाती है। साथ तो चंद लोग ही चलते हैं। गुरु विहार की कठिन यात्रा का जो अनुभव वे कर रहे थे, उसमें साथ चलना हर किसी के बस की बात नहीं थी।

यह गुरु गाड़ी कितने-कितने स्टेशनों से गुजरती चली आ रही है, यात्री एक-दो तीन स्टेशनों तक साथ चलते फिर चले जाते तब तक नए यात्री आ जाते। इस प्रकार सफर में 'गुरु ट्रेन' के छूटने की तरह यात्री भी आते-जाते रहे, पर इस सफर में नातेपूते के श्रावक बराबर पूरी यात्रा में साथ चल रहे थे। नातेपूते में जितने यात्री थे वे अदल-बदल कर आ जा रहे थे। आचार्य श्री की जितनी कड़ी साधना थी, नातेपूते के लोगों की श्रावकोचित साधना का भी कोई जवाब नहीं था। आचार्य श्री उनके इस निस्पृह समर्पण, आकंठ डूबी मुनि भक्ति, जिनगुरु पर अटूट श्रद्धा-विश्वास के कायल थे। वे अपने विहार में युवा आचार्य श्री से कहा करते कि गुरुवर बड़े पुण्य संयोग से हमें आपका ऐसा यह सान्निध्य व

सत्संग प्राप्त हुआ है, वहीं आचार्य श्री भी कहते कि ''यात्रा पथ पर ऐसे समर्पित सुश्रावकों का संयोग पाना किसी संत के लिए भी पुण्ययोग ही है। इन्हीं के कारण मेरा चर्यापथ भी सुगम व धर्म ध्यान के अनुकूल बना रहा है। इन वस्त्रधारी साधु स्वभावी सद् श्रावकों की साधना भी कमतर नहीं है।

जैसे आचार्य श्री सुनीलसागरजी को ज्ञात हुआ कि ये नातेपूते के श्रावकगण आचार्य श्री के दर्शन करके यहाँ आए हैं, गुरुवर आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के हाल-चाल जानने की उनकी व्यग्रता बढ़ गई। नातेपूते के गुरु भक्त खुशी-खुशी नातेपूते चातुर्मास की गुरु आज्ञा आचार्य श्री सुनीलसागरजी को सुना रहे थे और शिष्य की गुरु दर्शन की भावना बलवती होती जा रही थी। वे सोच रहे थे कि काश! पंख होते तो उड़कर जा गुरु चरणों में लोट लगा देता तथापि उनका बेकाबू मन बार-बार गुरुचरणों को जाकर छू रहा था। आचार्य श्री सुनीलसागरजी की गुरुभक्ति व गुरुवर के हाल-चाल जानने की उत्कंठा देख इंद्रजीत गाँधी ने उन्हें यह समाचार सुनाया कि आचार्य भगवंत अस्वस्थ चल रहे हैं। उनको काफी कमजोरी आ गई है। फिर भी देह से ममत्व तज आचार्य श्री ने अत्यधिक रूग्णावस्था में भी विहार कर दिया। शरीर ने साथ नहीं दिया और वे गिरकर काफी चोटिल हो गए हैं। कई जगह शरीर नीला पड़ गया है तो कई जगह छिल जाने से घावों पर खून की पपड़ी जम गई है, जिस कारण वे ठीक से चल भी नहीं पा रहे हैं।

गुरुवर के ऐसे हाल-चाल जान आचार्य श्री सुनीलसागरजी की आँखों से आँसू छलक पड़े। उन्होंने दृढ़ निश्चय कर लिया कि अब मुझे शीघ्रताशीघ्र गुरु चरणों में पहुँचना है। उनके पाद पद्मों के दर्शन करना है। गुरुवर किसी से वैयावृत्ति व सेवा सुश्रुषा करवाते नहीं हैं, ऐसी कष्टप्रद घड़ी में मुझे गुरुवर के पास होना चाहिए था, पर! श्रमण चर्या की मर्यादा है, मेरा मुनि धर्म है। पद विहार जितना ज्यादा से ज्यादा कर सकूँगा, करूँगा। अब शीघ्रताशीघ्र मुझे गुरु चरणों में पहुँचना है। पल भर में उनका सारा उत्साह कपूर की तरह काफूर हो गया।

28 मई श्रुतपंचमी विधान

श्रुतपंचमी पर श्रुतस्कंध विधान के पश्चात आपने प्रवचन में षट्खंडागम ग्रंथ पर प्रकाश डाला। इस विशाल धर्म सभा में आसपास से श्रावकगण भी आए थे। भट्टारकजी के साथ क्षेत्रीय विधायक श्री अभयकुमारजी की अगुवाई में मूडबिद्री समाज ने आपको चातुर्मास के लिए श्रीफल अर्पित किया। आज नातेपूते के बहुत से श्रावक विशेष रूप से उपस्थित थे। उन्होंने भी नातेपूते चातुर्मास की अर्जी श्रीफल अर्पित कर लगा दी। यद्यपि मूडबिद्री के श्रावक समूह के सामने नातेपूते के थोड़े से श्रावक थे तथापि उनका उत्साह देखते बनता था। उन्हें पूर्ण विश्वास था कि आचार्य श्री के लिए गुरुआज्ञा शिरोधार्य है। उनकी गुरु भक्ति व समर्पण असाधारण है।

29 मई

29 मई को आचार्य श्री ने मूडबिद्री से विहार कर 28 कि.मी. की पदयात्रा कर 30 मई को कारकल पहुँचे। वहाँ 42 फीट उतंग बाहुबलि भगवान के दर्शन किए इसके अलावा 17 और जिनालयों के दर्शन किए। इसी दिन शाम को विहार कर 10 कि.मी. शहर से दूर एक नवनिर्मित भवन में रात्रि विश्राम किया।

31 मई को आप 16 कि.मी. पद यात्रा करते हुए वरांग पहुँचे। यह श्रवणबेलगोला के चारूकीर्तिजी भट्टारक की जन्म भूमि है। यहाँ के तीन जिनालयों के दर्शन किए जिनमें नेमिनाथ भगवान मंदिर शिल्प का अद्वितीय उदाहरण हैं तथा मानस्तंभ भी दर्शनीय है। तालाब के बीच भी एक सुंदर मंदिर है, जहाँ नाव से जाकर आपने दर्शन किए।

वरांग से 1 जून को सोमेश्वर व अगुम्बा की घाटी का घना किंतु रमणीय जंगल पार कर आप लम्बा पद विहार

करते 2 जून को प्रातः कुंद्रादि पर्वत की तलहटी में बसे छोटे से गाँव कुंद्रादि पहुँचे। यह कुंद्रादि पर्वत आचार्य कुंददेव की पवित्र साधना स्थली है।

आहार चर्या के तुरंत बाद आप चार कि.मी. ऊँचे कुंद्रादि पर्वत पर चढ़ने लगे। एक कि.मी. डामर की सर्पीली, ऊँची घाटी की चढ़ाई करते-करते थक गए व सामायिक का भी समय हो गया। उस घने जंगल में एक पेड़ की छाया में बैठकर आपने सामायिक की। मंदिर के पुजारी ने आपको बताया कि यहाँ से करीब 300 मीटर अंदर घने जंगल में एक भग्न प्राचीन जिनालय है। आपने असुरक्षित रास्ते जंगल में वृक्षों में छुपे तीन जिनालयों व मुनि बसदि के अवशेष देखे जो करीब दो-ढाई हजार वर्ष प्राचीन लग रहे थे।

यहाँ से तीन कि.मी. इस प्रकार कुल चार कि.मी. पहाड़ की दुर्गम चढ़ाई चढ़ तथा सौ सीढ़ियाँ चढ़ आप पहाड़ पर पहुँचे, जहाँ एक हॉल में प्राचीन शिला पर आचार्य श्री कुंदकुंद देव के चरण चिह्न अंकित हैं। कुंदकुंद स्वामी के श्री चरणों में बैठकर आपने समयसार का स्वाध्याय व प्रतिक्रमण किया। आचार्य वंदना कर जिन मंदिर में पार्श्वनाथ भगवान के दर्शन किए। क्षुल्लक सुयोगसागरजी के साथ आपने मंदिर में ही रात्रि विश्राम की योजना बनाई, किंतु वहाँ सांप होने के कारण आचार्य श्री के चरण सान्निध्य में ही विश्राम किया।

घने जंगल युत पहाड़ी पर सांय-सांय करती ठंडी हवा चल रही थी। दोनों साधु ठंड से ठिठुरते हुए आत्मचिंतन कर रहे थे। तभी अर्ध रात्रि में ऐसी तेज तूफानी हवा चली कि बिना सांकल का पत्थर लगा दरवाजा भड़ाक से खुल गया। ऐसा लगा कहीं शेर तो नहीं आ गया। आचार्य श्री बड़े धीरज के साथ भेद विज्ञान का चिंतन करने लगे। वे बार-बार सोच रहे थे कि ऐसे वातावरण में अर्ध निशा के सन्नाटे में आचार्य कुंदकुंद स्वामी व अन्य साधुगण यहाँ कैसे तपस्या करते होंगे। जबकि हमें तो एक ही रात्रि की ठंडी तूफानी हवा ने हिलाकर रख दिया। उनके हृदय से उन महान आचार्य के प्रति श्रद्धाभक्ति का सैलाब उमड़ पड़ा। सच है ऐसे साधक ही सीमन्धर स्वामी के समोशरण में पहुँच सकते हैं।

3 जून को कुंद्रादि से आप नल्लारू पहुँचे जहाँ आपको एक सांई बाबा के भक्त ने अपने घर ठहराया।। उसने बताया कि बाबा यहाँ तीन दिन ठहरे थे। यहाँ उनका पलंग, बर्तन व चरण पादुका है। नल्लारू आपके लिए खास इसलिए रहा क्योंकि यहाँ नरवाली के 20-25 गुरुभक्त श्रावक आपके दर्शनार्थ आए। उन्होंने आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के स्वास्थ्य लाभ की शुभ सूचना दी जिससे आपकी गुरु के प्रति चिंता कम हुई। गुरुवर को लेकर आकुलता- व्याकुलता कम हुई।

यहाँ से तीर्थ हल्ली (4 जून) होते हुए 5 जून को हदीगल्लू पहुँचे। जहाँ के विशाल हिंदू मठ के महंत ने आपका भव्य स्वागत किया व बताया कि पूर्व में यहाँ आचार्य वर्धमानसागरजी, गुणनंदीजी भी ठहरे थे। आपके मंगल आगमन पर प्रसन्नता है। यहाँ पर भी आपकी विद्वता व यश की बयार पहुँच चुकी थी। महंतजी आपसे धर्म चर्चा कर काफी संतुष्ट व प्रसन्न हुए।

वर्षा बहुल इस क्षेत्र में पानी रुकते ही आप विहार कर सीधे हूमचा की पहाड़ी पर पहुँचे व वहाँ एक हाल में विराजित सात फीट ऊँची भगवान बाहुबलि की प्रतिमा व खुले मंदिर प्रांगण में नौ हाथ की पार्श्वप्रभु की प्रतिमा के दर्शन किए। नीचे उतरकर पंचबसदि में पाँच एक पंक्ति के गर्भगृहों में, पाँच वेदी पर पाँच जिनबिम्बों के दर्शन किए। मंदिर के सामने मानस्तंभ व इसी प्रांगण में दो लघु जिनालयों के भी दर्शन किए। आपने देखा कि समाज के अभाव में यहाँ विराजित प्रतिमाओं का न जाने कितने दिनों से अभिषेक नहीं हुआ था। आपकी आज्ञा से नातेपूते के इंद्रजीत गाँधी, वैभव शहा, अनूप दाभोड़ा, राहुल दावड़ा, अतुल दोषी आदि ने बड़े भक्तिभाव से इन प्रतिमाओं की पूजा, प्रक्षाल, अभिषेक किया।

मूल गर्भगृह व बाहर पार्श्वप्रभु की सुंदर प्रतिमाएँ हैं। बाहर प्रांगण की दो प्रतिमाओं के आजू-बाजू कमठ के उपसर्ग का दृश्य है। बाजू में देवी पद्मावती का मंदिर होने के कारण यह हूमचा पद्मावती कहलाता है। यहाँ भी मठ मंदिर है। सब जिनालयों में प्रभु दर्शन कर मन प्रसन्न हो गया। पता चला मठ के भट्टारक अस्वस्थ थे।

हूमचा में दो-तीन दिन से बारिश हो रही थी। इस क्षेत्र में दो-दो, तीन-तीन दिन तक सूर्य दर्शन नहीं हो पाते थे। पाँच मिनट पानी रुकते ही आप यहाँ से हद्दारीपूर होकर रिप्पनहल्ली पहुँचे। जून में भी रात सर्दी के मौसम सी ठंडी रहती है। दिन में भी पता ही नहीं चला कि गर्मी का मौसम है।

विहार में रास्ते में दो सौ मीटर क्षेत्र में हजारों की तादाद में मेंढक दिखे।बताया गया कि इस क्षेत्र में मेंढकों की वर्षा हुई है। यही नहीं सड़कों पर सांप, बिच्छू, मेंढक, कुत्ते आदि जीव भी बहुतायत रूप से मरे पड़े या जिंदा दिखे। कुचल कर मरे पड़े जीवों को देख उनके प्रति आपके हृदय में करुणा उमड़ पड़ी तथा तिर्यंच गति के जीवों की दुर्दशा देख मन उनके प्रति द्रवीभूत हो गया। आप उन सब जीवों की आत्मशांति की प्रार्थना करते विहार करते रहे।

सात जून को रिप्पनहल्ली से आप आनंदपुरा व वहाँ से उल्लरू होते हुए 8 जून को सागर पहुँचे। एक जैन श्रावक ने अपनी फैक्टरी में काजू बनाने की प्रक्रिया बताई। यहाँ धर्म व साधुओं के प्रति उदासीन 20 जैन परिवार रहते हैं। यहाँ के सौ वर्ष प्राचीन जिन मंदिर में 'जोग फाल्स' से लाई हुई एक हजार वर्ष पुरानी प्रतिमा विराजमान है। मूलनायक पार्श्वप्रभु के साथ अन्य चार प्रतिमाओं के दर्शन किए।

8 जून को पद विहार करते आप उल्लरू से सागर व यहाँ से मासूर होते हुए 9 जून को मासूर से सौखा व सौखा से तवनंदी पहुँचे। यहाँ वनवासी गाँव के श्रावक आपको आमंत्रण देने आए।

10 जून को आप वनवासी गाँव पहुँचे। कहते हैं गिरनार से आचार्य श्री धरसेन से ज्ञानार्जन कर आचार्य भूतबलि अंकलेश्वर व आचार्य पुष्पदंत विहार कर इस वनवासी देश की राजधानी वनवासी गाँव पहुँचे। यहीं पर आपने सत्प्ररूपणा के 177 पद लिखकर अपने भानजे जिनपालित को शिक्षित-दीक्षित कर आचार्य भूतबली के पास अपनी वृद्धावस्था व सल्लेखना की भावना कहलवाई। संभवतः आपकी सल्लेखना इसी वनवासी गाँव में हुई।

यहाँ कदंब राजा जैन थे और उन्होंने अपनी इस राजधानी में भव्य जिनालय बनवाए। कालांतर में उन्होंने शैव धर्म स्वीकार कर लिया व जिन मूर्तियाँ हटाकर वहाँ शिव मंदिर बना दिया। अभी भी मंदिर के अहाते में दो जिन मूर्तियाँ व जैन भग्नावशेष पड़े हैं। वनवासी से 50 कि.मी. दूर आचार्य अजितसेन, जिनसेन व वीरसेन की तपोस्थली बंकापूर को यहीं से नमन-वंदन कर 11 जून को सिरसी के जंगल में आयुर्वेदिक फैक्टरी में विश्राम किया। यहाँ आयुर्वेद के ज्ञाता पूज्यपाद स्वामी के आयुर्वेद शास्त्र का भी दवा-निर्माण में सहयोग लिया जाता है। यहाँ के मुखिया ने आचार्य श्री का खूब सन्मान किया।

12 जून को सिरसी से विहार कर आप सौदा मठ (स्वादि मठ) पहुँचे, जिसका प्राचीन नाम सुधापुर है। यह पुण्य स्थली भी हमारी प्राचीन ऐतिहासिक, सांस्कृतिक धरोहर के लिए प्रसिद्ध है। यहीं से हमारे धर्म रक्षक महान आचार्य श्री अकलंक देव ने सल्लेखना पूर्वक समाधि मरण किया था।

उनकी कुछ पीढ़ियों के बाद उन्हीं के नाम से यहाँ भट्टारक परंपरा चालू हो गई। आचार्य अकलंक देव के प्राचीन चरण चिह्न बस्ती से एक कि.मी. दूर एक छोटी पहाड़ी पर एक छतरी में विराजित है। आपने ससंघ चरण चिह्न के दर्शन किए तथा धर्म रक्षा के लिए आचार्य अकलंक स्वामी के अतुलनीय अवदानों के प्रति कृतज्ञता प्रगट की। यहाँ पर करीब 20 मुनि/आर्यिकाओं की निषिधिकाएँ, वहाँ साधना करने वाले साधुओं की चर्या की प्रतीक समझी जा सकती है। वहाँ पर एक पाषाण शिला है, कहा जाता है कि उस पर बैठकर आचार्य अकलंक देव ध्यान व तपस्या करते थे। आचार्य श्री ने भी उस शिला तल्प पर बैठकर कुछ देर ध्यान साधना की। आपको शांति का सुखद अनुभव हुआ।

जैन न्याय के सूर्य आचार्य अकलंक स्वामी ने बौद्धों को वाद-विवाद में पराजित कर भगाकर जैन धर्म की परचम फहराई। वे जिनागम के इतने उद्‌भट विद्वान थे कि उनके नाममात्र से अच्छे-अच्छे वादी-प्रवादी काँपते थे। उन्होंने तत्वार्थ राजवर्तिक, अष्टशती, सिद्धिविनिश्चय, प्रमाण संग्रह, लघीयस्त्रय, न्याय विनिश्चय जैसे महान ग्रंथों की रचना कर हमें

आगम का अनुपम अवदान दिया है।

सौंदा के इस जैन मठ में अकलंक स्वामी का पीठ (सिंहासन) है। आज तक इस पीठ पर साधारण साधक तो बैठ नहीं पाए, लेकिन बड़े-बड़े साधक व प्रभावक मुश्किल से एक से दो घंटे से ज्यादा नहीं बैठ सके। इसके बाद उनका सिर चकराने लगता है और उन्हें इस पीठ से उठने को मजबूर होना पड़ता है। जब आचार्य श्री सुनीलसागरजी को सौदामठ के इस अकलंक पीठ पर बैठने का आग्रह पूर्वक निवेदन किया गया, तब आप सहर्ष इसे अपना सौभाग्य मान बैठ गए। जब तक आप मठ मंदिर में रहे तब तक पाँच घंटे तक लगातार निर्विघ्न, प्रसन्न चित्त उस पीठ पर बैठकर आपने धर्मोपदेश दिया, सामायिक, स्वाध्याय व ध्यान किया। उस पीठ पर बैठने पर आप में दिव्य व अलौकिक भावनाएँ आने लगीं।

इतनी लंबी अवधि तक उस पीठ पर शांत व मुदित मना आपको विराजित देख वहाँ के 92 वर्षीय वयोवृद्ध भट्टारकजी के आश्चर्य का ठिकाना नहीं था। भट्टारकजी ने आचार्य श्री से कहा कि 30 वर्षों बाद कोई संत इस पीठ पर आज 12 जून 2009 को बैठा है और वह भी पाँच घंटे तक। आज तक किसी साधक की मेरे जीवन काल में इतनी क्षमता नहीं देखी गई। इस पीठ से ऐसा आभावलय फूटता है कि साधक को थोड़ी सी देर में ही इस पर से उठ जाना पड़ता है। निश्चित ही आप में असाधारण क्षमता व पात्रता है कि आप जैसे युवाचार्य इस पीठ पर निराकुल विराजित रहें। मुझे तो लगता है आचार्य अकलंक देव व आप में पूर्व जन्म का कोई कनेक्शन है। और भी आचार्य श्री की प्रशंसा में उन्होंने अनेक बातें कही। विहार का वक्त हो रहा था, आप उस पीठ पर से उठकर चलने से पूर्व हमारे महान आचार्य श्री अकलंक स्वामी को नमन करना नहीं भूले।

आज के शाम के विहार में आचार्य अकलंक देव के महान अवदानों का चिंतन चलता रहा और आप उन महान आचार्य का अप्रत्यक्ष सान्निध्य प्राप्त करते रहे।

12 जून को सौंदा मठ से विहार करते, प्रतिदिन बीस, बाइस, पच्चीस या तीस कि.मी. की चलाई/पदयात्रा करते हुए आप मंचीकेरे, उपलेश्वर, मल्लापुर, कण्णगेरे, भागवती, हलियाल शहर, तेरगाँव, अलनापुर होते हुए हिटकल पहुँचे। प्राकृतिक रूप से यहाँ से कर्नाटक की सीमा समाप्त हो गई। रास्ते में कई जगह आपने शिव मंदिर, देवी मंदिर या हिंदू समाज के युवाओं द्वारा की गई व्यवस्था में चर्या एवं रात्रि विश्राम किया। उन्हें धर्मोपदेश दिया। उन्हें मद्यमांस का त्याग करवाया। हर जगह श्रद्धालुओं ने बड़े भक्तिभाव से आपकी अगवानी की व समर्पित हो व्यवस्था की। जैन न होते हुए भी दो, पाँच, दस कि.मी. तक आचार्य श्री के साथ पद विहार किया। आचार्य श्री उनकी भक्ति से अभिभूत थे। उन्होंने उन लोगों को आत्म कल्याण का आशीर्वाद दे उन्हें मंगल उद्‌बोधन दिया। उन्हें व्यसन मुक्ति व अणुव्रतों का बोध दिया। आचार्य श्री का सान्निध्य पाकर वे लोग अपने को धन्य मान रहे थे।

आचार्य श्री के चिंतन में, पद विहार में ये लोग बार-बार आते रहते। आचार्य श्री सोचते रहते कि एक ये आस्थावान श्रद्धालुजन हैं जो धर्म, जाति, संप्रदाय के भेदभाव, जात-पात की भावना बिना, मेरे बारे में कुछ न जानते हुए भी, एक दिगम्बर संत समझ मेरे प्रति इतने समर्पित हैं। चरणों में लोट-पोट जाते हैं। पैरों की धूल पोटली में बाँध चंदन समझ कर ले जाते हैं और एक हमारा जैन समाज, स्वयं को मोक्ष मार्ग का ज्ञाता समझ पंथवाद के झंझटों में फंसा, आत्म कल्याण के मार्ग से कोसों दूर है। ''श्रद्धावान लभते ज्ञानं।'' एक न एक दिन अज्ञानी कहे/माने जाने वाले ये लोग अपनी गुरुओं के प्रति अटूट श्रद्धा से ज्ञान प्राप्त कर सच्चा मार्ग अपना लेंगे। मुक्ति मार्ग अपना लेंगे। मोक्ष मार्ग पर चलने के लिए जैन कुल में जन्म लेना जरूरी नहीं है वरन भगवान महावीर के बताए मार्ग पर चलना जरूरी है। पद संचलन में जगह-जगह जनसंपर्क में आने वाले लोगों में वे धार्मिक एवं सामाजिक चेतना जागृत करते जा रहे थे।

17 जून को आप अलनापुर से हिटकल होते हुए कसमलगी पहुँचे। जहाँ आपने कुछ वर्ष पूर्व जमीन में से निकली

अत्यंत सुंदर पार्श्वप्रभु की प्रतिमा के दर्शन किए। यहाँ स्कूल भवन के पीछे खुदाई में यक्ष-यक्षिणी सहित यह पार्श्वप्रभु का सप्त सर्पफणायुत जिनबिम्ब प्राप्त हुआ था, जिसका पंचकल्याणक 11वीं सदी में त्रिभुवनचंदजी के शिष्य श्रेष्ठी ने करवाया था। इस नीलम प्रतिमा की चमक आज भी ऐसी ही है जैसी एक हजार वर्ष पूर्व थी। इस प्रतिमा की विशेषता यह है कि वातावरण के साथ इसका रंग व चमक बदलती रहती है। इस जीवंत मूर्ति के दर्शन कर आचार्य श्री का रोम-रोम पुलकित हो गया। वर्तमान में इस मूर्ति का मूल्यांकन करोड़ों में आंका जाता है।

पार्श्वप्रभु की इस मनमोहक अतिशययुत चमत्कारी प्रतिमा का आकर्षण कहो या प्रभाव समझो, आचार्य श्री के भावों की परिणति भगवान पार्श्वनाथ के श्री चरणों में रात्रि विश्राम की हो गई। उन्हीं के चरणों में बैठकर कल्याण मंदिर स्तोत्र का पाठ व जाप किया। अर्ध निशा के सन्नाटे में आत्म ध्यान में लीन हो स्वयं को भूल प्रभुमय हो गए। पता ही नहीं चला कि कब कैसे रात बीत गई। ध्यान की दशा में उन्हें जो आत्मानंद की प्राप्ति हुई, वह शब्दातीत है!

18 जून 2009 को आप ससंघ कसमलगी से नंदगढ़ होते हुए मूसलाधार बरसात में भीगते 13 कि.मी. पदयात्रा करते खानापुर पहुँचे। यहाँ पर बेलगाम से सुहास मोहरे, रमेश चिवटे तथा रोहित आदि तथा नातेपूते के वैभव दोशी विहार चर्या में सम्मिलित होने आए। यहाँ पर चंद्रप्रभु की हरित पाषाण की चित्ताकर्षक प्रतिमा के दर्शन किए। हर क्षेत्र में प्राचीन जिनालय के भाव-विभोर हो आपने दर्शन किए। यहाँ पर आपको दहाणु मुंबई के निकट आचार्य श्री पुष्पदंतसागरजी के विहार में संघस्थ मुनि पूरबसागरजी तथा साथ चल रहे श्रावक दिलीप पाटनी की एक्सीडेंट में दुःखद मृत्यु के अशुभ समाचार प्राप्त हुए। आचार्य संघ ने मृतात्माओं के लिए शांति की कामना की। इस दुःखद घटना ने एक बार फिर आचार्य श्री को मृत्यु के तांडव का दिग्दर्शन करा दिया। इस हृदय विदारक घटना के बारे में सुन आप सोचने लगे कि अक्सर हमारे जैन साधु/साध्वियाँ, चाहे वे दिगम्बर आम्नाय से हों या श्वेताम्बर आम्नाय से, एक्सिडेंट का शिकार हो जाते हैं। इसके लिए समाज को चाहिए कि विहार में साधु-साध्वियों की समुचित व्यवस्था करें।

रास्ते भर आपने प्राचीन जिनालयों व जिन प्रतिमाओं के दर्शन किए। कई जगह आपने पाया कि मंदिरों की व्यवस्था व देखरेख ठीक से न होने के कारण मंदिर उपेक्षित पड़े थे। समाज को इसके लिए जागृत किया। हमारी विरासत मंदिरों के प्रति उदासीनता के कारण उन्हें करारी फटकार लगाई व श्रावक धर्म की याद दिलाई।

19 जून को आप खानापुर से देसूर होते हुए लम्बी पद यात्रा करते मच्चे पहुँचे। जहाँ जिनालय मिले, वहाँ दर्शन किए, समाज के आग्रह पर प्रवचन दिए। अब दर्शनार्थियों की संख्या बढ़ने लगी। बेलगाम निकट होने के कारण वहाँ से युवाओं का समूह वैयावृत्त व विहार में सम्मिलित होने आया। आप धर्म क्रांति, सामाजिक क्रांति व वैचारिक क्रांति का शंखनाद करते आगे बढ़ रहे थे।

20 जून को मच्चे गाँव से आप बेलगांव की सड़क पर आ गए। यहाँ से आपने तिलकवाड़ी में भगवान पार्श्वनाथ के प्राचीन व भव्य पार्श्वनाथ जिनालय के दर्शन किए। यहाँ से गोमटेश नगर के चंद्रप्रभु जिनालय सहित दो और मंदिरों के दर्शन किए। यहाँ से आगे चलकर शहापुर के 10 जिनालयों के दर्शन किए। यहाँ कमल बसदि- एक हजार वर्ष पुराने मंदिर के दर्शन किए, जिसकी प्राण- प्रतिष्ठा आचार्य नेमिचंद्र सिद्धांत चक्रवर्ती ने कराई थी। शिल्पकारी के अद्भुत उपहार इस मंदिर के नृत्यमंडल के शिखर पर अधोमुख कमल की प्रत्येक पंखुड़ी पर प्रतिमा विराजित होने के कारण इस मंदिर का नाम कमलबसदि है। यहाँ एक त्यागी भवन तथा एक अतिप्राचीन जीर्ण-शीर्ण मंदिर भी है।

यहाँ से आपने ससंघ एम.एम. एक्सटेशन के धर्मनाथ भवन के धर्मनाथ भगवान के जिनालय के दर्शन किए तथा एक विशाल जनसभा को संबोधित किया। इस प्रवचन सभा में बेलगाँव के विधायक संजय पाटिल, गणमान्य राजू दोण्णण्णबार, सन्मति जैन आदि ने आचार्य श्री का भावभीना अभिनंदन किया। आप सहित अनेक श्रावक श्रेष्ठीगणों ने चातुर्मास हेतु निवेदन कर श्रीफल भेंट किए। बेलगाँव के समाज ने आपको रोकने की काफी कोशिश की किंतु समाज

को धर्म वृद्धि का मंगल आशीर्वाद देकर आप आगे बढ़ गए क्योंकि आपको शीघ्रातिशीघ्र आचार्य गुरु के दर्शन के लिए पहुँचना था। आपके गहन ज्ञान, प्रवचन शैली, विद्वता व आत्म कल्याण से भरी बातों के कारण आपकी ख्याति दूर-दूर तक फैल गई थी। हर जगह, हर जाति, वर्ग, धर्म का समाज आपको रोकने व चातुर्मास करने का आग्रह करता रहा ताकि आपसे धर्म लाभ ले आत्म कल्याण के मार्ग पर अग्रसर हो सके। आचार्य श्री स्वयं बोधि प्राप्ति के लिए निकले हैं, मात्र पद संचलन के लिए नहीं। अतः वे धर्मसभा में भी व वैसे भी चर्चा में लोगों को आत्म कल्याण की बातें समझाते रहते।

धर्मनाथ भवन से 21 जून को आप भुत्रामट्टी नगर पहुँचे। यहाँ भगवान महावीर इंस्टीट्यूट में आपकी चर्या हुई। यहाँ पर सोलापुर के परम मुनिभक्त सुभाष वनकुद्रे, विलास कंदले, बेलगाँव के अनेक श्रावकगण तथा नातेपूते के ट्रस्टी तथा अनेक मुनि भक्त श्रावकगण आचार्य श्री के दर्शनार्थ पधारे थे।

22 जून को भुत्रामट्टी से उलागड्डे खानापुर होते हुए संकेश्वर पहुँचे। यहाँ सुंदर विशाल जिनालय व मानस्तंभ के दर्शन वंदना की। यहाँ समाज के 280 घर हैं। विशाल प्रवचन सभा का आयोजन हुआ। यहाँ भी श्रावकों ने चातुर्मास हेतु श्रीफल भेंट किए। कुछ ऐसी घटना घटी कि कुछ महिलाओं को आपने डांट दिया। आपको लगा कि कुछ दिनों से कषाय भाव से आपके स्वभाव में चिढ़-चिड़ापन आ गया है।

बाद में महिलाओं को डांटने पर आपको पश्चाताप हुआ। आपने सोचा क्रोध करना मूर्खता है। 'हूँ' कह कर बात-बात में डांट देना उचित नहीं। सरल स्वभावी संत ने तुरंत अपनी गलती स्वीकार कर ली व प्रायश्चित करने लगे।

नातेपूते

इस छोटी सी घटना ने संत हृदय की परतें उधेड़ कर रख दी। महापुरुषों का हृदय मोम सा कोमल होता है। भाव विह्वल आचार्य श्री चिंतन में डूब गए। ओहो, नातेपूते के ये गृहस्थ संसारी श्रावकगण अपना घर-बार, परिवार सब कुछ छोड़ ढाई महीने से इतनी दूर, साये की तरह रात-दिन मेरे साथ हैं। टेढ़ी-मेढ़ी सर्पिल घाटियों, बियाबान जंगलों, पहाड़ों, निर्जन स्थलों में मेरे साथ चल रहे हैं। संघ के आहार- विहार चर्या, रात्रि विश्राम, वैयावृत्ति में हर प्रकार का मेरा ध्यान रख मेरी साधना व यात्रा को निर्विघ्न निराबाध संपन्न करा रहे हैं। मेरी साधना व तपस्या से बड़ी तो इनकी तपस्या है। यह मेरा राग या मोह नहीं, मेरा चिंतन है कि यदि ये लोग, ऐसे धर्मनिष्ठ, गुरु भक्त समर्पित श्रावक मेरे साथ न होते तो इस अनजान प्रदेश की इतनी लंबी सुखद यात्रा इतनी आसानी व सहजता से कदापि संभव नहीं हो पाती।

मुझे नातेपूते ले जाने के पीछे इनका कोई स्वार्थ नहीं है। मेरे अनुसार इनकी निस्पृहता किसी श्रमण से किसी भी प्रकार कमतर नहीं है। नातेपूते में मेरा चातुर्मास कराने के लिऐ इन्होंने अपना तन-मन-धन सब कुछ दाव पर लगा दिया। न दिन को दिन देखा न रात को रात। मैं जब जागा, सबेरा मान ये जाग गए। मैंने विहार किया, मेरे साथ चल पड़े। भूख, प्यास, थकान की शिकायत तो इन्होंने आज तक नहीं की। ऐसे समर्पित श्रावकों को मैं जब-तब डांट देता हूँ। मेरी त्याग तपस्या के अहंकार के आगे इनके त्याग को अनदेखा कर देता हूँ। इनकी सेवा का कोई मोल नहीं। कितनी कितनी बार श्रीफल अर्पित कर इन्होंने चातुर्मास का निवेदन किया, पर आज तक न ही मैंने मन बनाया, न ही इन्हें किसी प्रकार आश्वस्त किया। आचार्य गुरु तपस्वी सम्राट ने इनके समर्पण को देख नातेपूते चातुर्मास की आज्ञा भी दे दी तथापि मैं इन्हें हाँ नहीं कह पाया।

भो! आत्मन! निश्चित ही यह तेरा अहंकार है। भले ही श्रवणबेलगोला में भट्टारकजी के नेतृत्व में आसपास के क्षेत्र से आए श्रावकों के चढ़ाए श्रीफलों के ढेर, मैसूर, मूडबिद्री के विधायक, बेलगांव के विधायक या अन्य क्षेत्रों के श्रावकों के चातुर्मास निवेदन पर तू फूलकर कुप्पा हो गया, अपनी प्रभावना देख, आपा खो बैठा। नातेपूते के श्रावकों की इस

ढाई महीने की संत सेवा के आगे उनकी सेवा कहीं से कहीं तक नहीं ठहर सकती। फिर भी तू इनकी अपेक्षा (चातुर्मास कराने की) की उपेक्षा ही करता रहा। कभी-कभी इन पर क्रोध भी किया। भौतिक सुख-सुविधाओं की इनको मुझसे कोई चाह नहीं। चाह है तो एक ही चातुर्मासिक गुरु सान्निध्य में नातेपूते के समाज को धर्म लाभ मिले। इसके लिए इनकी यह श्रमसाध्य साधना स्तुत्य है। इनकी एकमात्र इच्छा मेरे सान्निध्य में धर्म लाभ ले आत्म कल्याण कर सकें बस और कुछ नहीं।

मुझे तो कषायों को मंद कर सहज वृत्ति रखना चाहिए। कषायों को कसते रहना चाहिए। इस क्षेत्र में भी मेरी ख्याति प्रतिष्ठा फैल गई। पर यह ख्याति लाभ, पूजा, प्रतिष्ठा मेरे मुक्ति पथ की बाधाएँ ही हैं, अवरोध है स्पीड ब्रेकर है। मेरा स्वभाव तो इन सबसे दूर आत्मस्वरूप में रमण करने वाला है। निज स्वभाव को भूल बैठना विष मरण जैसा है। अतः मुझे अपने शांत स्वभाव का ध्यान करना चाहिए।

आचार्य श्री स्वयं से बात करने लगे कि तूने बेलगाँव के विधायक की बात क्या छेड़ी, सरपंच ने उनकी कितनी कमियाँ गिना डाली। तुम निमित्त बन गए। निंदा, प्रशंसा के चक्कर में तुम्हें नहीं पड़ना चाहिए। तुमने संसार तजा है, इन विकारी भावों को भी तजो। अपने ध्रुव आत्म स्वभाव को समझो, रमण करो। वही शरणभूत है। गुण-अवगुण तो प्रत्येक मनुष्य में भरे पड़े हैं।

अपने तुच्छ से समयोचित क्रोध को व क्रिया-प्रतिक्रिया को बड़ा मान आचार्य श्री अंतरतम से प्रायश्चित करने लगे। जिसे वे अपना दोष समझ रहे थे, जबकि वह उनका कोई दोष था ही नहीं। व्यवस्था व पद की गरिमा बनाए रखने के लिए समयानुकूल आवश्यक था। पर वे तो आत्म शुद्धि में निरत लीन संतात्मा, पल प्रतिपल आत्म परिमार्जन करने वाले, कषायों के मैल से कैसे मन को मलिन होने देते। राई से दोष को पहाड़ सा विशाल मान प्रायश्चित के निर्मल नीर से धो आत्म विशुद्धि कर डाली। और चिंतवन करने लगे- 'शुद्धोऽहं', 'बुद्धोऽहं', 'आत्म विशुद्धोऽहं'। अस्तु।

स्तवनिधि

23 जून को पदयात्रा करते संकेश्वर से स्तवनिधि होते हुए आप कोथली पहुँचे। मार्ग में जिनालयों के दर्शन करते रहे। जैन संस्कृति की जगह-जगह बिखरी मंदिरों के रूप में महान संपदा को देख आपका हृदय गौरव से फूल जाता, सिर ऊँचा उठ जाता और विनयपूर्वक उतंग, कहीं पार्श्वप्रभु की तो कहीं बाहुबलि की प्रतिमाओं के चरणों में झुक जाता। एक स्थान से दूसरे स्थान के विहार पथ में श्रावकगण युवा, बच्चे, वृद्ध तक सम्मिलित होते रहे। वे विहार पथ को जुलूस पथ बना बड़े भक्ति भाव से आचार्य श्री के पीछे चलते।

कोथली में आपने तीन जिनालयों व शांतिगिरि तीर्थ (पहाड़ी पर) के दर्शन किए। यहाँ आश्रम व गुरुकुल में छात्र पढ़ते हैं। कोथली इस युग के महान आचार्य श्री देशभूषणजी की जन्म भूमि व समाधि स्थल है। आपने पाया कि शांतिगिरि व गाँव के लोगों में सामंजस्य का अभाव होने के कारण काफी अव्यवस्थाएँ हैं। वहाँ पूर्व में विराजित आचार्य देवसेनजी ने आपकी अगवानी की व संपूर्ण तीर्थ के 18 मंदिरों व अनेक जिनबिम्बों के दर्शन कराए। पूरे संघ ने आहार चर्या के लिए रुकने का बहुत आग्रह किया, किंतु आगे की तयशुदा व्यवस्था के कारण संत समागम इतना ही रहा और वे विहार कर बेडकीहाल क्रास पहुँचे। यहाँ पर ग. आर्यिका प्रज्ञमति माताजी की प्रेरणा से एक मंदिर बन रहा है। माताजी के आग्रह पूर्ण संदेश पर आप वहाँ पहुँचे, जिनालय के दर्शन तो किए, पर रुके नहीं।

यहाँ से नेज होते हुए 24 जून को आप सदलगा पहुँचे। यह वही 'सदलगा' कस्बा है जो इस युग के धरती के जिनागम के सूर्य कहे जाने वाले आचार्य श्री विद्यासागरजी- जन्म नाम विद्याधर की जन्म भूमि है। आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने अपने प्रथम गुरु की इस पावन भूमि को नमन किया। यह वही आचार्य देव जैसे महासंत को जन्म

देने वाली महाभूमि है, जिन्होंने तरुण संदीप के जीवन में ब्रह्मचर्य व्रत की वह पहली ईंट- उनके मुक्ति महल की प्राप्ति की नींव में रखी थी। जिसने संदीप को आज के आचार्य सुनीलसागर के रूप में मुक्तिपथ का महापथिक बना दिया।

वर्तमान में उनके जन्म स्थान (घर) को सुंदर जिनालय बना दिया है। इसके अलावा तीन और प्राचीन तथा भव्य जिनालयों के आपने दर्शन किए। सदलगा में चार सौ जैनियों के घरों की बस्ती है। यहाँ से दत्तवाड़ में आपने रात्रि विश्राम किया। यहाँ समाज के 300 घर हैं। सदलगा व दत्तवाड़ के बीच बहने वाली नदी ने दो प्रांतों का परिसीमन कर दिया। पुल पार करते ही कर्नाटक समाप्त (सदलगा से) व महाराष्ट्र प्रांत प्रारंभ (दत्तवाड़ से) हो जाता है।

25 जून को प्रातः पदयात्रा करते दत्तवाड़ से टाकलीवाड़ होते हुए अक्कीवाट पहुँचे। यहाँ अकबर के शासन काल में हुए महान आचार्य श्री विद्यासागरजी की समाधि भूमि है। एक छोटी सी टेकड़ी पर अवस्थित उनके चरण चिह्न के दर्शन कर तीन और लघु जिनालयों व त्रिमूर्ति मंदिर के दर्शन कर स्वयं को कृतार्थ किया। गाँव के भी एक विशाल प्राचीन जिनालय के दर्शन किए।

यहाँ आचार्य कुशाग्रनंदीजी की शिष्याएँ भी आपके दर्शनार्थ आई। गुरु पुष्यामृत योग में आपका पादाभिषेक हुआ। सामायिक पश्चात शाम को चार बजे मजरेवाड़ी से कुरुंदवाड़ा होते हुए नृसिंहवाड़ी पहुँचे। यहाँ पर जिनालय के दर्शन कर उसमें ही रात्रि विश्राम किया।

आपने इस लम्बे विहार में देखा कि छोटी से छोटी जगह पर भी बड़े-बड़े भव्य प्राचीन जिनालय है। कहीं ज्यादा तो कहीं कम जैन श्रावकों के घर हैं पर सर्वत्र श्रावकों में श्रावकोचित सूक्ष्म समझ नहीं है। धार्मिक क्षेत्र होते हुए भी उनमें धार्मिक ज्ञान, धर्म व साधुओं के प्रति श्रद्धा भक्ति नहीं है। धार्मिक जागृति नहीं है। उस क्षेत्र में धार्मिक चेतना जागृति व संस्कार सिंचन की सख्त जरूरत है। इस दिशा में देश के अन्य क्षेत्रों के समाज व संतों को कार्य करना चाहिए। आपने मन ही मन सोचा कि यदि भविष्य में संभव हुआ तो शीघ्र ही इस क्षेत्र में धार्मिक चेतना जागृति का काम करूँगा।

इस क्षेत्र की महत्वपूर्ण विशेषता आचार्य श्री ने देखी कि आदिनाथ भगवान व भरत के बारे में किसी को जानकारी हो न हो पर उन्होंने पद विहार से जितने कर्नाटक क्षेत्र (दक्षिण) की पद यात्रा की, हर जगह भगवान बाहुबलि का वर्चस्व है। उनकी तपस्या का साम्राज्य है। जगह-जगह प्रकृति के प्रांगण में, उषा की लाली से प्रक्षालित, झिलमिलाते चाँद-सितारों की आभा बरसाते गगन तले सुशोभित बाहुबलि की विशाल उतंग, पुष्पबेल लिपटी प्रतिमाओं ने बाहुबलि को जन-जन व घर-घर में बसा दिया है। क्या जैन? क्या अजैन? बाहुबलि वहाँ सबके लिए पूज्य हैं। न जाने कितने रूप में बाहुबलि उनकी आस्था के केंद्र हैं, श्रद्धा के महापात्र हैं किंतु ज्ञानालोक के अभाव में यह अंधश्रद्धा ही है।

जैसे-जैसे गुरुग्राम नजदीक आता जा रहा था। आपके पोर-पोर से पुलक प्रकट हो रही थी। आपके भाव, भाषा, व्यवहार, चाल-ढाल सब कुछ बदल गया था। गुरुदर्शन की व्यग्रता बढ़ती जा रही थी। पैरों में तूफानी गति आ गई थी। मन में गुरु दर्शन की ललक व व्यग्रता उफान पर थी। रास्ते की थकान कहाँ गायब हो गई, पता ही न चला।

25 जून को प्रातः नातेपूते के 50 श्रावकों ने आकर चातुर्मास हेतु सविनय आग्रह पूर्ण निवेदन करते हुए श्रीफल अर्पित किए। उधर संध्या को उदगाँव से ट्रस्टीगण ने भी आकर श्रीफल अर्पित किए। आचार्य गुरुवर सन्मतिसागरजी के संघ के विशिष्ट जन विशेष रूप से ब्रह्मचारिणी मैनाबाईजी, श्रीमती सज्जन बाईजी, पति ज्ञानचंदजी मिंडा (जिन्होंने 9 अक्टूबर 2018 को 9 वर्ष पश्चात पट्टाचार्यश्री सुनीलसागरजी से गाँधी नगर में क्षुल्लिका दीक्षा ग्रहण की), पुष्पाजी अजितजी कासलीवाल आदि पधारे व आपश्री को उदगाँव पधारने का आग्रह पूर्वक निवेदन किया। कुंजवन के ट्रस्टी सुशील पाटनी, सुरेश चौगुले आदि ने भी उदगाँव के लिए श्रीफल अर्पित किए। आपने सबको आशीर्वाद देकर सबसे पहले गुरुदेव के विस्तार से हाल-चाल की जानकारी ली। आप तो गुरु दर्शन के लिए ही इतनी लंबी 800-1000 कि.मी. की त्वरित पद यात्रा कर यहाँ तक आए थे। नातेपूते के ये सब परम गुरु भक्त श्रावकगण साधुवाद के पात्र हैं।

गुरुओं के प्रति ये कर्तव्य निष्ठ हैं। इन्होंने अपना कर्तव्य बखूबी निभाया। मैं भी अपने शिष्य के कर्तव्य निर्वहन गुरुदर्शन के लिऐ यहाँ तक आया हूँ। ये सब न आते तब भी मुझे तो गुरु चरणारबिंद में जाना ही है। ये अपनी जगह सही है मैं अपनी जगह पर। इनके संयोग से मेरी गुरु भक्ति में चार चाँद लग गए। उत्साह बढ़ गया। ऊर्जा कई गुना ऊर्जस्वित हो गई। बस अब शीघ्र गुरुचरणों में माथा टेकना है। उस पावन पल का इंतजार है।

27 जून उदगाँव- गुरु मिलन का महान क्षण

नृसिंहबाड़ी में आदिनाथ जिनालय में दर्शन कर 27 जून सुबह 8.30 बजे आप उदगाँव पहुँचे जहाँ आचार्य गुरु विराजे थे। उदगाँव की धरती पर पैर रखते ही आपका मन खुशी से बांसों उछलने लगा। विशाल जन समुदाय के साथ मुनि संघ ने आचार्य श्री निश्चयसागरजी के नेतृत्व में आपकी भव्य अगवानी की। अब तो आचार्य श्री सुनीलसागरजी के लिए एक-एक कदम भारी था, गुरुदर्शन के इंतजार का एक-एक पल युगों लंबा लग रहा था। बस मन में एक ही भावना थी कि कब गुरुदर्शन से आँखें धन्य कर लूँ। गुरु की मूरत को हृदय में बसा लूँ।

आखिर 786 दिनों बाद वह पल भी आ गया जब गुरुवर के चरणों में माथा रख शिष्य नैनन जल से गुरु का पाद प्रक्षालन कर रहा था। बड़ी मुश्किल से स्वयं को संभाला। आचार्य गुरु के दर्शन कर शिष्य को तो जैसे पर लग गए। उधर आचार्य श्री भी अपने इस समर्पित योग्य शिष्य को अपने निकट पा सब कुछ भूल गए। अस्वस्थता तो कपूर की तरह काफूर हो गई। शिष्य के प्रति हृदय से वात्सल्य का सोता उमड़ पड़ा।

दोनों बाजू एक-दूसरे के बारे में सब कुछ जान लेने की व्यग्रता थी। शिष्य को गुरु सान्निध्य क्या मिल गया, परम निधि मिल गई। वे एक पल भी गुरु की निकटता छोड़ना नहीं चाहते थे और गुरु को भी एक लंबी अवधि बाद अपना बिछुड़ा बेटा मिला था। गुरु धीर गंभीर थे किंतु शिष्य में व्यग्रता ज्यादा थी। परदेस से लौटने पर जैसे बेटा पिता को अपनी आप बीती सुनाने उतावला हो जाता है वैसे ही युवा शिष्य जो पहली बार गुरुवर से बिछुड़े थे, वे समय की सारी मर्यादाएँ भूल इतने दिनों की सारी घटनाएँ व मुख्य-मुख्य बातें गुरुदेव को सुनाने को उतावले थे। आचार्य श्री के साथ पूरा संघ भी अपने युवा, सबके चहेते, योग्य गुरुभाई की आप बीती सुनने को उत्सुक था।

आज स्वाध्याय की जगह गुरु शिष्य की कुशल वार्ता सुनने का चतुर्विध संघ बेसब्री से इंतजार कर रहा था। आचार्य श्री की वैयावृत्ति करते हुए वे आज तो मुख्य-मुख्य घटनाएँ व नए-नए अनुभव सुना रहे थे। बीच-बीच में वे अपनी जाने-अनजाने हुई गलतियों के लिए प्रायश्चित भी माँगते जा रहे थे।

जब आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने सौंदामठ के अतिप्राचीन सिंहासन पर लगातार पाँच घंटे बैठकर स्वाध्याय, ध्यान, सामायिक आदि करने की घटना बताई तथा बताया कि वहाँ के भट्टारकजी द्वारा बताया गया कि इस सिंहासन पर आज तक इतने लंबे समय तक कोई नहीं बैठ पाया। घंटे आधे में ही सिर चकराने पर बैठने वाले को इस सिंहासन पर से उठ जाना पड़ा है। तपस्वी सम्राट शिष्य की इस असाधारण उपलब्धि पर फूले नहीं समाए और कहा, ''तुम तो दुनिया के किसी भी सिंहासन पर बैठ सकते हो।'' तपस्वी सम्राट का इशारा भविष्य की ओर था किंतु आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने इसे सामान्य रूप में ही लिया। वे गुरुवाणी की भविष्यवाणी नहीं समझ पाए। वे इतना ही समझ सके कि यह तो गुरुवर का उनके प्रति वात्सल्य है।

वे आचार्य गुरु व पूरे संघ से इतने दिनों बाद मिलकर खुशी से बावले हो गए थे। आचार्य गुरु भी इस समर्पित गुरु भक्त शिष्य के बावलेपन पर मन ही मन मुस्करा रहे थे। कितने दिनों बाद संघस्थ साधुओं ने आचार्य श्री के चेहरे पर आज खुशी व उन्हें स्वस्थ देखा। सारे साधुगणों ने आचार्य श्री सुनीलसागरजी से हास-परिहास में कहा, ''आप तो आचार्य श्री के लिए 'दवा' बनकर आए हैं। आपको देखते ही आचार्य श्री कितने स्वस्थ व प्रसन्न हैं।'' आचार्य

सुनीलसागरजी की बातें समाप्त होने पर गुरुवर आचार्य श्री सन्मतिसागरजी ने भी कुछ महत्वपूर्ण घटनाएँ उन्हें सुनाई तथा उन्हें निर्माणाधीन मूर्ति देखने की आज्ञा दी।

गुरु आज्ञा पाते ही आचार्य श्री सुनीलसागरजी तत्काल लोगों के साथ अनंतवीर्य स्वामी की निर्माणाधीन मूर्ति देखने चले गए। तत्पश्चात सभी शुद्धि कर चर्या को निकले। आपने देखा, गुरुवर का स्वास्थ्य अभी ठीक नहीं है उनका एकांतर उपवास संघ व समाज के विशेष आग्रह पर अभी बंद था, क्योंकि अत्यधिक उपवास से वे इतने कमजोर हो गए थे कि पिछले दिनों वे गणेशवाड़ी में गिर गए थे जिससे वे काफी चोटिल हो गए थे। देशभर से बड़े-बड़े वैद्य उनकी सेवा के लिए, समाचार सुनते ही दौड़े चले आए। देश भर में विधान, जाप व अनुष्ठान उनके स्वास्थ्य की कुशलता के लिए हुए। सबकी शुभ व मंगल कामनाओं से उनका स्वास्थ्य सुधरने लगा। किंतु आज वे अत्यधिक प्रसन्न दिख रहे थे।

आज इतने दिनों बाद आचार्य श्री सुनीलसागरजी का आहार गुरुवर के साथ संपन्न हुआ। आचार्य भगवन का आहार तो बहुत जल्दी हो गया। पैर में तकलीफ होने के बाद भी वे खड़े रहकर शिष्य आचार्य सुनीलसागरजी का खड़े रहकर आहार कराते रहे। शिष्य के प्रति उनका वात्सल्य देखते ही बनता था। पैर में इतनी अधिक तकलीफ के बाद भी वे एक-डेढ़ कि.मी. दूर श्रावकों के घर चर्या के लिए जाते थे, शिष्य आचार्य श्री भी उनके साथ चलकर श्रावकों के घर जाते थे तथा गुरुवर का ध्यान रखते थे। कुंजवन से उदगाँव बस्ती करीब एक कि.मी. दूर है। सघनता बढ़ने से कुंजवन, उदगाँव, जयसिंहपुर, अंकलीगाँव आदि सांगली शहर के ही अंग बन गए हैं। आचार्य श्री का 26 जून का पूरा दिन आचार्य गुरु के सान्निध्य में कब व्यतीत हो गया, पता ही नहीं चला। सच है संयोग के पल पलक झपकते बीत जाते हैं।

27 जून को आचार्य श्री सुनीलसागरजी गुरु आज्ञा से जयसिंहपुर के उपनगर काडगेमला के जिन मंदिर के दर्शन करने गए। यहाँ तिमंजिला भगवान महावीर स्वामी का मंदिर है। आचार्य श्री के लिए यह क्षेत्र इसलिए भी विशेष महत्वपूर्ण है क्योंकि यह पवित्र स्थान काडगेमला प्रथम परंपराचार्य श्री आदिसागरजी अंकलीकर की साधना स्थली रहा है और यहीं उन्हें आचार्य पद प्रदान किया गया था। आचार्य श्री ने अपने दादा गुरु के प्रति श्रद्धा भक्ति अर्पित की।

लौटते में जयसिंहपुर के कुंजवन के निकट शांतिनाथ पाटील 'कल्पवृक्ष' के निर्माणाधीन मंदिर तथा विशाल मूर्ति का निरीक्षण किया। इन दो दिनों का हर क्षण आचार्य श्री का गुरु रंग में रंगा गुरुमय हो गया। उनका अधिक से अधिक समय, गुरु सत्संग में बीता। गिरने से उनके एक हाथ-पैर में घाव थे। उन्होंने पास से देखा कि आचार्य गुरु कितने धीरज, समता भाव व मनोबल से, भेद विज्ञान का चिंतन करते हुए यह असहनीय पीड़ा सहते हुए भी आत्म ध्यानस्थ थे। शिष्य ने गुरु सेवा का एक पल भी व्यर्थ नहीं जाने दिया। जितनी भी जैसी भी बन पड़ी, वैयावृत्ति की।

28 जून उदगाँव से विहार

आज आपने आचार्य गुरु के सान्निध्य में ही प्रतिक्रमण व दस भक्तियाँ कीं। पंचास्तिकाय का स्वाध्याय चल रहा था। उपयोगी चर्चाएँ हुईं। आज आपके लिए आचार्य श्री के सान्निध्य में बीते 10 वर्षों का वह स्वर्ण काल पुनः जीवंत हो उठा। लेकिन अतीत अतीत है, जीना तो वर्तमान में ही पड़ता है, महत्व भी वर्तमान का ही है।

वे आचार्य श्री जिन्होंने स्वयं भी व शिष्य के न चाहने पर भी परंपरा का निर्वाह करते हुए आचार्य पद देकर कठोर बन अलग विहार का आदेश दे, पालन करवाया था। आज उनकी इच्छा थी कि शिष्य आचार्य सुनीलसागरजी उनके साथ चातुर्मास करे। इधर नातेपूते का समाज जो ढ़ाई महीने से आचार्य श्री सुनीलसागरजी की विहार में सेवाचर्या में लगा रहा। यहाँ आचार्य श्री सन्मतिसागरजी से भी नातेपूते में उनके चातुर्मास करने के लिए बार-बार निवेदन करता रहा। यहाँ भी नातेपूते के श्रावक श्राविकाओं का मन बैठता रहा कि कहीं आचार्य गुरु की अस्वस्थता को देख आचार्य

श्री सुनीलसागरजी चातुर्मास के लिए यहीं न रुक जाए। इधर चातुर्मास स्थापना में बहुत कम समय था। विहार में भी समय लगना था अतः वे आचार्य गुरु सन्मतिसागरजी से बार-बार निवेदन कर रहे थे। आचार्य गुरु से नातेपूते के युवकों द्वारा सजल नयनों से बार-बार की जाने वाली प्रार्थना से द्रवित हो अंततः उन्होंने दोपहर की प्रवचन सभा में अपने योग्य शिष्य आचार्य श्री सुनीलसागरजी की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए कहा कि ''इतने कम समय में इतनी अधिक धर्म प्रभावना कर लोकप्रियता हासिल करने पर मैं गर्व महसूस करता हूँ। आचार्य सुनीलसागर इसी तरह धर्मवृद्धि व धर्म प्रभावना करते रह स्व-पर का आत्म कल्याण करते रहें। वे कल्याण पथ पर अग्रसर रहें इसी आशीर्वाद के साथ मैं उन्हें नातेपूते में चातुर्मास करने की आज्ञा देता हूँ। नातेपूते के समाज और ऐसे समर्पित श्रावक- श्राविकाओं को मेरा बहुत-बहुत आशीर्वाद है। आपके यहाँ आचार्य सुनीलसागरजी का चातुर्मास सानंद संपन्न हो। हर दिगम्बर साधु के प्रति आपका ऐसा ही समर्पण व भक्ति रहे।''

आगे आचार्य श्री ने कहा कि ''आचार्य सुनीलसागरजी ऐसे संत हैं जिनके गूढ़ ज्ञान का मौन चिंतन उनके प्रवचनों में मुखरित होता है जिसमें उनके जीवन की भव्यता के दर्शन होते हैं। दर्पणवत उनके दर्शन, ज्ञान व चारित्र की सत्यता व स्पष्टता, स्वभाव की सरलता व सहजता तथा हृदय की पावनतम निर्मलता व कोमलता से साक्षात्कार होता है। ऐसा योग्यतम साधु तुम्हारे (नातेपूते) बीच एक-दो दिन नहीं पूरे चातुर्मास के लिए आ रहा है। इसकी क्षमता, योग्यता व पात्रता का पूर्ण दोहन करना।''

जब आचार्य गुरु ने दोपहर की सभा में चातुर्मास के बारे में घोषणा करने की बात कही थी तब नातेपूते का पूरा समाज उदगाँव में उपस्थित था। आज उन नातेपूते वासियों की सांसें ऊपर की ऊपर नीचे की नीचे थी। मन में विश्वास तो पूरा था, तथापि धुकधुकी लगी थी कि कहीं एक पल में 'हाँ' या 'ना' क्या पता क्या हो जाए। पर 'हाँ' सुनते ही वे सब उछल पड़े। धर्मसभा में ही खड़े हो गुरु चरणों में नाचते-गाते श्रीफल चढ़ाने लगे। आज लंबी साधना के बाद मिली साध्य प्राप्ति की सफलता से उनकी खुशी का पारावार नहीं था। अब तो बिना उड़े ही उनके मनों के पंछी आकाश की ऊँचाइयाँ नापने लगे।

पैरों में तूफानी गति आ गई व हाथ गुरु को हाथोंहाथ लेने ऊपर उठ गए। बिना मिठाई खाए ही सबके मुँह मीठे हो गए। चलो बड़े इंतजार के बाद नातेपूते वालों की साध का दीपक जल गया, उनके लिए आज एक साथ होली-दीपावली का उत्सवी माहौल था। कई श्रावकों की आँखों से खुशी के आँसू छलक आए थे। जैसे ही मोबाइल की घंटियाँ नातेपूते के घरों में घनघनाई घर-घर खुशी के दीप जल गए।

गुरु भक्तों पर वात्सल्य न्यौछावर करते हुए आचार्य श्री ने शिष्य को अपने संग चातुर्मास कराने की इच्छा त्याग दी। 28 जून को शाम को अनमने मन से विहार करने से पूर्व आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने गुरु दर्शन कर आशीर्वाद लिया। विदा वेला में सब्र का बांध टूट गया, काफी रोकने पर भी आँखों से नीर बह निकला। उन्होंने देखा कि कुछ समय पूर्व उनका (गुरुवर का) मुख जो कमलवत खिला-खिला था, मुरझा गया था। दोनों एक-दूसरे से बिछुड़ना नहीं चाहते थे पर संत पथ की मर्यादाओं को भी वे किसी भी हालत में तोड़ने के पक्ष में कदापि नहीं थे।

उदगाँव से विहार

अंततः राग पर विरक्ति ने विजय पाली और आचार्य श्री ने उदगाँव से नातेपूते के लिए विहार कर दिया। तपस्वी सम्राट का चतुर्विध संघ आपको विदा देने आया व काफी दूर तक सब साथ चले। सबकी दिली इच्छा भी आचार्य श्री सुनीलसागरजी के साथ चातुर्मास करने की थी पर मुनि पद की मर्यादाओं में बंधे संतों की इच्छाएँ पानी की लहरों की तरह विलोपित हो गई। अंततः आचार्य श्री के आग्रह पर गुरुसंघ भारी मन से लौट गया। संत हो या संन्यासी, सब पर

मिलन व विछोह का कुछ न कुछ प्रभाव तो पड़ता ही है।

उदगाँव से तीन-चार कि.मी. चलकर आपने आचार्य श्री आदिसागरजी की जन्मभूमि अंकली गाँव के आदिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर के दर्शन किए व वहीं रात्रिविश्राम किया।

29 जून 2009 से नातेपूते के लिए आपके पद विहार की रफ्तार पुनः तेज हो गई। अंकली गाँव से आप धामणी, सांगली, माधवनगर, कवलापुर होते हुए कवठे पहुँचे, जहाँ कल्पश्रुतनंदीजी महाराज मिले। यहाँ से तासगाँव से बंजरवाड़ी पहुँचे।

यहाँ एक घर के दरवाजे पर 'अतिथि देवो भव' लिखा पढ़कर सामायिक के लिए द्वार पर रुक गए। द्वार पर खड़े संत रूप इतने बड़े अतिथि को पाकर वहाँ का खरमाटे मराठा परिवार हक्का-बक्का रह गया। उस मराठा परिवार को आपने एक वर्ष का मांस-मदिरा का त्याग करवाया, तभी उस घर में प्रवेश किया और साफ, स्वच्छ शांत जगह पर निर्विकल्प हो सामायिक की। शाम को लिम्ब पहुँचे, जहाँ सूर्यसागरजी महाराज पहले से अगवानी के लिए आ गए थे। कुशल वार्ता के साथ रात्रि विश्राम उनके साथ किया।

लिम्ब से विटा, माहुली, मायणी होकर 2 जुलाई को घोंडा पहुँचे। उधर निर्जन, कंकरीले, पथरीले, कंटीले पथ पर विहार कर अनजानी, असुविधायुत जगहों पर निराकुल रात्रि विश्राम कर सतत पथारूढ़ थे। लगातार पथ विहार करते पैर के तलुए छिल-छिलकर लहूलुहान हो रहे थे। पैरों में दर्द था पर चेहरे पर एक भी शिकन नहीं थी और उधर नातेपूते गुरु आगमन पर दुल्हन की तरह सज रहा था। चातुर्मास की तैयारियों में समाज रात-दिन जुटा था। किसी को किसी से बात करने की फुर्सत नहीं थी। आबाल-वृद्ध, स्त्री-पुरुष सभी स्वागत की तैयारी व चातुर्मास व्यवस्था में लगे थे। हर कोई चाहता था कि कहीं किसी भी प्रकार की कोई कमी न रह जाए। अच्छे से अच्छी व्यवस्था हो। प्रत्येक व्यक्ति की चाहत थी कि इस चातुर्मासिक महायज्ञ के हवन कुंड में अपने किसी न किसी अवदान की समीधा होम करे। बिना लाग-लपेट, दिखावे, सारे गाँव के लोग एक हो गुरुवर के भव्यातिभव्य चातुर्मास कार्य संपादन हेतु जुटे थे। एकता की महाशक्ति के दर्शन हो रहे थे।

3 जुलाई को दहिवड़ी, पाणलिंग होते हुए 4 जुलाई को आप शिखर शिंगणापुर पहुँचे। रात्रि विश्राम भारत गाँधी के खेत में किया। यहाँ एक कुटिया बनी है जिसमें चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराज ने तीन दिन विश्राम किया था। शिखर शिंगणापुर में ही वर्षों पूर्व मुनि धर्मसागरजी ने चातुर्मास किया था। यहाँ से नातेपूते मात्र तीन कि.मी. दूर है। आपने भी ऐसे महान साधकों श्रमण संस्कृति के महा उन्नायकों, नायकों की ध्यान स्थली, साधना स्थली में रुक आत्मध्यान कर अपने को धन्य करना उचित समझा। आप वहाँ रुके, उनके प्रणम्य आदर्श जीवन के संस्मरण सुने व उनके श्रेष्ठ आदर्शों व कार्यों को अपना आदर्श बनाया। इस प्रकार एक रात्रि विश्राम में आप उन संतों के साथ सदियों का श्रेष्ठतम जीवन जी लिए।

संध्या से ही नातेपूते समाज का जमावड़ा शुरू हो गया था चंद्रप्रभु ट्रस्ट व चंद्रप्रभु पतसंस्थाने ने वाहनों की व्यवस्था कर दी। नातेपूते मंगल प्रवेश की पूर्व संध्या को गुरु दर्शन की ललक किए पूरा नातेपूते ही शिखर शिंगणापुर में उलट पड़ा। बीसों गाड़ियों की रेलमपेल मची थी। गाँव व आसपास के नेताओं व गणमान्यजनों का तांता लगा था। गाँव खाली हो गया।

सच है जहाँ संतों, महंतों, महापुरुषों के चरण पड़ जाते हैं वहाँ जंगल में भी मंगल हो जाता है। रात भी दिन की सी जगमगा उठती है। निर्जन में जन सैलाब उमड़ पड़ता है। महापुरुषों की यश सुरभि से दिशाएँ महक उठती हैं। जिस खेत में आचार्य श्री ठहरे थे वहाँ रात में तो क्या दिन में भी वहाँ के काम से संबंधित चार-छह लोगों की आवाजाही थी, आज वहाँ रात हो जाने के बावजूद भी सैकड़ों लोगों में आचार्य श्री सुनीलसागरजी की एक झलक पाने की होड़ मची

थी। सबके मन में आचार्य श्री सुनीलसागरजी की त्यागी, तपस्वी, संयमी, ज्ञानी, ध्यानी, मौनी संत की छवि बसी थी, जिनके हृदय में वात्सल्य, व्यवहार में भीतर बाहर ऋजुता, सरलता, मृदुता, कोमलता व वाणी में शहद सी मिठास भरी थी। यद्यपि सबेरे ही आचार्य श्री का नातेपूते में मंगल प्रवेश था, पर नातेपूते की विकल समाज के लिए गुरु दर्शन बिना एक पल भी बिताना भारी था।

ज्ञातव्य हो कि विगत 5 फरवरी 2009 में आचार्य श्री के श्रवणबेलगोला में मंगल आगमन के चार दिन बाद से ही लगातार 63 दिनों तक नातेपूते की धर्मप्राण समाज छह-छह, आठ-आठ के समूह में आकर आचार्य श्री से चातुर्मास का निवेदन करती रही। इसमें युवक-युवतियों, महिला-पुरुषों की बराबर सहभागिता बनी रही। उसके बाद 13 अप्रैल 2009 से लगातार नातेपूते का समाज महाराजश्री की आहारचर्या के लिए चौके के साथ पूरे विहार की करीब 1000 कि.मी. लंबी 3 (तीन) माह की दुरूह-दुष्कर पदयात्रा कहो या पथयात्रा के सहभागी रहे। एक बार भी इस लंबी यात्रा में आचार्य श्री ने उन्हें नातेपूते चातुर्मास करने का आश्वासन नहीं दिया। तथापि वे अपने धीरज का परिचय देते, अपनी गुरु भक्ति, आस्था व समर्पण के शस्त्रों से शांत भाव से अपनी लड़ाई लड़ते, समरांगण में डटे रहे। यह आचार्य श्री के गूढ़ गंभीर नव्य भव्य व्यक्तित्व का आकर्षण था कि वे 'रणछोड़' नहीं बने अपितु हाथ में विजय पताका थामे लौटे। इस लंबे गुरु सान्निध्य से आचार्य श्री की रग-रग से समाज परिचित हो गया था। वे वहाँ के घर-घर व जन-जन के मन में बस गए थे। अब चारों तरफ जैन-अजैनों में एक ही चर्चा का विषय था ''हमारे गुरु महाराज' आ रहे हैं। वे ऐसे हैं, वे वैसे हैं, वे ऐसी चर्या करते हैं आदि आदि। उनकी घनी श्रद्धा में वे आचार्य श्री भगवान से कमतर नहीं थे। ऐसी ही श्रद्धा भक्ति अजैनों में भी थी। यही नहीं आसपास तो क्या, नातेपूते से दूर-दूर तक का वातावरण गुरु आचार्य श्री सुनीलसागरजी मय हो गया था। बिना होली उत्सव के सब 'गुरु रंग' में रंग गए। कौन जैन है, कौन अजैन, कौन खास-कौन आम, कौन गरीब, कौन अमीर, कौन बाल कौन वृद्ध, हर्ष, उत्साह के सैलाब ने सारा अंतर पाट दिया था।

महावीर सेना के इंद्रजीत गाँधी, सुरेश हि. दोषी, सुरेश शा. दोशी, प्रज्योत गाँधी, संजय गाँधी, नम्रता गाँधी, प्रमिला दोषी, साधना दोषी आदि अनेक नातेपूते के श्रावक-श्राविकागण जो आचार्य श्री के करीब 1000 कि.मी. के लंबे विहार में साथ थे, अब अपने गृहनगर में आचार्य श्री के मंगल प्रवेश की अगवानी व अभिनंदन में जुट गए। पूरे विहार में उनकी साँसें ऊपर-नीचे होती रहीं। आचार्य श्री ने नातेपूते में चातुर्मास का कोई संकेत नहीं दिया था। पर आज उन सबका मन पुलकित था कि कल की (5 जुलाई 2009) की मंगल प्रभात में आचार्य श्री के चरण इस भूमि को पावन कर देंगे।

* * *

5 जुलाई 2009 नातेपूते चातुर्मास हेतु मंगल प्रवेश

अंततः इंतजार की लंबी रात समाप्त हुई। 5 जुलाई 2009 की मंगल बेला में सबका मंगल करने वाले मंगल मूरत आचार्य श्री सुनीलसागरजी विशाल जुलूस के साथ तीन कि.मी. पदयात्रा करते हुए नातेपूते की ओर चल पड़े। अगवानी के लिए पूरा गाँव तो क्या आसपास के क्षेत्र के लोग भी टूट पड़े।

प्रातः 8 बजे मंगल प्रवेश के समय पूरे गाँव व क्षेत्र के राजनेता, विधायक, हिंदू धर्मीय, वारकरी संप्रदाय तथा जैन-अजैन हर जाति-धर्म के लोगों ने डिजीटल बोर्ड, रंगोली, पाद प्रक्षालन, मंगल कलश, ध्वज पथक, लेझीम पथक तथा विभिन्न मंगल वाद्यों के साथ आचार्य श्री का अभूतपूर्व मंगल प्रवेश कराया। इतनी छोटी जगह में ऐसे ऐतिहासिक भव्य स्वागत, अभिनंदन व अगवानी, जगह-जगह बने स्वागत द्वार देख आचार्य श्री के आश्चर्य का ठिकाना नहीं था। इतना छोटा गाँव होने के बावजूद भी हजारों की तादाद में लोग संत दर्शन को उमड़ पड़े।

25 वर्ष बाद किसी संत का नातेपूते की धरती पर चातुर्मास होने जा रहा था। आज का दिन उनके लिए आलोक पर्व से कम नहीं था। सही मायने में उनके लिए रत्नत्रय के दीप जलाकर आचार्य श्री उनके अंधेरे जीवन-पथ को आलोकमय बना देने वाले हैं। तपस्वी सम्राट प.पू. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी महाराज के परम शिष्य प.पू. अध्यात्म मूर्ति, बहुभाषाविद्, मौनप्रिय, प्राकृताचार्य, विलक्षण प्रतिभा के धनी, महान साहित्य सर्जक, आचरण के आचार्य, आचार्य श्री सुनीलसागरजी महाराज का सान्निध्य पा नातेपूते का जन-जन धन्य व कण-कण कृतकृत्य हो गया था। इतने छोटे गाँव में ऐसा ऐतिहासिक मंगल प्रवेश पहले कभी नहीं देखा गया।

सच माने तो यह अभूतपूर्व अभिनंदन, वंदन, अगवानी आचार्य श्री सुनीलसागरजी की नहीं अपितु उस महान संत की थी जिनकी वाणी से सरस्वती/ जिनवाणी का सार झरता/ टपकता है/था। प्राणी मात्र के लिए जिनके हृदय का वात्सल्य माँ की ममता की तरह छलकता था/है, जिनके आचरण में अनेक महान पूर्वाचार्यों का आचरण आचरित होते दिखता था/है। वे हमारी महान संस्कृति के संरक्षण व सुरक्षा के लिए सार रूप संस्कारों के बीजों का वपन कर रहे हैं। मृण्मय को चिन्मय बनाने के प्रयास से वे हमारे मुर्दा प्राणों में धार्मिक चेतना की प्राणवायु फूंक चैतन्य बनाने व हमारी मृतप्रायः चेतना जागृत करने में लगे हैं। ऐसी त्याग, तपस्या, संयम व सरलता की मंगल मूरत आचार्य श्री ने अपने मंगल आशीर्वचन व उद्‌बोधन में नातेपूते समाज के उत्साह, श्रद्धा भक्ति, आस्था व गुरु के प्रति समर्पण को एक आदर्श व विरला उदाहरण बता बहुत-बहुत आशीर्वाद दिए। आपने कहा कि धर्म प्रभावना व श्रमण परंपरा के झंडे गाड़ने के लिए यह अद्वितीय आदर्श हैं। समाज के साधुओं के प्रति इतने श्रेष्ठ व पवित्र भाव स्तुत्य, प्रशंसनीय व अनुकरणीय है। साधु सेवा के क्षेत्र में नातेपूते का समाज समूचे जैन समाज के लिए गुणग्राह्य आदर्श बन गया है।

6 जुलाई 2009 को इन निष्काम व कर्मठ परिव्राजक युगांतकारी संत ने उपवास रख नातेपूते में चातुर्मास स्थापना की और ससंघ महा प्रतिक्रमण किया। 7 जुलाई को इन बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी वाग्मी संत का गुरु पूर्णिमा के दिन सविधि मंगल कलश स्थापना का गरिमापूर्ण कार्यक्रम संपन्न हुआ। दूर-दूर से आए विशाल भक्त समुदाय ने बड़े भक्तिभाव से गुरु पूजा, पाद प्रक्षालन, शास्त्र भेंट व आरती की। आज से आचार्य श्री का चातुर्मास प्रारंभ हो गया। श्री सुधीर जीवंधर दोशी, श्री महावीर मगनलाल गाँधी, श्री सुरेश शांतिलाल गाँधी ने चातुर्मास मंगल कलश की स्थापना की। इस कार्यक्रम में औरंगाबाद, सोलापुर, अडूल, अकलूज आदि कई स्थानों से सैकड़ों श्रावकों ने आकर गुरुवर के प्रति अपनी भक्ति समर्पित की। पं. महावीर प्रभाचंद्र शास्त्री ने कुशल मंच संचालन किया।

एक पल भी निष्क्रिय नहीं बैठने वाले आचार्य श्री के नातेपूते की धरती पर चरण रखते ही उनके सृजन की धड़कनें व प्राणों का स्पंदन सुनाई देने लगा। उनकी सक्रिय, चेतन व जीवंत रचनाधर्मिता के दिग्दर्शन होने लगे। उनकी सतत उर्वरा मनोभूमि पर जिनदर्शन की फसलें लहराने लगी तथा वाणी से कभी न सूखने वाले जिनवाणी के झरने फूटने लगे। वे अपनी एक-एक साँस की समीधा बना विश्व कल्याण के हवन कुंड में होमने लगे। हर किसी की जुबान पर एक ही बात थी कि ऐसा संत तो हमने पहली बार देखा है।

8 जुलाई श्रावण कृष्ण एकम (वीर शासन जयंती) के दिन प्रातः 7.30 से पंचास्तिकाय, 8.30 से अज्झप्पसारो (प्रवचन), दोपहर 3-4 तत्त्वार्थ सूत्र (शिक्षण), 4-5 प्रवचनसार व प्रमेय रत्नमाला का स्वाध्याय प्रारंभ हुआ। सार्वजनिक रविवार व विशेष अवसरों पर विशेष कार्यक्रम आयोजित होने लगे। प्रबुद्ध आचार्य श्री ने अपने साथ-साथ समूचे समाज को अपनी पावन ज्ञान गंगा में निमज्जित कर दिया। लोग इस पवित्र निर्मल नीर में अवगाहन कर स्वयं को अमल-धवल बनाने में लग गए।

28 जुलाई मुकुट सप्तमी को भगवान पार्श्वनाथ का मोक्ष कल्याणक दिन बड़े धूमधाम से मनाया गया। निर्वाण लाडू चढ़ाया गया। इसी तरह चातुर्मास में आए अन्य तीर्थंकरों के निर्वाण महोत्सव भी बड़े उत्साह व उत्सवी माहौल में मनाए

गए। 30 जुलाई को सुश्रावक मेघचंद्र नाथूराम दोशी परिवार द्वारा निर्मित भवन का 'उद्घाटन' आपके सान्निध्य में हुआ। 5 अगस्त को रक्षाबंधन पर्व आपके सान्निध्य में विशिष्ट रूप से मनाया गया।

नातेपूते चातुर्मास के दौरान वहाँ किसी धार्मिक कार्यक्रम का आयोजन हो या किसी संस्था का कार्यक्रम हो या सामाजिक कार्यक्रम, आचार्य श्री इतने अधिक लोकप्रिय हो गए थे कि समाज का कोई भी कार्यक्रम आचार्य श्री के मार्गदर्शन एवं आशीर्वाद बिना संपन्न नहीं होता। 28 अगस्त 2009 को चंद्रप्रभु पत संस्था वार्षिक मीटिंग का अवसर था। आचार्य श्री की निश्रा में बैठकर संस्था की योजनाएँ बनीं। आचार्य श्री ने अपने आशीर्वचन के रूप में मंगल उद्बोधन में कहा कि वे इसी तरह समर्पित रह निस्वार्थ भाव से कार्य करते रहे, संस्था दिन दूनी रात चौगुनी प्रगति करेगी। श्रेष्ठ मनुष्यों के श्रेष्ठ कार्यों से ही संस्था समाज को अपना श्रेष्ठतम दे सकती है। इस अवसर पर हाईकोर्ट जज कैलाश चाँदीवाल भी उपस्थित थे। वे आचार्य श्री के असाधारण व्यक्तित्व एवं कृतित्व से अत्यधिक प्रभावित हुए।

15 अगस्त स्वतंत्रता दिवस पर आपने चंद्रप्रभु एज्युकेशन सोसायटी में छात्रों, पालकों व समाज के श्रावक-श्राविकाओं से कहा कि राष्ट्र सेवा सर्वोपरि है। राष्ट्र की रक्षा के लिए हमें सर्वस्व निछावर करने को तैयार रहना चाहिए। राष्ट्र सुरक्षित है तभी धर्म सुरक्षित रह सकेगा और हमारी सांस्कृतिक परंपराएँ जीवित रह सकेंगी। अतः बच्चो! राष्ट्र की रक्षा करना सबका परम व पहला कर्तव्य है। भले जान देना पड़े, पर कभी राष्ट्र का, भारत माता का अहित मत करना। स्वार्थांध हो राष्ट्रद्रोह जैसा जघन्य पाप मत करना। आज के बच्चे कल के नागरिक हैं। देश के भावी कर्णधार हैं, राष्ट्र नायक हैं। ऐसे संस्कारित, सदाचारी, संवेदनशील, कर्तव्य निष्ठ, कुशल व कर्मठ हाथों में जब देश की बागडोर आएगी, तब वे निश्चित ही देश को ऊँचाइयों पर ले जाएँगे। इस प्रकार आचार्य श्री ने बच्चों तथा समाज को देश के श्रेष्ठ नागरिक बन देश के प्रति अपने कर्तव्य निर्वहन के लिए आगाह किया।

दिनांक 21 अगस्त से 3 सितंबर तक षोडसकारण व्रत प्रारंभ हुआ जिसे कई श्रावक- श्राविकाओं ने आचार्य श्री की प्रेरणा, आशीर्वाद एवं मार्गदर्शन में किया। इन्हीं तारीखों को आचार्य शांतिसागरजी महाराज की पुण्यतिथि तथा आचार्य आदिसागर की जन्म जयंति आचार्य श्री के सान्निध्य में धूमधाम से मनाई गई।

दि. 24 अगस्त से 2 सितंबर 2009 तक दशलक्षण (पर्यूषण) पर्व में श्रावकों के लिए भव्य पूजा, शिक्षण- प्रशिक्षण संस्कार शिविर का आयोजन किया जिसमें स्थानीय लोगों के अलावा देश के कोने-कोने से श्रावकों ने आकर इस आत्मानुष्ठान में भाग लिया। पर्व के दिनों में दस धर्मों पर किए गए आचार्य श्री के प्रवचनों को सुन लोग मंत्र मुग्ध हो गए।

मृदु व मधुर भाषा में दिए गए उनके भाव विह्वल, वात्सल्य से आपूरित, हृदय स्पर्शी प्रवचनों को सुन दशलक्षण पर्व में लोगों ने 5 उपवास (23 लोगों ने) 10 उपवास (6 लोग) तथा 16 उपवास (3 लोग) की तपस्या की। 3 उपवास 20 लोगों ने किए। इतने अधिक व्रत-उपवासों की संख्या नातेपूते में पहली बार देखने में आई।

दि. 28 सितंबर को आचार्य श्री महावीर कीर्तिजी के जन्म शताब्दि वर्ष की स्मृति में आचार्य श्री की प्रेरणा से कई श्रावक-श्राविकाओं ने व्रत नियम लिए। इस प्रकार आचार्य श्री के सत् सान्निध्य से नातेपूते में त्याग, तपस्या व संयम की बयार बहने लगी। श्रावकगण तपस्या की पावक में तपा स्वयं को कुन्दन सा दमकाने लगे थे।

धार्मिक आयोजनों के अलावा जैन संस्कृति के प्रचार-प्रसार के लिए आचार्य श्री के मार्गदर्शन एवं प्रेरणा से दि. 27-28-29 सितंबर तक तीन दिनी प्राचीनतम ब्राह्मी लिपि प्रशिक्षण शिविर का आयोजन डॉ. कु. अनुप्रेक्षा मेहता के नेतृत्व में संपन्न हुआ दि. 29 सितंबर को जैन गणित कार्यशाला का आयोजन श्रीयुत जे.डी. देवधरे के संयोजन में तथा प्राकृत भाषा का प्रशिक्षण शिविर दि. 2 से 6 अक्टूबर तक श्रीयुत प्रो. उदयचंदजी जैन के संयोजन में संपन्न हुआ।

दि. 7 से 9 अक्टूबर तक इसी शृंखला को आगे बढ़ाते हुए 'आचार्य कुंदकुंद व्यक्तित्व एवं कृतित्व' विषय पर तीन

दिनी राष्ट्रीय विद्वत संगोष्ठी का आयोजन किया गया। आचार्य श्री के प्रेरक व प्रभावोत्पाद व्यक्तित्व से प्रभावित उन जैसे विलक्षण प्रतिभा के धनी आचार्य भगवंत का सान्निध्य पाने देश के मूर्धन्य विद्वान- प्रो. फूलचंद प्रेमी वाराणसी, डॉ. चिरंजीलाल बगड़ा कलकत्ता, डॉ. मुन्नी पुष्पा जैन वाराणसी, डॉ. महेंद्र कुमार 'मनुज' इंदौर, पं. जितेंद्र चंकेश्वरा अकलूज, पं. संजय शास्त्री तिगोड़ा, पं. शीतल दोशी नातेपूते, डॉ. अशोक वोरा नातेपूते आदि इस गोष्ठी में भाग लेने नातेपूते पधारे और अपने गौरवपूर्ण आलेख पढ़े। अपने विचार व्यक्त किए। हर कार्यक्रम में समाज ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया व नई-नई जानकारियाँ प्राप्त की।

इन अवसरों पर आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने विषय से संबंधित गहन जानकारियों वाले सारगर्भित प्रवचन देकर समाज को हमारी महान विरासत को सुरक्षित-संरक्षित रख प्रचारित-प्रसारित करने के लिए आगाह किया। राष्ट्रीय संगोष्ठी की समाप्ति पर विद्वानों के आग्रह पर आपने प्राकृत भाषा में लंबा, सारगर्भित एवं रोचक उद्‌बोधन आशीर्वचन के रूप में दिया। आपने कहा कि प्राकृत साहित्य पिछले ढाई हजार वर्षों की भारतीय परंपरा का संवहन करता है। प्राकृत साहित्य में तद्‌युगीन जनजीवन का जैसा व्यापक एवं प्राणवान प्रतिबिम्बन हुआ है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। 'प्राकृत भाषा' प्राचीनतम भारतीय संस्कृति तथा किन्हीं अर्थों में जैनों की मूल भाषा है। संस्कृत की जन्मदात्री होने का इसे सौभाग्य प्राप्त है।

आचार्य श्री ने प्राकृत में जो धारा प्रवाह बोलते हुए प्राकृत भाषा की विशद व विस्तृत जानकारियाँ दी उसमें आपने बताया कि हमारे प्राचीन ग्रंथ प्राकृत भाषा में ही लिखे हैं। हमारे महान ग्रंथ धवल, महाधवल की ताड़पत्र पर लिखी गई मूल प्रतियाँ जैनबद्री मूडबद्री के भट्टारकजी के पास आज भी सुरक्षित रखी हुई हैं। वहाँ के पं. लोकनाथ शास्त्री ने उनका हिंदी व संस्कृत अनुवाद कर इस ग्रंथ को देश के कोने-कोने में पहुँचाया, जिनके हम ऋणी हैं।

आचार्य श्री द्वारा प्राकृत भाषा में प्राकृत भाषा के लिए दी जाने वाली जानकारियाँ सुन विद्वतगण आश्चर्यचकित थे। विद्वत समाज कहने लगे कि प्राकृत भाषा के क्षेत्र में आचार्य श्री सुनीलसागरजी वर्तमान के 'कुंदकुंद' हैं। सारे लोग कह रहे थे हमारे कई संतों को आगम का गूढ़ गहन ज्ञान है, प्रवचनों में वे निष्णात हैं किंतु किसी ने प्राकृत भाषा में ही प्राकृत भाषा पर ऐसा लम्बा-चौड़ा प्रवचन आज तक नही दिया व प्राकृत भाषा का महत्व नहीं समझाया।

नातेपूते में आचार्य श्री की लोकप्रियता, उनकी कठिन साधना, सतत किए जाने वाले पुरुषार्थ व शुद्ध चर्या के कारण कैलाश की ऊँचाइयों को चूमने लगी।

ज्ञातव्य हो कि इससे पूर्व आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने श्रवणबेलगोला में भी विद्वत गोष्ठी में प्राकृत में अपना मंगल उद्‌बोधन दिया था। प्राकृत भाषा पर उनकी इतनी मजबूत पकड़ देख विद्वानों ने उन्हें 'प्राकृताचार्य' की उपाधि से विभूषित किया था।

नातेपूते के इतिहास में आचार्य श्री के सान्निध्य में हुए ऐसे अभूतपूर्व कार्यक्रमों का समाज ने पूरा लाभ लिया। प्रशिक्षणार्थियों की उपस्थिति भी सराहनीय रही।

आचार्य श्री का 2009 का चातुर्मास धर्मनगरी नातेपूते में चल रहा था। यहाँ आपने 'णियप्पज्झाणसारो' अध्यात्म ग्रंथ की रचना की। 'णियप्पज्झाणसारो' (निजात्म ध्यान सार) ग्रंथ प्राकृत भाषा में लिखित लघुकायिक ग्रंथ है इसमें 55 गाथाएँ हैं। इस कृति में मुख्य रूप से आपने ध्यान की परिभाषा, धर्म ध्यान के भेद-प्रभेद, आत्मा का स्वरूप, आत्मचिंतन के लाभ आदि विषयों को सरलता से समझाया है।

7 अक्टूबर को ही आचार्य श्री द्वारा यहाँ लिखित ग्रंथ णियप्पझाणसारो' (निजात्मध्यानसार) की दिंडी यात्रा निकालकर उनका जन्मदिन समाज ने बड़ी धूमधाम से मनाया। राष्ट्रीय विद्वत गोष्ठी का उद्घाटन भी 7 अक्टूबर को ही हुआ।

नातेपूते में आचार्य श्री सुनीलसागरजी के भव्य चातुर्मास की सफलता का बड़ा श्रेय गुरु भक्त महावीर सेना के

इंद्रजीत गाँधी को जाता है। चातुर्मास व्यवस्था की भाग-दौड़ में वे अपनी कार लॉक करना भूल गए और कार चोरी चली गई। 4-5 दिन बाद बातों-बातों में आचार्य श्री को किसी ने यह घटना बता दी। आचार्य श्री ने इंद्रजीत को बुलाकर कहा, ''कुछ मत करो, कार पंद्रह दिन के अंदर मिल जाएगी।''

12वें दिन ही कार नातेपूते से 60 कि.मी. दूर मिल गई। उस पर नया कलर किया हुआ तथा टायर बदले हुए थे। चारों ओर आचार्य श्री की भविष्यवाणी की सत्यता की चर्चा फैल गई।

दि. 18 अक्टूबर 2009 भगवान महावीर के निर्वाण महोत्सव पर नातेपूते की समाज आचार्य श्री के साथ जुलूस लेकर पास के अतिशय क्षेत्र दहीगाँव पहुँची। वहाँ आचार्य श्री का भव्य स्वागत हुआ। समाज ने निर्वाण लाडू वहीं चढ़ाया। तत्पश्चात आचार्य श्री का भगवान महावीर के जीवन दर्शन पर तथा वर्तमान युग में उनकी प्रासंगिकता पर युगांतकारी प्रवचन हुआ। हर किसी के मुख से निकल रहा था कि ऐसा प्रवचन तो आज तक उन्होंने नहीं सुना। आचार्य श्री के नित्य के प्रवचनों के अंश डेली अखबारों में छपते थे। उनके प्रवचन जन-जन के कल्याण के लिए होते थे अतः उनकी धर्मसभा में जैन-अजैन हर कोई आता था। दूर-दूर से भी लोग उनकी वाग्वाणी सुनने आते थे।

जितने उत्साह से नातेपूते वासियों ने आचार्य श्री का अपने यहाँ मंगल प्रवेश करवाया था, गुरु विदा वेला में वे उतने ही भाव विह्वल, अधीर व गमगीन थे। आचार्य श्री ने समाज को मंगल आशीर्वचन में जाते-जाते ढेरों आशीष दिए व कहा, ''राग-मोह तजो यही दुःख की खान है। मैं कहीं भी रहूँ, पर तुम लोगों ने मेरा इतना भव्यातिभव्य चातुर्मास करवाया है कि उसकी यादों के रूप में पुष्प सुवास की तरह मैं सदैव तुम्हारे साथ रहूँगा। इसी तरह श्रमणों के चातुर्मास करवाते रहकर स्वयं के जीवन को कृतार्थ करना। इस तरह सदा-सदा मुझे अपने पास पाना।''

अंततः इस कोलाहल भरे महाविश्व की तरह आचार्य श्री नातेपूते के कण-कण में भी अहिंसा, सत्य, अस्तेय, प्रेम, शांति व तप-संयम की मंद मलय बहा बासंती रास-उल्लास भर चल दिए। अधोगामी होती चेतना को ऊर्धगामी बना, तमस में ज्ञान-ज्योति भर आगे बढ़ गए। वे महायोगी, बंजर होती मानवता को वो हर स्त्रोत प्रदान कर गए जिससे उसकी युगों-युगों से खोई उर्वरता कायम रहे। अंत में जाते-जाते वे अपने परम भक्तों को यह संदेश दे गए कि दुःख में सुख व प्रतिकूलता में अनुकूलता खोजते रह मनोभूमि को समतल बनाए रखना।

अश्रु बरसाते चरणों में शीश नवाते विशाल जन समुदाय को अशीषते वे निर्मोही महा ऋषि लंबे-लंबे डग भरते चातुर्मास संपन्न कर गंतव्य पथ पर आगे बढ़ने लगे। किंतु नातेपूते के रागी-मोही लोग विगत एक वर्ष से सतत आचार्य श्री के सान्निध्य में थे- उनके लिए आचार्य श्री का वियोग असह्य था। आचार्य श्री के जगने पर उनकी प्रातः और सोने पर उनकी रात होती थी, आचार्यवर की मंगल मूरत जिनके मन-मानस में बसी थी, भाव विह्वल कई युवा रोते हुए आचार्य श्री के चरणों में लौट गए, कई लोग उनके चरण पकड़ कर सड़क पर ही बैठ गए। गुरु वियोग में दुःखी वे रो-रोकर कह रहे ते आचार्य भगवन रुक जाओ, हमें अनाथ व बेसहारा कर मत जाओ। आपने यहाँ जलद बन ज्ञान की गंगा बहा दी, धर्म की फसलें लहरा दीं, आपके यहाँ से चले जाने पर सूख जाएँगी।

मोहातीत उन अनासक्त योगी ने उन मोहपगे नातेपूते वासियों को समझाया कि ''यदि तुम सबको मुझसे सच्चा अनुराग है तो यह मोह का रोना छोड़ो। मेरे द्वारा बहाई ज्ञान की गंगा व धर्म की फसलों पर मेरे दिए गए विचारों, संदेशों के चिंतन की धारा छोड़ते रहना- कभी नहीं सूखेगी। यही धर्म व आत्मज्ञान तुम्हारा मुक्ति प्राप्ति का आत्मबल बढ़ाएगा। मेरा मानना है तुमने मुझसे जो कुछ पाया है वह सर्वोत्कृष्ट व मेरी साधना का निचोड़ है, सत्व है- इसे मात्र संभालकर मत रखना वृद्धिगत रखना।'' आचार्य श्री ने वात्सल्य भरे शब्दों में कहा, ''उठो मेरा रास्ता छोड़ो और अपने लिए मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करो।'' निर्ग्रंथ मुनि का रास्ता आज तक कौन रोक पाया है? और वे महामुनि अपने गंतव्य की ओर बढ़ गए।

मार्ग में नातेपूते के एक श्रावक के फार्म हाउस पर आपने आहार चर्या व मध्याह्निक सामायिक की। जिस कक्ष में

आचार्य श्री ने मध्याह्निक सामायिक खड़े-खड़े की थी, उस फर्श पर आचार्य श्री के चरण चिह्न छप गए। आचार्य श्री के विहार पश्चात जब साफ-सफाई की गई तब भी फर्श पर वे चरण चिह्न ज्यों के त्यों चमक रहे थे, मालिक के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उसने श्रद्धा भक्ति से आचार्य श्री के चरण चिह्नों पर माथा टेक दिया। बाद में उसने वह फर्श निकालकर उच्च स्थान पर स्थापित कर दिया व गुरु चरणों में दीप प्रज्जवलित करने लगा। वह खुश था कि भले ही वे महाऋषि उनके फार्म हाउस से भौतिक रूप से चले गए किंतु अपने चरण चिह्न सदा-सदा के लिए उसकी इस भूमि पर यहाँ छोड़ गए। इससे बड़ा उसका सौभाग्य और क्या हो सकता है?

दि. 1.1.2010 को युवा ऊर्जा से ओत-प्रोत महान धर्म प्रभावक युवाचार्य श्री सुनीलसागरजी महाराज, जिनकी कीर्ति पताका दिग् दिगन्तों में फहरा रही थी, का इंदापुर (महाराष्ट्र) में भव्य मंगल प्रवेश हुआ। जहाँ उनकी अगवानी विशाल जैन- अजैन समाज ने की। 8 जनवरी 2010 को इंदापुर दिगम्बर जैन समाज द्वारा श्री शांतिनाथ मंदिर प्रांगण में आचार्य श्री के मंगल सान्निध्य में निर्माणाधीन श्री मुनिसुव्रतनाथ भगवान की 31 फीट ऊँची शिला के शुद्धिकरण कार्यक्रम का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम में आचार्य श्री के अध्यात्मापूरित प्रभावोत्पादक व्यक्तित्व से प्रेरित हो महाराष्ट्र सरकार के मंत्री श्री हर्षवर्द्धन पाटिल सपरिवार तथा भय्यूजी महाराज के साथ अनेक राजकीय एवं सामाजिक नेतागण, गणमान्य लोग एवं प्रतिष्ठित विद्वान उपस्थित रहे। आचार्य श्री के सान्निध्य में संपन्न हुए इस कार्यक्रम में सोलापुर, सतारा तथा पुणे जिले का वृहद मात्रा में जैन समाज एवं अनेक प्रतिष्ठितजन सम्मिलित हुए। चारों तरफ विशाल जनसैलाब सागर की तरह लहराता दिखाई पड़ रहा था। मंत्रीजी व भय्यूजी महाराज द्वारा आचार्य श्री द्वारा सृजित पाँच पुस्तकों का इस अवसर पर लोकार्पण हुआ। मंत्रीजी व भय्यूजी महाराज ने अपने उद्‌बोधन में गौरवपूर्ण शब्दों में जैन धर्म का उल्लेख करते हुए आचार्य श्री की सरलता, विद्वता व समन्वयकारी भावनाओं की भूरि-भूरि प्रशंसा की। आचार्य श्री के प्रवचन के बाद मूर्ति शिला अनावरण व शुद्धिकरण का कार्य संपन्न हुआ।

यहाँ पर टेंभुर्णी, करमाला, करकंब तथा नातेपुते के श्रावकों ने आचार्य श्री को श्रीफल भेंटकर अपने-अपने नगर में पधारने की अनुनय विनय भरी अरज की।

इंदापुर से 12 कि.मी. नीमगाँव होते हुए आप दहीगाँव के श्रावकों के निवेदन पर वहाँ पहुँचे। यहाँ जीतूभाई चंकेश्वरा अकलूज के मार्गदर्शन में प्रतिवर्ष धर्मध्यान शिविर का आयोजन होता है। कार्यकर्ताओं के बारम्बार आग्रहपूर्ण निवेदन पर अंतिम दो दिन आप इस शिविर में शामिल हुए। इस शिविर में दूर-दूर से आकर 80 श्रावकों ने भाग लिया था। समापन संबोधन में आचार्य श्री का सवा घंटे प्रवचन हुआ। इसमें आपने श्रोताओं को अनेकांत व तत्त्वज्ञान समझाते हुए उन्हें अन्याय, अनीति व अभक्ष्य भक्षण न करने की सलाह दी तथा स्वभाव में सहजता, शांति व निराकुलता रखने की बात कह सबका मोक्ष मार्ग प्रशस्त किया। वहाँ जिन मंदिर के तलघर में विराजित आदिनाथ भगवान की दर्शनीय प्रतिमा का विशेष अभिषेक आपकी उपस्थिति में संपन्न हुआ।

नातेपुते समाज, शीतकालीन वाचना के लिए आचार्य श्री से कब से निवेदन कर रहा था। दहीगाँव से 12 जनवरी को विहार कर दो-ढ़ाई महीने बाद आपने पुनः नातेपुते में प्रवेश किया। गुणी, परिश्रमी, ज्ञानी व विद्वतजन को कौन नहीं चाहेगा? वहाँ पर भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी के अध्यक्ष आर.के. जैन मुंबई, नीलम अजमेरा उस्मानाबाद, संतोष पेंढारी नागपुर, अनिल जमगे सोलापुर, अनिल जमगे जोहरापुरकर, रमणिक भाई कोटडिया नीरा आदि से पधारे तथा सबने आचार्य श्री से विशेष चर्चा की व शिखरजी के लिए चंदा एकत्रित करवाने की बात कही।

आपने उन्हें समझाते हुए कहा कि साधु अयाचक होते हैं। यह कार्य मेरे करने योग्य नहीं है। आप परिश्रम पूर्वक कोशिश करें, सफलता जरूर मिलेगी, यह मेरा आशीर्वाद है।

24 जनवरी 2010 से नातेपुते में शीतकालीन वाचना शुरू हुई। प्रातः काल से 9.15 समयसार, अपराह्न 2.30 से 4 धवला पुस्तक-1, 4 से 5 तक कातंत्ररूपमाला का स्वाध्याय प्रारंभ हुआ इस नाद के साथ 'शुद्धोऽहं'।

दि. 25.1.2010, माघ शुक्ल सप्तमी को आपके सान्निध्य में तपस्वी सम्राट गुरुवर आचार्य श्री सन्मतिसागरजी की 72वीं जन्म जयंति भव्य रूप में मनाई गई। इसी दिन आपश्री को औरंगाबाद में अंकलीकर परंपरा के तृतीय पट्टाधीश आचार्य श्री सन्मतिसागरजी ने आपकी (मुनि श्री सुनीलसागरजी) विशिष्ट व विलक्षण योग्यता, प्रभावोत्पादक व्यक्तित्व, दर्शन, ज्ञान, चारित्र की सम्यक्त्वता से आभा मंडित, मुनिसंघ व समाज के प्रति कर्तव्यनिष्ठा व उत्तरदायित्व निर्वहन क्षमता, अध्यात्म ग्रंथों में पारंगतता, निज सिद्ध स्वभाव प्राप्ति में पुरुषार्थ रत महान उपलब्धियों को देख 'आचार्य पद' पर प्रतिष्ठित किया था।

आप चिंतनरत थे 'भो चेतन! आचार्यपद तो है, पर वैसी योग्यता प्रभाव व पुण्य चाहिए। कर्तव्य पर दृढ़ रहते हुए भी सोच रहे थे कि क्या आचार्य के 36 मूलगुणों का स्वयं द्वारा परिपालन हो रहा है? आचारवत्वादि गुणों का निर्वहन हो रहा है? ख्याति प्रशंसा के मोहवश व अहंकार से कहीं ये पद आपद न बन जाए अतः निरापद हो। हे चेतन! निजपद का लक्ष्य रख, सदा स्वपद में प्रतिष्ठित रह।'

आचार्य अपने पद नहीं, संस्कार से महान होते हैं। उनमें साधु परमेष्ठी के 28 मूलगुणों के साथ उपाध्याय परमेष्ठी के भी 25 मूलगुण समाहित हो जाते हैं। स्वयं आचार्य परमेष्ठी के 36 मूलगुणों का निर्वहन करते हुए वे व्यवहार युक्त बाह्य प्रवृत्ति करते हैं। स्वपर का हित करते हुए वे पंचाचार का पालन करते हैं। एक श्रेष्ठ पिता की तरह संतति के पूर्ण विकास के लिए किए जाने वाले पुरुषार्थ की तरह वे योग्य पात्रों को शिक्षा-दीक्षा देते हुए उन्हें पंचाचारों के परिपालन में निष्णात बनाते हैं। उनका मार्गदर्शन करते हैं। आचार्य परमेष्ठी का संसार के पामर प्राणियों पर अपूर्व उपकार है। इन्हीं ने अपने आत्म पुरुषार्थ व चिंतन के अमूल्य क्षणों में से समय निकालकर संसार के निराश्रित अनाथ जीवों के मार्गदर्शन के लिए भव भय भंजक, ज्ञान प्रकाश से दीप्त शास्त्रों का प्रणयन किया है। इस नर जन्म को सार्थक करने के लिए हमें इन महान हितैषी-मनीषियों की साधना से निःसृत ग्रंथों को पढ़कर निर्ग्रंथ बनने का पुरुषार्थ करना चाहिए।

वैसे तो आप हर दिन आचार्य परमेष्ठी के मूलगुणों की कसौटी पर स्वयं का मूल्यांकन करते स्वपर हित में स्वयं को लगा इस पद को दृढ़, मजबूत व परिपक्व बनाते रहे हैं जिसके प्रभाव का पता हमें समाज के हृदय पर अंकित आपकी विशिष्ट छाप से पड़ता है। आपके पद प्रतिष्ठादिवस पर समाज ने आपकी विशेषताओं का हृदय से गुणानुवाद किया। आप अपने महान गुरु के गुरुतम उपकारों के प्रति कृतज्ञता से अभिभूत हो गए। आज का दिन आपने आचार्य परमेष्ठी के मूलगुणों के विशेष 'चिंतन दिवस' के रूप में मनाया।

आप अपना मूल्यांकन आचार्य परमेष्ठी के मूलगुणों की तीन शैलियों में करने लगे। देखिये-

(1) पंचाचार + त्रयगुप्ति + षड़ावश्यक + उत्तमदशधर्म + द्वादश तप = 36

(2) पंचाचार + आठ आचारवत्वादि + तेरहविधि चारित्र + दशधर्म = 36

(3) आठ आचारवत्वादि + दस स्थिति कल्प + षडावश्यक + दस धर्म+ द्वादश तप = 36

पाठकों के हित में इनकी संक्षिप्त जानकारी इस प्रकार है-

(1) पंचाचार- (1) दर्शनाचार, (2) ज्ञानाचार, (3) चारित्राचार, (4) तपाचार, (5) वीर्याचार। अंतरंग-बहिरंग के भेद से प्रत्येक के दो भेद होते हैं। अंतरंग अर्थात आत्मलीनरूपता और बहिरंग अर्थात बाह्य आचरण व विचारों में शास्त्रानुकूल मर्यादापूर्ण सम्यक् प्रवृत्ति। इन दोनों आचारों के परिपालन से मोक्षमार्ग प्रशस्त होता है।

(2) त्रयगुप्ति- (1) मनगुप्ति (2) वचनगुप्ति (3) कायगुप्ति। तीनों की एकरूपता।

(3) षडावश्यक- (1) सामायिक (2) स्तुति (3) वंदना (4) प्रतिक्रमण (5) प्रत्याख्यान (6) कायोत्सर्ग।

ये छह आवश्यक क्रियाएँ हैं।

(4) दशधर्म- (1) उत्तम क्षमा (2) उत्तम मार्दव (3) उत्तम आर्जव (4) उत्तम शौच (5) उत्तम सत्य (6) उत्तम संयम (7) उत्तम तप (8) उत्तम त्याग (9) उत्तम आकिंचन्य (10) उत्तम ब्रह्मचर्य।

(5) द्वादश तप- इच्छा निरोधः तपः। इच्छा के निरोध को तप कहते हैं। तप के दो भेद हैं। (1) बाह्य तप- छह (2) अभ्यंतर तप- छह।

बाह्य तप- बाहर प्रत्यक्ष दिखने से इन्हें बाह्य तप कहते हैं-

(1) बाह्य तप- (1) अनशन (2) उनोदर- भूख से कम खाना (3) वृत्तिपरिसंख्यान (4) रस परित्याग (5) विविक्त शय्यासन (6) काय क्लेश।

(2) अभ्यंतर तप- (1) प्रायश्चित (2) आलोचना (3) विनय (4) वैयावृत्य (5) स्वाध्याय (6) व्युत्सर्ग।

(6) आठ आचारवत्वादि- (1) आचारवान (2) आधारवान (3) व्यवहारवान (प्रायश्चित दाता) (4) प्रकुर्वी (प्रकारी) (5) आयापाय कथी (6) अवपीड़क (दोषाभाषक) (7) आस्त्रवी (8) संतोषकारी।

(7) दस स्थिति कल्प- (1) आचेलक्य (2) अनुद्दिष्ट भोजी (3) शय्याधर त्यागी (4) राजपिंड त्यागी (5) कृतिकर्मी (6) ज्येष्ठत्व (7) प्रतिक्रमी (8) मासैकवासिता (9) व्रतवान (10) पाद्य- पर्या-पज्जा।

(8) तेरह चारित्र- पाँच प्रकार का चारित्र- (1) सामायिक (2) छेदोप स्थापना (3) परिहार विशुद्धि (4) सूक्ष्म साम्पराय (5) यथाख्यात।

यद्यपि आचार्य श्री उपरोक्त तीनों शैली के मूलगुणों का कड़ाई से निर्दोष पालन कर रहे थे तथापि वे निरंतर ज्ञानाभ्यास में रत रह आत्मविशुद्धि हेतु निज स्वरूप में स्थिर रहने का पुरुषार्थ करते रहते। श्रुत संपदा के खजांची, शुद्धि के मेधावी, मन से मनस्वी, वाणी से वाचस्पति आचार्य श्री स्वयं को, शिष्यों को व भव्य जीवों को समझाते रहते कि पल-पल लहरों से उठने वाले संकल्प विकल्प आत्मा का स्वभाव नहीं है। आत्मा का स्वभाव तो इन विभावों से पार निराकुल निर्मल सिद्धों जैसा है। अतः सम्यक्त्व की सम्यक् उपलब्धि के लिए हमें सम्यक् पुरुषार्थ करना चाहिए।

आचार्य के नाते वे संघानुशासन के शास्ता, शिष्यों के हित पोषण में पितृ तुल्य, शास्त्राध्ययन कराने में प्रज्ञ तथा शक्ति देने में गुरु शक्ति बन गए।

आत्मचिंतन यात्रा के साथ-साथ आचार्य श्री की भौतिक जगत की यात्रा भी जारी थी। 20 फरवरी 2018 को आचार्य श्री के सान्निध्य में नातेपुते के श्रावकों ने प्राचीन चंद्रप्रभु जिनालय के पास नवीन चैत्यालय के लिए भूमि शुद्धिकरण किया। कहा जाता है कि कभी नातेपुते में णाथपुत्त महावीर स्वामी ने मंगल विहार कर वास किया था। इस अति भौतिकवादी युग में नातेपुते के धर्मप्रेमी श्रावकों की प्रभुभक्ति की आचार्य श्री ने भूरि-भूरि प्रशंसा की।

नए सपने देखने व दिखाने वाले, नए शिखर चूमने वाले/छूने वाले अध्यात्मयोगी, निष्काम साधना करने वाले आचार्य श्री के भक्तों की दीवानगी चरम पर थी। दूर-दूर से भक्तों की भीड़ उनके दर्शनार्थ व प्रवचन सुनने उमड़ पड़ती थी। कहाँ तो वे अकेले चले थे और कहाँ आज भक्त अनुयायियों का उनके दर पर तांता लगा रहता। विद्वता और योग्यता की सर्वत्र पूजा होती है। संतश्री में ये गुण सोने में सुहागे का काम कर रहे थे।

आचार्य श्री ने अपने दर्शन, ज्ञान व चारित्र की सम्यक् सुदृढ़ता व सुंदरता से स्वयं को तो सजा ही लिया, अपनी इस रत्नत्रयी ताकत से वे आहार-विहार करते, वीतराग मार्ग का पोषण करते, दुःखों व सांसारिक ताप-संतापों से संतप्त दुनिया को बचाने में प्रयत्नरत रहते थे। सुमन से सुकोमल सहृदय संत अपनी करुणा व दया से पीड़ित मानवता के व्रण सहलाते, अपनी बुद्धि सुमेधा से संपूर्ण विश्व, व्यक्ति, समाज व राष्ट्र को सत्य, अहिंसा, शांति, प्रेम, सद्‌भाव, सौहार्द्रता, सहयोग, सद्‌विचार, समन्वय व सदाचारादि के सात्विक गुणों की शिक्षा देकर उन्हें

'सत्यं शिवं सुंदरं' से साक्षात्कार कराते जीवन यात्रा पथ पर अग्रसर थे। रोज ज्ञान का सूरज उगाने वाले इस संत को लोग रोशनी के प्रस्तोता के रूप में देखने लगे थे। उनके वात्सल्य में लोग माँ के ममता भरे आँचल का जहाँ एहसास करते वहीं छप्पर से तपे उनके आशीर्वाद को उठे हाथ सिर पर पितृछाया का एहसास कराते रहते। जीवन की नश्वरता का बोध कराते वे कहते जलना है तो पूरी रोशनी के साथ जलो, तेल चूकने के बाद यह जिंदगी का दिया फिर कभी जलता नहीं है। अतः सावधान होकर यम नियम और मौन का व्यवस्थित अभ्यास करते हुए आत्मभावना अवश्य करते रहो।

नातेपूते में खूब धर्म प्रभावना करते हुए वे आगे भी आत्म जागरण में लगे रहे। तभी अचानक उन्हें आचार्य गुरुदेव श्री सन्मतिसागरजी के अस्वस्थ होने का समाचार मिला। शान्त सरोवर से उनके मन में हलचल मच गई। वे चिंतन करने लगे, 'हे आत्मन्! कब किस विषय को लेकर यह जीव आकुल-व्याकुल होने लगे, कुछ ठिकाना नहीं। अभी तक हम काफी संतुष्ट थे लेकिन इस समाचार ने मन को बेचैन कर दिया।'

तत्काल आचार्य श्री के निर्देश पर नातेपूते से एक प्रतिनिधि मंडल उदगाँव आचार्य श्री की कुशल मंगल की कामना लिए दर्शनार्थ भेजा गया। जिनमें समाज के गणमान्यजन श्री वैभव दोशी, इंद्रजीत गाँधी, बाबू काका, अतुल दोशी, दर्शन गाँधी थे। इन्होंने आचार्य श्री के दर्शन किए व शिष्य आचार्य श्री सुनीलसागरजी की तरफ से नमोस्तु कह गुरु वंदना की। किंतु आचार्य श्री की अत्यधिक अस्वस्थतावश न तो आशीर्वाद मिल पाया न ही चर्चा हो पाई। इधर आचार्य श्री सुनीलसागरजी को यह समाचार मिलते ही उनकी मानसिक अस्वस्थता बहुत बढ़ गई। गुरुजी के स्वास्थ्य को लेकर वे बहुत चिंतित हो गए। यद्यपि वे जानते थे कि इस व्याकुलता से कुछ सिद्धि तो होना नहीं है, अपितु संकल्प विकल्पवश आस्रव बंध ही होना है, फिर भी गुरु के प्रति ऐसी श्रद्धा होना भाग्य की बात है।

उदगाँव से वापस आकर इंद्रजीत गाँधी ने बड़े मार्मिक शब्दों में आचार्य श्री की रूग्णता का हाल बताया। आचार्य श्री का मन, गुरु दर्शन व वैयावृत्ति के लिए मचल उठा। अब उनके लिए संसारी जीवों की तरह गुरु वियोग में एक-एक पल बिताना भारी हो गया। मन का पंछी तो गुरु चरणों में था लेकिन भौतिक देह से तो वे नातेपूते में ही थे। दिगम्बर संतों की मर्यादा देखो कितनी भी कठिन व विकट परिस्थिति क्यों न हो, वे वाहन में नहीं बैठ सकते। उन्हें तो अपने कदमताल पर ही चलना होता है। अतः बिना कुछ पूर्व योजना के ये फौलादी इरादों वाले युवाचार्य अपने फौलादी कदमों से सुबह 6.30 बजे नातेपूते से विहार कर उदगाँव की तरफ चल पड़े। नातेपूते वासियों ने सजल आँखों व भारी हृदय से गुरुदेव को विदा दी। अचानक गुरु विछोह की व्यथा से विह्वल उनके पैर उठ नहीं पा रहे थे। लेकिन समय की नजाकत को देखते हुए वे विवश थे।

सुबह ही 17-18 कि.मी. चलकर नातेपुते से शिंगणापुर 17 कि.मी., शिंगणापुर से पाणलिंग-10 कि.मी. आचार्य श्री शिखर शिंगणापुर पहुँचे। घाट की कठिन व ऊँची चढ़ाई उन्हें तनिक भी विचलित नहीं कर सकी। घाट चढ़ने के पूर्व ही डॉ. फूलचंद गाँधी गाड़ी से आचार्य श्री के दर्शन के लिए आए थे। दर्शन कर गुरु आशीर्वाद ले वे थोड़ी दूर ही चले थे कि उनकी गाड़ी गड्ढे में गिर गई। भाग्यवश चोट किसी को नहीं आई। वे इसे गुरु कृपा प्रसादी ही मानने लगे। वे कृत-कृत्य थे कि गुरु आशीर्वाद से ही उन्होंने नव जीवन पाया। उन्होंने वापस आकर गुरुदेव से कहा कि यदि दर्शन में जो तीन-चार मिनट का शुभ समय था वह न बीतता व सीधे पहाड़ी घाट पर चढ़ते। घटना तो उसी समय होनी थी सो होती ही। फिर घटना यदि घाट पर होती तब गाड़ी नीचे गहरी खाई में गिर जाती। उस कल्पना मात्र से वे सिहर उठे। वे भगवान को लाखों-लाख धन्यवाद देते थे कि उसने आचार्य श्री के रूप में देवदूत को ही उन्हें बचाने भेजा है। सच है जिन गुरुओं की निष्काम साधना व आशीर्वाद तथा भक्तों की गुरु के प्रति अपार श्रद्धा भक्ति से ऐसे चमत्कार होते हैं। शिंगणापुर के अल्प प्रवास में ही एक जीव का कल्याण मार्ग प्रशस्त कर दिया। जिसका कल्याण होना है। इधर इंदू

काकी ने तीसरी प्रतिमा का व्रत लिया। जिसका कल्याण होना है उसे यों ही अचानक योग-संयोग प्राप्त हो जाते हैं। आज आचार्य श्री के निमित्त से दो प्राणियों का उद्धार हुआ। एक डॉ. फूलचंद गाँधी को जीवनदान मिला व दूसरा इंदू काकी को आत्मकल्याण दान। तपः पूत आचार्य श्री जैसे सिद्ध पुरुषों से ही संसार का उद्धार होता आया है। 'जग उद्धारक' उपाधि इन्हें दान में थोड़े ही मिली है।

आहार चर्या व दोपहर की सामायिक शिंगणापुर में कर उसी दिन दोपहर में ऊँची चढ़ाई कर 10 कि.मी. चल पाणलिंग पहुँचे। एक दिन में 28 कि.मी. की पदयात्रा। तिस पर चढ़ाई वाली यात्रा। आखिर एक भुक्ति (अंतराय टालकर) खड़े-खड़े आहार लेने वाले संत आचार्य श्री भी तो मनुष्य ही हैं। रात्रि में प्यास के मारे बेचैनी होने से शरीर में पानी की कमी हो गई। मुंह सूख गया। जीभ तालु से चिपकने लगी, थूंक गाढ़ा व कड़वा हो गया। थकान के कारण बुखार चढ़ गया। शरीर तवे सा गर्म हो गया। तिस पर हवा का एक ठंडा झोंका भी नहीं। पाणलिंग पहाड़ी पर ऊँचाई पर है वहाँ ठंडक रहती है पर वहाँ भी रात्रि में भी मौसम में जरा सी भी ठंडक नहीं थी। प्रतिकूलता में भी उनके मन में समता थी। वे आत्म चिंतन कर रहे थे कि हे आत्मन! तू तो न कभी बीमार होता है, न थकता है। थकना तेरा स्वभाव नहीं। यह तो शारीरिक क्रिया है।

तभी उन्हें रास्ते में विहार में धूप में खूंटे से बंधी मिमयाती बकरी का विचार आया। कड़ी धूप, भूख-प्यास से जाने कब से बंधी परेशान थी। वह कातर नजरों से आचार्य श्री की ओर देख- देखकर मिमयाती जाती व छूटने के लिए रस्सी खींच रही थी। आचार्य श्री का हृदय उसके प्रति करुणा से भर उठा। क्या पता वह कब की भूखी-प्यासी होगी। कितनी परवश है न छूट सकती न किसी से अपनी व्यथा कह सकती। नरक-तिर्यंच गति के दुःखों का चिंतन करते-करते वे अपना परिषह तो भूल से गए। सोचने लगे मैं तो उठकर कहीं इधर-उधर भी जा सकता हूँ पर वह बकरी? उस बकरी ने उनमें उस रात के परिषह को सहने की क्षमता बढ़ा दी। आचार्य श्री सोच रहे थे कि यद्यपि देह व आत्मा भिन्न है किंतु देह की अस्थिरता से जीव के परिणाम भी अस्थिर हो जाते हैं। इसे वे अपने पुरुषार्थ की कमी या दृढ़ता की हीनता कहने लगे।

जब उनका बुखार बढ़ गया व नाक से खून आने लगा तब लोग विचलित हो गए। उन्हें आचार्य श्री के प्रति सहानुभूति होने लगी। वे चाहते थे कि आचार्य श्री एक-एक दिन में इतनी लंबी पद यात्रा न करें। शरीर को भी थोड़े आराम की जरूरत होती है। अतः वे दोनों वक्त (सुबह-शाम) विहार न करें। आचार्य श्री चिंतन करने लगे कि इस देह से कुछ बूंद खून क्या निकल गया, कितने लोगों को आकुलताएँ बढ़ गई। इस संसार में कितने ऐसे जीव हैं जो भीषण वेदनाएँ सहते हुए जीते हैं। अतः इतने सुकुमार व परमुखापेक्षी नहीं बनना चाहिए कि दूसरे दिन चलना ही मुश्किल हो जाए और वे स्वयं के चारित्र को दृढ़ और मजबूत बनाते रहे।

पाणलिंग से अस्वस्थ हालत में ही दूसरे दिन सुबह 12 कि.मी. की पदयात्रा करते हुए दहीबड़ी पहुँचे व शाम को दहीबड़ी से कातरखणाव होते हुए 12 कि.मी. चलकर धोंडेवाड़ी पहुँचे। एक दिन में पुनः वे 22 से 28 कि.मी. की यात्रा कर शीघ्रातिशीघ्र उदगाँव गुरु चरणों में पहुँचना चाहते थे। धोंडेवाड़ी से माहुली 10 कि.मी. चलकर पहुँचे। माहुली से धानवाड़ी पहुँचने के लिए 11 कि.मी. की यात्रा तय की। कठिन पदयात्रा करके धानवाड़ी से वीटी पहुँचे। अस्वस्थता बढ़ती जा रही थी। बुखार ऊपर से अंतराय आते रहते। तथापि भूखे-प्यासे, पैरों में असह्य पीड़ा, पगतलों में फफोले पड़ने के बाद भी वे भेद विज्ञान की साधना करते पद विहार कर रहे थे।

इधर क्षेत्र की दूरी उनके पाँव तय कर रहे थे और उधर अंतर में आत्मा-परमात्मा की। इस प्रकार पदयात्रा व चिंतन यात्रा एक साथ चल रही थी। वे चिंतन करते जाते थे कि हे आत्मन्! तू तेरा-मेरा के चक्कर में अपने परिणामों को बिगाड़ता रहा है। पल-पल बदलते परिणामों के बलदने का लेखा-जोखा यदि रखा जाए तो हजारों पृष्ठ रंग जाएँगे।

यह जग एक मुसाफिरखाना है यहाँ आना-जाना लगा रहता है कौन क्या साथ ले जाएगा। यहाँ अनगिनत लोग आए और चले गए। याद तो वे लोग किए जाते हैं जो दुनिया को कुछ देकर जाते हैं। जीव हर क्षण अनंत कर्मों का बंध करता हुआ भव भ्रमण कर रहा है। यदि भव भ्रमण के दुःखों से बचना है तो भ्रमित बुद्धि को व्यवस्थित करो। पद, प्रतिष्ठा, पंथ, संप्रदाय की गलियों में मत भटको। इस यात्रा के ऐसे सारभूत अनेक चिंतन आपके मन मानस को मथते रहे।

धोंडेवाड़ी से 10 कि.मी. की यात्रा कर आप माहुली पहुँचे। माहुली से 11 कि.मी. चलकर धानवाड़ी पहुँचे। धानवाड़ी वीटी होते हुए कुंडल पहुँचे। गुरुदर्शन की व्यग्रता में बिना देह की परवाह किए आपकी उग्र चलाई जारी थी। जवानी के जोश के साथ आप आगे बढ़ रहे ते। आपके लिए यह प्लस पाइंट था कि संघ में कोई वृद्ध व रूग्ण साधु नहीं था। अस्वस्थ तो आप ही थे। पर स्वयं की चिंता आपको कहाँ थी?

कुंडल का मंदिर अतिशय क्षेत्र के रूप में प्रसिद्ध है। यहाँ रेत से निर्मित कलिकुंड पार्श्वनाथ स्वामी की लगभग सवा चार फीट ऊँची मनोज्ञ प्रतिमा है जिस पर कुछ वर्ष पूर्व वज्रलेप किया गया व मंदिर का जीर्णोद्धार किया गया।

कुंडल में दो पहाड़ हैं। पहला छोटा झिरी पार्श्वनाथ कहलाता है। इसकी गुफा में पार्श्वनाथ भगवान की प्राचीन व बाहुबलि व महावीर स्वामी की नई प्रतिमाएँ हैं। इस गुफा के एक भाग में कभी खाली न होने वाला जल कुंड है। दूसरा पहाड़ गिरि पार्श्वनाथ दुर्गम व ऊँचा है। यहाँ एक छत्री में दो चरण पादुकाएँ तथा गिरि पार्श्वनाथ का प्राचीन मंदिर है। इस तीर्थ के दर्शन कर आचार्य श्री बड़े प्रसन्न हुए। पार्श्वनाथ भगवान का ऐसा अतिशय था कि मन को असीम शक्ति का अहसास होने लगा।

पद विहार करते हुए आपका छोटे से छोटे गाँव से भी साक्षात्कार होकर वहाँ के इतिहास भूगोल का ज्ञान होता जा रहा था। आचार्य श्री की यह खूबी है कि उन्होंने अपने सारे यात्रा वृतांतों को पुस्तकाकार दे संग्रहित कर लिखे हैं। यदि उन क्षेत्रों से कोई संत विहार करना चाहे तो उसके लिए आचार्य श्री की ये पुस्तकें बड़ी उपयोगी हैं। आपकी नित्य डायरी लिखने की आदत ने इस काम को सुगम कर दिया।

कुंडल से 10 कि.मी. चलकर बुर्ली पहुँचे। कृष्णा नदी को पार करने के लिए नाव में बैठना पड़ा, वरना 10-12 कि.मी. का फेरा लगा बिना वजह ज्यादा चलना पड़ता। फिर भी वे चल लेते किंतु आचार्य गुरु की अस्वस्थता देख उन्हें जल्दी से जल्दी उदगाँव जो पहुँचना था। नदी के नीर को देखकर उन्हें विचार आया, 'मुनि मन सम उज्ज्वल नीर....' और वे अपने परिणामों की विशुद्धि के लिए सतर्क हो गए।

वहाँ से मालगाँव से कुंभोज होकर बाहुबलि व बाहुबलि से मजले होकर धर्मनगर तक सतत विहार जारी था। रास्ते में आष्टा आया जहाँ आठ सौ घर की समाज है, पर उनमें से आठ आदमी भी गुरु अगवानी व सान्निध्य में आगे नहीं आए। समाज की दशा पर मन विचलित हो गया, परिणाम भी कुछ क्षणों के लिए बदल गए, कुछ देर के लिए मुनि मन की निर्मलता मलिन हो गई। किंतु दूसरे ही पल चलित पल्लव से मन को साधकर स्थितप्रज्ञ बन गए। चूँकि अभी आपका लक्ष्य शीघ्रातिशीघ्र गुरुवर के निकट पहुँचना था, अतः शेष बातों को उपेक्षित कर दिया।

वहाँ से 9 कि.मी. चलकर अजितमती माताजी की जन्मभूमि दूधगाँव पहुँचे। वहाँ भी पाँच सौ घर की समाज के बाद भी पाँच लोग भी मुनि दर्शन को नहीं आए। वहाँ एक विशाल मंदिर है पर लोगों के मन में धर्म के प्रति श्रद्धा व आस्था कम है। मालगाँव में तो उनका मन तब और अधिक विचलित हो गया जब उन्होंने देखा कि मंदिर के सामने ही किराने की दुकान चलाने वाले जैन साहब अंडे बेच रहे थे।

पद विहार कर आगे वे धर्मनगर पहुँचे। वहाँ पहुँचकर तो आचार्य श्री सोचने लगे, दूधगाँव में आचार्य श्री को अजितमती माताजी जैसे 'दूधमती' लोग नहीं दिखे, मालगाँव में लोगों के मन में धर्म का माल नहीं है और यह धर्मनगर

है यहाँ धर्म जैसा क्या है? एक ऊँचे कांक्रीट के मकान पर। धर्मनाथ भगवान की विशाल मूर्ति विराजित है। पत्थर, रेत, सीमेंट का ढेर लगाकर 25 फीट ऊँचा पर्वत बनाकर आदिनाथ स्वामी विराजित किए गए हैं। पंचकल्याणक नहीं हुआ है।

सुमेरू पर्वत के लिए एक संसद भवन जैसा विशाल कांक्रीट का 30 फीट ऊँचा घेरा बनाकर अधूरा छोड़ दिया गया है। लगभग एक करोड़ रुपया तो लग गया पर सब कुछ आधा-अधूरा पड़ा है।

क्षेत्र की ऐसी स्थिति देख आचार्य श्री का मन समाज के प्रति करुणा से भर गया कि समाज को कोई सही प्रेरक व मार्गदर्शक नहीं मिला। एक करोड़ में तो एक सुंदर सा मंदिर आराम से बन धार्मिक आस्था का केंद्र बन जाता। साधुजन भी जितनी रुचि नवनिर्माण में ले रहे हैं उतनी आत्मनिर्माण में नहीं। निर्वाण के मार्ग पर चलने वाले संत अपनी कठिन संत साधना व जीवन का अमूल्य समय, निर्माण कार्यों में लगा, व्यर्थ खो रहे हैं। आचार्य श्री का चिंतन चल रहा था कि आत्मकल्याण की भावना रखने वाले व निर्दोष चारित्र का पालन करने वाले साधुगण अंगुलियों पर गिनने लायक बचे हैं। किधर जा रही है भगवान महावीर की श्रावक व श्रमण संस्कृति? श्रावकों व श्रमणों दोनों के लिए चिंता व चिंतन का विषय है।

देव शास्त्र गुरु व धर्म की घोर उपेक्षा उस क्षेत्र में देख युवाचार्य का मन विचलित हो गया। करना तो वे बहुत कुछ चाहते थे, दो-तीन दिन भी रुक जाते तो समाज में काफी बदलाव ला देते, उनकी सोई चेतना जगा देते। किंतु गुरुवर की अत्यधिक अस्वस्थता, लम्बा मार्ग व शीघ्र पहुँचना मजबूरी थी।

आचार्य श्री अनेक धार्मिक शास्त्रों के ज्ञाता व प्रकाण्ड विद्वान होने के साथ-साथ ज्योतिष शास्त्र सामुद्रिक शास्त्र (हस्तरेखा) विशेषज्ञ भी हैं। विद्वता के साथ-साथ इस क्षेत्र में भी आपकी ख्याति दूर-दूर तक फैल रही थी। सुनकर एक ज्योतिष विशेषज्ञ आचार्य श्री के पास अपनी धाक जमाने आए ताकि उनकी दुकानकारी चल सके। वे ज्योतिषी बातें बताते हुए अपनी प्रशंसा करने लगे। बातों-बातों में जब आचार्य श्री ने अपना गूढ़ गहन ज्ञान ज्योतिष पर प्रकट किया तो वह अपना मान भूल स्वयं के हाथ आचार्य श्री को दे अपना भविष्य पूछने लगा। आचार्य श्री सोचने लगे कि जो अपना भविष्य मुझसे पूछ रहा है वह लोगों का भविष्य क्या बताएगा? पर यह संसार है। पेट के लिए आदमी क्या-क्या नहीं करता। छ्ल, प्रपंच, मायाचारी, ठगी आदि आदि।

इतने में जयपुर के एक मोती व रत्न बेचने वाले सरदारजी भी अपनी दुकानदारी चलाने के निमित्त से वहाँ आ गए। वे आचार्य श्री के सामने ही अपने माल का भाव-ताव करने लगे। आचार्य श्री ने उन्हें वहाँ से जाने को कहा। तब सरदारजी भी आचार्य श्री से अपना भविष्य पूछने लगे। तब आचार्य श्री ने उन दोनों से कहा, ''जीवन में उतार-चढ़ाव तो चलता रहता है। किंतु अपने आचार-विचार विशुद्ध कर न्याय-नीति के व्यापार पथ पर चलने से सुखमय जीवन जी सकते हो।''

जीवन पथ पर चलते हुए कौन? कब? किस? व किसके? निमित्त से किस दिशा में मुड़ जाए कहाँ नहीं जा सकता। ज्योतिषी अपनी कला व सरदारजी के जड़ रत्न तो नहीं बिके अपितु वे जिन गुरु के बोधि झरते ज्ञानामृत से आचार शुद्धि, विचार शुद्धि व व्यापार शुद्धि के नियम रूपी जीवन रत्न लेकर चले गए। धन्य है रत्नों के बोधि दुर्लभ वचन रत्न। ऐसे ही संत वचनामृत सुन एक हाथी पारसनाथ भगवान व एक क्रूर सिंह महावीर बन गया। जिसका जैसा भवितव्य होता है, जीवन पथ पर चलते ऐसे संतों/आचार्यों के सत्संग के निमित्त मिल जाते हैं। ऐसे विश्वहितैषी संतों के चरणों में साष्टांग नमन।

लोकपथ व आत्मपथ पर चलने वाले आत्मधर्मी व लोकधर्मी चेतना जागृत करते (वर्तमान में आचार्य) संतश्री सन 1997 से आज तक अपने ज्ञान, ध्यान, शिक्षण शिविर, योगाभ्यास, ध्यानाभ्यास, धर्म प्रभावना आदि आदि

एक साथ कई माध्यमों व कई रूपों से अध्यात्म विहीन सांसों वाली अकर्मण्य मानव लाशों में आत्म चेतना के 'उच्छवास' भरते रहे। वे विश्वासघाती होते मानव मनों में 'विश्वास' जगाते कर्तव्य-कर्म व अधिकारों के बीच की दूरी पाटने हमेशा कटिबद्ध रहे। वे 'मनसा वाचा कर्मणा' की एकरूपता या समरसता को मूर्तित करने के लिए प्रतिबद्ध दिखते हैं। उनका मानना है कि मुक्तिपथ हो या लोकपथ- नापने के लिए नहीं, चलने के लिए है। पथ कितना भी कठिन व मुश्किलों भरा लंबा क्यों न हो? पथ, पाथेय व पथ्य की उचित जानकारी लेकर सम्यक पुरुषार्थ के साथ चलने पर 'मंजिल' तक पहुँचा देता है। सब कुछ अपने आप आसान होता जाता है। अतः पुरुषार्थ की बल्लियों पर टिके जीवन रथ को अपने हाथों से हाँकते आगे बढ़ाना है। जो बैठा, वह बैठा ही रह गया, जो चढ़ा सो गढ़ चढ़ गया।

पदविहार में मुनि श्री जब समाज में जीवन मूल्यों का ह्रास तथा मानव को मानवता विरोधी क्रिया-कलापों में संलग्न देखते हैं तब वे एक संत के नाते अपने दायित्व का सचेत निर्वहन करते हुए आगे बढ़ते रहते। चिरकाल से, भव-भवांतरों से सांसारिक दुःखों से दुःखी लोगों के दुःखों का दलन करने वाले उद्बोधन देते। कभी उनकी वीणा वाणी की सितार की झनकार दुःखों के कोलाहल से त्रस्त मनों को शांति की थपकी देती तो कभी रणभेरी सी बजती सांसारिक मोह मायाजाल व आरंभ परिग्रह के जंजाल को तोड़ फेंकने का आह्वान करती। विहार में उनका आत्मचिंतन, उनकी स्वयं की कर्म निर्जरा तथा उनकी वाणी, उनकी चर्चा हम जैसे लोगों की कर्म निर्जरा के निमित्त व सहायक बन जाते। वे कहते, ''सिद्ध पद पाने व दुःखों से मुक्ति पाने के लिए तो संसारी पर्याय में रहते हुए भी निज (स्वयं के) शुद्धात्म स्वरूप में रमना-जमना पड़ेगा।'' क्योंकि 'एकोऽहं' 'शुद्धोऽहं'।

वे अक्सर कहा करते -

शुद्धात्मा की चर्चा- Fix Time

शुद्धात्मा की चर्या- Some Time

शुद्धात्मा का निर्णय- One Time

इससे जो प्रॉफिट मिलेगा- Every Time Long Life

उनके अनुसार ''ज्ञान कला को सीख लिया तो जौहरी बन जाओगे अर्थात् आत्मानुभूति प्राप्त कर लोगे और न सीखे-समझे तो भव-भ्रमण के दुःखों की खाक छानते फिरोगे।''

गुरु चरण वंदना

सन् 2009 का चातुर्मास नातेपुते से समाप्त कर आचार्य श्री सुनीलसागरजी विहार में रास्ते भर आत्म चिंतन,आत्म मंथन व ज्ञान मथनी से जन-मन मंथन करते 19 मार्च 2010 को कुंजवन उदगाँव पहुँचे। जैसे ही उन्हें नातेपुते में आचार्य गुरु की अस्वस्थता की खबर मिली, फिर तो बिना कहीं रुके एक-एक दिन में 25-30 कि.मी. का पद विहार करते वे चलते रहे। भीषण गर्मी व लगातार चलने से थकावट व अस्वस्थता होने के बावजूद भी कहीं नहीं रुके। रास्ते भर उनके मन का पंक्षी उड़-उड़कर गुरु चरणों में जा बैठता; पर साक्षात् दर्शन की बात तो अलग ही है। कहने को कुंजवन तक की यात्रा पूरी हुई, पर कहा? इतना लंबा रास्ता तो जैसे-तैसे काट लिया पर। अब गुरु दर्शन बिना एक-एक पल काटना युगों सा लंबा लग रहा था। आँखें गुरुदर्शन को तरस रही थी, पैर गुरु निश्रा में पहुँचने को मचल रहे थे और हाथ गुरु चरणों का स्पर्श कर चंदन हुई धूल को माथे से लगाने हेतु ललक रहे थे।

नातेपूते चातुर्मास संपन्न कर आचार्य श्री सुनीलसागरजी, आचार्य श्री सुंदरसागरजी व मुनि श्री प्रमुखसागरजी एक साथ कुंजवन पहुँचे। वहाँ विराजित चतुर्विध संघ ने आचार्य श्री के मंगल प्रवेश पर भव्य स्वागत किया। इन सबसे

निस्पृह आचाार्यश्री तो शीघ्रातिशीघ्र गुरु चरणों में पहुँचना चाहते थे। गुरु चरणों में पहुँचकर सबने विधिवत आचार्य वंदना की। आचार्य श्री सुनीलसागरजी के बावरे नैन गुरुदर्शन कर बरसने लगे। नयन नीर से गुरु चरण पखारते हुए उन्होंने अपना श्रद्धा भरा हृदय गुरु चरणों में अर्पित कर दिया। वह क्षण उनके लिए परम सौभाग्यशाली क्षण था। स्वयं उनकी अरसे की गुरु दर्शन की प्यास बुझ गई। चूँकि औरों को भी दर्शन करना था अतः गुरुदेव का वात्सल्य भरा मंगल आशीर्वाद पा अपने आचार्य पद की गरिमा व महिमानुकूल वे उठकर गुरु चरणों में बैठ गए। उन्होंने देखा कि आचार्य गुरुवर के चेहरे पर काफी सूजन थी तथा वे काफी कमजोर दिखाई दे रहे थे। तथापि वे स्वाध्याय में बैठे थे। स्वाध्याय ज्यादा नहीं चल पाया किंतु गुरु शिष्यों की चर्चा चल पड़ी। आचार्य श्री ने उपस्थित साधुओं से कहा, ''तुम लोग ऊर्जावान, ज्ञानी व योग्य हो, तुम्हें समाज को धर्म से जोड़, अच्छी धर्मप्रभावना करते हुए मानवता व श्रमण संस्कृति की रक्षा करना चाहिए।

नातेपूते से कुंजवन उदगाँव पहुँचने के पश्चात आज आचार्य श्री पहली आहार चर्या के लिए निकले। पड़गाहन संजय मगदूम के यहाँ हुआ। संपूर्ण शुद्ध महाराष्ट्रीय आहार हुआ। मिठाई, फल, रस, मेवे कुछ नहीं। किंतु भरपूर शुद्ध घी, दूध, मट्ठा, सब्जियों युत भोजन। आहार चर्या पश्चात आचार्य श्री को विचार आया कि ऐसा ही संतुलित आहार कर हमारे गुरुजन सुदीर्घ उपवास करते होंगे। ध्यान में भी एकाग्रता रहती है।

आहार चर्या से लौटते हुए रास्ते में आचार्य श्री ने एक मरणासन्न गधे को पड़ा देखा। उसके एक पैर का खुर सड़ गया था जिसमें कीड़े कुलबुला रहे थे। आँखों से आँसू बह रहे थे। उसकी देख-भाल करने व सुध लेने वाला कोई नहीं था। क्या पता कब से वह इस हालत में पड़ा था? और कब तक पड़ा तड़पता रहेगा? आचार्य श्री का हृदय उसके प्रति करुणा से भर गया। उन्होंने उसकी पीड़ा कम होने व आत्मा की शांति के लिए जिनेंद्र देव से प्रार्थना की। वे सोच रहे थे कि जब तक बेचारा गधा स्वस्थ था, बोझा ढोता रहा, उसकी पूछ-परख होती रही। आज वह काम का नहीं रहा तो इस हाल में अकेला पड़ा तड़प रहा है। मनुष्य/यह जीव बड़ा स्वार्थी है। जब तक देते रहो, जग में पूछ-परख होती रहेगी, देना बंद हुआ कि कोई तुम्हारी ओर आँख उठाकर भी नहीं देखेगा। यही संसार की रीत है। वे आत्म चिंतन करने लगे, 'हे! आत्मन्! तूने भी नरक, पशुगति में ऐसे भीषणतम न जाने कितने दुःख भोगे हैं। अब साव-चेत हो आत्म कल्याण में लग जा। इस हीरा मानव जीवन का एक पल भी व्यर्थ मत गंवा। साथ में चल रहे श्रावकों से उन्होंने इस मूक प्राणी का इलाज करवाने की बात कही।

28 मार्च 2010 को भगवान महावीर का 2609वाँ जन्मकल्याण दिवस था। तेरह वर्ष पूर्व आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने भी इसी दिन मंगलकारी जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण कर आत्मकल्याण का मंगल मार्ग, सर्वोत्कृष्ट संयममय जीवन-श्रमण पथ अंगीकार किया था। आचार्य श्री चिंतवन करने लगे कि सुनीलसागर? तुम मुनि तो बन गए पर तुमने कितना आत्म विकास किया है क्या कभी इसकी समालोचना और समीक्षा की है? अपने दोषों व कमजोरियों व कमी का पता हमसे ज्यादा कौन अच्छी तरह जानता है? क्या कभी उन पर दृष्टिपात कर भूल सुधार की चेष्टा की है? अपने दोषों को देख, निकालने को आत्मालोचना कहते हैं। आत्मालोचना से आत्मविकास होता है। तुमने स्वयं का कितना आत्म विकास किया है। महावीर जयंति बार-बार तुम्हें संदेश देती है कि जिस मार्ग पर चलकर भगवान महावीर मुक्त हो गए, उस मार्ग को अपनाकर अपनी सहजता, सरलता और भेदविज्ञान से परिपूर्ण आत्म शांति प्राप्त करो।

यह तो आत्मकल्याण की बात रही। भगवान महावीर ने अहिंसा, सत्य व करुणा के बल निरीह पशुवध को रोका था तथा अनेक सामाजिक बुराइयों से नर्क होते मानव जीवन को रोकने हेतु मनुष्य को मानवता का पाठ पढ़ाकर बुराइयों का अंत कर सुखमय वातावरण निर्मित किया। उन्होंने विश्व को अहिंसा का पाठ पढ़ाया। आज के इस अस्त्र-शस्त्र के युग में गाँधीजी ने इसी अहिंसा के दम देश की आजादी प्राप्त की थी। अतः हे! सुनीलसागर तुझे भी इस अहिंसा की

रक्षा करते हुए विश्व को हिंसा, हत्या, आतंकवाद, युद्ध आदि की त्रासदियों से बचाना है। शाकाहार की लहर जगाना है।

पंचकल्याणक की अधिकृत घोषणा

तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी महाराज की आँखों व सिर पैर की तकलीफ दिन पर दिन बढ़ती जा रही थी वे फिर भी शरीर से निर्ममत्व हो आत्मकल्याण के मार्ग पर आरूढ़ थे। कुंजवन में उनकी अस्वस्थता की खबर पा उनके छह आचार्य शिष्यों का संघ वहाँ आया हुआ था करीब 70 पिच्छीधारी संतों का जमावड़ा था। अतः भक्तों का मेला भी लगा रहता था। रोज किसी न किसी बड़े धार्मिक कार्यक्रम का आयोजन होता रहता था। आचार्य श्री प्रवचन, स्वाध्याय व कार्यक्रमों में अस्वस्थ होने के बाद भी उपस्थित रहते थे।

आचार्य श्री की भावना थी कि कुंजवन में अनंतवीर्य भगवान की नवनिर्मित 108 टन वजनी व तैंतालीस फीट ऊँची मनोहर भव्य मूर्ति की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा शीघ्रातिशीघ्र हो जाए। आयोजकगण यह प्रतिष्ठा दिसम्बर में कराना चाहते थे। आचार्य श्री ने कहा दिसंबर में हमारे सामने प्रतिष्ठा होने वाली नहीं। अतः सब मई के लिए सहमत हो गए।

काफी चिंतन-मनन व परामर्श के बाद तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी गुरुदेव ने प्रथम मोक्षमार्गी अनंतवीर्य भगवान की प्रतिष्ठापना हेतु 3 मई 2010 को, यह अधिकृत घोषणा कर दी कि 21 से 25 मई 2010 तक पंचकल्याणक होगा। आयोजन कमेटी चिंतित थी कि इतने कम समय में ऐसा महा आयोजन कैसे संभव हो सकेगा? तपस्वी सम्राट ने कहा, ''सब काम अच्छे से हो जाएगा। चिंता मत करो।''

उसी दिन आहार चर्या के बाद गुरुदेव ने अपने योग्य, कुशाग्र व प्रिय शिष्य सुनीलसागरजी को अनेक महत्वपूर्ण जिम्मेदारियाँ सौंपते हुए, प्रतिष्ठा की गुरुतम जिम्मेदारी, पत्रिका बनाने की आज्ञा दी। इस मेधावी शिष्य ने गुरुआज्ञा शिरोधार्य कर गुरु आशीष ले उसी दिन दोपहर में ही पत्रिका का कच्चा प्रारूप दिखा अपनी मेधा शक्ति, त्वरित कार्य करने की कुशलता का परिचय दे दिया। इतना शीघ्र पत्रिका का प्रारूप बना देख गुरुदेव के आश्चर्य व खुशी का ठिकाना न था। वे बड़े वात्सल्य भाव से बोले मुझे तुम पर पूर्ण विश्वास था इसीलिए यह सबसे कठिन कार्य तुमको सौंपा। तुम परीक्षा में पास हो गए। तुम पर मुझे पहले से भरोसा था पर अब मेरा तुम पर भरोसा पक्का हो गया, तुम बड़ी से बड़ी जिम्मेदारी निभा सकते हो। आज मेरा मन फूल सा हल्का हो गया। आचार्य सुनीलसागरजी युग के महान तपस्वी व इतने बड़े आचार्य गुरु का यों वरदहस्त अपने माथे पर पा कृत-कृत्य हो गए। उनका हृदय सद्यजात पुष्प की नाईं खिल गया। काफी चर्चा के बाद सुनिश्चित हुआ कि पत्रिका का हैडिंग 'श्री मज्जिनेंद्र अनंतवीर्य आकार शुद्धि महोत्सव' रखा जाए।

सबका मानना था कि इससे मूर्ति में पूज्यता भी आ जाएगी व आगे अन्य पंचकल्याणक हेतु रिक्तता भी बनी रहेगी। कार्यक्रम में पधारने के लिए देश के समस्त मुनि संघों से भी निवेदन किया गया। जिसमें गणधराचार्य कुंथुसागरजी व आ. देवनंदीजी की तो स्वीकृति भी मिल गई। गुरुदेव के छह आचार्य संघ तो पहले से ही उपस्थित थे मानो उनका आगमन इस पंचकल्याणक के लिए ही हुआ था, गुरुदेव का स्वास्थ्य इसमें उनके लिए बहुत बड़ा निमित्त बना।

सचमुच गुरु की गुरुता की कोई सानी नहीं। गुरु अर्थात भारी- जो सद्‌गुणों से परिपूर्ण होते हैं। रत्नत्रय से विशुद्ध, पात्र जीवों पर वात्सल्य युक्त, परोपकार में तत्पर, भली भाँति धर्म का पालन करने- कराने वाले, संसार सागर से तारने वाले, तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी ऐसे ही गुरु हैं। जो मोहरूपी अंधकार के उच्छेदक व सम्यक्त्व रूप प्रकाश के उद्योतक हैं। आचार्य श्री चिंतन कर रहे थे कि गुरुदेव के निमित्त ही मुझे व इन गुरुभक्त, भव भय से भयभीत, विनीत, धार्मिक, विवेकवान, शांत अंतःकरण वाले, श्रमण शिष्यों को भगवान अनंतवीर्य के पंचकल्याणक में शामिल

हो अपनी आत्म विशुद्धि की साधना करने एवं आत्म कल्याण की भावना भाने का महान सुयोग प्राप्त हुआ है।

गुरु करकमलों से अंतिम केशलोंच

5 मई 2010 को अनेक साधुओं का केशलोंच था। यद्यपि आचार्य श्री सुनीलसागरजी के बाल छोटे व केशलोंच करने लायक नहीं थे पर भावना यही थी कि इस बहाने गुरुदेव के कर कमलों का पावन स्पर्श सिर पर छप्पर सा सदा-सदा के लिए तन जाएगा।

सौभाग्य से केशलोंच करने वाले साधुओं में पहला क्रम आचार्य श्री सुनीलसागरजी का था। अहो! भाग्य! वह अप्रतिम पुण्यकारी क्षण, सौभाग्य का सूर्योदय। वात्सल्य रत्नाकर गुरुवर ने काँपते कर कमलों से केशलोंच प्रारंभ किया। गुरुदेव के परम पावन करों का सिर पर स्पर्श पाते ही उन्हें ऐसा लगा कि उनका मस्तिष्क ज्ञान प्रकाश से जगमगा उठा, रक्त वाहिकाओं में चेतना का संचार होने लगा व धन्यता से हृदतंत्री के तार झनझना उठे। आँखें बंद कर वे उस महान, अलभ्य आनंद को आत्मसात करने लगे। इसके पूर्व मुनिदीक्षा व आचार्य पद पदारोहण के प्रसंग के अलावा एकाधबार ही केशलोंच के निमित्त गुरुजी या किसी अन्य ने आचार्य श्री सुनीलसागरजी का सिर छुआ होगा। वे तो अपना केशलोंच हमेशा स्वयं ही करते हैं। शायद भवितव्य ने अनजाने ही उन्हें संकेत दे दिए थे- वरना इतने छोटे बालों का वे केशलोंच कब करते? पर सिर पर गुरु हाथों के स्पर्श का अमर क्षण, अमर दृश्य उन्होंन सदा-सदा के लिए अपने हृदय पटल पर अंकित कर लिया। वह परम पावन स्पर्श उन्हें आज भी ज्यों का त्यों याद है। जब भी वे केशलोंच करने बैठते हैं, गुरु हाथों का वह पवित्र स्पर्श स्मृति पटल पर आ मन विभोर कर देता है।

भले ही इस महोत्सव का आयोजन बड़े धूम-धड़ाके से हो रहा था पर आचार्य श्री सुनीलसागरजी देख रहे थे कि गुरुदेव की आँख की तकलीफ व सिर का दर्द तो बढ़ता जा रहा था, पैर में भी काफी सूजन हो गई थी। 7 मई को आपने प्रतिक्रमण के बाद गुरुवर से कहा कि पैर बहुत सूज गया है शायद पीप भर गया है। गर्म पानी से सेक करना चाहिए। उनसे गुरुवर की यह रूग्णावस्था देखी नहीं जा रही थी। पर गुरु! गुरु तो गुरु ही हैं। वे शिष्य की गुरु के प्रति आकुलता- व्याकुलता समझ गए। उन्होंने तपाक से कहा, ''शरीर रूग्ण है, आत्मा थोड़े ही।''

फिर भी पुनः हिम्मत कर शिष्य आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने कहा, ''गुरुवर पैर के घाव से चलते वक्त खून रिसता रहता है, आवाज भी आती है। आपका कष्ट हमसे देखा नहीं जाता है, थोड़ा इलाज करवा लेते तो आराम हो जाता।''

गुरुदेव बोले ''सुकुमाल, सुकौशल, सनतकुमार, यशोधर, गजकुमार आदि महा मुनिराजों ने जो कष्ट सहन किए, उसका ध्यान करने पर, पहली बात तो मेरा ध्यान उस ओर जाता ही नहीं, दूसरा उन्होंने आत्मकल्याण पथ पर चलते हुए जो कष्ट साध्य पीड़ाएँ सही, उसके आगे मेरी पीड़ा तो राई रत्तीभर भी नहीं।''

आचार्य सुनीलसागरजी के पास अब चुप रह जाने के सिवा कोई चारा नहीं था। फिर भी वे गुरुवर का कष्ट कम कैसे हो, उपाय सोचते रहते।

प्रभावोत्पादक व उद्‌बोधक उद्‌बोधन

छह आचार्यों का महासंघ तो पूर्व में ही इन महातीर्थ गुरुवर के दर्शनार्थ कुंजवन में पधार चुका था लेकिन अभी भी महामुनियों के आगमन का सिलसिला जारी था। 19 अप्रैल 2010 को महामुनि श्री कल्पश्रुतनंदीजी, 21 अप्रैल को उपाध्याय श्री विद्यानंदीजी, 29 अप्रैल को उपाध्याय श्री समतासागरजी गुरुतीर्थ के दर्शनार्थ पधार चुके थे। जब आचार्य श्री पट्टाचार्य सिंहासन पर मंचासीन होते और चतुर्विध मुनि संघ विराजमान होता तथा अपार श्रावक-श्राविकाओं का जमावड़ा देख भगवान महावीर के समवसरण की याद हो आती थी।

आचार्य श्री को तेज रोशनी से आँखों में अत्यधिक तकलीफ होती थी अतः कई बार आचार्य श्री सन्मतिसागरजी प्रवचन प्रांगण में नहीं जाते थे। किंतु 8 मई 2010 को उन्हीं के आदेश से उनकी उपस्थिति में आचार्य श्री सुनीलसागरजी का जग मंगलकारी, जनहृदय छू लेने वाला प्रभावोत्पादक व उद्‌बोधक प्रवचन हुआ। युवाचार्य के अकूत ज्ञान, अप्रतिम प्रवचन कौशल, उनकी जीवन-जगत की परख तथा हृदय के करुणामय वात्सल्य में सुधासिक्त प्रवचन को सुन आचार्य श्री गदगद हो रहे थे। वे अपने इस उर्जस्वित तेजस्वी शिष्य को समाज को नई प्रेरणा, नए संकल्प व नए आदर्श देते देख फूले नहीं समा रहे थे।

शिष्य का प्रवचन सुनते हुए उन्हें विश्वास हो गया कि इसकी सकारात्मक सोच में समाज को नई रोशनी, नई दृष्टि व नया बसंत देने की अद्‌भुत क्षमता है। उन्हें शिष्य आचार्य सुनीलसागर, प्रवचन के माध्यम से 'ज्योति के द्वार पर दस्तक देते', 'सांसों का संगीत सुनाते' सांसों वाले शवों में पुरुषार्थ व चेतना भर देवत्व व शिवत्व का सुर जगाते प्रतीत हो रहे थे। उनके प्रवचन में जो सामंजस्य, समन्वय, दर्शन व चिंतन के स्वर ध्वनित, प्रतिध्वनित हो रहे थे, निश्चित ही इसमें उनके हृदय, बुद्धि व कर्म की साधना का महान योगदान था। शिष्य का ऐसा चिंतन से चैतन्य बनाने वाला प्रवचन सुन उनकी प्रसन्नता का पारावार न था। उन्हें अपने इस नव्य-भव्य व्यक्तित्व वाले शिष्य में संभावनाओं का अपार लहराता समन्दर नजर आ रहा था। उन्हें अब आचार्य सुनीलसागर पर पक्का विश्वास/भरोसा हो गया था कि इनकी वाणी में संसारी प्राणियों को दुःखों की दावाग्नि से निकाल सुखों के सागर तक पहुँचाने की अद्‌भुत क्षमता है। यों तो उन्होंने प्रथम दर्शन में ही गुरु हृदय पर अपनी छाप छोड़ दी थी, किंतु आज तो उन्होंने उनके हृदय में अपनी कभी न मिटने वाली छाप छोड़ गुरु हृदय जीत लिया था।

पूरे प्रवचन में गुरुवर वाग्वाणी के ज्ञाता अपने शिष्य को एक टक निहारते गौर से उनके प्रवचन सुनते रहे। शिष्य के प्रति उनके हृदय से वात्सल्य का अमृत झर रहा था और शिष्य उसमें नहा कृत-कृत्य हो रहा था। आज वे अपने इस वामन डगी संत में विष्णु सी विराटता देख रहे थे।

अपने शिष्यत्व को गुरु के सम्मुख खोलकर रख देने के बाद आचार्य श्री सुनीलसागरजी स्वयं को बहुत हलका महसूस कर रहे हैं।

संभवतः आचार्य गुरुवर ने यहीं से पक्का कर लिया था कि मुझे जिस वारिस की तलाश थी, वह योग्य पात्र यही है। महावीर को गौतम स्वामी व स्वामी रामकृष्ण परमहंस को जैसे नरेंद्र की तलाश थी वैसी ही तलाश आचार्य श्री सन्मतिसागरजी को भी अपने सुशिष्य की थी।

मूर्ति निर्माण, मार्गदर्शन की जिम्मेदारी

12 मई 2010 को प्रतिक्रमण के बाद भगवान अनंतवीर्य की विशाल मूर्ति के बारे में चर्चा चल पड़ी।

आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने अपनी मनसा बताते हुए कहा कि मूर्ति का पृष्ठभाग बाहुबलि स्वामी की तरह होना चाहिए तथा कान भी यदि कंधे से चिपके हुए न हो तों कंधे अधिक चौड़े दिखाई देंगे। सबको आपकी बात उचित लगी। आचार्य श्री को भी यह बात जँच गई।

आचार्य श्री ने शिष्य से कहा, ''तुम कारीगरों को बताओ।''

शिष्य सुनीलसागर आचार्य गुरुवर को ही महिमा मंडित करना चाहते थे। विनयावत हो गुरु के प्रति श्रद्धाभाव रखते हुए उन्होंने कहा कि ''हमें गुरुआज्ञा व आदेश शिरोधार्य है तथापि जैसे गोमटेश बाहुबलि स्वामी की मूर्ति के निर्माण के वक्त आचार्य श्री नेमिचंद्र सिद्धांत चक्रवर्ती मार्गदर्शक थे, आप भी यहाँ विराजित है, अतः आप ही मार्गदर्शन दीजिए।''

आचार्य गुरुवर बोले- ''मेरा मार्गदर्शन तो रहेगा ही। आप भी हमारे योग्य व प्रभावोत्पादक व्यक्तित्व के शिष्य हैं।

अतः आपके कहने पर भी काम वैसा ही होगा।''

शिष्य ने फिर भी गुरुवर के सम्मुख अपनी अकिंचन्यता प्रकट करते हुए कहा, ''मेरी बात कौन मानेगा?''

गुरुवर, ''जो मेरी बात मानेंगे वे सब आपकी बात भी मानेंगे।'' इस पंचकल्याणक के अति महत्वपूर्ण कार्यों की जिम्मेदारी जो मैंने तुमको सौंपी है। यह महत्वपूर्ण जिम्मेदारी भी आपकी ही है। शिल्पी को आपकी बात तो माननी ही पड़ेगी। आपको बार-बार नहीं जाना है कहने। शिल्पी को मार्गदर्शन, दिशा निर्देशन देना है व एक-दो बार जाकर देख लेना है कि मूर्ति निर्माण में कहीं कोई दोष न रह जाए। बाकी, काम तो अजित कासलीवाल को बोलकर कराओ।''

शिष्य सुनीलसागर गुरुवर की सूझ-बूझ, सहजता, व्यवहार कौशल व वात्सल्य भरे आदेश-निर्देश के कायल हो गए। वे सोचने लगे यही तो गुरुवर की गुरुता है व अनुभवगम्यता है। अहो! धन्यभाग है कि मैंने बीसवीं-इक्कीसवीं दो-दो सदियों का प्रतिनिधित्व करने वाले इन महान तपस्वी सम्राट, त्रिलोक्य चूड़ामणि, वात्सल्य रत्नाकर गुरु का शिष्यत्व प्राप्त किया है। ये मुझे पग-पग पर आगे बढ़ाते, मेरा ज्ञानवर्द्धन, व्यवहारवर्द्धन, पात्रतावर्द्धन करते मुझे परिपक्व करने में जुटे हैं, और मैं हूँ कि पीछे रहने की कोशिश करता हूँ। तर्क शिरोमणि गुरुवर से कब? कौन? कोई जीत पाया है? फिर मेरी क्या बिसात?

और उन्होंने तन-मन से भगवान अनंतवीर्य की महामूर्ति की मनोज्ञता के गुणगान अनंतकाल तक गाये जाए व हर होंठों पर उनकी शांत वीतराग छवि के चर्चे रहें, सोच गुरु आदेश की इस महाप्रसादी को ग्रहण कर लिया व मूर्ति निर्माण के मार्गदर्शन के कर्तव्य की एक और जिम्मेदारी सहर्ष अपने कंधे पर ले ली। अब तो आचार्य श्री सुनीलसागरजी का हरसंभव प्रयत्न रहता कि मूर्ति सुंदरतम, मनोहारी व ऐसी वीतरागी हो कि उसके पोर-पोर से वीतरागता के भाव टपके। लोग प्रभु को देखते ही चरणों में नतमस्तक हो जाएँ। उन्होंने शिल्पी से कहा, ''यह मूर्ति ऐसी बने कि न भूतो न भविष्यति। नख से शिख तक इसमें इतना सौंदर्य उंडेलना कि इसे देखते ही लोग श्रद्धा से अभिभूत हो मंत्रमुग्ध हो जाएँ।''

अक्षय तृतीया- पंचकल्याणक कार्यक्रम का ध्वाजारोहण

उसी दिन आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने गुरुदेव से विनम्र अरज की कि 16 मई को अक्षय तृतीया के दिन ही पंचकल्याण प्रतिष्ठा कार्यक्रम के ध्वाजारोहण का मुहूर्त है। यदि आप चतुर्विध संघ के साथ दर्शन को चलेंगे तो कार्यक्रम की अलग ही शोभा रहेगी। पूरे देश में धर्म प्रभावना की अनूठी मिशाल कायम होगी। आचार्य श्री शिष्य की बातों से प्रभावित हो बोले- ''देखते हैं, स्वास्थ्य अनुकूल रहा तो कार्यक्रम जमाएँगे।''

जगत को कल्याण मार्ग दिखाने वाले आदि विधाता भगवान ऋषभदेव ने राजपाट त्यागकर मुनि दीक्षा धारण कर ली। दीक्षा के समय ही उन्होंने छह मास का अनशन (उपवास) का संकल्प कर योग साधना प्रारंभ की। छह माह पश्चात जब वे आहार चर्या को निकले तब दिगम्बर तपस्वी की आहार चर्या विधि न जानने के कारण जनता उन्हें आहार न दे सकी व आदि प्रभु ने पुनः वन गमन कर दिया। हस्तिनापुर नरेश श्रेयांस राजा को जाति स्मरण हो मुनि की आहार विधि ज्ञात हुई तब कहीं जाकर भगवान ऋषभ मुनि का तेरह माह नौ दिन पश्चात वैशाख शुक्ल तृतीया को इक्षुरस से आहार (पारणा) संपन्न हुआ। आहार बाद भोजन अक्षय हो जाने तथा आहार दान करने व देखने वालों को अक्षय पुण्य बंध होने के कारण वह दिन अक्षय तृतीया (आखातीज) के रूप में सिद्ध मुहूर्त के रूप में जगत प्रसिद्ध हो गया।

इसी प्रसिद्ध सिद्ध मुहूर्त दिनांक 16 मई 2010 के दिन उन्हीं ऋषभदेव भगवान के चतुर्थ पुत्र (प्रथम मोक्षगामी) भगवान अनंतवीर्य की विशाल मूर्ति के आकार शुद्धि महोत्सव का मंगलाचरण व तत्पश्चात ध्वजारोहण का कार्यक्रम संपन्न हुआ। तपस्वी सम्राट तृतीय पट्टाचार्य आचार्य श्री सन्मतिसागरजी महाराज के सान्निध्य में आचार्य श्री

निश्चयसागरजी, आचार्य श्री सुविधिसागरजी, आचार्य श्री चंद्रसागरजी, आचार्य श्री सूर्यसागरजी, आचार्य श्री सुनीलसागरजी सहित करीब 80 पिच्छीधारी संतों का गाजे-बाजों के साथ सभास्थल पर मंगल पदार्पण हो चुका था। ध्वजारोहण की सारी विधि राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी के नेता शरद पंवार, शुगर फैक्टरी के चेयरमैन श्री राजेंद्र यड्रावकर तथा दक्षिण भारत जैन सभा के मंत्री सागर चौगुले द्वारा हजारों की तादाद में जनसमूह के बीच संपन्न हुई।

प्रतिष्ठा के पूर्व ही भगवान अनंतवीर्य की यह अद्भुत व विशाल प्रतिमा (मूर्ति) पूरे देश में विख्यात हो गई।

जिस ग्रेनाइट की विशाल शिला पर भगवान अनंतवीर्य का मूर्त रूप दिया गया था वह शिला बैंगलूर से आई थी। बैंगलूर के कैराग्राम में बिना क्रेन के कंटेनर पर राखी गई 200 टन की ग्रेनाइट की विशाल शिला 1 मार्च 2009 को अनूठे तपस्वी के अनूठे चमत्कार से कुंजवन (उदगाँव) में भी बिना जरा सी भी टूट-फूट के बिना क्रेन के ही आसानी से कंटेनर से नीचे उतार ली गई। एक वर्ष तक राजस्थान के 10-12 शिल्पी हथौड़े-छैनी से उस विशालकाय शिला को भगवान का मूर्त रूप देने की श्रमसाध्य साधना करते रहे। चाहे भीषण गर्मी हो या ठिठुरा कर हाथ सुन्न कर देने वाली ठंड या गरजती-बरसती मूसलाधार बारिश- पर शिल्पियों के नेक इरादे व हाथ नहीं रुके। अंततः जिस पाषाण में श्रवणबेलगोला के बाहुबलि प्रगट हुए उसी ग्रेनाइट में उनके अनुज अनंतवीर्य भी साकार हुए।

शिल्पियों की एक वर्ष की कड़ी मेहनत रंग लाई व मूर्ति ने भगवान का मूर्त रूप ले लिया। 43 फीट ऊँची, 12 फीट चौड़ी तथा आठ फीट मोटी, एक सौ आठ टन वजन वाली, प्रथम मोक्षगामी भगवान अनंतवीर्य की मूर्ति दो मार्च 2010 को खड़ी होने वाली है, यह समाचार सुन देश के कोने-कोने से भक्तों का कुंजवन में मेला लग गया।

इस विशाल मनहर मूर्ति को खड़ा करने के लिए बाकेट हंटिंग कंपनी मुंबई से 650 टन व 150 टन वजन की दो विशेष क्रेन मंगवाई गई। दो दिन पूर्व ही कंपनी से क्रेन, दस इंजीनियर्स, 20 वजनदार ट्रक व अनेक कर्मचारी कुंजवन आ पहुँचे। चैत्र वदी दोज, 2 मार्च 2010 सुबह से ही इंजीनियर्स ने अपनी महत्वपूर्ण प्लानिंग शुरु कर दी थी। 9 बजकर 10 मिनट पर मूर्ति खड़ी करने हेतु क्रेन व अति महत्वपूर्ण मशीनरी सक्रिय हो गई। पूज्य गुरुदेव के सान्निध्य में ससंघ मंत्रानुष्ठान पूर्ण होते ही आचार्य श्री प्रदत्त श्रीफल फोड़ा गया और 20-22 मिनट में आचार्य श्री आदिसागर अंकलीकर सभा भवन के पीछे पत्थर की 15 फीट ऊँची निर्मित वेदिका पर त्रिलोकपूज्य अनंतवीर्य भगवान की प्रतिमा स्थापित कर दी गई।

इस विहंगम दृश्य को 90 पिच्छीधारी संतों, हजारों की तादाद में उपस्थित जन समूह के साथ टी.वी. पर सारे देश ने देखा। जोर-जोर से जयकारे लगाए जा रहे थे। हर्षातिरेक से लोगों की आँखों से आँसू बह निकले।

क्रेन के मालिक प्रीत बेदी (पंजाबी) ने मूर्ति स्थापित करने के पूर्व ही मांसाहार त्याग दिया था। जाते वक्त आचार्य श्री के दर्शनार्थ आया और तीर्थ विकास के लिए तीन लाख रु. दान कर गया। इस विशाल अतिशयकारी प्रतिमा का महिमा मंडित होना स्वाभाविक था।

धार्मिक चर्चा

समय का पखेरु पंख फैलाए तेजी से उड़ रहा था । बिना किसी आहट के। आचार्य श्री सुनीलसागरजी को पता ही नहीं चला कि गुरु चरण सानिध्य में धर्ममय वातावरण में उनके वात्सल्य को पाकर के करीब डेढ़ दो माह कब व कैसे बीत गए?

प्रतिदिन सुबह तीन बजे से जागकर रात्रि के नौ बजे तक बिना प्रमाद के निरन्तर धर्म चर्चा, तत्त्व चर्चा व धर्म चर्या में समय व्यतीत होता रहा। इन सबमें सबसे महत्वपूर्ण उन्हें सुबह 8 से 9.30 तक चलने वाला सर्वार्थ सिद्धि का स्वाध्याय लगता था। महाज्ञानी, गुणी सात आचार्यों के सकल संघ के बीच जब तत्त्व चर्चा व शंका-समाधान चलता

तब नित नए विषय निकलते, अनेक समाधान मिलते तथा नए-नए चिन्तन सुनने मिलते। सबकी ज्ञान वृद्धि में तो इजाफा हो रहा था। साथ ही आचार्य श्री सुनीलसागरजी को ज्ञान की गहनता का मूल्यांकन भी हो रहा था। ज्ञानवृद्धि के लिए पुरुषार्थ करने का दिशा-बोध भी उन्हें मिल रहा था।

आहारचर्या के लिए जब मुनिसंघ निकलता तब चतुर्थ काल के साधुओं की बहुलता याद हो आती। स्वाध्याय प्रतिक्रमण में जब पूरा संघ आचार्य श्री को घेरे बैठता तब लगता मानो मुनि परिषद् लगी हो। धर्म सभा में तो एक साथ इतने साधुओं का विराजित होना साक्षात् भगवान के समवशरण का दृश्य उपस्थित कर देता था। कुंजवन मानो संतवन बन गया था। गुरु की महिमा अपरम्पार है।

अनन्तवीर्य प्रतिष्ठा महोत्सव

21 से 25 मई 2010 तक 'श्रीमज्जिनेन्द्र अनंतवीर्य जिनबिम्ब आकार शुद्धि महोत्सव' की घोषणा कार्यक्रम शुरू होने के मात्र बीस दिन पूर्व ही की गई थी। अतः स्वाभाविक था कार्यक्रम की तैयारियाँ युद्ध स्तर पर की जा रही थी। इसमें देश-विदेश से भी धर्मानुरागी बंधुओं ने कुंजवन उदगाँव के लिए अपनी बुकिंग करा ली थी। दिल्ली से एक ट्रेन व बंबई से दस बसें बुक हो चुकी थीं। 20 मई की शाम तक तो कुंजवन में लोगों की अच्छी खासी भीड़ का जमावड़ा हो चुका था। इस अवसर पर आपने 'कुंजवन बन गया नंदनवन' गीत की रचना की।

21 मई को आयोजकों द्वारा आमंत्रण पाते ही गुरुदेव सहित सकल संघ मूर्ति के बाजू वाले प्रांगण में शिलाओं पर जा विराजा। एक साथ 81 पिच्छीधारी संत - अद्‌भुत दृश्य था जिन्हें देख जनता गद-गद हो रही थी।

22 मई को पंचकल्याणक विधान में जन्म कल्याणक की पूजा हुई तथा अनन्तवीर्य भगवान का महामस्तकाभिषेक हुआ। 23 मई तप कल्याणक की पूजा के बाद चार आर्यिका दीक्षा हुई। 24 मई को केवल्य कल्याणक पूजा व 25 मई को मोक्षकल्याणक पूजा विधि-विधान से संपन्न हुई। 26 मई को विशाल महामस्तकाभिषेक हुआ। प्रतिदिन समाज को 81 साधुओं, जिनमें छह आचार्य, दो उपाध्याय, सोलह मुनि, उनतीस आर्यिकाएँ, एक ऐलक, नौ क्षुल्लक, अठारह क्षुल्लिका, एक भट्टारक (80 पिच्छी) एवं अनेक ब्रह्मचारी व ब्रह्मचारिणी भाई-बहनों के सान्निध्य में विशाल जनमेदिनी के बीच यह महोत्सव भव्य पैमाने पर राष्ट्रीय स्तर पर मनाया गया। अभी तक जिन अधिकांश लोगों को पता नहीं था कि अनन्तवीर्य भगवान प्रभु ऋषभदेव के चतुर्थ पुत्र, गोमटेश बाहुबली के अनुज प्रथम मोक्षगामी जीव हैं। उन्हें पता चल गया कि अनंतवीर्य भगवान कौन है?

महोत्सव मील का पत्थर

राष्ट्रीय स्तर पर भव्य रूप में मनाया गया यह भगवान अनन्तवीर्य प्रतिष्ठा महोत्सव आचार्य श्री सुनीलसागरजी के लिए मील का पत्थर साबित हुआ। आचार्य गुरु ने छह आचार्य संघों के 80 पिच्छीधारी संत समुदाय में से महोत्सव के शुभारंभ व पूर्व से भी आदि से इति तक महत्वपूर्ण कार्य अपने शिष्य श्री सुनीलसागरजी को सौंपकर संत समुदाय व समाज में उनका गौरव बढ़ा दिया। उनका कद अपने आप ऊँचा हो गया।

23 मई 2010 वैशाख शुक्ल दशमी, महावीर स्वामी के ज्ञान कल्याणक के दिन जब प्रतिष्ठा महोत्सव के आयोजक आचार्य गुरु श्री सन्मतिसागरजी को अनन्तवीर्य भगवान की प्रतिमा को सूरिमंत्र देने आमंत्रित करने आए तब महान आचार्य गुरु ने यह गुरुतम उत्तरदायित्व भी अपने योग्य शिष्य आचार्य श्री सुनीलसागरजी को सौंप दिया। उन्होंने गद्-गद् हृदय से श्रद्धावनत गुरु आज्ञा स्वीकार की। उन्हीं के द्वारा प्रतिमा को सूरिमंत्र दे सारे संस्कार किये गये।

साथ में मुनि श्री सुखसागरजी, श्रावक श्रेष्ठी श्री अजित कासलीवाल सेलम, संदीप गाँधी लासुर्णे, इन्द्रजीत गाँधी

नातेपूते तथा संपत पाटनी इचलकरंजी सहयोगी बने। संभवतः तपस्वी सम्राट आचार्य गुरु द्वारा लिया गया यह निर्णय शिष्य आचार्य श्री सुनीलसागरजी के भविष्य के प्रति दिया गया उनका महत्वपूर्ण संकेत संदेश था।

24 मई दोपहर की विराट धर्मसभा को आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने गुरुआज्ञा से अपनी प्रबोधिनी वाणी से संबोधित किया। आपके प्रवचन के माध्यम से आपकी दृष्टि की दिव्यता के दर्शन हो रहे थे। आपकी वात्सल्यमयी वाणी की बौछारें संसार के दुःखों से दग्ध तप्त संतप्त प्राणियों के मनों को शीतलता प्रदान कर रही थी। आप अपने वीतरागी निस्पृही भावनाओं से भरे प्रवचन के माध्यम से जन हृदय को समता का पानी पिला रहे थे। पिन ड्रॉप साइलेंस के साथ समाधिस्थ हो वह विराट जनसभा आपके प्रवचन सुन रही थी। आपने अनन्तवीर्य भगवान व पूज्य आचार्य गुरुवर के प्रति हिन्दी व प्राकृत में स्वरचित विनयांजलि अर्पित की। आस्था चैनल पर भी आपका प्रवचन प्रसारित हुआ। उपस्थित संत समुदाय ने अपनी विलक्षण प्रतिभा, विद्वता, विनम्रता, गुरु के प्रति समर्पण व सरलता की मुक्तकंठ से प्रशंसा की।

25 मई 2010 का सूरज भी आचार्य सुनीलसागरजी के लिए शुभ संदेश लेकर आया। इस दिन महोत्सव के अंतिम दिन विराट धर्मसभा में आचार्य श्री के साथ पाँच आर्यिका माताजी का केशलोंच था। अस्वस्थतावश व अत्यधिक कमजोरी के कारण आचार्य श्री से केशलोंच ठीक से नहीं हो पा रहा था। आचार्य श्री सुनीलसागरजी को दीक्षा के बाद पहली बार गुरुदेव तपस्वी सम्राट के केशलोंच करने का पुण्यमयी सुयोग प्राप्त हुआ।

इस प्रकार अंकलीकर परम्परा के इन शिष्ट सौम्य, विनीत साधक आचार्य श्री सुनीलसागरजी की गुरु के प्रति असीम श्रद्धा, भक्ति, समर्पण कहो या निष्काम साधना व पूर्वोपार्जित पुण्य संचय से पूरे प्रतिष्ठा महोत्सव में उनको गुरु कृपा पात्र बने रहने का गौरवमयी सुअवसर प्राप्त होता रहा। वे अपने आप महिमा मंडित होते रहे। गुरु कृपा से उन्हें उस विशाल मूर्ति के निर्माण में निरीक्षण से लेकर सूरि मंत्र देने व सारे संस्कार करने तक का सौभाग्य प्राप्त हुआ। सचमुच गुरुकृपा में अपरिमित शक्ति है। वह रज को रजत तथा कथीरों को कुंदन कर देती है। फिर आचार्य श्री सुनीलसागरजी तो तपोनिष्ठ गुरु की नजरों में किसी सुधापत्र से कम नहीं थे।

उमलवाड़-नीमशिरगाँव

आसपास की जनता तो प्रतिष्ठा महोत्सव की समाप्ति के पश्चात भी इतने साधुओं का समागम पा कुंजवन में ही बनी रही।

1 जून 2010 को आहार के पश्चात प्रत्याख्यान करने आचार्य श्री सुनीलसागरजी गुरु चरणों में ही बैठ गए। गुरुवर के पैर में सूजन बढ़ गई थी। घाव गहरा था। उन्हें भयंकर पीड़ा हो रही थी। फिर भी वे शांत व समता धारण किये बैठे थे। शिष्य से गुरुवर की यह असह्य पीड़ा देखी नहीं जा रही थी। वे विह्वल हो गए। सोच रहे थे ऐसा क्या किया जाए कि उनकी तकलीफ कम हो सके। शाम को डॉक्टर ड्रेसिंग के लिए आता था। कभी वे ड्रेसिंग करवाते कभी नहीं करवाते। उन्होंने सोचा आज तो ड्रेसिंग के वक्त मैं रहकर गुरुवर के पाँवों की ड्रेसिंग करवाऊँगा।

इत्तफाक से गुरुवर ने आचार्य सुनीलसागरजी से कहा, शाम को ड्रेसिंग के वक्त आपको उपस्थित रहना है। वे मन ही मन सोचने लगे, चलो मेरी बात ईश्वर ने सुन ली और गुरुजी आज ड्रेसिंग के लिए तैयार हो गए। मैं तो रोज ड्रेसिंग के वक्त उपस्थित हो जाऊँगा। पर आप तो ड्रेसिंग करवाने को तैयार ही नहीं होते हैं। वरना आपका घाव ठीक हो गया होता। न घाव बढ़ता न पीड़ा। देह के प्रति कितने निर्मम हैं आप गुरुदेव! यह निर्लिप्तता कोई आपसे सीखे।

तब वे फिर बोले- ''दोनों उंगलियों के बीच व एड़ी के पिछले भाग में बहुत दर्द है। जब थोड़ा भी नहीं चला जाता तो पाँच कि.मी. कैसे चला जाएगा?''

तो क्या ऐसी स्थिति में विहार करना है? शिष्य ने गुरु से आश्चर्यचकित हो पूछ लिया। उन्होंने सहज भाव से कहा-

हाँ, विहार की भावना तो करना ही होगी, तभी तो विहार होगा। उन्हें समझ आया कि गुरुवर ने उन्हें ड्रेसिंग के वक्त उपस्थित रहने को क्यों कहा।

शिष्य प्रवर ने हिम्मत कर कुछ समय पश्चात विहार करने की बात कही लेकिन आचार्य गुरु तो अपनी बात पर दृढ़ थे। जब शिष्य ने हाथ जोड़कर पूछा कि विहार कहाँ करना है? उत्तर था- उमलवाड़। वहाँ के लोग कई-कई बार निवेदन कर चुके हैं व श्रीफल भेंट कर चुके हैं। पाँच कि.मी. ही तो है।

जिनके लिए पैर टिकाना व एक कदम चलना भी दूभर था वे पाँच कि.मी. कैसे चलेंगे। सोचकर ही सुनील सागरजी अंदर तक सिहर गए।

दोपहर को उन्हें तेज बुखार हो गया। धर्मसभा में वे मंच पर भी न जा सके। उनकी आज्ञा से शाम का प्रतिक्रमण आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने ही करवाया तथा ड्रेसिंग के वक्त भी उनके निकट बने रहे।

गुरुवर आचार्य श्री सन्मतिसागरजी का बुखार बढ़ता जा रहा था। पैर की सूजन भी बढ़ गई थी। तथापि पूर्व सूचनानुसार 6 जून 2010 को सुबह 6 बजे सकल मुनि संघ (80 पिच्छी) का विहार उमलवाड़ के लिए हो गया। यह विहार भव्यतम रूप में अभूतपूर्व विशाल जुलूस व बैंड-बाजों आदि के साथ हुआ।

आचार्य श्री ने 5 जून को ही सभी साधुओं को 6 जून को उपवास न करने का निर्देश दे दिया था। गुरु आचार्य श्री की करुणा अपरम्पार है। पट्टाचार्य को सकल संघ की इतनी चिंता और स्वयं के प्रति इतने निस्पृह कि बुखार से शरीर तप रहा था। पैर की सूजन कम होने का नाम नहीं ले रही थी। घाव की भयंकर पीड़ा अलग से। तिस पर स्वयं ने उपवास भी रख लिया। शिष्य सुनीलसागर गुरुवर की इस महानता व उदारता के प्रति श्रद्धावनत होते अपना आचार्य पद ही भूल से गए। उनके पास गुरु गुणगान के लिए शब्द नहीं थे। यही नहीं, आचार्य गुरुवर की आँखों में भी भयंकर तकलीफ पूर्व से ही थी। रोशनी की चौंध तो आँखों में तीर सी चुभती थी। उसी कारण सिर में भी असह्य पीड़ा। फिर भी वे शांत बने रहे व विहार किया। आचार्य श्री सुनीलसागरजी के अनुसार ज्ञानी गुरु के दर्शन चिन्तन की सम्यक्त्वता बिना कुछ कहे ही शिष्यों को उनके श्रेष्ठतम त्याग व संयम का दिग्दर्शन करा रही थी।

गुरु आदेश : 27 जून 2010

जिस प्रकार वृद्धावस्था में एवं बीमारी में एक आज्ञाकारी पुत्र पिता की सेवा करना व साथ रहना चाहता है, वैसे ही पितृतुल्य गुरु की इस रूग्णावस्था में आचार्य सुनीलसागरजी भी उनके साथ रहना चाहते थे। वे सोच रहे थे कि 2010 का चातुर्मास गुरुदेव के साथ ही संपन्न हो। वे उन्हें ऐसी स्थिति में छोड़ना नहीं चाहते थे।

पर 20 जून 2010 को आचार्य श्री ने स्वाध्याय के बाद सकल आचार्य संघ तथा जो मुनि, उपाध्यायगण महोत्सव में पधारे थे सबको कह दिया कि मेरे साथ किसी का चातुर्मास नहीं होगा। सब अपने-अपने विहार की सोचें व अच्छी तरह धर्म प्रभावना करें। पट्टाचार्य का आदेश सभी ने शिरोधार्य किया।

24 जून को संघ उमलवाड़ से नीमशिर गाँव पहुँचा। 25 जून के प्रातः भक्ति पाठ के समय आचार्यश्री सुनीलसागरजी क्या देखते हैं कि चींटियों की लाइन निरंतर गुरुदेव के घाव से मांस नोंचकर ले जा रही है। पर गुरुदेव एकदम शांत मुद्रा में पाठ कर रहे हैं। पता नहीं कितने घंटे से यह चल रहा है। सुनीलसागरजी ने धीरे-धीरे सैकड़ों चींटियाँ हटाई और कुछ पूछने के भाव से गुरुदेव की तरफ देखा, पर वे पाठ ही करते रहे।

27 जून तक सभी संतों का विहार हो गया था। इधर आ. श्री सुनीलसागरजी की असमंजस वाली स्थिति थी कि वे अब क्या करें? गुरु आज्ञानुसार तो उन्हें विहार करना था पर उनकी इच्छा जाने की नहीं थी! सहसा इसी दिन उन्हें गुरु आदेश हुआ कि धर्म प्रभावना की दृष्टि से तुम्हें मुंबई चातुर्मास करना है। आचार्य गुरु की रूग्णावस्था देखते हुए

उनकी इच्छा वहीं साथ में चातुर्मास करने की थी पर गुरु का कठोर आदेश पा वे विवश हो गए।

गुरु आज्ञा से उन्हें विहार तो करना था। विहार से पूर्व उनसे अंतिम महत्वपूर्ण चचाएँ हुईं।

शिष्य- मुझे मुंबई में कहाँ चातुर्मास करना है?

गुरुवर- गोरेगाँव, एरोली या फिर जहाँ उचित, योग्य व धर्म प्रभावना की दृष्टि से अनुकूलता हो।

शिष्य : और कोई आज्ञा गुरुदेव?

गुरुवर : गुरुओं के नाम का ध्यान रखना। तुममें सूझ, समझ, पात्रता व ज्ञान सब कुछ है। तुम्हें क्या कहना? ''आगे तुम्हें ही संभालना है'' कहते हुए आगे का दिशा दर्शन दिया।

शिष्य ''आगे तुम्हें ही संभालना है'' कहे गए वाक्य का गूढ़ अर्थ समझे बिना चरणों में माथा टेक ढेर सारे आशीर्वाद लिए भारी मन से गुरु विछोह की पीड़ा लिए वहाँ से उठ गए। ''आगे तुम्हें....'' वाक्य को उन्होंने मुंबई चातुर्मास के संबंध में सहजता से बिना कुछ गौर किये ही ले लिया। जैसे पिता बेटे को हिदायत देता है और 'हाँ' कह वहाँ से उठ गए। आचार्य श्री ने समझा कि चातुर्मास कहीं भी करे, बाद की स्थिति अर्थात् आगे कार्यक्रम व योजना मुझे ही संभालना है ऐसा गुरुवर का आदेश है। सो तो ठीक है। महानगर में चातुर्मास करने जा रहा हूँ इसलिए उन्होंने यह बात कही, ''आगे तुम्हें संभालना है।''

मुंबई-गोरेगाँव विहार : 28 जून

अद्भुत योग-संयोग। मुंबई से अनेक गुरुभक्त भी वहाँ आचार्य श्री सुनीलसागरजी को मुंबई चातुर्मास के लिए लेने आए हुए थे। वे उनसे विहार हेतु निवेदन करने लगे। गुरु आज्ञा व आदेश पूर्व ही प्राप्त हो चुका था।

आनन-फानन बिना कुछ पूर्व नियोजन के 28 जून 2010 को बड़े दुःखी मन से विनय व श्रद्धा भक्ति से गुरु वंदना की। गुरुदेव ने हाथ व पिच्छी से खूब आशीर्वाद दिये। वे विहार के लिए उठ गए पर गुरुवर को ऐसी स्थिति में छोड़कर जाने के लिए उनके पैर नहीं उठ रहे थे। लग रहा था 'मनो भारी हो गए हैं।'

आखिर चलना था सो चल दिये। इतने लम्बे दिनों की वात्सल्य भरी गुरु समागम की डोर इस विहार ने क्षण भर में तोड़ दी। गुरुदेव अपने प्रिय शिष्य को टकटकी लगाए दूर तक देखते रहे, मानो वे अप्रत्यक्ष रूप से उसे अंतिम विदाई दे रहे हों। विहार संत जीवन की अनिवार्य चर्या है जिसे आचार्य श्री मजबूरीवश निभा रहे थे।

शिष्य भी बार-बार पीछे मुड़-मुड़ कर, रुक-रुक कर सजल नयनों से मानो अंतिम बार गुरु को निहार कर उनकी सौम्य-शांत मुद्रा को हृदय में विराजित कर सदा के लिए कैद कर लेना चाहते हों।

पद चापों से उड़ते धूल के गुबार व आँसू भरी आँखों की धुंधलाहट में धीरे-धीरे गुरु की तस्वीर धुंधली पड़ती आँखों से ओझल हो गई।

और सामने एक लम्बा यात्रा पथ था जिसे ''आगे तुम्हें ही संभालना है'' जो गुरु के होंठों से निकला अनहद नाद था। जिसमें गुरु का गूढ़ मर्म छुपा था। इस विहार में आचार्य श्री के साथ सुश्राविका वसंतीदेवी नाथूलाल नावड़िया व उनके दोनों पुत्र पारस तथा भरत, मयंक संकेश्वरा, मुकेश वडावला, दिनेश पाडवा, महावीर बागावत, श्रीमती कंचनबेन रसिकलाल कोटड़िया आदि सहयोगी बन; चल रहे थे।

कुंजवन से पहला विहार

कुंजवन जो गुरु सान्निध्य में आचार्य सुनीलसागरजी के लिए अध्यात्म व धर्म का नंदनवन बन गया था। वहाँ की कभी न भुलाई जाने वाली स्वर्णिम स्मृतियों को हृदय में सहेजे ''बहती नदी व चलते संत अच्छे लगते हैं'' की उक्ति

चरितार्थ करते हुए गुरु आज्ञा से उन्होंने मुंबई की ओर विहार कर दिया।

पहला पड़ाव नांद्रे आया जहाँ आठ सौ घर की जैन समाज है पर संगठित नहीं है। आचार्य श्री ने जो थोड़े बहुत लोग थे। उन्हें आशीवर्चन के रूप छोटे से प्रवचन में संगठित होकर धर्म प्रभावना कर अपनी एकता का परिचय देने की समझाइश दी। चाहते हुए भी चातुर्मास के लिए समय पर मुंबई पहुँचना जरूरी समझ वहाँ रुक नहीं पाए। वहाँ से भीलवड़ी व भीलवड़ी से बुर्ली, वहाँ से कुंडल पहुँचे। कुंडल अतिशय क्षेत्र व सिद्धक्षेत्र दोनों है जहाँ से अंतिम केवली श्रीधर स्वामी ने निर्वाण प्राप्त किया था। यहाँ पर आपने कलिकुण्ड पार्श्वनाथ, झिरी पार्श्वनाथ के दर्शन किये। बाद में पहाड़ की कठिन चढ़ाई चढ़ गिरि पार्श्वनाथ पहुँचे। घास होने के कारण चरण पादुका के दर्शन कर लौटने लगे। रास्ते में पैर में नुकीला पत्थर चुभ गया जिससे खून की धार बह चली। धीरे-धीरे उतरकर वहाँ स्थित स्वाध्याय भवन में ठहर गए। आर्यिका प्रशांतमती माताजी यहीं ठहरी हुई थीं। गुरु दर्शन कर आपस में तत्त्व चर्चा हुई।

यहाँ पर मुंबई, नातेपूते व इंडी के श्रावकगण गुरु दर्शनार्थ आए। मुंबई गोरेगाँव के श्रावकों ने आचार्य श्री को चातुर्मास के लिए श्रीफल अर्पित कर निवेदन किया। श्री महावीर वागावत आचार्य श्री के साथ रुक गए। पाँव में गहरा घाव होके के बावजूद भी सबेरे आपने विहार कर दिया।

कुंडल से 14 कि.मी. चल रामपुर पहुँचे। दोपहर में वहाँ से 11 कि.मी. चल कड़ेपुर रात्रि विश्राम किया। वहाँ से दूसरे दिन सुबह 12 कि.मी. चल सासवड़े पहुँचे। वहाँ से दोपहर में 10 कि.मी. चलकर पूसे सावली में रात्रि के लिए रुके। सबेरे पुसे सावली से 11 कि.मी. चल पवारवाड़ी में चर्या की। वहाँ से 12 कि.मी. चल रात्रि विश्राम रहमतपुर के एक फार्म हाउस पर किया। रहमतपुर से सुबह विहार कर 28 कि.मी. पदयात्रा कर कोरेगाँव होते हुए 12 बजे नांदगिरि पहुँचे। सामायिक स्वाध्याय के बाद 4 बजे दुर्गम पहाड़ी पर चढ़ एक घंटे में ऊपर पहुँचे।

नांदगिरि पहाड़ से उतरकर सीधा विहार कर दिया व देउर पहुँचे जहाँ एक श्वेताम्बर उपाश्रय में रात्रि में ठहरे। वहाँ से सुबह विहार कर 14 कि.मी. यात्रा तय कर सालवी पहुँचे। सालवी से दोपहर 8 कि.मी. दूर लोणंद पहुँचे। निरंतर विहार चल रहा था। आचार्य श्री के पुण्य प्रताप से अपने आप व्यवस्थाएँ बनती जा रही थीं। बिना किसी पूर्व योजना के चातुर्मास के लिए चल पड़े थे। अतः रास्ते की कोई तय शुदा व्यवस्था नहीं थी। जहाँ समय पर पहुँच गए वहाँ आहार चर्या की। रात्रि विश्राम किया। किन्तु किसी भी प्रतिकूलता पर उनके मन में जरा सी भी आकुलता-व्याकुलता नहीं थी। मुक्तिपथ के राही ने इन सबसे तो बहुत पहले निजात पा ली थी। यहाँ भी श्वेताम्बर समाज या जैनेतर समाज ने साधुओं के प्रति अपनी श्रद्धा भक्ति का परिचय देते हुए जगह-जगह आपकी चर्या व रात्रि विश्राम की व्यवस्था की। एक गाँव से दूसरे गाँव तक साथ थे।

नीरा उपसर्ग

5 जुलाई 2010 को लोणंद के बाद नीरा से विहार कर आचार्य श्री मात्र दो कि.मी. ही चले थे कि पीछे से आकर एक मारुति वैन एमएच-12 आचार्य श्री के सामने रुकी। उसमें से तीन-चार गुंडे टाइप मुस्टंडे उतरे और आचार्य श्री के सामने जोर-जोर से चिल्लाने लगे- ''यह सब क्या चल रहा है? सड़क पर नंगे घूम रहे हो। तुम्ही कापड़ घाला, तुम्हीं कापड़ घाला'' कहते हुए गाली-गलौज करते हुए उपद्रव करने लगे। श्रावकों के समझाने पर भी वे कुछ समझने-सुनने को तैयार नहीं थे। उनका उपद्रव बढ़ता जा रहा था। वे आचार्य श्री को कपड़े पहनाने पर तुले थे।

आचार्य श्री ने इसे अपने पर आया घोर उपसर्ग जान नियम सल्लेखना ले सड़क किनारे ध्यानस्थ हो गए। वे णमोकार महामंत्र का जाप करने लगे। उनका उपद्रव बढ़ता देख मुंबई गोरेगाँव के महावीर बागावत खम ठोकते हुए उनसे भिड़ गए व उन गुंडों का जोरदार प्रतिकार किया। 'शठे शाठ्यम् समाचरेत' का व्यवहार अपनाते हुए उन्होंने जोरदार आवाज

से कहा- ''आज तक कोई माई का लाल पैदा नहीं हुआ है जो हमारे दिगम्बर साधु को कपड़े पहना दे। हमारे सामने तुम किस खेत की मूली हो? हमारे गुरु किसी से कुछ नहीं कहते, इसका यह मतलब थोड़े कि हम तुम्हारी हरकतों को चुपचाप सहते रहेंगे।'' वे कड़ककर बोले- ''खबरदार! उस तरफ किसी ने एक कदम भी बढ़ाया तो पैर तोड़ देंगे। हाथ लगाने की बात तो बहुत दूर, हाथ ऊपर-नीचे भी किया तो हाथ तोड़ देंगे। इस ओर आँखें उठाकर तो देखना भी मत, तुम्हारा क्या हश्र होगा, सोच लेना।'' उनकी निडरता व रौबपूर्ण आवाज सुन गुंडे ढीले पड़ गए। उन्हें लगा, इन निहत्थे अहिंसावादी लोगों के सामने अब उनकी कुछ न चलेगी। इसी बीच नीरा से साथ चल रहे श्रावकों ने नीरा की जैन समाज को मोबाइल लगा दिया था। महावीर बागावत के साथ प्रतिकार करते लोगों से व पुलिस के डर से वे गुंडे गाड़ी में बैठ भाग निकले। श्रावकों की हिम्मत व गुरु के प्रति समर्पण काम आया।

20-25 मिनट आचार्य श्री ध्यान मग्न रहे। आज उनके धैर्य व साधना की कठोर अग्नि परीक्षा थी। तब तक नीरा से पुलिस को लिए कई श्रावकगण उपसर्ग स्थल पर पहुँच गए।

सच है, बुद्धिमान की परीक्षा संकट के समय होती है। धीरवान की विपत्ति में। शूरवीर की संयम में तथा साधु की परीक्षा अपमान में होती है। किन्तु आचार्य श्री जैसे समताधारी संतों, मनीषियों के लिए मानापमान कोई मायने नहीं रखता। आचार्य श्री को विदा कर वे सब वापस लौट गए। नीरा से 12 कि.मी. चलकर वे बाल्हे पहुँचे।

लोग काफी दूर अगुवाई के लिए पहुँचे व बड़े सम्मान के साथ बाल्हे में मंगल प्रवेश कराया। वे वहाँ के दिगम्बर जैन मंदिर पहुँचे। चारों ओर आप पर हुए उपसर्ग व आपके धैर्य की ही चर्चा थी।

9 जुलाई को सुबह में बाल्हे में ही चर्या की। शाम को 10 कि.मी. चलकर जेजुरी पहुँचे। 9 व 10 जुलाई महाराष्ट्र के प्रसिद्ध संत ज्ञानेश्वर की पालकी होने से भीड़भाड़ की वजह से जेजुरी में फलटण के श्रावक शीतल गाँधी की फुड्स फैक्ट्री में ठहरना पड़ा। वहाँ से शाम को 10 कि.मी. चलकर शिवरी गाँव के स्कूल में रात्रि का पड़ाव व धर्म-ध्यान हुआ।

पुणे के माणिकबाग से चांदनी चौक

11 जुलाई 2010 को सुबह 10 कि.मी. चलकर आप सासवड़ पहुँचे। शाम को सासवड़ से चलकर 11 कि.मी. दूर भिवनी के एक फार्म हाउस पर ठहरे। दूसरे दिन 12 जुलाई को सबेरे वहाँ से 13 कि.मी. दूर कात्रज के शत्रुंजय तीर्थ श्वेताम्बर मंदिर में चर्या हुई। जगह-जगह आपने लोगों में धार्मिक एवं सामाजिक चेतना जगाई। उन्हें सदाचरण के लिए प्रेरित किया।

यहाँ से पूना शहर प्रारंभ हो जाता है। कात्रज से आप माणिकबाग के श्री महावीर दिगम्बर जैन मंदिर (सिंहगढ़ रोड) शाम को पहुँचे। यहाँ पर पूना एवं मुंबई के अनेक श्रावकगण उपस्थित रहे। 18 जुलाई को प्रातः माणिकबाग मंदिर के विशाल प्रवचन मंडप में आपका धर्मोपदेश हुआ। आगम पर आपकी मजबूत पकड़, विद्वत्ता व प्रवचन शैली से श्रोता अत्यधिक प्रभावित हुए। वहाँ की सुश्राविका सुजाता ताई, सुनील उलागड्डे, महावीर शहा, कमल कासलीवाल के नेतृत्व में सकल दि. जैन समाज ने श्रीफल भेंट कर वहाँ चातुर्मास करने का निवेदन किया। आचार्य श्री ने उन्हें गुरु आज्ञा व आदेश की बात बता आगे प्रयास करते रहने की बात कह वहाँ से निमशिर गाँव जाने हेतु विहार कर दिया। शाम को 9 कि.मी. चलकर चाँदनी चौक के एक अप्रतिष्ठित मंदिर पहुँचे जहाँ रात्रि विश्राम किया।

14 जुलाई 2010 को प्रातः वहाँ चर्या कर 12 कि.मी. पदयात्रा कर शाम को तड़ेगाँव के एक श्वेताम्बर मंदिर में संघ ने रात्रि विश्राम किया।

यात्रा अनवरत जारी थी। 15 जुलाई को सुबह 12 कि.मी. चलकर चिंतामणि ट्रांसपोर्ट खले पहुँचे। वहाँ से 12

कि.मी. चल ब्राह्मण गाँव व वहाँ से 18 जुलाई को मुंबई के सरदारी लाल जैन के लोणावाला स्थित बंगले पर चर्या की। यहीं से दोपहर में विहार किया तो खंडाला से जोरदार बारिश शुरू हो गई। पहाड़ी घाटियों में दो-तीन रास्ते होने से दो-तीन बार रास्ता भी भटक गए। पर मार्गदर्शक मिलने पर सही राह पर आ गए। इस कारण ज्यादा चलना पड़ा। इस प्रकार अनियत विहार करते 16-17 कि.मी. चल शाम को खपोली के श्वेताम्बर जैन मंदिर में विश्राम किया।

कांबले से संघ विहार करता हुआ अति लंबी चलाई चल पनवेल से नेरूल होते हुए ऐरोली के नवनिर्मित दिगंबर जैन मंदिर पहुँचा। यहाँ आचार्य श्री की भव्य अगवानी व स्वागत हुआ। यह वही मंदिर है जिसकी नींव आचार्य गुरु श्री सन्मतिसागरजी ससंघ सान्निध्य में 2005 में बोरीवली मुंबई चातुर्मास पश्चात विहार करते हुए यहाँ रुकने पर रखी गई थी। आचार्य गुरु के चरण पड़ते ही वह भूमि पुण्यमय हो गई और देखो, आज वहाँ विशाल मंदिर, त्यागी भवन है व समाज बस गया है। आचार्य सुनीलसागरजी सोच रहे थे।

धीरे-धीरे मंजिल निकट आती जा रही थी। 20 जुलाई को ऐरोली से 17 कि.मी. चलकर संघ साकीनाका पहुँचा। संघ की अगवानी बड़ी धूमधाम से हुई। सांई विहार में दो दिन प्रवास रहा, प्रवचन हुआ। यहाँ सुंदर दिगम्बर जैन मंदिर तथा राजस्थानी समाज है। यहाँ अच्छी धर्म प्रभावना की।

मुंबई प्रवेश

आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने 22 जुलाई 2010 गुरुवार को साकीनाका से सबेरे विहार कर दिया। उन्होंने ऋषिनगर, जोगेश्वरी होते हुए जंगल के रास्ते 60-70 लोगों के साथ सफर तय किया। गोरेगाँव में 2010 के चातुर्मास के लिए उनका भव्य मंगल प्रवेश हुआ तथा अभूतपूर्व सम्मान हुआ। गोरेगाँव से अगवानी के लिए 200-300 लोग आगे पहुँच गए थे। विहार में रास्ते भर तेज बारिश हो रही थी। एक साथ भूमि शुद्धिकरण, आचार्य श्री का जलाभिषेक व पद पखारने का काम हो रहा था। इतनी बारिश में भी भीगते हुए लोगों में उत्साह व खुशियाँ देखते ही बनती थी। अगवानी में आगे पुरुष श्वेत कुर्ता-पायजामा व केसरिया पगड़ी पहने तथा महिलाएँ केसरिया वस्त्र पहने सिर पर कलश लिए चल रही थीं। हर कोई भक्ति के रंग में डूबा था। बच्चे व युवा बैंडबाजों की धुन पर नाच रहे थे। बड़े खुशनुमा माहौल में गोरेगाँव चातुर्मास हेतु आपका मंगल प्रवेश हुआ।

पीछे छूट गया था एक लम्बा सफर जो एक दिगम्बर संत के लिए आसान तो नहीं कहा जा सकता। राह में मांसाहारियों को शाकाहारी करते, लोगों के मलिन मनों को विमल करते, पहाड़ियों-घाटियों को चढ़ते उतरते, रास्ते के झाड़-झंखाड़ों को आशीषते आगे बढ़ते गए। पथ की धूल को उनके चरणों से चिपक-चिपक कर चंदन बनते देख राह के काँटों-भाटों में भी होड़ मच गई। वे निरीह भक्तिवश अपनी प्रकृति भूल बैठे व अपनी बिसात के अनुसार उनके नंगे पद तलुओं को ही चूमने लगे। कभी वे नुकीले काँटे उनको चुभ कर विह्वल कर देते तो कभी नुकीले पत्थर चुभ जाते तो खून की धार बह निकलती। फिर भी वे अपनी पीड़ा भूल मुस्कुराते उन्हें आशीषते आगे बढ़ जाते। वे राह में उपेक्षित पड़े काँटे-भाटे धन्य हो उठते। इधर आकाश से मेघ भी बरस-बरस कर कभी उनके पद पखारते तो कभी उनका जलाभिषेक करते तो कभी धरती को धोकर स्वच्छ करते अपनी खुशियाँ जाहिर कर रहे थे और आचार्य श्री ससंघ इनकी खुशियों से उपजी मुश्किलों से दो-दो हाथ करते गंतव्य की ओर बढ़ते गए। कई जगह जिनालयों, तीर्थों, त्यागीव्रतियों व विद्वत्जनों का समागम भी हुआ, तो राह में उपसर्ग परीषह भी सहना पड़ा। कहीं बड़ा समाज होने पर भी श्रावकगण घर से निकलकर गुरु चरणों में नहीं आए तो कहीं अजैनों में दिगम्बर साधुओं के प्रति अकूत श्रद्धा भक्ति देखते बनती थी।

रास्ते के अनेक खट्टे-मीठे अनुभव लिए जो एक दिगम्बर पदयात्री के जीवन में कोई मायने नहीं रखते, राह की कठिनाइयों पर ध्यान दिए बिना आचार्य श्री गोरेगाँव मुंबई पहुँच गए। पर बार-बार आचार्य गुरु की याद आते ही उनका

विह्वल मन उनके चरणों में जा बैठता। गुरुवर की वृद्धावस्था, तिस पर रूग्णावस्था, इतनी सारी तकलीफें उन्हें जो हो रही थी, ऐसी हालत में उनका मन गुरु की वैयावृत्ति करते हुए उनके साथ ही चातुर्मास करने का था। गुरु के प्रति अपने कर्तव्य निर्वहन का यही तो समय था। आचार्य सुनीलसागरजी का मन कोस रहा था कि वे गुरुवर के साथ क्यों नहीं रुके।

उन महातपस्वी ने उन्हें मुंबई में चातुर्मास करने की आज्ञा व कड़ा आदेश (धर्म प्रभावना के लिए) देकर आचार्य धरसेन जैसा दिव्य आदर्श उपस्थित किया था। उन्होंने अपनी वृद्धावस्था में आचार्य भूतबलि व पुष्पदंत को षटखंडागम का ज्ञान देकर उसे शीघ्र लिपिबद्ध करने के लिए अपने पास से दूर अनुकूल स्थान पर भेज दिया था ताकि आगम आने वाली पीढ़ियों के लिए सुरक्षित संरक्षित हो सके। उन्होंने विश्व कल्याण व मुक्तिमार्ग का संरक्षण अपने से ऊपर रखा था। यही काम आचार्य गुरु सन्मतिसागरजी ने भी किया। सब शिष्यों के साथ मुझे भी विहार करने, धर्म प्रभावना करने का आदेश कर दिया। दस वर्षों तक उन्होंने मुझ अपात्र को अपने सान्निध्य में रख, कड़ी साधना कर अपनी निगाहों में मुझे सत्पात्र बनाया।

यह मुंबई गोरेगाँव का चातुर्मास उनकी कसौटी पर खरा उतरने की मेरी कठिन परीक्षा घड़ी है। आचार्य श्री सुनीलसागरजी मन ही मन संकल्पित हो रहे थे कि महान गुरु ने तो दिव्य आदर्श स्थापित कर दिया, मुझे भी उनके आदर्श के अनुकूल अब स्वयं को सिद्ध करना है।

आत्मसाधना से जिनका संयम शृंगारित है, आगम से जिनका आचरण व वाणी संस्कारित है, कुन्दकुन्द व अकलंक देव के पथानुयायी, समयसार का सार तथा स्वरूप संबोधन का बोध जिनकी जीवन चर्या में आधारित है, धर्म, नीति व कल्याण के सोते जिनके अधरों से निरत झरते रहते हैं, जिनके मौन से आत्म कल्याण व विश्व कल्याण की मुखरता प्रस्फुटित होती है, ऐसे अध्यात्म जगत की असाधारण विलक्षण महाविभूति आचार्य श्री सुनीलसागरजी जैसा संत समागम, उनका सान्निध्य, उनका दर्शन लाभ, किसी युग के कई प्रकाश वर्षों के संचित पुण्योपार्जन से संभव होता है। यह पुण्य संयोग 2010 के मुंबई चातुर्मास के रूप में गोरेगाँव वासियों को सहज सुलभ हो गया। वे लोग इस अति दुर्लभ चिंतामणि रत्न के समान इस अमूल्य संत समागम के क्षण को पाकर धन्य हो गए।

गोरेगाँव-मुंबई चातुर्मास 2010

25 जुलाई 2010 की मंगल प्रभात मुंबई (विशेषकर गोरेगाँव वासियों) के लिए मंगल प्रभाती के मंगल गान लेकर आई। सबेरे की शुद्ध हवा आचार्य श्री सुनीलसागरजी के संत हृदय की करुणा की आर्द्रता दिग् दिगन्तों तक पहुँचा रही थी। गुरु पूर्णिमा का सूर्योदय समस्त सृष्टि को यह शुभ संदेश दे रहा था कि दुनिया के सारे शिष्यों के हृदय का ज्ञानोदय गुरु कृपा का ही 'महाफल' है। 25 जुलाई 2010 की शुभ मंगल बेला में आचार्य श्री सुनीलसागरजी के द्वारा गोरेगाँव मुंबई चातुर्मास मंगल कलश की स्थापना मुंबई व देश के कई प्रांतों से पधारे गुरुभक्तों के विशाल जनसमुदाय की उपस्थिति में विधिवत् सम्पन्न की गई। मुख्य कलश स्थापना का धर्म लाभ भी मुकेश भगवतीलाल बड़ावला ठाणे ने प्राप्त किया। इस मंगल कलश में गुरु आदेश व आज्ञा को पूर्ण करने का संकल्प भरा था। इस मंगल कलश में संत हृदय के वात्सल्य का सागर समाहित था। इस मंगल कलश में संत साधना का ज्ञानामृत भरा था। यह मंगल कलश संत का समाज के प्रति व समाज का संत के प्रति कर्तव्य का प्रतीक था। मुंबई चातुर्मास जहाँ आचार्य श्री के लिए ज्ञान, ध्यान, साधना, धैर्य व धर्म प्रभावना की परीक्षा था, वहीं समाज के लिए संत के प्रति श्रद्धा, समर्पण व चातुर्मासिक सुव्यवस्था की परीक्षा था।

जग मांगल्य की कामना लिए उनके मंगल आशीर्वचन सुन लोग कृतकृत्य हो रहे थे। उनके मुखारविंद से सत्य, अहिंसा, प्रेम, शांति, दया के झरते रहे पुष्पों से श्रोता अपने खाली दामन भर रहे थे। यह सूरज अपनी भास्वर ज्ञान रश्मियाँ बिखेर रहा था। और सब उस प्रकाश में नहा रहे थे। इस मेघ की बरसती करुणा की बौछारों से सभी अन्दर तक भीग रहे थे।

आपने कहा, ''यह जीवन लुहार की दुकान सा है। जहाँ कर्मों की खटर-पटर, ठोक-पीट, धूल-धक्कड़ तथा दुःखों, मुश्किलों, संघर्षों व विघ्नों की भट्टी जल रही है। पर इससे हमें घबराने की जरूरत नहीं। निस्पृही, विश्वहितैषी संतों की वाणी वीणा के तारों की मधुर झंकार से जो गीत-संगीत ध्वनि निकलती है वह सबके मन-प्राण शीतल व तृप्त कर देती है। संत हृदय से उद्भूत पावन ज्ञान गंगा में एक दिन सबके पाप कषाय, छल-प्रपंच, मोह-माया, राग-द्वेष रूपी मन के मैल धुल जाएँगे, तिरोहित हो जाएँगे। और मनुष्य दिन प्रति दिन मुक्ति प्राप्ति के अपने महान लक्ष्य की ओर अग्रसर होता जाएगा।''

जीवन बोध कराने वाला यह मांगल्य भरा मंगल आशीर्वाद लेते लोग अपने सांसारिक दुःखों को भूल खुशी-खुशी घर लौट रहे थे। सचमुच संत सान्निध्य व सत्संग में उन्हें अलौकिक सुखानुभूति हुई थी व हो रही थी, वह शब्दातीत थी।

आचार्य सुनीलसागरजी ने बस्ती-बस्ती, गाँव-गाँव, डगर-डगर, नगर-नगर, जंगल, पहाड़, घाटियाँ पार करते शव होते मनुष्य में शिवत्व की चेतना फूँकते मुंबई की धरती पर अपने चरण रखे तथा 2010 के चातुर्मास संयोग का बंबई वासियों को सुयोग प्रदान किया था। यह सुअवसर उस मुंबई को मिला था जहाँ भौतिक विकास की अंधी दौड़ में दौड़ता, भागता, हाँफता मानव 'मशीनी मानव' बनकर रह गया है। जहाँ मानवीय संवेदनाएँ पथरा रही हैं। आस्थाओं की मुंडेरें हिल रही हैं और जीवन मूल्य दम तोड़ते नजर आ रहे हैं। उस माया नगरी पर ग्लैमर का काला जादू चढ़ा है। जहाँ रेशमी लिबास में ढँकी नग्नता का क्रन्दन किसी को सुनाई नहीं देता या अनसुना कर दिया जाता है। इस औद्योगिक नगरी के गुलशन में भौतिकता के केक्टस उगते पसरते जा रहे हैं। वहाँ वैश्वीकरण, बाजारीकरण, राजनीतिकरण, औद्योगिकीकरण का चारों ओर बोलबाला है।

यदि कहा जाए कि मुंबई वह आईना है जिसमें देश की तस्वीर देखी जा सकती है तो अतिशयोक्ति न होगी। आज इस माहौल ने मनुष्य से मनुष्यता छीन उसे जड़ वस्तु बना दिया है।

युग की ऐसी माँग व आवश्यकता की कोख से किसी महानायक या महापुरुष का जन्म या पदार्पण होता है। युग की यही मांग व आवश्यकता व्यक्ति को अपनी शक्ति, प्रतिभा और क्षमता को तोलने, जाँचने, परखने का अवसर देती है। आचार्य श्री ने अपने पहले प्रवचन से ही जन हृदय में अपनी उपस्थिति दर्ज करवा दी। ऐसी घटाटोप तमिस्त्रा को विच्छिन्न करने अध्यात्म के शिखर के सूर्य आचार्य श्री ने स्वयं को कसौटी पर कसा, अपने दर्शन, ज्ञान व चारित्र की सम्यकता को जाँचा-परखा, अपनी आध्यात्मिक क्षमता, आत्मविश्वास, इस्पाती इरादों व कुछ कर गुजरने की अदम्य लालसा को देश, काल व परिस्थितियों के तराजू पर तोला। और वे अपनी तेरह वर्ष की आध्यात्मिक साधना व आत्मशुद्धि की शक्ति तथा दस वर्षों तक गुरु ने मांज-मांज कर जिस पात्र को सत्पात्र के रूप में चमकाया, उस वीतरागता की चमक लिए इस चातुर्मास में वे 'जीरो' होती जा रही 'हीरों' की नगरी में जीवन मूल्यों, आदर्शों, नैतिकता, सदाचार, संस्कारों, श्रद्धा, आस्था आदि-आदि के 'जीरो' के पीछे (1'0'), दहाई, सैकड़ा, हजार... आदि के अंक लगाने आए थे। दर्शन-ज्ञान-चारित्र त्रिरत्न की आभा मंडित करने आए थे।

आचार्य श्री ने चातुर्मास के दौरान मुंबईवासियों को जोश में भी होश न खोने का व्यवहार-विवेक जगा उनकी आत्मचेतना जागृत की। उन्होंने लोगों को समझाया कि सबसे प्रीत रखो, अपने आप सबके मित्र बन जाओगे, आत्महित

में यह आवश्यक है। उन्होंने 'अहं' की बजाय 'हम' व क्रोध की बजाय क्षमा व शांति का समाज में आत्मबोध जगाया। इन निस्पृही संत ने समाज को समझाया कि निश्छलता व निष्कपटता से ही व्यक्ति चारित्रिक समृद्धि व सम्पन्नता पा सकता है। फिर आत्मसमृद्धि के सोपानों पर पहुँचना उसके लिए कठिन नहीं।

चर्याचक्रवर्ती, मुक्तिकामी, आत्मान्वेषी, विश्वहितैषी आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने आसन में कार्य सिद्धि, शासन में मनसिद्धि और प्रवचन में वचनसिद्धि से 2010 मुंबई चातुर्मास को ऐतिहासिक बना दिया। उन्होंने ज्ञान के शिक्षण, योग के प्रशिक्षण व संस्कार शिविर तथा अन्य धार्मिक आयोजनों द्वारा लोगों को धर्मपथ पर आरूढ़ रखने का मार्ग प्रशस्त किया। उन्होंने धैर्यवान व महामौनी रह धर्म प्रभावना के क्षेत्र में मुंबई वासियों से अपनी प्रतिभा का लोहा मनवा लिया।

'आत्मवत् सर्व भूतेषु यः पश्यति सः पंडितः' वाली भावशुचिता लिए भगवान महावीर के पथानुगामी इस महाश्रमण ने चातुर्मास के दौरान मुंबईवासियों में आत्मजागरण की अंतः प्रेरणा फूँकी जिससे प्रेरित कुछ मुक्तिकामी जीवों को दीक्षा दे मुक्तिपथ पर आरूढ़ किया।

वीर शासन जयन्ती से लेकर वीर निर्वाण दिवस 2010 तक आचार्य श्री के चातुर्मासिक प्रवचन, स्वाध्याय, शिक्षण-संस्कार शिविर व अन्य धर्माराधना व साधना के कार्यक्रम निर्विघ्न, सानंद, सफलता पूर्वक सम्पन्न हुए। मुंबई के उपनगर वासियों की गुरु के प्रति प्रगाढ़ आस्था, श्रद्धा, भक्ति देख आचार्य श्री के नेतृत्व में चतुर्विध संघ चातुर्मास के पश्चात गोरेगाँव से लोखंडवाला, अंधेरी, पार्ला में धर्म प्रभावना करता हुआ खार पहुँचा। 25 दिसंबर की शाम खार से ताड़देव की ओर विहार करने का निश्चय किया।

इस बीच वे गुरुदेव के गिरते जा रहे स्वास्थ्य के प्रति चिंतित थे। अतः उन्होंने गुरुवर आचार्य श्री के स्वास्थ्य के प्रति चिंता जताते हुए, चातुर्मास सानंद सम्पन्न होने का समाचार बताते हुए गुरु के प्रति अपनी असीम श्रद्धा भक्ति, वंदना, स्तुति करते एक भावपूर्ण पत्र लिखकर मुंबई के दो सुश्रावक श्री मयंक संखेसरा व किरीट दोशी को वह पत्र लेकर आचार्य श्री के निकट भेजा। ताकि वे गुरुदेव का आँखों देखा चित्रण वापस आकर उन्हें बता सकें। 23 दिसंबर 2010 को वे दोनों वह पत्र लेकर गुरु निश्रा में जा पहुँचे व अपनी तरफ से आचार्य श्री सुनीलसागरजी की भक्ति भावना गुरुवर को अर्पित करते हुए शिष्य संत का पत्र अंकलीकर परम्परा के तृतीय पट्टाचार्य तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी को अर्पित किया।

शिष्य के समर्पण भाव को गुरुवर जानते थे। बोले- ''बड़ा निर्मल हृदय वाला है। पत्र सुन्दर ही लिखा होगा।'' कहते हुए उन्होंने पत्र को खोलकर दो बार पढ़ा। उनके चेहरे पर प्रसन्नता की लहरें दिख रही थीं। दोनों श्रावकों के साथ शिष्य को भी बहुत आशीर्वाद देकर कहा- ''पत्र दो बार पढ़ा है। बहुत अच्छा लिखा है। जो अच्छे हैं वे अच्छा ही लिखेंगे।'' शिष्य के प्रति उनका वात्सल्य देखते बनता था। शिष्य के अन्य समाचार पूछे व कहा कि वे योग्य, प्रज्ञावान व कुशल संत हैं। उनसे खूब धर्म प्रभावना कराओ और उन्हें बहुत सारे आशीर्वाद दिये। इधर गुरु के आशीषते हाथ उठे और उधर शिष्य का माथा अपने आप स्वचेतनावश गुरु चरणों में झुक गया।

स्वाध्याय के बीच भी पूरे संघ के सामने आचार्य श्री ने शिष्य का पत्र एक बार फिर खोलकर पढ़ा व प्रसन्नमना कहा- ''बहुत अच्छा लिखा है। आगे संघ को वही संभालेगा।'' तब खड़े हो हाथ जोड़कर दोनों युवाओं ने कहा कि युवाचार्य श्री को आपकी बड़ी चिंता लगी रहती है। अतः विशेष रूप से आपका हालचाल जानने ही हमें यहाँ भेजा है।

अचानक आचार्य श्री के मुखारविंद से अंकलीकर परम्परा के उत्तराधिकारी का नाम सुनकर वहाँ उपस्थित कमल कासलीवाल ने अन्य आचार्य का नाम सुझाया। कहा- वे भी योग्य पात्र हैं। आचार्य श्री ने कहा कि निश्चित ही वे भी अच्छे हैं। मेरा किसी से कोई राग-द्वेष नहीं है। पर मुझे जो उचित लगा वह बताया। इस चर्चा के समय वहाँ पर श्री दिनेश पाडवा, मुकेश ठाणे व भरत पारस नावड़िया भी बैठे थे। इस प्रकार 23 दिसंबर 2010 को ही जाने-अनजाने,

प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष उन्होंने अपने उत्तराधिकारी की घोषणा कर दी थी। इसके साक्षी मुंबई के श्री मयंक संखेसरा व श्री किरीट दोशी भी थे।

जो आचार्य श्री के मुखारविंद से युवाचार्य श्री सुनीलसागरजी के लिए ''आगे संघ को वही संभालेगा'' भविष्यवाणी सुन बड़े खुश हो गए। उन्होंने आचार्य श्री के हालचाल व यह बात मुंबई टेलीफोन के माध्यम से भेज दी।

यह सुन आचार्य श्री सुनीलसागरजी गुरुदेव के स्वास्थ्य के प्रति आश्वस्त हो गए।

गुरुदेव श्री की समाधि

24 दिसम्बर प्रातः 6 बजे आचार्य संघ स्तोत्र पाठ व जिन दर्शन कर खार के जिन मंदिर से ताड़देव की ओर विहार करने की भावना से जिन मंदिर से निकले। मुश्किल से आचार्य श्री 15-20 कदम आगे बढ़े होंगे कि साथ चल रहे 60-70 श्रावकों की खुसर-पुसर से एक मंद ध्वनि उनके कर्ण कुहरों से टकराई- ''आचार्य श्री सन्मतिसागरजी महाराज की समाधि हो गई।'' जो वे एक-दूसरे को बता रहे थे। यह भी कह रहे थे कि गुरुदेव को लगता है, अभी इस बात का पता नहीं चला है वरना वे विहार थोड़े ही करते। चूँकि आचार्य श्री अपने गुरु के बारे में निश्चिंत थे क्योंकि कल यानी 23 दिसंबर को ही उनके भक्त मयंक व किरीट भाई, जिन्हें उन्होंने गुरुवर के स्वास्थ्य के हालचाल लाने अपनी दर्शन भक्ति प्रेषित करते हुए पत्र लेकर उनके पास भेजा था। शाम को ही टेलीफोन से उन्होंने आचार्य श्री के पास समाचार भिजवाया था कि ''गुरुदेव ने उनका पत्र दो बार पढ़ा। उनकी बहुत तारीफ की व कहा कि सुनीलसागरजी से बहुत धर्मप्रभावना करवाओ।'' उन्होंने यह भी कहा कि 23 की सुबह एक माताजी की व शाम को एक मुनि श्री सुज्ञानसागरजी की समाधि हो गई। यद्यपि आचार्य श्री अभी पूर्ण स्वस्थ नहीं दिख रहे थे। वे किसी से कुछ कहते तो हैं नहीं।

मुनि श्री की अंतिम क्रिया उन दोनों की मुख्यता में सम्पन्न हुई थी। आचार्य श्री यह सोचकर थोड़े निश्चिंत रहे कि कल शाम के समाचार के आधार पर आचार्य संघ के मुनि सुज्ञानसागरजी की समाधि हुई है, आचार्य श्री की नहीं। शायद इनको कोई गलत समाचार मिला है। और वे कुछ कदम आगे बढ़े, पर उनका मन बड़ा बेचैन हो गया। तभी गोरेगाँव के महावीर बागावत रूंधे गले से बोले- ''आचार्य श्री सन्मतिसागरजी गुरुदेव की समाधि हो गई।''

आचार्य श्री की चिन्ता बढ़ गई। तभी जुहू के प्रभात जैन, जो विहार में कमंडल लिए आचार्य श्री के साथ चल रहे थे, बोले- ''वे दूसरे सन्मतिसागरजी महाराज होंगे।'

आचार्य श्री को लगा, ''इन लोगों को सही समाचार की जानकारी नहीं है। यदि गुरुवर का स्वास्थ्य ज्यादा खराब होता तो मयंक व किरीट भाई खबर तो भेजते। फिर भी जब उनकी चिंता बढ़ गई थी तब प्रभात जैन से कहा- ''सही बात क्या है, पता लगाओ।'' अब उनका मन उखड़ा-उखड़ा व कदम भारी हो रहे थे। तब भी उन्होंने आधा-पौन कि.मी. तक विहार किया। इस बीच महावीर लगातार मयंक व किरीट भाई के सम्पर्क में थे (मोबाइल से)। जैसे ही उन्हें हकीकत का पता चला, वे रोते हुए आचार्य श्री के सामने रास्ता रोककर खड़े हो गए व रूंधे गले से चिल्लाकर बोले- ''तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी गुरुदेव की आज सुबह (24 दिसंबर 2010) 5.55 बजे समाधि हो गई है। यह समाचार सही है, सौ टका।''

प्रभातजी को फिर भी विश्वास नहीं हो रहा था। अतः उन्होंने फिर से पूछा- ''क्या तपस्वी सम्राट की।''

महावीर बागावत ने रोते हुए कहा- ''हाँ हाँ, तपस्वी सम्राट की। हमारे गुरुवर के गुरुवर की।''

इसके आगे अब आचार्य श्री सुनीलसागरजी की कुछ पूछने-सुनने की हिम्मत ही नहीं रह गई थी। एक साधारण व्यक्ति की तरह उनके होश-हवास उड़ गए सोचने-विचारने की क्षमता खो गई। पैरों में मानों किसी ने चक्की बाँध दी हो। इतने भारी हो गए पैर कि लड़खड़ाने लगे। अब गिरे तब गिरे। आँखों के आगे अंधेरा छा गया, पैरों के नीचे से

जमीन खिसक रही थी। शरीर निष्प्राण मांस का लोथड़ा सा हो गया था। उस क्षण सारी समझ-बूझ समाप्त हो गई। गुरु वियोग में दुःखी मन असहाय हो गया। रोके से आँखों के आँसू नहीं रुक रहे थे। गुरु स्मृतियों में डूबा, गुरु उपकारों से उपकृत अभिभूत हृदय जार-जार रो रहा था। आँखों ने सावन-भादों की झड़ी लगा दी थी। अब उनसे एक-एक कदम चलना दूभर हो गया। उन्हें लग रहा था कि वहीं सड़क पर बैठकर जोर-जोर से रो लें। लेकिन विरक्त मुनि मुद्रा का ध्यान आते ही वे ऐसा न कर सके। प्रभातजी व महावीरजी ने उन्हें संभाला व वे हिम्मत जुटाकर जस-तस भारी मन व भारी पैरों से खार मंदिर वापस लौटे। उन्होंने सभी श्रावकों को उन्हें एकान्त में छोड़ने के लिए कह दिया। मंदिर के शिखर में अकेले बैठ वे खूब रोए। गुरु वियोग में उनका हृदय फट पड़ा था।

उन्हें विहार का वह अंतिम दृश्य याद आ रहा था जब वे विहार करते हुए पीछे मुड़-मुड़ कर देख रहे थे और गुरुवर उन्हें एकटक शांत-मौन देखे जा रहे थे। उन्हें बार-बार पछतावा हो रहा था, काश! थोड़ी जिद कर वे यह चातुर्मास उनके साथ कर लेते तो अंतिम क्षणों में उनके साथ होते। पर अब क्या हो सकता है? वे तो चले गए। यादों के अम्बार उनके आँसू रुकने नहीं दे रहे थे।

यदि मुनि पद की मर्यादा न होती तो वे भी गुरुदेव के अंतिम दर्शन को दौड़े चले जाते। 400-450 किमी दूर पैदल चलकर जाना तो नितांत असंभव था। शरीर उनका यहाँ मुंबई के खार के मंदिर में था और मन वहाँ कोल्हापुर के निकट गाँधीनगर में था जहाँ गुरुवर ने अंतिम श्वास ली थी। वे चर्म चक्षुओं से नहीं, मन के चक्षुओं से उनके अंतिम दर्शन कर रहे थे। बार-बार गुरुदेव की कमजोर, अस्वस्थ काया, आँखों व पाँव की तकलीफ बार-बार स्मृति पटल पर उभरकर आ रही थी।

तभी उन्हें गुरुवर की वे बातें याद आ रही थी जब संत व श्रावक सभी उन्हें उनका ध्यान स्वास्थ्य के प्रति सचेत कर इलाज करने व इतने अधिक उपवास न करने की विनय करते व देह के प्रति इतनी निर्ममता तजने की बात करते। तब वे हँसते हुए कहते- ''जो पर है, अन्य है, वैभाविक है, इस जीर्ण वस्त्र देह की क्या चिंता करना। चिंता आत्मा की करना है।'' और वे महायोगी ध्यानाराधना व स्वाध्याय द्वारा ज्ञानाराधना की अगाध गुरुता प्राप्त करने लग जाते। स्वाध्याय की इस शक्ति ने इतनी रूग्णावस्था में भी उनका मनोबल बढ़ाए रखा व वे कभी भी दैहिक पीड़ा से विचलित नहीं हुए। श्रुत मंथन से प्राप्त नवनीत से उन्होंने अपने जीवन दर्शन को स्निग्ध कर लिया था, तभी तो वे कहा करते थे- ''ज्ञान दर्शन से संयुक्त मेरी एक आत्मा ही शाश्वत है। शेष सब अर्थात् देह तथा रागादि भाव तो संयोग लक्षण वाले हैं। उनके साथ मेरा संयोग संबंध मात्र है।''

आचार्य श्री को याद आ रहा था कि जब वे कुंजवन में थे, तभी गुरुवर ने उनके समक्ष ही उन्हें रोज साढ़े ग्यारह बजे बड़ा समाधिमरण सुनाने को कहा था और वे सुनते थे। इस प्रकार उन्होंने अपने आत्म कल्याण पथ को पहले से ही पक्का बना लिया था। तभी तो उनकी 'मृत्यु' परम मृत्यु, आदर्श मृत्यु बन अनन्त की श्रृंखला का अंत कर देने वाला 'महामृत्यु महोत्सव' बन गया था। उनके स्वयं के लिए भी और उनके अंतिम दर्शन के लिए दौड़े आए देश भर के हजारों-हजार भक्तों की भीड़ के लिए भी।

युवाचार्य श्री एक विरक्त दिगम्बर संत हैं। इस दारूण दुःख के पलों में भी उन्होंने अपनी चेतना नहीं खोई। उन्हें किए गए शास्त्र स्वाध्याय की वे बातें याद आ रही थी जो आचार्य गुरुवर के लिए सही सिद्ध होती हैं। गुरुवर ने संपूर्ण परिग्रहों का त्याग कर दिया था, आहार का भी त्याग कर दिया था। मुनि अवस्था में रहते हुए उन्होंने पापों का निराकरण भी कर दिया था। उनकी मृत्यु समय संगत, शास्त्र संगत है। ऐसी मृत्यु को तीर्थ कहा जाता है। निश्चित ही आचार्य श्री की मृत्यु (समाधि) भी एक तीर्थ है। आज इसीलिए उस तीर्थ के दर्शन के लिए देश के कोने-कोने से हजारों हजार लोगों की भीड़ उमड़ रही है।

उन्होंने 'स्व' व 'पर' का भेद जानते हुए ही इस महोत्सव रूपी सुख का अनुभव किया है, जो संयम, तप, त्याग, नियम धर्म ध्यान, से संभव है।

गुरुदेव ने आगमानुसार इस योगि गम्य परमात्म रहस्य व ध्यान योग को अपने में समाहित कर उसका विभेदात्मक बोध हमें दिया। उन महायोगी के इस महान उपकार से हम कृतकृत्य हैं जिन्होंने हमें भी मृत्यु को महोत्सव बनाने का सम्यक् दिशाबोध दिया ताकि हम भी अनादि काल से अपने विस्मृत आत्मस्वरूप का ध्यान कर उसे प्राप्त करने का प्रयास करें, साधना करें। और आचार्य श्री सुनीलसागरजी गुरु वियोग की इस दुःखद घड़ी को उन्हीं द्वारा प्रदत्त ज्ञानाराधना व ध्यानाराधना से स्वयं को साधने लगे। संबोधने लगे।

वे रोए, बहुत रोए। जीवन में पहली बार इतना रोए कि मर्यादा का बाँध टूट गया था। उनके संग इस दुःख की घड़ी में सारी सृष्टि रो रही थी। थोड़ी देर पहले जो प्रकृति उन्हें हँसती-मुस्कराती प्रतीत हो रही थी, अब बड़ी उदास, गमगीन लग रही थी। उन्होंने स्वयं को संयमित किया। सोचा, एक संत, एक आचार्य के नाते मुझे अपने आप पर नियंत्रण, संयम रखना होगा। और वे बाहर आकर लोगों को ढाँढस बँधाने लगे।

भाग-7

पात्र से महापात्र

पट्टाचार्य पद का चिंतन व आचार्य श्री सुनीलसागरजी के नाम पर सहमति

25 दिसंबर 2010 की वह उदास सुबह। गुरु वियोग में रो-रो प्रकृति बेहाल हो रही थी। इस माहौल में दुःखी हृदय से लम्बे विहार से थका, उपवास, गुरु वियोग व असहनीय दुःख व अनिद्रा से मुरझाए फूल की तरह उदास मुनिसंघ कुंजवन में गुरु विहीन वसतिका में पहुँचा। सिंहासन तो वही था, पर उस पर बैठने वाले गुरुवर अब वहाँ नहीं थे। कहीं भी नहीं थे। अपने पितृतुल्य वात्सल्य लुटाने वाले परम पूज्य गुरुवर को उस पर विराजमान न देख आचार्य वंदना, स्तोत्र पाठ, प्रतिक्रमण करने आए मुनि संघ के धीरज का बाँध टूट गया। वे अपनी विरक्ति भूल, फूट-फूट कर कर रो पड़े। कौन ढाँढस बँधाए? कौन हिम्मत दिलाए उन्हें? फिर भी उन्होंने अपना कर्तव्य पूर्ण किया व उसी क्षण निर्णय लिया कि यह पट्टाचार्य का सिंहासन खाली नहीं रहेगा। इस पर अतिशीघ्र किसी नाम का निर्णय कर इस पर 'पदारोहण' किया जाएगा।

इधर 24 दिसंबर को आचार्य श्री के समाधिस्थ होते ही उस 'पद' के उत्तराधिकारी 'पट्टाचार्य पद' की चर्चाएँ जोरों पर चल पड़ी थीं। आचार्य गुरु के अनेक बार दिये संकेतों, संदेश, उनकी भावना व मनसा (जिसका उल्लेख अलग से किया जाएगा) का सम्मान करते हुए देश के कोने-कोने से आए उनके समर्पित भक्तों, विद्वत्गणों, संघस्थ प्रमुख ब्र. मैनाबाई व आचार्य संघ के अधिकतम पिच्छीधारी संतों ने अंकलीकर परम्परा के सर्वोच्च महानतम 'पट्टाचार्य पद' के लिए 'युवाचार्य श्री सुनीलसागरजी' के नाम पर एकमत सहमति बनाई।

उन सबका अभिमत था कि आचार्य श्री सुनीलसागरजी एक ऐसे उगते सूर्य हैं जिनमें अंकलीकर परम्परा के निर्वहन करने की ऊर्जस्विता है। वे नवीन सपने देखने वाले, नवीन तप योजक, नवीन शिखर स्पर्श करने वाले, दूरदर्शी, महामौनी, ध्यानाध्ययन में संयुक्त, धर्मानुशासन के शास्ता, संघ के हित का पोषण करने में पितृ तुल्य तथा शक्ति देने में गुरु शक्ति से भरपूर हैं। दीक्षा व शिक्षा देने वाले, पंचाचार से युक्त वात्सल्य पूर्ण हृदय वाले हैं। वे धीर-गंभीर, उदार हृदय, हित-मित मृदुभाषी, चुम्बकीय व्यक्तित्व के धनी प्रभावोत्पादक संत हैं। वे अपने अकूत ज्ञान, विशिष्ट प्रवचन शैली, जीवन-जगत की परख तथा आध्यात्मिक चिन्तन को चरितार्थ करते, अपने कल्याण के साथ-साथ समाज को नए स्वप्न, नई प्रेरणा, नए संकल्प व नए आदर्श, नई सोच, नई दिशाएँ, नया शरद दे रहे हैं।

वे दस वर्षों तक आचार्य संघ में सबके चहेते, निर्विवादित संत रहे। वे सबके गुणों को देखने वाले, सद्गुरुओं के गुण ग्रहण करने वाले, स्वदोष स्वीकार कर उसे दूर करने वाले, विकृतियों के निराकरण करने में वैद्य तथा संस्कृति के रक्षण में दक्ष हैं। वे निश्चित ही महान धर्म प्रभावक, इस्पाती इरादों व दृढ़ संकल्प व शिष्ट व मृदु व्यवहार करने वाले, समय से पहले की बात समझने वाली महान प्रतिभा हैं। आचार्य गुरु को उन पर पूरा भरोसा था कि तूफानों से निकाली कश्ती के समान इस अंकलीकर परम्परा के पट्टाचार्य पद की गरिमा को एक कुशल मल्लाह की तरह अपने कौशल से अच्छी तरह संचालन कर लेंगे। वर्तमान में आचार्य संघ में वृद्ध साधुगण भी हैं और युवा भी। आचार्य श्री सुनीलसागरजी दोनों से सही तालमेल बिठा लेंगे। चाहे आगम की दृष्टि से देखा जाए या श्रमणों की दृष्टि से या श्रावकों की दृष्टि से, वे हर क्षेत्र में योग्यतम पात्र और निष्णात हैं। वे आचार्य श्री के योग्यतम, विश्वासपात्र व प्रिय शिष्यों में से एक हैं। अपने विलक्षण गुणों से वे अंकलीकर परम्परा का पट्टाचार्य पद संभालते हुए समर्पित भाव से जिनशासन की रक्षारत रह, श्रमण परम्परा में वृद्धि, समृद्धि व अभिवृद्धि करते जिनागम का संरक्षण करेंगे। अतः अंकलीकर परम्परा के पट्टाचार्य के सर्वोत्तम पात्र आचार्य श्री सुनीलसागरजी ही हैं। इस प्रकार अतिशीघ्र निर्विवाद, एक मत से एक स्वर से उनके नाम पर सहमति की मुहर लग गई।

उधर मुंबई के खार में जिन मंदिर में इन बातों से बेखबर, जीवन की नश्वरता का मौन चिंतन करते गुरु उपकारों को याद कर गुरु ऋण में नत-नत होते आचार्य श्री सुनीलसागरजी अपने हृदय की भावभीनी श्रद्धांजलि गुरुवर को अर्पित कर रहे थे। हृदय से प्रसूत श्रद्धा के प्रसून अर्पित करते-करते उनके नयन सजल हो जाते थे। वे स्वयं को भूल गुरुमय हो गए थे। गुरु के प्रति समर्पित यह भावबोधि अनजाने ही उन्हें गुरुतम बना रही थी। गुरु की महानता के आगे वे स्वयं को तिल तुष मात्र भी नहीं समझते थे। वे तो हमेशा स्वयं को गुरुवर का लघुतम प्रियाग्र शिष्य मानते आ रहे थे। भले ही उनके बाद कितनी ही दीक्षाएँ हो गई हों, वे तो स्वयं को उनका सबसे छोटा शिष्य मान जब भी उनके निकट होते, सदा उनके आसपास ही रहते।

कुंजवन उदगाँव में उपस्थित श्रावकजन का भी मानना था कि युवाचार्य श्री सुनीलसागरजी एक ऐसे सत्यान्वेषी आत्मान्वेषी संत हैं जिनका मनन, चिंतन व अभिव्यक्ति आगम की आँच में पक कर प्रखर होते रहे हैं। उनमें सूझ-समझ व समझाने की अद्‌भुत कला है। उनके व्यक्तित्व व कृतित्व का निखार, उभार तथा चौमुखी प्रतिभा, संयम, त्याग व तपस्या की भट्टी में तपा कुन्दन है। निश्चित ही श्रमण परम्परा का यह जहाज उनके नेतृत्व में निर्बाध रूप से गतिमान रहेगा। इस गौरवपूर्ण परम्परा में वे चार चाँद लगा देंगे। गुरु वियोग की अपूरणीय क्षति के इन दुःखद पलों में वे सबका सम्बल बनेंगे व हमें इस रिक्तता से उबार लेंगे।

अतिशीघ्र आचार्य श्री के नाम पर एक अभिमत होते ही सबके चेहरों पर संतोष व विश्वास की लहर छा गई। वे सब निश्चिंत थे कि अब पूर्ववत वे उनके भी संघ में रहकर धर्मध्यान, आत्मध्यान व लोक मंगलकारी कार्य करते रहेंगे। अब सारे विकल्प समाप्त हो गए थे। बस एक ही अभिमत था, वह नाम था- सबका एक ही स्वर था 'युवा आचार्य श्री सुनीलसागरजी'।

काफी सोच-समझकर विचार कर उनके नाम की अंतिम स्वीकृति पर मुहर लग गई। वह भी उनकी अनुपस्थिति में, जबकि वे उदगाँव-कुंजवन से करीब चार सौ कि.मी. दूर मुंबई में चातुर्मास कर रहे थे। निश्चित ही यह उनकी प्रतिभा व विलक्षणताओं का स्फोटन था। सबको विश्वास था कि वे गुरु आदेश को शिरोधार्य करने में ना-नुकूर नहीं करेंगे। तथापि उनका भी अभिमत व विचार हो सकते हैं जिनका कमेटी सम्मान (आदर) करेगी। बड़ा विरोधाभास था ''यहाँ अनेकों को मिलकर एक को चुनना था सो चुन लिया, किन्तु आचार्य श्री को एक अकेले को अनेकों का निर्वहन करना है।'' वे आचार्य संघ से सुपरिचित तो थे ही।

स्वीकृति माँगना व पट्टाचार्य घोषणा

गुरु वियोग में शोकमग्न चतुर्विध संघ द्वारा यथाशीघ्र 25 दिसंबर 2010 को ही आचार्य श्री सुनीलसागरजी के परम भक्त मुंबई के श्री मयंक संखेसरा व किरीटभाई जो 23 दिसंबर को आचार्य श्री सुनीलसागरजी का पत्र मुंबई से गुरुदेव सन्मतिसागरजी के लिए लेकर गए थे, को मध्यस्थ बनाकर उन्हीं के माध्यम से मुंबई में आचार्य श्री से इस विषय पर चर्चा की गई व स्वीकृति माँगी गई तथा गुरुवर की अंतिम इच्छा, आदेश या आज्ञा कहें, उन्हें सुना दी गई।

गुरुवर का पट्टाचार्य पद उन्हें दिया जा रहा है, यह सुन गुरु के प्रति श्रद्धा उनकी आँखों में उमड़ पड़ी। हृदय फट पड़ा। कुछ देर बाद स्वयं को संयत किया।

उन्होंने कहा- ''मेरे अलावा आप लोग किसी अन्य योग्य तपस्वी को इस पद पर चुनें। आचार्य श्री ने तो अपने सारे शिष्यों को हीरे की तरह तराशा है। उनके संघ में एक से एक बेहतर मूल्यवान हीरे हैं।''

वहाँ से समवेत स्वर में सबने कहा- ''वह मूल्यवान व योग्यतम हीरा पात्र आप ही हैं। गुरुवर की आज्ञानुसार हमने आपको ही 'पट्टाधीश' माना है। अब आपको गुरु आज्ञा मानना चाहिए। आज्ञा का पालन करना चाहिए।''

वहाँ कुंजवन से इतने सारे लोगों के विचार-विमर्श का निर्णय 'आचार्य श्री सुनील सागरजी' थे और यहाँ मुंबई में खार के मंदिर में उनकी स्वीकृति पर अपनी स्वीकृति की मुहर लगाने के लिए वे अकेले थे। उनके पास विचार-विमर्श के लिए कोई नहीं था। गुरु आदेश के पालने में उन्हें किसी के हस्तक्षेप की आवश्यकता भी नहीं थी। बचपन के संस्कार रूप में पाए दृढ़ आत्म विश्वास व इस्पाती इरादों ने भावनाओं को स्वयं पर हावी नहीं होने दिया।

उन्होंने क्षण भर में अपने को जाँचा, परखा, सोचा, देखा कि अंकलीकर परम्परा के इस महान महत्व के व सबसे बड़े उत्तरदायित्व को वे सफलतापूर्वक सुचारू रूप से निर्वहन/संचालित कर पाएँगे? एक क्षण को वे अतीत में चले गए। मात्र तीन वर्ष की उम्र में आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज को देखकर मुनि बनने की जिद ने एक नौसीखिये श्रावक को मुनि बना संयम के पद पर आरूढ़ कर दिया। उसी दृढ़ संकल्प क्षमता व त्वरित निर्णय लेने की मेधा शक्ति ने एक साथ मनो मस्तिष्क के सहस्त्रों द्वारछिद्र खोल दिये।

वे सोचने लगे कि जब मुझमें व हर जीव में भगवान बनने की क्षमता है, भगवत्ता पाने के सारे गुण लक्षण मौजूद हैं तो फिर इस भगवत् प्रसादी स्वरूप प्राप्त महान कार्य के लिए क्या सोचना? गुरु दक्षिणा देने का सुयोग बिना माँगे मेरे पास चला आया है। मुझे प्रमुदित मना गुरु दक्षिणा देना है। जब गुरुवर इतनी अधिक रूग्णावस्था में भी कुशलतापूर्वक इस पद का नेतृत्व करते रहे तो मैं तो एक स्वस्थ, अदम्य क्षमता व पौरूष वाला श्रमण उनका युवा शिष्य हूँ। मुझमें आकाश के तारे तोड़ लाने, सागर में आग लगा देने, रेगिस्तान को हरिया कर देने, चट्टानों की छाती फोड़ निर्झर बहा देने, तूफानों का रास्ता मोड़ देने जैसी अनेकों अद्भुत क्षमताएँ हैं। युवाओं ने ही दुनिया को सर्वश्रेष्ठ दिया है। आज देश व दुनिया भौतिक विकास के जिस अविश्वसनीय पायदान पर खड़ी है वह युवाओं की ही देन है। फिर गुरु आज्ञा का यह 'उपहार' मेरे व अन्यान्यों के जीवन के लिए 'महाउपकार' का कारण बने। यह गुरु पट्टाचार्य पद का महा मांगलिक मेरे जन्म जन्मों के पुण्योदय से बिना माँगे मेरा व जग का कल्याण करने मेरे पास चला आया है। कमान से छूटा तीर व हाथ से गया वक्त वापस कभी नहीं लौटता। गुरुदेव के वात्सल्य भरे आशीर्वाद से हर असंभव संभव होता चला जाएगा। इस बहाने गुरुवर ने हमेशा मेरे साथ रहते हुए मुझ अनाथ को सनाथ बनाने का कितना बड़ा उपक्रम कर दिया। जब वे थे तब तो मैं सनाथ था ही और उनकी अनुपस्थिति ने चारों पट्टाचार्यों का छत्र वितान मेरे शीश पर तान अहो! भाग्य मुझे सनाथ बना दिया।

अब ज्यादा बिना किन्हीं विचार वीथिकाओं में उलझने के गुरु दक्षिणा देने के संकल्प के साथ आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने 25 दिसंबर 2010 की पावन पवित्र शुभ बेला में पट्टाचार्य पद की 'स्वीकृति' पर अपनी अंतिम मुहर लगाकर आचार्य तपस्वी सम्राट श्री सन्मतिसागरजी के बाद पट्टाचार्य कौन? प्रश्नचिह्न को सदा-सदा के लिए विराम दे दिया। उनके हृदय से अनहद नाद निकल रहा था 'शुद्धोहं' 'सिद्धोहं' 'शाश्वतोहं'।

गुरुदेव के महान उपकारों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने के लिए उनके पास शब्द नहीं थे।

पट्टाचार्य पद चिंतन

अनायास उनके हाथ जुड़ गए, आँखें बंद हो गई और वे अपने महान गुरुदेव का स्मरण करने लगे। सहसा उन्हें आभास हुआ ''आचार्य गुरु आशीर्वाद दे रहे हैं व कह रहे हैं, मुझे तुम पर पूरा भरोसा है। तुम इस पट्टाचार्य पद का सुचारू रूप से सफलतापूर्वक निर्वहन करोगे। आगे बढ़ो। नया सबेरा तुम्हारा इंतजार कर रहा है।''

उन्हें आश्चर्य हुआ कि अभी तक पट्टाचार्य पद को लेकर उनके मन में जो उथल-पुथल मची हुई थी, शांत हो गई थी। मन में असीम शान्ति व संतोष था।

गुरुदेव की हजारों हजार यादों का सैलाब उनके हृदय में उमड़ने लगा और उस पर तैरती उनकी अपने प्रति लाखों

लाख उम्मीदें। किन्तु यह क्या? गुरु वियोग के दारूण दुःख से दुःखी वे पुनः भाव विह्वल हो गए। गुरु समाधि से रिक्त, परम्परा का यह शिखर पट्टाचार्य पद मुझे नहीं चाहिये। मुझे तो मात्र गुरुवर चाहिये। सच कितना भी ज्ञानी, विरक्त, विवेकी हो, चाहे वह साधु ही क्यों न हो, दुःख के दारूण क्षणों में सब कुछ एक बाजू धरा रह जाता है। सब कुछ भूल जाता है।

आचार्य श्री सुनीलसागरजी जैसे विज्ञ-प्रज्ञ पुरुष के साथ भी कुछ ऐसा ही हो रहा था।

अब तपस्वी सम्राट आचार्य गुरुवर श्री सन्मतिसागरजी कहाँ? वे तो अपनी चिरस्मरणीय यादें समय की शिला पर सदा के लिए अंकित कर अपनी नश्वर देह त्याग, अनंत में विलीन हो गए थे। सच यही था। एक का अंत दूसरे का प्रारंभ। अंत-प्रारंभ, सुख-दुःख, मिलन-बिछोह, धूप-छाँह एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। जब तक तरु शाखों से पीत पड़े पात नहीं झड़ते, तब तक पेड़ पर नई कोपलें नहीं फूटतीं। नया सृजन पुराने के विसर्जन से ही शुरू होता है। दिन भर का तप्त सफर तय कर जब तक सूर्य संध्या को अस्ताचल गामी नहीं होता, तब तक हमें नए-नए सबेरे के नए बाल रवि की लोल लाली के दर्शन नहीं होते। यह प्रकृति का अटल सत्य है। परिवर्तन ही जीवन की प्रगति का प्रतीक व नियम है किन्तु 'नवता' प्राप्त कर उस नवीनता का निर्वहन कड़ा संघर्षमय पथ है। जिस क्षण से जीवन में 'नवीनता' का अध्याय जुड़ जाता है, उसी क्षण से मनुष्य के लिए नए-नए रास्तों की खोज शुरू हो जाती है।

मंत्र वाक्य

अब आचार्य श्री सुनीलसागरजी का स्वयं के पुराने आचार्य पद की जगह उससे ऊपर 'पट्टाचार्य पद' का सामना हो रहा था। यद्यपि पुराना छूट रहा था, पर वे अच्छी तरह से जानते थे कि अतीत के कभी विस्मृत न होने वाले सुनहरे पृष्ठों की नींव पर ही यह वर्तमान का चुनौतीपूर्ण नव पद स्थापित हो रहा है और वे इस नए पद के स्वागत के लिए उद्यत थे। उन्होंने तत्क्षण संकल्प लिया कि पुरानी उपलब्धियों से प्रेरणा ले गलतियों में, दोषों में सुधार कर इस 'नव्यता' को बेहतर से बेहतर बनाना है। इसके लिए व्यक्तिगत गरिमा को बनाए रख वयम् (हम सब) की विचारधारा को और अधिक पुष्ट व विस्तारित करनी होगी। दुःख निर्णय के उस संक्रमण काल में स्वयं को संयत रख, खुद ही खुद की हौंसला अफजाई करते रह उन्होंने गुरुवर की आँखों में तैरते सपनों को साकार करने का बीड़ा उठा लिया।

उन्हें याद आया जब अंतिम बार गुरुदेव से विदाई लेकर मुंबई चातुर्मास के लिए वे विहार करने वाले थे, तब उनकी अंतिम विचार गोष्ठी का शिष्य को विदा करते हुए अंतिम वाक्य था, ''अब आगे तुम्हें ही संभालना है।'' सरल हृदय शिष्य ने गुरुवर की गूढ़-गंभीर बात को जरा भी गंभीरता से नहीं लिया। यह सोचकर कि वहाँ से मुंबई तक विहार में सारी व्यवस्था मुझे ही संभालना है, आशय जान गुरुवर की बात को आशीर्वाद मान विहार पथ पर भारी हृदय से अग्रसर हो गए। गुरुवर के लिए उस अंतिम आशीर्वाद को याद कर वे एक बार पुनः विचलित हो गए।

गुरुदेव का आशीर्वाद स्वरूप दिया वह 'मंत्र वाक्य' ''अब आगे तुम्हें ही संभालना है'' बार-बार आचार्य श्री सुनीलसागरजी के कर्ण कुहरों में गूँजायमान हो रहा था। बिना किसी को आभास दिये गुरुवर कितनी बड़ी बात कितने सहज, सरल व स्वाभाविक ढंग से कह गए। निश्चित ही उन्हें अपने मेधावी-प्रतापी योग्य शिष्य पर पूर्ण विश्वास था। उन्हें उसमें संभावनाओं का अनंत सागर लहराता नजर आता था। कुछ भी हो, उनका वह असीम वात्सल्य, मुझ पर उनके विश्वास का प्रतीक है। मैं अभागा, आज तक उन गुरुवर के 'गुरुत्व' को न समझ पाया, पर वे मुझ तुच्छ तिनके को शिखर पर शोभायमान कर गए। धन्य हैं, नमन है ऐसे उन महान गुरुवर को।

उन्होंने ठान लिया कि कुछ भी हो, गुरु इच्छापूर्ति के महायज्ञ में मुझे अपनी साधना की कितनी भी बड़ी आहुति देना पड़े, इस 'पावन मंत्र वाक्य' की पावनता यथावत् बनाए रखूँगा। मुझसे जितना भी अच्छे से अच्छा होगा, यथा साध्य

करूँगा। उनकी 'थाती' को महिमावन्त करता रहूँगा। अपनी साधना व सामर्थ्य से ब्याज सहित गुरु ऋण का मूल अंतिम साँस तक अदा करता रहूँगा।

और वे नए संकल्पों व नए विश्वास के साथ इस नई राह को अपनाने के लिए अपने को पूर्ण रूपेण तैयार करने में जुट गए।

नया क्षितिज उनके सामने था। व्योम के उस पार से सूरज झाँक रहा था। उनकी कल्पना में कल-कल करती बहती गतिमान गाँव की नदी साकार हो उठी। उनके मन ने कहा- गति ही जीवन है। परिवर्तन ही उन्नति का कारण है। इसे स्वीकार करने वाला ही उन्नति के शिखर पर पहुँचता है।

पट्टाचार्य पद घोषणा
26.12.2010 कुंजवन मुंबई गुलालवाड़ी

25 दिसंबर 2010 का वह उदास दिन, कुंजवन, उदगाँव के लिए तो बड़ा विषादपूर्ण था। सूरज उगा था पर उदास। उसकी लाली में ऐसा लग रहा था कि कुंजवन/उदगाँव के उन महायोगी प.पू. तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के वियोग में रोए उन साधुओं एवं भक्तगणों तथा रात-भर रोई प्रकृति की आँखों की ललाई थी।

इधर नाविक के बिना नाव जैसी हालत सकल श्रमण संघ की थी। आज विरक्तियों के हृदयों में भी गुरु अभाव (रिक्तता) में दुःखों के ज्वार उठ-उठ कर मचल रहे थे। सभी की एक सी दशा थी। सभी का दुःख एक था। कौन किसको ढाँढस बँधाए। सबको लगने लगा- गुरुवर की समाधि से आवाज आ रही है, ''विरक्त दिगम्बर संतों को रोना व दुःख मनाना शोभा नहीं देता। आत्मा तो अजर-अमर है। यह दुःख कर्म बन्धन का कारण है। मेरा मोह छोड़ो व आगे की सोचो। नया क्षितिज खुला है। नया सूर्य उदय होने वाला है। उसका स्वागत करने आगे आओ।''

समस्त मुनिसंघ, संघपतियों व वहाँ उपस्थित गुरुभक्तों के हृदय में ऐसा अहसास/आभास हो रहा था कि क्या पता आचार्य श्री सुनीलसागरजी की सहमति मिलती है भी कि नहीं। इतने बड़े संघ के साथ वे रहना चाहेंगे या नहीं? चतुर्विध संघ ऊहापोह की स्थिति में था किंतु आचार्य गुरु के बाद चतुर्थ पट्टाधीश (अंकलीकर परम्परा) के लिए काफी निषेध के बाद आचार्य श्री सुनीलसागरजी की मुंबई से मिली सहमति, स्वीकृति ने उन निराशा भरे दारूण दुःख के पलों में उन सबमें आशा की किरण खींच दी। समस्त चतुर्विध संघ ने उन्हें एक योग्य खिवैया के रूप में देखा। जीवन की अनित्यता से नित्य की व्यवस्था के लिए उन्होंने एक ऐसे युवाचार्य को चुना था जो युवा होने के बावजूद भी तपोवृद्ध, ज्ञानवृद्ध, अनुभव वृद्ध, मनोजयी साधक (मौन साधना), महाशांत, प्रकृति से व्यवहार कुशल संत हैं। वे सब संतुष्ट भी थे और उनके लिए यह सर्वविदित था कि आचार्य श्री सुनीलसागरजी के संघ सेव्य, श्रमण सेव्य, जगत सेव्य, स्थिर बुद्धि जैसे अनेकों विशिष्ट विशिष्ट गुणों के कारण आचार्य भगवन गुरुदेव श्री सन्मतिसागरजी उन्हीं में भावी पट्टाचार्य का अक्स देखते थे। इनके लिए पट्टाचार्य पद की कसौटी पर वे ही खरे उतरते थे।

25 दिसंबर 2010 का सूरज दूसरे दिन नया संकल्प, नया संदेश लेकर आने का आश्वासन देकर ढल गया क्योंकि सूर्यास्त के बाद अंधेरी रात की कालिमा हरने उसे दूसरे दिन पुनः उगना ही है।

कुंजवन-मुंबई पट्टाचार्य पदारोहण

25 दिसंबर की दुःखद सर्द रात बीत गई। 26 दिसंबर का सूरज नई उष्मा, नई ऊर्जा व नई रोशनी लेकर प्राची से झाँक रहा था। समय ने साधकों के घावों पर मरहम लगा उनके गुरु वियोग के दुःख को थोड़ा कम कर दिया था। पल-छिन घंटा-घड़ी करते हुए आज गुरु अभाव का तीसरा दिन था। कुंजवन भी वही था, स्थान भी वही था, आकाश, पेड़,

पौधे, पक्षीगण सभी वहीं थे। चतुर्विध संघ भी वहीं था और तो और जिनालय भी वही था। नहीं थे तो उनके वे महागुरु जिनके बिना ये सब कुछ किसी को नहीं सुहा रहे थे। वे सब उदास हृदय व उदास आँखों से सुनहरे भविष्य का इंतजार कर रहे थे।

26 दिसंबर 2010 को कुंजवन उदगाँव में गुरुवर की स्मृति में दोपहर 3 बजे विशाल श्रद्धांजलि सभा आयोजित की गई जिसमें दूर-दूर से आए विशाल जनसमूह, गुरु संघ, 40 पिच्छी, देश के कोने-कोने से आए श्रेष्ठीगण, विद्वत् जन व पंडितजन उपस्थित थे। इस श्रद्धांजलि सभा में सभी की सहमति से प.पू. आचार्य श्री आदिसागर अंकलीकर परम्परा के चतुर्थ पट्टाधीश के पद पर युवा आचार्य श्री सुनीलसागरजी के नाम की घोषणा शाम के ठीक 4 बजे की गई। उपस्थित जनसमूह ने जोरदार जयकारों व तालियों की गड़गड़ाहट से इसका अनुमोदन किया व स्वीकृति दी। आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के साथ चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी की जयकारों से धरती-गगन गूँज उठे।

इसी सभा में चारों संघपतियों (सौ. सज्जनबाई ज्ञानचंद मिंडा मुंबई, श्री सुमेरलाल मदनलाल चूड़ीवाल कलकत्ता, श्री अजित रिखबदास कासलीवाल सेलम तथा कमल शांतिलाल मुंबई, जो वहाँ उपस्थित थे) ने यह प्रतिज्ञा की कि 'जैसे हम गुरुदेव आचार्य श्री सन्मतिसागरजी की सेवा, भक्ति, व्यवस्था करते थे, वैसे चतुर्थ पट्टाचार्य (पट्टाधीश) आचार्य श्री सुनीलसागरजी महाराज व संघ की सेवा-व्यवस्था जीवन पर्यन्त करते रहेंगे।'' धर्मानुरागियों ने इस 'घोषणा' का भी करतल ध्वनि से जोरदार स्वागत किया।

इसी समय गुलालवाड़ी मुंबई में 26 दिसंबर 2010 को आचार्य श्री सुनीलसागरजी के सान्निध्य में चल रही 'गुरुदेव' के प्रति आयोजित श्रद्धांजलि सभा में सभा संचालक श्री मयंक संखेसरा को कुंजवन से मोबाइल पर भरत मिंडा ने उक्त घोषणा की जानकारी दी।

कुंजवन की गतिविधियों से अनजान आचार्य श्री सुनीलसागरजी के सान्निध्य में चल रही इस श्रद्धांजलि सभा के संचालक श्री मयंक संखेसरा को जैसे ही कुंजवन ऊदगाँव से मोबाइल पर श्री भरत मिंडा द्वारा यह जानकारी मिली कि वहाँ श्रद्धांजलि सभा में अंकलीकर परम्परा के चतुर्थ पट्टाधीश के रूप में आचार्य श्री सुनीलसागरजी के नाम की घोषणा हो चुकी है, उनके हर्ष का पारावार नहीं था। उन्होंने तुरंत ही बिना किसी को कुछ बताए माइक पर यह समाचार उपस्थित जनसमूह को सुना दिया। चारों ओर चतुर्थ पट्टाचार्य आचार्य श्री सुनीलसागरजी की जयजयकार होने लगी।

तुरंत ही गुलालवाड़ी के ट्रस्टी जमनालाल हपावत, रमणलाल दोशी, अशोक दोशी, रमेशभाई जैन आदि तथा मुंबई के वरिष्ठजन डॉ. सुधीन्द्र जैन, किरीट दोशी, नाथूलाल नावडिया, अजीत गाँधी, भरत काला आदि समाज के श्रेष्ठीजनों ने श्रीफल अर्पित कर आचार्य श्री से पट्टाचार्य पद स्वीकार करने की अनुनय-विनय की। अचानक प्राप्त इस समाचार से आचार्य श्री हतप्रभ अवाक एवं किंकर्तव्यविमूढ़ थे। उन्होंने कल्पना भी नहीं की थी कि इस पद के लिए कुंजवन में इतना त्वरित निर्णय ले लिया जाएगा। उन्होंने तो यह सोचकर अपनी स्वीकृति दे दी थी कि संभवतः कुंजवन से उनकी तरह अन्यान्य से भी ऐसी ही सहमति माँगी गई होगी। गुरु वियोग की दुःखद घड़ी में उन्होंने अभी तक इस गरिमामय पद की न तो जिम्मेदारी के बारे में सोचा था न ही इस पद के लिए मानसिक रूप से अब तक स्वयं को तैयार किया था।

अचानक हुई उनके नाम की इस घोषणा ने उन्हें असमंजस की स्थिति में ला दिया। क्या करे क्या न करे की ऊहापोह वाली स्थिति में वे आ गए। इधर समाज उनसे पट्टाचार्य पद की स्वीकृति देने के लिए बार-बार आग्रह कर रहा था और उधर वे मौन मंचासीन थे। कुछ देर के लिए पूरी सभा में सन्नाटा छा गया। आचार्य श्री का उत्तर सुनने के लिए बेताब जनसमूह के लिए एक-एक पल काटना दूभर हो रहा था।

भरत काला के पुनश्च अनुमोदन निवेदन पर आचार्य श्री को अपना मौन तोड़ना ही पड़ा। उन्होंने बड़ी सटीक व

मार्के की बात कही। उन्होंने कहा- ''मैं आचार्य आदिसागर (अंकलीकर) परम्परा का साधु हूँ। जब उनके नाम के पट्ट पर बैठूँगा तो उनका भी नाम लूँगा ही। यदि उनके नाम या आचार्य पद के संबंध में किसी को कुछ आपत्ति हो तो अभी बता दें ताकि मैं निर्णय कर सकूँ कि पट्ट ग्रहण करना है या नहीं। गुरुदेव आचार्य श्री सन्मतिसागरजी (तृतीय पट्टाचार्य) को इस विषय में बहुत परेशान किया गया है। यदि मुझे भी परेशान करना हो या किसी को इस संबंध में कोई आपत्ति हो तो अभी इसी धर्मसभा में बताएँ। मैं इस पट्ट पर बैठकर आचार्य श्री आदिसागरजी अंकलीकर का नाम डंके की चोट पर लूँगा।

'नो ऑब्जेक्शन... नो ऑब्जेक्शन...' कह लोग बड़े शांत भाव से आचार्य श्री के मुखारविंद को देखते हुए उनका उत्तर सुनने को व्यग्र थे। तब आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने कहा- ''यह मेरे गुरुदेव की आज्ञा है इसलिए मुझे स्वीकार करना होगा।'' दोनों हाथ जोड़कर उन्होंने कहा ''चतुर्थ पट्टाचार्य' का यह भार मैं स्वीकार करता हूँ।'' जिस प्रकार जल के बिना नदी का अस्तित्व संभव नहीं, सूर्य के बिना किरणों का कोई स्थान नहीं और चन्द्र के बिना चन्द्रिका नहीं छिटक सकती ठीक वैसे ही आचार्य श्री आदिसागरजी (अंकलीकर) के नाम बिना इस 'पट्ट' या 'पट्टाचार्य पद' का अस्तित्व व कोई महत्व नहीं। इस प्रकार उनके अंतर की भावभूमि से अपने दीक्षा गुरु के प्रति फूटा आदर सम्मान व श्रद्धा का निर्झर वाणी के माध्यम से फूट प्रवाहमान हो गया जिसमें उनके साथ-साथ उपस्थित समूचा जन समूह आप्लावित हो भाव विभोर हो गया। और उस अध्यात्मिक समूह जगत के भास्कर ने अपनी भास्वर वाणी को विराम दे दिया।

बाहर तालियों की गड़गड़ाहट व जयकारों से वातावरण गूँज रहा था और इधर एक महायोगी फिर से मौन हो अंतर की भावधाराओं में डूब गया था।

संचालक महोदय ने पुनः माइक संभाला और श्रद्धांजलि का कार्यक्रम प्रारंभ हो गया।

शिष्य ने भी शब्दांजलि के कलशों से गुरुवर को श्रद्धांजलि अर्पित की। हजारों हजार आँखें देख रही थीं 'चतुर्थ पट्टाधीश' परम्परा के तृतीय पट्टाधीश को नयनों में नीर भरे भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित कर रहा था। हृदय का दीप जलाकर सांध्य आरती उतार रहा था। टीवी चैनल प्रसारित कर रहे थे- ''अंकलीकर परम्परा के चतुर्थ पट्टाचार्य पद पर एक और सूर्य आचार्य श्री सुनीलसागरजी।'' पत्र-पत्रिकाओं ने भी इस न्यूज को विशेष न्यूज के रूप में छापा- ''आचार्य श्री सुनीलसागरजी बने अंकलीकर परम्परा के चतुर्थ पट्टाधीश।'' 27 दिसंबर 2010 के अखबारों में हम आपने सबने यह सुखद समाचार पढ़ा। मैं सोच रही थी कौन है खुशनसीब योग्यतम गुरु शिष्य श्री सुनीलसागरजी महाराज? जिन्हें पट्टाचार्य पद मिला।

(लेखकीय : मुझे बड़ा गर्व है कि उन्हीं महान गुरु तपस्वी सम्राट की अक्षय प्रेरणा व आशीर्वाद से उनके ही मार्गदर्शन जैसा सौभाग्य प्राप्त कर संतों की जीवन गाथा के लेखन के रूप में अंकलीकर परम्परा के प्रथम पट्टाचार्य प.पू. आचार्य आदिसागर अंकलीकर की जीवन गाथा का सृजन किया और आज उन्हीं के परम प्रिय आज्ञाकारी शिष्य परम्परा के चतुर्थ पट्टाचार्य प.पू. श्री सुनीलसागरजी की जीवन गाथा के वर्णन में संलग्न हूँ। कहाँ मैं दर्शन की प्यास लिए चतुर्थ पट्टाचार्य के श्री चरणों में पहुँची, पता नहीं कब? कैसे? उन महातपस्वी का अप्रत्यक्ष आशीर्वाद व प्रेरणा प्राप्त हो गई और रुकी पड़ी मेरी कलम पुनः चल पड़ी।)

कुंजवन की ओर विहार

27 दिसंबर की सुबह रोज की तरह आज भी चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी तीन बजे उठ गए। चौबीसी को नमन वंदन कर अंकलीकर परम्परा के 'त्रिमूर्ति' पट्टाचार्य पूज्य गुरुवर आ. श्री सन्मतिसागरजी, आ. श्री महावीरकीर्तिजी

व दादागुरु आचार्य श्री आदिसागर (अंकलीकर) को नमन वंदन करते हुए मन ही मन प्रार्थना की- ''हे महान गुरुगण! यह मेरी परीक्षा की घड़ी है। मुझ नौसीखिये को आपका पट्ट पद दिया गया है। मुझे आशीर्वाद दो, ज्ञान दो, शक्ति दो, पात्रता दो- ताकि धर्म प्रभावना करते हुए इस श्रमण परम्परा के पट्ट पद की गरिमा यथावत बनाए रखूँ तथा अपनी साधना और पुरुषार्थ से संभव हो सका तो इसे 'महापट्ट' बना सकूँ। इसके बाद वे नित्य क्रियाओं में लग गए।

आज सूरज समूची सृष्टि के लिए सोनेरी किरणों की सौगात लेकर आया था। जो धरती पर अवतरित तेजोदीप्त नव आभा कांति युक्त, महाविज्ञ महापुरुष चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी का अपनी स्वर्ण रश्मियों से मंगल अभिषेक कर रहा था। पक्षीगण इस नव प्रभात के प्रभाकर की प्रभातियाँ गाकर प्रशस्ति गान कर रहे थे। शीतल मंद पवन दिशि-दिशि को संदेश दे रही थी कि विश्व का कल्याण करने वाले अंकलीकर परम्परा के चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी मन की शुद्धि से श्रेष्ठ तीर्थ सदृश, तन की समता से श्रेष्ठ शास्त्र समान व सदाचार से श्रेष्ठ देव तुल्य पूज्य हैं।

इधर प्रकृति उनका स्वागत गान करते नहीं थक रही थी और उधर सबेरे की पहली किरण के साथ बधाई संदेशों और बधाई देने आने वालों का तांता लग गया। मुंबई से भी व देश के कोने-कोने से आने वाले भक्तों की कतार लग गई। आचार्य श्री के समाधि से लेकर श्रद्धांजलि के समस्त कार्यों को पूर्ण कर कमलजी कुंजवन से, मुंबई गुलालवाड़ी पट्टाचार्य श्री के प्रथम दर्शनार्थ आए। वंदन-अभिनंदन के बाद उन्होंने कुंजवन के सारे समाचार विस्तार से गुरुदेव को दिये। इधर राजस्थान के नरवाली, खमेरा व उदयपुर में गुरुभक्त श्रावकगण जो कुंजवन में गुरुदेव की समाधि व श्रद्धांजलि सभा में सम्मिलित होने आए थे, कुंजवन से सीधे मुंबई आकर सभी ने चतुर्थ पट्टाचार्य के रूप में श्री सुनील सागरजी की पूजा वंदना कर उनसे आशीर्वाद प्राप्त किया।

सन् 2010 के 28 दिसंबर को अजित कासलीवाल, कीर्तिवीर मिंडा, विश्वसेन मिंडा, भरत मिंडा, महेन्द्र बंडी, कमल कासलीवाल, अनिल दगड़े, कल्याण तलवाड़िया आदि श्रावक श्रेष्ठीगणों ने गुरु चरण निश्रा में आकर विधिवत् श्रीफल अर्पित कर कुंजवन पधारने की विनती करते हुए कहा कि चूँकि आप आचार्य श्री सन्मतिसागरजी गुरुदेव के उत्तराधिकारी माने गए हैं, अतः उनके चतुर्विध संघ की भावना के अनुसार हम आपसे निवेदन करते हैं कि आप शीघ्रातिशीघ्र कुंजवन पधारकर संघ को संभालिए। संघ बड़ी व्यग्रता से आपका इंतजार कर रहा है।

20 से 24 जनवरी 2011 अंधेरी मुंबई व 6 से 8 फरवरी वसई मुंबई में आचार्य श्री के सान्निध्य में प्रतिष्ठा कार्यक्रम पूर्व में ही घोषित हो जाने के कारण वे इतने शीघ्र कुंजवन जाने के पक्ष में नहीं थे। किंतु श्रावकों ने कुछ महत्वपूर्ण तथ्य व तर्क प्रस्तुत किये। तब कुंजवन स्थित पिच्छीधारियों की परिस्थितियों का विचार कर आपने शीघ्र ही कुंजवन के लिए विहार करने की स्वीकृति दे दी।

30 दिसंबर 2010 गुलालवाड़ी से आपने सुबह अचानक विहार कर दिया। 31 दिसंबर को दादर में रात्रि विश्राम कर 1 जनवरी 2011 को आप पार्ला पहुँचे। नववर्ष में नव पट्टाचार्य की मंगल कामना के लिए समाज ने वहाँ मंदिर में शांति विधान रखा।

पट्टाचार्य के पद में 2 जनवरी 2011 को गोरेगाँव में आपका भव्य मंगल प्रवेश हुआ। दोपहर दो बजे से विट्ठलभाई पटेल हॉल में विशाल स्तर पर गुरुदेव श्री सन्मतिसागरजी की श्रद्धांजलि सभा, पट्टाचार्य का पट्टाभिषेक व पिच्छी परिवर्तन समारोह कार्यक्रम भारी जनसमुदाय की उपस्थिति में संपन्न हुआ। चतुर्थ पट्टाचार्य का इस अवसर पर पाद प्रक्षालन श्री बसंतीलाल किकावत, पिच्छी भेंट श्री पंकज सवाईलाल जैन (जुहू) ने किया तथा पुरानी पिच्छी पारस जैन (टिमरूआ) परिवार ने प्राप्त की। मंदिर के मुख्य ट्रस्टी श्री अशोक शाह, सरदारीलालजी तथा प्रतिष्ठाचार्य पं. प्रदीप जैन 'मधुर' ने पट्टाचार्य पद की अनुमोदना करते हुए गुरुवर आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित की। कार्यक्रम में मुंबई के समस्त उपनगरों व दूर-दराज के सहस्त्रों धर्मानुरागी बंधु उपस्थित थे। आचार्य (पट्टाचार्य) श्री सुनीलसागरजी

ने भी भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए एक स्वरचित काव्यांजलि अपने पूज्य गुरुदेव को अर्पित की।

सभा समाप्त होते ही सभास्थल से ही आकस्मिक रूप से अंधेरी की ओर आपका विहार हो गया।

कुंजवन प्रवेश

आचार्य श्री सुनीलसागरजी सोच रहे थे कि जिस तरह समय पर बरसने वाले मेघ खेतों में फसलें लहरा देते हैं ठीक वैसे ही क्षेत्र, काल व परिस्थितियों के अनुसार निर्णय लेकर व्यक्ति को आगे बढ़ना चाहिये। आशीर्वाद के रूप में गुरुवर ने पट्टाचार्य पद का जो गुरुतम उत्तरदायित्व उन्हें सौंपा है, उसके निर्वहन के लिए उन्हें स्वयं के प्रति कठोर होना पड़ेगा। गुरु वियोग में जैसी यहाँ उनकी स्थिति है वैसी ही स्थिति कुंजवन में गुरु परिवार की भी होगी। सबसे पहले तो वे एक साधारण गुरु शिष्य के नाते गुरु भाई-बहनों से मिलना चाहते थे। सबके साथ अपना दुःख बाँटना चाहते थे। उसके बाद ही वे पट्टाचार्य के रूप में व्यग्रता से उनका पल-पल इंतजार कर रहे गुरुवर के चतुर्विध संघ के प्रति आभार व्यक्त कर उन्हें विश्वास दिलाना चाहते थे कि वे उन सभी में से ही उनकी तरह एक गुरु शिष्य हैं। हमने सबने मिलकर ही अब तक इस 'पट्ट' पद की मान, मर्यादा व सम्मान की रक्षा करते हुए आत्मानुशासन व धर्मानुशासन में रह अहिंसामयी विश्वधर्म की रक्षा की है व आगे भी इसी तरह सभी मिलकर करते रहेंगे। मैं आप में से ही हूँ, अलग नहीं।

इस प्रकार आत्मकल्याण के लिए संयम धारण करने वाले उन युग पुरुष ने सबके कल्याण का युगान्तकारी चिन्तन करते हुए भविष्य में मुंबई से मिलने वाली उपलब्धियों, पंचकल्याणकों को वर्तमान के परिप्रेक्ष्य में गौण कर मुंबई से कुंजवन की ओर त्वरित विहार कर दिया।

2 जनवरी 2011 गोरेगाँव से विशाल धर्मसभा को संबोधित कर सभास्थली से ही आपने अंधेरी के लिए प्रस्थान कर एक महान आदर्श उपस्थित किया। 3 जनवरी 2011 प्रातः सूर्य की पहली किरण के साथ ही जीवन और जगत के लिए नया संदेश ले चल पड़े कल्याण की नई राह पर। 28 जून 2010 को कुंजवन को छोड़ जिस रास्ते से चलकर 22 जुलाई 2010 को वे गोरेगाँव, मुंबई पहुँचे थे। उसी रास्ते से मात्र छह माह के अंतराल में पुनः कुंजवन की ओर चल पड़े थे। कैलेंडर में वर्ष बदल गया था। तब भी गुरु आज्ञा व आदेश के पालन के लिए उनका साक्षात आशीर्वाद ले मुंबई की ओर आप आगे बढ़े थे। तब आत्मकल्याण के साथ विश्व कल्याण व धर्म प्रभावना आपका प्रमुख उद्देश्य था। आज परिस्थितियाँ, कर्तव्य, उद्देश्य और उत्तरदायित्व सब कुछ बदल गए थे। तब गुरु की उपस्थिति में निर्भय हो आत्मसाधना के मार्ग पर बढ़ रहे थे और आज गुरु के उत्तराधिकारी के रूप में 'गुरुगुण सम्पत्ति को संभालने, समेटने, व्यवस्थित करने के लिए एक आज्ञाकारी बेटे की तरह, एक सुयोग्य शिष्य अपने कर्तव्य पथ पर अग्रसर था। तब भी मार्ग में संघर्ष, बाधाएँ व चुनौतियाँ थी लेकिन तब गुरु की गुरुता के आगे वे राई रत्ती सी लग रही थी और आज गुरु के अभाव में दूसरे रूप में उन्हें उनका सामना करना था। आचार्य श्री सुनीलसागरजी जैसे युगान्तकारी, युग सर्जक, युवा संत, जिनके स्वभाव में निर्मलता व जीव मात्र के प्रति मैत्री भाव हो, जिनके चारित्र में त्याग, शीलता, सत्यवादिता व सुशीलता हो, निरालस्य जिनकी जीवन शैली नियमित हो तथा जिनके इस्पाती इरादे हों, हौसले बुलंद हों, उनके लिए हर असंभव भी संभव होता चला जाता है। वे साहस, बुद्धि, विवेक, ज्ञान, वीरता व कार्य के प्रति सन्नद्धता के साथ अपने कर्तव्य पथ पर अग्रसर थे।

एक दिन में 25-30 कि.मी. की पदयात्रा करते उनका चरण चक्रमण जारी था। गुरु संघ से मिलन ही अब उनका एकमेव अर्जुनी लक्ष्य था। सतत पदयात्रा की थकान, ऊपर से शीत का भयंकर प्रकोप, पाँवों में पड़े फफोले जैसी बाधाएँ व अनपेक्षित जगह रात्रि विश्राम इस सिंहवृत्ति पुरुषार्थी संत व्यक्ति को किंचित भी विचलित नहीं कर सके। पथ की विघ्न बाधाएँ ही उस पथिक के लिए पाथेय बन गई थी। ऐलक श्री मुदितसागरजी भी उनके साथ थे।

अंततः ये निष्काम साधक अपनी अथक साधना से 432 कि.मी. की पदयात्रा मात्र 17 दिन में पूरी कर अपने साध्य तक पहुँच गए। 19 जनवरी 2011 को आपने जयसिंगपुर में श्री संजय घोड़ावत के यहाँ बंगले पर आहार चर्या कर तथा मंदिरजी में रात्रि विश्राम कर इस सत्रह दिन की सतत जारी यात्रा को विराम दिया।

20 जनवरी 2011 की प्रातःकालीन मंगल बेला में 5 बजे 108 ध्वजधारी युवकों, 108 केसरिया वस्त्र में कलश धारी महिलाओं तथा मुंबई, नातेपूते, सोलापुर, अडूल, औरंगाबाद, पूना व देश के कोने-कोने से पट्टाचार्य के अभिनंदन में पधारे धर्मप्रेमी मुनि भक्तों की अगवानी में संगीतमय वातावरण के साथ तथा मुनिसंघ की भाव प्रवण अगवानी में विशाल जुलूस के साथ कुंजवन में आपका भव्य प्रवेश हुआ।

सर्वप्रथम आपने 'गुरु निषधि' का भक्ति पूर्वक दर्शन किया। गुरु के प्रति श्रद्धा के अतिरेक से हृदय की वैशिष्ट्यता नैन नीर बन फूट पड़ीं। अश्रुनीर से गुरुपाद प्रक्षालन कर कुछ क्षण आप यूँ ही मौन, आँखें बंद किये बैठ प्रार्थना करते रहे। ऐ गुरुदेव! आपने मुझे दीक्षा, शिक्षा व वात्सल्य देकर इतना योग्य बनाया, मेरा मुक्ति मार्ग प्रशस्त किया और आपके इस पट्ट पद को संभालने की क्षमता भी आपने ही मुझमें भरी जिसे मैं संभालने जा रहा हूँ। आप मुझे साहस दो, आशीर्वाद दो, विवेक दो, सूझ व समझ दो ताकि इस पद की मान-मर्यादा व सम्मान की रक्षा करते हुए इसकी ख्याति दिगदिगन्तों तक पहुँचा सकूँ। तत्पश्चात धीरे से उठे व सभी जिन मंदिरों के दर्शन कर जिनाभिषेक देख अपने पावन नयन धन्य किये। पिछली बार की तरह इस बार भी विहार से आकर संघस्थ समस्त गुरु भाइयों-बहनों से मिले। आज उन्हें पहली बार अनुभव हुआ कि गुरु के सान्निध्य में मिलन की खुशी व अभाव में 'मिलन में दुःख' क्या होता है। दोनों ओर मिलन की आतुरता व व्यग्रता तो थी पर उदासी के लिबास में लिपटी हुई।

वे मिले, सबसे मिले, एक-एक से मिले, गुरु परिवार का उनके सहित प्रत्येक सदस्य मौन था, वे छलकती आँखें, वे पनियाली आँखें ही उन सबके हृदय की गुरु वियोग की पीड़ा व्यक्त कर रही थी। सबके उदास चेहरे उनकी भाव विह्वलता दर्शा रहे थे। पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी को देखते ही वे स्वयं को संभाल नहीं पा रहे थे। बार-बार आँखें भर आ रही थीं।

आचार्य श्री ने सोचा, ''मेरा सबसे बड़ा व पहला काम तो इन गुरुवियोग में दुःखी विरक्तियों के हृदय से मोह व राग का पर्दा हटाना है।'' संसारी व हम वीतरागी, गृह त्यागी संन्यासियों की मनोदशा में बड़ा अंतर है। संयोग-वियोग, जीवन-मरण प्रकृति का चक्र है जो सबके लिए एक सा है पर आत्मा तो सबकी अमर है। अतः हमें दुःख को भूल विवेक पूर्वक प्रवृत्ति करना है ताकि कर्मबंध न हो। ''अमरस्वरूपोहं''।

पट्टाचार्य पद कुंजवन में

20 जनवरी 2011 को मुनि मुदितसागर व क्षुल्लक मलयसागर की दीक्षा हुई। इसी दिन दोपहर में पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी के अभिनंदन में एक विराट धर्मसभा का आयोजन हुआ। हजारों धर्मानुरागी श्रावक-श्राविकाओं की उपस्थिति में 20 जनवरी 2011 को महाराष्ट्र के कोल्हापुर जिले के कुंजवन उदगाँव में आयोजित इस धर्मसभा में संघ के सभी समर्पित भक्तों, संघपतियों, कुंजवन के विश्वस्तों व चतुर्विध संघ ने विधिपूर्वक पादाभिषेक कर आचार्य श्री सुनीलसागरजी को पट्टाचार्य के रूप में स्वीकार कर हर्ष व्यक्त किया।

समय की नजाकत को देखते हुए आपने अपने उद्बोधन में कहा- ''पूज्य गुरुदेव से हम सबने पुरुषार्थ सिद्धि उपाय पढ़ा है। अमृताचार्य स्वामी के इस श्लोक को उन्होंने हमें कितनी-कितनी बार समझाया था।

जीवकृतं परिणामं निमित्तमात्रं प्रपद्यपुनरन्ये।
स्वमेव परिणमन्तेत्र पुद्गलाः कर्म भावेन।।

वस्तुतः यह संसारी जीव अज्ञानता व अस्थिरता वश राग मोहादि भावों का कर्त्ता बना हुआ है। जैसे जैसे ज्ञान व स्थिरता बढ़ती है, वैसे-वैसे राग-मोहादि का अभाव होता जाता है। रागादि भावों से कर्मबंध होता है। अतः रागादि भावों से बचो। क्योंकि आचार्य श्री इस गाथा के माध्यम से कहा करते थे-

''रागादिभावरहित ज्ञानस्वरूपोहम्''

आज हम सबको उनकी अनुपस्थिति 'शून्य' के दुःख से उबरने के लिए उनकी कही गाथा ही हमारे लिए रामबाण औषधि है। उनको हम अपने राग का निमित्त मान अपने कर्म बंध कर संसार परिभ्रमण बढ़ाएँ? आचार्य गुरु ऐसा कभी नहीं चाहते थे। उन्होंने स्वयं की कुछेक घटनाओं का उदाहरण भी दिया। पट्टाचार्यश्री ने सबको संबोधते हुए कहा- गुरुवर को सच्ची श्रद्धांजलि यही होगी कि हम सब विकारों से विरक्त रहें। हम विरक्ति के रूप में विवेकपूर्वक प्रवृत्ति करें ताकि कर्मबंध न हो और हमारे संन्यास का लक्ष्य सार्थक हो। पट्टाचार्य के इस ज्ञानवर्धक उद्बोधन ने संघ में नई चेतना व जागृति भर दी।

20 जनवरी को ही गुरु पुष्यामृत के उत्तम योग मुहूर्त में संघस्थ ऐलक मुदितसागरजी की मुनि दीक्षा व सूरत के ब्रह्मचारी विनोद शाह की क्षुल्लक दीक्षा पट्टाचार्यश्री ने संपन्न कराई। सविधि संस्कारपूर्वक दोनों के नाम मुनि मुदितसागर व क्षुल्लक मलयसागर रखे गए। दोनों के कुटम्बीजन पूरे कार्यक्रम में उपस्थित थे। सूरत के ब्र. विनोदजी के परिजन व परिचितों की संख्या तो दो सौ से भी ज्यादा थी।

इस प्रकार विधि-विधान से पट्टाचार्य पद संभालते ही अगले पल गुरु पद चिह्नों पर चलते हुए दो भव्यात्माओं का मुक्ति पथ प्रशस्त किया।

आज पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी ने सिद्ध कर दिया कि ज्येष्ठत्व व बड़प्पन जन्म, शिक्षा, दीक्षा से नहीं अपितु गुणों से प्राप्त होता है क्योंकि गुणों से ही गुरुता का जन्म होता है। जो गुणों में बड़ा है वही बड़ा है। जैसे दूध से बड़ा दही, दही से बड़ा घी अर्थात् इनमें घी सबसे बड़ा (श्रेष्ठ) माना जाता है। इसी प्रकार तपस्वी, मौन, ज्ञान, व्रत, जितेन्द्रिय व हित-मित मृदु वाणी जैसे महान गुणों की क्षमता ने आचार्य श्री सुनीलसागरजी को पट्टाचार्य पद तक पहुँचा महिमावन्त कर सबका सिरमौर बना दिया।

दर्शन, ज्ञान व चारित्र की सम्यकता व्यक्ति के सद्व्यवहार, विनय व विवेक से आती है। आचार्य श्री सुनीलसागरजी के इसी सम्यक् सदाचार ने गुरुपरम्परा के उनसे वरिष्ठ आचार्यों के बावजूद भी उन्हें शीर्ष पर पहुँचा दिया। शिखर पर पहुँचने के लिए संघर्षों की चट्टानों से टकराने की क्षमता अर्जित करना होती है। परिस्थितियों के झंझावातों से जूझना पड़ता है। आलोचना प्रत्यालोचना के ओलों की मार सहन करनी पड़ती है। ऐसे अनेक विघ्नों, बाधाओं की भट्टियों में तप कर कुंदन बनना पड़ता है। और अंततः उसे निरापद निस्पृही रहना पड़ता है। आचार्य श्री सुनीलसागरजी ऐसी ही निष्काम साधना के अलावों के बीच से गुजरे कुंदन हैं। अतः उन जैसे निस्पृही संत के लिए विषम से विषम परिस्थितियाँ भी कोई मायने नहीं रखतीं।

सिंहासनारोहण

23 जनवरी 2011 की सुप्रभात नवपट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी के लिए नव सौगात लेकर आई। आज के इस शुभ दिन के शुभ प्रसंग के उपलक्ष्य में श्री अर्पित मालविया (घाटकोपर, मुंबई महाराष्ट्र) ने शांति विधान किया। गुरुदेव आचार्य श्री सन्मतिसागरजी की पद्धति के अनुसार पट्टाचार्य सुनीलसागरजी के सान्निध्य में स्तोत्र, प्रतिक्रमण, भक्ति पाठ के बाद भगवती आराधना शास्त्र का स्वाध्याय हुआ।

दोपहर धर्मसभा में प्रवचन के लिए जब पट्टाचार्य श्री मंच पर पहुँचे तो उन्होंने देखा कि उनके सिंहासन की जगह

परंपरागत गुरुवर का सिंहासन सुशोभित था जिसे गुरुभक्तों ने विशेष रूप से सजाया था। यह वह सिंहासन था जिसे आचार्य श्री महावीर कीर्तिजी महाराज को नेपाल की युवराज्ञी लक्ष्मीदेवी ने उनके ज्ञान, तपस्या, चारित्र दृढ़ता, संयम व त्याग जैसे महान गुणों से अभिभूत-प्रेरित हो भारत के इस महान संत को भगवान मानते हुए उनके सम्मान में उन्हें अर्पित/भेंट किया था जो आचार्य श्री के अनुसार समस्त दिगम्बराचार्यों के सम्मान का प्रतीक था। इसे नेपाल की महारानी ने विशेष रूप से बनवाया था। आज वहाँ आचार्य श्री का सिंहासन नहीं था। पट्टाचार्य अपने सिंहासन की जगह आचार्य भगवन का सिंहासन देख कुछ क्षणों के लिए गुरु के प्रति श्रद्धातिरेक में द्रवित हो गए। उनके कुछ कहने से पूर्व ही कुंजवन ट्रस्ट के अध्यक्ष श्री सुशील पाटिल, इचलकरंजी के श्री संपत पाटनी, राजू गंगवाल, भागचंद कासलीवाल, महावीर मगदूम आदि समस्त ट्रस्टीगण तथा ब्र. मैना बाईजी व ब्र. पुष्पा बाईजी आदि समस्त विशिष्टजनों ने खड़े हो हाथ जोड़कर आचार्य श्री से सविनय भक्तिपूर्वक उस सिंहासन पर विराजित होने की आग्रह पूर्वक प्रार्थना की।

तब पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी ने अत्यंत संक्षिप्त में कहा कि यह तपस्वी सम्राट, भद्रमूर्ति मेरे गुरुदेव का सिंहासन है, मैं इसे परम पूज्य मानता हूँ। मुझमें इतनी योग्यता, पात्रता और क्षमता नहीं है। अतः मैं इस पर नहीं बैठ सकता। यह बात मैं पहले भी कह चुका हूँ।

इस पर ट्रस्ट के अध्यक्ष सुशीलजी ने विनयपूर्वक पट्टाचार्यजी से आग्रह किया कि निश्चित ही यह पट्टाधीश हमारे गुरुदेव का सिंहासन है किंतु पट्टाधीश का सिंहासन कभी खाली नहीं रखा जा सकता। अब आप गुरुदेव के आज्ञाकारी उत्तराधिकारी पट्टाधीश हैं। अतः पट्टाधीश के सिंहासन पर विराजित हो आप इसे सुशोभित कीजिये व पूज्य गुरुदेव का मंगल आशीर्वाद प्राप्त कीजिये। हमारी आपसे बारंबार यही अरज विनती है।

इन बातों को अनसुनी कर पट्टाचार्य अपनी जिद पर अड़े खड़े रहे व कहा, ''इसके बाजू में छोटा आसन लगा दीजिये, मैं उसी पर बैठूँगा।'' गुरु की जिद को मान देते भक्त श्रावकगण के साथ-साथ संघस्थ साधुगण भी जिद पर चढ़ उन्हें सिंहासन पर बैठने का आग्रह करने लगे। ''गुरुवर की गरिमा व महिमा की रक्षा व प्रभावना करने के लिए आपको इसी सिंहासन पर बैठना होगा।'' गगनभेदी जयकारों के बीच अंततः पट्टाचार्य की मर्यादा के प्रतीक उस सिंहासन पर आपको बैठना पड़ा।

इस प्रकार 24 दिसम्बर 2010 से 23 जनवरी 2011 तक गुरुदेव के अभाव में रिक्त उस सूने सिंहासन पर युवाचार्य को विराजित देख गुरुभक्तों व चतुर्विध संघ की हर्ष व दुःख के भावातिरेक में आँखों की कोरें नम हो गईं तथापि सबको संतोष था कि पूर्व पट्टाचार्यों की तरह योग्य, पात्र व विलक्षण मेधा शक्ति वाले युवा पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी अंकलीकर परम्परा की कीर्ति केतु दिशि-दिशि में फहराते आगे बढ़ाएँगे। वे सबके सब अपने चयन निर्णय के प्रति आश्वस्त थे। वे निश्चिंत थे कि युवा पट्टाचार्य के दिशा-निर्देशन में पट्ट परम्परा व सकल चतुर्विध संघ निराकुल हो धर्माराधना व आत्माराधना करते रहेंगे।

उस काष्ठ के सिंहासन पर बैठ पट्टाचार्य श्री की आँखें कुछ क्षणों के लिए खुद ब खुद मूंद गईं। उन्होंने अपने काष्ठ स्वरूप गुरुदेव को सर्वप्रथम नमन किया जो खुद काष्ठ स्वरूप संसार से तिरते हैं और औरों को भी तारते हैं। वे गुरु भवसागर में नाविक रूप में हम जैसों को सद्धर्म नाव में बैठाकर पार पहुँचा देते हैं। एक क्षण को उन्हें लगा कि वे दिव्य तेज प्रकाश पुंज में नहा गए हैं। दिव्य आभावलय उनके चारों ओर फैल गया है। हठात् उन्होंने आँखें खोली। उन्हें लगा वे किसी दिव्य शक्ति से भर गए हैं। पल भर में पट्टाचार्य पद संभालने की ऊहापोह की स्थितियाँ समाप्त हो गईं। आत्मविश्वास से उनका मन-मानस भर गया। पट्टाचार्य पद अब उनके लिए 'परम कर्तव्य' बन गया था जिसका कुशलता व समभाव से निर्वहन करते हुए अपने 'काष्ठ स्वरूप' गुरु के पदचिह्नों पर चलना है।

पट्टाचार्य पद पश्चात कुंजवन में आचार्य श्री का संघ को संबोधन

जैसे ही आप कुंजवन पहुँचे, संतत्व भूल गए और गुरु वियोग की व्यथा से हृदय चीत्कार उठा। जब गुरुवर थे, तब इस कुंजवन से सदा बसन्त की बासन्ती महक उठती थी। मधुमास सा गदराया लगता था किंतु आज यहाँ गुरुवर के बिना श्मशान सा सन्नाटा पसरा है। जब अपने गुरु भाई बहनों से मिले, दोनों ओर गुरु वियोग की पीड़ा का ज्वार उफाने ले रहा था। पर आज गुरुवर की जगह वे थे। अतः उन्हें अपनी पीड़ा पर नियंत्रण रख सबको संभालना था। अंततः वे स्वयं भी संभले व सबको ढाँढस बँधाया।

संघस्थ साधुओं का बुरा हाल था। भावना के अतिरेक में हर कोई गुरु वियोग की पीड़ा व्यक्त कर रहा था। तभी किसी ने कहा- अकस्मात आचार्य श्री के चले जाने से हमारा व समाज का तो सौभाग्य सिन्दूर ही पुछ गया।

सबको चुप करा बड़ी धीर-गंभीर वाणी में पद की गरिमानुकूल आपने संघ को संबोधित करते हुए कहा- ''कौन कहता है कि आचार्य श्री के जाने से समाज का सौभाग्य छिन गया। वे तो हमारे सबके जीवन में सौभाग्य की लाली भर गए वरना अब तक तो हम सांसारिक जीवन में धूल-धूसरित पड़े थे। वे हमारे जीवन के अंधेरे कोने में चारित्र का चिराग जला गए। वे हमारी आत्मभूमि पर ज्ञानामृत की वृष्टि कर गए। हमारे जीवन में साधना की सृष्टि की रचना कर गए। वे हमारी देह को जिनालय बना प्राणों की प्रतिष्ठा कर गए, आत्मा को परमात्मा बनने का सूर्यमंत्र दे गए। वे समूची मानवता की अंधेरी रातों में शरद पूनों का प्रकाश भर गए। वे जब तक जीवित रहे, हम सबको प्रेम व वात्सल्य का प्रसाद बाँटते रहे। हमारे जीवन का विषाद छाँटते रहे और हमारी अज्ञान की अंधेरी खाइयाँ पाटते रहे। उन्होंने हमें हँसते-हँसते मोक्षमार्ग पर चलना सिखाया। उन्होंने सदा हमें सम्यक आचरण का आशीष दिया। आत्म जागरण का ताबीज दिया और मृत्यु को महोत्सव बनाने के लिए समाधि का बीज दिया। उन्होंने ही तो हमें सांसारिक जीवन के मोहमाया, राग-द्वेष के कीचड़ से बाहर निकाल हमारे जीवन में अध्यात्म के कमल खिलाए अर्थात् कमलवत हमें उस पंक से ऊपर उठाया।

क्या-क्या नहीं दिया हमें हमारे भगवत तुल्य गुरुवर ने। जितना उन्होंने दिया, उतना अन्य कोई नहीं दे पाएगा। उन सुमन संत ने तो अपनी श्वासों के सुमन हम पर लुटा डाले। उनका दिया संभाले संभाला न जाए, समेटे समेटा न जाए। परम उपकार किया है हमारे गुरुवर ने। बस अब हम जितना हो सके, उनकी दी गई रत्ननिधि को हमारे अपने जीवन की गाँठ में बाँधते जाएँ, गुरुवर अपनी अनुपस्थिति में भी हमारा उद्धार कर देंगे। और एक बार पुनः उन्होंने अपने संघ को आचार्य अमितगति देव की द्वात्रिंशति भावना की गाथा बड़े मार्मिक शब्दों में सुनाई, समझाई :

दुःखे-सुखे वैरिणि बन्धु वर्गे,
योगे वियोगे भवने वने वा।
निराकृताशेष ममत्व बुद्धेः,
समं मनो मेऽस्तु सदापि नाथ।।

और शनैः-शनैः सबके मन मानस पर छाई दुःखों की बदरियाँ छँटने लगी।

पट्टाचार्य सुनीलसागरजी ही हैं क्योंकि?

परम पूज्य मुनिकुंजर आचार्य श्री आदिसागरजी (अंकलीकर) के पट्टाचार्य तीर्थभक्त शिरोमणि आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी महाराज के पट्टशिष्य तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी महाराज के समाधिस्थ होते ही वर्तमान चतुर्विध संघ, संघ संचालिका ब्र. मैनाबाईजी, चारों संघपति, आचार्य आदिसागरजी अंकलीकर अंतरराष्ट्रीय जागृति मंच तथा भारतवर्षीय जैन समाज व विद्वद्जनों की सहमति से आचार्य सुनीलसागरजी महाराज को गुरुदेव के आदेश से

उनका पट्टधर बनाया गया है।

26 दिसंबर 2010 को कुंजवन उदगाँव में घोषणा होते ही गुलालवाड़ी (मुंबई) की विशाल धर्मसभा में संभ्रांतजनों की उपस्थिति में उन्हें विधिपूर्वक आचार्य श्री आदिसागरजी (अंकलीकर) का चतुर्थ पट्टाधीश बना दिया गया। इस पर एक-दो लोगों ने प्रश्न चिह्न लगाया है कि चतुर्थ पट्टाधीश आचार्य श्री सुनीलसागरजी ही क्यों? इस संबंध में यहाँ कुछ विशिष्ट व्यक्तियों के अभिमत दिये जा रहे हैं।

अभिमत क्र. 1
संघस्थ मैनाबाईजी का अभिमत

सुनीलसागरजी ही इसलिए क्योंकि...

1. क्योंकि 4 दिसंबर 2006 को पंचकल्याणक महोत्सव के अवसर पर लासुर्णे (पुणे) में आचार्य गुरुदेव ने चतुर्विध संघ के मध्य मुनि श्री सुनीलसागरजी को अपना पट्ट प्रदान करने की घोषणा की थी। दो दिन बाद 6 दिसंबर को संस्कार करने का भी सुनिश्चित हो गया किंतु मुनि श्री सुनीलसागरजी ने तात्कालिक असमर्थता दिखाते हुए सविनय निषेध कर दिया था। उस समय मुनि शुभसागरजी, सुंदरसागरजी, शीतलमती माताजी, शुभमती माताजी आदि सभी संघ उपस्थित था, जो अभी भी है।
2. क्योंकि 2004 में नरवाली के कार्यक्रम में आचार्य गुरुदेव ने किसी को भी पट्टाचार्य बनाने की कोई घोषणा नहीं की थी। वितरित पर्चे में जो नाम लिखे हैं, उन्हें नरवाली तथा उपस्थित समाज को यह मालूम है तथा सीडी व वीसीडी भी उपलब्ध है।
3. क्योंकि अंकलीकर वाणी में उस समय जो गुरुदेव के नाम से हस्ताक्षरित लेख छपा था, उसका खंडन उन्होंने अपने मुख से किया था, अंक 188 में भी किया था।
4. क्योंकि आचार्य सुनीलसागरजी में कुंदकुंदाचार्य का अध्यात्म ज्ञान तथा आचार्य गुरुदेव का तप व साधना का आचरण झलकता है।
5. क्योंकि वे गुरुदेव की पद्धति व परम्पराओं का ध्यान रखते हुए भी मताग्रहहीन प्रवृत्ति करते हैं।
6. क्योंकि वे अपने परंपराचार्यों की तरह ही आधुनिक संसाधनों का प्रयोग नहीं करते।
7. क्योंकि अनेक आचार्यों के उपस्थित रहते हुए भी कुंजवन में प्रतिष्ठापित अनंतवीर्य भगवान की मूर्ति को सूरिमंत्र उनसे ही दिलवाया गया और उस समय तथा अनेक बार अजित कासलीवाल से गुरुदेव ने कहा था कि आगे सब इसी से करवाना है, यही संभालेगा।
8. क्योंकि अस्वस्थ दशा में दूसरे आचार्यों के पूछने पर भी उन्होंने सुनीलसागरजी को संघ का प्रतिक्रमण कराने की आज्ञा दी।
9. क्योंकि उमलवाड (गाँव) में आचार्य गुरुदेव ने कमल कासलीवाल को सुनीलसागरजी के पास भेजकर पूछा कि क्या वह हम बूढ़ों के साथ रहेगा? तब भी उन्होंने सविनय कहा कि अभी अनेक वर्षों तक गुरुदेव की छत्रछाया अपने पर रहना है।
10. क्योंकि श्रवणबेलगोला, मूडबिद्री, नांदणी, कोल्हापुर, कनकगिरि, अरिहंतगिरि, कम्बदहल्ली आदि के भट्टारकों ने सुनीलसागर नाम की अनुमोदना की है।
11. क्योंकि जिस तरह के फोटो का प्रचार पट्टेच्छुक जन कर रहे हैं वैसे फोटो अपने आचार्य पदारोहण के अवसर के सुनीलसागरजी तथा कुछ और संतों के पास भी हैं।

12. क्योंकि पट्ट के मुख्य अधिकारी, ज्येष्ठतम आचार्य हेमसागरजी ने आचार्य सुनीलसागरजी की अनुमोदना करते हुए उन्हें सर्वाधिकार दिये हैं। आचार्य श्री संभवसागरजी, आचार्य श्री पुष्पदंतसागरजी, आचार्य श्री विरागसागरजी, आचार्य श्री विशुद्धसागरजी, आचार्य श्री विभवसागरजी आदि अनेक आचार्यों ने भी इसी नाम की अनुमोदना की है।
13. क्योंकि समाधि के पिछले दिन कमल कासलीवाल, भरत मिंडा, दिनेश पाडवा, संपत पाटनी, राजू गंगवाल इचलकरंजी, पारस नावड़िया, मुकेश बड़ावला, भरत नावड़िया आदि के सामने सुनील सागरजी की ही प्रशंसा करते हुए गुरुदेव ने उन्हें योग्य उत्तराधिकारी बताया।
14. क्योंकि गुरुदेव के द्वारा विष्णु चौधरी तथा 23 दिसंबर की रात को आचार्य सुनीलसागरजी के पत्र पर लिखित दो पंक्तियों से यही सिद्ध हुआ है।
15. क्योंकि भारतवर्षीय विद्वत् परिषद् व शास्त्री परिषद, संस्कार यूथ फाउंडेशन, धर्म प्रभावनाजन कल्याण परिषद, बुंदेलखंड, बागड़, मेवाड़, निमाड़, उत्तरप्रदेश, सूरत, मुंबई, औरंगाबाद, हैदराबाद, सोलापुर, इंदौर, रतलाम, जबलपुर, जयपुर, दिल्ली आदि की जैन समाज ने उनके ही नाम की अनुमोदना की है।
16. क्योंकि आचार्य श्री सन्मतिसागरजी गुरुदेव की अंतिम लिखित आज्ञानुसार वर्तमान संघ, संघ संचालिका, संघपति, कुंजवन ट्रस्ट, अंतरराष्ट्रीय मंच, सकल जैन समाज अधिकतम पत्र-पत्रिकाओं के सम्पादकगण तथा प्रसिद्ध समाजसेवी व बुद्धिजीवियों ने आचार्य श्री सुनीलसागरजी को ही पट्ट परंपरा का योग्यतम उत्तराधिकारी माना है। इसलिए भी हम आचार्य श्री की अंतिम लिखित आज्ञा व इच्छा का सम्मान करते हुए आचार्य श्री सुनीलसागरजी को पट्टाचार्य मानते हैं।

● ब्र. मैनाबाईजी (संघस्थ)

<u>अभिमत क्र. 2</u>
पट्टाचार्य पद से संबंधित मुख्य बिंदु

1. आचार्य श्री सुनीलसागरजी महाराज का चतुर्थ पट्टाचार्य पद 26 दिसंबर 2010 को कुंजवन (उदगाँव) व गुलालवाड़ी (मुंबई) दोनों जगह संपन्न हुआ।
2. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी ने लिखित आदेश निर्गत किया कि आचार्य श्री सुनीलसागरजी उनके उत्तराधिकारी होंगे।
3. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी का परम्परागत नेपाल की युवराज्ञी द्वारा प्रदत्त सिंहासन आचार्य श्री सुनीलसागरजी को प्रदान किया गया।
4. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के संघ का प्राचीन व परंपरागत चैत्यालय आचार्य श्री सुनीलसागरजी के संघ के साथ है।
5. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के पूर्ण संघ ने लिखकर निर्णय लिया कि वे स्वेच्छा से आचार्य श्री सुनीलसागरजी को पट्टाचार्य पद की अनुमोदना करते हुए उनके आचार्यत्व में संघ में सम्मिलित होते हैं।
6. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के संघ की दीर्घकालीन संघचालिका ब्र. मैनाबाईजी भी आचार्य श्री सुनीलसागरजी के ही संघ में सम्मिलित हुईं।
7. आचार्य श्री सुनीलसागरजी अपना संघ लेकर कुंजवन पहुँचे, वहाँ से आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के संघ को सम्मिलित कर आगे मुंबई की ओर विहार किया।

8. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के आदेशानुसार अंकलीकर वाणी ट्रस्ट व आचार्य श्री आदिसागर अंकलीकर अंतरराष्ट्रीय जागृति मंच आचार्य श्री सुनीलसागरजी के निर्देशों का अनुपालन करता है।
9. शास्त्री परिषद, विद्वत् परिषद, धर्म प्रभावना जन कल्याण परिषद, संस्कार यूथ फाउंडेशन तथा देशभर की गुरुभक्त समाज ने आचार्य श्री सुनीलसागरजी को ही मुनिकुंजर आचार्य श्री आदिसागर (अंकलीकर) के चतुर्थ पट्टाधीश के रूप में स्वीकार किया है।

● डॉ. महेन्द्र 'मनुज', इंदौर

अभिमत क्र. 3
तपस्वी सम्राट की जन्म जयंती एवं चतुर्थ पट्टाधीश का अभिनंदन समारोह

उदगाँव 10 फरवरी 2011 को महाराष्ट्र राज्य के कोल्हापुर जिले के कुंजवन उदगाँव में आयोजित राष्ट्रीय स्तर कार्यक्रम में मुझे बतौर प्रमुख अतिथि के रूप में आमंत्रित किया गया था। अंकलीकर वाणी एवं आचार्य आदिसागर (अंकलीकर) विद्यालय का मुख्य कार्यकर्ता होने के कारण मैं उस कार्यक्रम में मेरे मित्र अंकलीकर वाणी परिवार के अध्यक्ष डॉ. अनिल जैन भिंड आदि मित्रों के साथ उपस्थित हुआ। मैं अपने साथ कुछ महत्वपूर्ण दस्तावेज भी कुंजवन ले गया जिसमें वह महत्वपूर्ण पत्र था जो मेरे नाम आचार्य श्री सन्मतिसागरजी द्वारा लिखा गया था। इस पत्र में मेरे लिए गुरुदेव का आदेश है कि आगे अंकलीकर वाणी इत्यादि संबंधी मार्गदर्शन उनके उत्तराधिकारी आचार्य सुनीलसागरजी से लिया जाए तथा आचार्य श्री सुनीलसागरजी को आदेश है कि वह विष्णु चौधरी को सहयोग करे।

उक्त पत्र को देखकर आचार्य श्री सुनीलसागरजी जो पद लेने के लिए अब तक भी पूरी तरह तैयार नहीं थे, संतुष्ट हो गए। पत्र देखकर आचार्य श्री सुविधिसागर, आचार्य श्री सुंदरसागर, मुनि श्री सुपार्श्वसागर, मुनि श्री शुभसागर आदि मुनिवृंद तथा आर्यिका शीतलमती माताजी, आर्यिका शुभमती माताजी आदि भी पूरी तरह सहमत तथा संतुष्ट हो गए। ब्र. मैनाबाई चारों संघपति तथा प्रमुख भक्तों के हाथ में पुख्ता प्रमाण आ गया। सभी जनसमुदाय आचार्य श्री सन्मतिसागरजी महाराज के इस आदेश को स्वीकार करके उनके उत्तराधिकारी चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी महाराज की जयजयकार करने लगे।

कुंजवन के त्रिदिवसीय कार्यक्रम में प्रथम दिन आयोजित अनंतवीर्य विधान में मैं सम्मिलित नहीं हो पाया। 9 व 10 फरवरी के सभी कार्यक्रम देखने का सौभाग्य मिला। 10 फरवरी का अभूतपूर्व कार्यक्रम तो अभी भी आँखों में तैर रहा है। देश के कोने-कोने से पधारे भक्तों ने जहाँ आचार्य श्री सन्मतिसागरजी गुरुदेव की 74वीं जन्म जयंती मनाई, वहीं उनके पट्टाचार्य आचार्य श्री सुनीलसागरजी का मंगलमय अभिनंदन किया।

चतुर्विध संघ, ब्र. मैनाबाईजी, संघपति श्रीमती सज्जनबाई ज्ञानचंदजी मिंडा मुंबई, अजित कासलीवाल सेलम, सुमेर चूड़ीवाल कलकत्ता, कमल कासलीवाल मुंबई के साथ मध्यप्रदेश सरकार के कैबिनेट मंत्री माननीय कपूरचंद घुवारा व सांसद राजू शेट्टी ने भी पाँच मंगल कलशों से आचार्य श्री आदिसागरजी (अंकलीकर) के चतुर्थ पट्टाचार्य का पादाभिषेक किया। महत्वपूर्ण मंत्र संस्कार भट्टारक श्री चारुकीर्ति स्वामीजी ने किये।

आचार्य श्री के परम भक्त राजू गंगवाल इचलकरंजी ने पिच्छी, सुमेरमल चूड़ीवाल कलकत्ता ने कमंडल व शास्त्र भेंट करने का सौभाग्य प्राप्त किया। कल्याण तलवाड़िया मुंबई ने आचार्य आदिसागर (अंकलीकर) सभागार का लोकार्पण, अर्पित मालवीय ने कार्यालय का लोकार्पण तथा सुमेर चूड़ीवाल ने आचार्य श्री सन्मतिसागरजी गुरुदेव के

समाधि मंदिर का शिलान्यास व आचार्य आदिसागर (अंकलीकर) सभा भवन का उद्घाटन किया।

विश्व प्रसिद्ध संगीतकार श्री रविन्द्र जैन मुंबई ने अनेक गीतों के माध्यम से जन-जन का मन मोह लिया तथा आ. सन्मतिसागर सुनीलसागरजी का गुणगान किया।

● विष्णु चौधरी, इटावा

अभिमत क्र. 4

शास्त्री एवं विद्वत् परिषद ने आचार्य श्री सुनीलसागरजी को माना पट्टाचार्य

श्री दि. जैन अतिशय क्षेत्र नवागढ़ (ललितपुर, उ.प्र.) में 14 से 19 जनवरी 2011 तक आयोजित पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के अंतर्गत दि. 17 जनवरी को प्रातः अ.भा. दिगंबर जैन शास्त्री परिषद की कार्यकारिणी का अधिवेशन पूज्य आचार्य विशुद्धसागरजी महाराज (ससंघ) के सान्निध्य, डॉ. श्रेयांस कुमार जैन बड़ौत की अध्यक्षता तथा ब्र. जय निशांत टीकमगढ़ के संचालन में संपन्न हुआ।

उसमें देव-शास्त्र-गुरु के संरक्षण और जैन संस्कृति के विकास में शास्त्री परिषद के इतिहास का उल्लेख करते हुए प्रसिद्ध विद्वान डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन सनावद ने सभी विद्वान एवं जैन समुदाय से आचार्य श्री आदिसागरजी (अंकलीकर) के तृतीय पट्टाधीश आचार्य श्री सन्मतिसागरजी महाराज के समाधिस्थ होने पर उनके पट्टाचार्य पद पर आचार्य श्री सुनीलसागरजी महाराज को मनोनयन की मान्यता देने का प्रस्ताव किया। जिसकी द्रोणगिरि तीर्थक्षेत्र कमेटी के अध्यक्ष एवं म.प्र. कैबिनेट मंत्री कपूरचंद घुवाराजी व शास्त्री परिषद के अध्यक्ष डॉ. श्रेयांसजी बड़ौत ने शास्त्री परिषद की तरफ से एवं विद्वत् परिषद के महामंत्री डॉ. सुरेन्द्र भारतीजी बुरहानपुर ने विद्वत् परिषद की ओर से अनुमोदना की। समस्त विद्वानों एवं 10 हजार से अधिक उपस्थित जनसमुदाय ने हाथ उठाकर समर्थन किया। और कहा- आचार्य श्री सुनीलसागरजी प्राकृत भाषा के महान विद्वान एवं अध्यात्मनिष्ठ ज्ञानी साधु हैं। पट्टाचार्य पद पर आसीन होने को उचित तथा सकारात्मक कदम बताते हुए देश के अनेक जैनाचार्यों व बुद्धिजीवियों ने इसकी अनुशंसा करते हुए अपनी हार्दिक स्वीकृति प्रदान की।

● पं. आशीष शास्त्री, बम्हौरी

अभिमत क्र. 5

लेखकीय

हमारा परिवार आचार्य श्री सन्मतिसागरजी का परम भक्त रहा है। कृपालु गुरु का हम पर अत्यधिक वात्सल्य रहा। हम उनके दर्शन करने नहीं जा पाते थे पर हमें उनकी खोज-खबर अक्सर मिल जाया करती थी।

24 दिसंबर प्रातः आचार्य श्री के परम भक्त मेरे मौसाजी स्व. श्री हजारीमलजी का फोन आया, आचार्य श्री सन्मतिसागरजी की सबेरे समाधि हो गई। (उनकी अस्वस्थता की तो अक्सर खबरें मिलती रहती थी) सुनकर मन को बड़ा आघात लगा। आँखों से आँसू बहने लगे। 1990 के उनके इन्दौर चातुर्मास के सान्निध्य के पल ताजा हो गए। उन्हीं दिनों बालाचार्य श्री योगीन्द्रसागरजी का सान्निध्य भी प्राप्त हुआ।

आचार्य श्री की समाधि के पश्चात हमें उत्सुकता थी कि आचार्य श्री ने पट्टाचार्य पद किसको दिया? दो-तीन दिन बाद अखबार से पता चला कि युवाचार्य श्री सुनीलसागरजी को चतुर्थ पट्टाचार्य पद पर पदारोहण किया गया है। मैंने कभी आचार्य श्री सुनीलसागरजी का न नाम सुना था न दर्शन किये थे। उनका नाम भी मुनियों-साधुओं के नाम से हटकर था। अस्तु, पर हमें विश्वास हो गया कि आचार्य भगवन ने उनको इतना बड़ा उत्तरदायित्व दिया है तो निश्चित ही

वे प्रतिभा के हिमवान होंगे। तभी से उनके दर्शन के लिए मन लालायित था।

इसके बाद पता चला कि बालाचार्य योगीन्द्रसागरजी महाराज को भी इंदौर में पट्टाचार्य पद दिया जा रहा है। चूँकि आप आचार्य भगवन श्री सन्मतिसागरजी के प्रिय शिष्य रहे हैं और उनका पद आपको दिया जा रहा है, यह सोचकर हम उनकी धर्मसभा में पहुँचे। उन्होंने अपने उद्बोधन में आगे होकर कहा कि पूर्व में आचार्य श्री सुनीलसागरजी को पट्टाचार्य पद दिया जा चुका है। मेरा उनसे कोई विरोध नहीं है। वे अपना काम अच्छी तरह संभाल रहे हैं। मुझे समाज द्वारा यह पट्टाचार्य पद दिया गया है, मैं भी आचार्य भगवन की चर्या व परम्परानुकूल इस पद का निर्वाह करूँगा।

इन्दौर प्रवास में मैंने श्री योगीन्द्रसागरजी महाराज से ही पूछा कि सुनीलसागरजी महाराज कौन हैं? आचार्य भगवन ने उनको भी पट्टाचार्य पद दिया है। क्या कारण है? आचार्य श्री ने कहा- वे बहुत अच्छे, बहुत विद्वान हैं, योग्य हैं, अध्यात्म का गहन ज्ञान है। आचार्य गुरुवर का नैकट्य प्राप्त करते रहे हैं। वे इस पद के पात्र हैं, योग्य हैं। मेरा उनसे कोई मतभेद नहीं। हम दोनों गुरुभाई हैं। यहाँ उपस्थित हम जितने भी लोगों (करीब 100 लोग होंगे) ने उनके ये विचार सुने, सब उनकी हृदय की उदारता की प्रशंसा कर रहे थे।

तभी से मेरी इच्छा आचार्य श्री सुनीलसागरजी के दर्शन की बलवती होती जा रही थी। अद्भुत संयोग, उनका दर्शन तो क्या उनकी जीवन गुणगाथा लिख मैं धन्य हो गई। इतने बड़े सृजन काल में मैं हर पल अप्रत्यक्ष रूप से उनके दर्शन, चिन्तन व साधना के दर्शन करती, उनका सान्निध्य पाती रही।

अर्थात् मेरा यह कहना है कि आचार्य श्री सुनीलसागरजी को सबने निर्विवाद 'चतुर्थ पट्टाचार्य' के रूप में स्वीकार कर लिया। पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी की जीवनगाथा लिखते हुए मैं उनके जीवन के प्रत्येक पक्ष व पहलू से बहुत अच्छी तरह परिचित होती रही। निश्चित ही वे विलक्षण प्रतिभा, अद्भुत व्यक्तित्व के धनी गुरु के प्रति पूर्ण समर्पित शिष्य रहे हैं। मैं बहुत अच्छी तरह जानती हूँ कि सरल हृदय आचार्य भगवन प्रतिभाओं और योग्यता का सम्मान करते थे। वे मानव हीरे के पारखी जौहरी थे और वे पट्टाचार्य सुनीलसागरजी के रूप में समाज को एक अमूल्य अनूठा हीरा सौंप गए। और आज वह हीरा (पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी के रूप में) अपनी आभा कान्ति से अपने गुरु का नाम रोशन कर रहा है।

● लेखिका : सरोज शाह

सन्मति महोत्सव वर्ष 2011-12 पावन वर्षायोग : 2011

श्रमण परंपरा के मूर्धन्य आचार्य मुनिकुंजर श्री आदिसागरजी महाराज (अंकलीकर) के पट्टाधीश आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी महराज के पट्टशिष्य तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी गुरुदेव के सन्मति महोत्सव वर्ष 2011-12 के प्रथम सोपान स्वरूप स्वर्ण संयमोत्सव के अवसर पर आयोजित राष्ट्रीय विद्वत् संगोष्ठी व दीक्षाओं को चतुर्थ पट्टाधीश आचार्य श्री सुनीलसागरजी महाराज का विशाल संघ सहित दहीसर (मुंबई) समाज को सान्निध्य प्राप्त हुआ।

क्र.	नाम	गुरु का नाम
1.	मुनि श्री मुदितसागरजी	च.प. आचार्य श्री सुनीलसागरजी म.
2.	मुनि श्री सतसागरजी (समाधिस्थ)	च.प. आचार्य श्री सुनीलसागरजी म.
3.	मुनि श्री सुभव्यसागरजी	च.प. आचार्य श्री सुनीलसागरजी म.

4.	क्षुल्लक श्री मलयसागरजी म.	च.प. आचार्य श्री सुनीलसागरजी म.
5.	क्षुल्लक श्री समणसागरजी म.	च.प. आचार्य श्री सुनीलसागरजी म.
6.	क्षुल्लिका श्री अमियमती माताजी	च.प. आचार्य श्री सुनीलसागरजी म.
7.	प.पू. आचार्य श्री सुनीलसागरजी	त.स. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी म.
8.	मुनि श्री धर्मभूषणजी महाराज	प.पू. आचार्य श्री ज्ञानभूषणजी म.
9.	मुनि श्री देवेन्द्रसागरजी	प.पू. आचार्य श्री वर्धमानसागरजी म.
10.	मुनि श्री सुकौशलसागरजी	त.स. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी म.
11.	मुनि श्री सुकुमालसागरजी	त.स. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी म.
12.	मुनि श्री सुखसागरजी	त.स. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी म.
13.	मुनि श्री शतारसागरजी	त.स. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी म.
14.	मुनि श्री सहस्त्रसागरजी	त.स. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी म.
15.	मुनि श्री सुबंधसागरजी	त.स. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी म.
16.	मुनि श्री सुबुद्धसागरजी	त.स. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी म.
17.	आर्यिकाश्री दर्शनमती माताजी	त.स. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी म.
18.	आर्यिकाश्री शुभमतीमाताजी	त.स. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी म.
19.	आर्यिकाश्री स्वस्तिमती माताजी	त.स. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी म.
20.	आर्यिकाश्री सुकालमती माताजी	त.स. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी म.
21.	आर्यिकाश्री श्रुतमतीमाताजी	त.स. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी म.
22.	आर्यिकाश्री संयममती माताजी	त.स. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी म.
23.	आर्यिकाश्री सुगंधमती माताजी	त.स. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी म.
24.	आर्यिकाश्री सुधर्ममती माताजी	त.स. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी म.
25.	क्षुल्लिका श्री सम्यक्त्वमती माताजी	त.स. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी म.
26.	क्षुल्लिकाश्री संदेशमती माताजी	त.स. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी म.
27.	क्षुल्लिकाश्री सुवीरमती माताजी	त.स. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी म.
28.	क्षुल्लिकाश्री श्रमणमती माताजी	त.स. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी म.
29.	क्षुल्लिकाश्री स्वास्थ्यमती माताजी	त.स. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी म.
30.	क्षुल्लिकाश्री गोम्मटप्रभा माताजी	त.स. आचार्य श्री सन्मतिसागरजी म.

आचार्यश्री का श्री विष्णु चौधरी के नाम पत्र

श्री विष्णुकुमार जी चौधरी
आशीर्वाद।
यहाँ पर कुशल वातावरण है
समझता हूँ आप भी। सभी कार्य
सुचारु रूप चल रहे होंगे।
जिस प्रस्ताव पर आपने
हस्ताक्षर नहीं किये तथा जिस
में तीन पीढ़ी की सदस्यता और
अधिकारी बने रहने के लिए
प्रस्ताव हाउस की एक फोटो
कापी चाहते हैं। उपलब्ध कराई
जाय। ~~[illegible]~~ बात का भी विचार
बिताया जाय साथ में अनलीमिट
वार्ड + [illegible] भी लावें। आप
द्वारा भविष्य में अनलीमिट वार्ड
इत्यादि की जो चिन्तायें व्यक्त की गयी है,
मेरे उत्तराधिकारी आचार्य सुनील
सागर जी से दिशा निर्देश प्राप्त कर सकते
हैं। मेरा उनको भी आदेश है कि वह
विष्णुकुमार जी को पूर्ण सहयोग दें।
आ. सन्मति सागर

कुंजवन उदगाँव से आचार्यश्री सुनीलसागरजी को अंकलीकर परम्परा के चतुर्थ पट्टाचार्य घोषित किये जाने का सहमति पत्र



|| श्री वीतरागाय नमः ||
|| श्री सूरि आदि महावीर विमल सन्मति गुरुभ्यो नमः ||

आचार्य आदिसागर (अंकलीकर)
अंतरराष्ट्रीय जागृती मंच (रजी.)

१०८/ए.एस. डायस बिल्डींग, पहला माला, २३८/२७२, डॉ. सी. एच. मार्ग,
मरीन लाइन्स, मुंबई - ४०००02. फोन : २२०९ २६१४



प्रेरणा स्त्रोत प.पू. तपस्वी सम्राट आचार्य श्री १०८ सन्मति सागरजी महाराज

राष्ट्रीय कार्यकारणी समिती

अध्यक्ष
अॅड. ऋषभ गोवाडीया
९३२२१७५३९७

उपाध्यक्ष
महेंद्र बंडी
९३२३४२०५१७

सचिव
कमल जैन
९३२३४९२२५१

सहसचिव
पद्युमन कराडीया
९८२१३८५३१६

कोषाध्यक्ष
कल्याण जैन
९८२१२१६४२४

सदस्य
अनिल दगडे
९३२४६६८७१०

अरुण पटनी

दिनांक 26/12/1020

परम पूज्य मुनिकुंजर आचार्य 108 श्री आदिसागर जी अंकलीकर महाराज जी के तृतीय पट्टाधीश तपस्वी सम्राट आचार्य 108 श्री सन्मति सागर जी महाराज की समाधी उपरांत उनके अंतिम आदेशानुसार स्व चतुर्विधी संघ की सहमती से आज दिनांक 26/12/2010 रवीवार कुंजवन उदगांव में आचार्य 108 श्री सुनील सागर जी महाराज को प. पू. आचार्य 108 श्री आदिसागर महाराज अंकलीकर की परंपरा के चतुर्थ पट्टाचार्य घोषीत किए जाते है।

1. धर्मभूषण मुनिमहाराज
2. सुकुमाल सागर महाराज
3. सुखसागर
4. देवेन्द्र सागर
5. Muni Subandh Sagar
6. सुकुन्देसागर मुनि
7. सुकौशल सागर
8. मुनि शुभसागर
9. मुनि सतारसागर
10. मुनी दयासागर
11. सहस्त्रासागर मुनी महाराज
12.
13.
14.

ब्र. मैनाबाई संघसंचालिका
क्षु. सुरेन्द्रसागर
सुमयसागर क्षुल्लक
समसागर क्षुल्लक
क्षु. [illegible]सागर
आर्यिका शुभमती
आर्यिका श्रुतमती
आर्यिका स्वास्तिमती
क्षुल्लिका श्रमणमती
आर्यिका - सुगंधमती
क्षु. [illegible] मति
क्षु. स्वस्थमती
[illegible]
[illegible]

14 फरवरी 2011 से

आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के प्रिय योग्य व कुशल शिष्य श्री सुनीलसागरजी के गुरुवर के प्रति अनन्य श्रद्धा, सेवा भावना, समर्पण व साधना, गुरु संघ के प्रति सहृदयता, स्नेह, सहजता, सहयोगी प्रवृत्ति तथा प्राणीमात्र के प्रति दया, प्रेम व करुणा को देख आचार्य संघ, संघ संचालकों व उदगाँव व कुंजवन के जैन समाज व ट्रस्टियों ने आपको अंकलीकर परम्परा के चतुर्थ पट्टाचार्य पद पर सुशोभित किया।

काफी आग्रह के बाद आचार्य गुरु के सिंहासन पर बैठते हुए आपने सर्वप्रथम कहा कि ''मैं आचार्य श्री आदिसागरजी (अंकलीकर) के पट्टाधीश आचार्य श्री महावीर कीर्तिजी महाराज के पट्टशिष्य तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी गुरुदेव की पद्धति व परम्परा का ध्यान रखते हुए ही प्रवृत्ति करूँगा। यह चतुर्विध संघ गुरुदेव का लगाया उद्यान है, मैं तो इसका माली हूँ। मैं एक माली की हैसियत से इसकी सार-संभार करते हुए वृद्धिगत करूँगा।''

और 14 फरवरी 2011 को आपने सम्पूर्ण चतुर्विध संघ 31 पिच्छी के साथ चतुर्थ पट्टाचार्य के रूप में कुंजवन (उदगाँव) से विहार कर दिया। आचार्य भगवन की समाधि के पश्चात संघ के निर्वहन की जिम्मेदारी किसी न किसी को संभालनी ही थी, सो युवाचार्य श्री सुनीलसागरजी के मजबूत कंधों पर यह जिम्मेवारी सौंप समस्त संघ निश्चिंत हो गया। अभी तक आप पर ज्यादा भार नहीं था किंतु अब तो इतने बड़े संघ को लेकर विहार करना, संघ की व्यवस्था, वाचना आदि-आदि अनेक कार्य आ गए थे।

अब संघ के साथ आपका पद विहार 2011 का चातुर्मास मुंबई बोरीवली के लिए हो रहा था। आप घृणा, बैर, वैमनस्य की आग में जल रहे मानवी मन को प्रेम, सहृदयता, सहानुभूति, संवेदना, करुणा की भावनाओं के ओस से भिगोते आगे बढ़ रहे थे। आप जगह-जगह भारतीय जनजीवन पर पड़ते पाश्चात्य प्रभाव के कोहरे को हटाते जा रहे थे। आपने देखा कि भोगवादी विकृतियों में उलझकर मनुष्य मर्यादा विहीन आचरण कर समाज में परेशानियाँ पैदा कर रहा है। समाज व राष्ट्र की शांति भंग कर रहा है। लोगों में धार्मिक आस्था आज भी यथावत विद्यमान है। अतः आप अपने विहार में विभिन्न धार्मिक आयोजनों व सामूहिक क्रियाकलापों द्वारा सामूहिक एकीकरण व सामाजिक एकता व संगठन की भावना जगाते, समाज को धर्म के माध्यम से संगठित कर आगे बढ़ रहे थे।

पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी संस्कार शून्यता, सांस्कृतिक मूल्य हीनता, स्वार्थान्धता के तिमिराच्छन्न वातावरण को अध्यात्म ज्ञान की किरणों से विच्छिन्न करते, समाज में प्रेम, अहिंसा व शांति की वासन्ती पुलक भरते शांति पथ प्रशस्त करते मुंबई की ओर बढ़ रहे थे। मुंबई से कुंजवन जाते वक्त तो आपने 432 कि.मी. की पदयात्रा मात्र 17 दिन में पूर्ण कर ली थी पर अब संघ के साथ पथ संचलन की गति थोड़ी धीमी हो गई थी पर जनजागृति करने व महावीर के संदेशों को जन-जन तक पहुँचाने की गति तेज हो गई थी। पूर्व में संघ को उनका बेसब्री से इंतजार था, संघ गुरु बिना असहाय सा महसूस कर रहा था। ऐसे गुरु वियोग के क्षणों में आचार्य संघ को उनके संबल की सख्त जरूरत थी। आचार्य गुरु के बिना आचार्य संघ की मनोस्थिति की कल्पना मात्र से उनका हृदय बेचैन व विचलित हो जाता था। चूँकि संत होने के बावजूद भी गुरु वियोग में वे स्वयं भी अनाथ सा महसूस कर रहे थे, अतः सबसे मिलना उनकी प्राथमिकता थी। पर आज पूरा संघ साथ था। माताजी व वृद्ध साधुगण भी गुरु निश्रा में धर्माराधना कर रहे थे अतः सबका ध्यान रख विहार करना अब उनकी पहली प्राथमिकता हो गई। फिर इतने बड़े साधु-साध्वियों के संघ की पद विहार में ठहरने, विश्राम की व्यवस्था भी देखनी थी। अतः नवपट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी, संघ के प्रति सचेत फूँक-फूँक कर कदम रखते विहार कर रहे थे। वे अच्छी तरह समझ रहे थे कि दिगम्बर सन्त परिषह जन्य वातावरण में भी अपनी चर्या का निर्वहन करते हैं। अतः उनकी किसी असावधानी या अनजानेपन में संघ को किसी विपत्ति या विघ्नों का सामना न करना पड़ जाए।

पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी का सातिशय पुण्य कहो या उनके नेतृत्व में चल रहे आचार्य (गुरु संघ) की महिमा, वे जहाँ से, जिधर से भी गुजरते, जैन तथा अजैन क्या? इतनी बड़ी दिगम्बर साधुओं की जमात की तहेदिल से भव्य अगवानी कर मंगल प्रवेश कराते। धर्म के धुरंधर महान अध्यात्म के ज्ञाता, महायोगी पट्टाचार्य श्री अपनी वक्तृत्व शैली से सारा वातावरण धर्ममय कर देते। वे मात्र प्रवचनों में विश्वास नहीं रखते, अपितु व्यक्तिशः सुधार पर ध्यान रख लोगों को मांस, मद्य व तम्बाकू सेवन से मुक्त कर व्यसन मुक्त एक अहिंसक समाज का निर्माण करते चले जा रहे थे। वे अपने ओजस्वी, प्रेरक व धार्मिक उदाहरणों से युक्त उद्‌बोधनों से समाज को व्यसन मुक्ति के लिए प्रेरित कर रहे थे, नियम दिला रहे थे। उनके इस अभियान से परिवारों में खुशियाँ छाने लगीं। आचार्य श्री की धर्म प्रभावना से प्रेरित हो समाज उनके सुधार के इस अभियान में पूरा योगदान दे रहा था। आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने जहाँ अपनी युवा ऊर्जा का संचार पूरे संघ में कर उर्जस्वित कर दिया था वहीं समाज में भी उत्साह व जोश भरते जा रहे थे। लोगों में व्रत-नियम ले संयममय जीवन जीने व बुराइयाँ छोड़ने की होड़ सी लगी थी।

इस प्रकार धर्म ध्वजा फहराते जोश व उत्साह के साथ इकतीस पिच्छी का यह पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी का संघ कब मुंबई पहुँच गया पता ही नहीं चला। बोरीवली (योगीनगर) के धर्मप्रेमी मुनिभक्त श्रावकों के अनुनय विनय भरे आग्रह को आप नहीं टाल सके और वहाँ चातुर्मास की स्वीकृति दे दी।

विगत में 2005 में मुनि अवस्था में, 2010 में आचार्य पद पर रहते और अब 2011 में पट्टाचार्य पद पर आसीन, विशाल चतुर्विध संघ के साथ मुंबई महानगर में आपका मंगल प्रवेश हो रहा था। बोरीवली समाज के अलावा समस्त मुंबई महानगर के उपनगरों की समाज आपके नव्य-भव्य रूप में मंगल प्रवेश पर आपकी भव्य अगवानी के लिए उमड़ पड़ा। पिछले चातुर्मास में जो आपने धर्म की अलख जगाई थी, लोगों को धार्मिक बना दिया था, उसी का फल था कि इस व्यस्ततम 'हार्ड एंड फास्ट लाइफ स्टाइल' वाले शहर के दूर-दूर से लोग आप व संघ के दर्शनार्थ आए थे। श्रद्धालुओं व परम मुनिभक्तों में आपके मुंबई आगमन पर हर्ष का पारावार नहीं था।

जगह-जगह आपकी आरती उतार, पाद प्रक्षालन कर व नारियल आपके श्रीचरणों में बधार-बधार कर आपकी वधामणि की जा रही थी। मुंबई जैसे महानगर में हजारों की भीड़ जुट गई थी। पाद प्रक्षालन करने वालों व आपके श्रीचरणों में नारियल फोड़ने वालों के लिए आपके श्री चरणों तक पहुँच पाना बड़ा मुश्किल व दिक्कत वाला काम था। इसी मंगल प्रवेश के समय नीरा रोड से दहीसर की ओर जाते हुए एक अनहोनी घटना घट गई। पट्टाचार्य के रूप में मुंबई महानगर में आपका प्रथम मंगल प्रवेश हो रहा था। हर्ष में पागल लोगों में आपके श्रीचरणों में नारियल फोड़-फोड़ कर उसके शुद्ध जल से आपके पाद प्रक्षालन की होड़ाहोड़ी मच गई। तभी एक श्रावक ने आचार्य श्री के पाद प्रक्षालन के लिए जमीन पर नारियल फोड़ने की बजाय उनके बाएँ पैर पर नारियल दे मारा। अत्यधिक भीड़ या जल्दबाजी वश उसने यह देखने की जरूरत न समझी कि वह नारियल कहाँ फोड़ रहा है। अप्रत्याशित चोट से उपजे भयंकर दर्द के कारण आचार्य श्री लड़खड़ा गए। वे गिर पड़ते उससे पहले साथ चल रहे श्रावकों ने उन्हें संभाल लिया। इस भयंकर चोट से आचार्य श्री के पंजे में छह फैक्चर हो गए। असहनीय पीड़ा के कारण वे नीचे बैठ गए। माहौल की नजाकत समझ आप खड़े हुए व समता भाव से धीमे-धीमे चलकर गंतव्य तक पहुँचे। मंगल आशीर्वचन भी कहे।

वैद्यों द्वारा छोटा-मोटा उपचार किये जाने के अलावा आपने कोई इलाज नहीं करवाया। महीनों आपके पंजे में दर्द रहा जिसे समता भाव से सहते आप आत्म साधना करते रहे। अंगूठे में तो आज भी तकलीफ है जिसे चुपचाप सह रहे हैं। आपके मन में उस श्रावक के प्रति किसी प्रकार का क्षोभ नहीं है।

इस घटना ने समाज व श्रावकों व श्रद्धालुओं को सबक सिखाया कि संतों के चरणों में नारियल फोड़ उसके पानी से पाद प्रक्षालन करने की बजाय श्रद्धा से उनके चरणों में नमन करना चाहिये। यही हमारा बड़ा पाद प्रक्षालन है। एक

व्यक्ति की लापरवाही ने मुनि श्री के पंजे पर नारियल फोड़ संयमधारी परीषह सहते साधु को भीषण परीषह जन्य पीड़ा दे दी। जो साधु दवाई नहीं लेते, एलोपेथी उपचार नहीं करवाते, उन्होंने यह पंजे के फैक्चर से हुई पीड़ा कैसे सही होगी, सोचकर हमारा हृदय काँप उठता है। उस पीड़ा को भुक्तभोगी ही समझ सकता है। कलम द्वारा उसे बयाँ नहीं किया जा सकता। मेरा समाज के समस्त श्रद्धालुओं से निवेदन है कि वे संत चरणों में नारियल फोड़कर अपनी मुनि भक्ति का परिचय न दें। साथ ही संतों के साथ चल रहे श्रावकों व कार्यकर्ताओं का भी कर्तव्य है कि ऐसे विशेष अवसरों पर संतों को घेरे में लेकर चलें, उनकी सुरक्षा का पूरा ध्यान रखें। तभी हम ऐसी अनहोनी घटनाओं से अपने साधुओं को बचा सकते हैं।

अंततः बोरीवली (योगी नगर) मुंबई महानगर में चातुर्मास कलश स्थापना विधि विशाल जनसमुदाय के बीच सम्पन्न हुई। संघ के प्रति समर्पित श्रावक पूर्ववत सक्रिय हो गए। संघ संचालक भी अपनी जिम्मेदारी यथावत निभाने लगे। इधर मुंबई व अन्य जगहों के श्रावक भी आचार्य श्री व संघ के प्रति समर्पित थे। पट्टाचार्य पद संभालने के बाद आचार्य श्री दुगुने उत्साह से अपनी साधना व धर्म प्रभावना के लिए सक्रिय हो गए। इस बार का चातुर्मास और अधिक भव्यता से संपन्न हो रहा था। इतने बड़े संघ के साथ मुंबई में आचार्य श्री के सान्निध्य में प्रथम चातुर्मास होने के कारण दूर-दूर से मुनि भक्त श्रावक वृहद पैमाने पर आ रहे थे। इतने बड़े महानगर में आचार्य श्री की प्रेरणा व प्रभाव के कारण समाज उनके भोजन व आवास की समुचित व्यवस्था कर रहा था।

विभिन्न कार्यक्रमों का आयोजन, पर्युषण पर्व, श्रावक संस्कार शिविर, विद्वत् गोष्ठियों का आयोजन तो सम्पन्न हुआ ही, दहीसर में गुरुवर का स्वर्ण संयम महोत्सव, अंधेरी में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा, गुलालवाड़ी में गुरुवर सन्मतिसागरजी का प्रथम समाधि दिवस मनाया गया जिसमें देश के कोने-कोने से विद्वत् गण पंडित व श्रावकों का पदार्पण हुआ। सभी ने आचार्य श्री के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित की। बोरीवली में नंदीश्वर मंदिर में हीरक महोत्सव व मूर्ति स्थापना बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुए।

सृष्टि पर परमोपकार करने वाली मातृशक्ति सप्तम प्रतिमाधारी सुश्राविका माँ मुन्नीदेवी के समतापूर्वक णमोकार मंत्र स्मरण के साथ समाधि मरण का समाचार आचार्यश्री को मिला। इसी चातुर्मास में विरक्त होकर लघु भ्राता विनयजी ने आचार्यश्री से आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत का संकल्प लेकर मोक्षमार्ग में पहला कदम रखा।

अतिशयकारी घटना

बोरीवली चातुर्मास की एक घटना है। मुंबई वासी गुरुभक्त प्रज्ञ श्रावक श्री उमेदमलजी काला आचार्य श्री के दर्शनार्थ आए। दर्शन कर आचार्य श्री के श्रीचरणों में बैठ गए। आँखों में आँसू भरे बड़े दुःखी स्वर में उन्होंने आचार्य श्री से कहा कि उनकी पत्नी कैंसर जैसी असाध्य बीमारी से ग्रस्त है। मुंबई महानगर के बड़े-बड़े हॉस्पिटल के बड़े से बड़े डॉक्टर को दिखा चुके हैं। पैसा पानी की तरह बहा रहे हैं पर हर डॉक्टर का यही कहना है कि इस बीमारी का कोई इलाज नहीं है। आखिरी स्टेज पर है। चार-छह महीने ये जी लें सो ही बहुत है। और वे रो पड़े।

भरापूरा श्रीमंत परिवार काफी तनाव में था कि अब क्या होगा? कैसे होगा? उमेदमलजी को तो पत्नी के बिना जीवन अंधकारमय लगने लगा। आचार्य श्री ने उन्हें अपनी बीमार पत्नी को साथ लाने को कहा। दूसरे दिन वे अपनी पत्नी को गुरुचरणों में ले आए। साथ में गुरुचरणों में चढ़ाने के लिए दो सेवफल भी लाए थे। सेवफल गुरु चरणों में चढ़ाकर वे वहीं बैठ गए। आचार्य श्री ने दोनों के सिर पर पिच्छी रख आशीर्वाद दिया व दोनों सेवफल घर ले जाकर उसे माँ से खाने के लिए कहा। अब उमेदमलजी रोज सुबह दो सेवफल लेकर आते व गुरु चरणों में चढ़ा देते। गुरुदेव आशीर्वाद देकर उन्हें अपने हाथ से वापस उन्हें दे देते और वे घर ले जाकर दिन भर में दोनों सेवफल पत्नी को खिला देते।

करीब डेढ़ माह बाद सपत्नीक गुरु दर्शन को आए। उनकी पत्नी ने बड़े विनय व भक्ति भाव से गुरु दर्शन कर चरणों में दोनों ने एक-एक सेवफल चढ़ा दिया। बड़ी प्रसन्नता से उस माँ ने कहा कि महाराजजी, अब मुझे बहुत अच्छा लग रहा है। आचार्य श्री ने उमेदमलजी से कहा- इनका पुनः डॉक्टर से चेकअप करवाओ।

पन्द्रह दिन बाद अर्थात् दो माह बाद उमेदमलजी उन्हें हॉस्पिटल ले गए। डॉक्टर ने सारी जाँचें फिर से करवाईं। सारी जाँचों की रिपोर्ट पॉजीटिव देखकर डॉक्टर आश्चर्य में पड़ गए व कहा कि अभी ये बिल्कुल ठीक हैं। चिंता करने की कोई जरूरत नहीं। फिर डॉक्टर टीम ने उमेदमलजी से पूछा कि इनका और क्या इलाज करवाया तथा उन्हें क्या खिलाया? इनकी सेहत भी बहुत अच्छी लग रही है। उमेदमलजी ने डॉक्टरों को बताया कि हम हमारे गुरुदेव के दर्शनार्थ जाते हैं, उनके चरणों में दो सेंवफल रोज चढ़ाते हैं। वे आशीर्वाद देकर सेंवफल हमें दे देते हैं। बस रोज के खाने के अलावा वे दो सेंवफल हम गुरु आशीर्वाद प्रसादी के रूप में इन्हें खिला देते हैं। यह तो गुरुदेव की कठिन साधना व मंगल आशीर्वाद व दुआओं का ही फल है।

डॉक्टर भी कहने लगे कि संतों के आशीर्वाद व दुआओं में बड़ा आश्चर्यजनक चमत्कार होता है। कभी-कभी डॉक्टर का इलाज व विज्ञान जो काम नहीं कर सकता वो काम संत आशीर्वाद कर देता है। अभी तो ये स्वस्थ हैं।

उमेदमलजी हॉस्पिटल से अपनी पत्नी को लेकर सीधे आचार्य श्री के चरणों में जा पहुँचे। पति-पत्नी दोनों की आँखों में खुशी के आँसू थे। आचार्य श्री के चरणों में माथा टेक सारी बातें यह कहते हुए बताई कि यह सब आपके अतिशय का प्रभाव है। तब आचार्य श्री ने कहा- नहीं, यह मेरा प्रभाव नहीं, यह तो मैं निमित्त मात्र हूँ। यहाँ मेरे साथ इतने सारे संतों की पवित्र साधना से सकारात्मक ऊर्जा पैदा होती है। उसी के फलस्वरूप व आप दोनों की गुरुभक्ति व आस्था के कारण वेदनीय कर्म के क्षय होने से इनकी वेदना क्षय हुई है।

आचार्य श्री से उस माँ ने उसी वक्त कुछ व्रत नियम लिए। धर्म ध्यान, सामायिक करते हुए चार वर्ष पश्चात 20.7.2015 को णमोकार महामंत्र का जाप करते हुए बड़े शांत परिणामों से उन्होंने प्राण त्यागे। आचार्य श्री के आशीर्वाद से छह माह का जीवन चार वर्ष का निरामय स्वस्थ जीवन हो गया।

जनवरी-फरवरी 2012 मुंबई में

सन् 2011 का महाप्रभावोत्पादक व धर्म प्रभावना कर मुंबई बोरीवली में आचार्य श्री सुनीलसागरजी ससंघ का चातुर्मास संपन्न हुआ। अभी कुछ बड़े-बड़े आयोजन कराने की वहाँ आपने स्वीकृति दे दी थी। अतः अभी मुंबई में ही विराजमान थे। देश के कोने-कोने से गुरुभक्त श्रावक आपके दर्शनार्थ आते रहते थे।

नरवाली के पारसमलजी की घटना (राज.)

श्रावक श्री पारसमलजी तलवाड़िया आचार्य श्री सुनीलसागरजी के दर्शनार्थ मुंबई पहुँचे। आचार्य श्री की आहार चर्या के पश्चात वे उनके कमरे में पहुँचे व दर्शन कर चुपचाप चरणों में बैठ गए। वे बड़े दुःखी दिख रहे थे। आँखें पनियाली थीं। आचार्य श्री ने हमेशा बोलते रहने वाले पारसजी को चुपचाप इस तरह बैठा देख पूछा- क्या हो गया है तुम्हें? हाथों पर पट्टियाँ क्यों लगा रखी हैं? अब तो उनके सब्र का बाँध टूट गया। कहने लगे- मेडिकल चेकअप करवाया तो कैंसर की रिपोर्ट आई है। वे आगे कुछ नहीं बोल पाए व जोर-जोर से रोने लगे। सच है, सांसारिक दुःखों से दुःखी प्राणी गुरु शरण या प्रभु शरण में ही जाता है। प्रभु तो बोलते नहीं पर गुरु कोई न कोई उपाय अवश्य बताते हैं जिससे मन को शांति मिलती है।

आचार्य श्री के चरणों में उन्होंने जो श्रीफल चढ़ाया था, उसी को उठाने को गुरुदेव ने उन्हें कहा। श्रीफल ले पुनः

गुरुचरणों में उन्होंने नमन किया। पिच्छी से आशीर्वाद देते हुए आचार्य श्री ने कहा- इसका पानी पी लेना, गिरि खा लेना। उन्होंने वैसा ही किया। कुछ समय पश्चात आचार्य श्री के आदेश से वे पुनः डॉक्टर के पास पहुँचे। सारे टेस्ट पुनः करवाए गए। आपकी सारी रिपोर्ट नारमल आई। डॉक्टरों ने कहा- लगता है आपकी पूर्व रिपोर्ट गलत है। इसके लिए आपसे माफी चाहते हैं। इस वर्तमान की टेस्ट रिपोर्ट में आपको कैंसर नहीं है। आश्चर्य है। पारसमलजी जिन्हें भविष्य अंधकारमय लग रहा था, लगा गुरुवर के आशीर्वाद व पुण्यमयी पावन प्रभाव से ही यह चमत्कार हुआ है। और उन्होंने वहीं से गुरुवर को श्रद्धा से नमन किया। इसके पश्चात वे पुनः गुरु दर्शनार्थ पहुँचे और कहा कि गुरुदेव यह सब आपकी कृपा का ही फल है।

घटना नं. 2 खमेरा (राज) की

इन्हीं दिनों गुरु भक्त प्रकाशजी कराड़िया (खमेरा, राजस्थान वाले) आचार्य श्री के दर्शन के लिए मुंबई आए हुए थे। वे गुरुदेव के चरणों में बैठे हुए थे कि तभी उनका बेटा, जो दुबई में काम करता था, भारत आया हुआ था व वापस मुंबई एयरपोर्ट से दुबई जा रहा था। उसका प्रकाशजी के पास फोन आया कि वीजा चेकअप में अधिकारियों का कहना है कि वीजा की डेट खत्म हो गई है व उसे दुबई जाने की परमीशन नहीं मिली है। अब मैं क्या करूँ? प्रकाशजी ने तत्काल चिंतित हो यह बात आचार्य श्री को बताई। थोड़ी देर बाद आचार्य श्री ने उनसे कहा कि बेटे से कहो कि वह कल जाए। दूसरे दिन वह उसी वीजा से दुबई चला गया। बिना किसी रोक-टोक के। ऐसी आचार्य श्री की वचन सिद्धि की कई घटनाएँ हैं।

अभी तक एकांत प्रिय, मौन साधक आचार्य श्री सुनीलसागरजी जो अपना अधिकांश समय अध्ययन, ध्यान, लेखन में व्यतीत करते थे, अति परिचय वार्तालाप से दूर रहते थे, अब बुद्धि, विलक्षण प्रतिभा व संघ व समाज के प्रति वात्सल्यपूर्ण व्यवहार के साथ नए स्वरूप में दिखाई दिये। मुंबई जैसे महानगर में महती धर्म प्रभावना करते उन्होंने इतने बड़े संघ के साथ जिस व्यवहार कुशलता, शालीनता व गरिमा के साथ चातुर्मास संपन्न किया था उसे देख समाज में उनके प्रति आदर, सम्मान व श्रद्धा बढ़ती गई। सब उनके इस साहस के प्रति नतमस्तक थे। कुछ विघ्न संतोषी जनों का सोचना था कि युवाचार्य इतने बड़े संघ को, जिसमें उनसे सीनियर कई साधुगण थे, नहीं संभाल पाएँगे। किंतु आचार्य श्री ने अपनी दक्षता, नेतृत्व क्षमता व त्वरित निर्णय लेने की प्रक्रिया द्वारा ऐसा अनुकरणीय आदर्श उपस्थित किया, लोग सोचने के लिए मजबूर हो गए कि उनके लिए ऊँचाई पर पहुँचना व गहराई में उतरना समान प्रक्रिया है।

भाग-4

लोक अभ्युदय व आत्मोन्नति की ओर बढ़ते चरण

2012- उदगाँव चातुर्मास

मुंबई का ऐतिहासिक, महा धर्म प्रभावक चातुर्मास सानंद संपन्न कर पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी ने सर्वोदयी भावबोध लिए ससंघ पुनः उदगाँव कुंजवन चातुर्मास के लिए विहार कर दिया। 14 फरवरी 2011 को जब उन्होंने वहाँ से प्रथम बार ससंघ मुंबई के लिए विहार किया था तभी से समाधिस्थ तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी का गुरु मंदिर निर्माण कार्य तेजी से रफ्तार पर था। उन्हीं दिनों वे उदगाँव में काफी चिंतित थे कि इतने बड़े गुरु मंदिर के निर्माण का कार्य व बाद का महा आयोजन कैसे संपन्न होगा। तभी एक रात्रि में उन्हें स्वप्न में आचार्य भगवन दिखे। सिर पर पिच्छी रख आशीर्वाद देते हुए उन्होंने कहा- चिंता मत करो। सारा काम सानंद संपन्न हो जाएगा। और वे प्रकाश पुंज के रूप में अदृश्य हो गए। आचार्य श्री रोमांचित हो उठ बैठे। उन्हें भास हुआ कि कमरे में अभी भी दिव्य प्रकाश व्याप्त था। उस क्षण से उनमें नई ऊर्जा और उष्मा का संचार हो गया। जैसे ही वे मुंबई के चातुर्मासिक कार्यक्रम से निवृत्त हुए, अब उन्हें कुंजवन का गुरु मंदिर ही दिख रहा था। सो चल पड़े उस ओर। योगी नगर वासियों ने आँखों में अश्रु भर इस योगी को अपने शहर से विदा दी।

आचार्य श्री ने देखा, महसूस किया कि अब काफी कुछ बदलता जा रहा है। हमारी नई पीढ़ी वैश्वीकरण की छल प्रपंचनाओं की शिकार होती जा रही है। हमारे उद्योग-प्रौद्योग बनते जा रहे हैं। मनुष्य मशीनयुग में पहुँच गया है। हमारी छोटी-बड़ी दुकानें बड़े-बड़े मॉल का ग्रास बनती जा रही है। छोटे-मोटे दुकानदार मॉल में नौकरी करने को मजबूर हैं। बाजार बिग बाजार व मंडी भूमंडी बनती जा रही है। टीवी, कम्प्यूटर, लैपटॉप, मोबाईल के युग में बच्चे, युवा इनमें इतने अधिक डूबे रह आत्म केन्द्रित हो गए हैं कि उनका परिवार के प्रति भावनात्मक लगाव या जुड़ाव शिथिल होता जा रहा है। पास-पास बैठकर भी आपस में बातचीत नहीं करते। पारिवारिक व सामाजिक रिश्तों को बनाए रखने में उनकी यह प्रवृत्ति घातक है। अतः आचार्य श्री परिवार व समाज को सावचेत करते जा रहे थे। इस प्रकार आचार्य श्री अपने पद संचलन में हर कही समाज को सर्जन संस्कार, संस्कृति संस्कार, धर्म संस्कार, दर्शन संस्कार, ज्ञान संस्कार, चारित्र संस्कार से सींचते, हमारी महान व विशाल अस्मिता को अक्षुण्ण बनाए रखने की कवायद करते नजर आ रहे थे। वे जगह-जगह इस हेतु सामाजिक चेतना की अग्नि शिखा प्रज्वलित करते जा रहे थे। इस प्रकार वे छोटे से छोटे या यों कहो चंद क्षणों के प्रवास में भी अपने अवदानों से अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहे थे।

पाद प्रक्षालन, आरती व बाजों-गाजों के साथ ग्राम-नगर में आपका मंगल प्रवेश हो रहा था। वे अपने पद संचलन में प्राणी मात्र- मनुष्य, पशु-पक्षी, जलचर, थलचर, नभचर प्रत्येक जीव, कीट पतंगों तक, जल अग्नि, वायु, वनस्पति (पेड़-पौधों), आकाश, मिट्टी आदि के प्रति समरसता के भाव लिए सबके अस्तित्व के सार्थकत्व के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करते बढ़ रहे थे।

अंततः कुंजवन, जिसकी माटी के कण-कण से आप परिचित थे, जो माटी आपके लिए चन्दन सी पवित्र थी, में 2012 के चातुर्मास के लिए मंगल प्रवेश किया। आपकी अगवानी व अभिनंदन ऐतिहासिक रहा। समाज व मंदिर ट्रस्ट के अधिकारियों को 2012 का वर्षायोग का जो वचन दिया था, मुंबई आकर किये गये बार-बार के आग्रह को न टाल आपने सबका इंतजार समाप्त कर दिया। जिस माटी से गुरुवर की मृणमय देह एकमेक होकर जो पावन पवित्र महक उठ रही थी अब आपको उस महक के वाहक ही नहीं, प्रवाहक और संवाहक बनना था।

पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी की पट्टाचार्य पद प्राप्ति के बाद गुरुदेव तपस्वी सम्राट के 28 पिच्छीधारी संतों के प्रति कर्तव्य व उत्तरदायित्व के निर्वहन के साथ उनकी धर्मयात्रा व चिंतन यात्रा जारी थी।

वे सोच रहे थे कि अर्हन्त सिद्ध को तो साक्षात् रूप में हमने नहीं देखा, किन्तु आचार्य तो मैंने/हमने तपस्वी सम्राट आत्मानुशास्ता गुरुओं के गुरु आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के रूप में देखा है। अहो! उनकी उदारता का क्या कहना?

उनकी घनी बरगदी शीतल छाह तले मुझ जैसे कितने ही मुमुक्षुओं ने उनसे संतत्व के संस्कार, आचार-विचार, शिक्षादि प्राप्त किया है। उन्होंने ही हम चक्षुयुत दृष्टिहीनों को यह दृष्टिबोध दिया कि एक निस्पृही, वीतरागी, संत ही सम्पूर्ण विश्व, सारी सृष्टि तथा व्यक्ति, समाज व राष्ट्र को सत्य, अहिंसा, शान्ति, दया, प्रेम, करुणा, सद्भाव, सौहार्द्रता, सहयोग, सद्विचार, समन्वय व सदाचार जैसी जीवन विकास की अनेकानेक शिक्षाएँ देकर उसका 'सत्यम् शिवम् सुंदरम्' से साक्षात्कार कराता है और कराता आ रहा है तथा कराता रहेगा।

मुझ नौसीखिये को भी उन महान गुरु ने ही धर्म मार्ग में प्रवृत्त कर सत्यवादिता, निर्मलता, निर्लोभ, दया-करुणा भावना, त्याग व संयम मय जीवन, यथायोग्य तप, परोपकार करने की प्रवृत्ति जैसे धर्मात्मा के लक्षण बताए, समझाए कि धर्म के बिना जीव को किसी काल में सुख-शान्ति नहीं मिल सकती। अतः हमें सच्चे धर्म मार्ग पर चलने का सतत पुरुषार्थ करना चाहिये। धर्म ही प्राणीमात्र के कल्याण का कारक है। अतः धर्म मार्ग पर चलना व चलाना संत का कर्तव्य है।

मुझ पर तो उन महा कृपानिधि, करुणा वारिधी की असीम कृपावृष्टि की क्या बात? एक कुशल कुलाल की भाँति उन्होंने मुझे संयम के चाक पर चढ़ा, अन्दर वात्सल्य का हाथ पसार, ऊपर से अनुशासन की चोट मार-मार थप-थपा कर मेरी सारी खोट निकाल मुझे कुम्भ की तरह घड़ा। संस्कारों के अलावों में पका-तपा मुझे स्वर्ण कलश सी कुंदन कान्ति से दमकाया। मेरी छुपी प्रतिभा, योग्यता, दक्षता को उभारा व निःस्वार्थ भाव से समाज के बीच मुझे स्थापित किया। हर क्षेत्र में मुझे आगे बढ़ाया। शिष्यों के प्रति उनके वात्सल्य का पारावार नहीं। गुरुदेव की माँ सी सहृदय उदारता याद कर पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी जैसे मोहातीत संत की आँखें छलछला आतीं। माँ से ज्यादा संतान को व गुरु से ज्यादा शिष्य को कौन जानता है? फर्क इतना है कि माँ ममतावश अपनी संतान के गुण-अवगुण ढाँक देती है, छुपा लेती है और अनजाने में उसके महाअहित का काम कर बैठती है। लेकिन विवेकी, गिरि गुदा से कोमल व श्रीफल से कठोर हृदय गुरु शिष्य को मुक्ति का महा श्रीफल प्राप्त कराने की साधना व पुरुषार्थ में सतत जुटे रहते हैं। वे उसकी गलतियाँ प्रायश्चित देकर सुधारते हैं व अच्छे कार्यों पर आशीर्वाद दे दे कर आगे बढ़ाते, कल्याण मार्ग पर अग्रसर करते हैं।

ऐसे आचार्य गुरु श्री सन्मतिसागरजी, जिनके आसन में कार्यसिद्धि, शासन में मनःसिद्धि और भाषण में वचन सिद्धि रहा करती थी, जो पर्वत के समान कठोर, धरती के समान धीर तथा समुद्र के समान गंभीर थे, उन ज्ञान ज्योति गुरुवर के प्रति उनके परम धर्मप्रभावक प्रिय शिष्य चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी पूर्णतः समर्पित थे। वे अपने आपको गुरु अनुकम्पा से कृतकृत्य मानते थे। अतः गुरु ऋण से सभर चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनील सागरजी ने गुरु मंदिर बनवाने का मन ही मन संकल्प लिया।

कुंजवन के मनोहारी प्राकृतिक वातावरण में, चातुर्मासिक साधना काल में सौम्य मूर्ति, ध्यान मूर्ति, ज्ञान मूर्ति, व्रत मूर्ति, क्रिया मूर्ति, तपस्वी सम्राट के गुरु मंदिर के निर्माण का कार्य द्रुत गति से चल रहा था। एक दिन कुत्तों के डर से भागता हुआ एक बंदर नारियल के पेड़ से फिसलकर गिरा तो कुत्तों ने उसे घायल कर दिया। तब कुछ लोग उसे आपके पास ले आए। आपने उसे समाधि कराई।

आपकी प्रेरणा व आशीर्वाद से तपस्वी सम्राट के परम भक्त श्रीमती सज्जनदेवी ज्ञानचंदजी मिंडा परिवार द्वारा उन देवपूज्य, महापूज्य, सर्वपूज्य, सदापूज्य, लोकपूज्य, मनस्वी, सूरिश्रेष्ठ गुरुवर जिस तरह तपस्यारत व ध्यानस्थ खड़गासन धारे ध्यान मुद्रा में आत्मलीन रहा करते थे, उसी खड़गासन ध्यानमुद्रा में, गुरु स्मृति स्वरूप उनकी मनोहारी, प्रशांत 1008 किलो की पंचधातु की स्वर्ण वर्ण, चैतन्य चमत्कारी प्रतिमा का निर्माण करवाया गया। प्रतिमा इतनी जीवन्त है कि लगता साक्षात गुरुवर ही खड़े हैं, अभी बोल उठेंगे।

दि. 24.12.2012 को उन गुरु के परम प्रभावक शिष्य, परम्परा के चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी ने उन समदृष्टि, क्षमादृष्टि व दिव्य दृष्टि सिद्धि साधक गुरुवर की प्रतिमा को संस्कारित कर उन महा तपस्वी की वह सुदर्शन

मूर्ति, गुरु समाधि मंदिर में विराजित करवा उन ध्यानतीर्थ, आत्मतीर्थ व आचरणतीर्थ गुरु की भक्तों के लिए हुई कमी पूरी कर दी। उन युग मुख्य, मुनि मुख्य व लोक मुख्य अपने गुरुवर की अखंड ज्ञान ज्योति प्रज्वलित कर पट्टाचार्य श्री सुनीलागरजी ने गुरु के प्रति अपने कर्तव्य निर्वहन की मिसाल प्रस्तुत की।

इस प्रतिमा की स्थापना के साथ समाधि मंदिर में विराजित इस जीवंत प्रतिमा ने मानो गुरुदेव तपस्वी सम्राट की कमी पूरी कर दी। दूर से देखते ही भक्तगण श्रद्धाभिभूत गुरु चरणों में विनयावनत हो जाते। आचार्य श्री सुनीलसागरजी स्वयं को नहीं रोक पाए व भाव विह्वल हो काफी देर गुरु चरणों में बैठे रहे व सजल नयनों से गुरुवर की परम शांत वीतरागी मुख मुद्रा को निहारते रहे।

* * *

इचलकरंजी-जयसिंगपुर

आचार्य श्री ससंघ उदगाँव कुंजवन में विराजे थे। यहाँ आपने चातुर्मास में मुकुट सप्तमी के दिन 25 जुलाई 2012 को तीन दीक्षा प्रदान की जिसमें क्षुल्लक समणसागर बने मुनि सिद्धात्मसागर, क्षुल्लक मलयसागर बने मुनि शुद्धात्मसागर तथा मुंबई के ब्र . जयकुमार बने मुनि सिद्धार्थसागर।

यहाँ से आचार्य संघ सांगली होते हुए इचलकरंजी पहुँचा। वहाँ अजित कासलीवाल की टेक्सटाइल कंपनी में आपके सान्निध्य में पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महामहोत्सव बड़ी धूमधाम से चल रहा था। तभी वहाँ काम करने वाली 16-17 वर्ष की एक युवती के दोनों पैरों में असह्य दर्द उठा। दूसरे दिन तक तो वह न खड़ी हो सकती थी न चल-फिर सकती थी। डॉक्टर की दवा का भी कोई असर नहीं हो रहा था।

लोगों ने सुन रखा था कि बाबा (आचार्य श्री) के आशीर्वाद से बीमार व्यक्ति ठीक हो जाते हैं। अतः वे उस लड़की को येन-केन प्रकारेण आचार्य श्री के पास लेकर आए। उसने फल चढ़ाकर आचार्य श्री को नमस्कार किया। आचार्य श्री ने आशीर्वाद देकर वही फल उसे वापस कर खाने के लिए कहा। उस लड़की ने वह फल खा लिया। शाम तक वह ठीक होकर आचार्य श्री के दर्शन के लिए चलकर आ गई। भक्ति भाव से कृतकृत्य होते हुए आचार्य श्री की चरण वंदना की। वह बार-बार प्रार्थना करते हुए कहने लगी कि बाबा, मैं आपके आशीर्वाद से ही ठीक हुई हूँ। आप सच में चमत्कारी बाबा हैं।

आचार्य श्री ने उसे समझाया कि हम में कोई चमत्कारी नहीं है। संतों की निष्काम साधना व तपस्या के प्रभाव से लोगों की कार्यसिद्धि हो जाती है। फिर तुम्हारा पुण्योदय भी काम आया और कुछ नहीं।

इचलकरंजी से विहार कर आचार्य श्री ससंघ महाराष्ट्र के कोल्हापुर जिले के गणेशवाड़ी कस्बे में विराजमान हुए। यहीं पास के एक छोटे से शिरटी गाँव में आर्यिका श्रुतमती माताजी की गृहस्थाश्रम की मौसी की डिलेवरी हुई। 16वें दिन उसके चारों हाथ-पैर व उंगलियाँ ऐंठ कर टेढ़े हो गए। पूरे शरीर में असह्य वेदना के कारण वह मछली की तरह तड़पती थी। डॉक्टरों के इलाज का जरा सा भी असर नहीं हो रहा था। इंजेक्शन का असर समाप्त होते ही वह पुनः असहनीय पीड़ा से तड़पने लगती। परिवार व रिश्तेदार लोगों ने गणेशवाड़ी आचार्य श्री के पास आकर सारी दास्तां कह सुनाई। आचार्य श्री ने मन ही मन उसे अच्छा होने का आशीर्वाद दिया व णमोकार मंत्र बोलते हुए एक सेंवफल उन्हें दिया व कहा कि इसका रस निकालकर उसे पिला देना।

डिलेवरी वाली महिला को सेंवफल का रस निकालकर पिलाया गया। दो दिन में उस महिला का सारा दर्द काफूर हो गया। हाथ-पैर सीधे हो गए। उस दिन के बाद आज तक उस महिला को ऐसी कोई परेशानी नहीं हुई।

चारों ओर आचार्य श्री की महिमा का बखान होने लगा।

श्रुत पंचमी 2013 के अवसर पर आचार्य आदिसागर अंकलीकर का आचार्य पदारोहण शताब्दी वर्ष का आगाज

जयसिंगपुर में हुआ। यहीं उन्हें आचार्य पद की प्राप्ति सौ वर्ष पूर्व 1915 में हुई थी।

अंकली गाँव चातुर्मास 2013

उदगाँव कुंजवन से सांगली, इचलकरंजी, गणेशवाड़ी, जयसिंगपुर, हसूद- कागवाड़ जहाँ तलघर में भ. शांतिनाथ की अत्यंत चमत्कारी प्रतिमा है, जिस तक पहुँचने का सँकरा रास्ता है और प्रतिमा अवगाहन के अनुसार ऐसा लगता है कि प्रतिमा भूगर्भ तक कैसे पहुँची होगी। दर्शनीय, अतिशय सम्पन्न जिनबिम्ब का दर्शन कर आप सुध-बुध बिसरा कुछ क्षणों के लिए प्रभुमय हो गए। यहाँ से अर्जुन वाड़ी, चिंचवाड़ आदि में धर्म केतु फहराते हुए आचार्य श्री ससंघ अंकली ग्राम, अपनी परम्परा के जन्मदाता आचार्य श्री आदिसागरजी (मुनिकुंजर) अंकलीकर की जन्मस्थली पहुँचे। जब मुनियों के दर्शन दुर्लभ थे, तब मुनि बने युगश्रेष्ठ, ज्येष्ठ, परम्परा संवाहक आचार्य श्री आदिसागरजी अंकलीकर की जन्मभूमि में अपने 2013 का चातुर्मास सम्पन्न करने का आपने निर्णय लिया। आप उस रजत बनी रज (माटी) के ऋण से सभार अपने दादा गुरु के चरणों में अपनी श्रद्धा भक्ति के अर्घ्य/पुष्प चढ़ाना चाहते थे।

2013 में गणेशवाड़ी से विहार करते वे जयसिंगपुर होते हुए आचार्य श्री महाराष्ट्र के शिरोल तहसील के हसूर नामक छोटे से गाँव में विराजित धर्म प्रभावना कर रहे थे। वहाँ के दिलीप मानगाँवे नामक 30-32 वर्ष के युवा को खेत में काम करते हुए साँप ने काट लिया। उसी वक्त उसे हॉस्पिटल ले जाया गया। जहर चढ़ने से बेहोशी की हालत में उसे आईसीयू में रखा गया। तभी उसकी बहन ने रोते हुए गुरु चरणों में आ अपना दुःख-दर्द, भाई की व्यथा-कथा सुना दी। उसका रोना रुक नहीं रहा था। आचार्य श्री ने सामने रखा हुआ एक श्रीफल उठा उसे देते हुए आशीर्वाद दिया व कहा कि तुम्हारे भाई को कुछ नहीं होगा।

शाम को ही उसे आईसीयू से बाहर निकालकर घर ले जाने को कह दिया। हॉस्पिटल से उसके होश में आने की खबर तो थोड़ी ही देर में आ गई थी। अब तो गुरुदेव की वाणी सिद्धि के चरचे चारों ओर होने लगे।

अंकली ग्राम 2013 का चातुर्मास कलश स्थापना कर आप अभिभूत थे। लेकिन उस समय आप भाव विह्वल हो गए, जब आपको यह पता चला कि भले ही उन महायोगी आचार्य ने अंकली ग्राम में जन्म लिया हो, वे उस माटी में लोट-पोट कर बड़े हुए हों पर वहाँ के लोग उनके महान व्यक्तित्व एवं कृतित्व तथा उनकी त्याग-तपस्या की गरिमा और महिमा से अनजान थे। वहाँ लोगों की न तो धर्म के प्रति आस्था मजबूत थी, न उन सूरिश्रेष्ठ के प्रति। यह देख पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी 'गुरुणां गुरु' का यशोगान करते, उनके अद्भुक्त व्यक्तित्व-कृतित्व व त्याग का बखान करते, तब भी कुछ लोग अपनी माटी से जन्मे सूरिश्रेष्ठ के प्रति किंचित भी गौरवान्वित नहीं होते।

चातुर्मास स्थापना के प्रारंभिक दिनों में आचार्य सुनीलसागरजी रोज आचार्य श्री आदिसागरजी अंकलीकर का गुणगान करते। वहाँ के श्रावकों को उनके व्यक्तित्व व कृतित्व के चरचे सुनाते। धर्म व गुरुओं के प्रति श्रद्धा व आस्था के अभाव में चातुर्मास के प्रारंभ में आचार्य श्री से बहुत कम लोग जुड़े।

किंतु आपकी कुशल वक्तृत्व शैली, स्वभाव में सरलता व ऋजुता, सहृदयता, अपार वात्सल्य व करुणा, अथाह ज्ञान, युवावस्था का उत्साह, विनोद भाविता से दिए गए प्रवचनों से लोग धीरे-धीरे आपकी ओर आकर्षित होने लगे। आचार्य श्री मात्र बुद्धि कौशल से नहीं अपितु अपने हृदय की गहराई व उदारता से, कोयल की कूक सी मधुर वाणी में, जिनवाणी का अमृत घोल, जन हृदय के सांसारिक दुःखों की हूक मिटाने लगे। धीरे-धीरे लोगों को आचार्य श्री अपने सच्चे हितचिंतक लगने लगे। यद्यपि आचार्य श्री को पहले से विदित था कि अंकली गाँव के कुछ परिवार छोड़ शेष में न धार्मिक ज्ञान है न धार्मिक आस्था। मूलतः अंकली गाँव का 2013 का चातुर्मास उस महान संत की जन्मभूमि के लोगों का अज्ञानांधकार मिटा उन्हें धर्म में प्रवृत्त कर आत्मकल्याण की प्रेरणा देने के साथ उस माटी में जन्मे युग पुरुष

के जीवन के इतिहास के बंद पृष्ठों को खोल उनके प्रति गौरव जगाना था। आचार्य श्री को शनैः-शनैः सफलता मिल रही थी। वे लोग जो कभी मंदिर नहीं जाते, जो आहार चर्या कराना नहीं जानते, न वैयावृत्ति में आते, वे अब आचार्य श्री की प्रेरणा व गुरुओं के प्रति कर्तव्यों का मार्गदर्शन पा बड़े उत्साह से हर चर्या में बढ़-चढ़ कर भाग लेने लगे। युवाचार्य की तेजोमय उर्जस्विता देख युवा वर्ग उनके आगे-पीछे घूमने लगा। अंकली गाँव के बच्चे-बच्चे की छाती इस माटी से जन्मे उन महायोगी का इतिहास जान गर्व से फूल जाती है। हर किसी को अब उनके कार्यों के बारे में काफी जानकारी हो गई थी।

अंकलीकर धाम व तीर्थ

सतगुरु का सान्निध्य व सत्संग पा लोगों के जीवन में आमूलचूल परिवर्तन हो गया। चातुर्मास समाप्त होते-होते तो पूरा अंकली गाँव व आसपास के गाँव आचार्य आदिसागर (अंकलीकर) व आचार्य सुनीलसागरमय हो गए। अंकली गाँव के बच्चे-बूढ़े-जवान स्त्री-पुरुष प्रत्येक के मुख से यही निकलने लगा, 'आमची शान आचार्य आदिसागर अंकलीकर आणि आमच्या गुरु फक्त आचार्य सुनीलसागर।'

आचार्य श्री को आत्मसंतोष था कि जिस लक्ष्य को लेकर यहाँ चातुर्मास किया था, वह पूर्ण हुआ, सफल हुआ। तब महाराष्ट्र के अंकली गाँव के लोगों का आचार्य श्री सुनीलसागरजी के प्रति इतना आत्मीय व प्रगाढ़ जुड़ाव हो गया है कि वे तब से आज तक आचार्य श्री वहाँ से चाहे जितनी भी दूर हो, प्रतिवर्ष स्पेशल गाड़ी करके उनके व संघ के दर्शन, आहार चर्या, वैयावृत्ति के लिए जाते हैं।

इस प्रकार आचार्य श्री चातुर्मास करने की दृष्टि से कहीं भी चातुर्मास नहीं करते, अपितु उस क्षेत्र, क्षेत्रवासियों के कल्याण के विशिष्ट उद्देश्य से चातुर्मास करते हैं। हम देख रहे हैं कि वे कितनी ही भव्यात्माओं को दीक्षा व समाधिमरण करवा उनका कल्याण कर रहे हैं। ऐसे कल्याण पथ पर चलने वाले साधु बिरले होते है। आपके आशीर्वाद से अंकली में अंकलीकर तीर्थ व अंकलीकर धाम का निर्माण हुआ।

साधु समाधिमरण दीक्षा

पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी का 2013 का अंकली ग्राम का चातुर्मास ऐतिहासिक भी रहा और अभूतपूर्व भी। जहाँ दीक्षाएँ हो रही थी वहीं साधुओं की समाधि भी। पर्युषण के उत्तम त्याग धर्म के दिन क्षुल्लक सत्यसागरजी ने मुनि दीक्षा ली और उनका गुरु चरणों में समाधिमरण हो गया। इसी तरह मुनि श्री शुद्धात्मसागरजी ने भी अत्यंत शान्त परिणाम से प्रातःकाल समयसार ग्रंथराज आचार्य गुरु को लौटाते हुए कहा, इसका भी त्याग एवं णमो सिद्धाणं का उच्चारण करते हुए उनका भी गुरु चरणों में ही समाधिमरण हो गया। उनका अंतिम संस्कार कृष्णा नदी के तट पर उसी गुफा के पास किया जहाँ आ. आदिसागरजी तप करते थे और आ. सुनीलसागरजी हर अष्टमी-चतुर्दशी को मौन-उपवास साधना कर रहे थे।

अंकली ग्राम में अक्षय तृतीया के दिन ब्र. नरेश भैयाजी दीक्षा ले क्षुल्लक शिवमसागरजी बने। दि. 7.10.13 को आचार्य श्री सुनीलसागरजी की जन्म जयंती पर ब्र. अभिनव भैया, क्षु. सुश्रुतसागर बने। 7.12.13 को क्षुल्लिका सुवीरमति आर्यिका आद्यमति, क्षु. अमियमति आर्यिका आर्षमति, ब्रह्मचारिणी कीर्ति दीदी आर्यिका आराध्यमति, ब्रह्मचारिणी अनिता पाटिल आर्यिका आकाशमति व आर्यिका आगम मति माताजी बनीं।

ज्यों-ज्यों चातुर्मास के दिन बढ़ते जा रहे थे, लोगों की आचार्य श्री के प्रति श्रद्धा, आस्था व सहभागिता प्रगाढ़ होती जा रही थी। लोगों ने उन्हें और उन्होंने लोगों को अच्छी तरह पहचान लिया था। कई बार मराठी में प्रवचन देकर आपने जनहृदय जीत लिया। सब आपके प्रति हृदय से समर्पित हो गए। जहाँ आपने आचार्य श्री आदिसागरजी को जनहृदय में

स्थापित किया वहीं अनेक अन्य कार्य भी किये।

आचार्य अंकलीकर के वंशज श्री सुनीलजी पाटिल की अध्यक्षता में आदिसागर झांझपथक ग्रुप को प्रोत्साहित व प्रेरित करने के लिए आपने अपने चातुर्मास पंचकल्याणकों, महावीर जयंती जैसे कार्यक्रमों में आमंत्रित करने की योजना बनाई, जो आज भी आपके द्वारा क्रियान्वित है।

विजयादशमी दशहरे के दिन अंकलीमला भाग में श्रीमती रूबी कीर्तिजी दावड़ा मुंबई द्वारा अंकलीकर तीर्थ के लिए भूमिपूजन हुआ एवं धनतेरस (दीपावली) के दिन भव्य शिलान्यास समारोह के साथ आचार्य श्री के सान्निध्य में पूर्वाचार्यों प.पू. प्रथम पट्टाचार्य आचार्य श्री आदिसागरजी अंकलीकर, द्वितीय पट्टाचार्य आचार्य श्री महावीर कीर्तिजी, आचार्य विमलसागरजी व तृतीय पट्टाचार्य तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी की मूर्ति स्थापना का कार्य संपन्न हुआ।

अंकलीकर तीर्थ उस पावन क्षेत्र पर स्थित है जहाँ कृष्णा नदी के किनारे आचार्य श्री आदिसागर अंकलीकर महाराज अपने गृहस्थ जीवन में निवास करते थे आज भी वह घर व वह खेत है जहाँ रहते हुए उनके जीवन की कई विलक्षण घटनाएँ घटी हैं। आज भी वहाँ उनके वंशज रहते व खेती करते हुए अपना जीवन व्यतीत करते हैं। परम्परा के चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलागरजी ने पितृपुरुष दादा गुरु के प्रति जो कर्तव्य निर्वहन का कार्य किया वह अंकलीकर परम्परा में स्वर्णाक्षरों में लिखा जाएगा।

इस चातुर्मास की एक और महान उपलब्धि अंकलीकर धाम है। गुरु प्रेरणा से सूरत निवासी श्री वीरेन्द्र कनकमलजी डोटिया के विशिष्ट योगदान से सांगली कोल्हापुर हाईवे फ्रंट रोड पर आधुनिक सर्वसुविधायुक्त इस अंकलीकर धाम का निर्माण हुआ है जहाँ आकाश के छत्र तले ज्येष्ठाचार्य अंकलीकर महाराज की ध्यानस्थ, तपस्यारत, खड़गासन प्रतिमा स्थापित की गई है। सौम्य मूर्ति, जीवानुरागी, महाव्रती मुनि ज्येष्ठ की यह भव्य मंगलकारी मूर्ति सभी जीवों का मंगल कर रही है। 4 से 9 दिसंबर 2013 तक पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव संपन्न हुआ।

भावी आभास प्रसंग

आचार्य श्री सुनीलसागरजी की कठोर तपस्या और साधना का फल कहो या उनके पूर्वोपार्जित पुण्य का सुफल, उनके सान्निध्य व आशीर्वाद से लोगों के कष्ट, दुःख-दर्द, रोग, मानसिक क्लेश आदि मिट जाते हैं। जो भी दुःखी दर्दी उनके दर पर अपनी व्यथा-कथा लेकर आता है, इन सिद्धि साधक के निमित्त से उनके सारे कष्ट दूर हो जाते हैं। उनकी करुणा कृपा के सैकड़ों उदाहरण बिखरे पड़े हैं।

बात अंकली ग्राम चातुर्मास कलश स्थापना के समय की है। इस पावन प्रसंग पर बड़ौत (दिल्ली) के परम गुरु भक्त विकास जैन गुरु दर्शनार्थ आए थे। वक्त पाकर उन्होंने गुरु सम्मुख अपना दुःख-दर्द व्यक्त किया। वे मायूस हो कहने लगे कि गुरुवर दो वर्ष से मैं बेरोजगार हूँ। अब तो सिर से छत भी उठने वाली है। परिवार के पेट पालन के लिए घर भी बेचने वाला हूँ, कहते हुए गुरु चरणों में माथा रख रो पड़े। आचार्य श्री ने आशीर्वाद देते हुए उनके सिर पर पिच्छी रखते हुए कहा- ''बहुत शीघ्र तुम्हारा कष्ट दूर होने वाला है।'' अभी उनके सिर पर आशीर्वाद स्वरूप गुरु पिच्छी रखी हुई थी कि उनके मोबाइल की घंटी बजी। जैसे ही उन्होंने फोन उठाया, उन्हें एक बड़ी कंपनी में नौकरी मिलने की सूचना थी। रोते हुए आने वाले विकास जैन गुरु दर्शन की यह पुण्य प्रसादी पा हँसते हुए लौट गए।

मुनिकुंजर आचार्य श्री आदिसागरजी की जन्मस्थली अंकली ग्राम का चातुर्मास सम्पन्न कर चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनील सागरजी ने सूरत (गुजरात) के लिए विहार कर दिया। 100-150 कि.मी. के पद विहार में रोज अंकली गाँव के श्रावक गण आहार, विहार व साधु संघ वैयावृत्ति के लिए आते थे। 5 कि.मी. का विहार कर संघ 5.1.2014 को कर्वे के एक

निर्माणाधीन मकान में रात्रि विश्राम के लिए रुका था। आचार्य श्री अंदर बैठे थे। उन्हें अच्छा नहीं लगा। वे उठकर बाहर आए व घर को देखने लगे। उन्होंने कहा- यह घर बड़ा अजीब है। शुद्धि कर वे अंदर जाकर बैठ गए। सारा संघ व श्रावकगण वहीं बैठे थे। आचार्य श्री ने कहा- इस मकान में मुझे कुछ धोखा लग रहा है। कोई ऊपर मत चढ़ना व सतर्क रहना। उस मकान के आसपास अन्य कोई मकान नहीं था।

इतना कह आचार्य श्री प्रतिक्रमण, दशभक्ति एवं आचार्य वंदना कर सामायिक में बैठ गए। सामायिक पश्चात श्रावक वैयावृत्ति करने लगे। वैयावृत्ति करते हुए श्रावक सुरेश चौगुले के मोबाइल की घंटी बजी। बात करते-करते आचार्य श्री की बात भूल वे ऊपर चढ़ गए। उन्हें कुछ ध्यान नहीं रहा व सिर के बल नीचे गिर गए। सिर फट गया। भारी चोट आई। हॉस्पिटल में दो माह भर्ती रह आचार्य श्री की प्रेरणा से णमोकार महामंत्र का जाप करते हुए उनका निधन हो गया।

यद्यपि आचार्य श्री को पूर्वाभास हो गया था, उन्होंने सभी को सतर्क भी कर दिया था पर होनी को कौन टाल सकता है।

केन्द्रीय मंत्री श्री प्रतीक पाटिल ने की आचार्य श्री सुनीलसागरजी से मुलाकात

प.पू. मुनिकुंजर आचार्य श्री आदिसागरजी अंकलीकर महाराज की जन्मभूमि अंकली, जिला सांगली में चातुर्मास हेतु विराजित चतुर्थ पट्टाधीश आचार्य श्री सुनीलसागरजी महाराज (ससंघ) के दर्शन हेतु केन्द्रीय कोयला मंत्री श्री प्रतीक पाटिल 19 नवंबर 2013 को पधारे। आचार्य श्री के साथ उन्होंने महत्वपूर्ण चर्चा भी की। चर्चा के कुछ बिंदु इस प्रकार रहे :-

मंत्रीजी : नमस्कार आचार्य श्री (विधिवत नमोस्तु कर पास में बैठ गए)।

आचार्य श्री : आशीर्वाद! छोटी उमर में बहुत तरक्की कर ली प्रतीकजी।

मंत्रीजी : दादा वसंत पाटिल (पूर्व राज्यपाल) व पिता प्रकाश पाटिल (पूर्व सांसद) के अभाव में आगे बढ़ना पड़ा।

आचार्य श्री : देश के महान नेता वसंत दादा पाटिल व जैन समाज के महान आचार्य श्री अंकलीकर का काल प्रायः समान है।

मंत्रीजी : जी महाराजजी। अंकली से हमारा पुराना संबंध है। यहाँ से हमेशा कांग्रेस ही जीतती है। यहाँ अधिकतम जैन बंधु हैं।

आचार्य श्री : जैन समाज के लिए अल्प संख्यक दर्जा हेतु आपने क्या कुछ प्रयास किये हैं?

मंत्रीजी : सांसद राजू शेट्टी, कल्लाप्पा आवाड़े दादा, मंत्री प्रदीप जैन आदि कुछ सांसदों के साथ हमने इस हेतु माननीय प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह व यूपीए अध्यक्ष सोनिया गाँधी से मुलाकात की है। उनका भी सकारात्मक रुख है।

आचार्य श्री : आप संसद सदस्य हैं। संसद में मांस निर्यात के विरोध में भी आपके विचार रखना चाहिये।

मंत्रीजी : इस तरह के विषयों में गठबंधन वाली सरकार के सदस्य ज्यादा नहीं बोल सकते, क्योंकि उस तरह के लोग अपना दबाव बढ़ाते हैं।

आचार्य श्री : कम से कम बूचड़खानों/कसाइयों की सबसिडी तो सरकार को बंद करना ही चाहिए। मांस निर्यात से देश की सांस्कृतिक छवि तो बिगड़ती ही है, अर्थव्यवस्था को भी नुकसान पहुँचता है।

मंत्रीजी : सच है, किंतु मांस निर्यातक लॉबी के पैतरों के सामने नीति निर्धारक भी विचलित हो जाते हैं।

आचार्य श्री : पशु संरक्षण की दृष्टि से कुछ तो होना चाहिये।

मंत्रीजी : जी आचार्यजी। इस संबंध में जैन समाज की सोच बहुत अच्छी है। मैं मराठा हूँ लेकिन जैन समाज से बहुत प्रभावित हूँ।

आचार्य श्री : यहाँ के जैन भी मराठा ही हैं क्योंकि वे हजारों वर्षों से महाराष्ट्र में रह रहे हैं। महाराष्ट्र में रहने वाला मराठा। कुछ लोग कहते हैं महाराष्ट्र में जैन बाहर से आए हैं, यह उनकी भारी भूल है। इतिहास देखिये। एक हजार साल पुरानी जो गोम्मटेश्वर बाहुबली स्वामी की जैन प्रतिमा श्रवणबेलगोला में है, मराठी का पहला लेख उसी पर खुदा है- 'चामुंडराय करवियले।

मंत्रीजी : सच में जैन समाज बहुत शांतिप्रिय, अनुशासित व संगठित समाज है।

आचार्य श्री : तभी तो कम होने के बाद भी देश में उसकी अपनी अलग पहचान है।

मंत्रीजी : यह आप जैसे संतों के आशीर्वाद से संभव हो पाता है। अब जैसे राजू शेट्टी साहब को लो, तो वह जहाँ खड़े हो जाते हैं उनके पीछे पूरा समाज खड़ा हो जाता है।

आचार्य श्री : राजू शेट्टी अनेक बार मेरे पास आए हैं। वह किसान व मजदूरों के लिए अच्छा काम कर रहे हैं।

मंत्रीजी : लेकिन उनका झुकाव भाजपा की ओर है।

आचार्य श्री : मैं किसी पार्टी की बात नहीं करता हूँ।

मंत्रीजी : जी मैंने आपका बहुत समय लिया। अभी कल्लापा दादा के यहाँ इचलकरंजी जा रहा हूँ। राहुल आवाड़े का निमंत्रण आया है।

आचार्य श्री : आवाड़े दादा भी हमें जानते हैं, उन्हें आशीर्वाद कह देना।

मंत्रीजी : मेरे लायक जो आज्ञा होगी, वह मैं जरूर करूँगा। नमोस्तु महाराजजी।

आचार्य श्री : आशीर्वाद।

(20-25 मिनट चर्चा व संघ का दर्शन कर मंत्रीजी चले गए)

● **संकलित/साभार : एन.आर. मगदुम (समाजसेवी)**
अंकली, जि. सांगली (महाराष्ट्र)

* * *

महावीर जयंती 2014

अंकली ग्राम चातुर्मास सम्पन्न कर आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने श्री वीरेन्द्र कनकमल डोटिया परिवार तथा सकल दिगम्बर जैन समाज के अनुनय-विनय व आग्रहपूर्वक निवेदन पर सूरत गुजरात की भूमि को धन्य करना सुनिश्चित किया।

8.3.2014 को विहार करता हुआ संघ औरंगाबाद के एक छोटे से गाँव रजापुर के एक स्कूल में रुका। आरती के पश्चात आचार्य श्री ने दीवार पर टंगी धूल भरी घड़ी देखी जो काफी दिनों से बंद पड़ी लग रही थी। आचार्य श्री ने कहा- घड़ी बंद है। सबने घड़ी देख हाँ कही। श्रावकों ने आचार्य श्री से कहा- सेल डालकर देखें। आचार्य श्री ने मना कर दिया व कहा- अपने आप चालू हो जाएगी।

सभी को गुरुदेव की बात पर आश्चर्य हुआ। पर सबको आचार्य श्री की वाणी सिद्धि की सत्यता का पता था। आचार्य श्री सामायिक में बैठ गए। श्रावकगण दरवाजा अटका बाहर आ गए। जब वैयावृत्ति के लिए पहुँचे, देखा घड़ी चालू थी व सही समय बता रही थी।

रजापुर से विहार करते हुए संघ अड़गाँव पहुँचा। जहाँ एक भी जैन श्रावक का घर नहीं था। गाँव के अजैनों ने साधु-संघ के लिए अपने घर दिये। एक घर में आहार चर्या की व्यवस्था हुई व एक घर में दोपहर की सामायिक की। अपराह्न के स्वाध्याय पश्चात संघस्थ साधुगण विहार करने बाहर आकर खड़े हो गए। उन्हें आश्चर्य हुआ कि आचार्य श्री अभी विहार के लिए उठे नहीं थे।

तभी आचार्य श्री ने सभी साधुओं को वापस अंदर बुलवाया। सभी गुरु चरणों में आकर बैठ गए। करीब पाँच मिनट पश्चात बिना मौसम के जोरदार बारिश होने लगी। सड़क पर घुटने-घुटने तक पानी हो गया। सबको आचार्य श्री के निमित्त ज्ञान पर आश्चर्य हो रहा था। अडूल में सिद्धचक्र महामंडल विधान अष्टाह्निका में संपन्न हुआ।

अप्रैल 2014 में आचार्य श्री ससंघ औरंगाबाद में विराजमान थे जहाँ उन्हें गुरुदेव ने सन् 2007 में आचार्य पद पर सुशोभित किया था। महावीर जयंती व आचार्य श्री की 18वीं दीक्षा जयंती के दो दिन पूर्व की यह घटना है।

आचार्य श्री रोज छत पर सामायिक करते थे व वहीं आरती भी होती थी। रोज की तरह 13.4.2014 को संध्या के समय गुरु आरती हो रही थी। एक क्षुल्लकजी भी आचार्य श्री के साथ सामायिक करने वहीं बैठे थे।

तभी सबने देखा कि क्षुल्लकजी के दुपट्टे पर, श्रावकों के कपड़ों व आरती की थाली में व पूरी छत पर चन्दन के पीले छींटे पड़े थे। चन्दन की वृष्टि हुई थी। खबर लगते ही लोगों की भीड़ उमड़ पड़ी। आचार्य श्री बिना प्रतिक्रिया किये ध्यानस्थ हो गए। यह चन्दन वृष्टि लगातार 8 दिनों तक होती रही। आश्चर्य चकित लोग यही कहते सुने गए कि यह सब गुरु साधना की महिमा है। ऐसा यहाँ पहले कभी नहीं हुआ था।

हार्ट अटैक

औरंगाबाद में आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने शासन नायक, तीर्थ नायक भगवान महावीर जन्म जयंती बड़ी धर्म प्रभावना के साथ मनाई। साथ ही अपना 18वाँ दीक्षा दिवस भी संयम साधना दिवस के रूप में मनाया। उन्होंने यही चिंतन किया कि इस दिन एक महावीर धरती पर अवतरित हुए थे, जन्मे थे और एक महावीर ने मेरे हृदय में जन्म लिया और मुझे महावीर का पथानुयायी बना दिया। इस चेतन में चैतन्य बनने का चिन्तन भर दिया। वे आज बड़े खुश थे।

इन्हीं दिनों एक लड़की रोते हुए आचार्य श्री के पास आई व नमोस्तु कर बोली, ''महाराजजी! मेरी नानी को 15 दिन पहले हार्ट अटैक आया था व तभी से वह हॉस्पिटल में बेहोशी की हालत में आईसीयू में मशीन पर है। आप ऐसा आशीर्वाद दो कि नानी को होश आ जाए, णमोकार मंत्र बोल सके।'' आचार्य श्री की पिच्छी से निकला एक पंख वहाँ पड़ा था। पंख उठा उस लड़की को देते हुए आशीर्वाद दिया व कहा इसे नानी के सिरहाने तकिये के नीचे रख देना। होश आ जाएगा। णमोकार महामंत्र बोलेगी। उसके आगे वह कुछ पूछना चाहती थी पर आचार्य श्री ने मौन ले उसे इशारे से जाने को कहा।

लड़की ने पंख ले जाकर अपनी नानी के सिर के नीचे रख दिया। दूसरे दिन अचानक उसे होश आ गया। घर ले आए। जहाँ वह धर्म ध्यान करने लगी। एक माह पश्चात उस श्राविका को दूसरा अटैक आ गया। उसने णमोकार मंत्र सुनते-सुनते नश्वर शरीर त्याग दिया।

इस प्रकार गुरु करुणा कृपा के प्रभाव से एक जीव का कल्याण हो गया। होश में आ वह धर्म ध्यान में प्रवृत्त हो गया।

मांगीतुंगी यात्रा व सूरत चातुर्मास

औरंगाबाद से आचार्य श्री ससंघ सिद्धक्षेत्र मांगीतुंगी की वंदना के लिए पहुँचे। तुंगीगिरि पर आचार्य श्री ने केशलोंच किया। यह एक अद्‌भुत घटना है। सिद्धक्षेत्र पर तो मुनिगण केशलोंच करते हैं लेकिन साक्षात सिद्धभूमि तुंगीगिरि पर्वत पर किसी आचार्य/साधु द्वारा केशलोंच करना संभवतः पहली घटना थी। वहाँ सारा संघ व अनेक श्रावकगण उपस्थित

थे जो बड़ी श्रद्धा भक्ति से यह दृश्य देख रहे थे।

आचार्य गुरु तपस्वी सम्राट सन्मतिसागरजी ने यहीं से मोक्ष गए नील-महानील महामुनिवरों के नाम पर चतुर्थ पट्टाचार्य आप श्री का नाम सुनीलसागर रखा था। इसीलिए आचार्य सुनीलसागरजी ने गुरु की स्मृति व उन महामुनियों के प्रति श्रद्धा भाव से अभिभूत हो उनका सा परम पद प्राप्त करने की कामना से वहाँ केशलोंच किया। अनोखा इतिहास रचते वे अपने जीवन पथ पर अग्रसर थे।

मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र में दि. 31.5.2014 को आचार्य श्री के सान्निध्य में आचार्य आदिसागर अंकलीकर जागृति मंच की मीटिंग चल रही थी। तभी मंच के महामंत्री श्री कमल कासलीवाल की पीठ में भँवरे ने काट लिया। भँवरे का जहर चढ़ने लगा। असहनीय दर्द व जलन होने लगी। जिस जगह भँवरे ने काटा था, वहाँ सूजन आ गई व जगह लाल हो गई थी। असहनीय तकलीफ के कारण कासलीवालजी उठ खड़े हुए। आसपास लोहे व माचिस की तीली खोजी गई पर कहीं कुछ नहीं मिला।

कुछ श्रावक बोल उठे, आचार्य श्री से आशीर्वाद ले पिच्छी लगवा लो, आराम हो जाएगा। कमल भैया के चेहरे से पीड़ा की तीव्रता जाहिर हो रही थी। उन्होंने हाथ जोड़ आचार्य श्री को नमोस्तु कर पीठ पर पिच्छी लगवाई। जरा सी देर में उनकी तकलीफ मिट गई और उनको शांति हो गई व वे यथावत मीटिंग में संलग्न हो गए।

एक दिन वे अपराह्न की सामायिक में बैठे थे, तभी ब्र. अमृता दीदी आचार्य श्री के दर्शनार्थ आईं। उन्होंने आचार्य श्री के श्रीचरणों में एक सेवफल चढ़ाया व दरवाजा अटकाकर चली गईं। उन्हें आचार्य श्री से कुछ चर्चा करनी थी, अतः थोड़ी देर बाद वे कुछ लोगों के साथ पुनः आचार्य श्री के पास लौटकर आईं। दरवाजा पूर्व की भाँति ज्यों का त्यों अटका हुआ था। उनके लौटने के बाद वहाँ कोई नहीं गया था।

यह देखकर आश्चर्यचकित थीं कि आचार्य श्री के चरणों में बिल्कुल एक जैसे, एक सी पोजीशन में दो सेवफल चढ़े थे। उन्होंने बाहर जाकर चौकीदार से पूछा पर पता चला वहाँ उनके जाने के बाद कोई नहीं आया। दरवाजा भी उसी तरह लगा हुआ था। फिर एक की जगह दो सेवफल कहाँ से आ गए? आचार्य श्री के भक्त ऐसी अतिशयकारी घटनाओं के चरचे अक्सर किया करते हैं। मुझे भी आचार्य श्री की जीवन गाथा लिखते वक्त कई लोगों ने आचार्य श्री से संबंधित उनके दिव्य प्रभाव की अनेक घटनाएँ सुनाई जिनमें से मैंने इक्का-दुक्का घटना का ही इस कृति में वर्णन किया है।

मांगीतुंगी महाराष्ट्र से आचार्य श्री ने ससंघ गुजरात के लिए प्रथम बार विहार किया। गुजरात सूरत के लिए डोटिया परिवार एवं सकल दिगंबर जैन समाज का विशेष अनुनय विनयपूर्वक आग्रह था। जून 2014 में आचार्य श्री ने ससंघ महुआ पारसनाथ के दर्शन किये।

महुआ से पद विहार कर जन-जन में धार्मिक चेतना जागृत करते आचार्य श्री गुजरात की हीरों की नगरी, टेक्सटाइल साड़ियों की नगरी सूरत की ओर बढ़ रहे थे। महाराष्ट्र की भाषा, रहन-सहन, खान-पान, व्यवहार-विचार सब कुछ बदल गया था। मराठी की जगह गुजराती ने ले ली थी। भाऊ अब भाई में बदल गए थे। ताई शब्द मासी की मिठास से भर गया था। बंजारे से बेदर पद विहारी संत के लिए क्या कर्नाटक, क्या बुंदेलखंड, क्या गुजरात क्या महाराष्ट्र, क्या मालवा, क्या निमाड़, क्या राजस्थान, क्या मध्यप्रदेश- कुछ फर्क नहीं पड़ता था। आचार्य श्री ने जगह-जगह की सभ्यता व संस्कृति, आचार-विचार, बोली से तादात्म्य जोड़, लोगों पर वात्सल्य भरा ज्ञान का खजाना लुटाया, सभी से एकमेक होते सूरत गुजरात की धरा को धन्य किया।

दिनांक 3.7.2014 को आपने अपने विशाल चतुर्विध संघ के साथ हजारों लोगों की उपस्थिति में कई कि.मी. की पदयात्रा कर विशाल जनसमुदाय के बीच डायमंड सिटी सूरत के श्री आदिनाथ दिगंबर जैन मंदिर, पर्वत पाटिया में

मंगल प्रवेश किया। वहाँ से 5.7.2014 को सूरत के कतारगाँव में भगवान नेमिनाथ के निर्वाणोत्सव में ससंघ सान्निध्य प्रदान किया। वहीं आपके सान्निध्य में तीन दिवसीय अनंतवीर्य विधान का आयोजन हुआ। इस बीच विभिन्न कॉलोनी के समाज द्वारा चातुर्मास के लिए श्रीफल भेंट किये जा रहे थे। इधर चातुर्मास स्थापना की तिथि निकट थी, उधर आपका अनियत विहार चल रहा था। पर चातुर्मास स्थापना का स्थान घोषित नहीं हुआ था। अब तो सूरत के विभिन्न उपनगर वासियों ने न पंथ देखा न संत,सभी में आचार्य श्री संघ का चातुर्मासिक सान्निध्य पाने की होड़ मची थी। चकोर की तरह वे सब चातुर्मासिक स्वाति बूँद के लिए टकटकी लगाए थे। आखिर पार्ले पाइंट वालों की गुरुभक्ति का पलड़ा भारी पड़ा। दि. 10.7.2014 को वहाँ के श्री चन्द्रप्रभ दिगंबर जैन मंदिर में तेरापंथी आम्नाय वाली समाज द्वारा मंदसुगंधित बारिश में आचार्य श्री सुनीलसागरजी की श्रीसंघ सहित भव्यातिभव्य चातुर्मास स्थापना के लिए अगवानी हुई। विभिन्न गाजों-बाजों के साथ विशिष्ट साज-सज्जा देखते ही बनती थी। आचार्य श्री के विलक्षण व्यक्तित्व का प्रभाव कहो या साधना का अतिशयकारी प्रभाव, लोग तेरापंथ, बीसपंथ, संत, पंथ, परम्परा सब कुछ भूल सुनील मय हो गए। उस हिमालयी उत्तुंग व्यक्तित्व के आगे सारे अहं गौण हो गए। जिस तपोमूर्ति गुरु ने इस सुनील को नील (आकाश) की वितस्ता दी थी, उसने सबके सिर पर वितान तान गुरु साधना को सार्थक कर दिया।

आचार्य श्री को पा सूरतवासियों में उत्साह, उमंग व उल्लास हिलोरे लेने लगा। दि. 11.7.2014 को आचार्य श्री सुनीलसागरजी ससंघ का सन्मति समवशरण पांडाल में स्थानीय व देश के कोने-कोने से पधारे छह हजार से अधिक गुरुभक्तों के बीच चातुर्मास मंगल कलश स्थापना कार्यक्रम वृहद पैमाने पर सम्पन्न हुआ।

प्रथम कलश का सौभाग्य डोटिया परिवार को प्राप्त हुआ। द्वितीय, तृतीय व चतुर्थ कलश क्रमशः आकाशजी गोधा, उम्मेदमलजी काला योगीनगर (मुंबई) तथा हसमुखजी दिल्ली वालों ने प्राप्त किया। आचार्य श्री सन्मतिसागर कलश का कूपन के ड्रॉ द्वारा वितरण हुआ।

दूसरे ही दिन वीर शासन जयंती से आचार्य श्री द्वारा भावणासारो-वयणसारो की वाचना शृंखला प्रारंभ हुई।

10.8.2014 को भगवान श्रेयांसनाथ निर्वाणोत्सव 'वात्सल्य पर्व' पर पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी से दीक्षा ले ब्र. माणकचंदजी आगरा क्षुल्लक श्री श्रेयसागरजी, ब्र. सुभाषजी शाह सूरत क्षुल्लक श्री शुद्धसागरजी एवं ब्र. दिलीपजी सूरत क्षुल्लक श्री बुद्धसागरजी महाराज बने।

आचार्य श्री का सूरत चातुर्मास आशातीत सफलता के साथ सम्पन्न हो रहा था। पर्युषण पर्व पर श्रावक संस्कार साधना शिविर का आयोजन हुआ जिसमें देश के विभिन्न भागों समेत एक हजार शिविरार्थी श्रावक-श्राविकाओं ने साधनामय जीवन जिया। सूरतवासियों ने शिविरार्थियों के लिए जो व्यवस्था की थी, वह काबिले तारीफ थी। आचार्य श्री के चातुर्मास का प्रत्येक कार्यक्रम ऐतिहासिक रहा। सामूहिक क्षमावाणी कार्यक्रम दिगंबर-श्वेताम्बर दोनों सम्प्रदायों के संतों के सान्निध्य में एक ही मंच से एक साथ मनाया गया।

आचार्य श्री के भावणासारो ग्रंथ की वाचना ज्ञान गंगा में हजारों लोग आते थे। कितनों ने अपना जीवन परिवर्तित किया। एक बंदर भी प्रवचन सुनने आता था और प्रवचन समाप्त होने पर चला जाता था।

समाज द्वारा आचार्य श्री का 38वाँ जन्म जयंती महोत्सव दि. 7.10.2014 को बड़ी धूमधाम से मनाया गया। इस उपलक्ष्य में समाज द्वारा उनके लिखे 38 ग्रंथों का विमोचन कर 38 विद्वानों का सम्मान किया गया।

इसी बीच सूरत निवासी श्री राकेश जैन अपनी 35 वर्षीया पत्नी रसना जैन को आचार्य श्री के पास लेकर आए। छोटे-छोटे दो बच्चों की माँ श्रीमती रसना जैन को ब्लड कैंसर की असाध्य बीमारी आखरी स्टेज पर थी। डॉक्टरों ने जवाब दे दिया था। रसना का अंतिम समय निकट जान पति-पत्नी दोनों रो पड़े। आचार्य श्री के प्रवचनों से प्रेरित हो रसना ने आचार्य श्री से दीक्षा ग्रहण करने की इच्छा व्यक्त की किन्तु असाध्य बीमारी आड़े आ रही थी। पति व बच्चों

ने भी सहर्ष स्वीकृति दे दी। ब्र. बहनों व माताजी लोगों ने भी उनकी अनुमोदना की। आचार्य श्री ने उस महिला की मुक्तिपथ पर अग्रसर होने की अदम्य लालसा देख 4.11.2014 को उन्हें क्षुल्लिका दीक्षा दे अदेहमती माताजी नाम रखा। उसी दिन आपके युवा पति ने भी आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर समाज के सामने एक अनूठा आदर्श उपस्थित किया।

आचार्य श्री के सान्निध्य में 26.11.2014 को वेसु के वासुपूज्य जिन मंदिर का भव्य शिलान्यास समारोह आयोजित हुआ।

दूसरे दिन दि. 27.11.2014 को आचार्य श्री ससंघ विहार करके सूरत के नानपुरा स्थित दिगंबर जैन मंदिर पहुँचे। आचार्य श्री का आधा भरा कमंडल साथ चल रहे श्रावक ने जो उठाकर चल रहा था, ने तखत पर रख दिया। 5 मिनट बाद लोगों ने देखा कि आचार्य श्री का कमंडल ऊपर तक पानी से भरा और उसमें से जल धार बाहर बहने लगी। एक तो आधा भरा कमंडल ऊपर तक छल-छला कर अपने आप भर गया, ऊपर से लगातार पानी बहने के बावजूद भी वह जरा भी खाली नहीं हुआ था। यह देखने श्रद्धालुओं की भीड़ उमड़ पड़ी व उस पावन जल को गंधोदक की तरह सिर पर लगाने लगी।

यहाँ से आचार्य श्री दूसरे दिन 28.11.2014 को कतारगाँव पहुँचे जहाँ उनके सान्निध्य में मानस्तंभ शिलान्यास का आयोजन हुआ। क्षुल्लिका अदेहमती माताजी का स्वास्थ्य बिगड़ता जा रहा था। दि. 30.11.2014 को क्षुल्लिका अदेहमती माताजी का कतारगाँव में ही समाधिमरण हुआ। इसमें आचार्य संघ के साथ ही आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज की संघस्थ ब्रह्मचारिणी बहनों ने भी माताजी की समाधि में विशेष सहयोग दिया। इस प्रकार क्षुल्लिका अदेहमती ने आत्मकल्याण का मार्ग प्रशस्त कर लिया। देखो, गुरु करुणा, कृपा ने एक असाध्य बीमारी से अतिरूग्ण महिला का भी कायाकल्प कर दिया।

सूरत चातुर्मास के दौरान आचार्य श्री के प्रवचनों का जन हृदय पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा। उनके आशीर्वाद से कई बीमार लोग ठीक हो गए तो किसी का ऑपरेशन टल गया, किसी की नौकरी लग गई तो किसी का रुका काम हो गया। उनकी प्रभावना दिन पर दिन बढ़ती जा रही थी। वे तो सहज रूप से सबको आशीर्वाद देते थे पर लोगों के लिए तो उनका आशीर्वाद वरदान बन जाता था। इन सबसे अनजान वे अपने स्व-पर कल्याण कार्य के मार्ग पर रत थे।

आर्यिका श्रुतमति माताजी ने सूरत का संस्मरण बताया कि उन्हें पथरी की तकलीफ ती। अतः आचार्य श्री ने उन्हें उपवास करने को मना किया। पर माताजी के जिद करने पर उन्हें उपवास दे दिया पर कहा कि पथरी का दर्द उठे तो हमारे पास मत आना।

माताजी चिंतित हो उठी कि आचार्य श्री की बात कभी गलत नहीं होती। पर डरते-डरते उन्होंने उपवास कर लिया। वह दिन तो निकल गया, लेकिन दूसरे दिन सुबह 8 बजते-बजते उन्हें पथरी का असहनीय दर्द उठा। 9 बजे तक तो दर्द के मारे वे मछली की तरह तड़पने लगी। दवाई तो लेनी नहीं थी, पर बाहर से थेरेपी देने वाले कितने ही तरह के विशेषज्ञों को समाज ने बुलवाया पर किसी का कोई असर नहीं हुआ।

वे आहार भी नहीं ले पाई। अंततः उन्हें आचार्य श्री के पास ले जाया गया। दर्द के मारे वे रो रही थीं। उनकी हालत बहुत खराब थी। आचार्य श्री ने आशीर्वाद देते हुए वात्सल्यपूर्ण वचनों से कहा- ''रोओ मत, शांत हो जाओ। शीघ्र ठीक हो जाओगी।'' माताजी ने कहा- ''अब तो दर्द सहा नहीं जाता।''

आचार्य श्री ने उनके सिर पर पिच्छी रखकर पुनः आशीर्वाद दिया व कहा कि अब दर्द नहीं होगा। 15-20 मिनट पश्चात धीरे-धीरे उनका पथरी का दर्द बिना गोली-दवाई के ठीक होने लगा। माताजी को गुरुदेव पर पूर्ण विश्वास व श्रद्धा है। वे सबसे यही कहने लगीं कि गुरुवर के प्रति श्रद्धा व उनकी कृपा व आशीर्वाद से ही उन्हें यह स्वास्थ्य लाभ

हुआ है। गुरुदेव के मुख से जो निकलता है वह सदैव सत्य होता है।

जब आचार्य श्री को पता चला तो उन्होंने सहज भाव से कहा- ऐसा कुछ नहीं है। जब कोई दुःखी, बीमार या संघस्थ साधु गुरु के पास आता है तो गुरु सहज भाव से ही उन्हें ठीक होने का आशीर्वाद दे देते हैं। यह सच है कि संतों के तप, संयम व त्याग की साधना के प्रभाव से प्रतिकूलताएँ अनुकूलताओं में बदल जाती हैं। माताजी के साथ ही क्या, हर किसी के साथ ऐसा ही होता है। इसमें माताजी के दर्द निवारण का कारण उनके कर्मों का शमन होना भी है वो फिर चाहे किसी भी निमित्त से हो।

* * *

आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने सूरत के ऐतिहासिक व अभूतपूर्व चातुर्मास में ज्ञान, ध्यान व चिन्तन की मशाल जला भवान्धकार में भटकती मानवता का पथ प्रशस्त किया। लोगों/समाज ने उनके दिये ज्ञान, ध्यान व चिन्तन को आत्मसात कर जीवन रूपान्तरित कर बता दिया कि वे मात्र उनके प्रवचन उपदेश मान मात्र सुनते ही नहीं, गुनते व मनन भी करते हैं। जीवन में उतारकर आचरित करते हैं। अहिंसा की केतु लहराते व जीवन रूपान्तरण करने वाले श्री संघ, जिसे सूरत वासी आचार्य श्री सुनीलसागरजी का समवशरण कहते थे, के साथ आचार्य श्री ने हीरे से दिल वाले हीरा नगरवासियों से विदा ली। विदा बेला में हर जगह की तरह यहाँ भी लोगों की आँखों से आँसुओं की नदियाँ बह निकलीं। अश्रुओं की बाढ़ ने आचार्य श्री को रोकने की निष्फल चेष्टा की। किन्तु मोहातीत हो चुके वे दिगम्बर महासंत कब किसके मोहपाश में बंधने वाले थे। जाते-जाते वे कह गए, हम सूरत से जा रहे हैं, सूरतवासियों के दिल से नहीं।

और चल पड़ा यह कारवाँ सूरत से सजोद भरूच व भरूच से पालेज पहुँचा। पालेज समाधिस्थ मुनि श्री सुबुद्धसागरजी की जन्मस्थली है। उनके जन्म स्थल घर के निकट ही कान्हजी स्वामी का भी घर रहा है। वहाँ से आचार्य श्री अंकलेश्वर पहुँचे। इसी परम पावन पुण्यस्थली में आचार्य पुष्पदंत (भूतबली) ने षटखंडागम महान ग्रंथ की पूर्णाहूति की थी व गुरु आचार्य धरसेन के दिये श्रुतज्ञान को अमर कर दिया। यहाँ से पौर होते हुए बड़ौदा से पूर्व किसी छोटे से ग्राम में अजैन बंधुओं के किसी निर्माणाधीन घर में रुके। वहाँ आचार्य श्री खड़े रह सामायिक कर रहे थे। जब वहाँ से श्री संघ का विहार हुआ तब ग्रामवासी दौड़े-दौड़े आए व बताया कि जिस जगह बाबा खड़े थे, वहाँ उनके चरण चिह्न छप गए हैं। धोने से भी साफ नहीं हुए हैं। आचार्य श्री ने तो कुछ नहीं कहा, पर श्रावकों ने कहा कि यह बाबा की तपस्या व साधना का प्रभाव है। अब वे साथ चल रहे श्रावकगण दौड़े-दौड़े उन उन छपे-उभरे चरण चिह्नों को देखने चल दिये।

उसी दिन शाम को बड़ौदा में मंगल प्रवेश के वक्त वहाँ के उद्योगपति कटारिया के मारुति शोरूम में आचार्य श्री की ससंघ भव्य अगवानी हुई। पाद प्रक्षालन के बाद दो मिनट के लिए आचार्य श्री आरती के लिए खड़े हुए व चल दिये। वहाँ पर भी आचार्य श्री के चरण चिह्न अंकित हो गए जो आज भी उसी स्थान पर यथावत रखे हैं। इन बातों से आचार्य श्री की अतिशय प्रभावना हो रही थी। लेकिन क्रिया/प्रतिक्रिया दिये बिना वे अनासक्त भाव से अपनी चर्या में लीन थे।

बड़ौदा के 15-20 दिनों के मंगल प्रवास में आचार्य श्री ने बड़ी संजीदगी, शालीनता व कृतज्ञ भाव से धूमधाम से आचार्य श्री गुरु का चतुर्थ समाधि दिवस मनाया। गुरुदेव की पुण्यमयी स्मृतियों से सबका मन हरिया गया।

आचार्य श्री ने वहाँ धर्म प्रभावना करते हुए चारों ओर धार्मिक वातावरण निर्मित कर दिया। आचार्य श्री के प्रेरक सभी के मंगलमय भविष्य की कामना से आपूरित प्रवचनों से प्रभावित हो आचार्य श्री सुनीलसागरजी व तपस्वी सम्राट सन्मतिसागरजी महाराज के परम भक्त श्री सुदीप जैन एवं मुकेश भाई शाह जैसे धर्मात्मा सज्जनों ने एक कॉलोनी बनाने की योजना बनाई। वे आचार्य श्री के चरणों में श्रीफल चढ़ा आशीर्वाद लेने आए व बताया कि कॉलोनी का नाम वे 'सन्मति पार्क' रखेंगे।

आचार्य श्री ने कहा- मेरी शर्तें हैं यदि वे पूरी करोगे तभी मैं आशीर्वाद दूँगा व सन्मति पार्क का नाम रखने की अनुमति दूँगा। सन्मति से तात्पर्य महावीर भगवान के नाम से व दूसरा नाम तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के नाम से है। अतः पहली शर्त है कि कॉलोनी के प्लॉट अहिंसक/शाकाहारी समाज को ही आवंटित किये जाएँ। दूसरी शर्त कॉलोनी में दिगंबर जैन मंदिर हो, तीसरी शर्त कुछ प्लॉट समाज के सामान्य वर्ग को भी कम कीमत में दिये जाएँ। चौथी व महत्वपूर्ण बात प्लॉट देने व मकान बनाने में धोखाधड़ी व बेईमानी न की जाए। पाँचवीं शर्त, हर हाल में कॉलोनी सन्मति नाम की सार्थकता लिए हो। प्लॉट काटने वालों ने इतनी दूर की तो सोची भी न थी। उन धार्मिक प्रवृत्ति के व्यक्तियों ने आचार्य श्री की शर्तें सहर्ष स्वीकार कर ली।

आनन-फानन आचार्य श्री के सान्निध्य में 'सन्मति पार्क' का भूमिपूजन जिन मंदिर के भूमिपूजन से हुआ।

अब आचार्य श्री ने ससंघ बड़ौदा से विहार कर दिया। संघ ने उनका चतुर्थ पट्टाचार्य दिवस विहार में रास्ते में एक खेत में मनाया। न दिखावा न धूम-धड़ाका, न ही कोई प्रचार-प्रसार। फिर भी गुजरात, महाराष्ट्र व राजस्थान से सैकड़ों श्रावकों ने आकर इसमें सहभागिता की। चारों ओर आचार्य श्री सुनीलसागरजी के ही चरचे थे। गुरु के प्रति इतना बहुमान और स्वयं के प्रति इतनी निस्पृहता, उदासीनता, आचार्य श्री सुनीलसागरजी की निरहंकारिता का अनूठा उदाहरण है।

लोग तो बिना प्रयोजन बड़े-बड़े आयोजन कर अपनी महत्ता बढ़ाने का प्रयास करते हैं और यहाँ तो 'पट्टाचार्य पद दिवस' का प्रसंग होते हुए भी कार्यक्रम के प्रति विरक्ति। यह तो संघस्थ साधु-साध्वियों की सजगता से मनाए गए इस महोत्सव से जंगल में मंगल हो गया। वे सब पट्टाचार्य गुरु के प्रति कृतज्ञ थे कि उनके ही कारण आज उनकी निर्विकल्प, निराकुल इतनी अच्छी धर्म साधना हो रही है। धर्म यात्रा हो रही है।

बड़ौदा से संघ ज्यों-ज्यों आगे बढ़ रहा था, त्यों-त्यों सन् 2014 विदा होता जा रहा था। अन्ततः सन् 2014 ने विदा ली। कुल मिलाकर यह वर्ष आचार्य श्री के लिए उपलब्धियों से भरापूरा रहा। उन्होंने गुजरात में विहार करते हुए जन हृदय में आदर्शों के दीप जलाए। मृतप्रायः मानवता में जीवन मूल्यों के मंत्र फूँके। अधिकारों के लिए लड़ते लोगों को कर्तव्यों के प्रति सजग कर आत्मबोध दिया। समाज को संस्कारित कर भारतीय व श्रमण संस्कृति की सुरक्षा व संरक्षण में योगदान दिया। वे जिधर से भी होकर गुजरते, वहाँ प्रफुल्लता, हर्ष, पुलक, उल्लास और आनंदोत्सव का वातावरण अपने आप बनता जा रहा था। संक्षिप्त में कहें तो उनका विहार हर कहीं मंगल प्रवास सत्यम् शिवम् सुन्दरम् का प्रतीक बन जाता।

पावागढ़ में 2015 का स्वागत

प्राणीमात्र के प्रति हृदय में करुणा व परोपकार की भावना लिए चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी (ससंघ) ने पद संचलन करते आगे बढ़ते, मृतप्राय चेतन में चेतना भरते, हमारे जन्म-जरा-मृत्यु के महारोगों के निवारण की महौषधि बाँटते 2015 का 'नूतनवर्षाभिनंदन' पावागढ़ की पवित्र पुण्य भूमि में किया। नववर्ष में सूरज ने भी अपनी सोनेरी किरणों से इस युगपुरुष का सिद्धक्षेत्र पावागढ़ के पर्वत पर महाभिनंदन करते हुए अगवानी की। उषा ने अपनी लोल लाली से कभी न्हवन न करने वाले दिगम्बर संतों का न्हवन करा दिया। पक्षी चहकने लगे। तरु लताएँ झूमने लगी, पत्ते ताल दे दे थिरकने लगे। हवा का आंचल लहराने लगा। श्रावकों के साथ-साथ प्रकृति ने भी इस उत्सवी माहौल में आत्मकल्याण व विश्वकल्याण के लिए सर्वस्व न्यौछावर कर देने वाले इन त्यागी, तपस्वी, संयमी, महाव्रती महायोगी का नववर्ष में हृदय से स्वागत किया।

आह्लादित हृदय से मुनीश्वर ने ससंघ तीर्थ वंदना करते हुए सिद्धों से स्वयं के लिए 'सिद्धत्व' प्राप्ति की कामना की। उस भूमि पर कदम रखते ही उनके भावों में निर्मलता, हृदय में विशुद्धता व विचारों में पवित्रता का सैलाब उमड़ पड़ा। स्फटिक सदृश स्वच्छ-साफ हृदय से प्रभु की वंदना की तथा अपने साथ विश्व के प्राणिमात्र के लिए मंगल कामना

की। प्रवास के दौरान सिद्धचक्र महामंडल विधान का आयोजन अशोक बड़जात्या सूरत के द्व ारा किया जो संघ सारथी अजित कमल कासलीवाल के समधी हैं।

गुजरात का अंतिम पड़ाव संतरामपुर

पावागढ़ सिद्धभूमि को नमन कर आचार्य श्री चल पड़े अगले व गुजरात के अंतिम पड़ाव संतरामपुर। यहाँ पर आपने आत्मबोधि कराने वाले प्रवचनों, स्वात्मानुभव कराने वाले स्वाध्याय व वाचना, भक्ति रस में डुबो देने वाले पूजा-विधान व अन्य रचनात्मक गतिविधियों से समाज को धर्म में प्रवृत्त किया। आचार्य श्री के 15-20 दिनी संतरामपुर मंगल प्रवास में संतरामपुर सचमुच संतरामपुर बन गया। लोगों में धार्मिक भावनाएँ व धार्मिकता उमड़ पड़ी। लोगों का चित्त आर्द्र-रौद्र ध्यान से हटा धर्मध्यान में लगा आचार्य श्री ने अपना यह मंगल प्रवास सबके लिए मंगलमय, कल्याणकारी व आत्मोद्धारक बना दिया। यहीं पर आचार्यश्री आदिसागरजी (अंकलीकर), आचार्यश्री महावीर कीर्तिजी, तपस्वी सम्राट आचार्यश्री सन्मतिसागरजी के चरण पादुका तपस्वी सम्राट के जन्म जयंती व महाविज्ञ नायक प्राकृताचार्य के आचार्य पदारोहण दिवस पर विराजित किये गये।

राजस्थान

प्रवह्यमान गंगा से पावन तट-तट को तीरथ करते, घाट-घाट का कालुष धोते, शवों में शिवत्व भरते आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने श्रमण शूरों व शौर्य वीरों की भूमि राजस्थान की भूमि में अपने चरण रखे।

आचार्य श्री का मुख्य लक्ष्य रीछा नामक एक छोटा सा गाँव था। जहाँ के जिनालय का शिलान्यास प.पू. तपस्वी सम्राट श्री सन्मतिसागरजी महाराज के सान्निध्य में दस वर्ष पूर्व हुआ था। मंदिर निर्माण व चातुर्मास को लेकर रीछा के गुरुभक्त श्रावक 2012 से ही उदगाँव कुंजवन में आकर अपने यहाँ 2013 का चातुर्मास करने की अर्जी लगा चुके थे। लेकिन 2013 के चातुर्मास का लक्ष्य उनका अपना था और उन्होंने अपनी आत्मा की आवाज व परम्परा के महानायक आचार्य श्री आदिसागरजी (अंकलीकर) की जन्मस्थली अंकली ग्राम में करने का तय किया व सफलतापूर्वक सम्पन्न भी किया। यहाँ चातुर्मास मंगल कलश स्थापना के दिन पुनः रीछा से गाड़ी भरकर श्रावकगण आए। उन्होंने चातुर्मास पश्चात रीछा आने हेतु राजस्थान से विहार के लिए अर्जी लगा दी। तभी से वे महीना-पन्द्रह दिनों में गुरु दर्शन के बहाने आते रहे व आचार्य श्री से रीछा आने के लिए अनुनय, विनय, आग्रह करते रहे।

सूरतवासियों के पुण्योदय व समयाभाव के कारण आचार्य श्री का 2014 का चातुर्मास सूरत हो गया। पर रीछा वासी मायूस जरूर हुए, निराश नहीं। यहाँ भी तब से अब तक वे परम गुरुभक्त त्यागी-व्रती श्रावकगण गुरु चरणों में आकर याचना करते रहे। उन दूरदर्शी श्रावकों ने आचार्य श्री का मार्गदर्शन ले भव्य मंदिर का निर्माण कर मूर्तियाँ बनवा ली। उनकी दिली इच्छा थी कि यदि चातुर्मास पूज्य श्री का हो जाता तो मंदिर व मूर्तियों के निर्माण में और भव्यता आ जाती, पर योग-संयोग की बात है।

आनंदपुरी

राजस्थान व गुजरात की सीमा पर बसे आनंदपुरी गाँव तक आचार्य श्री के श्रीसंघ सहित पहुँचने पर पूरे राजस्थान के सुश्रावकों ने उनके आगमन पर उनके भव्य स्वागतोत्सव के साथ अगवानी की। विशाल जनसमुदाय 5 कि.मी. लम्बे जुलूस में बदल गया।

किंतु आनंदपुरी के श्रावकगण व स्थानीय लोग जुलूस को आनंदपुरी गाँव में प्रवेश कराने के लिए तैयार नहीं थे। उनका कहना था कि यहाँ बहुत आदिवासी रहते हैं। वे दिगम्बर साधुओं को गाली देते हैं। आचार्य श्री का इतना बड़ा संघ है। इसमें वृद्ध साधुगण भी हैं। यदि इन लोगों ने कोई उपसर्ग या उपद्रव कर दिया तो संभालना मुश्किल हो जाएगा तथा इतने बड़े जुलूस के लोगों को संभालना भारी पड़ेगा। गाँव वालों ने जुलूस गाँव से बाहर से निकलवाने की पुरजोर

कोशिश की व वहीं से मंदिर ले जाने की भी तैयारी थी।

लेकिन पूरे राजस्थान से एकत्रित आन-बान-शान पर मर मिटने वाले राजस्थानी श्रावक कब मानने वाले थे। वे तो जुलूस को लेकर गाँव की ओर चल पड़े। राजस्थान सरकार की ओर से भी इतने बड़े संत व उनके श्रीसंघ को लेकर पूरी सुरक्षा व्यवस्था थी।

राजस्थान के मंत्री जीतमल खाट भी आचार्य श्री के साथ 5 कि.मी. तक पैदल चले। जिन आदिवासियों के उपद्रव के नाम पर ग्रामवासी जुलूस गाँव के बाहर से ले जाने का कह रहे थे, वे भोले-भाले आदिवासी झुंड के झुंड ढोल ताशे बजाते, नाचते-कूदते जगह-जगह आचार्य संघ के चरणों में माथा टेक आशीर्वाद माँगते व जुलूस की अगवानी करते नजर आए। वहाँ आदिवासियों में झाबुआ जिले (मप्र) के भगोरिया पर्व जैसा माहौल हो गया था। वे सब 'मोटा बाबा आव्या, मोटा बाबा आव्या' (बड़े बाबा आए) कहते आचार्य श्री के चरणों में गिर-गिर कर नमस्कार कर रहे थे। मंदिर दर्शन तथा आहार चर्या कर आचार्य श्री ने यहाँ से आगे के लिए विहार कर दिया। विहार के पूर्व मंदिर में तपस्वी सम्राट आचार्यश्री सन्मतिसागरजी की चरण पादुका विराजमान की गई।

रीछा पंचकल्याणक

इधर रीछावासियों की साँसें आचार्य श्री में अटकी थी। पंच कल्याणक प्राण प्रतिष्ठा महोत्सव की सारी तैयारियाँ हो चुकी थी। रीछा वासी तो क्या, पूरे राजस्थान प्रांत के लोगों का कहना था कि इतने भव्य वृहद पंचकल्याणक का आयोजन आचार्य श्री के पट्टाचार्य पद संभालने के बाद पहली बार हो रहा था।

पूरे राजस्थान से आए गणमान्य प्रतिष्ठित लोग मिलकर आचार्य श्री के पास पहुँचकर निवेदन करने लगे कि वे प्रतिष्ठा शुरू होने के कम से कम तीन-चार दिन पहले आकर सारी व्यवस्था देख चाक-चौबंद कर लें। राजस्थान रेगिस्तान के लिए प्रसिद्ध है। ऐसे आयोजनों में आंधी-अंधड़-तूफान आना, पांडाल उड़ जाना आदि अन्यान्य घटनाएँ होना स्वाभाविक है। उन्हें डर था उनकी किसी भी थोड़ी सी कमी या असावधानी के कारण कोई विघ्न न आ जाए।

आचार्य श्री ने कहा- ''निश्चिंत होकर कार्यक्रम सम्पन्न करो। कोई विघ्न नहीं आएगा। मैं देवताओं को संभाल लूँगा। जन सैलाब उमड़ेगा, उसे संभालने की समुचित व्यवस्था आप कर लेना। देवी-देवताओं को संभालने का काम मेरा, श्रावकों को संभालने का काम तुम्हारा। किसी बच्चे तक को खरोच नहीं आएगी। महोत्सव निर्विघ्न सम्पन्न होगा।''

श्रावकों ने पुनः कहा- ''पर गुरुदेव...।' आचार्य श्री ने इससे पूर्व बीच में ही बात रोककर कहा कि दो-चार दिन तो क्या? एक दिन पहले भी मैं नहीं आऊँगा। मैं तो पंचकल्याणक के पहले दिन ही रीछा में आऊँगा।

इधर रीछा में पंचकल्याणक की भव्य तैयारियाँ चरम पर थी, उधर आचार्य श्री सुनीलसागरजी का भी प्रमुख लक्ष्य था आचार्य गुरुवर तपस्वी सम्राट द्वारा शिलान्यास की गई भूमि पर बने भगवान श्री सुपार्श्वनाथ जिन मंदिर का पंचकल्याणक सफलतापूर्वक सम्पन्न कराना।

आचार्य श्री ने दि. 6.2.2015, प्रतिष्ठा महोत्सव के प्रथम दिन प्रभात की मंगलमय बेला में रीछा की भूमि पर चरण रखे। प्रकृति प्रभातियाँ गा रही थीं। विशाल जनसमूह के साथ रीछा वासी नाचते-गाते, बाजे-गाजे बजाते बड़े उत्साह और उल्लास से आचार्य श्री की अगवानी के लिए चल पड़े। लोग गुरु आगमन की खुशी में पागल हो झूमते गाते कह रहे थे- आज हमारे महावीर इस युग के महावीर पधार रहे हैं। रीछा में 40 घर का समाज किंतु हजारों लोगों के जुलूस के साथ आचार्य श्री ने रीछा में मंगल प्रवेश किया। लोगों की खुशियों का पारावार नहीं था। जिधर दृष्टि डालो, उधर विशाल जनमेदिनी जयकारे लगाती नजर आ रही थी। दि. 8.2.2015 को इंदौर से आई ब्र. भूमि दीदी ने दो प्रतिमा का व्रत लिया। (वर्तमान में आर्यिका सुस्वरमती माताजी) व ब्र. सारिका दीदी ने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत लिया। इसी तरह

तप कल्याणक के दिन दो दीक्षाएँ संपन्न हुईं। एक आर्यिका अद्वैतमती माताजी व दूसरी क्षुल्लिका अभेदमती माताजी की। मोक्ष कल्याणक के दिन भी क्षुल्लिका अभिन्नमती माताजी दीक्षा ले मुक्ति की राह पर चल पड़ीं।

जहाँ पंच कल्याणक महोत्सव में आचार्य श्री ने अंजन शलाका कर पाषाण में सूरि मंत्र दे उसे भगवान बनाने का काम किया, वहीं आपने चेतन आत्माओं में शिवत्व का प्राण मंत्र फूंक, उन्हें दीक्षित कर मुक्ति मार्ग पर खड़ा कर दिया। इस प्रकार आचार्य श्री ने सिद्ध कर दिया कि चाहे उनका विहार हो या मंगल वास, पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव हो या अन्य आयोजन हो, वे हर कहीं भव्यात्माओं को व्रत/दीक्षा देकर उनका मुक्ति मार्ग प्रशस्त करते रहे और समय-समय पर समाधिमरण करा भव्य जीवों की मृत्यु को महोत्सव में बदलते रहे। हर कहीं हर परिस्थिति में वे भव्य जीवों का कल्याण करते नजर आए। उनके लिए चेतन में चैतन्यता फूँक प्रतिष्ठित करना ही सबसे बड़ी प्राण प्रतिष्ठा थी।

आचार्य श्री की उपस्थिति व दीक्षाएँ सम्पन्न कराने के कारण उस भव्यातिभव्य ऐतिहासिक पंचकल्याणक में चार चाँद लग गए। ऐसे धर्म प्रभावनामय पंचकल्याणक में जात-पात का भेदभाव भूल गाँव के गाँव उमड़ गड़े। इतनी छोटी जगह में एक-डेढ़ कि.मी. की पार्किंग, गाड़ियों की लम्बी कतारें, हजारों की तादाद में जनसैलाब। जहाँ छह हजार लोगों का खाना बनता वहाँ बारह हजार लोग भी खा लेते थे पर खाना कम नहीं पड़ता था।

मोक्ष कल्याणक के दिन तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ भगवान की बड़ी मनोहारी प्रतिमा विराजित की गई। इसी तारतम्य में तपस्वी सम्राट की चिरस्मृति व उनके दिये इस महान अवदान के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन स्वरूप समाज द्वारा उनकी मनोहारी पद्मासन प्रतिमा विराजमान की गई। यहीं पर 'वात्सल्य शिरोमणि' की उपाधि से समाज ने गुरुवर को अलंकृत किया।

रीछा में देखा गया कि आचार्य श्री आहार लेने जाते तो कई घरों में जहाँ खड़े होकर वे आहार ग्रहण करते वहाँ उनके चरण चिह्न अंकित हो जाते। शिखरमलजी के यहाँ अभी भी उनके चरण फर्श पर अंकित हैं।

रीछा की घटना है। आचार्य श्री फाल्गुन मास में रीछा में विराजित थे। इन दिनों राजस्थान में पूरे प्रदेश में मोयला (उड़ने वाले छोटे जीव) बड़ी मात्रा में उत्पन्न होते थे। उनका समय भी संघ के आहार चर्या के समय ही उड़ने का रहता था। एक दिन तो रीछा में वे बहुतायत मात्रा में उत्पन्न हो गए। आहार के समय इतने अधिक मोयले उत्पन्न हो गए कि चलना मुश्किल हो गया। अहिंसा महाव्रतधारी आचार्य श्री जीव हिंसा से बचने व महाव्रत के उत्कृष्ट पालन में इसे उपसर्ग समझ, उस दिन आहार चर्या में नहीं निकले व उपवास का नियम ले लिया। संघस्थ अनेक साधुओं ने भी आचार्य श्री का अनुकरण किया। चूँकि मोयलों के उड़ने का समय निश्चित था, अतः उनकी संख्या कम होने व उड़ना बंद होने पर समय टालकर कुछ साधुओं ने गुरु आज्ञा से आहार चर्या की व जल ग्रहण कर लौट आए।

चूँकि रीछा वासियों को आचार्य श्री का चातुर्मासिक सान्निध्य प्राप्त नहीं हुआ था, अतः उन्होंने विभिन्न आयोजनों के माध्यम से आचार्य श्री को रीछा में रोक धर्म लाभ लिया। अंततः एक माह के लम्बे प्रवास के बाद आचार्य श्री निठाउआ गामड़ी (दो जुड़वाँ गाँव) में विहार कर पहुँचे। वहाँ दो-तीन दिन रहकर पारसोला पहुँचे।

पारसोला में तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी की जीवन गाथा अनूठा तपस्वी की वाचना शुरू हुई। फिर परीक्षामुख ग्रंथ न्याय शास्त्र एवं पंचास्तिकाय का स्वाध्याय शुरू हुआ। वाचना के माध्यम से पारसोला के लोगों में 1987 में चातुर्मास करने वाले तपस्वी सम्राट की स्मृतियाँ जीवन्त हो गईं।

पारसोला में ही आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज की सुशिष्या आर्यिका सम्मेदशिखरमती माताजी ने आचार्य संघ में प्रवेश किया। माताजी की आहार चर्या सिगड़ी पर बने भोजन से ही होती थी। चतुर्थ पट्टाचार्य आचार्य श्री सुनीलसागरजी के प्रभावोत्पादक व्यक्तित्व एवं कृतित्व से अंकलीकर परम्परा के मुरझाते फूल खिल उठे।

मुक्ति मार्ग पर चलने वाले आचार्य श्री सुनीलसागरजी दीक्षा देकर औरों का मुक्ति मार्ग भी प्रशस्त कर रहे थे। इस तारतम्य में उन्होंने दि. 12.03.2015 को क्षु. प्रयत्नयसागरजी को मुनि दीक्षा देकर मुनि श्री सम्बुद्धसागरजी नाम रखा।

साथ ही क्षु. सुश्रुतसागरजी ऐलक सुश्रुतसागर, क्षु. शिवमसागरजी ऐलक संबोधिसागरजी तथा क्षु. श्रेयसागरजी ऐलक श्रेयसागरजी बने। आप से प्रेरित हो कई श्रावकों ने दो-दो प्रतिमा के व्रत लिए। श्रावकगण व संत आपका सान्निध्य पा जीवन रूपान्तरण की क्रिया में लगे थे। जो लोग कभी मंदिर तक नहीं जाते थे वे मंदिर जाना तो ठीक, संतों की आहार चर्या के लिए चौका भी लगाने लगे। आपके मृदुल-मधुर व्यवहार व व्यक्तित्व के कारण बच्चा-बूढ़ा जवान हर कोई आपकी ओर आकर्षित हो खींचा चला आता था।

आपके सान्निध्य में पारसोला में महावीर जयंती की महिमा व गरिमा बढ़ गई थी। इस दिन समाज ने आपका 19वाँ संयम दिवस (दीक्षा स्मृति दिवस) बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया एवं इस अवसर पर समाज के द्वारा 'सरस्वती शिरोमणि' की उपाधि दी गई। षटखंडागम धवला-1 ग्रंथ की वाचना भी यहाँ पूर्ण हुई। इस वाचना में पारसोलावासी बड़ी श्रद्धा भाव से शामिल होते थे।

दि. 30.4.2015 को क्षुल्लिका अभिन्नमती माताजी ने आर्यिका दीक्षा लेकर सल्लेखना पूर्वक समाधिमरण किया। वे यहाँ की बेटी व बांसवाड़ा की बहू थीं। इसी जगह अक्षय तृतीया के दिन से सभी ब्रह्मचारिणी बहनों की सफेद ड्रेस कर दी गई।

यहाँ से आचार्य संघ का प्रवास पारसोला के थाना मोहल्ले में हुआ। यहाँ समाज के तीस-चालीस घर हैं। आचार्य श्री की प्रेरणा व आशीर्वाद से उस थाना मोहल्ले का नाम सन्मति नगर रखा गया। यहाँ पर सेठ सम्पतलालजी के घर प्रांगण में तीन दिन का विधान बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुआ।

यहाँ पर सेलम (तमिलनाडु) में पंचकल्याणक हेतु सेलम सकल दिगंबर जैन समाज के आग्रहपूर्ण निमंत्रण पर आचार्य श्री ने क्षु. भव्यमती, क्षु. अभेदमती, क्षु. अमेयमती, ब्र. भूमि दीदी व ब्र. श्वेता दीदी तथा संघपति अजितजी कासलीवाल को भेजा। यहाँ के लम्बे प्रवास के बाद आचार्य श्री ने ससंघ यहाँ से 7 कि.मी. दूर मुंगाणा के लिए विहार कर दिया। ग्रीष्म के उष्ण मौसम में सूरज ने उगते से ही अपना प्रचंड उग्र रूप दिखाना प्रारंभ कर दिया। सुबह से ही धरती तपने लगी थी। ऐसी तपती पथरीली कंकरीली धरती पर चलते हुए आचार्य श्री ससंघ मुंगाणा पहुँचे। वहाँ विशाल जुलूस के साथ आपकी गरिमामयी अगवानी हुई।

मुंगाणा की अतिशयकारी भगवान आदिनाथ की मनोहारी प्रतिमा के कारण मुंगाणा अतिशय क्षेत्र बन गया है। बागड़ प्रांत में प्रवेश करने वाले साधु संत इस धर्म नगरी में भगवान आदिनाथ के दर्शन किये बिना नहीं जाते हैं।

यहाँ मंगल प्रवेश के साथ ही आपने प्रथम दिन से षटखंडागम द्वितीय भाग (भाग-2) की वाचना प्रारंभ कर दी। इस ग्रीष्म कालीन एक माह चलने वाली वाचना में गणिनी आर्यिका सौभाग्यमती माताजी ने ससंघ वाचना के लाभ का सौभाग्य आचार्य श्री के वात्सल्यपूर्ण सान्निध्य में प्राप्त किया।

श्रुत पंचमी के दिन वाचना समाप्त हुई व इसी दिन परम्परा के महान आचार्य श्री आदिसागर अंकलीकर का आचार्य पदारोहण शताब्दी वर्ष भी पूर्ण हुआ। श्रुताराधना दिवस पर माँ जिनवाणी का भव्य जुलूस पूरे गाँव में घूमता हुआ जिन मंदिर पहुँचा। जहाँ शोभायात्रा धर्मसभा में परिवर्तित हो गई। जहाँ आचार्य श्री ने प्रभावोत्पादक बोधिप्रद सदुपदेश दिया।

आचार्य श्री का मंगलवास तो मुंगाणा में था ही, गणिनी आर्यिका सौभाग्यमती माताजी भी वहीं विराजमान थीं कि तभी इस धर्म नगरी में पुष्पगिरि प्रणेता आचार्य श्री पुष्पदंतसागरजी का मंगल आगमन सोने में सुहागा बन गया। युग प्रवर्तक दो महान आचार्यों का महामिलन देख मुंगाणा के श्रावक जन धन्य हो गए। उन्हें देख आचार्य श्री सुनीलसागरजी की खुशी का पारावार न था। आचार्य श्री पुष्पदंत सागरजी युवाचार्य सुनील सागरजी की विलक्षण प्रतिभा, आगमोक्त कथनों व आगम के अथाह ज्ञान को देख मंत्रमुग्ध हो गए। उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए इन 'संशुद्धि तत्त्व नायक' को आपने मुंगाणा की पावन भूमि पर 'सिद्धांत पारंगत' उपाधि से अलंकृत किया। दो आचार्य व माताजी की उपस्थिति

मुंगाणा में जानकर उपाध्याय श्री उदारसागरजी ससंघ व उपाध्याय श्री अनुभव सागरजी ससंघ का भी मुंगाणा की धरती पर भव्य मंगल प्रवेश हुआ। अब मुंगाणा में श्रावक कम, साधु अधिक, चतुर्थ काल का दृश्य उपस्थित हो गया। पाँचों संघों में वात्सल्य भाव देखते बनता था जो स्तुत्य व प्रशंसनीय था।

आहार चर्या पश्चात दोपहर में आचार्य श्री मुंगाणा से ससंघ खूता होते हुए मह अतिशय क्षेत्र (धरियावद) पहुँचे। यह क्षेत्र धरियावद की वह अमूल्य धरोहर है जहाँ भूगर्भ से निकली मनोहारी प्रशांत जिन प्रतिमा के अलावा अनेक प्राचीन प्रतिमाएँ हैं जिनके दर्शन से आचार्य श्री का हृदय गदगद हो गया। वीतरागता में वृद्धि हुई। यहाँ पर मुंगाणा की मुमुक्षु ब्र. प्रियंका बहन ने आचार्य संघ मे प्रवेश किया। दो दिनी धर्म साधना व धर्म प्रभावना के पश्चात आचार्य श्री ने धरियावद में मंगल प्रवेश किया।

मह क्षेत्र की घटना है। ब्र. भूमि बहन प्रवचन का समय होने पर जाप कर प्रवचन में मंच पर जा बैठी। अचानक उन्हें याद आया कि जाप कर वे अपनी चाँदी की माला वहीं कमरे में चौकी पर छोड़ आईं। पुनः जाकर देखा, वहाँ माला नहीं थी। आस-पास उन्होंने व कुछ श्रावकों ने ढूँढा पर माला नहीं मिली। पुजारीजी को बता पुनः मंच पर आ गईं। पर माला का मोह मनका फेरने के बाद भी मन का मनका नहीं फेर सका। मन प्रवचन में नहीं माला में जा लगा। ज्ञानी बहिन दो-तीन बार वहाँ जाकर देख आई। उनको विचलित देख माताजी ने कारण पूछा। उनका उत्तर सुन उन्होंने कहा- आचार्य श्री का अभी प्रवचन प्रारंभ नहीं हुआ है। उन्हें जाकर बता दो। जब आचार्य श्री को जाकर उन बहिन ने यह बात बताई तब आचार्य श्री ने मुस्कुराते हुए अपने लहजे में कहा- ''माला से मन हटाओ, आत्मध्यान व प्रभु भक्ति में मन लगाओ। जाओ एक बार और वहीं जाकर देखो। और हाँ, माला का मनका नहीं मन का मनका फेरो, तभी तुम्हारा कल्याण होगा।''

और सच में तुरंत पूर्व में साथ चली ब्र. बहनों के साथ उस जगह वापस पहुँची, माला यथावत वहीं रखी थी जहाँ तीन-चार बार वे देख चुकी थीं।

धरियावद

आचार्य श्री सुनीलसागरजी असाधारण व्यक्तित्व के धनी हैं। वे विहार में किसी स्थान पर एक घंटा रुके, एक दिन रुके, चार दिन रुके, महीना भर रुके या चातुर्मास करें, वे अपने विलक्षण कार्यों से अपनी उपस्थिति दर्ज करवा ही देते हैं। सहज, सरल साधारण से दिखने वाले ये संत समाज पर अपने असाधारण कार्यों की छाप छोड़ ही देते हैं।

धर्म नगरी धरियावद में भी उनका मंगल प्रवेश समाज के लिए वरदान साबित हुआ। आचार्य श्री के धरियावद प्रवेश पर समाज के दो धड़े अलग-अलग उनकी अगवानी के लिए पहुँचे। ऐसा पहली बार हुआ था। तभी आचार्य श्री को दाल में कुछ काला नजर आया। शाम तक तो आचार्य श्री के पास समाज के आपसी विवाद की सारी रिपोर्ट पहुँच चुकी थी। आचार्य श्री का पहला प्रवचन ही सामाजिक सामंजस्य व एकता पर हुआ। दूसरे दिन शाम तक विवाद की सारी वस्तुस्थिति आचार्य श्री को स्पष्ट हो गई थी। अपने पूर्ववर्ती आचार्य, मुनि, आर्यिका की तरह आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने भी समाज का विवाद मिटाने की भरसक कोशिश की। पर हाल वही, ढाक के तीन पात। 35 वर्षों से चल रहे विवाद में कोई भी पक्ष समझौता करना नहीं चाहता था। सब अपनी बात पर अड़े थे। ''किनारे पर बैठने वाले की नैया पार नहीं होती तथा कोशिश करने वालों की कभी हार नहीं होती।'' सोचकर आचार्य श्री निराश नहीं हुए। अगला प्रवचन भी सामाजिक समझौते को लेकर था पर कोई पक्ष टस से मस नहीं हुआ। आचार्य श्री ने प्रवचन पश्चात दोनों पक्षों को अपने कमरे में बुलाया व कहा कि जब तक समाज विवाद सुलझाकर समझौता नहीं करती, तब तक मेरा अन्न-जल का त्याग।

सारा समाज संत निवास पर एकत्रित हो गया। आचार्य श्री आहार-चर्या को नहीं उठे। 11 बज गए। संघ से कोई भी

साधु आहार के लिए नहीं उठा। सारे नगर में हलचल मच गई। दिगर समाज के लोग दिगम्बर जैन समाज पर थू-थू करने लगी। नगर के अन्य समाज के प्रतिष्ठित लोगों ने आकर अरज की- ''महाराजजी, ये तो वर्षों से लड़ रहे हैं, आप आहार के लिए उठिये।'' पर महाराजजी ने कुछ नहीं कहा। उन्होंने समाज के मुखियाओं से कहा कि तुम्हारे कारण नगर में अतिथि बनकर आए इतने सारे संत भूखे बैठे हैं। हमारा सिर शर्म से झुक गया है। इस नगर की कुछ तो लाज बचाओ।

आखिर आचार्य श्री के सद्प्रयासों से विवाद समाप्त करने की अरज लेकर ग्यारह बजे बाद सेठ साहब व हसमुख पंडितजी ने आकर आचार्य श्री को श्रीफल अर्पित कर समाज की एकता की घोषणा की व आहार के लिए उठने की प्रार्थना की। चारों ओर क्या जैन, क्या जैनेतर समाजों में पैंतीस साल पुराना जैन समाज का विवाद आचार्य श्री सुनील सागरजी द्वारा समाप्त कराए जाने पर अपार हर्ष छा गया। इत्तफाक से आचार्य श्री का आहार भी सेठ साहब के यहीं हुआ।

दूसरे दिन प्रवचन सभा में चतुर्विध संघ के समक्ष सेठजी ने पूरे समाज के साथ एकजुट रहने का संकल्प लिया। राजस्थान पत्रिका, नवज्योति व दैनिक भास्कर जैसे अखबारों ने इस घटना को हाईलाइट करते हुए इस विवाद के निपटारे का श्रेय आचार्य श्री सुनीलसागरजी की तप साधना व सामाजिक एकता व बैर वैमनस्य मिटाने की भावना को दिया। इस खुशी में 35 साल बाद पूरे समाज का सामूहिक वात्सल्य भोज हुआ।

धरियावद में आचार्य श्री की तप साधना का अतिशयकारी प्रभाव हो रहा था। नित नए चमत्कार हो रहे थे। हुआ कुछ यूँ कि आचार्य श्री का आहार उस दिन संत सदन से करीब डेढ़ कि.मी. दूर किसी श्रावक के घर हुआ। उसने आचार्य श्री का पाद प्रक्षालन कुंकुम से किया। लौटते में थोड़ी-थोड़ी दूर छोड़ पूरे रास्ते पर आचार्य श्री के चरण चिह्न सड़क पर अंकित हो गए। लोगों का कहना था कि ग्रीष्म में तपती धरती पर 10-20 कदम चलने पर ही पैर सूख जाते हैं। फिर डेढ़ किमी तक चरण उभरना आश्चर्यकारी घटना थी। जैन क्या अजैन क्या, पूरा नगर चरण चिह्न देखने उमड़ पड़ा। रात्रि में अजैन लोगों ने चरण चिह्न के पास जगह-जगह दीपक जलाकर रखे व हर चौराहे पर संगीतमय भक्ति के कार्यक्रम रखे। जहाँ आचार्य श्री के भक्ति गीत गाए गए।

आचार्य श्री तो साक्षात देवता के रूप में हमारे नगर में पधारे हैं, कहते हुए सारा नगर आचार्य श्री के दर्शनार्थ उमड़ पड़ा।

आचार्य श्री का धरियावद में 15 दिनी मंगल प्रवास रहा। इसी बीच हसमुख पंडितजी ने आचार्य श्री से धरियावद की शान कहे जाने वाले नंदनवन हिमवन में पधारने का निवेदन किया। इन्हीं दिनों आचार्य श्री की प्रेरणा से वहाँ के पद्मप्रभु जिनालय में तपस्वी सम्राट गुरुवर आचार्य श्री सन्मतिसागरजी की खड़्गासन प्रतिमा आचार्य श्री सुनील सागरजी के करकमलों से स्थापित हुई।

इसके पश्चात आचार्य श्री ने हसमुख पंडितजी के साथ नंदनवन हिमवन में प्रवेश किया। वहाँ एक दिनी मंगल प्रवास में संघस्थ मुनि मुदितसागरजी ने गुरु आज्ञा से करीब 250-300 छात्रों को ब्राह्मी लिपि से अवगत कराया।

इस विहार में चातुर्मासिक बेला नजदीक आते देख जगह-जगह से आचार्य श्री को चातुर्मास के लिए श्रीफल अर्पित किये जा रहे थे। प्रतापगढ़ वासियों की श्रद्धा-भक्ति प्रगाढ़ थी। वे आचार्य श्री के राजस्थान प्रवेश से आज तक इस पुरुषार्थ में जुटे थे। हर जगह श्रीफल अर्पित करते आ रहे थे।

प्रतापगढ़ चातुर्मास

बिना किसी पूर्व घोषणा के आचार्य श्री ने ससंघ प्रतापगढ़ की ओर मंगल विहार कर दिया। 2015 का चातुर्मास कहाँ होगा, निश्चित नहीं था। धरियावद से विहार करते हुए प्रतापगढ़ से 14 कि.मी. पूर्व आचार्य श्री ससंघ देवगढ़ प्राचीन तीर्थ क्षेत्र पहुँचे। प्रकृति की सुरम्य गोद में डेरिया पर बने भव्य जिनालय चारों ओर से पवन चक्कियों से घिरे

थे। आचार्य संघ ने दर्शन लाभ लिया।

आहार चर्या से पूर्व आचार्य श्री ससंघ चैत्यालय की प्रतिमा का अभिषेक देखने मंदिर में विराजित हुए। कट्टर तेरापंथी आम्नाय में चैत्यालय की प्रतिमा मंदिर में नहीं लाने दी, न रखने दी व बाजू में स्थित हॉल में रखने को कहा। जबकि पंथवाद से कोसों दूर आचार्य श्री ने श्रावकों को वहाँ की आम्नाय के अनुसार ही जलाभिषेक करने को कहा था। श्रावकों द्वारा बताए जाने पर भी ट्रस्टियों ने प्रतिमा मंदिर में नहीं लाने दी। जिनेन्द्र भगवान की प्रतिमा के अविनय की इस घटना से द्रवित आचार्य श्री ने आहार चर्या में उठने से पूर्व ही अंतराय कर लिया। इस घटना से मंदिर के ट्रस्टी शर्मसार हो गए। धार्मिक कट्टरता व पंथवाद के कारण वे एक महान आचार्य की आहारचर्या के अंतराय के निमित्त बने। भगवान ही जाने इस पंथवाद के नाम से उन्होंने जाने कौनसा व कितने काल का अंतराय कर्म का बंध कर लिया। श्रावकों या संतों को उन्होंने मंदिर में प्रवेश से रोका होता तो अन्य बात थी, उन्होंने तो त्रिलोकीनाथ को मंदिर में आने से रोका। धर्म के नाम पर देवगढ़ पर लगा यह कलंक का धब्बा कब व कैसे मिटेगा? समाज के लिए चिंतनीय विषय है। कट्टरपंथियों ने देवगढ़ नाम पर ही कालिख पोत दी। देवताओं के नाम पर बने उस देवगढ़ के मंदिर में त्रिलोक पूज्य देवता का ही प्रवेश वर्जित कर दिया। यह कैसा देवगढ़। यह घटना इतिहास के पन्नों में काले अक्षरों में लिखी जाएगी।

अंकलीकर परम्परा के चतुर्थ पट्टाचार्य, विभिन्न पदवियों से विभूषित सूरि रत्न आचार्य श्री सुनीलसागरजी के चरण ज्यों-ज्यों प्रतापगढ़ राणा प्रताप की प्रतापी भूमि की ओर बढ़ रहे थे, प्रतापगढ़ वासियों में हर्ष व उत्साह का सागर ठाठे ले लेकर लहराने लगा। उन्हें आशा बंधी थी कि यह 2015 का चातुर्मास प्रतापगढ़ वासियों को मिलेगा। पर अभी घोषणा नहीं हुई थी।

अंततः द्वितीय पट्टाचार्य आचार्य श्री महावीर कीर्तिजी के समय से तन-मन-धन से गुरु चरणों में समर्पित, संघ सारथी श्रीमती सज्जनदेवी ज्ञानचंदजी मिंडा परिवार एवं अनन्य गुरुभक्त कनकमलजी डोटिया परिवार का पुण्य पुरुषार्थ रंग लाया। उनके सहयोग से प्रतापगढ़ वासियों ने सन् 2015 का चातुर्मास प्रतापगढ़ के नाम घोषित करवा ही लिया। प्रतापगढ़ वासियों की उछाले मारती खुशियाँ देखने लायक ती।

प्रतापगढ़ की पुण्य भूमि पर देश के बड़े-बड़े महान संतों के चातुर्मास संपन्न हुए हैं। अतः प्रतापगढ़ वासियों की भावना थी कि उन्हें जिन धर्म संसाधन वीर, तत्त्व विज्ञान भूषण, तपोवृद्ध, ज्ञानवृद्ध, मनोजयी, महागुणी युवाचार्यश्री सुनीलसागरजी का चातुर्मासिक सौभाग्य प्राप्त हुआ है वह न सिर्फ खास होगा, अपितु ऐतिहासिक व श्रमण परम्परा के लिए चिरस्मरणीय भी रहेगा। और सारे प्रतापगढ़ ने एक जुट हो कमर कस ली।

एक ओर सप्त तत्त्व ज्ञाता, सम्यक् बुद्ध, धर्म प्रभावक महायोगी पट्टाचार्य श्री सुनील सागरजी व दूसरी ओर उनकी परम भक्त महाप्रभावक प्रतापगढ़ की समाज के सद्प्रयत्नों व पुरुषार्थ से श्रमण संस्कृति की धर्म ध्वजा फर-फर फहराने लगी।

प्रतापगढ़ में आचार्य श्री की उपस्थिति ने कई इतिहास रचे। मलय मंद समीर के साथ उनकी यश कीर्ति की चंदनमय खुशबू दिगदिगन्तों में फैलने लगी। प्रतापगढ़ के संगीतप्रेमी गुरुभक्तों ने श्रद्धा व आस्था से ओतप्रोत हो यहीं से आचार्य गुरु की संगीतमय आरती प्रारंभ की जो आज भी संध्या को विभिन्न वाद्यों से भक्तों को भक्ति रस से आपूरित कर देती है। क्या युवा और क्या वृद्धजन, इस आरती में वाद्य यंत्रों की ताल पर थिरकते, झूम-झूम कर नाचते-गाते देखते ही बनता है। प्रतापगढ़ में होने वाली इस सांध्य गुरु आरती ने युवा वर्ग को आचार्य श्री के निकट ला दिया। वे चुम्बक की तरह आचार्य श्री की तरफ खींचे चले जाते थे। इस प्रकार प्रतापगढ़ के आचार्य श्री का एक युवा भक्त मंडल तैयार हो गया जो हर चातुर्मासिक आयोजन में बढ़-चढ़कर हिस्सा लेने लगा। युवा आचार्य भी उनमें जोश व ओज भरते धर्म मार्ग पर बढ़ने की प्रेरणा भरते रहते।

प्रभावी घटना कमलेश दोशी का चुनाव

आचार्य श्री जब प्रवचन करते थे तब लोगों को ऐसे लगता मानो उनके मुखारविंद से झरते अमृत के सोते सांसारिक दुःखों के आताप से तप्त संतप्त हृदयों पर चन्दन का शीतल लेप कर रहे हैं। उनके उपदेशों में आत्मध्यान की गहरी अनुभूति स्पष्ट झलकती थी। उनकी अध्यात्म की प्रस्तुति की शैली धर्म से विमुख लोगों को अध्यात्म की ओर प्रेरित करती। उनके द्वारा की जाने वाली नैतिक मूल्यों की व्याख्यात्मक प्रस्तुति से प्रभावित हो जन सामान्य अनैतिक कार्यों से विमुख होने लगे। उनके द्वारा की जाने वाली चारित्र शुद्धि की विवेचना सुन लोग सदाचारी, ईमानदार व सच्चरित्र बनने का प्रयास करने लगे। वे जन्मों से पड़े अपने कदाचार के कुसंस्कारों को छोड़ आत्मकल्याण के मार्ग पर प्रवृत्त होने लगे। उनके द्वारा दिया जाने वाला समत्व की बोध साधना का बोध प्राप्त कर लोग आपसी बैर-विद्वेष व विकारों को भूल 'सत्वेषु मैत्री' की भावना से भरने लगे। इस प्रकार आचार्य श्री समाज में 'अप्पा सो परमप्पा' आत्मा सो परमात्मा की भावना भर आत्मजागृति कराने लगे। उनके प्रवचनों को सुनकर लोग उन्हें अपना सच्चा परम हितकारी समझने लगे।

आचार्य श्री के भक्तों की संख्या दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ने लगी। समाज के लब्ध प्रतिष्ठित सुश्रावक नगर सभापति श्री कमलेशजी दोशी व प्रतापगढ़ एसपी श्री कालूरामजी रावत ने आचार्य श्री के प्रति अपना जीवन समर्पित कर दिया। वे जब भी समय मिलता, आचार्य श्री के प्रवचन सुनते, आहार चर्या में भाग लेते, वाचना सुनते, वैयावृत्ति करते व कार्यक्रमों के आयोजन संयोजन में पूर्ण सहभागिता प्रदान करते। ऐसे अनेक भक्त गुरुवर का नैकट्य प्राप्त कर आशीर्वाद प्राप्त कर जीवन धन्य करते रहे।

श्री कमलेशजी दोशी का नाम जब नगर सभापति पद के लिए तय हो गया तब हार की पूर्ण संभावना होने के बाद भी आचार्य श्री को श्रीफल अर्पित कर आशीर्वाद लिया। आचार्य श्री ने कहा- आपकी जीत निश्चित है। भले ही वह एक वोट से हो। गुरुदेव के आशीर्वाद ने उनमें उत्साह जगा दिया। वे पूर्ण ताकत लगाकर गुरुवर के आशीर्वाद पर भरोसा कर चुनावी कार्य सम्पन्न करने लगे। यद्यपि उनकी हार की पूर्ण संभावना थी पर गुरु आशीर्वाद के पुण्य संयोग से वे पुनः नगर सभापति का पद जीत गए। भले ही वह एक वोट का अन्तर हो। पूरे प्रतापगढ़ में इसे गुरु आशीर्वाद का चमत्कार माना जाने लगा।

भूपेन्द्रजी का नृत्य

'न पंथवाद न संतवाद, सिर्फ महावीरवाद' की भावना से भरे विश्व मंगलकारी प्रवचनों को सुन प्रतापगढ़ में दिगंबर-श्वेतांबर का भेद भाव भूल आचार्य श्री के प्रवचनों, आहार, आरती व वैयावृत्ति में दोनों समाज का जनसैलाब उमड़ पड़ता। श्वेतांबर समाज के एक श्रावक श्रेष्ठी भूपेन्द्रजी चिप्पड़ रोज आरती के वक्त इन्द्र की तरह सजकर आते, चँवर ढुराते, चाँदी की पुष्पवृष्टि करते, गुरु गुणगान करते, शास्त्रीय नृत्य प्रस्तुत करते, गुरुमय हो जाते। स्वयं को भूल जाते। प्रतापगढ़ में उनकी गुरु भक्ति चर्चा का विषय रही।

प्राणी मात्र के हितचिंतक वात्सल्य मूर्ति आचार्य श्री सुनीलसागरजी के करुणा से ओतप्रोत प्रवचनों को सुनने हर धर्म व जाति के लोग आते थे। एक दिन चातुर्मास स्थली 'श्री नया मंदिरजी' के पास बनी अनुसूचित जाति की बस्ती के लोग, जो टोकनियाँ वगैरह बना जीवन यापन करते, स्वाध्याय के वक्त कुछ पुरुष-महिलाएँ आचार्य श्री के पास आए व हाथ जोड़कर विनती करने लगे, ''बापजी, एक भोंपू (स्पीकर) हमारी बस्ती में भी लगवा दो। हम भी आपकी भागवत वाणी का लाभ ले सकेंगे।'' आचार्य श्री के कहते ही समाज ने उनके लिए व्यवस्था कर दी। अब वे प्रवचन

स्वाध्याय, आरती आदि के वक्त नियत समय पर स्पीकर के पास एकत्रित होकर चुपचाप टोकने बनाने का कार्य करते प्रवचन वगैरह सुनते रहते। इस प्रकार आचार्य श्री की जनकल्याणी वाणी जन-जन तक पहुँच रही थी।

आचार्य श्री का प्रभाव चारों ओर व्याप्त था। सारा प्रतापगढ़ आचार्य सुनीलमय हो गया था। वहाँ का हर व्यक्ति आचार्य श्री का दर्शन अपने लिए सौभाग्य सूचक व शुभ मानता। क्या ठेले वाले, क्या सब्जी वाले, क्या मजदूरी करने वाले, क्या दुकान वाले, सबेरे प्रवचन सभा में बैठे 'बापजी' (आचार्य श्री के लिए आदरमय संबोधन) के दर्शन कर जाते व अपनी दिनचर्या सफल करते। पूरे प्रतापगढ़ में इतना बड़ा संघ होने के कारण त्यागी व्रती के अलावा श्वेत वस्त्रधारी ब्रह्मचारी/ब्रह्मचारिणी दिख जाते। गली-मोहल्ले से उन्हें गुजरते देख बच्चे, बूढ़े, जवान सब उन्हें आदर व श्रद्धा के साथ हाथ जोड़ देते।

मिट्टी का घड़ा

एक बार आचार्य श्री ने पड़गाहन में मिट्टी के घड़े की विधि ली। आहार विधि नहीं मिल रही थी। लोग चिल्ला रहे थे। अरे! मिट्टी का घड़ा लाओ। पास खड़े अनुसूचित जाति के एक व्यक्ति ने जब यह बात सुनी तो वह दौड़ा-दौड़ा घर गया और एक दिन पूर्व खरीदा कोरा मिट्टी का घड़ा लेकर दौड़ा-दौड़ा आया। और उसी घड़े से आचार्य श्री का पड़गाहन हो गया। वह तो अपने को कृतकृत्य मानने लगा। इस घटना से प्रतापगढ़ में आचार्यश्री के विशाल दृष्टिकोण व उदार मनोवृत्ति का समाज पर गहरा प्रभाव पड़ा।

लोग आचार्य श्री से भावनात्मक रूप से इतने जुड़ गए थे कि वे किसी भी जैनी को देख पूछ लेते- ''आज 'बापजी' रो भोजन अच्छो वयो? (हो गया)।'' आचार्य श्री के अंतराय होने पर प्रतापगढ़ की गली-मोहल्ला के लोग दुःखी हो जाते और दूसरे दिन आचार्य श्री की आहार चर्या के वक्त भीड़ का मजमा लग जाता। लोग उनके भावों की विशुद्ध परिणति, पवित्र आचरण व स्वच्छ विचारों से प्रभावित थे। लोगों की श्रद्धा थी कि उनके दुःख-दर्द, रोग-शोक, विघ्न-बाधाएँ आचार्य श्री सुनीलसागरजी के दर्शन, आशीर्वाद व चरण सान्निध्य से मिट जाते हैं। जबकि आचार्य श्री का कहना था कि ऐसा कुछ नहीं। वे और उनके संघ के त्याग-तपस्या, संयम-साधना से वातावरण पवित्र व शुद्ध हो जाता है। ऐसे वातावरण में आने से आगंतुक के भावों में भी निर्मलता पवित्रता आ जाती है। विकार नष्ट हो जाते हैं और उनके कर्मों का शमन हो जाता है। अतः गुरु सान्निध्य के निमित्त से उनके दुःख दूर हो जाते हैं। वे अपनी प्रसिद्धि व प्रभावना का श्रेय कभी स्वयं नहीं लेते। वे तो सदैव सहज व सरल बने रहते।

आपके सान्निध्य में विजयादशमी पर्व पर प्रतापगढ़ के जैन बोर्डिंग मंदिर में मानस्तंभ के महामस्तकाभिषेक का आयोजन हुआ। इस मंगल अवसर पर आपने कुछ भव्यात्माओं को आत्मकल्याण रूप मोक्षमार्ग पर चलने के लिए जैनेश्वरी दीक्षाएँ दी जिसमें मुनि श्री श्रुतेशसागरजी, मुनि श्री सुश्रुतसागरजी, मुनि श्री श्रुतांशसागरजी, क्षुल्लक संजयंत सागरजी, क्षु. विजयंत सागरजी, क्षु. जयंत सागरजी, क्षुल्लिका अनघमति माताजी व क्षुल्लिका अनर्घमती माताजी ने दीक्षा ले संयम धारण किया। इतना बड़ा भव्य दीक्षा कार्यक्रम अभूतपूर्व व ऐतिहासिक रहा।

आपका मानना है कि सुधरे हुए को क्या सुधारना, हमें तो उन्हें सुधारना है जो जाने-अनजाने गलत काम कर बैठे व जेल की सजा काट रहे हैं। वे पुनः अपराधी न बन जाए, अपराध छोड़ सहज जीवन जीने लायक बने व अच्छे कार्यों से समाज में सम्मान की दृष्टि से देखे जाएँ, ऐसे करुणा व मंगलमय कल्याण बोध को लिए आपने प्रतापगढ़ की जेल में मार्मिक प्रवचन दे कैदियों के जीवन को रूपान्तरित करने का प्रयास किया। आपके जीवन बोध देने वाले प्रवचनों से प्रभावित नेता, अधिकारी, उद्योगपतियों का जाति-पाति का भेदभाव भूल दर्शनार्थ आने का तांता लगा रहता। राजपूत नेता डी.डी. राजावत ने तो आपसे प्रेरित हो मद्य-मांस तम्बाखू तक का त्याग कर दिया।

पंचकल्याणक महोत्सव

प्रतापगढ़ में कई कीर्तिमान गढ़ते आचार्य श्री सुनीलसागरजी का चातुर्मास पूर्णता की ओर था। गुरु सान्निध्य की बेला विदा बेला की ओर अग्रसर थी कि परम गुरुभक्त प्रतापगढ़ निवासी, मुंबई प्रवासी वर्षों से गुरु सेवा में संलग्न, संघ सारथी सज्जनबाई ज्ञानचंदजी मिंडा परिवार ने अपने सद्कार्यों से इस चातुर्मास को स्वर्णिम बना दिया। उन्होंने आचार्य श्री का प्रतापगढ़ चातुर्मास चिरस्मृत बनाने के लिए अपने धन का सदुपयोग कर रत्नमयी चौबीसी जिन बिम्ब बनवा रत्न मंदिर का भव्यातिभव्य पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव आचार्य श्री के सान्निध्य में संपन्न करवाया। इस प्रकार जाते-जाते भी आचार्य श्री प्रतापगढ़ वासियों को रत्नचौबीसी की अमूल्य सौगात सौंप गए। प्रतापगढ़ में जिस जगह इस मंगल महोत्सव का आयोजन हुआ था, कार्पोरेशन द्वारा उसका नाम 'कुंडलपुर नगर' घोषित किया गया।

2015 चातुर्मास में आचार्य श्री के इन महान विश्वमंगलकारी अवदानों के ऋण से नतमस्तक प्रतापगढ़ समाज के श्रेष्ठीगणों ने उन्हें 'संयम भूषण' तथा विद्वत गोष्ठी में आए विद्वानों की सहमति से प्रो. प्रेमसुमन द्वारा आचार्य श्री सुनीलसागरजी को 'जैनमार्ग प्रभावक' तथा उनके आगम ज्ञान को सुन समझ उन्हें 'अभिनव कुंदकुंद' की पदवी से विभूषित किया गया। इस प्रकार आचार्य श्री को उनके द्वारा समाज को दिये गये महा अवदानों व दर्शन ज्ञान व चारित्र की सुसंपन्नता के कारण एक साथ उन्हें तीन उपाधियों 'संयम भूषण', 'जैनमार्ग प्रभावक', 'अभिनव कुंदकुंद' से विभूषित किया गया।

शांतिनाथ

चातुर्मास सन् 2015 (प्रतापगढ़) में संपन्न कर, सबको जन्म-जरा-मृत्यु से निजात दिलाने मुक्तिबोध दे दि. 12.12.2015 को आचार्य श्री ने प्रतापगढ़ के निकटस्थ अतिशय क्षेत्र शांतिनाथजी के लिए विहार कर दिया। यहाँ भव्य जिन मंदिर में विराजित भगवान शांतिनाथजी की श्यामवर्ण बड़ी मनोरम विशालकाय अतिशय व चमत्कारी पद्मासन प्रतिमा जन आस्था व श्रद्धा का केन्द्र है। सोलहवें तीर्थंकर चक्रवर्ती कामदेव पद के धारी प्रभु शांतिनाथ की प्रशांत मुद्रा के दर्शन कर आचार्य श्री का हृदय पुलकित हो गया। प्रभु के प्रति उनके हृदय में इतनी श्रद्धा-भक्ति उमड़ी कि उन्होंने प्रकृति के अंचल में बसे इस क्षेत्र में 16 दिवसीय विधान करवाने की श्रावकों को प्रेरणा दी। बड़े भक्ति भाव से रोज संगीतमय पूजा में प्रतापगढ़ वासी उमड़ पड़ते।

दि. 15.12.15 से ही शांतिनाथजी मंदिर में विधान शुरू हुआ और इसी दिन मंदिर के विशाल प्रांगण में सम्पूर्ण संघ का पिच्छी परिवर्तन का भव्यातिभव्य कार्यक्रम सानंद हर्षोल्लास के साथ संपन्न हुआ। सोलह दिवसीय विधान के मध्य दि. 24.12.15 को तपस्वी सम्राट आ. सन्मतिसागरजी का 6ठा समाधि दिवस आचार्य श्री के सान्निध्य में बड़ी धूमधाम से मनाया गया। आचार्य श्री ने अपने ऊपर किये उनके उपकारों को याद करते हुए सागर को बूँद रूप भावांजलि अर्पित करते हुए भरी आँखों व भारी हृदय से कहा कि सागर को अर्पित मेरी श्रद्धा, बूँद तुल्य भी नहीं है। गुरु ऋण को चुकाने मुझे न जाने कितने जन्म लेने पड़ेंगे। हर वक्त, बार-बार गुरुवर की कही बात मेरे कानों में गूँजती है। जब मैं उनसे उपवास का नियम लेने गया था, तब उन्होंने मुझे उपवास न देते हुए कहा था, 'साधुओं के व्रत उपवास तो दीक्षा दिवस से ही चलते हैं। अभी अधिक से अधिक आगम ज्ञान प्राप्ति की साधना करो। यह तुम्हारे व संसार के असंख्य जीवों के काम आएगी। आगम ज्ञान प्राप्त करना भी कठिन साधना है।'' तबसे मैं गुरुवर का दिया यह ज्ञान तुम्हें बाँटता आया हूँ। आज आप सबको जो मिल रहा है वह सब मुझ पर व आप लोगों पर की गई इन्हीं गुरु कृपा व करुणा का सुफल है। अपने परम पूज्य गुरुवर के वात्सल्य को याद करते हुए आचार्य श्री सुनीलसागरजी के रूप में एक विरक्त शिष्य संत

का गला भर आया।

इधर समाज भगवान शांतिनाथ की भक्ति में डूबा था और उधर अनियत विहारी आचार्य श्री ने प्रतापगढ़ को विदा दे दि. 25.12.2015 को मंदसौर के लिए विहार कर दिया।

जैसे ही लोगों को पता चला, लोग काम छोड़ व जो जहाँ जैसा था वैसा ही दौड़ पड़ा। लोगों की आँखों से बहता अश्रुओं का सैलाब आचार्य श्री के पद पखार रहा था। चरण पकड़े बैठे भक्त सरित स्वभावी संत को रोकने की निरर्थक चेष्टा कर रहे थे। वे बार-बार अनुनय विनय कर रहे थे, ''गुरुदेव हमसे कोई भूल या गलती हुई हो तो हमें क्षमा कर दीजिये। आप जो चाहें वह प्रायश्चित दे दीजिये। पर इस तरह अचानक मत चले जाइये।''

यह बात सुनते ही युवा वर्ग के हाथों के तोते उड़ गए। दि. 26.12.2015 के चतुर्थ पट्टाचार्य आरोहण दिवस की अभूतपूर्व तैयारी में जुटे युवक व तैयारी में लगे समाज के भक्तगण दौड़ पड़े। गुरुदेव हमने मंच तैयार कर लिया, विद्वतगणों व गणमान्य लोगों को आमंत्रित कर दिया, विभिन्न कार्यक्रमों की तैयारी महीने भर से चल रही है और आप.... यूँ हमें छोड़ .... कहते-कहते युवकगण रो पड़े। वे कह रहे थे कि गुरुदेव अभी तो विधान चल रहा है। इसकी पूर्णाहूति भी आपके सान्निध्य में होनी थी और आप...

मुस्कराते हुए इन निष्काम, निर्मोही, निस्पृही महायोगी ने सबसे कहा- ''किसी का कोई दोष या गलती नहीं है। विहार करना संत की नियति है। प्रतापगढ़ वासियों ने जो आत्मीय स्नेह व सम्मान मुझे दिया वह अभूतपूर्व है। श्लाघनीय व स्तुत्य है। गुरुओं के प्रति यह तुम्हारी भक्ति भवोदधि पार उतारने वाली है। मेरे बाद यहाँ आने वाले साधु-संतों के प्रति ऐसी ही श्रद्धा भक्ति रखना। मेरा सबको आशीर्वाद है। इस भक्ति जहाज में बैठ एक दिन भवदधि पार उतर जाओगे।''

कहते हुए वे भव्यजीवानुरागी, आत्मान्वेषी महायोगी लंबे-लंबे डग भरते बिना पीछे मुड़कर देखे आगे बढ़ गए। धीरे-धीरे धूल के उठते गुबारों में उनकी मंगल मूरत आँखों से ओझल हो गई। पीछे छूट गए थे जनहृदय में अंकित उनके चरण चिह्न, प्यारी-प्यारी चिरस्मृतियाँ। डबडबाई आँखों से होश-हवास खोया जन सैलाब उनके पीछे पागल बना दौड़ रहा था, भाग रहा था। किसी को पता नहीं उनमें कौन जैन था कौन अजैन? कौन ऊँच कौन नीच? कौन छोटा कौन बड़ा? कौन गरीब कौन अमीर? सब आचार्य श्री को विदा देने उनके पीछे भाग रहे थे। फिर भी प्रतापगढ़ वासी समाज व युवा हताश व निराश नहीं हुए। 26 दिसंबर 2015 को आचार्य श्री की चर्या की व्यवस्था कल्याणपुरा गाँव के एक स्कूल में की गई थी।

आचार्य श्री का छठा पट्टाचार्य पदारोहण दिवस 26.12.2015 को प्रतापगढ़ समाज व युवा मंडल ने कल्याणपुरा गाँव के उसी स्कूल में ठाठ-बाट से मनाया। वे सब अब अपनी पर आ गए थे। उन्होंने आचार्य श्री की एक न सुनी व उन्हें आगे के लिए विहार भी नहीं करने दिया। वे अपनी तैयारी की जो भी सामग्री वहाँ ले जा सकते थे, ले गए। अतिथियों को भी कार में बिठाकर ले गए। रात्रि में भी संगीतमय आरती व भक्ति की। आचार्य श्री की उपस्थिति में जंगल में मंगल हो गया। पिछले वर्ष 2014 में भी यह दिवस एक खेत में मनाया गया था और इस बार इस छोटे से स्कूल में। आचार्य श्री द्वारा गुरु के प्रति इतना सम्मान व स्वयं के प्रति इतनी उपेक्षा, ऐसे उदाहरण यदा-कदा ही देखने को मिलते हैं।

आचार्य श्री का मंदसौर (म.प्र.) में दि. 28.12.2015 को गौरवशाली मंगल प्रवेश हुआ। मंदसौरवासियों के लिए यह गुरु आगमन गौरवशाली इसलिए भी था क्योंकि उनके जैसे महान आचार्य के संघ में उस माटी में जन्मे मुनि श्री सुखसागरजी, क्षुल्लिका सम्यक्त्वमती माताजी तथा क्षुल्लिका संदेशमती माताजी थे जो वहाँ के श्रावक श्रेष्ठी डॉ. एस.एम. जैन परिवार से थे। अपनी माटी की इन पवित्र आत्माओं व उनके गुरु के दर्शन के लिए मंदसौर वासी लालायित थे। वर्षों बाद अपने नगर के साधु-साध्वियों को आचार्य संघ के साथ आने पर नगर में खुशी का अलग ही माहौल था।

नगरवासियों ने इन महाव्रतियों को सर आँखों पर बैठा लिया। प्रतापगढ़ चातुर्मास से ही वे आचार्य श्री को अपने यहाँ लाने के लिए कटिबद्ध थे।

यहाँ पर शीतकालीन वाचना में षट्खंडागम भाग-3 की वाचना संपन्न हुई। आचार्य श्री का आगमन ही हर कहीं लोगों के कल्याण का कारक बन जाता है। मंदसौर प्रवेश से ही वहाँ गुरु भक्त श्रावक कल्याणमल तलवाड़िया ने आचार्य श्री के आशीर्वाद व प्रेरणा से 250 लोगों के लिए सम्मेदशिखरजी की यात्रा की योजना बनाई। जिसमें उन्होंने संघस्थ त्यागी व्रतियों को भी यात्रा कराने का आचार्य श्री से आग्रह किया। इस प्रकार आचार्य श्री के निमित्त से 250 लोगों को सम्मेदशिखर व पंचतीर्थ यात्रा का सौभाग्य प्राप्त हुआ जिसमें संघस्थ त्यागी व्रतियों को भी यात्रा लाभ मिला।

इस प्रकार सतत शुभ कार्य करते हुए धार्मिक वातावरण में वर्ष 2015 बीत गया।

बही-मंदसौर

सन् 2016 का शुभारंभ आचार्य श्री ने मंदसौर में षटखंडागम भाग-3 के वाचन से किया। आचार्य श्री ने 19.1.2016 को मंदसौर के पास स्थित बही पार्श्वनाथ तीर्थक्षेत्र के लिए विहार किया। यहाँ पर दि. 21.1.2016 से 25.1.2016 तक आपके सान्निध्य में आदिनाथ भगवान का पंचकल्याणक सानंद संपन्न हुआ। पंचकल्याणक के अंतिम दिन विद्वत गोष्ठी का आयोजन हुआ। उपस्थित विद्वानों ने नाचते-गाते झूमते बड़े भक्ति भाव से आचार्य श्री की पूजा की।

इस शांत, सुरम्य व एकान्त स्थान में आप स्वाध्याय/वाचना के साथ आत्मासाधना में लीन रहे। कड़ाके की सर्दी के बीच स्वाध्याय/वाचना चल रही थी। समयसार की गाथा क्र. 38 का उच्चारण चल रहा था। मुनि श्री सुबुद्धसागरजी की बड़े निर्मल परिणामों से गुरु सान्निध्य में गाथा का उच्चारण करते-करते समाधि हो गई। इस कारण आचार्य श्री के दो उपवास हो गए।

यहाँ से आचार्य श्री ने बमोतर स्थित अतिशय क्षेत्र श्री शांतिनाथजी में मानस्तंभ जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के लिए 9.2.16 को ससंघ विहार किया। 13.2.16 से 17.2.16 तक संपन्न हुए इस प्रतिष्ठा महोत्सव के मुख्य पात्र का लाभ सूरत निवासी श्री कनकमलजी डोटिया परिवार को मिला। प्रतिष्ठा पं. हसमुखजी धरियावद ने संपन्न करवाई।

इसी बीच मांगीतुंगी में हो रहे भगवान आदिनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव में आपने संघस्थ व्रतियों के साथ आर्यिका ज्ञानमती माताजी को 'जीवंत सरस्वती' का प्रशस्ति पत्र भेजा।

दि. 18.2.2016 को आचार्य श्री पुनः प्रतापगढ़ पहुँचे। यहाँ उनका दो दिनी मंगल वास रहा। दि. 19.2.16 को आचार्य श्री मानस्तंभ की परिक्रमा कर वंदना कर रहे थे, तभी एक कुटिल व्यक्ति ने आचार्य श्री को श्रीफल चढ़ाने के बहाने से दौड़कर आकर उनके सिर पर पीछे से श्रीफल से वार कर उन पर घोर उपसर्ग किया। आचार्य श्री को गहरी चोट आई। समाज के लोगों ने उसे पकड़ लिया। अन्य लोग उसे पीटने लगे। पुलिस बुला ली गई। आचार्य श्री ने उसे छोड़ने को कहा। उसे माफ कर दिया लेकिन पुलिस उसे यह कहते हुए पकड़कर ले गई कि यह फिर से कोई उपद्रव न कर दे।

धन्य है आचार्य श्री कि इस भयानक चोट से हो रहे दर्द को अनासक्त भाव से सहते हुए तुरंत सुबह का प्रवचन बड़े शांत भाव से दिया। दोपहर सामायिक के बाद आचार्य श्री ने कमेटी के सदस्य से पूछा कि उस व्यक्ति ने भोजन किया कि नहीं। उसे भोजन दिया गया कि नहीं। इसे कहते हैं 'सत्वेषु मैत्री' आचार्य श्री को देख लोगों के हृदय में एक बार फिर भगवान पार्श्वनाथ जीवन्त हो उठे।

यहाँ दूसरे दिन विहार कर नंदनवन हिमवन होते हुए धरियावद पहुँचे जहाँ आपके सान्निध्य में 'सन्मति सभा मंडप' का शिलान्यास हुआ। यहाँ से रीछा के गुरुभक्त श्रावकों के विनय पूर्ण आग्रह पर रीछा में पिछले वर्ष आपके द्वारा कराए पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के पूर्ण होने पर आयोजित महोत्सव में ससंघ विहार करते हुए पहुँचे। गुरु के प्रति समर्पित रीछा वासियों ने इस बार भी आपका अभूतपूर्व स्वागत किया। यहाँ पर नवनिर्मित आचार्य सन्मतिसागर सभा मंडप का आपके सान्निध्य में लोकार्पण हुआ। आपके रीछा में मंगलवास की खबर सुन आचार्य उदारसागरजी का भी रीछा में मंगल आगमन हुआ। दोनों आचार्यों का आपस में वात्सल्य देखते ही बनता था। दोनों एकसाथ मंचासीन हो प्रवचन करते थे। यहीं पर आचार्य श्री के दर्शनार्थ उनके परम भक्त डूंगरपुर एसपी श्री अनिल जैन एवं प्रतापगढ़ एसपी श्री कालूरामजी रावत भी आ पहुँचे। आचार्य श्री की उपस्थिति में रीछा का चंद दिनों का मंगल प्रवास भी आपकी उपस्थिति को महत्वपूर्ण एवं प्रभावशाली बना गया।

सच है, जलता हुआ दीया ही अन्य दीयों को जला सकता है। उजाला फैला सकता है। आचार्य श्री दर्शन, ज्ञान व चारित्र का ऐसा जलता हुआ दीपक है जिसमें हम जैसे हजारों हजार बुझे दीयों को जलाने की क्षमता है। हम जैसे कितने ही संसारी, कीट पतंगों की तरह उनकी तरफ खींचे चले आते हैं। उनके आगमन पर जंगल में भी मंगल हो रहा है। आचार्य श्री की मनोवृत्ति में संतोष, हृदय में हर दुःखी प्राणी के प्रति सहानुभूति, जीवन में संयम, आचरण में सदाचार, विचारों में चारित्रिक दृढ़ता व उसके प्रति कटिबद्धता ने उनमें अलग तरह की दैविक शक्ति पैदा कर दी है।

पाड़वा में महावीर जयंती

पिछले दस वर्षों से पाड़वा की अनन्य गुरुभक्त समाज आचार्य संघ को पाड़वा लाने सतत प्रयासरत थी। पाड़वा के श्रावक पागलों की तरह सुध-बुध खोए आचार्य श्री के पीछे लगे रहते थे। अबकी बार आचार्य श्री उनकी अनदेखी न कर सके और वे श्रीसंघ सहित विहार करते साबला, पादरड़ी, सरोदा होते हुए पाड़वा पहुँचे। पाड़वा की धरती का रोम-रोम गुरु चरण स्पर्श से पुलकित हो उठा। आचार्य श्री को अपने बीच पा भक्ति के अतिरेक में आ छोटे से गाँव के श्रावक अपनी दैनंदिनी क्रियाकलाप भी भूल गए। जैसे कृष्ण की उपस्थिति में वृंदावन कृष्णमय हो जाया करता था, ठीक 'पाड़वा' गाँव गुरु सान्निध्य पा 'गुरुमय' हो गया। अव्यक्त खुशियों से भरी भावभीनी अगवानी को देख आचार्य श्री ने अपने प्रवचन में विनोद करते हुए उन्हें 'पाड़वा के पागलों' के नाम से संबोधित किया। सुनते ही सारे के सारे पाड़वावासी बच्चे-बूढ़े-जवान तालियाँ बजा नाचने-झूमने लगे।

पिछले दस वर्षों से वे जिनालय के शिलान्यास के लिए आचार्य श्री सुनीलसागरजी का पलक पावड़े बिछाए इंतजार कर रहे थे। इंतजार का युगों सा लम्बा एक-एक पल कैसे बीता होगा वे ही जाने, लेकिन गुरु आगमन पर वर्षों की साध का दीपक जल उठा। आखिर एक नहीं दो-दो जिनालयों का शिलान्यास उन्होंने करवा लिया। एक आचार्य भक्त श्रावक दिनेशजी ने 'जब तक आचार्य श्री का आहार मेरे यहाँ न होगा तब तक मैं किसी साधु को आहार नहीं दूँगा' ऐसा बचकाना नियम ले रखा था। गुरु के प्रति श्रद्धा भक्ति से अभिभूत कई श्रावकों ने गुरुवर के आने तक अपनी प्रिय वस्तुओं का त्याग कर रखा था। आचार्य श्री ने गुरुभक्तों का ऐसा समर्पण पहले कभी नहीं देखा था। आचार्य श्री ने प्रवचन सभा में एक साथ सबका संकल्प छुड़वाया। ऐसी अनोखी धर्मसभा ऐसे अनोखे लोग और ऐसे अनोखे गुरु। कुल मिलाकर पाड़वा में अनोखा ही वातावरण था।

आचार्य श्री की उपस्थिति में महावीर जयंती पर ही पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी का 20वाँ दीक्षा स्मृति दिवस दोनों एक साथ धूमधाम व हर्षोल्लास के साथ समाज द्वारा मनाया गया। स्वाध्याय में षटखंडागम-धवला पुस्तक 4 की श्रृंखलाबद्ध वाचना हुई। आचार्य श्री के प्रवचनों में पूरा पाड़वा तो उलट पड़ता, आसपास के गाँवों से भी हर जाति, धर्म

के लोग धर्म श्रवण लाभ लेने आते। संध्या की संगीत व भक्तिमय आरती का गाँव वासियों को इस कदर इंतजार रहता कि बच्चे शाम 5 बजे से माता-पिता के पीछे पड़ जाते व कहते- चलो बाबा की आरती में, चलो बाबा की आरती में।

राम नवमी के दिन भगवान राम के जीवन पर हुए उनके प्रवचन में लोगों की भीड़ इस कदर उमड़ी कि देखते ही बनती थी। प्रवचन से घंटे भर पहले पांडाल में आदिवासी, पटेल आदि अन्य सम्प्रदाय के लोग आकर बैठ गए थे। जब आचार्य श्री प्राणी मात्र के कल्याण की बात करते, सबसे मद्य-मांस व मधु तथा सप्त व्यसन त्यागने की बात कहते तब भोले-भाले ग्रामवासी यह कहते नहीं अघाते कि बाबा हमारी भलाई की ही बात कर रहे हैं। उनके लिए सब एक से हैं। वे जरा भी भेदभाव नहीं करते। और ग्रामवासियों ने बाबा के पास जा-जा कर अपनी कई बुरी आदतें छोड़ दीं। बड़े-बड़े अधिकारी, नेता, उद्योगपति भी छोटी-छोटी जगहों पर आचार्य श्री के दर्शनार्थ आते रहे व छोटे-मोटे नियम लेते रहे।

सागवाड़ा

सकल दिगंबर जैन समाज सागवाड़ा तथा 18000 दशाहूमड़ दिगंबर जैन समाज, बहत्तर गाँव के अध्यक्ष श्री दिनेशजी जैन के विशेष आग्रह पर आप ससंघ पाड़वा से विहार करते हुए सागवाड़ा पहुँचे। सन् 1989 में यहाँ गुरुवर आचार्य श्री सन्मतिसागरजी महाराज ने ससंघ चातुर्मास किया था और यहीं पर उनके शिष्य बालाचार्य से आचार्य बने श्री योगीन्द्र सागरजी की प्रेरणा से बनी योगीन्द्रगिरि तीर्थ है। यहीं पर उनकी समाधि भी बनी है। यहाँ सात प्राचीन विशाल जिनालय भी बने हुए हैं। ऐतिहासिक नगरी में एक वक्त अठारह हजार जैन परिवार रहते थे। आज भी यहाँ काफी मात्रा में जैन परिवार हैं।

प्रचंड ग्रीष्म, ऊपर से सूर्य के तेवर, राजस्थान की रेगिस्तानी भूमि से उठती लू-लपटों के बीच आचार्य श्री ने ग्रीष्मकालीन दूसरे सत्र में ज्ञान पिपासु श्रावकों के अति आग्रह पर यहाँ षटखंडागम धवला पुस्तक-5 की वाचना शुरू की। उसका समापन प्रथम पट्टाचार्य आचार्य श्री आदिसागरजी महाराज के पदारोहण दिवस श्रुत पंचमी महापर्व पर संपन्न हुआ। श्रुताराधना के इस महापर्व पर विशाल जुलूस द्वारा धर्म प्रभावना की गई।

इसी दिन सागवाड़ा की धर्मभूमि से 'परम्पराचार्य आदिसागर अंकलीकर अंतरराष्ट्रीय जागृति मंच सागवाड़ा शाखा' एवं 'आचार्य सुनीलसागर युवा संघ सागवाड़ा' का गठन हुआ। इस अवसर पर पावापुर सिद्धक्षेत्र की प्रतिकृति पावापुर तीर्थ क्षेत्र जिनालय का भूमिपूजन हुआ। यहाँ पर प्रातःकालीन प्रवचन सभा में 25 साधुओं का एकसाथ केशलोंच का अद्वितीय दृश्य मन को छूने वाला और दिगम्बर साधुओं के प्रति श्रद्धा से अभिभूत कर देने वाला था। आचार्य श्री सुनीलसागरजी द्वारा यहाँ पर सेठजी के मंदिर में मुनिकुंजर ज्येष्ठाचार्य श्री आदिसागरजी अंकलीकर की प्रतिमा स्थापित की गई। दोपहर में ज्येष्ठाचार्य की संगीतमय पूजा के पश्चात विनयांजलि सभा में प्राकृताचार्य, गोमटेश बाहुबली में भट्टारकजी श्री चारुकीर्तिजी द्वारा प्रदत्त पदवी 'अभिनव आचार्य नेमिचन्द्र' से अलंकृत पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी की भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा प्रकाशित प्राकृत कृतियों के वृहद ग्रंथ 'सुनील प्राकृत समग्र' का भव्य लोकार्पण हुआ जिसमें प्रदेश स्तर के मंत्री व अधिकारी उपस्थित थे। बिना एक दिन या एक घंटा गँवाए दूसरे दिन आप ससंघ सागवाड़ा के पास स्थित गोवाड़ी ग्राम के भव्य जिनालय के दर्शनार्थ पहुँचे। एक पंथ दो काज के हिसाब से लौटते में आपका आचार्य श्री कनकनंदीजी ससंघ से भी महामिलन हो गया। दोनों आचार्यों ने वात्सल्य भाव से एक-दूजे के रत्नत्रय की कुशलक्षेम पूछकर धर्मचर्चा की।

ग्रीष्मकालीन अवकाश में समाज के विशेष आग्रह पर उसी दिन ग्रीष्मकालीन शिक्षण शिविर की योजना बन दूसरे दिन से कार्यान्वित हो गई। शिक्षण शिविर में लगभग 250-300 बच्चों, स्त्री-पुरुषों व युवाओं ने शिक्षण लाभ लिया।

रात्रि में रुचिकर शिक्षाप्रद धार्मिक सांस्कृतिक कार्यक्रम होता था। शिक्षण शिविर में ही आचार्य श्री की प्रातःकालीन धर्मसभा में भक्तामर महास्त्रोतम् पर होने वाले शृंखलाबद्ध प्रवचनों के माध्यम से गुरुदेव ने जन हृदय की भगवद् भक्ति प्रगाढ़ की। आदि प्रभु की महिमा के गुणगान में स्वयं आचार्य श्री वक्ता के रूप में तल्लीन हो जाते एवं श्रोतागण तो इतने तन्मय हो जाते कि वे सुध-बुध खोए गुरुवर के रुचिकर प्रवचन में डूब जाते। आचार्य श्री की प्रेरणा व मार्गदर्शन में होने वाले प्रत्येक कार्यक्रम में सागवाड़ा वासी तन-मन-धन से यथाशक्ति पूर्ण समर्पित थे।

यहीं पर तपस्वी सम्राट द्वारा दीक्षित संघस्थ क्षुल्लिका माताजी सम्यक्त्वमतीजी ने वृद्धावस्था में अपना अंतिम समय निकट जान आर्यिका दीक्षा ले ली। गुरुदेव ने उनका नाम सम्यक्त्वमती ही रखा। दि. 27 मई 2016 को माताजी ने समाधिमरण प्राप्त कर मृत्यु को महोत्सव बना लिया। मृत्यु से पूर्व आचार्य श्री ने उन्हें संबोधते हुए कहा कि ''जीव संसार में अकेला ही आता है, जीता-मरता है, सुख-दुःख भोगता है, संसार में भ्रमण करता है व सिद्ध होता है। अतः अपने एकत्व-विभक्त निजात्मा में ही स्थिति करनी चाहिये। जन्म लेने वाले का मरण निश्चित है व मरने वाले का जन्म होता ही है। अतः विकल्पों को छोड़कर निजात्मा में ही स्थिर होओ।'' आचार्य श्री का आत्महितकारी उद्बोधन सुनते-सुनते माताजी के जीवात्मा ने देह त्याग दी।

आचार्य श्री का यह आत्महितकारी संबोधन वहाँ उपस्थित संघस्थ (कई वर्षों से) सात प्रतिमाधारी 103 वर्षीय झमकलालजी ने सुनकर आचार्य श्री से क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण कर ली व दि. 29.5.2016 को उन्होंने भी समाधिमरण करते हुए नश्वर देह का त्याग कर दिया। उनका नाम क्षुल्लक सुदृढ़सागरजी रखा गया था।

दो-तीन दिन में दो समाधि देख संघस्थ साधुगण आपस में चर्चा रत थे ''जीवन क्षणभंगुर है। क्या पता कब साँसों की डोर टूट जाए। समय का प्रत्येक क्षण हमें आत्म चिन्तन में लगाना है।'' इन सल्लेखना समाधिरत साधक साधुओं की बाँसवाड़ा निवासी ब्र. सन्मति भैया ने अथक सेवा वैयावृत्ति की व धार्मिक स्तुति पाठ सुनाए। तब से उनका संघ में आना-जाना प्रारंभ हो गया। उन्होंने समाज व साधुओं के सामने एक आदर्श प्रस्तुत किया कि जीते हुओं के साथ तो कारवाँ चलता है, लेकिन मरने वालों के साथ इक्का-दुक्का लोग हुआ करते हैं। वैसे आचार्य श्री के संघस्थ सभी साधुगण एक-दूसरे के प्रति समर्पित रहते हैं। स्वयं आचार्य श्री भी सल्लेखना बहुत अच्छी तरह कराते हैं।

दि. 13.6.16 को आचार्य श्री ने ससंघ योगीन्द्रगिरि की वंदना की व वहाँ होने वाले वार्षिक महामस्तकाभिषेक में सान्निध्य प्रदान किया। इस प्रकार सागवाड़ा वासियों को आचार्य श्री के चंद दिनों के सान्निध्य में वाचना, शिक्षण शिविर, दीक्षा व समाधि सल्लेखना बहुत कुछ मिल गया। जगह-जगह आचार्य श्री के प्रति लोगों की श्रद्धाभक्ति उफान पर थी। हर जगह चातुर्मास की अरज करते भेंट चढ़ाए श्रीफलों का ढेर उनके सम्मुख लग जाता। पर आचार्य श्री कुछ नहीं बोलते। लोगों द्वारा उदयपुर चातुर्मास का कयास लगाया जा रहा था।

बिना किसी को कुछ बताए आचार्य श्री दि. 14.6.2016 को सागवाड़ा से विहार करते हुए भिलूड़ा पहुँचे। वहाँ के दो दिनी मंगल प्रवास में शांतिनाथ विधान व एक जैन पब्लिक स्कूल का शिलान्यास कर आचार्य श्री ने मेतवाड़ा होते हुए पालोदा में मंगल प्रवेश किया। पालोदा के उत्साही गुरुभक्त श्रावकों में आज भी तपस्वी सम्राट की स्मृतियाँ ताजी हैं।

आचार्य श्री सुनीलसागरजी के पालोदा पहुँचते ही दूसरे दिन सर्वप्रथम उनके सान्निध्य में 'आचार्य श्री सन्मतिसागर विधान', तत्पश्चात तपस्वी सम्राट श्री सन्मतिसागरजी के चरण चिह्न स्थापना का गरिमामय समारोह आयोजित किया गया। युवाचार्य से युवावर्ग इतना प्रभावित था कि दिन भर आचार्य श्री के आसपास लगा रहता था। युवा वर्ग को सही दिशा देने यहाँ श्री सुनीलसागर युवा संघ व श्री सन्मति सुनील बालिका मंडल का गठन हुआ। समाज ने वाचना के लिए श्रीफल भेंट किया पर आचार्य श्री ने लोहारिया के लिए विहार कर दिया।

लोहारिया

लोहारिया वासी एक लम्बे समय से आचार्य श्री को लोहारिया आगमन के आमंत्रण के लिए जगह-जगह जाकर श्रीफल भेंट करते आ रहे थे। आचार्य श्री का इंतजार करते-करते उनकी आँखें थक चुकी थीं।

लोहारिया वह परम पावन पुण्य भूमि है जहाँ वात्सल्य रत्नाकर, जनहृदय सम्राट, प.पू. वात्सल्य रत्नाकर आचार्य श्री विमलसागरजी के पट्टशिष्य शिष्योत्तम आचार्य श्री भरतसागरजी ने जन्म लेकर इस धरा के कण-कण को धन्य कर दिया। आध्यात्म की यह वह उर्वरा माटी है जिसने श्रमण परम्परा को 19 त्यागी, तपस्वी, संयमियों को सृजित किया जो श्रमण संस्कृति को पल्लवित-पुष्पित कर उसकी कीर्ति सौरभ से दिगदिगंतों को सुरभित कर रहे हैं। यह वह धर्मात्मा लोगों की नगरी है जिनके नीर से निर्मल भक्ति भरे हृदय सदैव प्रभु चरणों व गुरु चरणों में नत-नत रहते हैं। ऐसे लोहारिया के श्रद्धा भक्ति से पूर्ण श्रावकों के आग्रह पर आग्रह, आग्रह पर आग्रह को आचार्य श्री न टाल सके और उनके चरणों से लोहारिया की धरती धन्य हो गई। मानो चकोर को स्वाति मिल गई। गुरुवर को पा लोहारिया वासी झूम उठे। लोहारिया के स्वाध्याय प्रेमी श्रावकों के आग्रह पर 'शिक्षण शिविर' आयोजित हुआ।

आचार्य श्री के जन-जन के लिए मंगलकारी उद्‌बोधन सुनने लोहारिया के हर जाति व धर्म समाज, पटेल, मीणा, आदिवासी, वैष्णव, ब्राह्मण, मुस्लिम लोग आते थे। उनका आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए लोगों की भीड़ लगी रहती थी। आचार्य श्री के प्रवचनों से प्रेरित अपराधी अपराध छोड़ रहे थे, व्यसनी व्यसन मुक्त हो रहे थे, बीड़ी-सिगरेट तम्बाकू मदिरा पीने वाले इनका त्याग कर सादा जीवन व्यतीत करने का नियम ले रहे थे।

आचार्य श्री की उदारता, सहृदयता, विद्वत्ता व सरलता के चरचे आम बात थी। ऐसे महान आचार्य के दर्शनार्थ लोहारिया में पू. उपाध्याय अनुभवसागरजी महाराज ससंघ एवं गणिनी आर्यिका सौभाग्यमती माताजी ससंघ पधारे। सबने आचार्य श्री के भाव विभोर हो दर्शन किये व कुछ समय आचार्य श्री से ज्ञान लाभ लेने निर्विकल्प संघ के साथ वास किया व आचार्य श्री के प्रति अपनी श्रद्धा भक्ति प्रदर्शित करते रहे। आचार्य श्री भी उनके प्रति वात्सल्य पूर्वक धर्म-चरचा करते रहे। दोनों संघों के साधुओं के प्रति आचार्य श्री का वैसा ही वात्सल्य था जैसा अपने संघ के प्रति। हर साधु आचार्य श्री के रत्नत्रय से कुछ न कुछ प्राप्त कर रहा था।

इसी बीच आचार्य श्री सिद्धांतसागरजी की दीक्षित (शिष्या) आर्यिका श्री सिद्धांतमती माताजी आचार्य श्री सुनीलसागरजी के संघ में सम्मिलित हो मुक्ति की साधना के लिए आ पहुँची। आचार्य श्री ने उनका सम्मान रखते हुए संघ में प्रविष्ट हो आत्मकल्याण की सहर्ष अनुमति दे दी।

गुरुदेव की प्रेरणा व प्रवचनों से प्रभावित लोहारिया निवासी ब्र. नानालालजी एवं ब्र. सुखलालजी ने भी दीक्षा प्राप्ति हेतु आचार्य श्री को श्रीफल भेंट किया। आगे चलकर खमेरा में उनकी दीक्षा संपन्न हुई। इस प्रकार लोहारिया के खाते में दो संयमियों की वृद्धि हो यह संख्या 21 हो गई।

जगह-जगह विहार करते चंद दिनों के वास में भी अपने महान व श्रेष्ठ कार्यों व रचनाधर्मिता से जन-हृदय में अपनी उपस्थिति दर्ज कराते आचार्य श्री ससंघ लोहारिया से दि. 5.7.2016 को चल पड़े। यहाँ से आर्यिका स्याद्वादमती माताजी की प्रेरणा से आचार्य श्री भरतसागरजी की स्मृति में बने गोम्मटगिरि तीर्थ के दर्शन वंदन करते गनौड़ा, भीमपुर, सुंदनी होते हुए चंदुजी का गढ़ा में पहुँचे। यहाँ आपकी अगवानी करते संघ में सम्मिलित होने आचार्य श्री सिद्धांतसागरजी महाराज की शिष्याएँ आर्यिका सूत्रमती माताजी व क्षुल्लिका श्रुतमती माताजी बाँसवाड़ा से विहार करते हुए आ पहुँची। संघ में सम्मिलित होने का उनका अनुनय विनय व आग्रहपूर्वक किया गया निवेदन स्वीकार कर आचार्य श्री ने उन्हें भी संघ में निराकुलता पूर्वक रह आत्मसाधना करने की स्वीकृति दे दी। आज भी

तीनों माताजी आचार्य श्री संघ में अपनी साधना कर रही हैं। महापुरुष इसी तरह जब-तब अपनी चारित्रिक विशेषताओं का परिचय देते रहते हैं।

बाँसवाड़ा बाहुबली कॉलोनी में मंगल प्रवेश

मोह को तोड़ते, कषायों को जीतते, माया ठगिनी से बचते-बचाते, लोभ को ललकारते आचार्य श्री सुनीलसागरजी आत्म साधनारत संघस्थ साधुओं को भी साधना की अनुकूलता प्रदान करते पथ में मिलने वाले भक्तों, परम भक्तों (वैसे तो इन निस्पृही से किसी को कोई शिकायत नहीं थी/है तथापि) यदा-कदा पूर्व जन्मकृत बैर-विरोध विचार वाले लोगों में मैत्री भाव व आत्म जागरण की प्रेरणा भरते, राजस्थान के बागड़ क्षेत्र में पथ भ्रमण कर रहे थे। पथ में बिखरे काँटे भाटे हो या फूल पांखुड़ियाँ पार करते वे हर उस राह से गुजर रहे थे जिससे होकर कभी उनके परम पूज्य पितृ वात्सल्य से लबालब तपस्वी सम्राट गुरु आचार्य श्री सन्मतिसागरजी गुजरे थे। वे उस जगह जाते-ठहरते थे जहाँ गुरुदेव का मंगल प्रवास हो, वे उस जगह को भी वंदनीय मानते थे जहाँ गुरु चरण पड़े हों। राह में पड़ने वाले गाँवों, शहरों, कस्बों के परम भक्तों की 'सुनील भक्ति', 'सुनील' की प्रगाढ़ 'सन्मतिभक्ति' के आगे फीकी पड़ती जा रही थी। लोग हैरान-परेशान चातुर्मास 2016 के लिए उनके पीछे भाग रहे थे। किसी को पता नहीं था कि 'गुरुचरण' कहाँ रुकेंगे।

अंततः पीछे छूटे वे सारे के सारे लोग अवाक थे जिनकी परम गुरु भक्ति पर बाँसवाड़ा वासियों की अल्पभक्ति ने विजय पा ली। आचार्य श्री के चरण बाँसवाड़ा की ओर मुड़ गए। जैसे ही आचार्य श्री का बाँसवाड़ा के लिए चिड़ियावासा गाँव में (बाँसवाड़ा से कुछ कि.मी. दूर) मंगल प्रवेश हुआ, बाँसवाड़ा के श्रावकों का हुजूम उमड़ पड़ा। यहाँ भी गुरुदेव के चरण पड़े थे।

यहाँ से सर्वप्रथम गुरुवर आचार्य श्री ने बाँसवाड़ा हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी में दि. 9.7.2016 में मंगल प्रवेश कर बाँसवाड़ा चातुर्मास पर अपनी मुहर लगा दी। यह चातुर्मास आपने अपने गुरुवर को समर्पित किया। यहाँ पर मोहन कॉलोनी निवासी नश्नावत परिवार ने सर्वप्रथम आचार्य श्री की भावना को देखकर प्रथम दिन ही आचार्य सन्मतिसागर विधान सम्पन्न कराया। स्कूल के छात्रों द्वारा अभूतपूर्व स्वागत किया गया। बाँसवाड़ा प्रवेश का पहला प्रभाव ही इतना प्रभावोत्पादक था कि लोगों ने आचार्य श्री का दिल जीत लिया। लेकिन वे तो रागादि से परे थे।

दि. 10.7.2016 को आचार्य श्री ने बाँसवाड़ा के महात्मा गाँधी चौराहे से होते हुए मूसलाधार बरसते पानी में उत्साहित भीगते हुए भी नाचते-गाते युवाओं की टोलियों, बैनरों व बैंड-बाजों के साथ बाँसवाड़ा की बाहुबली कॉलोनी को चातुर्मास का सौभाग्य प्रदान करते हुए मंगल प्रवेश किया। बाहुबली कॉलोनी वासियों का तो भाग्य भास्कर चमक गया। राहों में सितारे बिछ गए। बाहुबली कॉलोनी व बाँसवाड़ा वासियों का जाने कितने प्रकाश वर्षों का पुण्य काम आया जो कि इतने बड़े रत्नत्रय धारी आचार्य व साधुओं के वर्षायोग सान्निध्य का उन्हें सौभाग्य प्राप्त हुआ।

बाँसवाड़ा चातुर्मास कलश स्थापना

सिद्धों की आराधना से चातुर्मास का मंगलाचरण हुआ। आचार्य श्री ने बाहुबली कॉलोनी में अपने प्रथम मंगल उद्बोधन में कहा, ''इस कॉलोनी के चार घरों के बीच आचार्य श्री ने 1988 में मंगल वास किया था और कहा था 'जिनालय' बना दो, यहाँ 400 घर हो जाएँगे। जहाँ जिनदेव विराजेंगे वहाँ जंगल में मंगल हो जाएगा। आचार्य श्री की वचन सिद्धि सिद्ध हो गई और बाहुबली कॉलोनी का गुलशन फल-फूल रहा है। मेरे गुरुदेव के अतिशयकारी आशीर्वाद से यह क्षेत्र दिन दूनी रात चौगुनी वृद्धि करे, यही मेरा भी आशीर्वाद है।''

उन तपस्वी सम्राट के पट्टशिष्य, असाधारण व्यक्तित्व व कृतित्व के धनी आचार्य श्री सुनीलसागरजी को अपने बीच

पा बाँसवाड़ा वासी धन्य थे। आचार्य श्री सन्मतिसागरजी उनके लिए बाँसवाड़ा का वह केन्द्र बिन्दु था जिसके कारण आचार्य श्री बाँसवाड़ा तरफ खींचे चले आए और बाँसवाड़ा वासियों के लिए आचार्य श्री सुनीलसागरजी, आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के अतिप्रिय, योग्य व उद्‌भट विद्वान शिष्य थे, इस कारण बाँसवाड़ा वासी उनकी ओर खींचे चले जा रहे थे।

बाहुबली कॉलोनी में आचार्य श्री का चातुर्मास कलश स्थापना व चातुर्मास प्रतिष्ठापन, गुरु पूर्णिमा व वीर शासन जयंती वृहद पैमाने पर हर्षोल्लास पूर्वक मनाई गई। इस पावन प्रसंग पर मुख्य अतिथि के रूप में प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी के भाई प्रहलादजी मोदी पधारे थे। साथ ही देश के कोने-कोने से सुश्रावकों के आगमन का तांता लगा हुआ था।

बाहुबली कॉलोनी में मंगलवास के दौरान जब आचार्य श्री को पता चला कि पास की खान्दू कॉलोनी में आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज के योग्य व विद्वान शिष्य मुनि श्री समयसागरजी ससंघ विराजित हैं तो मुनिवरों के प्रति आदर भाव रखते हुए आचार्य श्री ने उनका विहार निकट जान शीघ्र ही अपने समस्त संघ को मुनिवरों के दर्शन-वंदन के लिए भेजा। आचार्य श्री विद्यासागरजी के प्रति आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने अपनी लघुता, उदारता तथा उनकी प्रभुता का आदर्श उदाहरण प्रस्तुत किया। आचार्य श्री सुनीलसागरजी सदैव पंथ, संत, ग्रंथ से ऊपर भगवान महावीर के मुक्ति पंथ की ही बात करते हैं। चारों तरफ आचार्य श्री के हृदय की विशालता व उदारता के चरचे थे।

बाहुबली कॉलोनी बाँसवाड़ा का चातुर्मास नित नए कीर्तिमान छू रहा था। नित प्रति 40-50 चौके लगते। पड़गाहन में स्थानीय व बाहर से आ रहे 200-300 लोग रहते। मुनिराजों की पड़गाहन विधि देखने नित्य 500-1000 लोग इकट्ठा हो जाते। पड़गाहन के वक्त क्षेत्र में बिना कहे ही कोई वाहन नहीं निकलता। जिधर देखो उधर साधु-साध्वियाँ ही दिखते। आचार्य श्री कई बार कठोर से कठोर अविग्रह लेते पर अक्सर विधि पूरी हो जाती। लेकिन कभी-कभी दो-दो उपवास हो जाते पर समताधारी मुस्कराते गुरुवर की दैनंदिनी प्रवचन, वाचना आदि यथावत चलते।

हर 10-15 दिन में किसी न किसी कार्य का आयोजन होता रहता था। जैसे पूजा, विधान, विद्वत गोष्ठी, महापुरुषों की विशेष तिथियाँ व अन्य। लोग हर कार्यक्रम में बड़ी संख्या में शामिल होते रहते हैं। देश के कोने-कोने से गुरु दर्शनलाभ लेने आने वालों के कारण बाहुबली कॉलोनी में मेला लगा रहता। लगता हर दिन कोई उत्सव है। आचार्य श्री सुनीलसागरजी का प्रभाव ही ऐसा है कि वे जहाँ भी जाते हैं, वहाँ हर दिन होली-दिवाली जैसा उत्सवी माहौल रहता है।

उनके प्रवचन तो ठीक, शाम की आरती वैयावृत्ति में भी बच्चों-बड़ों की भीड़ रहती। दोपहर की वाचना में भी अध्यात्म प्रेमी श्रावकगण शामिल होते। पर्युषण पर्व में लगे संस्कार शिविर में पूरे देश से आए करीब 1000 शिविरार्थियों ने भाग लिया। इसी तरह करीब 200 लोगों ने गुरु प्रेरणा से 64, 32, 16, 10 व 5 उपवासों की साधना कर आत्मशुद्धि की। आचार्य श्री के सान्निध्य में बाहुबली कॉलोनी तो क्या पूरा बाँसवाड़ा धर्म नगरी में परिवर्तित हो गया।

प्रवचन श्रृंखला में आचार्य श्री ग्रंथराज रत्नकरंड श्रावकाचार का वाचन कर श्रावकों को अपने आचार-विचार की सही शिक्षा दी। इसी तरह वाचना में मूलाचार की वाचना की, जो श्रावकों व श्रमणों के लिए हितकारी है। आचार्य श्री के प्रवचन जिनवाणी व पारस चैनल के साथ स्थानीय चैनल पर भी प्रसारित-प्रचारित होते रहे।

यहाँ पर आपने सेन्ट्रल जेल में जाकर कैदियों को उपदेश देकर अपराध जगत से बाहर निकलने की शिक्षा व प्रेरणा दी। वैष्णव समाज के महंत श्री उत्तम स्वामीजी ने कुशलबाग में हो रहे बहुत बड़े धार्मिक अनुष्ठान की समाप्ति के दिन आचार्य श्री को प्रवचन देने के लिए आमंत्रित किया। भगवान महावीर के आपके अहिंसा, सत्य, अस्तेयादि सिद्धान्तों पर दिये प्रवचनों को वहाँ एकत्रित हजारों लोगों ने सुना व सैकड़ों ने अपनी गलत आदतों को छोड़ने का संकल्प लिया।

आपकी प्रेरणा से समाज में धार्मिक जागृति पैदा करने युवा मंडल ने सन्मति धार्मिक मेले का आयोजन किया।

बच्चे व युवा आपके प्रेरणास्पद जीवन से कुछ सीख सके इस हेतु श्रीमती प्रतिक्षा सौरभ जैन के निर्देशन में आपके

जीवन चरित्र की डॉक्युमेंट्री फिल्म बनाई गई। आचार्य श्री के 40वें जन्म जयंती दिवस पर उसका विमोचन वैष्णव धर्म के महंत उत्तम स्वामी महाराज द्वारा किया गया। इसी अवसर पर हजारों लोगों के बीच बाँसवाड़ा समाज ने आपको 'वर्तमान के वर्धमान' उपाधि से विभूषित किया।

आचार्य श्री का चातुर्मास हो और दीक्षा का कार्यक्रम न हो, ऐसा कैसे हो सकता है। आत्मोद्धारक आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने बाँसवाड़ा में ईडर निवासी सप्तम प्रतिमा धारी ब्र. अरविंद संघवी को क्षुल्लक दीक्षा देकर नाम क्षु. सुस्थिरसागरजी रखा। इसी प्रकार आचार्य श्री ने क्षु. शीलसागरजी व क्षु. सम्मेदसागरजी को पवित्र मंत्रों का श्रवण कराते सल्लेखना पूर्वक समाधिमरण करवाया। आप उन दोनों को मृत्यु पूर्व बोधि देते रहते कि 'जीव अकेला मरता है, अकेला जन्म लेता है। अकेला भटकता है और अकेला ही मुक्त होकर सिद्ध बन जाता है। आत्मा और देह का संबंध दूध में घी, तिलों में तेल, काष्ठ में आग, फूल में खुशबू होने के समान है। न तो मैं शरीर हूँ, न मन और न वाणी। मैं सदा से शुद्ध ज्ञान ज्योति स्वरूप सनातन तत्त्व आत्मा हूँ। वे अपनी प्राकृत रचना भावणासारो की गाथा 13-14 के माध्यम से उन्हें संबोधित कर रहे थे। चूँकि संघ में आए दिन दीक्षा व समाधि मरण होते रहते थे। अतः गुरुदेव आचार्य श्री संसार की अनित्यता व नश्वरता पर संबोधन देते रहते जिसे चतुर्विध संघ भी सुनता, गुनता व आत्मसात करता रहता। साधुगण नश्वर देह से भी विरक्त देखे गए।

आचार्य श्री के अहिंसा पर दिये जाने वाले प्रवचनों से प्रेरित हो बाहुबली कॉलोनी के श्री कमलेश डागरिया ने अपना गुटखा, तम्बाकू का होलसेल का पुराना धंधा बदल दिया।

यहाँ पर भी आचार्य श्री के प्रभाव से कई घटनाएँ घट रही थीं। आचार्य श्री की गृहस्थावस्था की छोटी बहन रानी, जिनकी आवाज 20-22 दिनों से चली गई थी। डॉक्टरों को दिखाया, सारे टेस्ट करवा लिए पर कुछ फर्क व आराम न हुआ। उन्हें भी आचार्य श्री की साधना व आशीर्वाद के प्रभाव के असर की खबर थी। वह भी बाँसवाड़ा आचार्य श्री के दर्शन के लिए आई। बड़ी श्रद्धा व भक्ति से गुरु दर्शन कर कुछ दिन उनकी निश्रा में रुकने का निर्णय किया। गुरु अनुकम्पा से उनके कर्म क्षय हो गए और 5-6 दिनों बाद उनकी खोई आवाज लौट आई। लोग आश्चर्यचकित थे।

आचार्य श्री ने देखा कि जिन भगवान बाहुबली के नाम पर कॉलोनी का नाम रखा गया है, मंदिर में उन बाहुबली भगवान की मूर्ति ही नहीं है। आचार्य श्री की प्रेरणा से तुरत-फुरत भगवान बाहुबली की मूर्ति मंगवाई गई और उनके सान्निध्य में कॉलोनी में लघु पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव भी संपन्न हो गया। और बाहुबली कॉलोनी के मंदिर में भगवान बाहुबली की प्रतिमा विराजित कर दी गई। यहीं पर श्रीमान पंकज जी वकील सा. द्वारा आचार्य आदिसागर अंकलीकर सन्मतिधाम का निर्माण करवाया जाएगा जिसका शिलान्यास समारोह आचार्य श्री के सान्निध्य में संपन्न हुआ। बाहुबली कॉलोनी में ही आचार्य वैराग्यनंदीजी ससंघ आचार्य श्री सुनील सागरजी के दर्शनार्थ पधारे। दोनों संघों का महामिलन हुआ।

बाँसवाड़ा चातुर्मास अनुशासन की घटना

आचार्य श्री की पवित्र साधना से आचार्य श्री को कई बातों का आभास अपने आप हो जाता। उनका संघ जिनागमानुरूप आत्मानुशासित अपनी धर्म साधना कर रहा था। उन्हें किसी को कुछ कहने की जरूरत ही नहीं पड़ती।

तथापि उन्हें एक दिन 8.12.16 को ऐसा आभास होने लगा कि संघ में कुछ साधुओं द्वारा 28 मूलगुणों का निरतिचार पूर्ण पालन नहीं हो रहा। अतः उन्होंने सभी शिष्यों से कहा कि कुछ शिष्य अपने द्वारा कृत ज्ञानाज्ञानवश अपने पर लगे दोषों की आलोचना नहीं करते हैं जिसका हमें अपने आप आचार्य गुरुवर की तरह उनके आशीर्वाद से पता चल जाता है। यह बात न संघ के हित में है न शिष्यों के हित में है। हम किसी का नाम बताए बिना उन्हें सुधरने का अवसर देते

हैं। एक की अनुशासन हीनता देख धीरे-धीरे औरों को भी यह रोग लगने लगता है जिससे संघ को बदनाम होने में जरा भी देर नहीं लगती। मैं कोई कड़ा कदम उठाऊँ, उसके पूर्व ही ऐसे शिष्य संज्ञान ले ले।

लापरवाह व प्रमादी शिष्य गुरु प्रेरणा व करुणा कृपा पा अपनी भूलें सुधारने में लग गए।

पल्लव घटना

चातुर्मास में एक दिन आचार्य श्री बाहुबली कॉलोनी संत सदन से कुछ श्रावकों के साथ शौच के लिए गए। प्रातःकालीन बेला में उन्होंने देखा, एक पेड़ के सारे पत्ते स्थिर थे। एक पत्ता ही हिल रहा था। उनके आश्चर्य का ठिकाना नहीं था। उन्होंने पुनः-पुनः देखा। पर दृश्य वही था। शौच से निवृत्त हो लौटते में उनकी दृष्टि पुनः उस पेड़ पर पड़ी। स्थिति यथावत थी। वह पल्लव अभी भी उसी तरह हिल रहा था।

उन्होंने साथ चल रहे श्रावकों को यह दृश्य दिखाया। सबको अजूबा लगा। आचार्य श्री के साथ ऐसी घटना पूर्व में श्रवणबेलगोला से लौटते वक्त धर्मस्थल के जंगलों में 2009 में घटी थी और दूसरी बार यहाँ बाँसवाड़ा में। सोचा, चलकर औरों को बताएँगे। इस पर पत्ता हिलना बंद हो गया। उनके आश्चर्य का ठिकाना नहीं था।

लौटते में वह 'पल्लवराज' मूर्त रूप में तो पेड़ पर ही लटका रह गया किंतु चलते-चलते उनके चिन्तन में अटक गया। वे सोच रहे थे मानो वह गतिशील पल्लव उनसे कह रहा था- ''एकोहं अन्यो नास्ति' यह आत्मा अकेला है। अजर है अमर है, बाकी सब कुछ क्षण भंगुर। उनका चिन्तन आगे बढ़ा, मानो वह गतिशील हरित पर्ण उन्हें कह रहा था 'चरेवेति, चरेवेति प्रचलाम् निरन्तरम्'। देखो मैं गतिशील था तभी तुम्हारी नजर मुझ पर पड़ी। मैंने तुम्हारा ध्यान खींचा। तुम सतत आत्म कल्याण व विश्व कल्याण कार्य करते हुए आगे बढ़ो। लाखों-करोड़ों को गतिशील व्यक्ति पीछे छोड़ देता है। उनके चिन्तन में वह पल्लव सारा जीवन दर्शन उंडेलते हुए कह रहा था कि लाखों करोड़ों के बीच रहकर भी अपनी विशेषताओं से हम अपनी अलग पहचान बना सकते हैं। जैसे मैं तुम्हारी नजरों में आ गया।

वह चलित पल्लव कह रहा था- हे सन्त! मैं रोज की तरह आपके आने के इंतजार में नित्य की तरह समय होते ही थिरक-थिरक कर अपनी खुशी प्रकट कर रहा था। मैं सोच रहा था कि किसी तरह आपकी करुणाकृपा भरी दृष्टि मुझ पर एक बार पड़ जाए और मेरा जीवन धन्य हो जाए। इंतजार का फल मीठा होता है। आप आए और मेरे ये सारे साथी आपको देख-देख मंत्रमुग्ध हो स्थिर हो गए और मैं पगला नाचता रहा। जब आप मेरे पागलपन को देख मुस्कुरा रहे थे, आपकी दृष्टि पड़ते ही मैं तो कृतार्थ हो गया। आचार्य श्री उस चल पल्लव के माध्यम से चिन्तन के सागर में डुबकियाँ लगा-लगा न जाने कितने आत्मदर्शन के हीरे खोज-खोज लाते, कब संत सदन पहुँच गए, पता नहीं। पर यहाँ भी वह पल्लव उनके चिन्तन में चल रहा था।

* * *

अन्ततः दि. 22.11.2016 को भव्य पिच्छिका परिवर्तन के साथ आचार्य श्री का ससंघ बाहुबली कॉलोनी का वर्षावास समाप्त हुआ। यहाँ से आपने खांदू कॉलोनी के श्रावकों के विशेष आग्रह पर खान्दू कॉलोनी के लिए विहार कर दिया। अभी तक लोगों ने आपको दूर से देखा था लेकिन अब नजदीक से आपकी कठोर साधना, निर्दोष चर्या, अकूत ज्ञान, व्यवहार कुशलता व सरलता देख मुनियों की निंदा, आलोचना करने वालों के मुँह पर ताले लग गए। खान्दू कॉलोनी का वातावरण सुनीलमय हो गया। वहाँ की समाज उन्हें अधिक से अधिक दिनों तक रुका कर धर्म लाभ लेना चाहती थी। पर आपको आगे जाना था। वहाँ के 8 दिनी मंगल वास में पूरा वातावरण धर्ममय हो गया।

यहीं पर विहार करती हुई आर्यिका समर्थश्री एवं आर्यिका सार्थकश्री आपका दर्शन लाभ लेने आ पहुँची। एक-दो दिन संघ के साथ रह वे आपके समग्र व्यक्तित्व से इतनी अधिक प्रभावित हुईं कि उन्होंने आपके संघ के साथ रहने की

स्वीकृति माँगी जिसे आपने उन्हें सहज सहर्ष देकर धर्म साधना के लिए प्रेरित किया।

खान्दू कॉलोनी में ही आपके सान्निध्य में जाते-जाते आचार्य श्री आदिसागरजी अंकलीकर का 104वाँ दीक्षा दिवस वृहद पैमाने पर मनाया गया। इसी उत्सवी माहौल में दि. 1.12.2016 को आपने खान्दू कॉलोनी बाँसवाड़ा को विदा दे घाटोल के लिए विहार कर दिया।

दि. 3.12.16 को घाटोल के एक दिनी मंगल प्रवास में भी आपकी अगवानी चातुर्मास के लिए होने वाली अगवानी जैसी भव्य हुई। रात्रि विश्राम के बाद सबेरे खमेरा पंचकल्यारक के लिए विहार हो गया।

खमेरा पंचकल्याणक

घाटोल से आचार्य श्री ससंघ तपस्वी सम्राट श्री सन्मतिसागरजी के परम भक्तगणों के गाँव खमेरा में श्री चन्द्रप्रभ जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव में सान्निध्य प्रदान करने पहुँचे। तप कल्याणक के दिन दि. 7.12.2016 को एक साथ 6 जैनेश्वरी दीक्षाएँ संपन्न हुईं। यहाँ बना दस हजार लोगों की क्षमता वाला पांडाल भी छोटा पड़ गया। मुनि श्री शुद्धसागरजी, मुनि श्री समृद्धसागरजी, क्षु. समर्थसागरजी, क्षु. सक्षमसागरजी, क्षु. सुधांशु सागरजी एवं क्षुल्लिका अटलमती माताजी ने संसार तज संन्यस्त जीवन अंगीकार कर आत्मकल्याण का मार्ग अपना लिया।

अंतिम दिन मूर्ति यथास्थान वेदीजी पर विराजमान नहीं हो रही थी। काफी मशक्कत के बाद भी सफलता नहीं मिली। आचार्य श्री ध्यानस्थ मुद्रा में मूर्ति के सामने बैठ गए। पाँच-सात मिनट बाद मूर्ति फूल की तरह हल्की हो यथास्थान विराजित हो गई।

यहीं पर दि. 14.12.16 को आचार्य श्री सन्मतिसागरजी द्वारा प्रतिष्ठित लाल मंदिर के वार्षिकोत्सव पर पुनः दो क्षुल्लिका दीक्षाएँ क्षु. अग्रजमती माताजी (खमेरा के प्रकाशजी कराडिया की अग्रज भाभी) व क्षुल्लिका अनुजमती माताजी की संपन्न हुई। इस मंदिर में विराजित नमिनाथ भगवान की मूर्ति के घृताभिषेक में वागड़ प्रांत के जैन-जैनेतर सभी लोग आते हैं व घी ले जाते हैं जो सांसारिक कष्ट दूर करने के उपयोग में आता है।

आचार्य गुरु श्री सन्मतिसागरजी के 7वें समाधि दिवस पर दि. 24.12.16 को खमेरा में कुंजवन तीर्थ की प्रतिकृति 'गुरु मंदिर' की प्रतिष्ठा महोत्सव का आयोजन गुरुभक्त प्रकाशचंद्र कराड़िया परिवार द्वारा किया गया। गुरु स्मृति में 'सन्मति स्कूल' का शिलान्यास भी किया गया।

पंचकल्याणक में आचार्य श्री देखते थे कि कार्यक्रम में आए दो हाथियों में एक रोज उन्हें नमोस्तु करता व एक चुपचाप खड़ा रहता। एक दिन आचार्य श्री पांडाल में जाते-जाते उस हाथी की ओर मुड़ गए। उसके पास जाकर बड़े मधुर स्वरों में कहा- ''क्यूँ भाई नाराज हो? तुम भी भक्ति कर लो।' पंचकल्याणक में आए हो, पुण्य कमा लो।'' दूसरे दिन से वह जैसे ही आचार्य श्री आते, अपने साथी हाथी के साथ आचार्य श्री को नमोस्तु करता। आचार्य श्री उसे आशीर्वाद देते।

खमेरा में गाँव बाहर एक दुकानदार फलों का ठेला लगाकर बैठता था। उसका धंधा बिल्कुल नहीं चलता था। रोजी-रोटी की समस्या खड़ी हो गई। निराश परेशान था। उसने आचार्य श्री के अतिशयकारी चमत्कारों के चरचे सुन रखे थे। उसके हाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा की पत्रिका पड़ गई। उसमें से उसने आचार्य श्री का फोटो काट यथास्थान ऊँचाई पर लगा उसके सामने सुबह-शाम रोज अगरबत्ती लगाता। योग-संयोग उसकी दुकान चल पड़ी। अच्छा धंधा होने लगा। उसके कष्ट दूर हो गए।

ऐसे जन आस्था व श्रद्धा के केन्द्र आचार्य श्री धार्मिक जागृति की अलख जगाते दि. 25.12.16 को शीतकालीन वाचना के लिए अगले पड़ाव की ओर चल पड़े।

घाटोल में शीतकालीन वाचना

खमेरा से दि. 25.12.16 को विहार कर आचार्य श्री पुनः शीतकालीन वाचना के उद्देश्य से घाटोल पहुँचे। दीक्षा के बाद यह पहला अवसर था कि जिस स्थान से होकर आचार्य श्री आए थे। वापस वहीं थोड़े अंतराल बाद शीतकालीन वाचना के लिए लम्बे प्रवास के लिए पहुँचे।

खान्दू कॉलोनी के समाज की तरह घाटोल समाज भी कट्टर है। कई साधु तो अन्दर न जाकर घाटोल के बाहर से ही आगे के लिए विहार कर देते हैं। लेकिन स्वाध्याय प्रेमी समाज आचार्य श्री सुनीलसागरजी के गहन ज्ञान व चिंतन से परिचित थी। वे लोग आचार्य श्री को साग्रह सविनय घाटोल लाए। वे आचार्य श्री के ज्ञान का लाभ लेना चाहते थे। आचार्य श्री ने बिना समय गँवाए षटखंडागम धवला पुस्तक भाग-6 की वाचना शुरू कर दी। स्वाध्याय में रस लेने वाली समाज आचार्य श्री के ज्ञान के आगे अपने ज्ञान को बौना मान उनके प्रति बड़े भक्ति भाव से समर्पित हो गई।

आचार्य श्री की व संघ आहार चर्या के लिए नित्य 70 चौके लगते। आरती के पक्ष में न होने वाला घाटोल समाज, आचार्य श्री की सांध्य आरती में 400-500 लोगों की उपस्थिति दर्ज कराता था। प्रवचन में बच्चा-बूढ़ा हर व्यक्ति शामिल होता, गाँव खाली हो जाता वैसे ही वाचना में भी साधारण से लेकर पंडित, विद्वान, ज्ञानी कहे जाने वाले श्रावक नियम से आते थे। कई लोगों ने व्रत-नियम व प्रतिमाएँ ले लीं। आचार्य श्री जिन्होंने अपना पट्टाचार्य पदारोहण दिवस आज तक गाँव नगर में मनाने का अवसर समाज को नहीं दिया वरन विहार में साधुओं व भक्तों ने जंगल में मनाया था, किंतु घाटोल समाज ने 26.12.2016 को उनका पट्टाचार्य पदारोहण दिवस इतने सोल्लास धूमधाम से मनाया कि बड़े से बड़े आयोजन उसके आगे फीके लगने लगे।

2016 की विदाई में घाटोल के युवाओं ने 'एक शाम आचार्य श्री सुनीलसागरजी के नाम' एक सुंदर भक्ति भरे कार्यक्रम का आयोजन कर नववर्ष का स्वागत अभिनंदन किया। इस भक्ति संध्या में गुरु भक्ति का उमड़ता ज्वार देखते बनता था। इस कार्यक्रम में घाटोल तो क्या, आसपास के गाँवों से भी लोग गाड़ियों व ट्रैक्टरों में भर-भर कर सम्मिलित होने हेतु आए।

अग्रजमति की समाधि

घाटोल वासियों की नववर्ष की मंगल प्रभात आचार्य श्री के श्रीमुख से उच्चारित शांतिधारा के मंत्रों से हुई। इसी समय खमेरा में कराड़िया परिवार से दीक्षित अग्रजमती माताजी ने भगवान की शांतिधारा देखते हुए मंत्रोच्चार सुनते-सुनते समाधिमरण करते हुए इस नश्वर देह का विसर्जन किया। जीवन की संध्या में माताजी ने क्षुल्लिका दीक्षा ले सांसारिक रिश्ते-नातों का मोह छोड़ आत्मकल्याण किया। ऐसा दुर्लभ संयोग, ऐसे महान संतों के समागम अतिशय पुण्य से प्राप्त संयोग से ही होता है। इस प्रकार नववर्ष की प्रातः आचार्य श्री एक आत्मा के कल्याण के निमित्त बने।

इसी घाटोल की भव्य भूमि पर बड़ौदा में जन्मी बा.ब्र. भूमि दीदी व वहीं से संघस्थ क्षुल्लिका भव्यमती माताजी ने आर्यिका दीक्षा के लिए आचार्य श्री को दि. 18.1.2017 को श्रीफल अर्पित किया। आचार्य श्री ने उन्हें 9.4.2017 महावीर जयंती के शुभ महूर्त में दीक्षा देने की स्वीकृति दी।

दि. 29.1.2017 को आचार्य श्री ने होने वाले महामस्तकाभिषेक के निमित्त से नरवाली में मंगल प्रवेश किया। बारह वर्ष पूर्व आचार्य श्री ने यहाँ मुनि अवस्था में गुरुवर आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के साथ चातुर्मास किया था। तभी से यहाँ का समाज आचार्य श्री का परम भक्त बन गया। पिछले बारह वर्षों से वहाँ का परम गुरु भक्त तलवाड़िया परिवार समाज के श्रावकों के साथ आचार्य श्री के दर्शन व नरवाली आगमन का निमंत्रण देने बराबर जाता रहा है। आखिर

नरवाली वासियों का बारह वर्षों का लम्बा इंतजार समाप्त हुआ। इतने लम्बे अन्तराल बाद गुरु सान्निध्य पाने के बावजूद भी वहाँ का धर्मप्रिय समाज बिना किसी शिकवा-शिकायत में व्यर्थ समय नष्ट किये, गुरुभक्ति में गले-गले तक डूब गया।

नरवाली के अनन्य गुरुभक्त तलवाड़िया परिवार में जिस दिन आचार्य श्री का मंगल प्रवेश हुआ, उसी दिन घर में शादी का शुरू दिन था। परिवार तो सब कुछ भूल गुरु सेवा में लग गया। श्री गेंदमलजी तलवाड़िया हर्षातिरेक में गद्-गद् हृदय से कह रहे थे ''शादी के प्रारंभ के दिन गुरु परिवार (संघ) का आगमन हमारे सौभाग्य का सूचक है। आचार्य श्री का नरवाली आगमन का पावन प्रसंग व हमारे घर का मंगल प्रसंग गुरु सान्निध्य पा महामंगल प्रसंग बन गया है।''

नरवाली में त्रिदिवसीय मंगल प्रवास के पश्चात आचार्य श्री ने ससंघ पारसोला में अनंतव्रत उद्यापन के प्रसंग के निमित्त से दि. 31.1.17 को विहार कर दिया। गुरुवर के आगमन पर भव्य ऐतिहासिक अगवानी हुई तथा अनंतव्रत उद्यापन किसी पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के आयोजन सदृश किया गया था। व्यवस्था देख ऐसा लगता था कि पंचकल्याणक है या व्रत उद्यापन। ऐसा व्रत उद्यापन कभी किसी ने न देखा था न सुना था। आचार्य श्री व संघ को भी ताज्जुब था।

धरियावद पंचकल्याणक

यहाँ पर दि. 4.2.17 'श्री सुनील सागर युवा संघ' का प्रथम अधिवेशन हुआ। बागड़ प्रांत में आचार्य श्री के सान्निध्य में पंचकल्याणक प्रतिष्ठाओं की लाइन लग गई। पारसोला से दि. 6.2.2017 को मिठउआ नामड़ी में दि. 8.2.2017 से 13.2.17 तक तथा धरियावद में 18.2.17 से 22.2.17 तक होने वाले पंचकल्याणक महामहोत्सवों में सान्निध्य प्रदान करने आपने पारसोला विहार कर दिया।

आचार्य श्री के विचारों में प्रांजलता, चिन्तन में पारदर्शिता तथा प्रवाहमयी वाणी में रुचिकर मिठास के साथ उनके प्रेरक, प्रणम्य व आदर्श चरित्र को देख इन पंचकल्याणकों व राजस्थान प्रवास में हर कहीं लोग उनकी तरफ खींचे चले आ रहे थे। क्या बड़े-बड़े राजनेता, क्या आम जनता, क्या अधिकारी क्या चपरासी, क्या अमीर, क्या गरीब, क्या जैन, क्या अजैन, आचार्य श्री के दर पर दर्शनार्थियों व प्रवचन सुनने वालों की भीड़ लगी रहती। एक बार तो ऐसा भी हुआ कि बिना निमंत्रण के ही एक ही दिन में दो सांसद, तीन जिलाध्यक्ष, तीन विधायक, पार्षद आदि एकसाथ एक ही मंच पर आसीन हुए। आचार्य श्री की ख्याति चारों ओर फैल गई थी।

धरियावद से आप मुंगाणा के अतिशय तीर्थ आदिनाथ दि. जैन मंदिर के 100 वर्ष शताब्दी महोत्सव में वेदी शुद्धिकरण एवं अनंतव्रत उद्यापन के लिए पधारे। यहाँ आपके सान्निध्य में ब्र. भूमि दीदी की गोद भराई संस्कार (दीक्षा के लिए) व भव्य संगीत निशा का आयोजन हुआ। दि. 9.3.17 को ब्र. सन्मति भैया दीक्षा लेकर क्षुल्लक सुमित्रसागर बने।

मुंगाणा से आपने पीपलखूंट पंचकल्याणक के लिए विहार कर दिया। विहार में बोरिया गाँव से विहार करते संध्या हो गई। सूर्यास्त होने वाला था। अतः आचार्य श्री जंगल में एक-दो कमरे के स्कूल में रुक गए। माताजी लोगों को एक कमरे तथा वृद्ध साधुगण को एक कमरे में रुका स्वयं बाहर खुले आकाश के नीचे, बिना छत दीवारों वाले दालान (मैदान) में तखत लगवा आप व अन्य युवा साधुओं ने आपके साथ आत्मसाधना करते हुए परिषहजयी बने, रात्रि विश्राम किया।

राजस्थान हाईवे पर स्थित पीपलखूंट में आपने 24.3.2017 को मंगल प्रवेश किया जहाँ 1.4.2017 से 5.4.2017 तक होने वाले पंचकल्याणक के लिए आपकी भव्यातिभव्य अगवानी की गई। 30-40 जैन परिवार के समाज ने हाईटेक डोम वाला एसी स्प्रींकलर विशाल पांडाल, महल जैसा प्रवेश द्वार वाला बनवाया था। वहाँ की व्यवस्था

किसी बड़े शहर की व्यवस्था को मात कर देती थी। आचार्य श्री के सान्निध्य के कारण इस पंचकल्याणक में पूरा राजस्थान उमड़ पड़ा।

बीबीसी लंदन टीम

पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के बीच ही दि. 3.4.17 को बीबीसी लंदन अपनी पूरी कैमरा क्रूज टीम के साथ आचार्य श्री के आदर्श के रूप में दिगंबर जैन मुनियों व साध्वियों व संघ की साधना चर्या, विशिष्ट रूप से आचार्य श्री की साधना व दैनिक क्रियाकलाप तथा पंचकल्याणक की डॉक्यूमेंट्री फिल्म बनाने आ पहुँची। इस इंटरनेशनल फिल्म की शूटिंग के लिए वे लोग 10 दिनों तक आचार्य श्री के साथ रहे व विभिन्न एंगल से फिल्म की शूटिंग की। इस दौरान वे आचार्य श्री की सरलता, सहजता, अकूत ज्ञान, गहरी साधना व विशुद्ध चर्या से इतने अधिक प्रभावित हुए कि कुछ ने तो आजीवन व कुछ ने हफ्ते के 5 दिन हमेशा के लिए मांसाहार का त्याग कर दिया। इस प्रकार बिना कुछ कहे अपने आदर्श आचरण से आचार्य श्री ने विदेशियों को शुद्धाचरण की शिक्षा दी।

मधुमक्खियों का उपसर्ग

पीपलखूंट के खुशनुमा माहौल से दि. 5.4.17 शाम 5 बजे आपने प्रतापगढ़ के लिए विहार कर दिया जहाँ महावीर जयंती के दिन 7 जैनेश्वरी दीक्षाएँ आचार्य श्री प्रदान करने वाले थे। पंचकल्याणक में सम्मिलित होने पूरे वागड़ क्षेत्र के लोग आए थे। अतः सैकड़ों की तादाद में लोग आचार्य श्री के विहार में साथ थे। भक्त मंडलियाँ भक्ति गीत गाती चल रही थीं। बी.बी.सी. लंदन की टीम रास्ते में शूटिंग करते जा रही थी।

आचार्य श्री को विहार किये अभी मुश्किल से आधा घंटा हुआ होगा कि उधर से धनधनाता बड़ा ट्राला गुजरा। ट्राले का ऊपरी हिस्सा सड़क किनारे खड़े एक नीचे झुके पेड़ से जोर से टकराता, गरम हवा का गुबार उड़ाता तेज गति से निकल गया। पेड़ से टकराते ही पेड़ हिल गया व पेड़ पर लगा मधुमक्खी का छत्ता नीचे सड़क पर गिर गया व बिखर गया। छत्ते के बिखरते ही सारी क्रुद्ध मधुमक्खियाँ वहाँ से गुजर रहे आचार्य श्री, संघस्थ साधुओं व श्रावकों पर बुरी तरह आक्रमण कर उन पर टूट पड़ी। पल भर में खुशी का माहौल मधुमक्खियों के डंक मारने के दर्द से श्रावकों की चीख-चित्कारों से भर गया। आचार्य श्री को भी करीब 200 मधुमक्खियों ने काटा। कुछ साधुओं पर इतना भयानक अटैक था कि वे बेहोश हो गए। कुछ वृद्ध साधुगण पीछे रह गए थे, उन्हें आचार्य श्री ने पीड़ा से कराहते हुए वहीं रोकने के लिए श्रावकों को दौड़ाया। आचार्य श्री ने समस्त साधुओं को आदेश दिया कि जितना जल्दी हो सके, मधुमक्खियों से बचते आगे बढ़ो।

इधर श्रावकों को मधुमक्खियाँ काट रही थी और उधर वे कमंडलु का पानी छींट-छींट साधुओं को होश में लाते, हाथ पकड़-पकड़कर तेज गति से विहार करा रहे थे। चारों ओर त्राहि-त्राहि मची थी। एक-डेढ़ कि.मी. दूर जाकर आचार्य श्री एक गर्म शिला पर सामायिक करने बैठ गए। संघस्थ साधुगण भी वहीं बैठ गए।

श्रावकगण जो पीछे साधुओं के साथ चल रहे थे, वे मधुमक्खियों के आक्रमण से बच गए थे। वे सारे के सारे मुनिवरों का उपचार कर रहे थे। जैसे ही मधुमक्खियों का उपसर्ग शुरू हुआ, साथ चल रहे श्रावकों ने आसपास के व अपने गाँवों में सूचना देकर डॉक्टर-वैद्य बुला लिए थे। सारे के सारे लोग आचार्य श्री व साधु-साध्वियों का उपचार करने लगे। कुछ को मधुमक्खियों का जहर चढ़ जाने से उल्टियाँ होने लगीं। एक तरफ वैयावृत्ति के बहाने श्रावकजन साधुओं के उपचार में लगे थे तो दूसरी तरफ समताधारी संत सामायिक में कह रहे थे- 'खम्मामि सव्व जीवाणं, सव्वे जीवा खमंतु मे।''

इस प्रकार इस भीषण दुःखद उपसर्ग के क्षणों में वे ज्ञानी आचार्य धर्म पथ पर दृढ़ता से आरूढ़ बिना अपना संतुलन खोए उन अज्ञानी मधुमक्खियों के प्रति भी सद्भाव रखे हुए थे जिन्होंने उन्हें इस विषम दुःखद स्थिति में डाला था। वे उनका भला चाहते थे। साथ ही सारे संघ व श्रावकों के प्रति करुणा द्रवित हो सबके कष्ट शीघ्र नष्ट होने की कामना कर रहे थे। सच्चे व विशुद्ध हृदय से की गई प्रार्थना में काफी ताकत होती है। एक-एक साधु के शरीर से 5-5, 7-7 श्रावक मधुमक्खियों के एक-एक डंक व चिपकी मधुमक्खियाँ निकाल रहे थे। गुरु सेवा में कहाँ रात्रि बीत गई पता नहीं चला। मुनियों, साध्वियों के दुःख से दुःखी श्रावकगण भी उनके जल्दी ठीक होने की प्रभु से प्रार्थना कर रहे थे।

आचार्य श्री पर हुए मधुमक्खियों के आक्रमण से हुए उपसर्ग का समाचार वाट्स-एप के जरिए थोड़ी ही देर में पूरे देश में पहुँच गया। रात भर गाड़ियाँ भर-भर लोग आ रहे थे। दूसरे दिन तक दूर-दूर के भक्त भी आचार्य श्री की कुशलक्षेम पूछने पहुँच रहे थे।

प्रातः इसी स्थिति में आचार्य श्री ने विहार कर दिया। जगह-जगह संघ के उपचार की व्यवस्था श्रावकों ने कर रखी थी। यह देखकर लोग आज धर्म से विमुख हो रहे हैं, कही जाने वाली बात झूठी साबित हो रही थी। जैन-अजैन बच्चे-बूढ़े सभी साधुओं की सेवा में तत्पर थे। यहाँ कोई भेदभाव नहीं था। आचार्य श्री प्राणीमात्र के कल्याण की बात करते थे। आज वे सब धर्म, जाति, सम्प्रदाय, पंत व पंथ से ऊपर उठ आचार्य संघ की सेवा में जुटे थे।

दि. 8.4.2017 महावीर जयंती के ठीक एक दिन पूर्व आचार्य श्री ने ससंघ प्रतापगढ़ में प्रवेश किया। श्री कमलेशजी दोशी नगर सभापति के साथ विशाल जनसमुदाय ने आपकी अगुवाई की। नगर भ्रमण करता जुलूस सीधा कुंडलपुर पहुँचा जहाँ आचार्य श्री का आत्मबोधि परक प्रवचन हुआ। यहीं पर सात दीक्षार्थियों का रात्रि में सामूहिक गोद भराई कार्यक्रम समाज द्वारा किया गया। बाहर से आने वालों की भीड़ तो आज से ही लग गई थी।

महावीर जयंती का दिन दि. 9.4.2017 प्रतापगढ़ वासियों के लिए ऐतिहासिक दिन था। इस दिन प्रतापगढ़ में महावीर जयंती पर आचार्य श्री सुनीलसागरजी की 21वीं दीक्षा जयंती तथा 7 जैनेश्वरी दीक्षाओं का भव्य आयोजन किया गया था। कुंडलपुर से दिगंबर व श्वेतांबर समाज की सुबह छह बजे से ही सामूहिक शोभायात्रा निकली जिसमें आचार्य श्री ससंघ व दीक्षार्थी थे। महावीर जयंती के साथ दो और कार्यक्रम होने से हजारों की संख्या में लोग इकट्ठा हुए।

शोभायात्रा के बाद आचार्य श्री के भगवान महावीर की प्रासंगिकता पर बोध प्रेरक प्रवचन हुए। इसी सभा में आचार्य श्री के दीक्षा दिवस पर लोगों ने विनयांजलि प्रस्तुत की। दोपहर में 1.20 बजे से दीक्षार्थियों की दीक्षा प्रक्रिया प्रारंभ हुई। सात मुक्तिकामी भव्यात्माओं ने दीक्षा ली।

1.	क्षुल्लिका भव्यमती माताजी	आर्यिका सुदृढ़मती माताजी
2.	बा.ब्र. भूमि दीदी	आर्यिका सुस्वरमती माताजी
3.	बा.ब्र. सारिका दीदी	आर्यिका सुविज्ञमती माताजी
4.	बा.ब्र. प्रियंका दीदी	आर्यिका सुप्रज्ञमती माताजी
5.	ब्र. माणिकलाल	क्षु. सुहृदसागरजी
6.	ब्र. भागचंदजी (आचार्य श्री के गृहस्थ जीवन के पिता)	क्षु. सुखदसागरजी और
7.	ब्र. भारती दीदी	क्षु. अजेयमती माताजी

यहाँ पर आचार्य श्री ने षटखंडागम पुस्तक-7 की वाचना प्रारंभ की व श्रुत पंचमी पर्व भी यहीं मनाया गया। यहाँ से आचार्य श्री ने ससंघ 54 पिच्छी सहित भट्टारकजी की बोर्डिंग में मंगल प्रवेश किया जहाँ दि. 2.6.17 से 6.6.17 तक उनके सान्निध्य में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव संपन्न हुआ।

यहाँ पर बागड़ क्षेत्र से लोहारिया, सागवाड़ा, अतिशय क्षेत्र महू, धरियावद, पारसोला, वरबासी, मुंगाणा, संतरामपुर,

घाटोल व उदयपुर आदि कई स्थानों से आए व स्थानीय प्रतापगढ़ समाज ने आचार्य श्री को चातुर्मास के लिए निवेदन करते हुए श्रीफल अर्पित किये। श्रीफलों का पहाड़ सा बन गया था।

किंतु दि. 8.6.2017 को प्रातःकाल विहार करते हुए आचार्य श्री के चरण वागड़ क्षेत्र की ओर न जाकर शांतिनाथजी क्षेत्र की ओर मुड़ गए। आज उदयपुर समाज की खुशियों का पारावार न था। उन्हें आचार्य श्री के चरण उदयपुर में पड़ने की आशा तो बंधी थी क्योंकि इससे पूर्व उन्हें डर था कि कहीं धर्मप्राण बागड़ समाज अपनी भक्ति के चुम्बकत्व से आचार्य श्री को उस ओर न खींच ले जाएँ।

एक जलद की तरह आचार्य श्री वागड़ क्षेत्र में निरत धर्मवृष्टि करते वहाँ की भूमि में धर्म की फसलें लहराते रहे। अतः संभवतः इस बार मेवाड़ की प्यासी धरती को वहाँ की जन-मन की सूखी झीलों को भरने आचार्य श्री के चरण इस ओर पड़ जाएँ, उदयपुर समाज चातुर्मास के लिए आश्वस्त दिख रहा था।

उदयपुर निवासी श्री शांतिलालजी बेलावत परिवार एवं उदयपुर समाज तो आचार्य श्री के उदयपुर चातुर्मास के लिए एक पाँव पर खड़ी थी। जब श्री शांतिनाथजी के मंदिर में दर्शन कर आचार्य श्री आगे बढ़े, तब कहीं उनकी साँसों की गति जो ऊपर की ऊपर व नीचे की नीचे रह गई थी, सामान्य हुई।

उदयपुर चातुर्मास 2017

प्रतापगढ़ से दि. 8.6.17 को विहार कर आचार्य श्री का चरण चक्रमण चल रहा था। पद बाहर की यात्रा पथ पर चल रहे थे और मन अन्तर की यात्रा पर चल रहा था। वे चिन्तन करते चले जा रहे थे कि जैसे फिलामेंट बिना बल्ब नहीं जलता वैसे ही आत्मज्योति जले (ज्ञान) बिना मानव जीवन व्यर्थ है। परमात्मा से साक्षात्कार नहीं हो सकता। इस चातुर्मास में मेरा उद्देश्य जन हृदय में परमात्म पद प्राप्ति की लौ जगाना है और स्वयं भी आत्म प्रकाश प्राप्त करना है।

प्रकृति और पर्यावरण पर भी उनकी नजर थी। उन्होंने देखा, विकास के नाम पर नदियों से उलीच-उलीच कर रेत निकाली जा रही थी, पहाड़ों को खोद-खोद कर खोखला कर दिया गया था। विशाल पेड़ों को काट-काट कर धराशायी कर दिया गया था। नदियों को पाप-ताप हारिणी, मोक्ष दायिनी, पहाड़ों को पिता व सौ पुत्रों के बराबर एक वृक्ष को मानने वाली हमारी संस्कृति को क्या हो गया? हमारी संवेदनाएँ कहाँ खो गई? यह देख चलते हुए आचार्य श्री का संवेदनशील मन विकल हो जाता। संत हृदय की करुणा उन स्थावर जीवों के प्रति छलछला पड़ती। ऐसे दृश्य परिदृश्य उनके मन को झकजोर देते थे। आज व्यक्ति अपनी सुख-सुविधाओं के लिए लौह-कांक्रीट के बड़े-बड़े जंगल खड़े कर प्रकृति प्रदत्त वरदान पर कुठाराघात कर स्वयं के पैरों पर ही कुल्हाड़ी मार रहा है। स्वयं के विनाश का सामान जुटा रहा है।

* * *

प्रतापगढ़ से सादड़ी, सालेड़ा, भीण्डर, अणिंदा पार्श्वनाथ, साकरोद आदि होकर लगभग 200 कि.मी. दूरी तय कर आचार्य श्री ने ससंघ दि. 2.7.2017 को मेवाड़ की आन-बान-शान कहे जाने वाली झीलों की नगरी उदयपुर में चातुर्मासिक मंगल प्रवेश किया। इतने बड़े संत का इतने साधुओं के साथ नगरागमन पर समाज तो गाजों-बाजों हाथी-घोड़ों लाव-लश्कर के साथ संतश्री की अगवानी के लिए पहुँची ही थी, उनके आगमन की खबर पाते ही उदयपुर के मेयर श्री चंद्रसिंह कोठारी भी आचार्य श्री के नगरागमन पर स्वागत अभिनंदन के लिए जा पहुँचे। विशाल जनसमूह के साथ आचार्य श्री चातुर्मास स्थल हूमड़ भवन तेलीवाड़ा पहुँचे।

यहाँ पर दि. 9.7.2017 आषाढ़ शुक्ला चतुर्दशी के दिन उदयपुर के नगर निगम परिषद टाउन हॉल में हजारों की संख्या के बीच चातुर्मास प्रतिष्ठापन व मंगल कलश स्थापना महोत्सव मनाया गया। मंगल कलश स्थापना का सौभाग्य

शांतिलालजी बेलावत परिवार को प्राप्त हुआ।

गुरु पूर्णिमा के दिन से आचार्य कुंदकुंद रचित ग्रंथराज 'समयसार' की वाचना प्रारंभ हुई।

आचार्य श्री के सान्निध्य में भगवान पार्श्वनाथ का मोक्षकल्याणक मुकुट सप्तमी दि. 9.8.2017 को राजस्थान के गृहमंत्री श्री गुलाबचंदजी कटारिया की उपस्थिति में बड़े आनंद व उत्साह के साथ मनाया गया। इस अवसर पर शाश्वत तीर्थ सम्मेदशिखरजी पर बनी असाधारण झाँकी दर्शकों के आकर्षण व श्रद्धा का केन्द्र रही।

स्वतंत्रता दिवस 15.8.2017 के दिन आपने स्कूली बच्चों को राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत उद्बोधन से संबोधित किया। इस अवसर पर बच्चों ने राष्ट्रभक्ति पूर्ण सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किये। आचार्य श्री की प्रेरणा से बच्चों को मिठाई वितरण किया गया।

आचार्य श्री की उपस्थिति मात्र ही हर कार्यक्रम को ऐतिहासिक बना देती है। तब फिर पर्युषण महापर्व की तो बात ही क्या? 26.8.2017 से 5.9.2017 तक दशलक्षण पर्व पर विशाल एवं ऐतिहासिक 'सन्मति साधना शिविर' संपन्न हुआ जिसमें देश के कोने-कोने से आकर करीब 1500 श्रावकों ने आत्मसाधना की। 125 लोगों ने 32, 16 व 10 उपवास की साधना की। सामूहिक पारणा व सामूहिक क्षमावाणी नगर निगम प्रांगण में हुई।

यहाँ आपने धर्म की महती प्रभावना की। चारों ओर धार्मिक वातावरण छा गया। आपकी अमृत वाणी के निर्झर से लोगों के मनों के मैल धुल निर्मल होने लगे। आचार्य श्री ने समझाया कि हमारे विचार ही हमारे कार्यों के बीज हैं। जैसे विचार होंगे, व्यक्ति वैसे ही कार्य करेगा और वैसे ही फल मिलेंगे। अतः हमें अच्छे व पवित्र शुद्ध बीज बोना चाहिये अर्थात् विचार रखना चाहिये। अच्छे विचारों वाले व्यक्ति अच्छे कर्म करते हैं और उसका फल अच्छा होता है जिससे समाज में अच्छा वातावरण निर्मित होता है। 'बोए पेड़ बबूल का आम कहाँ से होय'। वे अक्सर अज्झप्पसारो (अध्यात्मसार) की गाथाओं के उदाहरण देकर श्रोताओं को समझाते हुए कहते रहते कि आत्मा का ध्यान श्रेष्ठ, परमेष्ठियों का ध्यान मध्यम, लौकिक ध्यान अधम तथा विषय कषायों का ध्यान महाअधम नरक निगोद में ले जाने वाला है। आप लोगों को हर परिस्थिति में समता धारण करने को कहते क्योंकि समता ही सम्यग्ज्ञान है, समता ही सुध्यान है। समता ही व्रत व चारित्र है। समता भाव से ही जीव सिद्ध होता है। यदि मनुष्य में समभाव नहीं है तो ध्यान, अध्ययन, तप-त्याग, उपकार आदि ईख के फूल समान है। ऐसे आचार्य श्री के सरल भाषा में जीवन के गूढ़ तत्त्वों को समझाने वाले प्रवचन लोगों के चारित्र व चिंतन में बदलाव लाने लगे। लोगों के आत्मकल्याण का मार्ग प्रशस्त करने लगे। सम्यक चारित्र निर्माण में सहायक बनने लगे।

आचार्य श्री के करकमलों से दि. 1.10.2017 को उदयपुर में एक साथ छः जैनेश्वरी दीक्षाएँ संपन्न हुईं। इस दीक्षोत्सव में राजस्थान के गृहमंत्री गुलाबचंदजी कटारिया, महासभा के अध्यक्ष निर्मल कुमार सेठी के साथ हजारों की तादाद में श्रावकगण उपस्थित थे। आचार्य श्री ने क्षु. सक्षमसागरजी को मुनि सक्षमसागरजी, दिल्ली निवासी ब्र. सतीश भैया को मुनि सर्वार्थसागरजी, क्षुल्लिका अनघमती माताजी को आर्यिका अनघमती, क्षुल्लिका अनर्घमती माताजी को आर्यिका अनर्घमती माताजी, ब्र. नानालालजी को क्षुल्लक संभ्रान्तसागरजी एवं ब्र. धुरीबाई को क्षुल्लिका अमूर्तमती माताजी बनाकर दीक्षाएँ दी।

दि. 1.10.17 से 7.10.17 तक 'सुनीलसागर ज्ञानधारा, सुलझाए जीवन हमारा' वर्तमान के सामाजिक जीवन की ज्वलंत समस्याओं पर आपके लोक मंगलकारी प्रवचनों की शृंखला संपन्न हुई। सर्वधर्म सम्मेलन के दिन सभी धर्म व सम्प्रदायों के संतों महंतों व मुस्लिम धर्म गुरुओं के बीच आपके बोधामृत देने वाले प्रवचन हुए। आपकी प्रेरणा व मार्गदर्शन से समाज के युवा-बच्चों में संस्कार प्राप्ति करने व उन्हें जीवन मूल्यों के प्रति अभिमुख करने विभिन्न मंचों, मंडलों व पाठशाला ग्रुप द्वारा विभिन्न मॉडल्स, झाँकियाँ व अन्य आधुनिक संचार माध्यमों से समाज को आकर्षित करने

वाले 'सन्मति धार्मिक मेले' का आयोजन किया गया। इस मेले में कु. भक्ति कारवा व कु. आराधना कारवा द्वारा निर्मित 'ओम् णमो जिणाणं' मोबाइल एप का विमोचन हुआ जिसमें आचार्य श्री सुनीलसागरजी के द्वारा दिये प्रवचन, स्वाध्याय (वाचना), शंका-समाधान व संघ से जुड़ी हर जानकारी है। इसके साथ यू-ट्यूब पर प्रसारित 'सुनील ज्ञान धारा वॉल्यूम-1' का भी विमोचन हुआ। आचार्य श्री की कृति 'जैनाचार' का अंग्रेजी अनुवाद 'जैनाचार साइंस' का भी विमोचन हुआ। आचार्य श्री द्वारा रचित प्राकृत कृतियों का कन्नड़ अनुवाद हुआ। उनका भी विमोचन हुआ।

चातुर्मास के मंगल प्रवास में आचार्य श्री के सान्निध्य में परम्परा के पूर्वाचार्यों आचार्य श्री आदिसागरजी अंकलीकर, आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी व तपस्वी सम्राट गुरुवर आचार्य श्री सन्मतिसागरजी, अन्य महापुरुषों व महान आचार्यों के जन्म जयंती, दीक्षा दिवस, आचार्य पदारोहण दिवस, समाधि दिवस बड़े धूमधाम से मनाए गए। इन अवसरों पर आचार्य श्री ने कहा- ''आज परिदृश्य बदल गया है। कभी जिनके आगमन पर जयजयकारों से आकाश गुंजायमान हो जाता था, जिनकी तस्वीरों के आगे हम दीप जलाते थे, आज के इस अति भौतिकवादी युग के विभ्रमों में फँसे मानव मन से उनकी यादें धूमिल होती जा रही है। उनके महान अवदानों को हम भूलते जा रहे हैं। ये वे गुरु थे जिन्होंने कितनी कठिन परिस्थितियों में श्रमण संस्कृति को जीवित कर जीवंत बनाया है। उनकी कृपा-करुणा के कारण ही हम जैसे आत्मान्वेषी साधक श्रमण बन अपनी आत्म साधना के साथ औरों को भी इस मार्ग पर लगा रहे हैं। दर-दर भटकता मनुष्य इनकी दर पर आकर बेदर अनाथ न रह, सनाथ हो जाता है। इनके चरणों में आकर जघन्यतम अपराध करने वाला पापी भी कम से कम उतनी देर तो पापाचरण छोड़ देता है। भले बाद में भी उसका जीवन रूपांतरित हो जाय। इनके चरणों में आ हर किसी का बोल-चाल, व्यवहार-विवेक, रंग-ढंग बदल जाता है भले ही कुछ देर ही सही, सज्जनों के सत्संग से सज्जनता आ जाती है। 'संसर्गजा दोष गुणा भवन्ति'। इन्हीं महापुरुषों, महान आचार्यों का हम पर इतना ऋण है कि जिसे चुका नहीं सकेंगे। इन्हीं युग सर्जक युगपुरुषों के कारण श्रमण पथ निर्बाध गति से चल रहा है। इन तिथियों के माध्यम से ही हम इन प्रणम्य पुरुषों के व्यक्तितत्व व कृतित्व को जान पाते हैं।

सतत साधना व आत्माराधनारत रहते हुए भी आचार्य श्री ने अपने जीवन के अमूल्य क्षणों को समाजहित में खर्च कर दिया। उदयपुर चातुर्मास में उन्होंने इतना बाँटा, इतना बाँटा कि लेने वालों की फटी चदरिया (रागी द्वेषी हम संसारी) उसका वजन झेल नहीं पा रही थी। जहाँ उनके जीवन बोध देते सरल-तरल युगान्तकारी प्रवचनों से जन-मन का आत्मशोधन हो रहा था वहीं उनके साधना शिविरों, स्वाध्याय वाचना व अन्य उनके सान्निध्य में होने वाले जीवन्त रचनात्मक कार्यों से समाज के विचारों व आचरण में भी परिवर्तन हो रहा था। आचार्य श्री स्वयं जितने सक्रिय सजग हैं संघस्थ साधुगण भी उनका अनुकरण करते हैं। शान्त, आत्मानुशासन व साधनारत साधुगण निर्विकल्प जीवन यापन कर रहे हैं। जितनी अनुकूलता आचार्य श्री ने संघस्थ साधुओं को दी है, वे सब आचार्य श्री के प्रति उतने ही समर्पित हैं। आत्मस्थ हो ये साधुगण मात्र आत्मकल्याण में लगे हैं। स्व अनुशासित अपने संघ पर आचार्य श्री ने अलग से कोई अनुशासन नहीं थोपा। वे तो सबके सब अपने गुरु के पदचिह्नों पर चल जिनानुशासन में जीते अपने आत्मोद्धार में संलग्न हैं।

जहाँ आचार्य श्री ने चातुर्मास में दीक्षाएँ प्रदान कर श्रमण परम्परा को आगे बढ़ाया, वहीं समय आने पर संघस्थ साधुओं को सल्लेखना पूर्वक समाधिमरण करवा परभव सुधार का कार्य भी किया। इस चातुर्मास में चार साधकों का समाधि मरण हो गया।

1. विगत आठ वर्षों से संघस्थ रहते हुए क्षुल्लिका स्वास्थ्यमती माताजी का 49 उपवास की साधना करते हुए दि. 24.9.2017 को णमोकार महामंत्र सुनते-सुनते भद्र परिणामों से समाधिमरण हुआ।

2. क्षुल्लक संभ्रांतसागरजी ने अपना अंतिम समय निकट जान मुनि पद ग्रहण कर लिया। मुनि श्री संभ्रांतसागरजी

का आचार्य श्री के श्रीमुख से णमोकार मंत्र सुनते-सुनते दि. 20.10.2017 को निर्मल भावों से समाधिमरण हो गया।

3. इसी तरह दीपावली के दिन 35 वर्षों से दीक्षित संघ की ज्येष्ठ वयोवृद्ध आर्यिका श्री दर्शनमती माताजी ने दि. 19.10.17 को णमोकार मंत्र के साथ सबको क्षमा व सबसे क्षमा याचना करते, सल्लेखना पूर्वक देह त्याग दी।

4. क्षुल्लिका अमूर्तमती माताजी ने भी अपने अंतिम दिनों में आचार्य श्री से आर्यिका दीक्षा ग्रहण कर समता भाव रख आचार्य श्री के मुख से णमोकार महामंत्र सुनते स्मरण करते दि. 17.11.2017 को समाधिमरण प्राप्त किया।

दि. 12.11.17 से दि. 16.11.17 तक उदयपुर में प्राकृतभाषा शिक्षण शिविर प्रसिद्ध प्रोफेसर पं. उदयचंदजी जैन द्वारा आचार्य श्री के सान्निध्य में लगाया गया जिसमें गुरु आज्ञा से संघस्थ विद्वान मुनि श्री मुदितसागरजी ने शिविरार्थियों को प्राचीनतम ब्राह्मी लिपि का ज्ञान दिया।

इसके ठीक दूसरे दिन दि. 17 व 18.11.17 दो दिन देश के कोने-कोने से आए 40 प्राकृत ज्ञान के विद्वानों, पंडितों की वृहद गोष्ठी का आयोजन उदयपुर समाज ने किया। इस राष्ट्रीय स्तर की संगोष्ठी में प्राकृत ज्ञान के ज्ञाता विद्वानों द्वारा 'प्राकृत ज्ञान केसरी' आचार्य श्री सुनीलसागरजी की बहुचर्चित कृति 'सुनील प्राकृत समग्र' पर विशेष प्रकाश डाला गया। सभी विद्वान आचार्य श्री की 'प्राकृत भाषा' पर इतनी गहरी पकड़ देख चकित थे। तभी आचार्य श्री ने तत्काल 'बाहुबली महामत्थाहिसेगो' (बाहुबली महामस्तकाभिषेक पर लिखी) आशु रचना सुनाई। 'सुनील प्राकृत समग्र' को सभी विद्वानों ने एकमत हो प्राकृत भाषा में लिखी गई श्रेष्ठतम अद्वितीय कृति माना।

गुरु परम्परा को कायम रखने वाले आचार्य श्री की प्रेरणा व आशीर्वाद से अष्टाह्निका पर्व में सिद्धचक्र महामंडल का महा आयोजन हुआ। समाज के महामंत्री सुरेशजी पद्मावत ने विधान में बैठने वालों को सम्मेदशिखर जी की तीर्थयात्रा करवाने की घोषणा की। इस प्रकार नित नूतन कार्यक्रमों द्वारा समाज में जागृति पैदा करते आचार्य श्री का चातुर्मास अपने अंतिम पड़ाव की ओर अग्रसर था।

19.11.17 को आचार्य श्री आदिसागरजी अंकलीकर महाराज के 105वें दीक्षा दिवस पर 'आचार्य आदिसागर अंकलीकर अंतरराष्ट्रीय जागृति मंच' का वार्षिक अधिवेशन एवं वार्षिक पुरस्कार वितरण कार्यक्रम हुआ। इसी अवसर पर समस्त साधुओं का भव्य पिच्छिका परिवर्तन का महान कार्यक्रम संपन्न हुआ। आचार्य श्री को नई पिच्छिका भेंट करने का सौभाग्य श्री शांतिलालजी वेलावत (गुरुभक्त) परिवार तथा पुरानी पिच्छी प्राप्त करने का सौभाग्य श्री जयंतीलालजी रजावत परिवार को प्राप्त हुआ।

26 नवंबर को हूमड़ भवन से विहार कर अशोकनगर पहुँचे। यहाँ के मासिक प्रवास में मानस्तंभ का महामस्तकाभिषेक एवं 24 दिसंबर को गुरुदेव की मूर्ति स्थापना हुई। यहाँ से 25 दिसंबर को भारी जनसमूह के साथ विहार कर संघ सेक्टर-11 पहुँचा।

साध्वी ऋतंभराजी का प्रसंग

आचरण के आचार्य, आगम ज्ञान के प्राचार्य तथा अंकलीकर परम्परा के चतुर्थ पट्टाचार्य भगवान महावीर के सत्य, अहिंसा, दया, प्रेम, करुणा, समता, क्षमा, सरलता, ऋजुता आदि सिद्धांतों की ध्वजा पताका आचार्य श्री सुनील सागरजी अपनी विद्वत्ता व प्रवचन कौशल के माध्यम से फहराते उदयपुर वर्षायोग में जन-जन का जीवन मंगलमय कर रहे थे। इन तेजस्वी, ओजस्वी एवं मनस्वी संत की ख्याति दूर-दूर तक फैल गई थी। इस कारण उनके दर्शनार्थ बड़े-बड़े राष्ट्रीय स्तर के राजनेता, नेता, सेलिब्रिटी, उद्योगपति व अधिकारियों आदि के साथ देश-विदेश में धर्म का प्रचार करने वाले साधु-संत भी आते रहे थे।

साधना पुरुष, वाणी वाचस्पति, ज्ञान सूर्य आचार्य श्री की साधना से समृद्ध हाथ आशीर्वाद को उठते ही कल्पवृक्ष

की तरह जन-मन की मनोकामनाएँ पूर्ण हो जातीं। उनका कुछ क्षणों का सान्निध्य ही मंगलकारी व मन को शांति प्रदान करने वाला होता है। एक बार भी उनके आत्मबोधि देने वाले प्रवचन जो कोई सुन लेता है, निश्चित ही उस दिन से वह अपने विकारों का विसर्जन शुरू कर देता है। यह भावना जनसाधारण में बन गई थी। ऐसे धर्म प्रभावक के चरणों में आकर लोग धर्म धारण करते रहे। 'धारयति इति धर्मः' अर्थात् जो धारण योग्य है वही धर्म है। संत की निश्रा में हर जगह की भाँति उदयपुर में भी देश की महान हस्तियों ने आने का सौभाग्य प्राप्त किया। जन धारणा भी बनी हुई थी कि आचार्य श्री का आशीर्वाद कभी व्यर्थ नहीं जाता।

राजस्थान के गृहमंत्री गुलाबचंदजी कटारिया, श्रीचंद कृपलानी, नगरीय स्वास्थ्य मंत्री (राज.), राजस्थान हाईकोर्ट जस्टिस श्री रामचंद्रजी झाला, उदयपुर मेयर चंद्रसिंहजी कोठारी, मेवाड़ महाराणा महेन्द्रसिंह मेवाड़, चित्तौड़गढ़ सांसद सी.पी. जोशी ऐसे अति विशिष्ट व्यक्तियों ने धर्मसभा में आकर जिसे जैसा समय मिला, आचार्य श्री का सान्निध्य पा मंगल आशीर्वाद लिया। जिन्हें आचार्य श्री ने देश में अहिंसा व शांति कायम रखने की बात कही।

यहाँ पर राजनेताओं के साथ अनेक धर्मगुरु भी आचार्य श्री के दर्शन लाभ लेने व सत्संग कर धर्म चर्चा करने आते रहे। उदयपुर हिरणमगरी सेक्टर-11 में आचार्य श्री का शीतकालीन वाचना के लिए ससंघ (54 पिच्छीधारी साधु-साध्वी) मंगल प्रवास था। इसी दौरान भागवत कथा प्रवचनकार सनातन धर्म में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त नारी रत्न धर्मगुरु ओजस्वी वक्ता साध्वी श्री ऋतुम्भराजी आचार्य ससंघ का दर्शन लाभ लेने व उनका सत्संग प्राप्त करने पधारीं।

आचार्य श्री व श्रीसंघ का बहुत करीब से दर्शन लाभ ले उन्होंने कहा- आज मैं धन्य हो गई। दिगंबर साधुओं की साधना बड़ी कठिन होती है। साध्वीजी ने आचार्य श्री से चर्चा के दौरान कहा कि आप इतने विद्वान एवं प्रखर वक्ता हैं। निश्चित ही आपके शिष्य भी गुरुगुण ग्रहण करते रहेंगे। जैन संस्कृति व सनातन संस्कृति अति प्राचीन है। इसी ने भारत को विश्व में धर्म गुरु का दर्जा दिलाया। आज शस्त्रों की झनझनाहट के कोलाहल से त्रस्त-संतप्त विश्व को महावीर की अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह, शांति तथा गीता के उपदेशों की बहुत जरूरत है। विश्व शांति की दिशा में आज भगवान महावीर की प्रासंगिकता देखते हुए जैसे मैंने विदेशों में धर्म प्रचार के दौरान महसूस किया, आप जैसे सन्तों को भी विदेशों में जाकर भारतीय संस्कृति का प्रचार-प्रसार करना चाहिये व फिर से विश्व पटल पर विश्वगुरु भारत की छवि उकेरनी चाहिये।

तब आचार्य श्री ने कहा- ''दिगंबर संत सर्वथा अपरिग्रही होते हैं। वे किसी भी तरह के वाहन का उपयोग नहीं करते। अतः हम लोग हवाई यात्रा नहीं कर सकते। किन्तु हमारा पदविहार धरती से जुड़कर होता है। इसलिए गहराई तक पहुँचने का मार्ग है। यद्यपि भारत की, भौतिकता की चकाचौंध में बिखराव हो रहा है तथापि यहाँ लोगों की आज भी धर्म, संस्कृति व संतों की तपस्या पर आस्था है। अतः दुनिया तप से निखरते भारत की ओर देख रही है। मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता है कि आप अपनी संस्था 'श्री सर्वमंगलम् पीठम् वात्सल्य ग्राम' की प्रमुख के नाते सिर्फ भारत ही नहीं, विश्व भर में भारतीय संस्कृति का प्रचार-प्रसार कर उसे लोगों को आत्मसात करने के लिए प्रेरित ही नहीं कर रही, उनके अंदर उतारकर उनका रूपान्तरण भी कर रही है। विश्व कल्याण की दिशा में उठा आपका यह कदम श्लाघ्य व स्तुत्य है। आप 'विश्व वात्सल्य' का प्रतीक नारी जाति का गौरव है। आपने विश्व के सम्मुख नारी शक्ति का परिचय दिया है। आपके ये श्रेष्ठ कार्य दिन पर दिन वृद्धिगत रहें।''

चूँकि साध्वी श्री ऋतुम्भराजी आचार्य श्री की प्रवचन सभा में आई थी इसलिए संचालक महोदय ने आचार्य श्री की आज्ञा से आपश्री से धर्मसभा को दो शब्द कहने को आग्रहपूर्वक निवेदन किया। किंतु महापुरुष अपनी महानता का परिचय तो बिना दो शब्द कहे ही दे जाते हैं।

साध्वी श्री ने कहा कि मैं यहाँ हमारे इतने बड़े धर्म गुरु हैं उनका आशीर्वाद लेने आई हूँ। इन सारे साधनारत साधुओं

के लिए भी मेरा वंदन। इन वंदनीय संतों की सभा में आकर मैं धन्य हो गई हूँ। आप सबके दर्शन से मुझे जो खुशी हुई है वह वर्णनातीत है। और वे भगवान महावीर का जयकारा लगाते यह कहते हुए चली गई कि मैं यहाँ बोलने नहीं, सुनने व सत्संग करने आई हूँ।

* * *

शीतकालीन वाचना

सेक्टर-11 के जैन भवन में षट्खंडागम, धवला पुस्तक आठ की शीतकालीन वाचना 27 दिसंबर 2017 से प्रारंभ हुई जो 13 फरवरी तक चली। 1 जनवरी 2018 को मुनिश्री सुबलसागरजी को आचार्यश्री ने आचार्य दीक्षा प्रदान की। 24 से 26 जनवरी तक तपस्वी सम्राट गुरुदेव का जन्म जयंती महोत्सव तथा जिनालय का वर्धापन दिवस मनाया गया। 22 फरवरी से 1 मार्च तक, फाल्गुनी अष्टाह्निका में जयंतीलाल, भगवती-विनोद रजावत परिवार ने धूमधाम से सिद्धचक्र महामंडल विधान किया। 6 मार्च को प्रभावना के साथ सर्वऋतु विलास पहुँचे जहाँ 11 को विधान व 12 को जिनालय का ध्वज परिवर्तन हुआ। 9 मार्च को प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव का जन्म कल्याणक महोत्सव बड़ी भारी शोभायात्रा के साथ टाउन हॉल प्रांगण में मनाया गया। 17 को अनंतनाथ व अरहनाथ भगवान का मोक्षकल्याणक मनाया।

चैत्र शुक्ल एकम, गुड़ी पड़वा, 18 मार्च को यहाँ से विहार कर रथयात्रा के साथ सेक्टर-4 में भव्य प्रवेश हुआ। 29 मार्च को भारी प्रभावना के साथ महावीर जयंती तथा आचार्यश्री सुनीलसागरजी का 22वाँ दीक्षा दिवस मनाया गया। अपूर्व धर्म प्रभावना के साथ 13 अप्रैल को यहाँ से विहार कर प्रगति आश्रम पहुँचे। जहाँ 13 से 15 अप्रैल तक समवशरण विधान संपन्न हुआ। मुक्ताकाश चंद्रप्रभ समवशरण का भव्य महामस्तकाभिषेक धूमधाम से हुआ।

नेमिनाथ प्रतिष्ठा महोत्सव

18 से 23 अप्रैल 2018 तक चेतन प्रकाश नेमीचंद भगत (चित्तौड़ा) परिवार द्वारा सेक्टर-14 में भव्य नेमिनाथ जिनालय बनवाकर प्रतिष्ठा महोत्सव संपन्न कराया गया। 27 से 29 अप्रैल तक संभवनाथ कॉम्प्लेक्स में संभवनाथ जिनालय का शिलान्यास हुआ। यहाँ से सबीना पहुँचे, जहाँ तीन दिन सार्वजनिक प्रवचन हुए। अंतर्मना मुनिश्री प्रसन्नसागरजी एवं मुनिश्री पीयुषसागरजी का चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी से वात्सल्य मिलन हुआ। उन्होंने अत्यंत विनय वंदना पूर्वक ठाठ के साथ गुरु पूजन व अपनी विनयांजलि प्रस्तुत की। ऋषभदेव में भी वात्सल्य मिलन व एकसाथ आहार चर्या का सुअवसर प्राप्त हुआ। प्रतिष्ठा के मध्य श्रीपालजी- मुनिश्री सुधीन्द्रसागरजी, अशोक जमादार- मुनि सुधीरसागर, क्षुल्लिका श्रुतमति- आर्यिका शुद्धमति, ब्र. सतीशजी- क्षुल्लक सुधीसागर, ब्र. सरोज- क्षु. शुद्धात्ममतिजी की दीक्षाएँ सम्पन्न हुईं।

ऋषभदेव केशरियाजी में ग्रीष्मकालीन वाचना

आचार्यश्री 2 मई को सवीना से समवशरण, काया, परसाद होते हुए 9 मई को ऋषभदेव पहुँचे। विशाल शोभायात्रा, बैंड-बाजों के साथ प्रसिद्ध ऋषभदेव-केशरियाजी आदिनाथ भगवान के दर्शन किये। यह वृहद् जिनालय मूलतः दिगंबरों का है किन्तु बाद में श्वेताम्बरों ने भी अपना अधिकार जताना प्रारंभ कर दिया। आज विवादों में है। समाज के आग्रह पर जैन बोर्डिंग प्रांगण में षटखंडागम धवला पुस्तक-9 की वाचना और भक्तामर-प्रवचन प्रारंभ हुए।

प्रायः प्रतिदिन आचार्यश्री ससंघ ऋषभदेव मंदिर जाते थे। 14 मई को शांतिनाथ निर्वाणोत्सव के दिन दोपहर 2 बजे कार्यक्रम था। सबको चिंता थी कि ऐसी भयंकर गर्मी में संघ कैसे जाएगा? लेकिन जैसे ही आचार्य संघ के चलने का समय हुआ, बादल छा गए। जैसे ही बोर्डिंग से निकले, पानी बरसने लगा और आश्चर्य तो तब हुआ जब ऋषभदेव

मंदिर में घुसते ही बरसात बंद हो गई। प्रतापगढ़ से कुछ युवा साथी गुरुचरणों में घबराए हुए ऋषभदेव पहुँचे व आचार्यश्री को बताया कि अनन्य गुरुभक्त नगर सभापति श्रीमान कमलेशजी दोशी लापता हैं। उनका किडनेप हुआ था, कुछ पता न लगा। आचार्यश्री ने आशीर्वाद देकर कहा कि दो दिन में वे सामने से खबर करेंगे। सरस्वती भूषण गुरुवर की बात सच निकली। कमलेशजी का सामने से फोन आया और पता चला कि विरोधी पार्टी के गुंडों द्वारा उनका अपहरण किया गया था। वह बहुत ही ज्यादा गंभीर हालत में, पूरे हाथ में सैकड़ों घाव, चाकू मारे गए हैं, दक्षिण भारत में बेंगलौर के पास किसी रेलवे स्टेशन पर पड़े आचार्यश्री का स्मरण कर रहे थे। सूचना आते ही पूरा प्रशासन लग गया व कई दिन अस्पताल में उपचार के बाद ठीक होकर वह स्वयं ईडर गुरु शरण में पधारे थे। गुरु कृपा, अदृश्य दिव्य शक्ति को नतमस्तक हो गए। नया जीवन गुरु की ही परम देन है। गुरु स्मरण में इतनी शक्ति होती है कि मरण शैया से वापस लौटना हुआ। गुंडों ने काम तमाम कर मृत समझ लावारिस फेंक दिया था। अपनी आपबीती सुनाते हुए हाथ में लगे वे सारे चाकू के घाव बताए और कहा कि उस घड़ी गुरुदेव का हाथ मानो मेरे सिर पर था। कैसे हिम्मत बनी, कौन लेकर अस्पताल पहुँचा और मैं बच गया। यह सब आपका ही प्रसाद है। आज कमलेशजी एकदम स्वस्थ रूप से शासन-समाज की सेवा कर रहे हैं।

19 मई को श्रुतपंचमी पर्व एवं आचार्य श्री आदिसागरजी अंकलीकर का आचार्य पदारोहण स्मृति दिवस मनाया गया। 22 मई को नौ साधुओं के केशलोच हुए। 28 को महावीर मंदिर के संत भवन का लोकार्पण हुआ। 1 से 3 जून तक ऋषभदेव मंदिर में भक्तामर विधान पूर्वक भक्तामर प्रवचन व वाचना का समापन हुआ। शाम को तपती सड़क पर ऋषभदेव से विहार कर संघ 9 कि.मी. चलकर पुलक धाम पहुँचा।

4 जून की चर्या खैरवाड़ा में कर 5 जून की चर्या आचार्य शांतिसागर छाणी की जन्मभूमि छाणी के वर्द्धमान तीर्थ पर हुई। 6 जून की चर्या नयागाँव में हुई। 7 जून को डेरी में चर्या हुई, जहाँ पाटीदारों ने अपने घर श्रावकों को सौंप दिये। राजस्थान के इस आखिरी गाँव के लोगों ने मुनिसंघ की खूब सेवा कर विदा दी।

गुजरात-विजयनगर प्रवेश

8 जून को प्रातः गुजरात की प्रथम बस्ती राणीगाँव से विजय नगर में प्रवेश किया। विजयनगर के श्रावकों ने बॉर्डर से 5 कि.मी. पहले से बैंडबाजों के साथ संघ की अगवानी की। 9 जून को जैन बैंक का उद्घाटन हुआ। 10 जून को अतिशय क्षेत्र पाल में नेमिनाथ भगवान की सुंदर प्रतिमा का दर्शन कर चिठोड़ा में रात्रि विश्राम कर टांकाटुंका पहुँचे। टाकाटुंका आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी महाराज की क्षुल्लक दीक्षा स्थली है। 12 जून को बावन जिनालय व कीर्ति स्तंभ की नगरी भिलोड़ा में संघ का स्वागत हुआ। 13 को चिंतामणि तीर्थ पर पार्श्वनाथ भगवान के दर्शन कर पंचगामड़ा में रात्रि विश्राम कर संघ मुनिश्री सिद्धार्थसागरजी व क्षु. विजयंतसागरजी की जन्मस्थली गोरल पहुँचा। 15 जून को कडियादरा में विमलप्रभु के दर्शन कर पानोला में विश्राम हुआ।

ऐतिहासिक तीर्थ ईडर

ईडरगढ़ के मानस्तंभ के महामस्तकाभिषेक 16 से 18 जून के निमित्त आचार्य संघ का मंगल पदार्पण, ध्वजारोहण व प्रवचन हुआ। 18 को श्रुतपंचमी महोत्सव के अवसर पर आचार्य श्री आदिसागरजी अंकलीकर का आचार्य पदारोहण महोत्सव मनाया गया। ईडरगढ़ के ऊँचे पहाड़ पर भी हजारों श्रावक उपस्थित रहे। आचार्यश्री प्रायः गुफाओं में साधना करते रहे। 20 जून को पहाड़ से उतरकर ईडरगाँव के संभव नाथ जिनालय में आए। प्राचीन शास्त्र भंडार भी देखा। 23 को नगर के सभी जिनालयों का दर्शन किया। 25 को विहार हो गया। 26 की चर्या बेरावर में कर हडोल के

जिनालय में रात्रि विश्राम किया।

सिद्धक्षेत्र तारंगाजी

27 को प्रातः हडोल से 10 कि.मी. चलकर विद्यासागर तपोवन के दर्शन कर 2 कि.मी. की ऊँची चढ़ाई चढ़कर तारंगाजी के प्राचीन जिनालय के दर्शन कर विश्राम किया। 29 जून से 5 जुलाई तक उदयपुर के जयंतीलाल रजावत परिवार ने सिद्धचक्र विधान किया। प्रतिदिन तीर्थ वंदना हुई।

6 जुलाई को सिद्धशिला पहाड़ पर केशलोच व रात्रि साधना की। जो मूर्ति 20 मजदूरों से न हिली वह गुरु आशीष से 10 श्रावक पहाड़ पर ले आए और विराजमान की। 8 जुलाई को तारंगाजी से विहार कर श्वेतांबर तीर्थ पर चर्या हुई। खेरालु से जैन तीर्थ उमता पहुँचे। जहाँ निर्भयसागरजी ने आचार्य संघ की भव्य अगवानी की। उमता से वीसनगर और फिर मेहसाना में भव्य स्वागत हुआ। मेहसाना आचार्यश्री महावीर कीर्ति की समाधिस्थली है। यहाँ तीन दिन प्रभावना कर संघ गाँधीनगर की ओर बढ़ा।

ऋषभदेव-ईडर-तारंगा-महसाना

गुजरात के लोगों की भक्ति भावना व श्रद्धा उन्हें गुजरात तरफ खींच ले गई। पद विहार में आपने देखा कि सांसारिक दुःखों से दुःखी दीनजनों की भीड़ आपके दर पर लगी रहती। हर किसी को सुख, शांति व निराकुलता चाहिए थी। आचार्य श्री ने अनुभव किया कि चेतन कहलाने वाले इस मानव की चेतना सुप्त पड़ी है। इस दिशा में प्रयत्न करने की बजाए यह पुरुषार्थी मानव अपना सारा पुरुषार्थ संसार के क्षणभंगुर पदार्थों के संचय में खपा रहा है और तृष्णा को बढ़ाता सुख प्राप्ति के बहाने दुःखों के गहरे गर्त में स्वयं को ढकेलता चला जा रहा है।

आचार्य श्री बस्ती-बस्ती, गाँव-गाँव, नगर-नगर, डगर-डगर से पद विहार करते लोगों को पुकार-पुकार कर अपनी करुणाभरी वाणी से समझाते- सावधान करते चले जा रहे थे। उनके हृदय से लोककल्याणी वाणी झरती रहती जिससे करुणामयी कल-कल ध्वनि सुनाई देती रहती हे! मनुष्य! हे! चेतन, कब तक इस संसार सागर में दुःखों के थपेड़े सहता रहेगा? कब तक गति-गति में विभिन्न योनियों का ग्रास बनता अकथनीय महाकष्ट भोगता रहेगा? कब तक क्रूर काल का ग्रास बनता रहेगा? ये सांसारिक इंद्रिय सुख भोग मधुबिंदु के समान है जिन्होंने तुझे विवेकशून्य व ज्ञानशून्य बना दिया है। संतगण बिना तुम्हारे किसी प्रयास के तुम्हारे हृदयों के बुझे ज्ञान व विवेक के चिराग जलाने आए हैं। तुम्हारे इन माटी के सकोरों में आत्मकल्याण की भावनाओं का नेह भरने तथा पुरुषार्थ की वट दे देकर बनने वाली वर्तिका धरने आए हैं। आत्मकल्याण की तीली जलाए वे जन हृदय के द्वार पर खड़े रहे। इससे ज्यादा तो ये हितकारी गुरु हमारे लिए और क्या कर सकते हैं? जलना तो हमीं को पड़ेगा। इस प्रकार सोयों का विवेक जगाते आचार्य श्री का पथ संचलन जारी था। स्वयं ज्योति की मशाल बन जलते ये मानवता के मसीहा हमारे हताश, निराश दुःखी मनों में सुख, शांति व आशा के दीप प्रज्ज्वलित करने का प्रयास करते यहाँ से वहाँ व वहाँ से वहाँ पद संचलन करते गंतव्य की ओर बढ़ते रहे।

कई भव्य आत्माएँ उनकी प्रेरणा से जागी। कईयों ने छोटे-मोटे नियम ले संयम की साधना पर अपने कदम बढ़ाए। कुछ लोग संयम धारण करने के लिए अपना मनोबल मजबूत करते रहे, उनमें से विरले ऐसे भी थे जो आचार्य श्री को अपना सच्चा हितैषी मान संयम का पथ अंगीकार करने उद्धत हो गए और आचार्य श्री अपने लोकमंगल पथ पर आगे बढ़ते रहे और ये कतिपय मुमुक्षुगण उनके पीछे-पीछे चल पड़े।

इस प्रकार ये वीतरागी, निस्पृही, शांतिमूर्ति आचार्य श्री अपनी कष्ट साध्य साधना से जीवन की प्रयोगशाला से जो शांति की सुखानुभूति की, वे महान अनुभव समाज को बांटते चले जा रहे हैं/थे। वे समझ रहे थे कि वैज्ञानिक प्रगति

की खटर-पटर में सारा विश्व लगा हुआ है। चारों ओर कोलाहल और अशांत वातावरण है। हर कोई घुटन महसूस कर रहा है। इच्छा, कामनाओं व वासनाओं की अंतहीन चाहत ने मनुष्य के मन का सुख-चैन छीन लिया है। वे अशांत मनों को राहत दिलाना चाहते हैं। वे कहते रहते कि जीवन का सर्वोत्कृष्ट शांतिपथ तो वही है जिस पर चलते हुए कोई आशा, इच्छा या अभिलाषा शेष न रहे। जहाँ सभी में समानता की भावना हो। जहाँ हृदय की उदारता व व्यापक दृष्टिकोण हो। व्यक्ति स्वार्थ से परे, ऊँचा उठ गया हो तथा मान-सम्मान की लोकेषणाएँ ना हों। जिसके पास जितना जो कुछ है उसके बाद जिसने 'बस' का पूर्ण विराम लगा लिया हो, ऐसे लोगों के जीवन के दुःख-दर्द स्वयंमेव समाप्त होते चले जाएँगे। इस प्रकार आचार्य मुनीश्वर जो स्वयं शांतिपथ पर अग्रसर हैं औरों की शांति प्राप्ति के लिए पथ प्रशस्त करते जा रहे हैं।

गाँधीनगर चातुर्मास

राजस्थान से पद संचलन करते, जगह-जगह धर्म ध्वज फहराते, वात्सल्य की अनुकम्पा बांटते, निजात्म ध्यान संपन्न, भव्य जीवनानुरागी, मंगलमूर्ति, दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तप व वीर्याचार सहित पंचाचार संयुक्त सूरिश्रेष्ठ आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने ससंघ गुजरात की राजधानी गाँधीनगर में चातुर्मास हेतु वहाँ के मुनि भक्त श्रावकों को पहले ही स्वीकृति दे दी थी।

दि. 18.7.2018 के शुभ दिन, शुभ घड़ी में बैडवालों, घोड़ों, बग्गियों के साथ सिर पर मंगल कलश लिए महिलाएँ अपनी विशिष्ट वेशभूषा में तथा समाज ही नहीं विभिन्न समुदायों के लोग गुजराती गीतों की मधुर धुन पर गरबा नृत्य के साथ शहर के बाहर आचार्य संघ की अगवानी के लिए पहुँचे। एक बाजू नग्न दिगम्बर भेषधारी संत व श्वेत शुभ्र वस्त्रधारी साध्वीगण का विरक्ति का सागर लहराता नजर आ रहा था तब दूसरी तरफ गाँधीनगर (गुजरात) के मेयर श्री प्रवीण भाई पटेल की अगुआई में वहाँ का आबाल वृद्ध समाज नाचता-थिरकता, हर्षोल्लास, उत्साह-उमंग के साथ समुद्र के ज्वार की तरह गुरुवर के स्वागत में उमड़ पड़ा था। सागर के रूप में एकत्रित जनसमुदाय द्वारा विरक्ति के इन महासागर के चरण छूने की होड़ा-होड़ी मची थी। आंगन-आंगन, घर-घर, द्वार-द्वार, जन-जन के मुख से सौम्य मूर्ति, धर्मधार, धर्ममार्ग प्रभावक, दयामूर्ति, तीर्थरूप चरण युगल वाले आचार्य श्री सुनीलसागरजी के उज्ज्वल चारित्र के ही चर्चे थे।

खुशियों से नाचते-थिरकते युवक-युवतियों की टोलियों के साथ आचार्य श्री ससंघ चल पड़े। हर कोई आचार्य श्री की एक झलक पाने के लिए लालायित था। गाँधीनगर जैन समाज अपना अहोभाग्य मान रहा था कि कितनी बड़ी-बड़ी जगहों से अर्पित चातुर्मास स्वीकृति के श्रीफलों में से उनका श्रीफल गुरुचरणों में भेंट होकर धन्य हो गया और आज यह परम पावन, चार माह लगातार पुण्यार्जन का पुण्यमयी प्रसंग उनके हाथ आ गया। आचार्य श्री के चरण गाँधीनगर की धरा पर क्या पड़े, धरा का रज कण तो रजत हो गया किंतु नगरवासी अपने आपको महा सौभाग्यशाली व पावन समझने लग गए थे। सच है एक साथ आचार्य श्री के संग छत्तीस साधकों की पवित्र साधना से उर्जस्वित ऊर्जा ने ही ऐसा सकारात्मक वातावरण पैदा कर दिया था। महानगरों के कोलाहल से दूर प्रकृति की नैसर्गिक गोद में अवस्थित यह नगरी सच में आचार्य श्री को गाँधीजी की याद दिला गई। सरल, तरल, तुहीन कणों जैसे स्वभाव वाले गाँधीजी के गुजरात में गाँधीनगर में प्रवेश करते हुए आचार्य श्री को देश के लिए दिया गया गाँधीजी का महान बलिदान याद हो आया। आचार्य श्री विद्यार्थी जीवन से ही गाँधीजी के आदर्शों व सिद्धांतों से काफी प्रभावित थे इसीलिए आज भी संत होने के बाद भी देश को सर्वोपरि मानते हैं।

स्वागत भाषण में मेयर प्रवीण भाई पटेल ने कहा ''गाँधीजी के नाम से प्रसिद्ध इस गाँधीनगर में अहिंसा, सत्य, अस्तेय व अपरिग्रह के सिद्धांतों पर चलने वाले आचार्य श्री सुनीलसागरजी का हार्दिक अभिनंदन करता हूँ। जैन दिगम्बर

संत के दर्शन का सौभाग्य संभवतः मुझे पहली बार प्राप्त हुआ है। इनकी कष्ट साध्य कठोर साधना देख सिर अपने आप इनके श्रीचरणों में झुक जाता है। गाँधीजी की भूमि में आपने अपने जीवन दर्शन व चर्या द्वारा महात्मा गाँधी की याद ताजा कर दी। खुशी की बात है कि आचार्य श्री सुनीलसागरजी अपने वर्षाययोग के चार महीनों तक इस धरती से देश और दुनिया को अहिंसा, शांति, प्रेम व सत्य के न सिर्फ संदेश ही देंगे अपितु जीवन को खुशहाल करने, रखने वाले इन सिद्धांतों को अपनाने की प्रेरणा भी देंगे।''

आशीर्वचन में आचार्य श्री ने भी यही कहा कि ''इस गाँधीनगर में रहकर देश व विश्व के लिए अधिक से अधिक अहिंसा, सत्य, प्रेम व शांति के कार्यों में योगदान दूँगा व समाज को प्रेरित करूँगा/ करता रहूँगा। भले मैं निस्पृही संत हूँ पर मेरे लिए मेरा देश सर्वोपरि है। देश सशक्त, सुरक्षित व स्वतंत्र है तभी धर्म सुरक्षित है व धर्म पालन करने की स्वतंत्रता है। हमारी भारतीय संस्कृति का स्वर्णिम इतिहास है। हमारे साधु-संतों, मनीषियों, विद्वानों, ज्ञानियों आदि के कारण ही भारत 'विश्वगुरु' कहलाता रहा है। हमें पुनः इसे उसी 'विश्वगुरु' के सिंहासन पर विराजमान करना है।''

मंगल कलश स्थापना

29.7.2018 को गाँधीनगर महावीर जिनालय के बाहर बने विशाल, भव्य डोम आकार के पांडाल में चातुर्मास मंगल कलश स्थापना के वृहद कार्यक्रम का आयोजन हुआ। प्रथम कलश श्री सावनजी मुकेशजी सरिया ठाकरडा निवासी को प्राप्त करने का पुण्यमयी सौभाग्य रहा।

इस पावन अवसर पर गुजरात के राज्यपाल श्री ओमप्रकाशजी कोहली का शुभ आगमन हुआ। वे दिगम्बर मुद्रा में विराजे शांति मूर्ति आचार्य श्री व अन्य दिगम्बर संत व साध्वी माताजी के दर्शन कर गदगद हो गए। उन्होंने आचार्य श्री को चर्चा में बताया कि ''वे जैन दर्शन, चिंतन व सिद्धांतों का अध्ययन करते रहते हैं।'' महामहिम राज्यपाल महोदय ने अपने भाषण में धर्मसभा में कहा कि ''दिगम्बर जिन मुनि 28 मूलगुणों का पालन करते हैं। यह उनके जीवन की अति कठोरतम साधना है। सबसे पहली बात कि दिगम्बरत्व धारण कर इंद्रियजीत रहना असंभव को संभव करना है। इनका पद विहार, इनका एक ही वक्त खड़े-खड़े भोजन करना, नग्न भेष में सर्दी, गर्मी, बरसात के प्राकृतिक प्रहारों को सहन करना, बिना बिस्तर के शिला तल पर या लकड़ी के पाटे पर सोना, इस युग में भी आप जैसे भगवान महावीर के सच्चे अनुयायी ही ऐसी कष्टजन्य साधना कर सकते हैं। आज मानसिक, वैचारिक, धार्मिक, सांस्कृतिक संकीर्णता के बीच जैन धर्म के स्याद्वाद या अनेकांतवाद की आवश्यकता है, जो हमें विशाल, व्यापक व उदार दृष्टिकोण प्रदान करता है। हमें खुशी है कि आप पद विहार करते भगवान महावीर की अहिंसा, शांति व शाकाहार को जन-जन तक पहुँचा कर प्राणीमात्र के कल्याण के लिए महान योगदान दे रहे हैं और भी आपने आचार्य श्री की जीवन चर्या, विद्वता, साधना व संघ नायक के रूप में भूरि-भूरि प्रशंसा की।''

आचार्य श्री ने आशीर्वचन में कहा कि ''मंगल कलश भले कोई एक परिवार स्थापित कर रहा है, किंतु इसमें समूचे समाज की श्रद्धा व भक्तिपूर्ण मंगल भावनाएँ सन्निहित हैं। चातुर्मास स्थापना वर्षायोग हम साधुओं के लिए आवश्यक है। इस चातुर्मास में हम सबके लिए मंगल कामना करते हैं।''

इस प्रकार हजारों लोगों की उपस्थिति, धार्मिक वातावरण व बड़े उत्साही माहौल में चातुर्मासिक मंगल कलश स्थापना कर आचार्य श्री ने समस्त संघ के चातुर्मास का पुण्यलाभ लेने का पावन पुनीत अवसर गाँधीनगरवासियों को दे दिया।

आपने कहा कि ''बड़े पुण्योपार्जन से संत सत्संग व साधु समागम का यह अलभ्य संयोग आपको प्राप्त हुआ है। साधु तो चार माह बादल की तरह धर्म वृष्टि करके चले जाएँगे, जितना ज्यादा से ज्यादा धर्म लाभ ले सको ले लेना।

आपके मन की मिरदा को गीली करना साधुओं का (हमारा) काम है, लेकिन इस पर फसलें लहलहाना व फसल काटना आपका काम है। ये चार माह आपके जीवन को संवारने, सुधारने व कुछ सहेज कर रखने का काल है। यदि आपने हमसे कुछ लिया, आत्मसात किया, अपने जीवन को परिमार्जित करने का काम किया तो आपकी हमें चातुर्मास कराने की साधना व हमारी चातुर्मास करने की साधना सफल हो जाएगी।''

''मैं गाँधीनगर चातुर्मास में अपेक्षा रखता हूँ कि लोगों का हृदय इतना उर्वरक बना दूँ कि उस पर आत्म कल्याण की फसलें लहलहाएँ व यहाँ से चातुर्मास बाद विहार करें तो हमारा संघ वृद्धिगत होकर विहार करे।''

मानस्तंभ शिलान्यास व अन्य कार्यक्रम

वीरशासन जयंति : श्रावण कृष्णा एकम 2018 को वीर शासन जयंति मनाई गई। इसी दिन से श्री अमृतचंद्राचार्य विरचित पुरुषार्थ सिद्धयुपाय ग्रंथ की वाचना शुरू की गई। इसमें श्रावकाचार का विशद व गहन वर्णन है। इस ग्रंथ की वाचना में श्रावकों ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। ग्रंथ के माध्यम से आचार्य श्री ने श्रावकाचार पर विशिष्ट प्रकाश डाला। ग्रंथ की वाचना लम्बी चली जो 8.11.2018 को चातुर्मासिक विहार के छह दिन पूर्व समाप्त हुई।

गाँधीनगर जिनालय के मानस्तंभ का शिलान्यास दि. 2.8.2018 को श्री मेहुल प्रवीणचंद दोषी परिवार (ईडर) निवासी गाँधीनगर गुजरात द्वारा किया गया। उन्होंने मानस्तंभ के निर्माण की संपूर्ण जिम्मेदारी स्वयं पर ले ली और शुभ मुहूर्त में मानस्तंभ की आधारशिला रख दी गई।

इस प्रकार चातुर्मास स्थापना के दिन से ही आचार्य श्री ने गाँधीनगर में धर्म प्रभावना का डंका बजा दिया। चारों ओर उनकी विद्वता, अध्यात्म के गहन ज्ञान व कठिन साधना की चर्चाएँ होने लगी। जिनालय के निकट ही एम.एल.ए. क्वार्टर में संघ का सामूहिक स्वाध्याय होता। जनपथ से लेकर राजपथ तक दिगम्बर जैन मुनि आचार्य श्री सुनीलसागरजी की सौम्यता, सदाचार, करुणा, अहिंसा के प्रचारक तथा प्राणीमात्र के हितचिंतक व सर्वधर्म समभाव रखने वाले साधक के रूप में ख्याति फैल चुकी थी। उनकी विलक्षण मेधा शक्ति व असाधारण ज्ञान की बात सुन दूर-दूर से विद्वतगण भी अपनी ज्ञान पिपासा शांत करने आने लगे।

आचार्य श्री की कीर्ति सौरभ गुजरात विधानसभा में भी पहुँच गई। वहाँ विधायकों (जनप्रतिनिधियों, एम.एल.ए.) ने सुना कि गाँधीनगर में महा विरक्त, ज्ञानी, ध्यानी, करुणानिधि, तपस्वी संत, सत्य, अहिंसा, शांति, प्रेम व सौहार्दता की अलख जगाते चातुर्मास कर रहे हैं। वे लोग आचार्य श्री के दर्शन के लिए लालायित हो गए और दिनांक 18.9.2018 के दिन एक साथ 50 (पचास) विधायक आचार्य श्री की धर्मसभा में उनके दर्शनार्थ पहुँच गए। आचार्यश्री के प्रभावी व्यक्तित्व के आगे शासन भी नतमस्तक था।

आचार्य श्री के साथ उनके इतने सारे त्यागी तपस्वी विरक्त शिष्य-शिष्याओं को देख उनके आश्चर्य का ठिकाना न था। आचार्य श्री के मुखारविंद से झरती अमृतवाणी सुन वे गदगद हो गए। वे बोले ''अद्‌भुत! आचार्य श्री जैसे विराट व्यक्तित्व के धनी दिगमबर संत के हमने जीवन में पहली बार दर्शन किए हैं। हमने तो आपकी जो महिमा सुनी थी उससे कई-कई गुना अधिक आप महिमावान हैं। आप जैसे आलोक शिखर के दर्शन कर हम धन्य हो गए।''

आचार्य श्री के ज्ञान ज्योतिर्मय व्यक्तित्व, अद्‌भुत प्रतिभा, तेजस्विता की ख्याति दूर-दूर तक फैल गई थी। अतः ऐसे सारस्वत साधक के दर्शनार्थ गुजरात की राजधानी गाँधीनगर में आने वाला कोई न कोई नेता, अभिनेता, उद्योगपति, कलाकार आता ही रहता था और उनकी अद्‌भुत प्रतिभा, अध्यात्म ज्ञान, वाक् प्रभुत्वता से प्रभावित हुए बिना नहीं जाता।

अभिनेता आगमन : दि. 3.11.2018 को टी.वी. चैनल में रावण का रोल निभाने वाले प्रसिद्ध कलाकार लंकेश अरविंद त्रिवेदी आचार्य श्री सुनीलसागरजी के दर पर माथा टेकने आ पहुँचे। आचार्य श्री के वात्सल्य भरे आशीर्वाद व

उद्बोधन से अभिभूत हो वे कह उठे, ''इन महात्माकी निश्रा में मुझे माँ की स्नेहमयी गोद मिल गई।'' मनोज जोशी, नरेश व हितु कानोड़िया ने भी आशीर्वाद लिया।

उपमुख्यमंत्री आगमन : दि. 4.11.2018 को आचार्य श्री के दर्शन के लिए गुजरात के उपमुख्यमंत्री श्री नितिन भाई पटेल पधारे। आते-आते उनको देर हो गई। आचार्यश्री का सामायिक का समय होते ही आप ध्यान में बैठ गए। ध्यान मुद्रा में वे आचार्यश्री के दर्शन कर बोल उठे, ''इन महात्मा की शांत, वीतरागी, वात्सल्य भरी मुद्रा बिना बोले ही सब कुछ कह देती है। मात्र यहाँ आने से ही इनकी प्रज्ञाशीलता, आत्मज्ञान व अद्भुत प्रतिभा के दर्शन होते हैं। ऐसे अध्यात्म योगी निष्काम साधक के दर्शन से हृदय में विशेष प्रकार के आनंद की अनुभूति होती है।''

चातुर्मास निष्ठापना : दि. 7.11.2018 कार्तिक वदी अमावस्या को भगवान महावीर के निर्वाण महोत्सव दीपावली के दिन चातुर्मास निष्ठापन की क्रिया विधिपूर्वक आचार्य श्री ने ससंघ संपन्न की।

दीक्षाएँ : दि. 9.11.2018 को 3 दीक्षाएँ एक साथ गाँधीनगर के शांतिनाथ जिन मंदिर के पांडाल में संपन्न हुई। आचार्य श्री सुनीलसागरजी की प्रेरणा से मुक्तिकामी भव्य आत्माएँ त्याग तपस्या व संयम के शांतिपथ पर अग्रसर हो गई। इनमें महिला रत्न सुश्राविका श्रीमती सज्जनदेवी ज्ञानचंदजी मिंडा का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। वे और उनका परिवार आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के समय से संघ का संचालन करते आ रहे हैं। वे ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते सात प्रतिमाधारी तो रही हैं। उन्होंने क्षुल्लिका दीक्षा ली उनका नाम सज्ज्ञानमती माताजी रखा गया। इसी प्रकार बाल ब्र. विशाल (मिष्टु) भैयाजी दीक्षित हो मुनि सुमंत्रसागरजी व बा.ब्र. विशाल भैया, मुम्बई बोरीवली को मुनि दीक्षा देकर आचार्य श्री ने उनका नाम मुनि सुयत्नसागरजी रखा।

मानस्तंभ पंचकल्याणक : दि. 9.11.2018 से 14.11.2018 तक श्री शांतिनाथ जिनालय गाँधीनगर के बाहर नवनिर्मित मानस्तंभ पंचकल्याणक जिनबिंबों की प्राण प्रतिष्ठा भव्यातिभव्य रूप में संपन्न हुई। जिसमें गुजरात के अलावा दूर-दूर से हजारों भक्त सम्मिलित हुए। भगवान महावीर का पंचकल्याण बड़े हर्ष उल्लास से मनाया जाकर कई जिनबिम्बों की आचार्य श्री ने सूरिमंत्र देकर प्राण प्रतिष्ठा की तथा पाषाण मूर्तियों को पावन पूज्य बना दिया।

गुजरात के मुख्यमंत्री का आगमन

आचार्य श्री के मार्गदर्शन में गाँधीनगर राजधानी में हो रहे इस भव्यातिभव्य पंचकल्याण प्राण प्रतिष्ठा महामहोत्सव में सम्मिलित होने दि. 11.11.2018 को गुजरात के लोकप्रिय मुख्यमंत्री विजय रूपाणीजी पधारे। उन्होंने कहा कि ''आचार्य श्री में हम भगवान महावीर की झलक देख रहे हैं। आज इस हाई टेक्नोलॉजी के युग में इनकी यह कठिन साधना भौतिक सुख-सुविधा भोगियों के लिए विशेष आदर्श उदाहरण हैं। इनके शिष्यत्व में इतने सारे साधुगण भगवान महावीर के शांति, अहिंसा व कल्याण मार्ग पर चल अपनी आत्मसाधना कर रहे हैं, यह साक्षात देख मेरा मस्तक बार-बार इनके श्रीचरणों में श्रद्धा से नत-मत हो जाता है।'' आपने आचार्य श्री के बारे में कहा कि ''आप न केवल ज्ञानी, ध्यानी व अध्यात्म योगी हैं अपितु आप एक महान सर्जक, बहुभाषाविद्, प्राकृताचार्य व युगबोध देने वाले साहित्य सर्जक भी हैं। आपकी सारस्वत साधना की वृहद् शृंखला है। आज आप अपने विश्वमंगल कार्यों द्वारा एक साथ देश, समाज, साहित्य, संस्कृति व धर्म- अहिंसा, सत्य, प्रेम, दया, करुणा का भी संरक्षण कर रहे हैं। आप हिंदी के साथ-साथ हमारी प्राचीन प्राकृत व संस्कृत भाषाओं के ज्ञाता व प्राकृताचार्य हैं जिसमें हमारे सारे वेद, पुराण, शास्त्र की रचना होकर, विश्वगुरु के पद पर प्रतिष्ठित 'आलोकजयी' भारतीय संस्कृति का 'ज्ञानकोष' भरा है। आचार्य श्री अपनी आत्मसाधना व लोककल्याण की साधना के साथ प्राकृत साहित्य के सृजन की साधना कर प्राकृत भाषा व संस्कृत भाषा को पुनर्जीवित कर रहे हैं यह बड़े हर्ष का विषय है व हमारे लिए गौरव की बात है।'' आप सचमुच राष्ट्र गौरव हैं।

अद्‌भुत बुद्धि प्रतिभा संपन्न आचार्य श्री की भाषा प्रभुत्वता व वाक्‌ प्रभुत्वता से प्रेरित हो मुख्यमंत्रीजी ने धर्मसभा में गुजरात में भी 'प्राकृत भाषा एकेडमी' खोलने का आश्वासन दिया। गुजरात के शासन प्रमुख के सम्मान में दिगम्बर संतों की अहिंसा, करुणा व दया की कोमल भावनाओं की प्रतीक आचार्य श्री की पिच्छी से निकाले गए पंखों से बनी एक छोटी पिच्छी आचार्य श्री ने उन्हें आशीर्वाद स्वरूप भेंट की व आशीर्वाद देते हुए कहा कि धर्म व नीति के पथ पर चलते हुए राजनीति के पद पर ऊँचे उठते रहना।

चूँकि पंचकल्याणक के इस पावन दिन आचार्य श्री सुनीलसागरजी व आचार्य संघ की पिच्छिका परिवर्तन का दिन था। आचार्य को नई पिच्छी मुख्यमंत्री व संजय सरिया द्वारा भेंट की गई। इसलिए उनकी पुरानी पिच्छी में से कुछ मोरपंखों की छोटी सी पिच्छी बनाकर, आचार्य श्री के आशीर्वाद व भगवान महावीर की अहिंसा के प्रतीक स्वरूप स्मृति चिह्न के रूप में आचार्य श्री ने उन्हें यह कहते हुए यह छोटी सी पिच्छी भेंट की कि इन मधुर पंखों की तरह अपने परिणाम कोमल बनाए रखना। राजनीति के कंटकाकीर्ण रास्ते को धर्मनीति से सरल सहज बनाते हुए मनुष्य जीवन के परम लक्ष्य आत्म कल्याण के लिए भी वक्त निकालना। उन करुणामूर्ति गुरुवर ने प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री विजयजी रूपाणीजी को वात्सल्य भरे मंगल आशीर्वाद दिए व उनके नेतृत्व में प्रदेश व देश की सुख, शांति व समृद्धि की मंगल कामना की।

मानस्तंभ में प्राण प्रतिष्ठि के अंतिम दिन दिनांक 14.11.2018 को जिनबिम्ब की स्थापना की गई तथा नवस्तंभ में अंकलीकर परम्परा के चार महान युगनायक आचार्यों (1) प्रथम पट्टाचार्य आचार्य श्री आदिसागरजी, (2) द्वितीय पट्टाचार्यश्री महावीरकीर्तिजी, (3) वात्सल्य रत्नाकर आचार्य श्री विमलसागरजी व (4) तृतीय पट्टाचार्यश्री सन्मतिसागरजी महाराज (तपस्वी सम्राट) की चार मूर्तियाँ विराजित की गई।

तल मंजिल वेदिका में भगवान शांतिनाथ की मूलनायक व अन्य मूर्तियाँ विराजित की गई।

मंगल विहार : इस प्रकार आचार्य श्री सुनीलसागरजी का दि. 18.7.2018 से 14.11.2018 तक मंगल प्रवास गुजरात की राजधानी गाँधीनगर में रहा। आचार्य श्री ने अपने चातुर्मासिक मंगलवास में इस राजनीति की नगरी को धर्मनगरी बना दिया। आचार्य संघ का प्रातःकालीन स्वाध्याय विधायक लाइन्स के प्रांगण में होता रहा। निहार को विधानसभा परिसर था। यहाँ पर हर प्रकार के धार्मिक आयोजन उनकी प्रेरणा व मार्गदर्शन में भव्यातिभव्य पैमाने पर हुए। उनके सान्निध्य में मंडल विधानों में भक्ति की गंगा बही तो शिक्षण संस्कार शिविर ने जैन श्रमण संस्कृति की नींव मजबूत की। स्वाध्याय व वाचना द्वारा ज्ञानामृत धारा का प्रवाह कर भव्यात्माओं को तृप्त किया तो कितने ही सांसारिक दुःखों से तप्त संतप्त जीव/मनुष्य उनकी शरण में आ सुख शांति का पथ व पाथेय पाते रहे। कई-कई बीमार व दुःखी जन, समस्याग्रस्त लोग आचार्य श्री का आशीर्वाद पा तथा कुछ दिन उनकी निश्रा में रह स्वयमेव ठीक होते, जाते रहे।

यह चातुर्मास एक तरह से संपूर्ण चातुर्मास रहा जहाँ दीक्षा व समाधि विशेषज्ञ आचार्य श्री ने मुमुक्ष आत्माओं को जैनेश्वरी दीक्षा दे भगवान वर्द्धमान का पथ संवर्द्धन किया वहीं मुक्तिकामी आत्मा को सल्लेखना समाधि भी करवाई। पंचकल्याण प्रतिष्ठा में जहाँ मानस्तंभ में जिनबिम्ब विराजित करवाए वही वेदिका में भी भगवान विराजित हुए, यही नहीं जिनेंद्र देव के साथ जिनगुरुओं की मूर्तियाँ भी स्थापित हुई।

गाँधीनगर के छोटे से करीब 30-40 घर के जैन समाज का जन्म जन्मों का पुण्योपार्जन कहो उन्हें इस सदी के महान आचार्य व संघ का वर्षायोग प्राप्त हुआ और वहाँ निरंतर धर्म व ज्ञान की गंगा बहती रही व वृहद आयोजन हुए।

अध्यात्म योगी महामनीषी, वाङ्गमय महापुरुष, भारतीय संस्कृति के शाश्वत प्रतिमानों के विवेचक, कालजयी अनुपम कृतियों के सर्जक व प्रतिभाशाली प्रज्ञाशील चिंतक के व्यक्तित्व व कृतित्व के चुम्बकत्वाकर्षण से पूरा का पूरा राजभवन उनकी ओर, उनके धर्म व नीति के चुम्बकीय ध्रुव की ओर खिंचता चला गया। राजनीति दंगल के

दल-दल में फंसे राजनेता शांति की तलाश में इन शांति के पथ प्रदर्शक की निश्रा में चले आए। राज्यपाल श्री ओमप्रकाशजी कोहली, मुख्यमंत्रीजी श्री विजयजी रूपाणी, उपमुख्यमंत्री श्री नितिनजी पटेल, शिक्षामंत्री श्री भूपेंद्रजी चूड़ासमा, परबतभाई पटेल, कौशिकभाई पटेल आदि मंत्रीगण, कई सांसद तथा विधायकगण आचार्य श्री के दर्शन प्राप्त कर अपने आपको कृतार्थ करते रहे। मेयर श्री प्रवीण पटेल तथा कड़ी के विधायक के.पी. सोलंकी प्रायः प्रतिदिन आचार्य श्री की धर्मसभा में धर्म श्रवण कर आत्मिक शांति पाते स्वयं को तरोताजा करते रहे। राजनेताओं के गुरु सान्निध्य में आगमन ने यह सिद्ध कर दिया कि व्यक्ति कितने भी बड़े व ऊँचे ओहदे पर हो, पद से उपजे संघर्षों व तनावों से राहत पाने आचार्य श्री सुनीलसागरजी जैसे वात्सल्यमूर्ति धर्म गुरु की शरण में आते रहे हैं। धर्म, जाति, सम्प्रदाय से ऊँचे उठे समग्र मानवता के सच्चे हितैषी आचार्य श्री ने सबको समान रूप से आशीर्वाद दिया तथा राष्ट्र कल्याण के साथ आत्म कल्याण करते हुए जीवन सार्थक करने की प्रेरणा दी। उन्हें उपयोगी साहित्य भी भेंट किया। संपूर्ण चातुर्मास में आचार्य श्री इस राजनीति दंगल की नगरी में मंगल करते रहे और जनता से लेकर राजनेता व अभिनेता का हृदय परिवर्तित करते रहे।

और अंततः दिनांक 18.7.2018 को आचार्य श्री ने गाँधीनगर में जिस गौरव, गरिमापूर्ण वातावरण में मंगल प्रवेश किया था, आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने वृद्धिगत संघ के साथ गाँधीनगर के लिए महान उपलब्धियों व अवदानों के अम्बार छोड़ वहाँ से दिनांक 14.11.2018 को 'गिरनार अहिंसा पद यात्रा' के रूप में गाजों-बाजों व विशाल जनसमूह के साथ मंगल विहार कर दिया। आज आचार्य श्री व संघ को विदा करते समाज के आबाल वृद्धों की आँखों से आँसुओं का सैलाब उमड़ रहा था। गुरु वियोग में लोगों के मन व पैर भारी हो गए थे। जाते-जाते विरक्त आचार्य श्री ने उन गुरु आसक्त भक्तों से कहा कि ''मेरे पास जो अमूल्य निधि थी, दो-दो हाथ लुटा दी है। इसे खोना नहीं, ना ही संचित करके रखना अपितु वृद्धिगत करते रहना ताकि आपका कल्याण मार्ग प्रशस्त होता रहेगा। मेरा एक स्थान से दूसरे स्थान पर पद विहार मात्र विश्व कल्याण के लिए है। आप सबका कल्याण हो।'' आशीर्वाद देते वे महायोगी कल्याण मार्ग पर अग्रसर हो गए।

देश के प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदीजी की माताजी को आशीर्वाद

गाँधीनगर से मंगल विहार कर दि. 15.11.2018 को आपने पद विहार में देश के प्रधानमंत्री श्री नरेंद्रजी मोदी की वृद्धा माँ हीरा बा को मंगल आशीर्वाद दिया। माताजी आपके दर्शन कर धन्य हो गई। उनकी आँखों में ऐसे महान संत के दर्शन कर आनंद के अश्रु आ गए। वे बड़ी धर्म परायण माँ हैं, वे व्रत, उपवास करती रहती हैं। आपकी उम्र 96 वर्ष है। एक पूरी शताब्दी को जीने, देखने में मात्र चार वर्ष शेष हैं। आचार्य श्री ने उन्हें शास्त्र भेंट किए तथा पास बैठकर सल्लेखना समाधि की बातें बड़े सहज व सरल तरीके से समझाई व कहा, ''सांसारिकता के प्रति मात्र आसक्ति कम करना नहीं अपितु भोगोपभोग की सुविधाओं को क्रमशः त्याग करते रहना।'' व्रत, नियम व त्याग करने का महत्व सरल रूप में समझाया। आचार्य श्री ने मातुश्री को इसी प्रकार सरल व भद्र परिणाम बनाए रखने की प्रेरणा दी।

भारत जैसे महान राष्ट्र के प्रधानमंत्री की माँ होने के बावजूद भी वे सरल व सादा जीवन व्यतीत करती हैं। अतः उन्हें आचार्य श्री की बातें अपने लिए भली लगी। आचार्य श्री ने कहा कि ''आप इतने बड़े राष्ट्र के प्रधानमंत्री की माँ हैं यह आपके लिए बड़े सौभाग्य व गौरव की बात है और इससे भी बड़ी व गौरव की बात यह है कि आपका संस्कारित बेटा निःस्वार्थ रूप से राष्ट्र की सेवा करते हुए भी आप से प्रगाढ़ स्नेह रखता है। आप बड़ी पुण्यशाली व गौरवमयी माँ हैं। मेरा आशीर्वाद है आपका व आपके बेटे का व संपूर्ण परिवार का कल्याण हो। आपका जीवन धर्ममय शांति से व्यतीत हो।''

श्रीमद् राजचंद्र आश्रम : 15.11.2018 गाँधीनगर से विहार कर आपने कोबा में श्रीमद् राजचंद्र आश्रम में प्रवेश किया। यहाँ आप ससंघ की वहाँ के मुमुक्षुओं ने भव्य अगवानी की। यहाँ पर 15 नवंबर 2018 से 24 नवंबर 2018 तक बौद्धिक प्रतिभा संपन्न 200 से अधिक मुमुक्षुओं के लिए समयसार पर प्रवचन हुए। यह मंगल प्रवचन आपके लिए बहुत बड़ी उपलब्धि रही।

ये वही गुजरात के श्रीमद् राजचंद्र हैं जो गाँधीजी के धर्मगुरु श्री रायचंदभाई के नाम से तथा शतावधानी व्यक्ति के नाम से इतिहास प्रसिद्ध हैं।

यहाँ से दि. 25.11.2018 को आपका मंगल विहार अहमदाबाद के लिए हो गया, जहाँ पर एक माह तक धर्म प्रभावना कर आचार्य श्री ने ससंघ दिनांक 26.12.2018 को गिरनार के लिए मंगल विहार कर दिया।

आश्चर्य पूर्ण सल्लेखना समाधि

आचार्य श्री के 2018 गाँधीनगर चातुर्मास अगस्त से अक्टूबर 2018 तक के बीच की यह घटना है।

मुंबई निवासी श्रावक श्रेष्ठ श्री नाथूरामजी नावड़िया विगत 10 वर्षों से आचार्य श्री की भक्ति में तल्लीन थे। वे व उनका परिवार प्रतिवर्ष करीब 5-6 माह आचार्य संघ की आहार चर्या के लिए चौका लगाते तथा आचार्य श्री के साथ समस्त संतों की वैयावृत्ति व सेवा सुश्रुषा करते रहते। अतः आचार्य श्री के साथ संपूर्ण संघ की अनुकंपा उन पर थी।

एक दिन घोर असातावेदनीय कर्मोदय से उन्हें किसी जहरीले मच्छर ने काट लिया। धीरे-धीरे इन्फेक्शन सारे शरीर में फैल गया। जगह-जगह घाव होने लगे व मवाद भरने लगा जिससे काफी बदबू आने लगी। एक से एक अच्छे डॉक्टर को दिखाया गया पर कोई फर्क नहीं पड़ा बल्कि बीमारी बढ़ती जा रही थी। उनकी वेदना देखी नहीं जाती थी। उन्हें आईसीयू में भर्ती कर वेंटिलेटर पर रखा गया। हालात काफी नाजूक थे। उन्हें विभिन्न नलियाँ लगी थीं, ऑक्सीजन आदि दिया जा रहा था। डॉक्टरों ने 'गेंगरीन' बताया व कहा कि हाथ-पैर काटने पड़ेंगे। फिर भी बच जाए, कहा नहीं जा सकता। उनके इलाज पर लाखों रु. खर्च हो गए थे व प्रतिदिन महँगा से महँगा इलाज चल रहा था।

मुनिभक्त परिवार आचार्य श्री के कान्टेक्ट में था। आचार्य श्री व समस्त साधुगण उन्हें स्वास्थ्य लाभ का आशीर्वाद देते रहते व आचार्य श्री उन्हें गाँधीनगर लाने का संदेश भेज रहे थे।

लगातार संत सत्संग से परिवार इतना संस्कारी व सुसंस्कृत हो गया था कि उनकी पत्नी व पुत्र तक उन्हें आचार्य श्री की शरण में ले जाना चाहते थे परंतु उनके पूरे शरीर की रोज दिन में दो बार ड्रेसिंग होने व पट्टियाँ बंधी होने के बावजूद भी बदबू ज्यों की त्यों आ रही थी। ऐसे बदबूदार शरीर की इस हालत में उन्हें वहाँ कैसे ले जाएँ। आने वाले दर्शनार्थी व इतना बड़ा आचार्य संघ इनके शरीर की बदबू कैसे सह पाएगा। अतः परिजन ऐसी परिस्थिति में उन्हें आचार्य श्री के पास ले जाना कतिपय उचित नहीं समझते थे।

इधर आचार्य श्री एक श्रमणभक्त आत्मा का कल्याण करना चाहते थे। आचार्य श्री का सोचना था कि जो व्यक्ति स्वस्थ हालत में विगत 10 वर्षों से संघ की सेवा में लगा संघ की धर्म साधना का निमित्त बना रहा, उसका मरण सुधारना हमारा भी कर्तव्य है। आचार्य श्री यह सोचकर बार-बार उस धर्मनिष्ठ श्रावक को अपने पास लाने का संदेश भेजते रहते।

नाथूरामजी नावडिया की बीमारी में अस्पताल व इलाज के नाम पर लाखों रु. खर्च हो गए थे। कितने डॉक्टर व हॉस्पिटल बदले जा चुके थे। पर ठीक होने की बजाए उनकी हालत गंभीर होती जा रही थी। न उन्हें ठीक से होश-हवाश था न ही बोल पाते थे। दवाइयों के असर से या कहो शारीरिक स्वास्थ्य के कारण वे बेभान से वेंटिलेटर पर पड़े रहते। कभी-कभी उनकी तन्द्रा टूटती तो आँखें खोलकर देख लेते।

ऐसी ही स्थिति में वे वेंटिलेटर पर बेभान से पड़े थे कि उन्हें सपने में आचार्य श्री सन्मतिसागरजी ने कहा, ''जा, आचार्य श्री सुनीलसागरजी के पास चला जा।'' नावडियाजी आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के भी परम भक्त रह चुके हैं। अचानक उनकी तंद्रा टूटी, चौंककर आँखें खोली व चारों बाजू देखने लगे। अटेंडर को बुलाकर बेटे को बुला लाने के लिए इशारे से समझाया।

बहुत ताकत लगाकर कुछ कुछ अस्पष्ट बोलते हुए इशारे से स्वप्न वाली बात बेटे को बताई व आचार्य श्री सुनीलसागरजी के पास जाकर समाधि लेने की बात की जिद करने लगे। यद्यपि वे शारीरिक रूप से कमजोर हो गए थे पर उनकी सुनने-समझने की शक्ति यथावत थी। वे बार-बार इशारे से कह रहे थे कि ये सारी नलियाँ हटाओ और मुझे सुनीलसागरजी महाराज के पास ले चलो। वे उठने की कोशिश करने लगे। डॉक्टर लोगों ने समझाया कि वेंटिलेटर से हटाने के बाद वे मुश्किल से एक-दो घंटे ही जी पाएँगे।

बेटे ने आईसीयू से बाहर आकर परिजनों को सारी बात बताई। अंततः सब गुरुभक्तों ने मिलकर यही तय किया कि इनकी इच्छा व बड़े आचार्य महाराज का आदेश है इसलिए हमें इन्हें शीघ्रातिशीघ्र गाँधीनगर ले जाना चाहिए। कहीं ऐसा न हो कि फिर हमें बाद में पछताना पड़े। परिवार जब भी आचार्य श्री सुनीलसागरजी के पास इनके स्वास्थ्य की जानकारी भेजते हैं, तब वे करुणानिधि गुरुवर तो यही कहते हैं कि ''वे जिस भी हालत में हो, यहाँ ले आओ।''

अब परिजनों ने मिलकर निश्चित किया कि पहले आचार्य श्री को इनकी (नावडियाजी की) शारीरिक यथास्थिति से अवगत करा देना चाहिए कि सेप्टिक पूरे शरीर में फैल गया है। इनके शरीर पर जगह-जगह पड़े घावों में मवाद भर जाने के कारण दुर्गंध आती है। फिर ये उठ-बैठ भी नहीं सकते। विभिन्न नलियाँ लगी हैं जिस कारण शरीर सुइयों से जगह-जगह छिद गया है। डॉक्टर वेंटिलेटर हटाने की स्वीकृति नहीं दे रहे हैं। क्या ऐसी स्थिति में हम इन्हें गाँधीनगर आपके पास ले आएं। शीघ्र ही मोबाइल से श्रावकों के थ्रू आचार्य श्री तक संदेश पहुँचा दिया गया। आचार्य श्री ने आशीर्वाद देते हुए फिर यही कहा कि ''जैसे भी हैं वैसे शीघ्र ले आओ। यहाँ इनका सर्वोत्कृष्ट होगा।'' और इतनी दूर से पलक झपकते ही यह संदेश नावडियाजी के परिजनों तक पहुँचा दिया गया।

डॉक्टर की टीम के मना करने व समझाने के बावजूद भी परिजनों ने अपना दृढ़ निर्णय डॉक्टर लोगों को उन्हें अस्पताल से छुट्टी दिलाकर गाँधीनगर आचार्य श्री सुनीलसागरजी के पास ले जाने का सुना दिया। एम्बुलेंस में डॉक्टर लोगों की टीम के साथ वेंटिलेटर की व्यवस्था में नाथूलालजी नावड़िया को लेकर दिनांक 6.8.2018 सबेरे परिजन गाँधीनगर पहुँचे। समाधि हो जाएगी। यह सोचकर करीब 60-70 परिजन भी गाँधीनगर पहुँच गए और भी सब दूर रिश्तेदारों को खबर पहुँचा दी गई थी। अतः अन्यत्र जगहों से भी लोग गाँधीनगर पहुँच रहे थे।

आहारचर्या से लौटने पर आचार्य श्री को नाथूलालजी को लाने का समाचार परिजनों ने दिया। उनके लिए पहले से ही करुणामूर्ति गुरुवर ने मंदिर के बाजू वाले कमरे में व्यवस्था करवा दी थी। डॉक्टर लोगों ने उन्हें वेंटिलेटर सहित एम्बुलेंस से उतारकर कमरे में एक तखत पर लिटा दिया। सारे उपकरण यथावत लगे थे।

मंदिर प्रांगण में ही आचार्य श्री ने प्रत्याख्यान किया व आचार्य श्री के साथ सारा संघ विराजित था। वहाँ आकर नावड़ियाजी की तरफ से उनके पुत्रों व पत्नी ने उन्हें दीक्षा देने तथा सल्लेखनापूर्वक समाधिमरण कराने की प्रार्थना की। आचार्य श्री कमरे में गए, नावड़ियाजी को आशीर्वाद दिया, हालचाल पूछा। उन्होंने भी हाथ जोड़कर इशारे से दीक्षा देने की प्रार्थना की व समाधिमरण कराने की प्रार्थना की।

आहार पश्चात मंदिर प्रांगण में प्रत्याख्यान के वक्त आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने संघ से पूछा कि क्या इन्हें मरण सल्लेखना सहित दीक्षा दे दी जाए। नाथूलालजी के पुत्रों, सभी साधुगण एवं समाज ने नाथूलालजी की नाजुक हालत देखकर सहमति दे दी।

तब आचार्य श्री ने कमरे में जाकर डॉक्टरों की टीम से उन्हें वेंटिलेटर पर से हटाने व उन पर लगे सारे उपकरण हटाने को कहा। डॉक्टर ने कहा कि ऐसा करने पर वे मुश्किल से एक-दो घंटे जी पाएँगे। वे वेंटिलेटर हटाने को तैयार नहीं थे, पर आचार्य श्री के आदेश से उन्होंने सारे उपकरण हटा दिए। ऑक्सीजन, पेशाब नली, ग्लूकोज नली आदि सारी नलियाँ हटा दी गईं। शरीर पर बंधी आधी से अधिक पट्टियाँ भी हटवा दी गई। डॉक्टरगण हैरान परेशान थे कि यह सब क्या हो रहा है। आचार्य श्री ने उनका ड्रेसिंग करने को कहा। इसके बाद सारे डॉक्टर को बाहर जाने को कहा व नाथूलालजी को सहारे से उठाकर मंदिर प्रांगण में प्रत्याख्यान स्थान पर सहारा देकर पैदल चलाकर लाया गया। डॉक्टर टीम के लिए यह अजूबा था। आचार्य श्री के दर्शन कर उनकी आँखों से खुशी के आँसू बह निकले।

नाथूलालजी ने आचार्य संघ व एकत्रित समाज के समक्ष आचार्य श्री से क्षुल्लक दीक्षा देने हेतु विनयपूर्वक अरज की। आचार्य श्री ने एक बार पुनः समस्त साधुगणों, नाथूलालजी के परिजनों व समाज से पूछकर सहमति ली। सबके समक्ष आचार्य श्री ने नाथूलालजी से सारे लेन-देन व सल्लेखना के बारे में पूछा व सर्व सहमति से उन्हें क्षुल्लक दीक्षा दे दी। दीक्षा के लिए आजीवन तीनों प्रकार के आहार का त्याग कराया। दीक्षा के लिए उन्होंने उपवास भी किया व केशलोंच भी हुआ। उनका नाम क्षुल्लक सार्थकसागर रखा गया। उन्होंने सारी औषधियों व भोजन का त्याग कर एक दिन छोड़कर प्रासुक जल लेने का नियम ले लिया। उन्होंने सोलह कारण व्रत भी किया। बिना औषधि के आईसीयू की जगह मंदिर के साधारण से कमरे में बिना वेंटिलेटर के लकड़ी के तखत पर सोने लगे। प्रातः 5 बजे आचार्य श्री क्षुल्लक सार्थकसागरजी के पास आते। वात्सल्य और उद्‌बोधन से उन्हें संबोधते, सिर पर पिच्छी लगाकर आशीर्वाद देते। क्षुल्लक सार्थकसागरजी आचार्य श्री के चरण छूते हुए कहते कि आपने मेरा जीवन सार्थक कर दिया। जाने कितने जन्मों के पुण्य संयोग से मुझे आप जैसे हितकारी गुरु मिले हैं। आचार्य श्री अपने आत्म चिंतन के अमूल्य समय में ये उनके पास पंद्रह मिनट बैठते, उन्हें धर्मोपदेश देते, भेद विज्ञान समझाते व णमोकार मंत्र का जाप करने को कहते।

अभी भी उनके घावों से बदबू आती थी अतः नित्य उनका ड्रेसिंग होता व पट्टियाँ बदली जाती। वैसे संघ में से कोई न कोई साधु उनके पास रहता, उन्हें धर्म चर्या व आत्मकल्याण की बातें समझाते किंतु मुनि श्री सिद्धार्थसागरजी व श्री श्रुतांशसागरजी अधिकांश समय उनके पास रहते व शास्त्र, स्वाध्याय, स्तुति पाठ, स्तोत्र, समाधिमरण आदि सुनाते उन्हें धर्म में प्रवृत्त करते रहते। क्षुल्लक सार्थकसागरजी कहते रहते कि ''इन महान गुरुवर व इनके संघ की कृपा से उस हॉस्पिटल के नर्क से निकलकर गुरु सान्निध्य के स्वर्ग में आ गया व मुझे दीक्षा लेकर आत्म कल्याण करने का सुअवसर प्राप्त हो गया। कहाँ तो वे डॉक्टर कह रहे थे कि वेंटिलेटर हटाने पर घंटा-दो घंटा ही जी पाएँगे और यहाँ गुरु आशीष के वेंटिलेटर बिना मेरा जीवन कितना निरापद व आनंदमय व्यतीत हो रहा है। आचार्य श्री सुनीलसागरजी की करुणा, कृपा से मुझे नया जीवन प्राप्त हो गया है। वरना मेरी इस अवस्था में कौन साधु मुझे अपने पास रखता पर यहाँ मेरी सेवा सुश्रुषा में मुनिगण लगे हैं।''

एक दिन उपवास व एक दिन प्रासुक जल मात्र लेने के बावजूद भी अब वे बिना सहारे के प्रत्याख्यान में स्वयं चलकर आ जाने लगे। शाम को 5 बजे होने वाले प्रतिक्रमण में भी स्वयं जाकर बैठते। समाधि की संभावना से जो साथ में 60-70 लोग आए थे वे सब कब के चले गए। परिवार के लोग भी चले गए। अब तो क्षुल्लकजी पांडाल में भी जाने लगे व वहाँ माइक पर अपनी बात कहने लगे व आचार्य श्री को अपने हितैषी के रूप में भगवान का दर्जा देने लगे। आचार्य श्री तो उपदेश में यही कहते ''यह तो योग-संयोग है, क्षुल्लकजी की उम्र शेष होगी तथा इनका भवितव्य सुधरने वाला होगा इसीलिए उन्हें यह निमित्त मिला और मेरे साथ इतने त्यागी, व्रती साधुओं का सान्निध्य प्राप्त हो गया। यह तो इनका पिछले जन्मों का पुण्य, कर्मों का सुफल है।''

किंतु क्षुल्लकजी तो बार-बार सबसे यही कहते कि ''मैं तो मरणासन्न स्थिति में धर्म-कर्म भूला बेभान पड़ा था। मैंने

स्वयं जो अनुभव किया कि मेरे प्राण अब निकले, तब निकले। मेरी शारीरिक स्थिति तो ऐसी थी कि दूसरा तो मेरे पास खड़ा रहना दूर, मेरे लिए स्वयं के लिए पीड़ा व बदबू असह्य हो गई थी। मैं तो किसी भी प्रकार उस नरक की वेदना से छुटकारा पाना चाहता था। मैं आचार्य श्री की महानता का बखान किन शब्दों में करुँ कि उन्होंने मुझे सिर्फ आश्रय ही नहीं दिया अपितु मेरे शरीर व आत्मा दोनों की संभार कर रहे हैं। आचार्य श्री जैसा कोई महानतम तेजस्वी महान आत्मा ही मुझे वासना में से निकालकर उपासना में रत कर सकती है और घोर संक्लेश में से उबारकर समाधि तक ला सकती है।''

अब पूरे धार्मिक वातावरण में उनका समय गुजरने लगा। उनका कमरा मानो एक और मंदिर बन गया था। जहाँ मुनि श्रुतांशसागरजी व सिद्धार्थसागरजी के साथ कोई न कोई संत या श्रावक उन्हें जिनवाणी सुनाते रहते। जो भी मंदिरजी व आचार्य श्री के दर्शन के लिए आता वह क्षुल्लकजी के भी दर्शन करने अवश्य जाता। एक दिन वे ऊपर मंदिरजी में विधान में भी दो-ढ़ाई घंटे जाकर बैठे व भक्ति करते रहे। अब तो उनके जीवन का हर पल धर्ममय हो गया था। उनके परिणाम विशुद्ध हो गए थे। वे दोनों बार की सामायिक साथ करके बराबर साधुचर्यानुसार प्रायश्चित लेते।

15 सितंबर को सांबरकांठा के सांसद दीपसिंह राठौर दर्शनार्थ पधारे। 16 को अहमदाबाद पश्चिम के सांसद प्रसिद्ध न्यूरो सर्जन डॉ. किरीट सोलंकी पधारे। मुनिश्री की जीवंत साधना देखकर वे चकित रह गए। कहने लगे- विज्ञान के चमत्कार बहुत सुने पर यह धर्म का चमत्कार साक्षात् देख रहा हूँ।

दिनांक 27.10.2018 को शाम को उन्होंने प्रतिक्रमण किया। प्रायश्चित भी लिया। दिनभर जिनवाणी सुनते रहे कि उनकी सांस जोर-जोर से चलने लगी। आचार्य श्री से उन्होंने मुनि दीक्षा देने की विनय की। आचार्य श्री ने उन्हें तुरंत सभी प्रकार के आरंभ परिग्रह का त्याग करवा मुनि दीक्षा दे दी। उन्हें चारों प्रकार के आहार का त्याग करवाया, प्रायश्चित करवाया, पूरे संघ से क्षमायाचना करवाई और दिनांक 27.10.2018 को णमोकार मंत्र का बड़े समता व शांत भाव से चेतन अवस्था में जाप करते-करते प्राण विसर्जन कर दिए। इस प्रकार उन्होंने 83 दिनों तक समाधि सल्लेखना ले अपना आत्म परिस्कार किया। इसमें सहायक मुनि श्रुतांशसागरजी व सिद्धार्थसागरजी के साथ पूरा संघ, उनके परिजन व श्रावकगण भी थे।

साधु क्या और श्रावक क्या हर कोई उनकी इस अद्‌भुत समाधि की अनुमोदना कर रहा था। सब यही कहते सुने जा रहे थे कि हमारी भी समाधि मुनि सार्थकसागरजी जैसी चैतन्य अवस्था में धर्माराधना करते हुए हो तो हमारा दीक्षा लेना सार्थक हो जाएगा, जन्म सुधर जाएगा।

आचार्य श्री सुनीलसागरजी का कहना था कि ''मुनि सार्थकसागरजी की समाधि सल्लेखना जैन धर्म के इतिहास में उल्लेखनीय हैं। आचार्य श्री सुनीलसागरजी व संघस्थ त्यागी, व्रती, संयमी, तपस्वी साधु-संतों की साधना व निर्मल परिणाम व आचरण की वर्गणाओं तथा आचार्य श्री द्वारा विशेष रूप से ध्यान रखने के कारण सल्लेखनाधारी साधक मुनि श्री सार्थकसागरजी के शांत, निर्मल, सरल, सौम्य व भद्र परिणाम रहे। सहज रूप से चेतन अवस्था में उनका देवलोकगमन हुआ।

गाँधीनगर चातुर्मास की विशेष उपलब्धि : कोबा आश्रम

गाँधीनगर में कोबा नामक कस्बे में श्रीमद राजचंद्र आध्यात्मिक साधना केन्द्र स्थित है जहाँ सैकड़ों जैन-अजैन मुमुक्षु भाई-बहन तत्वज्ञानी आत्मार्थी आत्मानंदजी के निर्देशन में रहकर साधना करते हैं। वीतराग दिगंबर जिनमार्ग के पक्के श्रद्धालु स्वाध्यायप्रेमी चारित्र की भावना वाले बा.ब्र. सुरेश भैयाजी, बा.ब्र. कपिलजी, बा.ब्र. अलका बहनजी, बा.ब्र. जनकजी अपनी ज्येष्ठा शर्मिष्ठा बहनश्री व अन्य भक्तों के साथ गाँधीनगर चातुर्मास के दौरान अपने श्रद्धा सुमन अर्पित

करने समय-समय पर पधारते, हृदयस्पर्शी गुरु भक्ति करते, तत्व चर्चा करते। सच्चे गुरु के रूप में आचार्यश्री को स्वीकार लिया। उनके ज्ञान-ध्यान, चर्या, सहजता, सरलता से वे इतने प्रभावित थे कि दिल से शिष्यत्व स्वीकार कर लिया। चातुर्मास पश्चात विशेष आग्रह पर ससंघ आपका उस साधना केन्द्र में 8 दिवस अष्टाह्निका पर्व पर मंगल प्रवास, आध्यात्म के साथ अनमोल क्षण व्यतीत हुए। प्रशस्त शांत वातावरण, देश-विदेश से पधारे जिज्ञासु श्रावकगण, दोनों समय ध्यान, भक्ति, सत्संग, समयसार जी पर प्रवचन मानो चौथा काल उतर आया था। कितने ही भाई-बहनों ने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत, रात्रि भोजन त्याग स्वीकार किया। बा.ब्र. सुरेश भैयाजी ने कहा- हमने जैसा आगम में पढ़ा, वैसे परफेक्ट आचार्यश्री को पहली बार देखा। चारों ही आराधना में दक्ष हैं चतुर्थ पट्टाचार्य। उन्होंने अणुव्रत स्वीकार कर आगे दीक्षा लेने की भावना व्यक्त की। साथ ही ब्र. अलका बहनजी ने 2 प्रतिमा व्रत ग्रहण किये। आत्मानंदजी को स्वास्थ्य लाभ का विशेष आशीष देकर उत्तम समाधि हेतु विशेष समय व उद्‌बोधन देकर प्रेरित करते रहे।

आज भी हर माह आश्रम से भैयाजी व बहनजी आचार्यश्री के दर्शनार्थ जरूर आते रहते हैं।

अहमदाबाद में धर्म प्रभावना

इस प्रकार 2018 का गाँधीनगर चातुर्मास समाप्त कर कोबा में धर्म प्रभावना करते हुए आचार्य श्री अपने विशाल संघ के साथ महानगर अहमदाबाद पहुँचे। अहमदाबाद के गुरु भक्तों व धर्मानुरागियों के विशेष आग्रह व अनुनय विनय पर आपने अहमदाबादवासियों को एक माह दिया। इतने बड़े महानगर के इतने सारे उपनगरों के लिए मात्र एक माह बहुत कम समय था। पर आचार्य श्री का आगे का कार्यक्रम राजुल नेमि के गिरनार सिद्धक्षेत्र की 'अहिंसा पदयात्रा' का पहले से ही सुनिश्चित था। अहमदाबाद समाज का विशेष आग्रह तीन दिन का प्रवास 30 दिन में बदल गया। महानगरी की मुख्य सड़कें ब्लॉक हो जाती। चौराहों पर जाम लग जाता जब विशाल संघ आहार चर्या के लिए निकलता।

इतने अल्प समय में आपने वहाँ के कई उपनगरों के धर्मप्रेमियों के आग्रह व विनयभरी प्रार्थना पर ससंघ मंगल पदार्पण किया। वहाँ आपने अपनी 'ध्येयनिष्ठ सक्रियता' जीवन व जगत की समझ तथा 'जीवंत चेतना शक्ति' द्वारा अध्यात्म, आगम व हमारी महान सांस्कृतिक सत्ता का महत्व अपनी सलीकेपूर्ण वाणी से निरुपित किया। वे अपनी मंगलमयी वाणी के मांगल्य नीर से जन-मन के मैल को धोने का प्रयास करने लगे। वे समझाते थे कि विकारी मन व पापी तन से ईश्वर से भेंट करने की आशा व्यर्थ है, फिर चाहे जितने व्रत-उपवास, जप-तप कर लिए जाए, मुक्ति का महाकाम असंभव है। सर्वार्थसिद्धि की प्राप्ति स्वार्थ के दलदल से बाहर निकले बिना कदापि संभव नहीं है। आचार्य श्री की बातों में, उपदेशों में कोरी धार्मिकता, शास्त्रज्ञता व पंडितपना नहीं था अपितु उनके प्रवचनों में लोकहित की सच्ची भावनाएँ घुली-मिली थी जिन्हें लोग पुष्प की तरह बटोरते रहे। समाज ने पाया कि आचार्य श्री के प्रवचन जीवनोपयोगी अमूल्य मणियों की खान है जिनसे मानव सुख शांति व संतुष्टि की अमोलक निधियाँ प्राप्त कर जीवन सार्थक कर सकता है। आचार्य श्री के उद्‌बोधन उनके एकांत के अवकाश क्षणों के गहन चिन्तन सार है।

मानवीय संवेदनाओं के सूक्ष्म से सूक्ष्म संचलनों को अभिव्यक्त करने में निष्णात आचार्य श्री ने व्यक्ति व समाज को उसके यथार्थ रूप का परिदर्शन करा, उसे आदर्श जीवन जीने के लिए प्रेरित किया। अंततः अहमदाबाद के उपनगर उस्मानपुरा, शाहपुर, सोला, मेघाणीनगर, धनलक्ष्मी, जैन मिलन, हाटकेश्वर में धर्म प्रभावना करते हुए एक माह पश्चात सिद्ध क्षेत्र गिरनार के लिए पद विहार कर दिया। हाटकेश्वर में ही तपस्वी सम्राट आचार्यश्री सन्मतिसागरजी का समाधि दिवस प्रभावना पूर्वक मनाया। गुजरात के राज्यपाल महामहिम ओ.पी. कोहली जी पधारे थे। गुरु भक्त सौभाग्यमल कटारियाजी ने एक करोड़ का दान देकर सन्मति संत भवन का शिलान्यास किया। धर्म का बिगुल बजाते हुए सही मायने में तो आपने अहमदाबाद से ही विशाल जनसमुदाय के बीच से अपने भव्य धर्म संघ के साथ अपने पावन 'गिरनार

अहिंसा पदयात्रा महाभियान' का शुभारंभ किया। गगनभेदी जयकारों, पचरंगी धर्म ध्वजा पताका लहराते आप विशाल जनमेदिनी के साथ चल पड़े। अपनी अहिंसा पद यात्रा पर। सड़क के दोनों ओर प्रणम्य मुद्रा में विनीत हो खड़े जैन-अजैन नम आँखों से आपको विदा दे रहे थे। उनके हृदय की बात उनकी आँखें कह रही थीं... अभी न जाओ छोड़कर कि ये दिल अभी भरा नहीं, अभी तो हमने आपसे कुछ सुना, ग्रहण किया नहीं और गुरुवर आप चल पड़े।

अनासक्तयोगी कब किसकी सुनते हैं? सबको बोधि समाधि प्राप्ति का मंगल आशीर्वाद दे वे गिरनार की ओर चल पड़े। पहुँचने से बहुत पूर्व रास्ते में पड़ने वाले सड़क से लगे व सड़क से अंदर बसे गाँवों में आपके आगमन की खबर पहुँच जाती। जनवरी 2019 के नववर्ष में ठिठुराने वाली ठंड में भी गाँव के गाँव ढोल-तासों के साथ इन दिगम्बराचार्य की अगवानी के लिए उमड़ पड़ते। इन भक्ति भाव से भरे भोले-भाले ग्रामीणों में कहीं-कहीं ही अल्पसंख्यक जैन समुदाय के अंगुली पर गिनती के लोग होते बाकी तो विभिन्न धर्मों के आकंठ गुरु भक्ति में डूबे लोग। उन सबके लिए बाबा किस धर्म व जाति के हैं, इससे कोई लेना-देना नहीं था। वे इतना जानते थे कि ये बाबा नंगे पैर पैदल चलते हैं, इनके पास कुछ नहीं होता, कपड़े तक नहीं। एक बार खड़े-खड़े खाना खाते हैं और ये हमारे भले व हित की, जीवन सुधार की बातें समझाते हैं। इतना जानना उनके लिए काफी था और वे आचार्य श्री के प्रति वारे-न्यारे हो जाते।

निर्दोष चर्या प्रधान गुरुवर ने हाइवे रोड छोड़ कंकरीला रास्ता चुना। कारण उस रास्ते कुएँ थे। गाँव-गाँव वे निर्दोष आहार-निहार को लक्ष्य रख परीषह जय पूर्वक पूरा रास्ता तय कर रहे थे। हर साधु, माताजी के पाँवों में छाले पड़ गए, खून रिस रहा था पर किसी ने उफ तक न किया। बस सबका एकमात्र लक्ष्य गिरनार पहुँचना था।

इतनी ठंड में नंगे बाबा बड़ी दूर से पैदल चलकर अपने गाँव आ रहे हैं जानकर वे ग्रामीण गरम/गुनगुने पानी के कलश भर कर लेकर आ रहे थे। उस पानी से बाबाओं के कंकर-कांटे चुभे पांव धो नए गमछों से पोंछ कर साफ कर रहे थे तो कुछ कलशों में गरम दूध बाबाओं के लिए ला रहे थे, पर जब बाबा कुछ भी लेने से इंकार कर देते तब वे लोग उसी दूध से उनका पाद प्रक्षालन कर देते। हाँ बाबाओं को पूजने के लिए कुंकुम-चावल तो हर परिवार के पास होता जिससे वे पूजा करना चाहते। आचार्य श्री के साथ चल रहे श्रावकगण उनकी अंतरंग भक्ति से अभिभूत हो उनसे दूध, जल कुंकुम आदि ले उनसे विधिवत आचार्य श्री व अन्य साधुओं के पाद प्रक्षाल करवा देते। कई ग्रामीण दीप धूप से आरती उतारते। महिलाएँ माताजी की पाद पूजा करती। किसी किसी गाँव में ग्रामीणजन साथ में सिर पर उठाकर लाई खटिया बिछा आचार्य श्री से उस पर बैठने का आग्रह करते वह कहते कि बाबा हमारे गाँव, हमारे खेत-खलिहान, पशु-पक्षियों, नदी-नालों को आशीर्वाद देते जाओ तो कहीं किसी कुछ बड़े गाँव में चौराहे पर तखत बिछाकर बैठने व उपदेश देने, कथा सुनाने का आग्रह किया जाता। बाबाजी कुछ नहीं लेते इस बात से अनजान ग्रामीण बाबाजी को भेंट चढ़ाने भी जरूर कुछ न कुछ लाते।

आचार्य श्री उनकी निश्छल भक्ति से अभिभूत उन पर अपना अप्रतिम वात्सल्य लुटाते। उन्हें आत्म कल्याण व रत्नत्रय प्राप्ति का आशीर्वाद देते। वे उनके लिए जीवन सुधार की दिशा में भी सजग थे। वे मात्र विहार के लिए नहीं चल रहे थे। उनकी पदयात्रा अहिंसा यात्रा थी व सदा रहती है। अतः वे हर छोटे-छोटे गाँव में कुछ समय रुकते व लोगों की शराब, मांसाहार व तम्बाखू सेवन, जुआ-सट्टा खेलने जैसी बुरी आदतें छुड़ाते। बलि प्रथा व बड़वों-भोपों के प्रति अंधविश्वासों को मिटाते, एक व्यसन मुक्त स्वस्थ समाज का निर्माण करते चले जा रहे थे, उनका मानना है कि यदि प्रत्येक गाँव के दो-चार व्यक्ति सुधर जाएँगे तो वे अन्यों को सुधारने की दिशा में कदम उठाएँगे। इस प्रकार आचार्य श्री छोटे से छोटे गाँव में भी रुक ग्रामीणों को आशीषते व सरल भाषा में मंगल उद्बोधन गुजराती भाषा में देते।

ये ही धर्म, जाति, पंथ, संत, परंपरा से परे रहने वाले जैनेतर समाज के लोग विहार में आचार्य संघ की आहार चर्या, सामायिक, रात्रि विश्राम आदि स्थानों की बड़ी श्रद्धा व चिंता के साथ व्यवस्था कर रहे थे। वहीं ग्रामीण क्षेत्र के भौगोलिक

वातावरण से वाकिफ ये लोग किस छोटे से छोटे व अच्छे रास्ते से अगले पड़ाव पर आचार्य श्री को पहुँचना है यह भी तय कर देते ताकि आचार्य संघ को भूखे-प्यासे चलते हुए रास्ते में कठिनाइयों का सामना न करना पड़े। रास्ता न भटकें, लम्बा न चलना पड़े व शीघ्र गंतव्य तक पहुँच जाएँ। संध्या को ये गुरु भक्ति, आरती व वैयावृत्ति में शामिल हो उत्सवी माहौल बना रहे थे और कृपालु आचार्य भगवन उनको जीवन सुधार व हित की छोटी-छोटी बातें जीवन में उतारकर व्यवहार में ढालने व आचरण में अपनाने के लिए प्रेरित करते जा रहे थे। गाँवों के अबाल वृद्ध, स्त्री-पुरुष, गाँव का मुखिया व आम जन हो, आचार्य श्री अपनी वाणी की पारसमणि से उन सबका हृदय रूपान्तरित करते जा रहे थे। हर किसी को लगता बाबा हमारे हित की ही बात कर रहे हैं और इस प्रकार आचार्य श्री की 'अहिंसा पदयात्रा' सही रूप में सार्थक हो रही थी। आचार्य श्री जानते हैं कि हमारी सांस्कृतिक विरासत की रक्षा व सुरक्षा इसी ग्रामीण जन जीवन द्वारा होती रही है।

इस प्रकार आचार्य श्री ज्ञान की/धर्म की गंगा बहाते अपने गंतव्य पथ पर अग्रसर थे और श्रद्धालुजन उसमें डुबकी लगाकर विमल अमल हो रहे थे।

ठिठुरती ठंड में धर्मवृष्टि करते आचार्य श्री भव्य प्राणियों के अंतर को भिगो रहे थे। धर्मसंघ आचार्य श्री के नेतृत्व में कुंभार गाँव पहुँचा था कि वहाँ शर्मिष्ठा बहन ने क्षुल्लिका दीक्षा ले ली। आचार्य श्री ने दीक्षित साधिका का नाम शर्मिष्ठमती माताजी रखा। इस प्रकार आचार्य श्री की वचन वृष्टि से भव्य जीवों के भवान्तर कम होते जा रहे थे।

धीरे-धीरे गिरनार नजदीक आ रहा था। दूर से ही ऊर्जयन्त पर्वत या पर्वतों के उतंग आकाश को छूते शिखर दिखाई दे रहे थे। भावविभोर हो आचार्य गुरु के साथ सारे संघ के शीश गिरनारपति नेमि प्रभु के चरणों में झुक गए। पथ विहार में कई बार आचार्य श्री ने विवाह, बारात व दूल्हा-दुल्हन को देखा था और एक ओर नेमिप्रभु का रिश्ता। बारात को तोरण तक पहुँचने से पूर्व ही राजुल से नौ भवों का रिश्ता तोड़कर प्रभु इस गिरनारी पर आ विराजे। रोती बिलखती राजकुमारी राजुल भी प्रभु के पीछे-पीछे यहाँ तक दौड़ी चली आई। सांसारिक मोह-माया के बंधनों को तोड़ प्रभु आपने अपने साथ राजुलमती का भी उद्धार कर दिया। उन गिरनार पर्वत के शिखरों को देख सोचते-सोचते आचार्य श्री श्रद्धावनत हो गए। अब तो बस शीघ्रातिशीघ्र उस सिद्धभूमि की चन्दनमयी माटी को मस्तक पर लगाने का उतावलापन था।

जब दि. 17.1.2019 की मंगलबेला में आपकी 'अहिंसा यात्रा' गिरनार की तलहटी जूनागढ़ में पहुँच गई, तब भी आपको विश्वास नहीं हो रहा था। गणिनी आर्यिका शुभमती माताजी सर्वप्रथम ससंघ आपकी भव्य अगवानी के लिए पहुँची। आर्यिका माताजी ने ससंघ आपकी भव्य अगवानी करते हुए चरण वंदना की। गुरु भाई-बहिन के संघ का महामिलन हुआ।

इसी प्रकार गिरनार वाले बाबा आचार्य श्री निर्मलसागरजी ने भी आपकी शानदार भव्य अगवानी की व गिरनार की भूमि पर इतने बड़े संघ के साथ मंगल प्रवेश पर आपका भावभीना अभिनंदन किया। गिरनार में पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी के मंगल पदार्पण पर आपने कहा कि प्राकृताचार्य सुनीलसागरजी के रूप में कुन्दकुंदाचार्य मानो इस सिद्ध भूमि पर पुनः अवतरित हो गए हैं। पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी के इतने बड़े संघ के साधुओं को इस भूमि पर देखकर उन्हें चतुर्थकाल की याद ताजा हो आई। आचार्य कुंदकुंद प्राकृत भाषा के प्रकांड विद्वान थे उन्होंने इसी गिरनार की भूमि से वितंडावादियों से शास्त्रार्थ कर अपनी विद्वता से जिनवाणी व दिगम्बरत्व की बड़ी प्रभावना की थी। आचार्य सुनीलसागरजी भी दिव्य प्रतिभा धारक, आगम के ज्ञाता, महान साधक, प्राकृताचार्य हैं। आप की विद्वता को देख आचार्य श्री निर्मलसागरजी ने उन्हें इस युग का कुंदकुंद निरुपित किया। अपने उद्बोधन में उन्होंने कहा ''आज प्राकृताचार्य सुनीलसागरजी उन्हीं के पद चिह्नों पर चल रहे हैं। ये उद्भट विद्वान, विलक्षण प्रतिभा के धनी युवाचार्य जैन धर्म के

मार्तंड हैं।'' आदि आदि आचार्य श्री निर्मलसागरजी ने उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की।

आचार्य श्री के साथ ही पूरा का पूरा संघ गिरनार की पंच पहाड़ियों के शीघ्रातिशीघ्र दर्शन के लिए लालायित था। आचार्यश्री 17.1.2019 को ही सामायिक के बाद पूरे संघ के साथ निर्मल ध्यान केन्द्र से बंडीजी की धर्मशाला में पहुँचे और 18.1.2019 को सूरज की पहली किरण के साथ ही गिरनार यात्रा की सारी योजना समझा दी। आज की रात आचार्य श्री ठीक से सो नहीं पाए। पूरी रात विवाह का मंडप छोड़ गिरनार पर आ तपस्यारत नेमिप्रभु की भावमूर्ति बार-बार उनके जेहन में उभरती रही। आचार्य श्री उन मुक्तिकामी नेमि प्रभु से स्वयं के लिए भी उन जैसी मोक्ष सिद्धि की साधना भक्ति की प्राप्ति की कामना करते रहे।

18.1.2019 को समय से पहले सारा संघ गिरनार वंदना के लिए तैयार था। आचार्य श्री प्रसन्न मुद्रा में उत्साह से भरे जैसे ही कक्ष से बाहर निकले, सकल संघ का उत्साह देखा तब आचार्य श्री ने सबको प्रेरित करते हुए कहा कि ''पर्वत चढ़ते हुए भी ऐसा ही उत्साह बनाए रखना। नेमिप्रभु जब इस पर्वत पर चढ़ गए तो आओ चले, हम सब भी उनके पदचिह्नों पर चल पहाड़ चढ़ें व प्रभु से मुक्ति की कामना करें'' और चल पड़े सब गिरनार की मंगल यात्रा पर।

नंगे पैर बर्फ सी ठंडी धरती पर चलते व तीर सी चुभती बर्फीली ठिठुराने व बदन को अकड़ा देने वाली हवाओं के बीच परिषह सहता सकल संघ आचार्य श्री के पीछे गिरनार यात्रा की कठिन चढ़ाई के अभियान पर चल पड़ा। ज्यों-ज्यों अलसुबह आचार्य श्री पर्वत पर चढ़ते जा रहे थे त्यों-त्यों कड़कड़ाती ठंडी हवाओं का आतंक बढ़ता जा रहा था। जैसे गुरु वैसे शिष्य। भेद विज्ञान के ज्ञानी निर्मोही साधक शरीर से निर्ममत्व रख टोंक की ओर बढ़ रहे थे। परिषह सहते आचार्य श्री ने गिरनार की चढ़ाई कर पाँचों टोंक की वंदना की।

लौटते में आचार्य श्री ने प्रभु प्रद्युम्न की चौथी टोंक पर पूरे संघ के साथ ध्यान किया। द्रव्य संग्रह, समयसार व नियमसार की निम्नलिखित विभिन्न गाथाओं के माध्यम से आपने समस्त साधुओं को ध्यान करवाया।

मा मुज्झह मा रज्जह मा दुस्सह इट्ठणिट्ठ अत्थेसु
थिर मिच्छह जह चित्तं विचित्तं- झाणप्प-सिद्धीए।।48।। -द्रव्य संग्रह

अहमेक्को खलु सुद्धो दंसणणाण मइयो सदा रूवी।
णवि अत्थ-मज्झ-किंचि वि अण्णं परमाणु मेत्तंपि।।39।। -समयसार

केवलणाण सहावो केवल दंसण सहाव सुह मइयो।
केवल सत्तिसहावो सोहं इदि चिंतदे णाणी।। -नियमसार

इन गाथा सूत्रों का आधार लेकर आपने शिष्यों को आत्मध्यान कराया। गाथाओं के सार से आपने स्वयं भी आत्मतत्व का चिंतन किया, शिष्यों को भी अपनी भावपूर्ण वाणी से गहरे में उतार दिया।

23.1.2019 को आचार्य श्री जिस शेषावन में नेमिनाथ भगवान ने पंचमुष्टि केशलोंच किया था, जैन, इतिहास में पहली बार आचार्य श्री ने भी इस शेषावन में एक शिला पर बैठकर इतनी ठंड में केशलोंच किया।

दिनांक 19.1.2019 से आचार्य श्री ने गिरनार के एक माह के मंगल प्रवास में षट्खंडागम पुस्तक 10 की वाचना शुरू की व शिष्यों तथा उपस्थित श्रावक समुदाय को ज्ञान बोध कराया। यह वाचना 19.1.2019 से 17.2.2019 तक चली। ज्ञातव्य हो कि इसी गिरनार की चन्द्रगुफा में ईसा की प्रथम सदी 62 ई में आचार्य श्री धरसेन ने नरवाहन व सुबुद्धि दो युवा पात्र मुनियों को बुलाकर, परीक्षा ले उनका नाम पुष्पदंत व भूतबलि रख उन्हें 'जिनवाणी' को सुरक्षित व संरक्षित रखने के लिए षट्खंडागम का ज्ञान दिया था। आचार्य श्री ने उन्हीं धरसेन आचार्य की स्मृति में इस महान ग्रन्थ की वाचना प्रारंभ की। वे हृदय से उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करते नहीं थकते थे। आचार्य श्री धरसेन महाराज के प्रति कृतज्ञ थे कि उन्हीं के महान त्यागपूर्ण अवदान के कारण आगम आज हम तक पहुँच पाया है। हम भगवान

महावीर का बताया पथ अपना सके हैं। भगवान महावीर की वाणी हम सुन सके हैं व औरों को सुना रहे हैं।

आचार्य श्री गिरनार के एक माह के मंगलवास में पूरा जीवन जी लेना चाहते थे। वे नेमिप्रभु की निर्वाण स्थली व राजुलमती की साधना स्थली से उर्जस्वित हो अपने रत्नत्रय को सुदृढ़ कर लेना चाहते थे। आत्मा की आराधना कर लेना चाहते थे क्योंकि वे जानते थे कि साथ वही जाने वाली है। अतः वे अपने इस लम्बे प्रवास में गिर के जंगल में जाकर शिला तल्प पर कभी खड्गासन तो कभी पद्मासन में ध्यान मग्न हो जाते। वे अपने आत्म स्वरूप को निहारते अपने स्वरूप को निखारते रहते। वे अपने चिंतन से चैतन्य को जागृत करते कि जो नेमिप्रभु का चरित्र है वह मेरा भी बन जाए। हम भी कर्मरूपी बाणों से मुक्त हो उनकी तरह निर्वाण प्राप्त कर लें। आचार्य श्री की नेमिप्रभु में इतनी प्रगाढ़ श्रद्धा है कि गिरनारी के कण-कण में उन्हें नेमिप्रभु के दर्शन हो रहे थे। इस गिर के जंगल में लगभग 450 हिंसक पशु शेर, चीता, भालू आदि जानवर रहते हैं पर उनकी पवित्र वर्गणाओं से कभी किसी पशु ने उनको कोई नुकसान नहीं पहुँचाया।

एक दिन इसी जंगल में शिष्य समुदाय के साथ ध्यान कर शिला खंड पर आपने ब्राह्मी लिपि शिष्यों को सिखाई। यह वही ब्राह्मी लिपि है जिसे भगवान आदिनाथ ने अपनी पुत्री ब्राह्मी को सिखाई थी। इस प्रकार प्राकृत भाषा के साथ-साथ आचार्य श्री को ब्राह्मी लिपि का भी ज्ञान है। इस प्रकार इस महान तीर्थ क्षेत्र में कभी आपने अपने प्राकृत ज्ञान से कुंदकुंदाचार्य की याद ताजा कर दी तो कभी षट्खंडागम वाचना द्वारा धरसेन महाराज को जीवंत कर दिया। गिर के जंगल में ध्यानस्थ रह चतुर्थ काल को साकार कर दिया तो कभी ब्राह्मी लिपि द्वारा आर्यिकामाता ब्राह्मी की याद ताजा कर दी। और शेषावन में केशलोच करके तो अपने नेमिप्रभु के पदचिह्नों पर चलने की कोशिश की। कुल मिलाकर अपनी साधना से आपने सिद्ध कर दिया कि आपका एकमात्र लक्ष्य सिद्धत्व प्राप्ति ही है और आप गिरनार में नेमिमय हो गए।

आप जिस राह से गुजरते इतिहास रचते चले जा रहे थे। दिनांक 10.2.2019 इतिहास में पहली बार आपने गिरनार की पहली टोंक पर तीन जैनेश्वरी दीक्षाएँ दीं। दीक्षित क्षुल्लक श्री शैलेषसागरजी, क्षुल्लक श्री शैलेंद्रसागरजी व क्षुल्लिका सुनेमिमती माताजी ने इस नेमिप्रभु की सिद्धभूमि से स्वयं सिद्ध भूमि पर जाने की तैयारी शुरू कर दी। इस पवित्र भूमि की प्रभावना से इन तीनों मुमुक्षुओं की भावना दीक्षा लेने के लिए प्रबल हो गई और इन्होंने संयम धारण कर लिया।

दिनांक 18.2.2019 को गिरनार की भूमि पर आपने एक और नया कीर्तिमान रचा। यहाँ पर आपने पंचवर्षीय युग प्रतिक्रमण प्रथम बार संपन्न कराया। इन्हीं दिनों मुंबई में चातुर्मास संपन्न कर मुनि श्री शुभमसागरजी व मुनि श्री श्रुतेशसागरजी भी गुरुदर्शन का लाभ लेने व तीर्थ वंदना के लिए यहाँ आ पहुँचे। उधर अकोला से मुनि श्री सुवंद्यसागरजी व सूरत से मुनिश्री विकसंत सागरजी भी आचार्य श्री के दर्शन व तीर्थ वंदना के लिए आ गए।

बड़े उत्साह व प्रभावना से तीर्थ पर आचार्यश्री के साथ सकल संघ का समय व्यतीत हो रहा था। तभी आचार्य श्री के पुराने भक्त राजस्थान खमेरा के कराड़िया परिवार ने यहाँ 29 जनवरी से 6 फरवरी तक सिद्धचक्र महामंडल विधान का आयोजन करवाया। इस प्रकार आचार्य श्री ने इस एक माह के तीर्थ प्रवास के एक-एक पल को जीवंत कर दिया। गिरनार प्रवास में गुजरात सरकार के मंत्री कुंवरजी बावड़िया, जूनागढ़ की मेयर आम्बा शक्तिजी , एस.पी., थानेदार, महंत मुक्तानंद आदि आपके दर्शन को आए।

शत्रुंजय के लिए विहार

अंततः गिरनार की भूमि पर एक मास का वक्त धर्म साधना में कैसे व्यतीत हो गया पता ही नहीं चला। अणु से विराट तथा संसारी से सिद्ध बनने का संकल्प ले आचाार्यश्री ने इस कण-कण पूज्य पावन गिरनारी से विदा ले आत्म

प्रगति के लिए शत्रुंजय महातीर्थ की ओर दिनांक 20.2.2019 को कदम बढ़ाते हुए विहार कर दिया।

दिनांक 21.2.2019 को जूनागढ़ में आचार्य श्री विभवसागरजी व संघ से आपका भावभीना मिलन हुआ। ज्ञातव्य हो कि आचार्य श्री विभवसागरजी भी गणेशप्रसाद वर्णी संस्कृत विद्यालय मोराजी सागर में आपके सहपाठी रहे हैं। आप लोगों ने वहाँ साथ-साथ लौकिक और धार्मिक शिक्षा गृहण की। वहाँ की धार्मिक शिक्षा का आपकी ही तरह इन पर भी विशेष प्रभाव पड़ा और वे भी आत्मकल्याण के लिए संयम के पथ पर अग्रसर हो गए। वर्षों बाद दोनों एक-दूजे से मिलकर बड़े प्रसन्न थे।

दो विद्वान, आगम के उद्‌भट ज्ञाता आचार्यों का महामिलन होगा तो तत्त्व चर्चा व ज्ञान की बातें तो होगी ही। अपनी दिनचर्या के अलावा दोनों आचार्यों का अधिकांश समय ज्ञानानंद यात्रा में ही व्यतीत हुआ। यहाँ से आचार्य श्री विभवसागरजी ने गिरनार की ओर विहार कर दिया। जूनागढ़ में दोनों आचार्यों की आहार चर्या साथ-साथ संपन्न हुई।

दिनांक 3.3.2019 को आपने शत्रुंजय महातीर्थ में प्रवेश किया। यहाँ से तीन पांडव युधिष्ठिर, भीम व अर्जुन, द्रविड़ राजाओं और अन्य आठ कोटि मुनिराजों ने शिवपद प्राप्त किया। शत्रुंजय की भूमि पर चरण रखते ही आपने इन सबकी बड़ी भक्ति से भाव वंदना की। आपके सान्निध्य में पाँचों पांडवों की मूर्तियाँ पहाड़ पर अध्यक्ष कुमारभाई शाह, पारस जैन मुंबई, श्रेणिक भूता संतरामपुर, सुदीप जैन दाहोद के द्वारा विराजमान की गई।

दिनांक 4.3.2019 को आपने शत्रुंजय पर्वत की वंदना की। रात्रि विश्राम वहीं कर सिद्धों की आराधना की। पूर्व में भी आप कई जगह पहाड़ियों पर रात्रि विश्राम करते एवं आत्म ध्यान करते रहे हैं।

3700 श्वेताम्बर मंदिरों के बीच पहाड़ी पर श्वेत पाषाण का यह शांतिनाथ दिगंबर जैन भव्य व मनोहर मंदिर दूर से ही आनंदित कर देता है। मनोहारी प्रभु मूरत के दर्शन कर आचार्य श्री के मन आँखें व हृदय पावन हो गए। इतने मंदिरों के बीच श्वेत पाषाण का वह मंदिर 'स्वर्ण मध्य हीरे' जैसा चमक रहा था।

दिनांक 5.3.2019 को वहाँ तलहटी के मंदिर व हूमड़ धर्मशाला में परंपरा के पट्टाचार्य आचार्य श्री आदिसागरजी का 75वाँ संयम महोत्सव मनाया।

जहाँ से आपने भावनगर के लिए विहार कर दिया। यहाँ पर आपके सान्निध्य में आचार्य श्री सन्मतिसागर भवन (संत सदन) का भूमि पूजन व शिलान्यास हुआ। भावनगर की सांसद भारती बेन शियाल व मेयर दर्शनार्थ पधारे। दिनांक 13.3.2019 से 21.3.2019 तक अष्टाह्निका में सिद्धचक्र महामंडल विधान आपने संपन्न करा महती धर्म प्रभावना की। आपके सान्निध्य में हुए इस महामंडल विधान में पूरा भावनगर व आसपास के क्षेत्रों से लोगों का हुजूम उमड़ पड़ा। भावनगर से विहार कर घोघा तीर्थ का दर्शन किया। घोघा से बड़ौदा के लिए विहार कर दिया। सिर्फ 3 दिन के लिए बड़ौदा आगमन, 17 दिवसीय होकर ऐतिहासिक महावीर जयंती का कार्यक्रम संपन्न हुआ जिसमें 20 हजार से अधिक लोगों ने उपस्थिति दर्ज कराई।

यहाँ से 5 मई से 10 मई 2019 तक वागोल, कुशलगढ़ (राज.) पंचकल्याणक करवाने जाने के लिए आपने बड़ौदा (गुजरात) की ओर मंगल विहार कर दिया। आपके आध्यात्मिक प्रभाव से लोग आध्यात्मिक रंग में रंगे नजर आ रहे थे। आप सद्‌भावना, प्रेम, सौहार्द्रता व वात्सल्य के बीज बिखेरते लोगों में खुशियाँ बांटते विहार पथ पर अग्रसर थे।

* * *

भगवान महावीर के संदेशों को जन-जन तक पहुँचाते, धर्म प्रभावना करते आप भावनगर से बड़ौदा (गुजरात) 3 अप्रैल को पहुँचे। यहाँ पर आपकी प्रेरणा से निर्माणाधीन श्री 1008 अजितनाथ दिगम्बर जैन जिनालय तथा तपस्वी सम्राट आचार्य सन्मतिसागर संत भवन का काम चल रहा है। सोसायटी का नाम भी आपकी प्रेरणा से तपस्वी सम्राट आचार्य 108 श्री सन्मतिसागरजी गुरुदेव के नाम पर रखा गया। यहाँ दो संत भवन बनाए गए हैं जिनमें कम से कम

50 पिच्छी (साधु) चातुर्मास कर सकें। आचार्य श्री सुनीलसागरजी के दिशा निर्देशन में सारा काम वास्तु के अनुसार हो रहा है। इन पन्द्रह दिनों के मंगलवास में आपने वास्तु का सूक्ष्म निरीक्षण किया। यद्यपि सोसायटी का नाम आयोजकों ने आपके नाम पर रखने का आग्रह किया था किन्तु यशकीर्ति वांछा से दूर गुरु भक्त शिष्य ने नामकरण अपने गुरु के नाम पर करवा अपनी महानता का परिचय दिया।

सन्मति पार्क में 6 से 14 अप्रैल तक कल्पद्रुम महामंडल विधान का आयोजन हुआ। यहाँ से त्रिदिवसीय रथयात्रा के साथ कारेली बाग होकर माजलपुर पहुँचे जहाँ महावीर जयंती का महामहोत्सव संपन्न कर वाघोड़िया होकर पावागढ़ की वंदना कर संतरामपुर पहुँचे। यहाँ से 1 मई को आपने वागोल पार्श्वनाथ के लिए विहार कर दिया। अति अल्प समय होने के कारण इस भीषण गर्मी 45-47 डिग्री पारे के बावजूद आप प्रतिदिन 20-21 कि.मी. पदयात्रा कर रहे थे। आग उगलती धरती व गर्म लू लपटों के बीच चलते हुए आपका दिगम्बर बदन झुलस गया। पाँवों में फफोले आ गए, तिस पर आए दिन आहार में अंतराय आ जाता था। तथापि परिषहजयी संत अपने अभीष्ट लक्ष्य की ओर अग्रसर थे। कुशलगढ़ समाज ने 3 मई को कुशलगढ़ में आपके भव्य मंगल प्रवेश व अगवानी की तैयारी कर रखी थी। पर उन्हें निराशा ही हाथ लगी। आचार्य श्री के बिना पंचकल्याणक का कार्य सूना-सूना लग रहा था।

वागोल पंचकल्याणक

ऐन 5 मई को सबेरे 9 बजे जब सूरज जमकर अपना तेवर दिखा रहा था, आचार्य श्री ससंघ वागोलजी पहुँचे। आसपास के क्षेत्रों से व दूर-दूर से आए करीब दस हजार लोगों ने आपकी ऐतिहासिक अगवानी की। आप समेत सारे साधुगण सिर से लेकर पैर तक पसीने में नहा गए थे। लगातार धूप में चलते रहने के कारण पैर सूज गए थे। बदन काला पड़ गया था किन्तु किसी के भी चेहरे पर कष्ट साध्य पदयात्रा के विषाद की कोई रेखा नहीं थी। आचार्य श्री सहित सभी संतों ने प्रसन्न मना वागोल की उस पवित्र भूमि पर 5 मई 2019 सुबह 9 बजे चरण रखे। सूरज रास्ते भर सुबह से ही अपना रौद्र तेवर दिखा रहा था पर अपरिग्रही, निस्पृही संत, आचार्य गुरु के साथ नंगे पैर ऐसे चल रहे थे जैसे फूलों से पटी राह पर चल रहे हों। सच है, कल्याण के मार्ग पर चलने वालों के लिए क्या फूल और क्या काँटे, सभी बराबर होते हैं। आचार्य श्री को वागोल पार्श्वनाथ के चरणों में शीश नवाते जो खुशी हो रही थी, वह शब्दातीत थी। राह की परिषह जन्य पीड़ा कबकी कपूर की तरह काफूर हो गई थी।

यद्यपि शहर से दूर वागोल अतिशय क्षेत्र पर इतने बड़े संघ व इतने बड़े पट्टाचार्य श्री की व्यवस्था को लेकर कुशलगढ़ समाज काफी चिन्तित थी लेकिन क्षण भर में प्रतिकूलताओं को अनुकूलता में ढालने में माहिर आचार्य श्री ने जो भी व्यवस्था थी, उसमें संघ को सुव्यवस्थित कर आत्मसाधना के अनुकूल बना दिया। आचार्य श्री की सरलता, उदारता व आत्मीय वात्सल्य पा कुशलगढ़ समाज व पंचकल्याणक आयोजक कमेटी कृतकृत्य हो गई। इतने बड़े आचार्य और इतने सरल हृदय? समाज ने तो कल्पना भी नहीं की थी।

आपने देखा कि दक्षिण राजस्थान के वागवर क्षेत्र की धर्मधरा कुशलगढ़ अन्देश्वर पार्श्वनाथ के समीप हिरण नदी के तट पर प्राचीन अतिशय क्षेत्र वागोल में 1008 पार्श्वनाथजी के अति प्राचीन जीर्ण-शीर्ण मंदिर के स्थान पर उसी की प्रतिकृति रूप में लाल पाषाण का नया भव्य व सुंदर पार्श्वनाथ जिनालय व संत सदन का निर्माण कराया गया। उसी मंदिर में पंचकल्याणक बाद वेदीजी में प्रतिमाओं को विराजित किया जाना था। पास में ही खड़गासन श्याम वर्ण की भव्य व मनोहारी पार्श्व प्रभु की विशाल उत्तुंग प्रतिमा विराजित है। पार्श्व प्रभु के दर्शन कर आचार्य श्री का रोम-रोम पुलकित हो गया। जन्म कल्याणक के दिन विशाल जनमेदिनी को देख आचार्य श्री बोल पड़े कि पार्श्व प्रभु ने जंगल में भी मंगल कर दिया। यह छोटा सा वागोल अतिशय क्षेत्र आज स्वर्ण नगरी बनारस को भी मात कर रहा है जहाँ

भगवान का जन्मकल्याणक हो रहा हो। बनारस गंगा नदी के तट पर स्थित है तो वागोल हिरण नदी के तट पर। म.प्र., राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक आदि देश के दूरदराज के प्रांतों से भी भक्तों का सैलाब उमड़ा चला आ रहा था। 10 हजार क्षमता वाला पांडाल छोटा पड़ गया पर प्रभु व आचार्य श्री की कृपा से व्यवस्था सुव्यवस्था बनी रही। जरा सी भी अव्यवस्था न हुई।

जन्म कल्याणक के दिन देश के विभिन्न प्रांतों के गणमान्य श्रावक श्रेष्ठी पधारे थे। उनमें इंदौर से सर सेठ हुकुमचंदजी के व देवकुमारसिंह के परिवार से उनके सुपुत्र प्रदीपजी कासलीवाल भी वागोल क्षेत्र में पधारे। आपके साथ इंदौर से समाज के अन्य पदाधिकारीगण भी पधारे थे। आप सबने आचार्य श्री को सिद्धक्षेत्र सिद्धवरकूट (जहाँ के आप ट्रस्टी हैं) पर ससंघ चातुर्मास करने के लिए श्रीफल भेंट किये व यह भी कहा कि चातुर्मास करने के पश्चात् हम वहाँ से संघ की अष्टापद यात्रा भी करवाएँगे। ज्ञातव्य है कि अष्टापद के निर्माण में आपके पिताजी देवकुमारसिंहजी कासलीवाल का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उज्जैन चातुर्मास कर मुनि अवस्था में जब आचार्य श्री इंदौर होकर (सन् 2001) बड़वानी जा रहे थे, तब देवकुमारसिंहजी मुनि श्री को कल्याण भवन ले गए थे। उस वक्त भी आपने अपने मंदिर में ही आपसे चातुर्मास करने की प्रार्थना की थी। आज फिर इतिहास की पुनरावृत्ति हो रही थी। आज पिता नहीं, पुत्र इतनी दूर से सपत्नीक आकर आचार्य श्री से सिद्धवरकूट सिद्धक्षेत्र पर चातुर्मास करने की विनती कर रहे थे। दोपहर में पुनः संत वसतिका में आकर उन्होंने चातुर्मास के लिए प्रार्थना की। प्रार्थना करना भक्त का कर्तव्य है। कृपा तो गुरु की होनी चाहिये व उस भूमि का प्रबल पुण्योदय होना चाहिये।

जन्म कल्याणक के दिन आपने कमठ के माध्यम से बताया कि यह बैर वैमनस्य ही हमें भव-भव में भटका रहा है। अतः हमें हृदय में क्षमाभाव धारण करना चाहिये। भगवान के माता-पिता बने जयंतीलालजी सेठ एवं प्रेमकुँवर सेठ के लिए आपने कहा कि सातिशय पुण्योदय का यह सौभाग्य आप जैसे किसी-किसी पुण्यशाली को प्राप्त होता है। इसी तरह सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी बने हँसमुखजी सेठ व कमलाबेन सेठ के लिए भी आपने आशीर्वाद दिया व कहा कि आपको स्वर्ग में भी सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी का पद मिले व वहाँ से आकर मनुष्य पर्याय प्राप्त कर मुक्ति मिले, ऐसी साधना करो। वहाँ उपस्थित धर्मप्रेमी जनसमुदाय को भी आशीर्वाद देते हुए कहा कि आप सब भगवान के समोशरण में आए हैं, निश्चित ही आप सबका कल्याण होगा।

वागोल पार्श्वनाथ कुशलगढ़ (राज.) पंचकल्याणक प्रतिष्ठा सानंद संपन्न कराते हुए आपने महती धर्म प्रभावना की। प्रवचनों के माध्यम से आपके चिन्तन का जन-मन पर गहरा प्रभाव पड़ा। चारों ओर एक ही चर्चा थी, संत हों तो आचार्य श्री सुनीलसागरजी जैसे। जितने सरल हृदय व साधनामय जीवन आचार्य श्री का है, वैसा ही व्यवहार सारे संघ का देख हजारों हजार लोग संतों के प्रति श्रद्धा व समर्पण से नतमस्तक थे। इतने बड़े आयोजन में किसी ने आचार्य श्री को गुस्सा होना तो दूर की बात, ऊँची आवाज में बोलते भी नहीं सुना। वे हमेशा शांत व प्रसन्न मुद्रा में रहते थे। वे कहते रहते थे कि इतने बड़े आयोजन के लिए बहुत बड़ा दिल व हिम्मत चाहिए। कहीं कोई कमी-बेसी रह जाए तो उसे नजरअंदाज कर देना चाहिए व आयोजकों की असाधारण क्षमता की प्रशंसा करना चाहिए। ऐसी बात तो वही कह सकता है जिसने साधना के अनमोल हीरे प्राप्त किये हैं। वागोल से आप अंदेश्वर पार्श्वनाथ जाने वाले थे पर समाज के अति आत्मीय व बार-बार किये गये निवेदन पर आपने कुशलगढ़ के लिए पद विहार कर दिया। कुशलगढ़ में आपके चरण पड़े बिना समाज आपको कैसे विदा कर देता।

12 मई को वागोल पार्श्वनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा संपन्न कराकर आपने कुशलगढ़ के लिए ससंघ विहार कर दिया। कुशलगढ़ समाज आपकी ग्रीष्मकालीन वाचना का लाभ लेना चाहता था किन्तु भीलुड़ा (सागवाड़ा) राजस्थान में 2 जून से 7 जून तक श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव आपके सान्निध्य में होना पूर्व निश्चित था। अतः आपको समय

पर भिलुड़ा पहुँचना था। कुछ दिन कुशलगढ़ मंगलवास पश्चात आपने ग्रीष्म की इस भीषण गर्मी में अंदेश्वर पार्श्वनाथ के लिए पद विहार कर दिया। अंदेश्वर के पार्श्व प्रभु के दर्शन कर आपका रोम-रोम पुलकित हो गया। इस पावन भूमि में आप कुछ दिन और रुकना चाहते थे किन्तु समय पर आपको भीलुड़ा पहुँचना था। अतः यहाँ कुछ दिन रुककर आप कलिंजरा, बागीदौरा, नौगामा, डडूका आदि होते हुए 24 मई से 1 जून तक परतापुर में सवोत परिवार के सिद्धचक्र विधान में सान्निध्य प्रदान कर 2 जून को भिलुड़ा पहुँचे। वहाँ आपके सान्निध्य में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव सानंद संपन्न हुआ। संघ के साथ जब आप मंच पर विराजते तब लगता भगवान का समोशरण इसी प्रकार का होगा।

सागवाड़ा चातुर्मास : 2019

पंचकल्याणक व श्रुतपंचमी की धूम के बाद 12 जून को संघ विहार कर दीवड़ा विश्राम कर खड़गदा क्षेत्रपाल पहुँचा। 14 से 19 जून के चीतरी प्रवास में मानस्तंभ महामस्तकाभिषेक, समवशरण विधान व सन्मतिसागर गुरुदेव की मूर्ति स्थापना हुई। 20 जून को घाटा का गाँव 'सन्मति भवन' में प्रवचन व चर्या हुई। 21 जून, योग दिवस का कुछ ऐसा योग बना कि 30 साल पहले तपस्वी सम्राट इसी दिन ओबरी पहुँचे थे। इसी दिन चतुर्थ पट्टाचार्य का आगमन हुआ। सहस्त्रनाम विधान हुआ। 25 को विहार कर डेचातीर्थ के दर्शन किये, नवनिर्मित मानस्तंभ देखा तथा 30 अक्टूबर से 4 नवंबर तक पंचकल्याणक की तिथि घोषित की। 26 को प्रातः आंतरी पहुँचे, जहाँ प्राचीन जिनालय में स्थित ऋषिमंडल यंत्र के दर्शन कर 'ऋषिमंडल विधान' में सान्निध्य प्रदान किया। 28 को वरदा में चर्या कर ठाकरडा की ओर तेज धूप में ही संघ ने विहार कर दिया।

ठाकरडा वासियों ने अति उत्साह के साथ अद्भुत मंगल प्रवेश कराया। 30 जून को जिनालय की वर्षगाँठ पर भव्य पंचकल्याणक विधान हुआ। 1 से 3 जुलाई तक चौबीसी विधान हुआ। यहाँ के सुश्रावक सावन मुकेशजी सरिया ने गाँधीनगर चातुर्मास का प्रथम मंगल कलश स्थापित किया था, तभी से ठाकरडा पधारने का आग्रह कर रह थे। 4 जुलाई को झमाझम बरसात में ठाकरडा से विहार कर संघ गोवाड़ी पहुँचा। विशाल जिनालय का जीर्णोद्धार चल रहा था। 5 व 6 जुलाई का लाभ गलियाकोट पुनर्वास कॉलोनी वालों को मिला।

7 जुलाई को कॉलोनी से सागवाड़ा चातुर्मास हेतु अथाह जनसमूह के साथ हाथी, घोड़ा, ऊँट, बैंड-बाजा के साथ अभूतपूर्व मंगल प्रवेश हुआ। यूँ तो पूरा बागड़ भक्ति में जुड़ा रहा पर आज का उत्साह देखने जैसा रहा। समाज के वरिष्ठ श्रावकों के साथ सांसद कनकमल कटारा ने गुरुवर की अगवानी की। 9 से 17 जुलाई तक नंदीश्वर महामंडल विधान संपन्न हुआ।

14 जुलाई को चातुर्मास मंगल कलश स्थापना का भव्य कार्यक्रम हुआ। दस हजार लोगों की क्षमता वाला मंडप पूरा खचाखच भर गया। प्रथम कलश का सौभाग्य प्रेरणा नरेन्द्र शाह ने प्राप्त किया। द्वितीय कलश कुलदीप गाँधी, तृतीय कीर्तिभाई शाह, चतुर्थ गोवाड़िया परिवार, पंचम खोड़ानिया परिवार, षष्ठम गलालिया परिवार ने प्राप्त किया। गुरु पूर्णिमा का कार्यक्रम धूमधाम से संपन्न हुआ। 28 जुलाई को राजस्थान सरकार के मंत्री अर्जुन बामनिया आचार्यश्री के दर्शनार्थ पहुँचे। 29 को नगर पालिका एवं पुलिस थाने के सभी अधिकारियों ने आशीर्वाद लिया।

6 अक्टूबर 2019 को 'हूमड़पुरम शिक्षण संस्थान' के तत्त्वावधान में एवं 18 हजार दशा हूमड़ दिगंबर जैन समाज के अध्यक्ष दिनेश जैन खोडनिया के निर्देशन में 'बालिका छात्रावास' का भव्य शिलान्यास आचार्यश्री सुनीलसागरजी गुरुवर के परम सान्निध्य में एवं राजस्थान के मुख्यमंत्री अशोकजी गेहलोत, विधानसभाध्यक्ष सी.पी. जोशी एवं अनेक मंत्रीगण, सांसद, विधायक की उपस्थिति में मुख्यमंत्री गेहलोत के हाथों स्वर्ण शिला स्थापित की गई।

जनसभा में मुख्यमंत्रीजी ने गुरुवर के 43वें अवतरण दिवस की खूब-खूब बधाई देते हुए कहा कि ''मैं गुरुदेव की

शिक्षा-दीक्षा-प्रतिभा से बहुत प्रभावित हूँ। उन्हें देश की प्राचीन प्राकृत भाषा का ज्ञान है, अनेक विद्याओं में सिद्धहस्त हैं।'' इसके साथ ही उन्होंने 2020 के वर्षायोग के लिए जयपुर प्रवेश हेतु निवेदन किया और कहा कि मैं बहुत दिन से सोच रहा था गुरुदेव के दर्शनार्थ जाना है, लेकिन आज इंतजार की घड़ियाँ समाप्त हुईं।

20 अक्टूबर को सर्वधर्म सम्मेलन हुआ जिसमें हिन्दू समाज के धर्मगुरु अच्युतानंदजी महाराज ने अपने प्रथम वाक्य में कहा- ''परम वंदनीय आचार्यश्री सुनीलसागरजी महाराज, जैसा आपका नाम सुनील सागर वैसा आपका काम। इस सागर में सब मोतियों को इकट्ठा कर लिया है।''

योगी प्रकाशनाथ ने कहा- ''मेरी माँ ने कहा था, जब कभी अच्छे महापुरुष से मिलो तो सीखना बंद नहीं करना।'' उन्होंने भाव व्यक्त किये- ''मैं महाराजजी से अलग से चर्चा करना चाहूँगा। 'वर्तमान के वर्धमान' के रूप में दिखने वाले गुरु से बहुत कुछ सीखना है।''

28 अक्टूबर को वर्षायोग निष्ठापन, निर्वाणोत्सव पर प्रत्येक मंदिर में निर्वाण लाडू चढ़ाया गया। अद्भुत दृश्य नगरी में एवं शाम को योगेन्द्रगिरी पर आदिनाथ भगवान का अभिषेक एवं निर्वाण लाडू चढ़ाया गया।

वाग्वर क्षेत्र में धर्म गंगा

इक्कीसवीं सदी के मनुष्य ने एक ऐसे सभ्य समाज की रचना कर ली है जिसमें उसके लिए तो सारी सुख-सुविधाएँ हैं किंतु औरों/दूसरों के लिए बहुत कम जगह है या न के बराबर। मनुष्य मन इतना शुष्क होता जा रहा है कि उसके हृदय की सारी संवेदनाएँ सूखती जा रही हैं जिसका अनुभव हम अपने रोजमर्रा के जीवन में घटित होते देखते-सुनते-पढ़ते हैं। दिल थर्रा देने व रोंगटे खड़े कर देने वाली घटनाएँ भी आदमी समाचार की तरह पढ़ जीवन का पन्ना पलटा देता है। आज का बच्चा स्वार्थ के उस संसार में जी रहा है जहाँ संस्कार रोपित करने वाली नैतिक शिक्षा की उसके लिए कोई अहमियत नहीं है। हमारी संवेदनाएँ शून्य पर फिसलती चली जा रही हैं। करुणा से आप्लावित हमारे संत समाज की इस स्थिति से चिंतित हैं। इन्हीं में से एक आचार्यश्री सुनीलसागरजी हैं। आपका मानना है कि मनुष्य की जब मनुष्य के प्रति संवेदनाएँ कम या खत्म होती जा रही हैं, तब प्रकृति, पर्यावरण व पशु-पक्षियों के प्रति उससे क्या अपेक्षा की जाय?

अस्तु! आचार्यश्री सुनीलसागरजी अपने चिंतन, अपने सदुपदेशों तथा अपने रचनात्मक कार्यों द्वारा समाज को जड़ व चेतन सबके प्रति संवेदनशील बनाने हेतु प्रयत्नरत हैं। वे हमारे भीतर संवेदनाओं का संसार रचने में सतत संलग्न हैं। ये अपरिग्रही दिगम्बर संत किसी को रोजी-रोटी तो नहीं दे सकते किंतु वे हमारे मन-मानस में ऐसा प्रकाश भर रहे हैं जो अन्य पद्धति से शायद पैदा न किया जा सके। वे एक समरस समाज बनाने में लगे हैं ताकि समाज को आदर्श स्थिति तक पहुँचाया जा सके। ये उनके संतत्व की श्रेष्ठ व पावन भावनाएँ हैं। इसी तारतम्य में उनके प्रत्येक कार्य किये जा रहे हैं जिनके माध्यम से वे समाज में संस्कार रोपित कर रहे हैं। आचार्यश्री अपने प्रायोगिक कार्यों, ग्रंथ वाचना, विधान मंडल व पंचकल्याणकों के माध्यम से संस्कार सिंचन कर हमारी व समाज की सोई संवेदनाएँ जगा रहे हैं। वे हर पंचकल्याणक में कहते हैं कि जब जड़ पाषाण की पंचकल्याणक के माध्यम से प्राण प्रतिष्ठा कर परमात्म स्वरूप दे जगत पूज्य बनाया जा सकता है तब जीते-जागते चेतन की शुद्धात्मा को इन तीर्थंकरों के पंचकल्याणकों द्वारा परमात्मा क्यों नहीं बनाया जा सकता? प्रभु के पाँच दिनी गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान व निर्वाण ये पाँच कल्याणक हमारे संपूर्ण जीवन का वह पाँच दिवसीय आईना है जो हमें अपना जीवन दर्शन करा हमारे समक्ष जीवन जीने का एक आदर्श उपस्थित करते हैं। हमारी वृत्ति बदल हमें जीवन जीने की व्यापक दृष्टि देते हैं।

सागवाड़ा चातुर्मास 2019 में आचार्यश्री सुनीलसागरजी ने समाज द्वारा आयोजित नित नूतन आयोजनों के

माध्यम से समाज में धर्म की गंगा बहा दी या कहो धर्म की धूम मचा दी जिसका प्रभाव न सिर्फ सागवाड़ा अपितु संपूर्ण वाग्वर क्षेत्र पर पड़ा। आसपास के व दूर-दूर से लोग बसें भर-भर कर आते व उन्हें अपने यहाँ पधारने का निमंत्रण देते, मंडल विधान या पंचकल्याणक करवाने श्रीफल भेंट करते। श्रावकों की भक्ति से अभिभूत आचार्यश्री ने किसी को निराश नहीं किया। आचार्यश्री एक गाँव नगर से दूसरे जितना उनसे बन पड़ा, अधिक से अधिक लोगों को धर्मलाभ दिया। इस प्रकार सागवाड़ा वर्षायोग एवं उसके पश्चात एक धार्मिक महोत्सव समाप्त भी न हो पाता कि दूसरे के प्रारंभ की तैयारी ने आचार्यश्री की प्रेरणा व उनके सान्निध्य में होने वाले आयोजनों व पंचकल्याणकों ने इतिहास रच दिया।

सागवाड़ा चातुर्मास पश्चात

सागवाड़ा चातुर्मास समाप्त होते ही आचार्यश्री ससंघ सान्निध्य में सागवाड़ा के आस-पास स्थित भासौर, वनकोड़ा, ज्ञानपुर गाँव में अष्टाह्निका पर्व में सिद्धचक्र महामंडल विधान बड़ी भव्यता से संपन्न हुआ। इन सातिशय पुण्य पुरुष के प्रभाव से बागड़ क्षेत्र में धर्म का अमि झरने लगा। विधान के बाद बिना किसी अंतराल के एक के बाद एक साथ चार महापंचकल्याणक महोत्सव संपन्न हुए।

1. प्रथम पंचकल्याणक : श्रीमज्जिनेन्द्र संभवनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव, पाड़वा 13-18 नवंबर 2019

दि. 13 से 18 नवंबर 2019 तक पाड़वा (राज.) में आचार्यश्री के ससंघ सान्निध्य में श्रीमज्जिनेन्द्र संभवनाथ पंचकल्याणक प्राण-प्रतिष्ठा महामहोत्सव संपन्न हुआ। मोक्षकल्याणक संपन्न होते ही आपने सागवाड़ा पंचकल्याणक के लिए विहार कर दिया।

2. द्वितीय पंचकल्याणक : सागवाड़ा में 20-24 नवंबर 2019

पुनश्च 20 नवंबर से 24 नवंबर 2019 तक श्री शांतिनाथ दिगंबर जैन मंदिर जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव निमित्त से सागवाड़ा में पहुँचे। जहाँ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में ही 20 नवंबर को लोहारिया तालाब के मध्य भगवान महावीर स्वामी की निर्वाण स्थली पावापुरी की प्रतिकृति के निर्माण हेतु भव्य शिलान्यास गुरुवर के सान्निध्य में किया गया। मुख्य शिला विराजमानकर्ता कुलदीप गाँधी, भूदानकर्ता एडवोकेट विजय कुमार, डॉ. विमल-डॉ. विनय कुमार, कनकमलजी भोजराज परिवार थे। 25 नवंबर को पिच्छी परिवर्तन कार्यक्रम के साथ पंचकल्याणक की पूर्णाहूति एवं चातुर्मास निष्ठापन संपन्न हुआ। आचार्यश्री की पिच्छी प्राप्त करने का सौभाग्य श्रीमती प्रेरणा नरेन्द्रजी शाह को व्रत नियम के संकल्प के साथ प्राप्त हुआ।

3. तृतीय पंचकल्याणक : पुनर्वास कॉलोनी, सागवाड़ा, 25 नवंबर से 1 दिसंबर 2019

25 नवंबर से 1 दिसंबर 2019 तक श्री आदिनाथ जिनबिम्ब रत्नमयी चौबीसी पंच मानस्तंभ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं आचार्यश्री आदिसागरजी (अंकलीकर), आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी, आचार्यश्री विमलसागरजी, तपस्वी सम्राट आचार्यश्री सन्मतिसागरजी की मूर्ति गलियाकोट पुनर्वास कॉलोनी, सागवाड़ा में प्रतिष्ठापित हुई।

1 दिसंबर को बांसवाड़ा की ओर विहार हो गया जहाँ 4 से 9 दिसंबर 2019 तक मोहन कॉलोनी में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव संपन्न हुआ।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि किसी एक आचार्य के सान्निध्य में लगातार एक के बाद एक किये जाने वाले प्रतिष्ठा महोत्सव से प्रभावित हो समाज ने जब पिछला इतिहास खंगाला तो उन्होंने पाया कि हजारों वर्षों में कभी भी एक साथ एक ही प्रांत में एक ही आचार्य परमेष्ठी द्वारा एक ही माह में एक से बढ़कर एक भव्यातिभव्य इतने सारे पंचकल्याणक

नहीं हुए हैं जो पूज्य आचार्यश्री सुनीलसागरजी द्वारा संपन्न करवा नया कीर्तिमान स्थापित किया गया है। युगों बाद किसी युग के पुण्य प्रभाव से किसी क्षेत्र को ऐसे साधक संत मिलते हैं। आचार्यश्री के लिए भी यह नया रिकॉर्ड ही है जिसके लिए यह वाक्य प्रचलित हो गया- 'न भूतो न भविष्यति'।

4. चौथा पंचकल्याणक : बांसवाड़ा, मोहन कॉलोनी, 4 से 9 दिसंबर 2019

सागवाड़ा पंचकल्याणक मोक्ष कल्याणक के दिन से ही मात्र दो दिन में 60 कि.मी. थकान भरी पदयात्रा कर आप बाँसवाड़ा मोहन कॉलोनी में दि. 4 दिसंबर से 9 दिसंबर 2019 तक होने वाले पंचकल्याणक में सान्निध्य प्रदान करने ससंघ पहुँचे। लगातार पंचकल्याणकों के कार्यक्रमों एवं विहार की थकावट की रेखा मात्र भी आप के चेहरे पर नहीं झलक रही थी। यह आपका ही पुण्य प्रभाव था कि हर पंचकल्याणक महोत्सव एक से बढ़कर एक नव्य-भव्य एवं ऐतिहासिक सम्पन्न हो रहे थे। मोहन कॉलोनी का पंचकल्याणक तो इतना वृहद, विशाल व ऐतिहासिक महोत्सव रहा जिसने विश्वभर में जैन एवं जैनेतर लोगों में जिनधर्म की प्रभावना की अमिट छाप छोड़ी। स्वर्णरथ पर सौधर्म इन्द्र अशोक वोरा इतना बड़ा नाम, करोड़ों का दान, नित आने वाले हजारों हजार भक्तों की व्यवस्था में सुई की नोंक बराबर भी विघ्न बाधा नहीं आई न ही कोई नुकसान हुआ। आचार्यवर के चैतन्य पावन चरण जहाँ पड़ते हैं वहाँ नया इतिहास रच जाता है। सच में आचार्यश्री जैसे संत चरण की महिमा न्यारी है।

ये पाँव नहीं हैं चरण, चरण ये जहाँ कहीं पड़ जाते हैं।
बीहड़ नन्दन बनता, पतझर में पारिजात खिल जाते हैं।।

भव्य चार मुनि दीक्षाएँ : 7 दिसंबर 2019

इस पंचकल्याणक में पट्टाचार्य श्री ने न सिर्फ पाषाण प्रतिमा को ही सूरिमंत्र देकर उसमें प्राणमंत्र फूँक पूज्य परमात्मा की प्रतिमा नहीं बनाई, जिनका दर्शन हमें हममें अवस्थित परमात्म तत्व का बोध कराता है, अपितु उन्होंने जीती जागती चैतन्य आत्माओं का भी जिन दीक्षा देकर कल्याण कर दिया। और उन्होंने इन दीक्षाओं के माध्यम से उपस्थित हजारों-हजार लोगों को समझा दिया कि इन पंचकल्याणकों को करने-करवाने का अंतिम ध्येय तो मुक्ति ही है। मुक्ति संस्कार का सिंचन है।

7 दिसंबर तपकल्याणक के अवसर पर एकसाथ चार मुनि दीक्षाएँ आचार्यश्री के करकमलों से सम्पन्न हुई। इनमें कर्नाटक वीरापुर के ब्र. श्री नागराजजी द्वारा पूज्यपाद गुरुवर से ब्रह्मचारी से सीधा मुनि दीक्षा लेना जन चर्चा व प्रशंसा का विषय बना रहा।

जिन्हें दीक्षा दी गई

1.	ऐलक श्री समर्थसागरजी	मुनिश्री समर्थसागरजी
2.	क्षुल्लक श्री सुधीसागरजी	मुनिश्री सुध्यानसागरजी
3.	क्षुल्लक शैलेन्द्र सागरजी	मुनिश्री सुज्ञेय सागरजी
4.	ब्र. श्री नागराजजी	मुनिश्री सुध्येयसागरजी

कमर्शियल कॉलोनी बांसवाड़ा में वेदी प्रतिष्ठा

कमर्शियल कॉलोनी बांसवाड़ा में महावीर जिनालय में त्रि दिवसीय वेदी प्रतिष्ठा आपके सान्निध्य में संपन्न हुई। यहीं पर 26 दिसंबर को समाज ने आपके 11वें पट्टाचार्य दिवस का वृहद आयोजन किया। इसी मंगल प्रसंग पर संघस्थ युवा मुनि श्री सुमंत्रसागरजी की आचार्यश्री सन्मतिसागरजी पर बच्चों के लिए लिखी गई चित्रमय पुस्तक का विमोचन

भी किया गया।

बाहुबली कॉलोनी बांसवाड़ा में भगवान मुनिसुव्रतनाथ चैत्यालय पंचकल्याणक, 15-20 जनवरी 2020

27 दिसंबर को कमर्शियल कॉलोनी से आचार्यश्री ससंघ का बाहुबली कॉलोनी में भगवान मुनिसुव्रतनाथ चैत्यालय के 15 से 20 जनवरी 2020 तक होने वाले पंचकल्याणक के लिए अति भव्य एवं ऐतिहासिक मंगल प्रवेश 27 दिसंबर 2019 को हुआ। पथ संचलन मार्ग पर गाँधी स्टेच्यु से बाहुबली कॉलोनी तक सभी धर्म, जाति, संप्रदाय, वर्ग व समाज के लोगों ने स्वागत द्वार बनाए थे। मंगल जुलूस का एक छोर पंचकल्याणक स्थल पर व दूसरा छोर गाँधी स्टेच्यु पर था। यह स्वागत एवं अभिनंदन 'महाविज्ञ' वर्तमान के वर्द्धमान आचार्यवर के विलक्षण व्यक्तित्व एवं कृतित्व के अनुकूल ही था।

बाहुबली कॉलोनी में शिष्य समुदाय के लिए षटखंडागम धवला पुस्तक-11 की शीतकालीन वाचना संपन्न हुई। इसी बीच गुरुभक्त युवा संघ के सदस्य युवकों द्वारा नूतन वर्षाभिनंदन 2020 के आगमन की तैयारियाँ जोर-शोर से चल रही थी। इसी बीच 31 दिसंबर 2019 को संघस्थ मुनिश्री सुधीरसागरजी (अशोक जमादार दिल्ली) का गुरु चरणों में समताभाव पूर्वक समाधिमरण हो गया।

जनवरी 2020 : नववर्ष में नया काम

1 जनवरी 2020 नए वर्ष में आचार्यश्री की प्रेरणा से एवं सुनीलसागर युवा संघ के पुरुषार्थ से बाँसवाड़ा में पहली बार 'पहली रोटी गाय की' का सफल प्रयास रहा। इस आयोजन में युवाओं ने घर-घर जाकर रोटी एकत्रित कर गायों को दी।

अहिंसा सम्मेलन

जीवदया प्रेमी अहिंसा धर्म के उन्नायक आचार्यश्री के गौरवमयी सान्निध्य में 100 से अधिक सनातन धर्म गुरुओं की उपस्थिति में श्रीमान महीपालजी मैदावत के नेतृत्व में 'वार्षिक अहिंसा सम्मेलन' का आयोजन हुआ। इस अहिंसा सम्मेलन में आचार्यश्री ने जीव दया तथा ग्रामीण आदिवासियों के हित में प्रभावशाली उद्बोधन दिया। आपने उनको अंधविश्वासों, कुरीतियों, बलिप्रथा से उबारने पर जोर दिया तथा तम्बाखू-शराब छुड़ाने की बात कही।

बाहुबली कॉलोनी में मुनिसुव्रतनाथ चैत्यालय का पंचकल्याणक

मंगल मुहूर्त में पंचकल्याणक के मंगल कार्यक्रम प्रारंभ हो गए। 15 से 20 जनवरी 2020 तक बाहुबली कॉलोनी में आचार्यश्री के अनन्य भक्त श्रीमान पंकजजी वकील के अथक पुरुषार्थ व सकल समाज के सहयोग से नवनिर्मित भगवान मुनिसुव्रतनाथ चैत्यालय, चारों पूर्वाचार्यों की खड़गासन प्रतिमाओं से सुशोभित गुरु मंदिर तथा विशाल आचार्य आदिसागर अंकलीकर छात्रावास के लोकार्पण के साथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा संपन्न हुई।

बाहुबली कॉलोनी प्रतिष्ठा महोत्सव में तीन जैनेश्वरी दीक्षाएँ : 20 जनवरी 2020 को

पंचकल्याणक के अंतिम दिन 20 जनवरी 2020 को बाहुबली कॉलोनी में आचार्यश्री ने तीन जैनेश्वरी दीक्षाएँ दी। घाटोल निवासी ब्र. कांतिलालजी की दीक्षा विधि के अंतर्गत केशलोच चल रहा था कि उनका स्वास्थ्य बिगड़ गया। सबको लगा अभी उनकी समाधि हो जाएगी। अभी उन्हें पिच्छी देने की तैयारी चल ही रही थी कि अचानक उनकी हालत बिगड़ गई। आचार्यश्री ने उन्हें आशीर्वाद दिये। साधना से ऊर्जावान गुरुवर के पवित्र हाथों का सिर पर स्पर्श पाते ही उनमें शक्ति का संचार हुआ और वे एकदम ठीक हो गए। पिच्छी देकर उन्हें क्षुल्लक व्रत अंगीकार कराया गया।

जिनकी दीक्षाएँ हुईं

1.	ब्र. कांतिलालजी, घाटोल (राज.)	क्षुल्लक सत्वसागरजी
2	ब्र. हेमंत गाँधी, तलोद (गुज.)	क्षुल्लक समत्वसागरजी
3.	क्षुल्लक शैलेष सागरजी, बांसवाड़ा (राज.)	ऐलक सुतत्त्वसागरजी

25 जनवरी 2020 को कुछ वयोवृद्ध साधगुण व आर्यिका माताजी को बाँसवाड़ा में रह साधना हेतु कुशल आशीर्वाद प्रदान कर आचार्यश्री ने सामरिया पार्श्वनाथ अतिशय क्षेत्र डेचा (ओवरी) राज. पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के लिए विहार कर दिया।

सामरिया पार्श्वनाथ अतिशय क्षेत्र डेचा
मानस्तंभ एवं गुरु मंदिर प्राण प्रतिष्ठा महोत्सव (1 से 7 फरवरी 2020)

इस असार-असार संसार में चलने और चलाने वाले तो बहुत से हैं किंतु इच्छा-आकांक्षाओं पर अंकुश लगा स्व-पर कल्याण करते, अहिंसामयी विश्वधर्म की परचम फहराते, पग-पग विहार करते आचार्यश्री सुनीलसागरजी जैसे संत

विरले ही होते हैं। जबकि मोही संसारी व्यक्ति का मन जहाज के पंछी की तरह (फिरी-फिरी जहाज पर आवे) बार-बार अपने नीड़ (घर) की ओर लौटता है। तब ये निर्मोही, निस्पृही, घर, मठ, मंदिर के त्यागी, विरक्त, संन्यासी, पावन पाँवों से (चरणों) विचरण करते, अनियत विहारी संत आत्म स्वभाव में स्थिर रहते हैं। यह तो धरा का पुण्य संयोग ही संत संघ रूपी समवशरण की दिशा तय करता है। दिव्यात्मा आचार्यश्री सुनीलसागरजी के चतुर्विध संघ का विहार जिधर से, जहाँ से भी होता है वहाँ वीरानों में बहारें आ जाती हैं, पतझड़ में पारिजात खिल जाते हैं और जिस संसार में भटकते गृहस्थी का चंचल मन इनके श्रीचरणों में स्थिर हो जाता है, उसके जीवनोत्थान का मंगलाचरण शुरू हो जाता है।

यह आचार्यश्री का सातिशय प्रभाव कहो या मंगल आशीर्वाद का प्रभाव, जितने भव्य आयोजन आचार्यश्री के सान्निध्य में नगरों में होते हैं उतने ही भव्य, वृहद व ऐतिहासिक आयोजन वनाच्छादित पर्वतों के बीच बसे गाँवों में भी होते हैं। मार्ग की परीषह जन्य पीड़ाएँ सहते ससंघ आचार्यश्री शामरिया पार्श्वनाथ अतिशय क्षेत्र डेचा (ओवरी) राज. में 1 से 7 फरवरी 2020 तक होने वाले पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव में सान्निध्य प्रदान करने पहुँचे। यहाँ आपके आशीर्वाद व मार्गदर्शन में उतंग मानस्तंभ में रत्नमयी जिनबिम्ब व गुरु मंदिर का प्राण प्रतिष्ठा महोत्सव संपन्न हुआ जिसने पिछले पंचकल्याणकों के सारे रिकॉर्ड पार कर ऊँचाइयों का क्षितिज छू लिया। आइये देखते हैं डेचा मंगल प्रवेश व पंचकल्याणक की एक झलक।

आचार्यश्री का डेचा भव्य मंगल प्रवेश : एक झलक
राजस्थान के मंत्री श्री अर्जुनजी बामणिया द्वारा अगवानी

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि अतिशय क्षेत्र डेचा में शामरिया पार्श्वनाथ का विशाल जिन मंदिर है। जंगल मध्य प्रकृति के नैसर्गिक सौन्दर्य से भरपूर यह छोटा सा गाँव है जहाँ एक भी जैनी श्रावक का घर नहीं है। चूँकि आचार्यश्री ने अपने विगत के किये गये पंचकल्याणकों में डेचा के शामरिया पार्श्वनाथ की खूब प्रभावना की। फलतः बहत्तर (72) गाँवों के 18000 जैन समाज के लोग बसों में भर-भर कर डेचा के पंचकल्याणक में आए किंतु यहाँ जैन समाज से ज्यादा ग्रामवासियों में अत्यधिक उत्साह देखा गया। जिस-जिस गाँव से होकर आचार्यश्री ससंघ डेचा पहुँचे, ग्रामीणों ने रास्ते भर उनका भावभरा नाच-नाच व गा-गा कर सम्मान किया व पंचकल्याणक में जाने की पूर्ण तैयारी कर ली। ग्रामीण आदिवासी अपने-अपने गाँवों से नृत्य करते, ढोल-ताशे बजाते बालिकाएँ मंगल कलश लिए सब गुरु अगवानी करते चल रहे थे। ग्रामीणों की लम्बी कतार रूप में जुलूस में उनका उत्साह व खुशियाँ देखते बनती थी। आयोजन कमेटी द्वारा जुलूस के आगे हाथी-घोड़ों पर श्रावक पचरंगी ध्वज लिए चल रहे थे। इतने दिगंबर साधुओं और श्वेत वस्त्र धारिणी माताजी के चरणों में श्रद्धाभिभूत ग्रामीण जन लोट-पोट हो रहे थे। व्यवस्था बनाए रखने के लिए श्रावकों द्वारा उन्हें ऐसा करने से रोकना पड़ा। पंचकल्याणक उन आदिवासी ग्रामीणों के लिए अजूबा व महामहोत्सव था।

इधर ग्रामीणों का जोश देखते बनता था कि आचार्यश्री की अगवानी के लिए राजस्थान के मंत्री माननीयश्री अर्जुनजी बामनिया आचार्यश्री की डेचा में मंगल प्रवेश पूर्व अगवानी के लिए आ पहुँचे। उन्होंने राष्ट्र गौरव आचार्य संघ का उनकी महिमानुकूल भावभरा स्वागत अभिनंदन किया व आचार्यश्री का आशीर्वाद प्राप्त किया। वे पद विहारी आचार्यश्री के साथ काफी दूर पैदल चलते हुए जिनालय पहुँचे। प्रभु दर्शन कर ध्वजारोहण की मांगलिक क्रिया संपन्न करते हुए आचार्यश्री के साथ पांडाल में प्रवेश किया। रेम्प पर आचार्यश्री के पाद प्रक्षालन व आरती से भव्य स्वागत हुआ।

गुरु चरणों में नमन कर श्रद्धा सुमन अर्पित करते मंत्रीजी ने अपनी विनयांजलि प्रेषित की। उन्होंने अपने उद्बोधन में कहा कि मैं यहाँ गुरुवर का आशीर्वाद लेने आया हूँ, भक्त बनकर आया हूँ, नेता के रूप में नहीं। गुरु आशीर्वाद देते हैं, आश्वासन नहीं। जो फलता है स्थायी होता है, मंगलकारी होता है एवं सौ प्रतिशत सच्चे हृदय से दिया जाता है।

आश्वासन तो राजनेता देते हैं जो अस्थायी होते हैं। पूज्य श्री गुरुदेव की मुझ पर अनुपम कृपा है। बांसवाड़ा मंगल प्रवास में मैं गंभीर बीमारी से पीड़ित दिल्ली हॉस्पिटल में एडमिट होने की वजह से दर्शन करने नहीं पहुँच सका। मैंने आचार्यश्री को अपना नमन संदेशा भेजा। आचार्यश्री ने मुझे शीघ्र ही स्वस्थ होने का आशीर्वाद दिया जो मुझ तक मोबाइल द्वारा उसी क्षण पहुँच गया और उसी क्षण से मैं असाधारण ऊर्जा से भरा स्वस्थ होने लगा। यह आचार्यश्री के मंगल आशीर्वाद का ही सुफल है कि मैं कुछ ही दिनों में पूर्ण स्वस्थ हो गया। दिल्ली में मेरा इलाज करने वाले सारे डॉक्टर आश्चर्यचकित थे। उनका कहना था कि मेरा स्वास्थ्य लाभ मेडिकल चिकित्सा के बाहर का विषय था। गुरुवर के प्रति मेरी अनन्य आस्था व भक्ति देख डॉक्टर कहने लगे कि यह आपके गुरु की दिव्य शक्ति व दुआ का परिणाम है कि आप स्वस्थ होकर लौट रहे हैं।

भाव विह्वल हो मंत्री बामनियाजी ने कहा कि महाराजश्री, मैं आपका चिर ऋणी हूँ। आपने मुझे स्वस्थ होने का मंगल आशीर्वाद दिया। आपके आशीर्वाद से ही पुनः आपके दर्शन हो सके हैं। आप तो निःकांक्षी निष्काम साधक हैं, सबका हित करते हैं। आपकी तो कोई चाह नहीं पर मैं घोषणा करता हूँ कि डेचा के शामरिया पार्श्वनाथ मंदिर व डेचा ग्रामवासियों के लिए जरूर कुछ विशेष करूँगा। मैं यहाँ आश्वासन देने नहीं, आपश्री का आशीर्वाद लेने आया हूँ। इस प्रकार अपने विनम्र शब्दों में मंत्रीजी ने जिनशासन व जिनगुरु की अकथनीय महिमा मंडित कर अपना स्थान ग्रहण किया। पश्चात आचार्यश्री के साथ 'अनूठा तपस्वी' प्रदर्शनी का उद्घाटन किया। प्रदर्शनी का अवलोकन कर तपस्वी सम्राट की अनोखी साधना की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

तपस्वी सम्राट आचार्यश्री सन्मतिसागरजी महाराज की 82वीं जन्म जयंती के अवसर पर प्रतिष्ठाचार्य पं. महावीरजी गींगला ने आचार्यश्री सुनीलसागरजी के पाद प्रक्षालन की बोली लेकर अपना जीवन धन्य किया व पंडित वर्ग के लिए आदर्श प्रस्तुत किया।

मंगल मुहूर्त में नव निर्मित भव्य गुरु मंदिर में तपस्वी सम्राट आचार्यश्री सन्मतिसागरजी महाराज की विशाल पद्मासन मनोहारी अतिशयकारी प्रतिमा स्थापित की गई। पश्चात गुरु गुणानुवाद रूप श्री सन्मतिसागर विधान व भक्तों तथा आचार्यश्री सुनीलसागरजी ने विनयांजलि अर्पित कर विशाल श्रद्धालु जनसमुदाय के बीच यह महिमाशाली दिवस मनाया।

7 फरवरी को जैन श्रावक तो कम जैनेतर ग्रामवासियों द्वारा भावभरी विदाई के साथ आचार्यश्री ने डेचा से ससंघ सागवाड़ा की ओर विहार कर दिया। आज भी ढोल ताशे बजाते ग्रामीणों का हुजूम आचार्यश्री के आगे-आगे चल रहा था लेकिन आज उनके साजों की आवाज में दर्द था, आँखों में चमक नहीं आँसू थे, पाँवों में नृत्य की थिरकन नहीं भारीपन था। संत ने फिर पीछे मुड़कर नहीं देखा। और वे निरीह ग्रामीण संसारी पुनः अपने नीड़ की ओर लौट पड़े। और संतश्री अपने गंतव्य पथ के अगले पड़ाव की ओर चल पड़े।

डेचा से सागवाड़ा की ओर विहार

डेचा से डूंगरपुर जिले के वनाच्छादित दुरूह पहाड़ी रास्ते से आचार्यश्री ससंघ गुजर रहे थे। रास्ते में छोटी-छोटी बस्तियाँ व छोटे-छोटे गाँवों के ग्रामीणों ने पहली बार ऐसे तपस्वी संतों के दर्शन किये थे। पूरा के पूरा गाँव के लोग ढोल-ताशों के साथ नाचते-गाते आचार्यश्री को गाँव बाहर लिवाने उमड़ पड़ते व दूसरे गाँव की सरहद तक छोड़ने आते। वे भगवान का रूप मान आचार्यश्री के चरणों में लेट जाते व चरणों की धूल बड़ी श्रद्धा से अपने माथे लगाते। ग्रामीणों की भक्ति से अभिभूत आचार्यश्री ने भी उन्हें अनदेखा नहीं किया। करुण हृदय अचार्यश्री भी इन शहरों से सुदूर जंगलों में रहने वाले वनवासियों पर अपना वात्सल्य लुटाते उन्हें मांस-मदिरा छोड़ने का संकल्प दिलाते जा रहे थे। अपने साथ

पोटलियों में बाँधकर भेंट देने के लिए लाए अनाज को लौटाते हुए कहते कि हम अपने पास कुछ नहीं रखते। तुम मांस-मदिरा व तम्बाखू का सेवन तथा वन्य प्राणियों के शिकार द्वारा जीव हिंसा छोड़ने का संकल्प ले लो, यही तुम्हारे द्वारा मुझे दी गई सबसे बड़ी भेंट होगी। यही नहीं, आचार्यश्री उन्हें अंधविश्वासों से मुक्त कर बकरों, मुर्गियों व भैंसों की बली न देने की बात समझाते थे। वे उन अबोध ग्रामीणों को समझाते कि निरपराध पशुओं की हत्या करने से देवी-देवता खुश नहीं होते। सोचो! कटते हुए, तड़पते हुए मूक पशुओं की चीत्कारें सुन कोई देवता खुश होता है क्या? नहीं न? आज जिन्हें तुम काट रहे हो कल वे भी अपना बदला लेंगे। इतनी निकटता से इतनी अच्छी तरह ऐसी बातें समझाने वाला उन्हें आज तक कोई नहीं मिला था। शरमाते-सकुचाते सिर हिलाते वे आचार्यश्री की बातें मानने की स्वीकृति दे देते। आचार्यश्री द्वारा जंगल में इन आदिवासी ग्रामीणों को दी जा रही समझाइश देख पुरूरवा भील की कहानी स्मरण हो आती है। जंगल में इसी तरह किन्हीं तपस्वी मुनिराज के दर्शन व समझाइश से उस पुरुरवा भील का जीवन सद्मार्ग पर लगा था।

आचार्यश्री की उनके प्रति कही जा रही करुणा भरी बातें सुन पश्चाताप से भरे वे ग्रामीण मद्य-मांस, तम्बाकू का सेवन छोड़ रहे थे। आचार्यश्री को लग रहा था उनका इन ग्रामीणों के बीच से पद विहार सार्थक हो गया। ऊबड़-खाबड़, काँटों-भाटों पटे पहाड़ी मार्ग से गुजरते, खून रिसते पाँवों की पीड़ा भी वे भूल गए थे। वे सबसे कह रहे थे कि इनमें से कुछ का भी जीवन सुधर गया तो समझो हमारा यह पद विहार सार्थक हो गया।

नेमिनाथ जिनालय का शिलान्यास (नेमिनाथ कॉलोनी सागवाड़ा)

8 फरवरी 2020 को प्रातःकालीन मंगल बेला में आचार्यश्री ससंघ सागवाड़ा से थोड़ी दूर नवनिर्माणाधीन नेमिनाथ कॉलोनी पहुँचे। यहाँ 72 गाँवों से पधारे हजारों श्रावक श्रेष्ठी गणों की उपस्थिति में 1008 श्री नेमिनाथ जिनालय का भूमिपूजन एवं शिलान्यास आपके सान्निध्य में बड़े हर्षोल्लास के साथ संपन्न हुआ।

इसी अवसर पर प्रतिष्ठाचार्य श्री हँसमुखजी के निर्देशन में 18000 दशा हूमड़ समाज के पुनर्निर्वाचित अध्यक्ष श्री दिनेशजी खोडनिया तथा महिला अध्यक्षा श्रीमती साधनाजी कोठारी का आचार्यश्री के सान्निध्य में उनके आशीर्वाद तथा अन्य 26 समाजों के प्रमुखों के सम्मुख 'शपथविधि' समारोह सानंद संपन्न हुआ।

इसी दिन दोपहर में ज्ञायक कॉलेज में आपने युवा विद्यार्थियों को उनके उज्ज्वल भविष्य के लिए मंगल शिक्षाप्रद देशना दी। पश्चात् चतुर्दशी का वृहद प्रतिक्रमण कर रात्रि विश्राम हुआ।

पुनः सागवाड़ा में मंगल प्रवेश

सप्त जिनालयों की नगरी सागवाड़ा में आपका पूर्णिमा के दिन पुनः मंगल प्रवेश हुआ। चातुर्मास के पोस्टर-बैनर अभी भी लगे हुए थे। सुरभि बाजार में आपका मंगल प्रवेश हुआ जहाँ तपस्वी सम्राट आचार्यश्री सन्मतिसागरजी विधान एवं चित्र अनावरण कार्यक्रम हुआ। मध्याह्न में जिनालयों की भव्य मनोहारी प्रतिमाओं के दर्शन कर आपने ससंघ मांडव की ओर विहार कर दिया। मंगल प्रवेश व विहार के वक्त पूरा सागवाड़ा एकत्रित था। युवा वर्ग में उत्साह देखने लायक था। वे नारे लगा रहे थे 'देखो-देखो कौन पधारे, भक्तों के भगवान पधारे'। यह विहार कुछ हटकर था।

नियत स्थान पर स्कूल में रात्रि विश्राम न होकर कोकापुर वासियों की भक्ति वशात् थका देने वाला लम्बा विहार कर आप कोकापुर पहुँचे। लम्बे विहार की थकान से संघस्थ मुनि श्री शुद्धसागरजी अस्वस्थ हो गए। मुनियों ने उन्हें णमोकार महामंत्र सुनाना प्रारंभ कर दिया। मुनिश्री की स्थिति गंभीर होते देख आचार्यश्री को बुलाया गया। मुनिश्री की आँखें व चेहरा टेढ़ा हो रहा था, साँसें थम सी रही थी। साधना से उठकर आए आचार्यश्री ने अपना ऊर्जावान हाथ मुनिश्री के

सिर पर रखा। आचार्य गुरु के अतिशयकारी हाथ का स्पर्श पाते ही शुद्धसागरजी महाराज ने उन पर काली उल्टी (वमन) कर दिया। आचार्यश्री ने उन्हें सांत्वना देते हुए कहा कोई बात नहीं, अभी स्वास्थ्य ठीक हो जाएगा। कुछ ही देर में प्रकोप शांत हो गया।

जिनेन्द्र अर्चना पश्चात प्रातःकाल पुनः कंकर-कंटक मय बीहड़ व कठिन पहाड़ी रास्ते से विहार प्रारंभ हो गया। इतना घना जंगल कि वहाँ ग्रामीणों को दिन में भी शेर-चीते दिखाई दे जाते थे। सिंहवृत्ति संतों ने गुरुवर के साथ मांडव गाँव में चरण मांडे। यहाँ पर आचार्यश्री के सान्निध्य में 10 से 13 फरवरी 2020 तक ध्वजारोहण के साथ तीन दिनी लघु पंचकल्याणक महोत्सव प्रतिष्ठाचार्य श्री महावीरजी के निर्देशन में प्रारंभ हुआ। आदिवासी बस्ती में गिने-चुने जैन परिवारों के बीच बड़े उत्साह से कार्यक्रम चल ही रहा था कि मांडव गाँव में असाता वेदनीय कर्म का महातांडव शुरू हो गया।

बिना आराम लगातार कठिन मार्ग पर विहार की थकान, निरंतर व्यस्तता, शीतलहर का प्रकोप, धूल-मिट्टी तथा प्रतिकूल आहार आदि-आदि के कारण आचार्यश्री को तेज बुखार, खाँसी, सर्दी, कफ की भयंकर शिकायत हो गई। पहले भी ठीक से निद्रा नहीं ली, अब सर्दी-खाँसी-बुखार के कारण बिल्कुल निद्रा नहीं ले पा रहे थे। इसलिए बीमारी बढ़ती जा रही थी। निरंतर कार्यक्रमों में विशाल जनसमुदाय के बीच रहने व धूल-धक्कड़ से उन्हें भयंकर इन्फेक्शन हो गया। वे आहार भी नहीं ले पा रहे थे जिससे कमजोरी अत्यधिक बढ़ती जा रही थी। लगातार आचार्यश्री के गिरते स्वास्थ्य को देख क्या चतुर्विध संघ और क्या श्रावकगण, हर कोई चिन्तित हो गया। इतना अत्यधिक श्रम उनके लिए उपसर्ग बन गया। परिस्थिति दिन पर दिन विकट से विकटतम होती जा रही थी। अन्न का कण भर पेट में नहीं जा रहा था जिस कारण दो कदम चलना तो दूर, वे ठीक से उठ-बैठ भी नहीं पा रहे थे।

आचार्य गुरु की ऐसी स्थिति देख संघ ने उनके स्वास्थ्य लाभ की कामना करने णमोकार महामंत्र का जाप शुरू कर दिया। इधर श्रावकगण पांडाल में सामूहिक रूप से णमोकार महामंत्र का जाप कर आचार्यश्री के शीघ्र स्वस्थ होने की मंगल प्रार्थना कर रहे थे। ऐसी बीमार हालत में बढ़ती बेचैनी व पीड़ा के बीच भी आचार्यश्री सख्ती से अपने चारित्र का पालन कर रहे थे। अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग में लीन, मल का पिटारा देह से विरक्त, ज्ञानस्वभावी, आत्मानुभव अभ्यासी आचार्यश्री इस ज्वर पीड़ा में भी समता भाव धारण किये थे।

आचार्यश्री के स्वास्थ्य में कोई सुधार नहीं हो पा रहा था। एक से बढ़कर एक डॉक्टर, हकीम, वैद्य आ रहे थे, उपचार बता रहे थे, पर कोई क्या कर सकता था? चौबीस घंटे में एक बार आहार लेना। उसमें भी अनाज लेना तो दूर, पेट में पानी भी नहीं टिक रहा था। डॉक्टरों ने देखा पर उनकी दवाइयों का उनके लिए निषेध था, वैद्यों की दवाइयाँ भी बे-असर होती जा रही थी। कमजोरी बढ़ती जा रही थी। एक वक्त में ली गई दवाई को ही सारा असर करना था। डॉक्टरों व वैद्यों के पास सारे इलाज थे, साधन थे, पर आचार्यश्री की कठिन चर्या व मुनिव्रत के आगे सब बेबस थे।

एक ओर आचार्यश्री की शारीरिक शक्ति क्षीण होती जवाब दे रही थी, एक ओर कुछ तय आगे के कार्यक्रम और बाकी दूसरी ओर गाँव-गाँव से उमड़ती लोगों की भीड़, बार-बार आचार्यश्री के चरणों में लेट-लेट कर प्रार्थना कर रही थी कि एक बार आचार्यश्री के ससंघ श्रीचरण उनके गाँवों की माटी को पवित्र कर दे। संतों की आहार चर्या से उनके घर पावन हो जाएँ। जिनके गाँव आचार्यश्री के विहार पथ से दूर थे वे भी आशाभरी नजरों से गुरु चरणों में लेट-लेट कर नमन कर अनुनय-विनय कर रहे थे। उन्हें पूर्ण उम्मीद थी कि वात्सल्य रत्नाकर आचार्यश्री की सभी पर कृपा दृष्टि रहती है। सौभाग्य उनके द्वार भी आएगा।

वर्षों से नरवाली वासी आचार्यश्री के चातुर्मास के लिए प्रतीक्षारत थे। मुंगाणा में श्री रमेशजी पृथ्वीराजजी दोशी परिवार (संघस्थ आर्यिका सुप्रज्ञमती माताजी का गृहस्थ जीवन का परिवार) द्वारा 20 फरवरी 2020 से होने वाला सिद्धचक्र महामंडल विधान महीनों पूर्व सागवाड़ा चातुर्मास में ही तय हो गया था। आयोजन में पहुँचने का आचार्यश्री

का पूरा मन मानस था। अस्वस्थता के बावजूद भी पुष्ट मनोबल वाले आचार्यश्री ने पद विहार में संघर्षों के परीषह से न घबराकर विहार कर दिया। ऐसी अस्वस्थ दशा में जबकि एक-एक कदम चलना उनके लिए भारी था, दुरूहतम पथ के संघर्षों से वे पद विहारी कैसे अनजान रह सकते थे, फिर भी साबला की ओर विहार कर दिया। जिनके सातिशय आशीर्वाद से हजारों लोग ठीक होकर घर लौट गए, आज उनके लिए एक-एक कदम आगे बढ़ना व श्वास लेना मुश्किल था।

औरों को कर्मों के विष वृक्ष पर आरी चलाना सिखाने वाले आचार्यश्री समता भाव, आत्म संतोष व आत्म चिन्तन से स्वयं को साध रहे थे। अंततः देह ने जवाब दे दिया। बस अब और संयम की वल्गा में मुझे कसना उचित नहीं। समय को अपने अनुसार चलाने वाले आत्मानुशास्ता संत को मानो समय ने स्वयं नमस्कार कर आदेश दे दिया, ''सुनील सागर, ठहर जाओ, अपने में विश्राम करो। शरीर को विश्राम दो। यह आत्मा का आलय है, आत्म साधना का साधन है।'' साबला पहुँचते-पहुँचते असाता वेदनीय कर्म ने विकराल रूप धारण कर लिया। वाइरल इन्फेक्शन चरम पर पहुँच गया। शरीर अशक्त हो गया। हजारों कि.मी. पदयात्रा करने वाले संतश्री के लिए पाँव उठाना भारी हो रहा था। आज अपनी पीड़ा में वे अपने परम गुरु महातपस्वी आचार्यश्री सन्मतिसागरजी की पीड़ा देख रहे थे। कुंजवन से जब उन्होंने गुरुवर तपस्वी सम्राट को विदा दे मुंबई के लिए विहार किया था, उस वक्त की गुरुदेव की हालत। शाम को स्वयं ने डॉक्टर से आचार्यश्री के पैर के घाव का ड्रेसिंग करवाया था। गहरा घाव, तेज बुखार, वृद्धावस्था, पर चेहरे पर जरा सी भी शिकन नहीं। आज जैसी उनकी स्वयं की स्थिति है वैसी ही हालत गुरुदेव की भी थी। ऊपर से लगातार उपवासों से अशक्त व दुर्बल शरीर। चलना तो दूर, खड़ा होना भी उनके लिए मुश्किल था। ऐसी स्थिति में भी आचार्यश्री ने विहार कर दिया था। उनकी तुलना में तो मेरा स्वास्थ्य बहुत बेहतर है। इस प्रकार के आत्मचिंतन से वे आत्मऊर्जा एकत्रित कर शक्ति संचय कर रहे थे।

साबला में मंगल प्रवेश

साबला में आपके मंगल प्रवेश का महाआयोजन हुआ था। रास्ते पोस्टर, बैनर, मंगल द्वारों से पटे पड़े थे। जुलूस, बैंड-बाजों, पाद प्रक्षालन की सारी तैयारी तब धरी की धरी रह गई जब आचार्यश्री संघ को जुलूस के साथ मंगल प्रवेश के लिए छोड़ स्वयं छोटे रास्ते जिनालय जा पहुँचे। जैसे ही जिनेन्द्र देव के दर्शन कर आप बाहर आए, प्रतीक्षारत श्रावकों के विशाल समुदाय को आशीर्वाद देकर कक्ष में चले गए। अब श्रावकों की चिंता बढ़ गई कि ऐसी स्थिति में आचार्यश्री की आहार चर्या कैसे संपन्न होगी। गुरुदेव के कदम थम गए थे लेकिन उनकी अत्यंत अशक्त यह हालत देख भक्तों के दिलों की धड़कन बढ़ गई।

देह को पेट्रोल तो देना ही था, पथ्य भी लेना था सो आहारचर्या के लिए श्रावकों व संघ के अनुनय-विनय आग्रह को न टाल, उठना पड़ा। यहाँ भी परीक्षा की कठिन घड़ी। नियति की कठोरता निराली है। नियति जो खेल न खेले कम है। आहार चर्या के लिए एक कि.मी. दूर श्रावक के घर जाना पड़ा। वे ही जानते हैं कि उनके लिए एक कदम चलना भी दुश्वार था, एक कि.मी. कैसे चले होंगे। पर चले। रस्म अदायगी की व मात्र अंजुरी भर पानी ले लौट पड़े। जस-तस संत सदन पहुँच समता भाव से सामायिक में प्रवृत्त हो गए। जो आज तक नहीं हुआ था ऐसा नजारा संघ को पहली बार देखने को मिला। आचार्यश्री समता भाव पूर्वक आत्मचिंतन में डूब गए।

संघ के कर्णधार आचार्यश्री की अस्वस्थता के कारण उनकी सारी सक्रियता समाप्त सी हो गई थी जिस कारण सब कुछ फीका-फीका, सूना-सूना लग रहा था। जहाँ 40 मिनट दिव्य प्रवचन होते थे वहाँ वे 4 मिनट भी नहीं बोल पा रहे थे। संघ का पाठन-वाचना सब कुछ रुक गया। जहाँ दिन में दो-तीन बार उनकी वाणी का निर्झर तप्त संतप्त, दुःखी-

दीन लोगों को शांति-शीतलता प्रदान करता था वहाँ उनकी मौन साधना का सन्नाटा था। आचार्यश्री की इस तीव्र असाता वेदनीय कर्म के विपाक को अत्यंत एकान्त में मौन साधना हेतु सुअवसर रूप ग्रहण कर घंटों धर्म ध्यान करते चिदानंद आत्म स्वरूप में लीन रहते थे। उनकी अनुपस्थिति में उनकी आज्ञा से संघस्थ मुनि आर्यिकाओं द्वारा समस्त क्रियाएँ एवं धर्मोपदेश संपन्न होने लगे। आचार्यश्री की अस्वस्थता को देख संघ व समाज दोनों में विशेष अनुशासन आ गया। बागड़ के भक्तों ने अपनी सच्ची भक्ति दिखाते आहार-विहार में चरणों में लेटना, भीड़-भाड़ व शोर-शराबा करना बंद कर दिया। बड़ी शालीनता से दूर से गुरु दर्शन पूजन कर आचार्यश्री को निराकुल साधना हेतु पूर्ण अनुकूलता प्रदान कर रहे थे। समाज के रग-रग व रोम-रोम में पुनीत व प्रशस्त भावना थी कि गुरुवर शीघ्रातिशीघ्र स्वास्थ्य लाभ कर लें व जीवन पहले सा पटरी पर आ जाए। इस उद्देश्य से युवा संघ द्वारा रात भर णमोकार महामंत्र का अखंड पाठ/जाप व सन्मति विधान किया गया।

डॉक्टर, वैद्यों, सलाहकारों का तांता लगा रहता था। लेकिन वे नब्ज टटोलने व चेक-अप करने के अलावा और कुछ करने में असमर्थ/असहाय थे। दिगंबराचार्य एलोपैथी दवाइयाँ लेते नहीं, आयुर्वेदिक दवाइयाँ भी दिन में एक बार आहार के वक्त ही ले पाते थे। यदि वे डॉक्टर व वैद्यों के इलाजानुसार दवाइयाँ लेते तो कब के स्वस्थ हो जाते पर इन अध्यात्म योगी संत को बाहरी उपचार या पराधीनता स्वीकार कहाँ? उनके लिए तो स्वाधीन आत्मसाधना व भेद विज्ञान पूर्वक तपस्या ही हर समस्या का सटीक समाधान है। 'मेडिटेशन इज बेस्ट मेडिसिन' सूत्र को आचार्यश्री दृढ़ता से मानते हैं एवं जीते हैं।

अंततः अध्यात्म बल के आगे असाता घुटने टेकने लगी। परिषहजयी आत्मसाधना से कर्म निर्जरा के साथ धीरे-धीरे स्वास्थ्य सुधार पर था। इतनी अधिक शारीरिक वेदना के बावजूद भी आपके शांत, सौम्य वीतरागी चेहरे पर असीम शांतता, समता, निस्पृहता, प्रसन्नता, सहनशीलता, मन की दृढ़ता व धीरता देखने लायक था। चेहरे पर बिना पीड़ा की एक भी रेखा खींचे, विषमता में भी समता कैसे धारण की जाती है, प्रतिकूलता के मौन उपदेश द्वारा आप सहज जीवन जीने की कला प्रेक्टिकल रूप में स्वयं चरितार्थ कर सिखा रहे थे। हमारे कहने, करने व सोचने से कुछ नहीं होता, नियति को जो मंजूर है वही होता है। जहाँ साबला में आचार्यश्री का ससंघ छह घंटे का ही मंगल प्रवास था वहाँ साबला में छह दिन (15 से 20 फरवरी) तक प्रवास का शारीरिक रूग्णता के कारण योग-संयोग बन गया। इसी बीच परिस्थिति को भाँपकर आचार्यत्व के गुणों से संपन्न आचार्यश्री ने मुंगाणावासियों को भी निराश-उदास न कर संघस्थ मुनिद्वय व आर्यिका माताजी को मुंगाणा विधान में सान्निध्य प्रदान करने का आदेश दिया क्योंकि वे जानते थे कि ऐसी परिस्थिति में वे मुंगाणा जा पाएँ या न जा पाएँ।

अनियत विहारी आचार्यश्री ने आचार्यश्री आदिसागर विधान करवा व विनयांजलि स्वरूप 10 मिनट प्रवचन देकर साबला से विहार कर अचानक श्री सुपार्श्वनाथ भगवान की शरण में रीछा जा पहुँचे। शिवरात्रि के दिन आचार्यश्री आदिसागरजी अंकलीकर का 76वाँ समाधि दिवस था। प्रातः आचार्य श्री शौच के लिए निकले, वहीं से गामड़ी गाँव के लिए विहार कर दिया। रीछा में पलक झपकते ही जंगल की आग की तरह यह समाचार फैल गया। चारों ओर शोर-शराबा हो गया, हलचल मच गई। लोगों की अश्रुधारा बहने लगी। घर-घर चौके लगे थे। आचार्यश्री आदिसागरजी के समाधि उत्सव की भव्य तैयारी हो चुकी थी कि अचानक यह क्या? समाज को बीच मँझधार में छोड़ आचार्यश्री ने विहार कर दिया। लोग रोते-गाते जो जिस हाल में थे, अपनी गाड़ियाँ उठा दौड़ पड़े। रोते-रोते गुरु चरणों में लोट कर अपनी गलतियों के लिए माफी माँगने लगे व वापस रीछा लौटने का अनुनय-विनय पूर्वक आग्रह करने लगे। वे कह रहे थे- बिना आहार के गुरुदेव आपका विहार न होगा चाहे जो कुछ हो जाय। आचार्यश्री का विहार का रास्ता अवरुद्ध था कि इतने में अनन्य गुरुभक्त प्रतिष्ठाचार्य श्री हसमुखजी का गुरुदर्शन हेतु रीछा आना हुआ। समाचार सुन वे सीधे

गामड़ी के मार्ग पर जा पहुँचे जहाँ रीछा के गुरुभक्त श्रावकों की भीड़ आचार्यश्री को वापस रीछा लाने जी-जान से जुटी थी। बीच रास्ते में विहार को उद्यत आचार्यश्री के सामने उन्होंने भी रीछावासियों के पक्ष में अपनी बात रख वापस रीछा लौटने का विनय भरा आग्रह किया। रीछावासियों की अश्रुधारा रुक नहीं रही थी। वात्सल्य व करुणा से भरे आचार्यश्री ने कहा कि रीछावासियों की कोई गलती नहीं हुई है। विहार तो हमारी प्रक्रिया के तहत हुआ था। और वे कृपा निधान उन पर कृपा बरसाते पुनः रीछा की ओर लौट चले। रीछा में चारों ओर एक ही चर्चा थी- 'भक्तों की भक्ति से ही भगवान लौटे हैं।' एक बार फिर आचार्यश्री के दर्शन पा रीछावासियों की आँखों से आनंदाश्रु बहने लगे।

आदिसागर विनयांजलि व विधान संपन्न कर आचार्यश्री ससंघ निठुआ गामड़ी होते हुए पारसोला पहुँचे। जिस किसी भी गाँव से आचार्यश्री गुजरते, सारे ग्रामवासी जैन-अजैन का भेदभाव भुलाए गाँव के सरपंच, अन्य जनप्रतिनिधि, नेता, पुलिस अधिकारी व सारे गणमान्य गरीब-अमीर जात-पात की भावना भूल आचार्यश्री की मंगल अगवानी में जा पहुँचते। आचार्यश्री भी जैसा कि उनकी आदत में प्रारंभ से ही शुमार है, हर गाँव में रुकते, ग्रामीणों से नशा-तम्बाकू छुड़ाने व जानवरों की बलि न देने की बात समझाते। ग्रामीण स्कूलों में भी वे बच्चों में संस्कार रोपित करते, नैतिक शिक्षा देते विशेष प्रवचन देते जा रहे थे। इस प्रकार हर ग्राम में आचार्यश्री ग्रामीणों को सुधारने की बात करते। वे उन्हें बड़ी सरल भाषा में धर्मोपदेश भी देते जाते थे। पूरे बागड़ क्षेत्र में आचार्यश्री के प्रति प्रत्येक जैन-अजैन व ठेठ ग्रामीणों तक में अकूत श्रद्धा व आस्था भरी थी। वे आचार्यश्री को बड़े बाबा व संघस्थ साधुओं को बाबा का सम्बोधन देते अपने गाँव में उनके पदार्पण पर नाचते-गाते, ढोल-ताशे बजाते बड़े हर्षोल्लास के साथ उनकी अगवानी करते। चरणों में लोट जाते। उनके लिए तो आचार्यश्री साक्षात भगवान का रूप थे।

स्वास्थ्य अत्यधिक खराब होने के बावजूद भी आचार्यश्री का विहार चल रहा था। अनियत विहारी आचार्यश्री का सुबह-शाम कब विहार हो जाए, कहाँ जाएँगे किसी को कुछ पता न रहता था। आचार्यश्री के गिरते स्वास्थ्य को देख सबको लगने लगा परम गुरु भक्तों का नरवाली आचार्यश्री का इंतजार करता ही रह जाएगा और वे मुंगाणा चले जाएँगे। पूर्व में सन् 2002 में मुनि अवस्था में आपने गुरुवर तपस्वी सम्राट आचार्यश्री सन्मतिसागरजी के साथ नरवाली में चातुर्मास किया था। तब आपका चार मास का मौन था। इस कारण नरवालीवासी आपकी मंगल देशना सुनने तरसते रह गए थे। तब से लेकर आज तक नरवाली वासियों की आपके प्रति निःस्वार्थ निश्छल गुरुभक्ति बढ़ती ही जा रही थी। वे चातुर्मास से लेकर अब तक कई जगह जाकर आचार्यश्री को नरवाली पदार्पण के लिए विनयपूर्वक आग्रह कर चुके हैं। आचार्यश्री ने भी अनुकूलता न होने पर भी उन परम गुरु भक्तों को निराश नहीं किया। चूँकि आचार्यश्री का अगला चातुर्मास जयपुर तय था, अतः उन्होंने सोचा कि यहाँ से जाने के बाद वापस यहाँ क्या पता कब आना हो, सोच उनके कदम नरवाली की ओर मुड़ गए। वहाँ आपका भव्यातिभव्य मंगल प्रवेश कराया गया। नरवाली के बहुप्रतीक्षित संत भवन का उद्घाटन कर वहाँ दो दिन का धर्म लाभ दिया। हर घर द्वारा प्रेक्षण रूप पड़गाहन नरवाली वासियों की गुरुभक्ति की पराकाष्ठा थी। आचार्यश्री ने भी इन समर्पित गुरु भक्तों की गुरुभक्ति से अभिभूत हो दोनों दिन अपनी अस्वस्थता को नकारते, दोनों बेला में विधान, धर्मोपदेश आदि द्वारा भक्तों को पुण्यार्जन का लाभ दिया। नरवाली वासियों का प्रबल पुण्य संयोग कहो, जो लाभ लोगों को आचार्यश्री के 8 दिनों के भी मंगलवास में नहीं मिला, वह लाभ उन्हें दो दिन में मिल गया।

मुंगाणा की ओर

नरवाली से आपने ससंघ विहार कर दिया। 24 फरवरी 2020 शाम को जैसे-जैसे आप मुंगाणा गाँव के निकट पहुँच रहे थे, आचार्यश्री के अनपेक्षित आगमन की खुशी में 'दूध जलेबी सिंगदाणा, गुरुभक्तों का गाँव मुंगाणा' के

गुरुभक्ति के नारे के साथ पूरा मुंगाणा आचार्य गुरु की अगवानी में उल्टे पैर दौड़ पड़ा। मुंगाणा में गुरु भक्ति, श्रद्धा, आस्था व खुशियों का सैलाब उमड़ पड़ा। भक्तगण नाचते-झूमते गा रहे थे- 'बहारों फूल बरसाओ, मेरा महावीर आया है...' युवाओं का जोश और उत्साह देखते ही बन रहा था। चारों ओर नारे लग रहे थे- 'भक्तों के भगवान पधारे, आओ-आओ चरण पखारे', 'वर्तमान के वर्धमान, सुनीलसागरजी गुरु महान', 'आज दिवाली होली आई - दीप जलाओ घर-घर भाई।'

मुंगाणा के श्री रमेशकुमार दोशी (संघस्थ आर्यिका सुप्रज्ञमती माताजी के गृहस्थ पिता) अनन्य गुरुभक्त यशवंतजी पचोरी संघ सारथी परिवार एवं सुनीलसागर युवा संघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष, अनन्य गुरुभक्त नमन पचोरी द्वारा विशेष आकर्षक रूप से एवं समाज के ध्वज, गाजों-बाजों व लहराती पचरंगी पताकाएँ लिए भव्य अगवानी के साथ सर्वधर्म के समाज के अग्रणियों द्वारा चरण वंदना कर आपका ऐतिहासिक मंगल प्रवेश हुआ जो न भूतो न भविष्यति था। लोगों ने तो इस बहुप्रतीक्षित सिद्धचक्र मंडल विधान में आचार्यश्री के आगमन की आशा ही छोड़ दी थी लेकिन आयोजकों का अनन्य विश्वास था सिद्धों की आराधना की ऐसी कृपा मेह बरसेगी कि कोई न कोई दैवीय शक्ति आचार्यश्री को यहाँ ले आएगी। यह देवीय चमत्कार कहो या मुंगाणा वासियों की पवित्र विशुद्ध भक्ति की शक्ति, आचार्यश्री आहार नहीं ले पाते थे, अस्वस्थता वश चलने में अशक्तता लगती थी, कहाँ से कौनसी शक्ति उन्हें चलाकर यहाँ तक ले आई। आश्चर्य चकित लोगों में एक ही चर्चा थी, सिद्धों की आराधना स्वरूप सिद्धचक्र महामंडल विधान में जान आ गई, सिद्धों की भक्ति में लोगों के पैर और अधिक तेज गति से थिरकने लगे। आधे विधान में ससंघ शामिल हो आचार्यश्री के मंगल आगमन से मंडल विधान की शोभा ही निराली हो गई। द्विगुणित उत्साह भक्ति के साथ आचार्य गुरुवर के सान्निध्य में विधान पूर्ण हुआ। यहाँ से आपकी प्रतापगढ़ जाने की तैयारी थी। वहाँ भी गुरुभक्त समाज आपका बेसब्री से इंतजार कर रहा था।

विभिन्न जगहों पर आचार्यश्री के सान्निध्य में होने वाले विभिन्न कार्यक्रमों एवं आयोजनों की लम्बी फेहरिस्त थी। समाज जन एवं साधुवृंद के विशेष आग्रह पर पूर्ण स्वास्थ्य लाभ हेतु आपका प्रतापगढ़ का विहार पुनः स्थगित करा दिया गया। समाज का आग्रह था कि ऐसे महायोगी महाविज्ञ संत समाज की अनमोल निधि होते हैं जिसकी सुरक्षा करना समाज का परम कर्तव्य है। अतः वे मुंगाणा के स्वच्छ, शुद्ध, पवित्र वातावरण में स्वास्थ्य लाभ लें। पूर्ण स्वस्थ होने पर ही विहार करें। हममें तो कोई ताकत नहीं कि आपके चरण पकड़ कर रोक सकें। यह हमारी सिद्धों की भक्ति की शक्ति का ही चमत्कार कहा जाएगा कि आप रुक जाएँ। आचार्यश्री भी चिंतन कर रहे थे। देह हैं तभी तक तो इसमें देहीश्वर (आत्मा) विराजमान है। जिसने परमेश्वर बनने के लिए यह संतत्व ग्रहण किया है। निर्मोही संत आचार्यश्री प्रबुद्धजनों का आग्रह न टाल सके। वे पूर्ण स्वास्थ्य लाभ हेतु मुंगाणा रुक गए।

इधर धरियावद वासियों का भी विशेष आग्रह था। आचार्यश्री तो वहाँ तक जाने में अशक्त व असमर्थ थे। अतः संघस्थ दो मुनि महाराज को अष्टाह्निका पर्व में सिद्धचक्र महामंडल विधान में सान्निध्य प्रदान करने भेज दिया। यद्यपि आचार्यश्री का शरीर अस्वस्थ था पर मन तो सद्यजात पुष्पवत सदा ही तरोताजा व प्रसन्न रहता था। जहाँ आचार्यश्री विराजमान हो वहाँ कोई मंगल कार्य न हो, कैसे संभव हो सकता है। आचार्यश्री से कभी गिरनार तीर्थ की पुण्य धरा पर अजितनाथ भगवान के मंदिर निर्माण के लिए समाज ने आशीर्वाद माँगा था। तबका निवेदन व मंदिर निर्माण का कार्य ठंडे बस्ते में पेंडिंग पड़ा था। अब आचार्यश्री के परम पावन सान्निध्य में सुश्रावकों को सद्बुद्धि आई व इस रुके सद्कार्य के लिए ऊर्जा मिली। सकल समाज का मन बना तथा शिलान्यास करने की भावना जागी। इसी बीच अष्टमी को उपवास कर इतनी अशक्त व अस्वस्थ हालत में भी आचार्यश्री ने अपने ही हाथों केशलोच की कठिनतम चर्या संपन्न की।

आपके सान्निध्य में 21 मार्च 2020 नवमी के दिन मात्र चौबीस घंटों की पूर्व तात्कालिक तैयारी के बीच श्री 1008

अजितनाथ जिनालय का शिलान्यास प्रतिष्ठाचार्य श्री हसमुखजी के निर्देशन में सानंद संपन्न हुआ। आप जहाँ भी जाते हैं कोई न कोई आयोजन आपका इंतजार करता रहता है। आपकी लोकप्रियता इस कदर है कि हर ग्राम, शहरवासी अपने यहाँ के धार्मिक कार्य आपके सान्निध्य में आपके आशीर्वाद से करवाना चाहते हैं। लोगों का मानना है कि आचार्यश्री सुनीलसागरजी के आशीर्वाद से उनके करकमलों से शुरू हुआ कार्य निर्विघ्न शीघ्र सानंद संपन्न हो जाता है। फिर आप जैसे महान संत के सान्निध्य में होने वाले धार्मिक आयोजन का आनंद तो निराला है।

अब प्रतापगढ़ समाज आपका अष्टाह्निका विधान की पूर्णाहूति व गुरु मंदिर प्राण प्रतिष्ठा हेतु इंतजार कर रही थी। तत्वज्ञानी धर्म साम्राज्य नायक राष्ट्र गौरव आचार्यश्री सुनीलसागरजी ने ससंघ अनन्य गुरुभक्तों की नगरी मुंगाणा से मंगल विहार कर दिया। आचार्यश्री के तन-मन-चेतन के स्वस्थ रहने की मंगल कामना करते मुंगाणा समाज ने विह्वल मन, बरसती आँखों से आपको विदा किया। आप जिधर से गुजरते लोग वर्तमान के वर्द्धमान आए कहते हुए गुरु दर्शन के लिए दौड़ पड़ते। आपका आशीर्वाद पा निहाल हो जाते और आपके लिए भी आपकी साधना, धर्म प्रभावना व भावना विशुद्धि के वर्द्धमान होने की मंगल कामना करते नहीं थकते थे। मोक्षमार्ग में निरंतर वर्धमान हो रहे वर्तमान के वर्धमान, महापुरुष सदृश समस्त लक्षणों से विभूषित आचार्यश्री को ससंघ व पीछे-पीछे चलती-चलती भक्तों की भीड़ देख लोग यही कहते कि हमने भगवान का समवशरण तो नहीं देखा, इसी में हमें समवशरण की झलक के दर्शन का साक्षात सौभाग्य प्राप्त हो गया है।

प्रतापगढ़ की ओर

अशक्त शरीर तथापि दृढ़ मनोबल लिए ऊँचे-नीचे, टेढ़े-मेढ़े, ऊबड़-खाबड़ पहाड़ी रास्तों से नया मार्ग बनाते हुए जहाँ कभी कोई नहीं पहुँचा, ऐसे एडवेंचर व रोमांचक विहार के साथ आप तीन दिन में ससंघ प्रतापगढ़ पहुँच गए। आचार्यश्री के आगमन की खुशी में प्रशासन ने रातों-रात शहर की टूटी-फूटी सड़कें सुधारने की सुधी ली लेकिन आचार्यश्री ने दूसरे रास्ते ही नगर में प्रवेश किया। गुरुभक्तों के गढ़ प्रतापगढ़ में लोकप्रिय संत आचार्यश्री के दर्शनार्थ बावरी जनता सड़कों पर उमड़ पड़ी। चारों ओर जनता का रेला ही रेला दिखाई पड़ रहा था। यहाँ आचार्यश्री के ससंघ सान्निध्य में दिनांक 10 मार्च 2020 तक सिद्धचक्र महामंडल विधान की पूर्णाहूति के साथ अत्यंत अतिशयकारी आकर्षक गुरु मंदिर व ध्यान केन्द्र की प्रतिष्ठा संपन्न हुई। प्रतापगढ़ जिला सांसद सी.पी. जोशी एवं नगर सभापति (आचार्यश्री के नियमित श्रोता परम गुरुभक्त) श्री कमलेशजी दोशी की उपस्थिति में एवं इंदौर, मुंबई आदि नगरों, बांसवाड़ा, सागवाड़ा, डूंगरपुर आदि बाहर से पधारे व प्रतापगढ़वासी गुरुभक्तों के भक्तिमय प्रशस्त वातावरण में जन-जन के चहेते गुरुवर तपस्वी सम्राट आचार्यश्री सन्मतिसागरजी की जीवंत पद्मासन प्रतिमा विराजमान हुई।

पश्चात संघ अतिशय क्षेत्र शांतिनाथजी पहुँचा। यहाँ से ब्यावर बालूदा पंचकल्याणक महोत्सव हेतु विहार की सम्पूर्ण तैयारी थी कि तभी आपकी प्रेरणा से प्रथम बार प्रतापगढ़ में प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ भगवान का जन्मकल्याणक महोत्सव आचार्यश्री के सान्निध्य में ऐतिहासिक धर्म प्रभावना पूर्वक मनाया गया। पूरे प्रतापगढ़ के गली-मोहल्ले आदि विधाता, विश्वकर्मा, प्रजापति, आदिब्रह्मा ऋषभदेव के जयकारों से गूँज उठे। जैन-अजैन प्रतापगढ़वासी हजारों लोगों ने प्रभु ऋषभदेव के कार्यों व हमारे लिए षट कर्तव्यों असि, मसि, कृषि, शिल्पकला, विद्या व वाणिज्य के बारे में सुना व प्रभावित हुए। लोगों को सही अर्थों में आचार्यश्री के प्रवचन से समझ में आया कि आदिनाथ भगवान प्रजापति क्यों कहलाते हैं? ऋषभ जयंती के बाद वात्सल्य भोज का भी आयोजन था।

पुनः शांतिनाथ आगमन

आचार्यश्री ससंघ कुछ आगे बढ़े कि उससे पूर्व ही अतिशयकारी भगवान शांतिनाथ ने प्रशांत मूर्ति आचार्यश्री को पुनः अपनी चरण निश्रा में बुला लिया। विश्व महामारी कोरोना जैसे अदृश्य अजातशत्रु का सम्पूर्ण विश्व पर अटैक हो चुका था। भारत पर भी इसका आक्रमण हो चुका था। बिना हथियार के इस अदृश्य शत्रु के देश की सीमा में प्रवेश करने वाले इस चालाक शत्रु को रोकने का उपाय चल रहा था। लोग अपने-अपने घरों को लौट रहे थे। छात्रों की परीक्षाएँ रुक गईं, स्कूल-कॉलेज, होस्टल सब बंद हो रहे थे। कि तभी देश के प्रधानमंत्री माननीय श्री नरेन्द्र मोदी ने पहले 22 मार्च 2020 व बाद में 25 मार्च 2020 से अनियत लॉकडाउन घोषित कर दिया। इस वैश्विक महामारी से बचने का एकमात्र उपाय था सभी घरों में रहें, बाहर किसी से संपर्क न करें। इस महामारी का वायरस पीड़ित के संपर्क में आने, हाथ छू जाने से दूसरे में प्रवेश करता है व एक से दूसरे में तेजी से फैलने वाली संक्रमण की बीमारी है। कोरोना कोविड-19 के नाम से जानी जाने वाली इस महामारी ने ऐसा कहर ढाया कि इस सैटेलाइटल मंगल चाँद पर पहुँचने वाले युग के वैज्ञानिक इसे रोक पाने में असफल, हतप्रभ थे। लोग मर रहे थे। लॉकडाउन से पूरे देश में एकसाथ कर्फ्यू लग गया था।

देश काल परिस्थितिजन्य युग के परिप्रेक्ष्य में इस युग की इस बहुत बड़ी विध्वंसक महामारी से उत्पन्न स्थितियों का चित्रांकन भी करना लेखक का कर्तव्य है। पूरा विश्व स्तब्ध था। भारतवासी तो समझ ही नहीं पाए कि यह क्या हो गया। लॉकडाउन की घोषणा से देश के विकास के पहिये थम गये, जो जहाँ था वहीं रुक गया। जल-थल व वायु मार्ग से चलने वाले सारे आवागमन के साधन बंद हो गए थे। सब कुछ बंद। मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारे बंद, मयखाने बंद, मॉल बंद, बाजार बंद, फैक्ट्रियाँ बंद। खेतों में पकी फसलें तैयार थी पर फसल काटने वाला किसान झोपड़ी में बंद था। फैक्ट्रियों में माल तैयार था पर फैक्ट्री मालिक बंगले व आलीशान कोठियों में बंद थे और बेचारे मजदूर बेघर बेरोजगार हो सड़क पर। जो कभी सुना नहीं, देखा नहीं, ऐसा देश का हाल था। इस कोरोना के लॉकडाउन में पूरे देश में विकास के पहिये थम गए। आचार्यश्री का ससंघ शांतिनाथ पर प्रवास था। इस विकट परिस्थिति में प्रतापगढ़ समाज ने आचार्य संघ को वहीं रोक लिया। उनके द्वारा की गई आचार्य संघ की सेवा, आहार-विहार चर्या की व्यवस्था प्रशंसनीय व सराहनीय रही। समयानुकूल भक्त समाज ने आचार्य संघ की अच्छी से अच्छी व्यवस्था की। वहाँ कुछ लोगों के अलावा किसी का भी आना-जाना प्रतिबंधित था।

आचार्यश्री एवं श्रीसंघ ने यहाँ एकान्त साधना का पूर्ण लाभ लिया। इस कोरोना की विश्वव्यापी गंभीर परिस्थिति में समूचे संघ ने विश्व शांति के लिए लाखों जाप किये, अनुष्ठान किये। प्रतिदिन सोशल डिस्टेंस के नियम का पालन करते हुए वृहद शांतिधारा एवं विधान संपन्न हुए। प्रतापगढ़ के कुछ परिवार एवं संघ सारथीगण वहीं तीर्थ पर ही आचार्यश्री व संघ की सेवा चर्या में जुटे थे।

समाधि

24 मार्च 2020 को शांतिनाथ तीर्थ पर पूर्व से सल्लेखना समाधिरत वयोवृद्ध अनुजमती माताजी का गुरुचरणों में णमोकार महामंत्र सुनते हुए शांतिपूर्वक श्रेष्ठ समाधिमरण हो गया।

अक्षय तृतीया के दिन संघ सेवा में समर्पित सात प्रतिमा धारी श्रावक श्रेष्ठी श्री अरविंदजी गाँधी द्वारा पूर्ण जिम्मेदारी से आचार्यश्री सुनीलसागरजी की भावनानुकूल आचार्यश्री आदिसागर अंकलीकर गुरु मंदिर एवं वात्सल्य भवन बनवाने की घोषणा की गई एवं भूमि पूजन एवं शिलान्यास भी आचार्यश्री के सान्निध्य में संपन्न हो गया।

उन्हीं दिनों दि. 15.4.2020 को क्षुल्लक श्री सुहृद सागरजी की उत्तम समाधि की भावना व वैसे ही निमित्त देखकर

उनकी मुनि दीक्षा संपन्न हुई और उन्होंने आचार्यश्री से अन्न-जल त्याग का संकल्प कर लिया। दो दिन में ही आचार्यश्री के चरणों में सोऽहं ध्वनि सुनते हुए मुनिश्री का श्रेष्ठ समाधिमरण हुआ। उनकी स्मृति को चिरामृत रखने हेतु उनके गृहस्थ परिवार के सदस्य श्री मुकेश घाटलिया द्वारा दान की घोषणा के साथ विशाल प्रवचन हॉल बनाने की भावना व्यक्त की गई।

महावीर जयंती एवं आचार्यश्री का 23वाँ दीक्षा स्मृति दिवस

शांतिनाथ तीर्थ पर उपस्थित गुरुभक्तों ने भगवान महावीर जयंती आचार्यश्री के सान्निध्य में मनाते हुए अपने गुरुवर की 23वीं दीक्षा जयंती बड़ी श्रद्धा, समर्पण व भक्ति से मनाई। बाँसवाड़ा निवासी गुरुभक्त श्री सुरेशजी संघवी द्वारा निर्मित कराए जाने वाले 'संघवी अतिथि गृह' का आचार्यश्री के सान्निध्य में शिलान्यास किया गया।

लॉकडाउन खुलने पर प्रतापगढ़ समाज एवं बगवास तीर्थ पंचबालयति व त्रिमूर्ति ट्रस्ट के सदस्यों के बार-बार आग्रहपूर्ण निवेदन पर आचार्यश्री ससंघ बगवास पहुँचे। वहाँ आपके सान्निध्य में श्रुत पंचमी महापर्व मनाया गया।

उत्तुंग खड़गासन त्रिमूर्ति व पंचबालयति मूर्ति स्थित बगवास तीर्थ आचार्यश्री संघ की उपस्थिति से 'बागवास' बन गया। अन्य दिन होते तो यहाँ लोगों का मेला लग जाता किंतु कोरोना विश्व महामारी की विषम परिस्थिति में शासन के नियम-निर्देशानुसार लोगों की आवाजाही रुकी हुई थी। तीर्थ में कोटिया परिवार की विशेष प्रशस्त भावना से समवशरण मंदिर निर्माण हेतु शिलान्यास पूर्वक तीव्र गति से कार्य चल रहा है।

बगवास चातुर्मास स्थापना (5 जुलाई 2020 गुरु पूर्णिमा)

गुरु पूर्णिमा पर्व 5 जुलाई 2020 को इस कोरोना वैश्विक महामारी के भीषण काल में आचार्यश्री द्वारा ससंघ प्रतापगढ़ (राज.) शहर से दूर प्रकृति के सुरम्य अंचल में बसे त्रिमूर्ति एवं पंचबालयति तीर्थ के मनोरम वातावरण में वर्षायोग चातुर्मास 2020 हेतु मंगल कलश की स्थापना की गई। कुछ श्रावक श्रेष्ठियों की उपस्थिति में पूर्ण रूप से सोशल डिस्टेंस (सामाजिक दूरी) की नियमावली के अनुशासन के साथ कार्यक्रम संपन्न किया। चातुर्मास मंगल कलश स्थापना व गुरु पूर्णिमा का पर्व गुरुभक्तों की अनुपस्थिति में फीका-फीका लग रहा था। अपने-अपने घरों में कैद गुरुभक्त गुरु पूर्णिमा एवं वर्षायोग मंगल कलश स्थापना पर न आ पाने की मजबूरी वश छटपटा रहे थे।

प्रतिदिन शांतिधारा से शुरू होकर जिनेन्द्र अर्चना, स्वाध्याय आदि धार्मिक क्रियाओं के साथ यह चातुर्मास सानंद चल रहा है। प्रतापगढ़ व आसपास गाँवों से आए परिवारों द्वारा तीर्थ प्रांगण में ही आचार्यश्री के विशाल संघ की आहार चर्या संपन्न कराने के लिए 20 से अधिक चौके लगाए जा रहे हैं। आज प्रतापगढ़ से ज्यादा 'बगवास' तीर्थ के भाग्य का पलड़ा भारी है। सब समय-समय की बात है। कभी गाड़ी नाव पर तो कभी नाव गाड़ी पर। सब समय का फेर है। सारी व्यवस्था शासन के नियमानुसार हो रही हैं।

चमत्कार

प्रतापगढ़ (राज.) मध्य विराजे महायोगी महाप्रतापी आचार्यश्री सुनीलसागरजी की दिव्य पवित्र ऊर्जा, सातिशय पूर्ण वर्गणा एवं श्रेष्ठ भावना के संयोग से ऐसा चमत्कार सबने साक्षात देखा, जन-जन ने अनुभव किया व सबने स्वीकारा और कहा कि यह आचार्यश्री की ससंघ कठिन साधना, चर्या व लोकहितकारी करुणा व वात्सल्यपूरित मंगल भावना का ही प्रभाव है कि अभी तक सम्पूर्ण प्रतापगढ़ कोरोना मुक्त है। वहाँ कोरोना का रोना नहीं हुआ व अत्यधिक सुरक्षित, निश्चिंत और धर्ममय माहौल में चातुर्मास संपन्न हो रहा है।

कोरोना काल में जुलाई-अगस्त 2020 में शासन के नियम अनुशासन में रह आचार्यश्री के नेतृत्व में इतना बड़ा चतुर्विध संघ गुरु आज्ञानुसार संघानुशासन का पालन करते हुए सोशल डिस्टेंस के नियम का पालन करते हुए शांति से अपनी चर्या कर रहा है। संघ में कई वयोवृद्ध त्यागी व्रती, महाव्रती साधु-साध्वियाँ होने के बावजूद सब स्वस्थ रह अपनी आराधना कर रहे हैं।

बगवास में दीक्षाएँ

आचार्यश्री के बोधि संबोधि पूर्ण प्रवचनों को सुन अक्सर भव्य आत्माओं को वैराग्य हुआ और दीक्षा ग्रहण कर मुक्तिपथ पर अग्रसर हुई हैं। मुकुट सप्तमी भगवान पार्श्वनाथ के मोक्ष कल्याणक के दिन दिनांक 26.7.2020 रविवार को ऐसी भव्य मुमुक्षु तीन आत्माओं को आचार्यश्री ने जैनेश्वरी दीक्षाएँ दी। इनमें 19 वर्षीय ब्र. सर्वज्ञ भैया (रोहित जैन) रीछा की दीक्षा का युवाओं में विशेष आकर्षण था। इनके नाम इस प्रकार हैं :-

1. श्रीमान पारस जैन, गोरेगाँव, मुंबई (महाराष्ट्र) — क्षुल्लक संपूज्यसागरजी
2. बा.ब्र. सर्वज्ञ भैया, रोहित जैन, रीछा (राज.) — क्षुल्लक संप्रज्ञसागरजी
3. बा.ब्र. मर्मज्ञ भैया, मनीष जैन, मुंबई — क्षुल्लक संविज्ञसागरजी

इन दीक्षाओं ने सिद्ध कर दिया कि अन्यत्र सारी गतिविधियाँ बंद पड़ी थी, तब भी आचार्यश्री सुनीलसागरजी के प्रेरणादायी उद्‌बोधन संसार सागर में भटकती आत्माओं के लिए प्रेरक का कार्य करते रहे हैं व मुमुक्षु आत्माओं की वैराग्य भावनाएँ बलवती व पुष्ट करते रहे हैं। यदि इन्हें आचार्यश्री सुनीलसागरजी जैसे गुरु मिल जाएँ तब देश काल परिस्थितियाँ कितनी भी प्रतिकूल क्यों न हो, इनकी सुचाल मुक्तिपथ से जुड़ जाती है और ये जीव जैनेश्वरी दीक्षाएँ ग्रहण कर लेते हैं। और यों मुक्तिपथ अबाध गति से प्रशस्त होता रहा है।

वर्तमान में कोरोना विश्व महामारी का महाप्रकोप सम्पूर्ण विश्व में बढ़ता जा रहा है। भारत में भी दिन-प्रतिदिन कोरोना रोगियों की संख्या बढ़ती जा रही है। ऐसी विकट परिस्थिति में भी आचार्यश्री इतने विशाल चतुर्विध संघ का बड़ी कुशलता से नेतृत्व कर रहे हैं और सारा संघ कोरोना से बचाव के अनुशासन में रह धर्म ध्यान कर आत्म साधना कर रहा है। आज तक आचार्यश्री के दिये आत्मानुशासन के कारण पूरा संघ सुरक्षित है।

आचार्यश्री का मंगल प्रवास चातुर्मास तक बगवास में है। यह आचार्यश्री की साधना के अतिशय प्रभाव, सूझबूझ व दूरदर्शिता का सुखद परिणाम है कि समाज इतने बड़े संघ की सम्पूर्ण व्यवस्था में तन-मन-धन से जुटा है और आचार्यश्री के कारण ही संघ निश्‍िंचत हो अपनी साधना में रत है।

* * *

संस्मरण-1 : तालाब पर घूमने जाने की घटना

संदीप के सागर, मोराजी वर्णी विद्यालय में पढ़ने आने के बाद उनके छोटे भाई संजय व विनय भी आ गए। संदीप अपने भाइयों को कभी-कभी सागर के प्रसिद्ध चकरा घाट तालाब पर घुमाने जरूर ले जाते। संदीप का वैसे अपने भाइयों के प्रति अत्यधिक स्नेह था पर संजय के प्रति उनका प्रगाढ़ स्नेह था। वे दोनों भाई हर कहीं साथ आते-जाते। उन्हें ज्यादातर दोस्तों की जरूरत नहीं होती। अक्सर होस्टल से भी वे साथ-साथ ही घूमने जाया करते थे। चकरा तालाब संदीप के जेहन में बसा हुआ था। अतः एक दिन संजय ने संदीप भैया के सामने फरमाइश रख दी कि भैया आज हम चकरा तालाब घूमने जाएँगे। पढ़ाई के बोझ तले दबे संदीप ने कह दिया कि देखेंगे पर अभी नहीं, मुझे पढ़ाई करना है।

संजय- हमेशा क्या पढ़ाई-लिखाई की बात करते हो, थोड़ा घूमने-फिरने भी चलो। माइंड फ्रेश हो जाएगा।

संदीप मुस्कुरा दिये। पटाना तो तुझे अच्छे से आता है, पर आज नहीं किसी और दिन हम चकरा तालाब जाएँगे।

होस्टल में दोपहर का खाना खाने के बाद संजय ने कहा- भैया हम अभी चकरा तालाब तरफ घूमने चलते हैं।

संदीप- आज और अभी? यह घूमने जाने का समय है क्या?

संजय- भैया, हम जब भी निकल पड़े, घूमने का समय हो जाया करता है। आप ही तो कहते रहते हैं कि हम बच्चों के लिए किसी भी काम को करने में समय का बंधन नहीं होता। हर काम के लिए हमें हर घड़ी तैयार रहना चाहिये। आज छुट्टी है तो घूमने-फिरने में मजा आएगा।

संदीप जोर से हँस पड़े। गलियाँ निकालना तो कोई तुझसे सीखे।

संजय तो तब तक उठ खड़े हुए- भैया! क्या पढ़ना-पढ़ना मचा रखा है। यहाँ हम पढ़ने ही आए हैं। पर कभी-कभी तो हमें घूमने-फिरने बाहर भी जाना चाहिये न, वरना तो हमें यहाँ कभी बाहर जाने का वक्त ही नहीं मिलेगा और संदीप चलो भैया कहते हुए संदीप का हाथ पकड़कर बाहर ले आया।

संदीप व संजय की केमिस्ट्री बहुत अच्छी थी। घर पर भी और होस्टल में भी उनकी जोड़ी राम-लखन की जोड़ी के नाम से प्रसिद्ध थी। उनमें कभी किसी ने झगड़ा होते नहीं देखा। संदीप जानते थे कि संजय का वैसे आज घूमने का मन नहीं है पर वह मुझे इस दोहरी परीक्षा की पढ़ाई के टेंशन से उबारना चाहता है इसलिए जिद कर रहा है।

तब तक दोनों भाइयों ने पिताजी द्वारा जेब खर्च के दिये रुपये में से बचाकर व कुछ माँ ने दिये थे, से साइकल खरीदी थी, वह साइकल लेकर संजय आ गया व बोला- चलो भैया! साइकल आज आप चलाएँगे।

संदीप- अरे! पिछली बार मैंने ही चलाई थी, आज तेरा टर्न है। तू चला।

संजय- नहीं आज मैं पीछे बैठकर घूमने का इंजॉय करूँगा क्योंकि संजय का सोच था कि भैया पीछे बैठेंगे तो वहाँ भी पढ़ाई का सोचते टेंशन करते रहेंगे।

पूरे रास्ते संजय यहाँ-वहाँ की बातें करते रहे व संदीप मुस्कुराते हुए सुनते रहे। पढ़ाई का आधा भूत रास्ते में ही उतर गया व आधा पढ़ाई का भूत तालाब पर उनके जैसे कितने ही बच्चों को नहाते, किलकारियाँ भरते, मस्ती करते देख उतर गया था।

संजय केरियर पर बिछा टॉवेल तो लाया ही था, बोला- भैया मेरे कपड़े व टॉवेल का ध्यान रखना, मैं नहाकर अभी आता हूँ। संदीप कुछ कहे उसके पहले ही वह सरपट भाग लिया। करीब आधे घंटे बाद संदीप ने पास जाकर आवाज लगाई- चलो संजय बाहर निकलो, हमें बहुत देर हो गई। पाँच मिनट और, पाँच मिनट और कहते हुए संजय ने आधा घंटा और लगा दिया।

बेशकीमती समय का मूल्य जानने वाले संदीप ने संजय को चेतावनी दी कि बाहर निकलो व अब होस्टल चलो वरना मैं तुम्हें छोड़कर चला जाऊँगा। संजय जानता था धुन के पक्के भैया उसे छोड़कर चले जाएँगे, पर उसका बाल मन पानी से बाहर निकलने का नहीं हो रहा था और संजय ने दौड़कर आकर संदीप की स्लीपर पानी में फेंक दी। लो अब कैसे जाओगे? कह फिर से पानी में जाने के लिए संजय मुड़ा ही था कि संदीप ने संजय की बाँह कसकर पकड़ ली और एक तमाचा उसके गाल पर जड़ दिया।

संजय भौंचक्का भैया का गुस्सा देखता ही रह गया। वह तो शरारत पर उतर आया था, उसने तो सोचा भी न था कि भैया इतने गुस्सा भी हो सकते हैं और तमाचा भी जड़ सकते हैं। आज तक तो उसने भाई का प्यार ही देखा था, आज पहली बार तमाचा देखा है। उसके पाँव थम गए।

संदीप- तूने चप्पलें पानी में क्यों फेंकी। अब मैं बिना चप्पल कैसे होस्टल व स्कूल जाऊँगा। अभी पैसे तो इतने साथ लेकर आए नहीं कि रास्ते से दूसरी चप्पल खरीद लेंगे।

संदीप ने प्रश्न सूचक दृष्टि से संजय की ओर देखा। संजय को अपनी बहुत बड़ी गलती का अहसास हो गया कि

खेल-खेल में की गई मजाक का कितना बड़ा दुष्परिणाम भयंकर हो जाता है। भैया की बात सौ फीसदी सच है। कैसे वे कल बिना स्लीपर के स्कूल जाएँगे। उनके पास यह एक जोड़ी स्लीपर तो है।

संजय पानी की तरफ दौड़ पड़ा, संदीप उन्हें आवाज लगाते रहे कि संजय चप्पल के लिए गहरे पानी में मत उतरना, जाने दे चप्पलें। और वे भी उसके पीछे दौड़ पड़े।

तब तक संदीप के पानी में खेलने वाले साथी दोस्तों ने संजय की हरकत देख ली थी। स्लीपर पानी से निकाल ली थी व संदीप को देखते ही उनके सामने यह कहते हुए रख दी कि भैया ये आपकी चप्पलें।

डॉ. संजय भैया (आचार्यश्री के छोटे भाई) ने जब मैं सागर मोराजी वर्णी विद्यालय (आचार्यश्री के शिक्षा मंदिर) के दर्शन कर लौट रही थी, तब वे उस 'चकरा घाट तालाब' पर उस जगह मुझे ले गए जहाँ से उन्होंने भाई की चप्पलें पानी में फेंक जीवन का बहुत बड़ा सबक सीखा था।

डॉ. संजय भैया ने बताया कि संदीप भैया मुझसे इतना स्नेह करते थे कि मारना तो दूर, हम चाहे कितनी गलतियाँ या शरारतें करते, डाँटते भी नहीं अपितु बड़े प्यार से समझाते। पर उस दिन का वह गुस्सा मैं भैया से कुछ पूछने की हिम्मत तो नहीं जुटा पाया पर रात भर न सो सका।

मैंने देखा, भैया भी उस रात नहीं सो पाए। उन्होंने मुझे करवटें बदलते देख लिया। मैं भी देख रहा था। वे बिस्तर पर बैठे थे। उनकी आँखों से अश्रु बह रहे थे। उन्होंने बड़े प्यार से मुझे आवाज लगाई- संजय! मैं उनकी मिश्री की डली सी मीठी आवाज सुन उठ बैठा। मैं भी रोने लगा। मौन ही हमने एक-दूसरे के मन की बात सुन-पढ़ ली।

मैं उनसे माफी माँगता उससे पहले ही वे बोल पड़े- संजय, मैंने तुझ पर हाथ उठा दिया। यह हाथ तो तुझ जैसे भाई को प्यार करने के लिए है। मैं इस गलती को जीवन भर नहीं भूलूँगा। माफ कर दे मेरे भाई। मैं कुछ कहता उससे पूर्व ही उन्होंने अपनी हथेली मेरे मुँह पर रख दी। तू तो बच्चा है। बच्चे तो ऐसी हरकतें करते रहते हैं पर मुझे तो संयत रहना चाहिये था।

डॉ. संजय भैया ने बताया कि दूसरे दिन मैने यह बात भैया के व मेरे कुछ खास दोस्तों को बताई तो उन्होंने बताया कि अच्छा हुआ संदीप की चप्पल पानी से निकाल ली। संदीप ने तो संकल्प लिया है कि परीक्षा तक वह पढ़ाई-लिखाई की सामग्री के सिवा अन्य कोई चीज नहीं खरीदेंगे। मैं पश्चाताप से भर गया कि यदि वे चप्पल पानी में दूर तक बह जाती तब परीक्षा तक भैया कैसे बिना चप्पलों के स्कूल जाते, परीक्षा देने जाते?

अभी तक मैंने उनका मौन का नियम देखा था, वे ऐसे भी नियम संकल्प कर लेते हैं। वह मेरे बालमन के लिए अकल्पनीय था। वह घटना आज भी मेरे अवचेतन मन में घर कर बैठी है व जब-तब किसी न किसी प्रसंगवश याद आ ही जाती है। और उसी से प्रेरित हो मैंने आज तीन जोड़ ही कपड़े पहनने का नियम रख लिया है। मुझे बार-बार याद आता है कि ऐसे चुपचाप लिए जाने वाले उनके नियमों ने ही उन्हें दिगंबरत्व की ऊँचाइयों तक पहुँचा दिया। भैया हम छोटे भाई-बहनों के उत्तरदायित्व निर्वहन में अपना बचपन ही भूल गए थे। मुझसे एक-डेढ़ साल बड़े भैया भी तो बच्चे ही थे। उसी कर्तव्य बोध की परिपक्वता से आज वे पट्टाचार्य के रूप में इतने बड़े संघ का सुसंचालन सफलतापूर्वक कर रहे हैं। ऐसे भाई को पाकर कौन भाई धन्य नहीं होगा।

संस्मरण-2 : मेधावी छात्रों को छात्रवृत्ति वितरण

गणेश प्रसाद वर्णी संस्कृत महाविद्यालय मोराजी में मेधावी छात्रों को छात्रवृत्ति वितरण का प्रसंग था। सागर के श्रावक श्रेष्ठ पूर्व सांसद श्री डालचंदजी जैन कार्यक्रम के अध्यक्ष थे जिनके हाथों छात्रवृत्ति वितरित हो रही थी। कार्यक्रम का संचालन 10वीं के छात्र संदीप कर रहे थे। जब कक्षा 9वीं के प्रथम स्थान प्राप्त छात्र का नाम न बोलकर द्वितीय स्थान

प्राप्त छात्र का नाम अनाउंस किया गया तब माननीय सांसद महोदय के हाथ रुक गए। उन्होंने प्राचार्यजी से पूछा कि पूर्व में भी किसी कक्षा के प्रथम स्थान प्राप्त छात्र का नाम नहीं था, अभी भी नहीं है। कक्षा 9वीं में प्रथम स्थान किस छात्र ने प्राप्त किया जरा खड़े हो जाओ, सांसदजी ने बड़े प्यार से बच्चों से पूछा। संदीप तो खड़े ही थे, उन्होंने जाकर बड़े आदर से सांसद महोदय के पैर छू लिए। वे गदगद हो गए व संदीप की पीठ थपथपाकर बोले कि तुमने यह सिद्ध कर दिया कि यह छात्रवृत्ति मेधावी छात्रों को ही दी जा रही है। पर मुझे दुःख है कि इसके वास्तविक हकदार तुम हो पर तुम्हें यह नहीं मिल रही है। जब उन्होंने प्राचार्यजी से इसका कारण जानना चाहा तो उन्होंने बताया कि इन दोनों भाइयों ने छात्रवृत्ति प्राप्त करने का फार्म ही नहीं भरा। डालचंदजी ने छोटे भाई संजय को भी मंच पर बुलाया व दोनों भाइयों से फार्म न भरने का कारण पूछा।

संदीप ने बड़ी शालीनता व विनय से जवाब दिया- हमें स्कॉलरशिप की कोई जरूरत नहीं है क्योंकि हमारे पिताजी वर्ष के प्रारंभ में ही हमारी पूरी फीस भर देते हैं।

सांसदजी- पर यह स्कॉलरशिप तो मेधावी छात्रों के लिए दी जा रही है। कुछ जरूरतमंद छात्रों को जरूर दी जाती है।

संदीप- सर हमें स्कॉलरशिप की आवश्यकता नहीं है। यदि हम दो भाइयों को स्कॉलरशिप दी जाएगी तब दो जरूरतमंद छात्र वंचित रह जाएँगे। हमें सारी सुविधा यहाँ छात्रावास में ही मिल जाती है फिर इस स्कॉलरशिप का हम क्या करेंगे?

सांसदजी ने संदीप से प्रसन्न हो प्राचार्यजी से कहा कि आप इन दोनों छात्रों के फार्म भरवाकर रखना। कल हम इसी वक्त आएँगे व अपने हाथों से इन दोनों बच्चों को स्कॉलरशिप प्रदान करेंगे। संदीप की असाधारण प्रतिभा तो हमने आज देख ही ली है। यह छात्र भविष्य में वर्णी विद्यालय सागर का नाम रोशन करेगा। उसमें पात्रता है।

संदीप- सर, हमारी फीस भरी जा चुकी है। हम इस स्कॉलरशिप का क्या करेंगे? हमें नहीं चाहिये स्कॉलरशिप। संदीप ने अपनी बात पुनः दोहरा दी।

सांसदजी- संस्था के मेधावी छात्र होने के नाते इस पर तुम्हारा अधिकार है। इससे अच्छी पुस्तकें व पाठ्य सामग्री खरीदकर और अच्छे से पढ़ाई करना। दूसरे दिन सांसद डालचंदजी ने नियत समय पर आकर संदीप व संजय को स्कॉलरशिप प्रदान करते हुए संदीप की पीठ थपथपाते हुए कहा- तुम होनहार छात्र हो। आगे भी अच्छी पढ़ाई कर सफलता प्राप्त करना। तुम्हारी नेकनियत से हम प्रसन्न हैं। तुम देश के ईमानदार भावी नागरिक हो जो देश को सही दिशा दे सकता है। आज पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी के रूप में उसी वर्णी विद्यालय के मेधावी छात्र संदीप सांसद श्री डालचंदजी की भविष्यवाणी सत्य सिद्ध कर रहे हैं जिससे कौन अपरिचित है। कई घटनाओं से स्पष्ट होता है कि संदीप का भावी भविष्य बचपन से ही लिखा जा रहा था।

संस्मरण-3 : **भिखारी को स्वेटर दान**

संदीप की कोई बात छोटा भाई संजय नहीं टालता था। अतः भाई के कहने पर दोनों भाइयों ने अपने जेब खर्च की बचत व कुछ रुपये जो माँ ने दिये थे, मिलाकर साइकल खरीदना तय किया। दिसम्बर की कड़ाके की सर्दी पड़ रही थी। पिताजी ने दोनों बच्चों को नए स्वेटर दिलाए थे। नए स्वेटर पहन दोनों ने नई साइकल से घूमने का मन बना लिया।

संदीप-संजय को साइकल क्या मिल गई, मानो हवाई जहाज मिल गया हो। जब-तब वे नई नवेली साइकल लेकर घूमने निकल पड़ते। पहले दिन छोटा भाई संजय साइकल को बड़ी हसरत से देख रहा था। छोटे भाई को यों साइकल निहारते देख संदीप ने संजय से कहा- ''संजय! जरा साइकल चलाकर देखो तो, कैसी है? तुम्हें तो साइकल चलाने

का मुझसे ज्यादा अनुभव है व शौक भी है।''

संजय- ''नहीं भैया, आप बड़े हैं। साइकल पहले आप चलाएँगे। आपने तो अपने बड़े होने का बड़प्पन दिखा दिया। मैं तो छोटा ही रहना चाहता हूँ ताकि आपके होते सारी जिम्मेदारियों से मुक्त रहने में ही खुशी है, मजा है।''

संदीप साइकल का ताला खोलते हुए बड़े प्यार से संजय से बोले- ''जाओ, एक राउंड स्मारक का लगा आओ, फिर हम दोनों घूमने चलेंगे।'' और साइकल संजय को थमा दी।

राउंड लगाकर आकर संजय ने कहा कि ''भैया! अब से कहीं भी हम जाएँगे, एक बार आप साइकल चलाएँगे मैं पीछे बैठूँगा और दूसरी बार...।'' संजय को आगे बोलने से रोक संदीप हँस पड़े। संदीप जितने धीर-गंभीर थे, संजय में उतना ही बचपना व उतावलापन था। किसी की गलत बात पर पंगा लेना संजय की आदत में शुमार था। जहाँ संदीप का स्वभाव शांत था, वहीं संजय गरम स्वभाव के। और संदीप अपनी मीठी मृदु वाणी व समझदारी से संजय को समझा-बुझा कर झगड़ा शांत करा उस बच्चे से संजय की दोस्ती करवा देते।

संदीप-संजय साइकल पर सवार हवा से बातें करते, हवाई सफर का आनंद लेते सड़कों पर घूम रहे थे। उन दिनों न बाइक न कारें ही सड़कों पर थी, अतः बच्चे बड़े आराम से सड़कों पर साइकल दौड़ाते रहते। मन मर्जी की करते। संदीप-संजय को साइकल क्या मिली, मानो हेलीकॉप्टर ही मिल गया हो। बच्चों का संसार व बच्चों की खुशियाँ दीन दुनिया से बेखबर और निराली है।

तभी संदीप की नजर एक दीन गरीब कृशकाय फटेहाल ठंड में ठिठुरते भिखारी पर पड़ी। उन्होंने ब्रेक लगा साइकल रोक दी। झटके से साइकल रुकने पर संजय पूछ बैठा- ''कुछ गड़बड़ी हो गई क्या साइकल में?''

संदीप- ''नहीं।''

संजय- ''फिर क्यों रुके हम यहाँ?''

संदीप- ''देखो यह भिखारी, इसके पास कपड़े तक नहीं, ठंड में बेचारा कैसा ठिठुर रहा है। लगता है इतनी ठंड कहीं इसकी जान न ले ले।''

साइकल चलाने की खुशी में वे ठंड की मार भूल ही गए थे। बच्चों के लिए क्या सर्दी, क्या गर्मी और क्या बरसात। इन सबसे बेपरवाह बच्चे अपनी धुन व खेल में मगन रहते हैं।

आज संदीप व संजय की खुशी दोहरी थी। इसका कारण दोनों को पिताजी ने अभी कुछ दिनों पहले नए स्वेटर दिलाए थे। दोनों ने तय कर लिया था अभी उनकी नई साइकल आने वाली है अतः नए स्वेटर पहनकर ही इस ठंडी में नई साइकल चलाएँगे। नया स्वेटर पहनने के उतावले संजय ने भैया संदीप की बात मान ली थी।

संदीप साइकल हाथ से चलाते उस भिखारी के पास पहुँचे। संजय भी उनके साथ चल रहा था। संदीप ने बिना एक पल गँवाए अपना स्वेटर उतारा और भिखारी को देते हुए कहा- ''बाबा! लो यह स्वेटर पहन लो। सर्दी अत्यधिक है, पर तुम्हें पूरी तरह से तो नहीं थोड़ी ठंड से जरूर बचा ही लेगा।'' कुछ कहने के लिए संजय का मुँह खुला का खुला ही रह गया। वे भैया को ऐसा करने से रोके उसके पहले ही पलक झपकते ही यह घटना घट गई। भिखारी उन्हें दुआएँ दे रहा था।

संजय की आँखों में आँसू आ गए- ''...और भैया, अब इतनी ठंड में बिना स्वेटर आप होस्टल कैसे जाएँगे? आपने नया स्वेटर इस भिखारी को दे दिया। आप स्कूल वही पुराना बदरंगी स्वेटर पहनकर जाएँगे। हमारे स्वेटर पहनने लायक नहीं रहे थे इसीलिए तो पिताजी ने हमें नए स्वेटर दिलाए थे और कहा था कि वे स्वेटर बाहर पहनने लायक नहीं हैं। अब से तुम लोग नए स्वेटर ही पहनना।''

संदीप ने संजय को बड़े प्यार से समझाते हुए कहा कि ''तू मेरी चिन्ता छोड़। इतनी अत्यधिक सर्दी से यह नंगा-

भूखा भिखारी मर भी सकता था। हम यदि इसकी इस भीषण ठिठुराती सर्दी से जान बचा सके तो समझो हमने इसे नया जीवन दिया है। देखो संजय, हमारे दिगंबर मुनि वस्त्र धारण नहीं करते, हमारे देश के करोड़ों लोग गरीबी रेखा के नीचे जीते हैं जिनके पास स्वेटर नहीं है। यह सोचकर मैं कई बार सर्दी में बिना स्वेटर पहने अपने पर सर्दी के प्रभाव का प्रयोग करता रहता हूँ। अतः मुझे ठंड सहने की आदत हो गई है। फिर भी मैं अपने पुराने स्वेटर से काम चला लूँगा। पर हाँ, क्या कभी बाहर जाने का काम पड़ा तो तुम अपना स्वेटर मुझे नहीं दोगे?''

संजय क्या जवाब देता। वापस उस भिखारी से भाई का स्वेटर तो ले नहीं सकता था, जिसे वे दान कर चुके थे। पर इतना जरूर कहा कि तुम बहुत सीधे, भावुक व भोले हो। मुझे बहुत अच्छे से याद है यह भिखारी कल हमारे होस्टल के बाहर इसी हाल में बैठा था। कुछ छात्रों ने कल भी इसे स्वेटर दिये थे। मैं भी अपना पुराना स्वेटर इसे देने लेकर गया था, पर पहले से छात्रों के दिये स्वेटर के ढेर को देख मैं वापस ले आया।

पर आज संजय स्वयं को रोक न पाया व डपटते हुए भिखारी से कहा- ''उठाओ यह स्वेटर और पहनो।'' भिखारी आना-कानी करने लगा, जो अभी तक उन्हें दुआएँ दे रहा था। संजय ने फिर से कहा- ''स्वेटर पहनो।'' भिखारी ने संजय को देखा, शायद वह संजय को पहचान चुका था। उसने झट से स्वेटर पहना और संदीप को ढेर सारी दुआएँ दी।

संजय- ''देखो, कल होस्टल के बाहर तुम्हें इतने स्वेटर मिले थे उनका क्या किया? और आज फिर उसी फटेहाल में यहाँ बैठे हो। अब यहाँ से उठो, नौ दो ग्यारह हो जाओ और कभी किसी को ठगते दिखाई मत देना। भैया, ये बड़े शातिर ठग होते हैं जो आप जैसे भोले व सीधे सरल लोगों को अपने जाल में फँसा लेते हैं।''

संदीप- ''छोड़ो संजय। हमने इसे दे दिया न स्वेटर। शायद होस्टल के छात्रों द्वारा दिये स्वेटर इसने अपने बच्चों को दे दिये हों व फिर आज अपने लिए माँग रहा हो। जो दे दिया उसके लिए दुःख करने की जरूरत नहीं।''

साइकल उठा दोनों भाई चल दिये। संदीप ने कहा- ''संजय! स्वेटर पहनकर वह भिखारी कितना खुश था? हो भी क्यों न? हम भी तो नए स्वेटर पहनकर कितने खुश थे? पर भैया आपने तो अपना नया स्वेटर ही इसे दे दिया।'' संजय की आँखें भर आई, गला रुंध गया, भैया की उदारता व सहृदयता देख आगे कुछ न कह पाया।

तिगोड़ा यात्रा में मेरे साथ यह संस्मरण सुनाते संजय रो पड़े व कहा- ''भैया ने उसके बाद नया स्वेटर कभी नहीं खरीदा। कहीं बाहर जाते, मैं स्वयं अपना स्वेटर उनके सामने रख देता। अब मैं उस इकलौते नए स्वेटर को बहुत संभालकर रखता था। उन्होंने माँ-पिताजी से भी इस बारे में बताने से मना कर दिया था।

मैं भैया की कई ऐसी उदार बातें होती जिनसे चिढ़कर कहता रहता- भैया हम संसारी हैं, आपका यह संत स्वभाव आगे नहीं चलेगा।

पर संत तो संत स्वभाव लेकर ही जन्मते हैं। उनका भवितव्य बचपन के उनके व्यवहार से ही झलकता रहता है। दुनियादारी से हटकर उनका व्यवहार व स्वभाव होता है। संदीप पट्टाचार्य श्री सुनीलसागर के जीवन की बुनियाद की ईंटें अपने बचपन से ही रखते जा रहे थे।

संस्मरण-4 : पं. ज्ञानचंदजी शास्त्री की नजरों से शिष्य संदीप

जिस श्री गणेशप्रसाद वर्णी संस्कृत महाविद्यालय, मोराजी, सागर की आचार्य श्री सुनीलसागरजी के बहुआयामी व्यक्तित्व के निर्माण में अहं भूमिका रही, उस सरस्वती के पावन मंदिर के दर्शन का लोभ संवरण मैं न कर सकी। जब मैं उनकी जीवन गाथा 'महाविज्ञ' का लेखन कर रही थी, मैं आचार्यश्री के गृहस्थ जीवन के छोटे भाई डॉ. संजय के साथ सबसे पहले वर्णी विद्यालय मोराजी पहुँची जहाँ आचार्यश्री के साथ संजय भैया ने भी पढ़ाई की थी जो वहाँ के

चप्पे-चप्पे से परिचित थे।

जिस महाविद्यालय के महान शिक्षकों ने आचार्यश्री सुनीलसागरजी जैसे महान संत को शिक्षा देने का श्रेय ले श्रमण संस्कृति को समृद्ध व सुप्रतिष्ठित किया है व अन्य भी महान दिगंबर संत दिये हैं, उस पुण्यमयी भूमि पर खड़े होते ही मन आह्लादित हो गया। वहाँ किसी पाषाण प्रतिमा का पाँच दिनी प्राण प्रतिष्ठा महोत्सव नहीं होता था, अपितु वहाँ तो जीवित मानव संतानों को महामानव व परमेश्वर बनाने की लम्बी, श्रमसाध्य प्रक्रिया चलती थी। बालक संदीप भी यहीं गुरु कुलाल के चाक पर चढ़ कुंभ बन आज श्रमण संस्कृति के शिखर कलश के रूप में सुशोभित हैं। अस्तु।

हम सर्वप्रथम कार्यालय पहुँचे जहाँ हमने महाविद्यालय में आने का मकसद बता आचार्यश्री के शिक्षकों (गुरुगणों) के दर्शन की इच्छा जाहिर की। कार्यालय से हमें लायब्रेरी में भेजा गया। संध्या समय हो गया था। वहाँ एकमात्र संदीप (आचार्यश्री) के गुरु पं. ज्ञानचंदजी शास्त्री अध्ययनरत मिले। मैंने उन्हें प्रणाम किया व वहाँ आने का उद्देश्य बताया कि मैं आचार्यश्री की जीवनगाथा महाविज्ञ का सृजन कर रही हूँ जो (संदीप) इसी महाविद्यालय के छात्र रहे हैं और उन्हें आप जैसे गुरुओं ने शिक्षित संस्कारित किया है। वयोवृद्ध पं. साहब की खुशी का ठिकाना नहीं रहा। वे उठ खड़े हुए व हमें (संजय भैया व साथ आई आचार्य संघ की ब्र. अमृता दीदी व आचार्यश्री के गृहस्थ जीवन के दोस्त कमलेश) को बैठने का आग्रह किया। उन्होंने वहीं से आचार्यश्री को नमोस्तु किया व हमारे बैठने के बाद ही अपना स्थान ग्रहण किया।

हमारे कुछ पूछने से पूर्व ही वे बताने लगे कि संदीप इस विद्यालय के होनहार, मेधावी, विलक्षण प्रतिभावान, संस्कारी, सुशील छात्र रहे हैं। संस्था के सभी शिक्षकों को विश्वास था कि संदीप इस संस्था के नाम में चार चाँद लगा देंगे और देखो, आज उन्हीं की बदौलत आप सुदूर इंदौर से यहाँ तक उनकी शिक्षा भूमि तक चली आईं। मुझे बड़ी खुशी है कि मेरे जीवन काल में ही छात्र संदीप आचार्यश्री सुनीलसागरजी के रूप में श्रमण संस्कृति के शिखर पुरुष बन गए व अपने जैसी कठिनतम साधना करने वाले मुमुक्षुओं को दीक्षा दे विशाल शिष्य परम्परा को वृद्धिगत कर रहे हैं। उनका चिन्तन, उनका ज्ञान व आचरण छात्र रूप में भी अन्य छात्रों के लिए अनुकरणीय, आदर्श व शिक्षक वर्ग के लिए प्रशंसनीय रहा है। उन्होंने किसी शिक्षक या सहपाठी छात्र को कभी शिकायत का मौका नहीं दिया अपितु कक्षा में हो या प्रार्थना सभा में, खेल के मैदान में हों या लायब्रेरी (पुस्तकालय) में, हम शिक्षकों के मुख से तो हमेशा उनके लिए प्रशंसा के फूल झरते थे। जहाँ तक मुझे याद है, संदीप की योग्यता, पढ़ने में रुचि, लगन व कड़ी मेहनत को देखते हुए ही हमने कक्षा 9वीं से ही संदीप को शास्त्री की परीक्षा के लिए तैयारी करवाना शुरू कर दिया था।

संदीप लौकिक शिक्षा व आध्यात्मिक शिक्षा दोनों में कड़ी मेहनत करते थे। किंतु इतनी कम उम्र के बच्चे के लिए शास्त्री की पढ़ाई करना हँसी खेल नहीं था। कई बार तो वे किसी ग्रंथ की जिज्ञासा लेकर हमारे विषय विशेष शिक्षक के पास जाते, वे ही अपनी शंका को लेकर संदीप से चर्चा करने लग जाते और संदीप के बुद्धि कौशल की भूरि-भूरि प्रशंसा करते नहीं अघाते। पंडितजी साहब खड़े होकर इशारे से बताने लगे कि संदीप का इस लायब्रेरी से गहरा नाता रहा है। घंटों वे लायब्रेरी में बिता देते। कई बार तो लायब्रेरी बंद करते वक्त उन्हें कहना पड़ता। उन्होंने एक पुरानी टेबल व कुर्सी बताते हुए कहा कि यहाँ बैठ संदीप अध्ययन करते थे। फिर वे ऊपर शांति कुटी (वर्णी कुटी) में ले गए जहाँ शांत वातावरण में संदीप घंटों अध्ययन करते व कभी कोई साधु-संत आ गया तो एक और कक्ष बताया जहाँ बैठ संदीप अध्ययन करते। पंडितजी साहब को बताते हुए बड़ा हर्ष हो रहा था कि संदीप ने इस लायब्रेरी का जितना लाभ उठाया, मेरे ख्याल से उतना लाभ आज तक किसी छात्र ने नहीं उठाया। संदीप के बारे में जितना कहें, जितना बताएँ, कम है। कहते हुए उन्होंने वह हर जगह दिखाई, जिससे संदीप का विशिष्ट नाता रहा। उन्होंने व भाई संजय ने वह कक्ष भी दिखाया जिसमें संदीप रहा करते थे। उसके अलावा भी उन्होंने भोजनशाला, विद्यालय, जिन मंदिर आदि-आदि का अवलोकन

कराया व कई बातें संदीप के बारे में बताई जिनका सार यही है कि उनकी तरह अन्य शिक्षकों के भी संदीप प्रिय व आज्ञाकारी शिष्य रहे हैं।

पंडितजी साहब अपने भाग्य की सराहना करते नहीं थकते थे कि यह हमारा महान सौभाग्य है कि श्रमण संस्कृति के महान आचार्य श्री सुनीलसागरजी को शिष्य संदीप के रूप में पढ़ाने का सौभाग्य हमें प्राप्त हुआ। इस संस्था का छात्र मुक्तिपथ पर अग्रसर है, आज इससे बडी उपलब्धि हमारे लिए क्या हो सकती है। मैं अपने लिए कहता हूँ कि 'गुरु गुड़ रह गया, चेला शक्कर हो गया।''

पंडितजी श्री ज्ञानचंदजी शास्त्री से साक्षात्कार कर ज्ञात हो गया कि 'जिस बड़ा आदमी बनने' का बचपन का सपना लिए संदीप ने इस विद्यालय में प्रवेश लिया था, उस शिष्य को 'बड़ा आदमी बनाने' में ऐसे महान गुरुओं का कितना बड़ा योगदान होता है।

* * *

इस प्रकार आचार्य श्री के जीवन के विश्लेषणात्मक गवाक्षों से झांके तो हम देखेंगे कि उनका बहुआयामी व्यक्तित्व एक वृहद पाठशाला है। उनमें सीखने की ललक व उमंग इस कदर रही कि उन्हें जहाँ से सीखने मिला, सीखा। विद्यार्थी जीवन में अपनी लौकिक शिक्षा के गुरुओं, अपने बुजुर्गों व साथियों तथा दीक्षा के बाद अपने दीक्षा गुरु, गुरु भाइयों, गुरु द्वारा दिए गए ज्ञान के अलावा उनके दर्शन, ज्ञान व चरित्र से सीखा। आचरण से बहुत कुछ सीखा। आगम के स्वाध्याय से सीखा। वे जो कुछ जहाँ से भी सीखते हैं उसे समझने का अकूत धैर्य भी उनमें भरा है। सीखना, समझना, जाँचना, परखना उनकी आदत में शुमार है, यही नहीं, उसे आत्मसात करने की रुचि, लगन व प्यास भी उनमें है। इस कारण उनका दृष्टिकोण विशाल से विशालतर व हृदय उदार से उदारतर होता रहा। विहार हो या विश्राम आप अपने हृदय की करुणा व वात्सल्य भरे वचनामृत द्वारा जन हृदय से जुड़ते गए, जन सहयोगी बनते गए। सच कहें तो आपका व्यक्तित्व चलती-फिरती, जीती-जागती ऐसी पाठशाला है जिसमें कई पुस्तकालयों का ज्ञान समाया है। इस कारण आप सबको अपने अनुभव, सोच, समझ, सहजबोध व शिक्षा के सबक (पाठ) बांटते चले जा रहे हैं और लोगों के जीवन के केनवास पर अपनी सोच, अपनी सीख, अपनी समझ, अपने अनुभव व विरक्त नजरिये के रंग भरते चले जा रहे हैं।

दूसरे शब्दों में कहें कि संसारी जीवों की जीवन चदरिया जिन पाप-कषायों के तानों-बानों से बुनी व आर्त्त-रौद्र ध्यान के रंग में रंगी है- आचार्य श्री इससे चिर-परिचित है। इन्होंने देखा इस कारण हमारे चारों ओर स्वार्थ की तेज आंधियाँ चल रही है, राग-द्वेष का हिमपात हो रहा है, छल-कपट के ओले गिर रहे हैं, मोह-माया की मूसलाधार बारिस हो रही है, क्रोध की बिजलियाँ कड़क चमक रही हैं, मान का फणिधर फुफकार रहा है, तृष्णा की मृग मरीचिकाओं के पीछे मनुष्य निरंतर भाग रहा है। सांसारिक सुख चैन की चाहत ने मनुष्य का सारा सुख चैन छीन लिया है। शांति से कोसों दूर उसका मन अशांत है। ऊपर से शांत दिखने वाले मानव मन में समुद्र-सा बड़वानल धधक रहा है। उसकी हाय हाहाकारी चीखें-चित्कारें अंदर ही अंदर उठकर विलोपित हो जाती हैं।

आगम ज्ञाता, शांति के पथ प्रदर्शक पट्टाचार्यश्री हमें समझा रहे हैं कि शांति बाहर नहीं हमारे अंदर है। जहाँ हमारी चिंताओं, इच्छाओं, कामनाओं व विकल्पों का अभाव होता है, 'शांति वहीं' है। शांति की अपनी अवधारणा से वे हमारे लिए भी शांति का सुलभ मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं। वे हमें समझाते रहे हैं कि जहाँ अभिलाषाएँ न हो वहाँ शांति है, जहाँ सबके प्रति साम्यता व हृदय में समता हो, दृष्टि में व्यापकता हो शांति वहाँ है। शांति वहाँ है जहाँ अंतर में समता तथा संतोष हो व लौकिक स्वार्थ न हो। 'बस यही' अब कुछ और नहीं चाहिए ऐसी भावना जिस दिन मन में आ जाएगी

तब तीन लोक की संपदा उसके लिए धूल समान हो जाएगी और उसके हृदय के शांत सरोवर में शांति के शतदल खिलने लगेंगे।

इस प्रकार शांतमूर्ति विरक्त आचार्य श्री कितनी दुरूह व दुष्कर कष्ट साध्य साधना कर, कितने परिषह सह, निःस्वार्थ भाव से इस कितने बड़े उद्यम द्वारा तथा अपने जीवन की प्रयोगशाला से प्राप्त व्यावहारिक जीवंत अनुभवों से हमें जीवन की महानतम, सर्वोत्तम वस्तु 'शांति' बांट रहे हैं। निःशुल्क, मुफ्त, बिना किसी मोल-भाव के, बिना भेदभाव के संसार के प्रत्येक प्राणी को वे शांति बाँट रहे हैं, जो भी चाहे ले ले। वे कहते हैं कि हे जीव! तू स्वयं शांति का मंदिर है, शांति तेरा स्वभाव है, अतः तू शांति प्राप्ति के लिए उपरोक्त बताए अनुसार पुरुषार्थ कर, प्रयास कर। निज स्वभाव में लीन होना, एकाग्र होना ही शांति प्राप्ति का सच्चा पुरुषार्थ है। शांति बाहर नहीं, शांति तुझमें तेरे अंदर है। तू जाग, चेत और पुरुषार्थ कर **शुद्धोऽहं, शांतोऽहं, चैतन्योऽहं** का चिंतवन कर।

इस प्रकार आचार्य श्री स्वयं जिस शांति प्राप्ति का पुरुषार्थ कर रहे हैं, हमें भी संसार की उस सर्वश्रेष्ठ 'शांति' प्राप्ति का उपाय बताते, शांति के पथ पर अग्रसर हैं। **'शांति'** के इन महान साधक, विश्वविभूति, **महाविज्ञ**, पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी को मेरा शत-शत नमन। अंत में इन संयम के शिखर पुरुष आत्माराधक को निम्न पंक्तियों के माध्यम से अपनी भावांजलि अर्पित करते हुए यह भावना भाती हूँ कि हमें भी वे इस शांति पथ पर अपने साथ ले चलें।

शील संयम त्याग की मारुत बन ऊँचे उठे हो
बूंद के देवत्व की इस साधना को नित नमन हो।
विश्व करुणा की तरंगों से भरा है मन तुम्हारा
दे सको नव ताल गति, लय उमगता है उर तुम्हारा
घुटन की बेबस घड़ी में आदमी टूटा हुआ है।
दे रहे हो शांति तुम, विश्वास है जग को तुम्हारा
देव पुरुषों की धरा से दानवों का अंत करने
लिया जो संकल्प उस संकल्प को शत-शत नमन हो।
कालपाखी पंख सतरंगी तुम्हारे
कीर्ति यश के बज रहे डंके तुम्हारे
हृदय की अनुभूतियों से द्रव्य संचित
आचरण से चरण है अर्चित तुम्हारे
अंधेरे से लड़ रहे हो 'एक उजले आदमी'
'तमस' की शुभकामना ए! धवलता तुमको नमन हो।

गुरु चरणों में श्रद्धावनत।
त्रिकाल नमन...!

भाग-9

आचार्य श्री का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

आचार्य श्री का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

परमपूज्य आचार्य श्री सुनीलसागरजी एक ऐसे संत हैं जिनके हाथों में संयम के प्रतीक पिच्छी-कमंडल के साथ-साथ लेखनी भी है। उनके मस्तिष्क पर प्रतिभा का आलोक पुंज है। उनकी सांसों में युगीन विकृतियों, विसंगतियों व विषमताओं को सम बनाने का स्पंदन है। उनकी आँखों में लोकमंगल का सपना और उनके हृदय में दुःखी, आहत, तड़पती मानवता के प्रति वात्सल्य व करुणा का छलछलाता पारावार है।

आचार्य श्री अपने इन्हीं विलक्षण गुणों, असाधारण व्यक्तित्व व तेजस्वी मन द्वारा हमारी संस्कृति की मद्धिम पड़ती जा रही रोशनी को तमस में खो जाने से पूर्व ही जीवन मूल्यों का सूरज दे रहे हैं। वे अपनी शक्ति व विचारों द्वारा खोती जा रही जैनाचार की महान परंपरा को सदाचरण की 'औषधि' दे रहे हैं। आज व्यक्तिवाद, समाजवाद, प्रांतवाद, राष्ट्रवाद व वैश्वीकरण के साथ बढ़ते आतंकवाद, अनैतिकता, युद्ध, हिंसा, हत्या, बलात्कार जैसे अनगिनत कदाचारों ने मानव जीवन का रस निचोड़ व सोख कर जीवन निरस बना दिया। मनुष्य सांसों वाले कंकाल बनते जा रहे हैं। रही सही कसर एप, टीवी व सेटेलाइट की दुनिया ने पूरी कर दी है। आचार्य श्री, भगवान महावीर के दर्शन, चिंतन व सिद्धांतों द्वारा ऐसी पगडंडियों का निर्माण कर रहे हैं जिन पर चल भटकती मानवता सुख शांति के सरस राजपथ पर आ सके।

सही मायने में आत्माराधक आचार्य श्री सुनीलसागरजी की आत्माराधना जीवाराधना से शुरू होती है जिसने उनके व्यक्तित्व को विष्णु सा विराट स्वरूप दे दिया है। सागर का दूसरा नाम रत्नाकर है। इस रत्नाकर में न जाने कितने गुणों की रत्न राशियाँ मोती-माणिक के खजाने भरे पड़े हैं जिनमें से मुझे जैसे वामन कद संसारी अपनी नन्ही मुट्ठी में जितना समेट पाए, उनमें से कुछ एक इस प्रकार है-

वे सरल स्वभावी, हितमित मृदुभाषी, बहुभाषाविद् (14 भाषाओं के ज्ञाता) आदर्श व समर्पित शिष्य, चिंतक, अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी, चर्याचक्रवर्ती, परम गुरुभक्त, आत्मानुशासी, प्राकृत के उद्भट विद्वान, मार्मिक प्रवचनकार, जैनागम के ज्ञाता, धर्मप्रभावक, युगप्रचेता, सकारात्मक विचारक हैं। उनकी जीवन गाथा ऐसे थाल भर-भर अमूल्य मोतियों से गुम्फित है।

सरल स्वभावी : 'सरल स्वभावी' या 'सरल होना' कहना जितना सरल है, सरल बनना इतना कठिन है। सरल बनने के लिए सारी वक्रताओं को त्यागना पड़ता है जो आसान नहीं है। सरल बनने के लिए मन वचन काय से सशक्त होना पड़ता है। मनोविकारों के त्यागे बिना मन सहज सरल नहीं बन सकता। छल-प्रपंच, वैर-कपट, मोह-माया, लोभ-लालच, क्रोध-मान, वासना आदि पग-पग पर खड़े छलावे मनुष्य के सरल बनने की राह की हिमालयी बाधाएँ हैं और मनुष्य की मानसिक, वाचनिक व कायिक इतनी सारी कुटिलताएँ हैं जिन पर विजय पाना साधारण जन के लिए अत्यधिक कठिन काम है। जो सरलता की राह के रोड़े हैं।

किंतु आचार्य श्री ने सारी की सारी विकारजन्य कुटिलताओं व विकृतियों पर विजय प्राप्त कर ली है तभी तो वे इतने सहज व सरल बन सके हैं। आचार्य श्री का मानना है कि विरोध में विनोद, सद्गुणों में प्रमोद तथा क्रोध के अवसर पर शांत बने रहने के गुण भी हमारे सरल बनने में सहायक है। जैसे हमारे विचार होंगे वैसा ही हमारा व्यवहार होगा। अतः श्रेष्ठ विचारों के लिए श्रेष्ठ ज्ञान का होना आवश्यक है। 'वयणसारो' की गाथा नं. नौ में वे कहते हैं कि ज्ञान से अंतरंग की शुद्धि होती है। ज्ञान से ही कुशलता आती है। ज्ञान से जीवन रमणीय व सुंदर बनता है और ज्ञान से ही निर्मल शांति की प्राप्ति होती है। यह शांति ही मनुष्य को सहज व सरल बना देती है, जो 'सरलता' आचार्य श्री के व्यक्तित्व की सबसे बड़ी विशेषता है।

आचार्य श्री के सरल स्वभावी होने के पीछे उनका बहुत बड़ा जीवन दर्शन है। वे कभी प्रशंसा में प्रसन्न नहीं होते,

विरोध में विषादयुक्त नहीं होते तथा विफलता में खिन्न नहीं होते। इस प्रकार विकारों व विकृतियों की न जाने कितनी-कितनी उताल तरंगें इन आत्मानुशासी, संयम के ब्रिज से टकरा-टकरा उन्हें असहज बनाने का निरर्थक प्रयास करती रही पर वापस जस की तस लौट गई और आचार्य श्री 'मनसा वाचा कर्मणा' सरल थे, हैं व बने रहेंगे।

आज उनकी बाल्य तुल्य सरलता के कारण ही हजारों-लाखों माथे उनके चरणों में नत-नत हैं। इसी सरलता के बल पर वे उत्तम आर्जव धर्म का अच्छी तरह परिपालन कर रहे हैं। उनका ज्ञान कोष बढ़ता जा रहा है। दर्शन, चिंतन गहराता जा रहा है। चरित्र की चमक दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है और वे जनमन के बेताज सम्राट बने हुए हैं।

हित-मित-मृदु वाणी में दिए गए उनके प्रवचन जब श्रोताओं के कर्ण कुहरों में पड़ते हैं तब लगता है कानों से होकर हृदय में पहुँचे अमृत से हृदय सिक्त हो गया है। पिन ड्रॉप साइलेंस के साथ समाधिस्थ कर देने वाले उनके मंगल उद्‌बोधन सुनते-सुनते श्रोता स्वयं को भूल जाता है। हर किसी को लगता है वे उसके मन की व उसके ही हित की बात कर रहे। इतने सौम्य व शांत रहते हैं कि किसी ने ऊँची बोली/आवाज में बोलते नहीं सुना। शास्त्रों, पुराणों व आगम की गूढ़ गहन बातें कहते वक्त भी वे समझाइश देते नजर आते हैं।

मौन साधक : वे मौन साधक हैं। अधिकांश समय उनका मौन में व्यतीत होता है। किंतु दूर-दूर से आए दर्शनार्थियों को कभी निराश नहीं करते। दीन दुःखी लोगों पर उनकी करुणा, कृपा बरसती रहती है। संयम, साधना व तपस्या के अलावों में तपे इन साधक का आशीर्वाद बड़ा प्रभावोत्पादक, मंगलकारी व अतिशयकारी होता देखा गया। दीन-दुःखी जन इस दर पर रोते-रोते आते हैं और हँसते-हँसते जाते हैं। वे आत्म मंगल की साधना के साथ-साथ लोक मंगल की साधना भी कर रहे हैं।

आचार्य श्री की कड़ी साधना व परिणामों की विशुद्धि से अक्सर कोई न कोई अतिशय होता रहता है। उनके आशीर्वाद से कई बीमार व्यक्ति ठीक होते देखे गए हैं। आचार्य श्री का कहना है आशीर्वाद तो निमित्त है यह तो उसका पुण्योदय है कि उसे साधु समागम का संयोग प्राप्त हो गया। संघ के इतने साधुओं की कड़ी साधना से जो सकारात्मक ऊर्जा संचरित होती है उसी का सुखद परिणाम है। इस प्रकार से ऋजु स्वभावी संत किसी भी बात का श्रेय स्वयं नहीं लेते हैं। इसके अलावा आचार्य श्री जहाँ विराजे वहाँ केसर की वर्षा भी होती देखी गई। सड़क पर, घरों में कुटियों में जहाँ-जहाँ भी आप रुकते, सामायिक में खड़े होते, आहार चर्या करते, सड़क पर चलते, आपके चरण चिह्न अंकित होते रहना स्वाभाविक सी बात हो गई है। श्रद्धालु भक्त उस फर्श को ही निकालकर उच्च स्थान पर रख दीप जला अगरबत्ती लगाते रहते हैं।

दैनिक जीवन के व्यवहार, हित-मित-प्रिय वचन, संस्कारित भाषा, विवेक, सूझ-बूझ-समझ, आचार-विचार, आहार-निन्द्रा, नित्य चर्या आदि जैसी छोटी-छोटी बातों ने आचार्य श्री को उनके उच्चतम लक्ष्य तक पहुँचाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। यह सहजता आपने अपनी श्रेष्ठतम साधना से प्राप्त की है। आचार्य श्री सत्यनिष्ठ, सेवाभावी व कर्तव्यनिष्ठ एक आदर्श संत पुरुष हैं। आज उनकी प्रेरणा से दानव तुल्य मनुष्य में भी दैवीय गुणों का संचार हो रहा है। वे ऐसी प्रणम्य विभूति हैं। जिनकी वाणी, जिनका सान्निध्य समागम व जिनकी झलक मात्र के दर्शन हमारे मृतप्राय प्राणों में स्फूर्ति व चेतना का संचार कर देते हैं। आचार्य श्री हमें दिशा बोध दें हमारे पथ भ्रमित कदमों को निर्देशित पथ पर चलने का पाथेय प्रदान कर रहे हैं। उनकी सूझ-समझ व सदाशयता हमारे जीवन की उलझनों को सुलझाने की राह खोज देती है। उनकी लोक मंगल भावना से आपूरित उनके लोक मंगलकारी कार्य मानवता का पोषण करते, उसे जिंदा रखने की (जिलाए रखने) के लिए महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे हैं। वे मात्र संत होने के नाते नहीं अपितु अपनी सरलता, सौम्यता, शिष्टता, सहजता, सदाशयता व श्रमशील साधना के कारण महिमा मंडित हो रहे हैं। हम आचार्य श्री के लिए कह सकते हैं कि साधना से सहज बना व्यक्ति ही ऊपर चढ़ता है और चढ़ता चला जाता है। 'सत्य अपना पूरा मूल्य

चाहता है।' आचार्य श्री सुनीलसागरजी अपने उपरोक्त गुणों को अर्जित करने की साधना तथा संयम, त्याग व तपस्या की अग्निपरीक्षा दे देकर इस 'सत्य' की स्वर्णकांति को सिद्ध कर रहे हैं।

प्रवचनों में सार्थक बातें, पैनी नजर, हृदय से निश्छल, संवेदीमन, परिपक्व विचार, गहन चिंतन, युग सर्जक साहित्यकार, शिष्यों के लिए समर्पित गुरु इन सबसे ऊपर सबके प्रति आत्मीय स्नेह, परम हितैषी, ताजगी का अजस्र स्रोत- ये आपके प्रणम्य व्यक्तित्व की छोटी सी झलक है। आप सदा प्रसन्न रहने वाले जिंदादिल इंसान हैं एवं सभी को सदा प्रसन्न रहने की प्रेरणा देते जीवन पथ पर अग्रसर हैं। भेद विज्ञानमय आपका जीवन सबके लिए अनुकरणीय है।

आचार्य श्री के जीवन के महत्वपूर्ण बिंदु

(1) 26 दिसंबर 2010 को आचार्य श्री सन्मतिसागरजी की आज्ञा एवं लिखित आदेश से योग्यतानुसार आपको आचार्य श्री के योग्यतम शिष्य मान कर सारे देश व मुंबई की विवेकी समाज द्वारा आपको अंकलीकर परंपरा के चतुर्थ पट्टाचार्य पद पर सुशोभित किया गया तथा आचार्य श्री के विशाल संघ की जिम्मेदारी आपको सौंपी गई।

आज यदि आचार्य श्री सन्मतिसागरजी की परंपरा की दृष्टि से देखा जाए तो आपके पट्टाधीशत्व में दो सौ से अधिक पिच्छीधारी साधु अपनी साधना कर रहे हैं। आपका संघ आपकी वात्सल्य दृष्टि व मार्गदर्शन पर स्व अनुशासित शांति से संयममय चर्या का पालन कर रहा है।

(2) आप 14 (चौदह) भाषाओं के जानकार हैं।

(3) आपने प्राकृत भाषा में ग्रंथों को लिखने की विलुप्तप्राय परंपरा को पुनः प्रारंभ किया है। तत्त्वार्थसूत्र के सूत्रों को प्राकृत में लिखने वाले आप पहले आचार्य हैं।

(4) आचार्य सुनीलसागरजी के जीवन में 7 का अंक विशेष रूप से जुड़ा है। आपका जन्म 7 अक्टूबर 1977 को हुआ। इसमें भी दो सात हैं। 1997 में आपकी दीक्षा हुई इसमें भी 7 का अंक महत्वपूर्ण है। 2007 में आचार्य पद की घोषणा हुई। अज्झप्पसारो का 2007 में सृजन हुआ। भावणासारों में 72 पद्य हैं। 2017 में आचार्य श्री को अभी तक 17 उपाधियों से अलंकृत किया जा चुका है। इन सब घटनाओं में 7 का अंक भारी है।

(5) आपका शिष्यत्व गुरुवर आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के प्रति पूर्णतः समर्पित रहा। मुनि जीवन के शिष्यत्व काल- 10 वर्षों तक आप उनके मार्गदर्शन व कृपा छाँव में अपने जीवन को परिष्कृत परिमार्जित करते रहे। आचार्य पद प्राप्ति के बाद दो बार आचार्य श्री की अस्वस्थता की खबर सुन- प्रथम बार श्रवणबेलगोला से करीब हजार कि.मी. की लंबी त्वरित, तीव्र यात्रा कर कुंजवन आचार्य श्री के पास सन् 2009 में पहुँचे। दूसरी बार नातेपूते में भी आचार्य गुरु की अस्वस्थता की खबर पाकर दो सौ कि.मी. की पदयात्रा कर 2010 में एक वर्ष से कम समय में पुनः गुरुवर के निकट पहुँचे व दिन-रात उनकी सेवा सुश्रुषा व वैयावृत्ति की। इस प्रकार आपने अनुपम, अनुकरणीय गुरुभक्ति का आदर्श उपस्थित किया। गुरुवर के प्रति आपकी श्रद्धा, भक्ति व निष्ठा देखते ही बनती थी।

(6) चतुर्थ पट्टाचार्य के रूप में आप एक विशाल संघ का संचालन बड़ी सरलता, विनम्रता, सेवाभावना व सहृदयता से कर रहे हैं। संघ के प्रति आपका अटूट विश्वास व वात्सल्य है जिस कारण पूरा संघ आपके प्रति समर्पित

है। यहाँ किसी प्रकार का मनमुटाव या संघर्ष नहीं है। हर मुमुक्षु को अपनी तरह से आत्म साधना करने की पूर्ण स्वतंत्रता है तिस पर समय-समय पर व्यक्तिगत रूप से भी व सामूहिक रूप से सबको आपका मार्गदर्शन मिलता रहता है।

(7) आप अनुशासनप्रिय हैं। आप में संघ संचालन की कुशल नेतृत्व क्षमता है। अतः संघ स्वयमेव अनुशासित रहता है। आचार्य पद के नाते संघस्थ साधुओं को त्रुटी होने पर प्रायश्चित तो देते हैं, पर आगमानुसार ही। किसी की कोई अवमानना नहीं करते। संघ में भय का नहीं प्रेम का वातावरण रहता है। आज तक आपको किसी साधु को डांटते-फटकारते किसी ने नहीं देखा है। आप संघस्थ साधुओं को योग्यतानुसार आगे बढ़ने का अवसर देते हैं।

साहित्य सृजन

यदि हम कहें कि आचार्य श्री का साहित्य सृजन उनकी प्रतिभा से पोषित चिंतन है तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। उन्होंने अपने साहित्य सृजन के माध्यम से समाज को श्रमण संस्कृति की मर्यादित भूमि से उपजे अपने चिंतन के रस से सिंचित जीवन मूल्यों के पुष्प प्रदान किए हैं।

अपने साहित्य में सृजनशील परिपक्वता को प्रामाणिक करने वाले इन वैविध्य प्रतिभा के धनी सर्जक ने जिस सूक्ष्म व शोधक दृष्टि से आगम के अथाह कोष से मूल्यवान रत्नों को खोज-खोज कर निकाला, सँवारा व तराशा है, उसकी महत्ता वास्तव में अकथनीय है। विश्व मंगल की कामना से ओतप्रोत मानव चेतना के विकास में उनके साहित्य की बहुत बड़ी भूमिका है। महत्व है।

भाषाशैली किसी भी सृजन के प्राण हैं। साहित्य सृजन में उपयोगी उनकी भाषा सशक्त, साधना से पुष्ट तथा अध्ययन ज्ञान से परिपक्व है। शब्द चयन वे बड़ी सूक्ष्मता व गहराई से करते हैं। शब्द कितना भी छोटा क्यों न हो- वह अपनी श्रेष्ठतम अभिव्यक्ति देता है।

उनके साहित्य सृजन का उद्देश्य मनुष्य को संवेदनशील व बेहतर मानव बनाना है। कालजयी साहित्य के प्रमुख तत्त्व- मानवता, यथार्थता, धार्मिकता का आचार्य श्री के साहित्य में पूर्णतः समावेश है। उनके साहित्य में पुष्ट एवं शिल्प-भाव, भाषा शैली, कलापक्ष एक-एक ऊँची इमारत को उठाने का शिल्प है।

भाषा की दृष्टि से उनका प्राकृत, संस्कृत व हिंदी पर एक सा अधिकार है। प्राकृत भाषा में उन्होंने कई काव्य रचनाएँ की हैं, संस्कृत से प्राकृत में अनुवाद भी किया है। वहीं हिंदी में उन्होंने गद्य-पद्य दोनों विधा में लेखन किया है।

पद्य में लिखी उनकी कविताएँ प्रसिद्ध हैं। वही गद्य में उनके यात्रावृत्तांत, जीवन गाथाएँ, लेख रूप व कई धार्मिक सामाजिक विषयों पर उनकी पुस्तकें लिपिबद्ध हैं।

हिंदी में उनकी 40 से भी अधिक लिखित पुस्तकों में उनकी जैनाचार विज्ञान, ब्रह्मचर्य विज्ञान, सौ कविताएँ, धरती के देवता, अनूठा तपस्वी, विश्व का सूर्य, दूसरा महावीर, जो है सो है, पथिक आदि महत्वपूर्ण कृतियाँ हैं।

इतिहास साक्षी है कि हमारा देश, हमारा समाज आचार्य श्री जैसे साहित्य साधकों से ही अज्ञानांधकार में ज्ञानालोक दान पाता रहा है। पुष्पदंत भूतबलि का षट्खंडागम, कुंद कुंद का समयसार आज भी हमारे जीवन का सार बने हुए हैं। आदिनाथ से लेकर महावीर व तब से आज तक बने बड़े स्वर्ण कलशों वाले महल समय के प्रभंजनों ने जमींदोज कर दिए, तलवारों का पानी उतर गया, रण का शंखनाद करने वाले शंखों का घोष विलीन हो गया। राजा- महाराजाओं के शास्त्रागारों पर जंग लग गई किंतु तुलसी के रामचरित मानस में विराजित राम-सीता की युगल मूर्तियाँ ज्यों की त्यों

जनमानस में विराजित हैं। सूर के श्याम जन-जन के श्याम बने हुए हैं।

ऋषभदेव की ब्राह्मी, सुंदरी, भरत का वैराग्य, बाहुबलि की तपस्या, तोरण से रथ मोड़ गिरनार की ओर पग बढ़ाने वाला नेमिप्रभु का वैराग्य, पार्श्वनाथ पर कमठ के उपसर्ग, महावीर की चंदना आज भी ज्यों के त्यों जन-मन में रचे-पचे हैं। साहित्य के माध्यम से ही ये भावमूर्तियाँ युगों-युगों से सफर करती आ रही आज भी हमारे लिए सद्यजात पुष्प की तरह हमारे मन को मुकुरित कर देने वाली हैं। आचार्य श्री ने भी अपने साहित्य सृजन की श्रम साधना द्वारा युग की देहरी पर सृजन के ऐसे ही ज्योर्तिदीप धरे हैं। उनकी कृति अनूठे तपस्वी के आचार्य श्री सन्मतिसागरजी तथा 'दूसरा महावीर' कृति के आ. महावीरकीर्तिजी तथा 'सुनील प्राकृत समग्र ' युगों-युगों तक जनमानस में अंकित रहेंगे।

साहित्य समाज के तमस भरे वातावरण का आदित्य है। आचार्य श्री सुनीलसागरजी की साहित्य साधना उत्कृष्ट कोटि की है। निश्चित ही युगों-युगों तक उनकी रचनाएँ इसी तरह सहस्र किरण 'दीपक' बन मानवता का पथ प्रशस्त करती रहेगी। मनुष्य का जीवन लक्ष्य उन्नत बनाएगी और मानव को अबाध गतिशील बनाए रखने में महती भूमिका अदा करेगी।

प्राकृत के उद्भट विद्वान

साहित्य का सृजन पट्टाचार्यश्री सुनीलसागरजी का मानसिक एवं वैचारिक भोजन है। उनकी आहार चर्या तो बत्तीस व्यवधानों (अंतरायों) को टालकर संपन्न होती है किन्तु साहित्य सृजन चर्या निरंतर निराबाध चलती रहती है उसमें काव्यानंद की तो बात ही क्या- उनके लिए 'काव्यानंद ब्रह्मानंद सहोदराः' उक्ति चरितार्थ होती है। इसी काव्यानंद का अमृतपान उन्होंने प्राकृत भाषा में विभिन्न कृतियों का सृजन कर स्वयं के साथ अन्यान्य लोगों व रसिक पाठकों को करवा दिया।

आधुनिक युग की पीढ़ी प्राकृत भाषा से कोसों दूर अंग्रेजी एवं विदेशी भाषाओं के व्यामोह में फंसी है। उसे पता भी नहीं है कि 'प्राकृत' पुराकाल की जनभाषा रही है। उसके विविध नाम हुए हैं जैसे- शौरसेनी, मागधी, अर्धमागधी आदि। जिसमें 'शौरसेनी प्राकृत' भाषा प्रथम सदी से 12वीं सदी तक व्यापक व प्रभावक रही। यह संस्कृत की जन्मदात्री भाषा है। आचार्य श्री सुनीलसागरजी का मानना है कि भगवान महावीर ने अपने प्राचीन ज्ञान, विज्ञान, दर्शन, चिंतन, सिद्धांतों व कला को इसी 'प्राकृत भाषा' के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाया है। एक प्रकार से यह भाषा हमारी प्राचीन सभ्यता व संस्कृति को सुरक्षित व संरक्षित रखने में महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। इस भाषा में हमारे पूर्वाचार्यों का ज्ञान, विज्ञान व अनुसंधान सुरक्षित है।

किंतु संप्रति में यह 'प्राकृत भाषा' मृतप्राय है। आज के इस सेटेलाइट युग में कोई पुस्तक पढ़ना ही नहीं चाहता तब प्राकृत भाषा में लेखन जैसा दुरूह व दुष्कर कार्य करने की जहमत कौन उठाएगा? किंतु! प्राकृत भाषाविद् पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी ने अपने प्रगाढ़ प्राकृत भाषा ज्ञान व व्यक्तित्व शक्ति से प्राकृत भाषा में ग्रंथ लिख- लेखन की विलुप्त होती परंपरा को प्राणदान दिया है। विभिन्न ग्रंथों के लेखन में आपके प्राकृतभाषा के व्याकरण ज्ञान की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

प्राकृत भाषा में ग्रंथ लेखन प्रारंभ करने के पीछे उनका तर्क है कि ईसा की प्रथम सदी से लेकर 12वीं सदी तक का दिगम्बर जैन साहित्य प्रायः 'शौरसेनी प्राकृत भाषा' में लिपिबद्ध है। श्रमण परंपरा का मूल मंत्र णमोकार महामंत्र प्राकृत भाषा में है जिसे संपूर्ण विश्व में लाखों लोग प्रतिदिन बोलते-जपते हैं। प्रतिक्रमण और सामायिक की साधना में भी प्रतिदिन प्राकृत भाषा का प्रयोग होता है। साधुओं के लिए तो विशेष रूप से यह साधना व संयम की भाषा है। माँ सरस्वती का जिनके सिर पर वरदहस्त है, तपस्वी सम्राट गुरुवर सन्मतिसागरजी के आशीर्वाद की छत्र छाँव जिनके शीश

पर है, ऐसे चतुर्थ पट्टाचार्यश्री सुनीलसागरजी ने अपनी रचनात्मक व प्रभावक शक्ति से प्राकृत भाषा में ग्रंथ लेखन की संजीवनी प्राणवायु फूँककर प्राकृत भाषा को फिर से जीवंत व उर्जावान कर दिया।

चूँकि आचार्य श्री ने 'शास्त्री' की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की हैं। अतः श्रमशील विद्यार्थी होने के नाते उन्होंने हिंदी, संस्कृत के साथ प्राकृत भाषा के व्याकरण का भी अध्ययन बहुत अच्छे से किया था। उनका प्राकृत भाषा का ज्ञान देखते हुए प्राकृत विद्वानों ने युवाचार्य को प्राकृत भाषा में ग्रंथ सृजन की प्रेरणा दी। 5 फरवरी2009 में आपका श्रवणबेलगोला में प्रवेश हुआ। भट्टारक श्री चारूकीर्तिजी स्वामी जानते थे कि आप आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के प्रतिभावान, योग्य शिष्य हैं। आपके विशद ज्ञान से भी वे प्रभावित थे। श्रवणबेलगोला प्राकृत भाषा का गढ़ है। स्वामीजी ने आपसे प्राकृत भाषा में गद्यात्मक ग्रंथ सृजन का निवेदन किया।

वहाँ आपने 'णमो जिणिंदगोम्मटं' तथा 'भद्दबाहुचरियं' की रचना की। 11 अप्रैल 2009 को 'प्राकृत भाषा के विविध आयाम संगोष्ठी' के आयोजन में 'णमो जिणिंदगोम्मटं' स्तुति को डॉ. मयूरी शहा, सोलापुर ने प्रस्तुत किया तो स्वामीजी सहित सभी लोग गदगद हो गए। स्वामीजी ने आचार्य श्री की रचना एवं प्रस्तुति की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए आपको 'अभिनव नेमिचंद्र' कह कर पुकारा। स्वामीजी ने कहा कि आचार्य श्री नेमिचंद्र के एक हजार वर्ष के बाद प्राकृत भाषा में लिखने का सौभाग्य युवाचार्यश्री सुनीलसागरजी को प्राप्त हुआ है। हमने तो कल्पना भी नहीं की थी कि कोई संत जिन-दर्शन चिंतन को प्राकृत ग्रंथों में इस युग में लिखेगा। निश्चित ही आचार्य श्री की साधना स्तुत्य एवं श्लाघ्य है! गोष्ठी में उपस्थित समस्त विद्वत्जनों ने तब उनकी और अधिक प्रशंसा की जब उन्होंने अपना प्रवचन प्राकृत भाषा में दिया। प्राकृत भाषा के प्रति आपका लगाव, जुड़ाव व सृजनशीलता तथा साहित्य प्रेम देख स्वामीजी व विद्वत्जनों ने इस गोष्ठी में ही आपको 'प्राकृताचार्य' की उपाधि से विभूषित किया।

तभी स्वामीजी ने आपकी प्राकृत भाषा रचना 'भावणासारो' का कन्नड़ में अनुवाद करवाकर प्रकाशन करवाया। अभी सन् 2017 में आपकी पाँच प्राकृत कृतियों का कन्नड़ में अनुवाद हो चुका है। आचार्य श्री द्वारा अभी तक पचास पुस्तकों का लेखन हो चुका है उनमें से 10 से भी अधिक पुस्तकें प्राकृत भाषा में लिखी गई हैं। आचार्य श्री द्वारा सन् 2003 से 2015 के मध्य लिखी गई प्राकृत भाषा की प्रतिनिधि कृतियों का संग्रह 'सुनील प्राकृत समग्र' में किया गया है जिसे 'भारतीय ज्ञानपीठ' द्वारा सन् 2016 में प्रकाशित किया गया है जिनमें आपने देव, शास्त्र, गुरु की महिमा बखान के साथ जैन दर्शन-चिंतन का वर्णन किया है। इन कृतियों के माध्यम से आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने सिद्ध कर दिया कि दिगम्बर जैन साधक संत सिर्फ प्राकृत के श्रुतग्रंथ पढ़ते ही नहीं, उनमें काव्य रचना कर श्रुतभंडार को वृद्धिगत भी कर रहे हैं।

आचार्य श्री की इस बहुचर्चित कृति (प्राकृत भाषा की) 'सुनील प्राकृत समग्र' का लोकार्पण 2018 में श्रवणबेलगोला में आयोजित 'प्राकृत अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन' में देश-विदेश के विद्वानों के समक्ष पूर्व केन्द्रीय मंत्री वीरप्पा मोइली के करकमलों से हुआ। आपकी इस कृति को देखा तो रूस से पधारी प्राकृत विदुषी डॉ. नातालिया झेनोलोनोवा ने कहा, ''इस महान ग्रंथ में तो आचार्य कुंदकुंद की भाषा और विचारों की सुगंध आ रही है।''

आपके प्राकृत भाषा प्रेम के कारण समय-समय पर आपके सान्निध्य में प्राकृत साहित्य पर विद्वत गोष्ठी 2003, उदयपुर (राज.), प्राकृत भाषा के विविध आयाम, विद्वत गोष्ठी सितम्बर 2008 में, सोलापुर, तथा श्रवणबेलगोला में, प्राकृत भाषा परिचर्चा अगस्त 2010 व मुंबई में होती रही। प्रतापगढ़ चातुर्मास 2015 में विद्वानों द्वारा आपके प्राकृत में असाधारण लेखन कार्य को देखते हुए 'अभिनव कुंदकुंदाचार्य' उपाधि से आपको अलंकृत किया गया। आपके प्रत्येक चातुर्मास में प्राकृत विद्वत् गोष्ठी का आयोजन हो, प्राकृत भाषा को समृद्ध करने के लिए यथोचित कदम उठाए जाते हैं। आपके द्वारा राजनेताओं व विद्वानों को प्रोत्साहित कर यूनिवर्सिटी पाठ्यक्रमों में प्राकृत भाषा सम्मिलित करवाने का

बीड़ा उठाया गया है।

आचार्य श्री की प्राकृत रचनाओं का संक्षिप्त परिचय यहाँ दिया जा रहा है। विस्तृत विवेचन की जानकारी के लिए सुनील प्राकृत समग्र पढ़ें।

सारस्वत साधना के धनी आचार्य श्री सुनीलसागरजी की प्राकृत भाषासाधना विद्यार्थी जीवनकाल में 'शास्त्री' के अध्ययन से ही शुरू हो गई थी। प्राकृत के प्रति उनकी रुचि बढ़ती गई। साधक जीवन के प्रारंभिक काल में ही श्रुताराधना करते हुए आपने अनुभव किया कि जिनागम का मर्म तो प्राकृत भाषा में छुपा है यदि उसे हृदयंगम करना है तो प्राकृत भाषा का सूक्ष्म अध्ययन करना आवश्यक है, क्योंकि उसके बिना पूर्वाचार्यों से प्रवाहमान साहित्य समझ नहीं आ सकता है। इसी बात से आचार्य श्री की प्राकृत के प्रति प्रगाढ़ रुचि बन गई। वे येन-केन-प्रकारेण प्राकृत ज्ञान अर्जित करने में जुट गए।

गुरु आचार्य श्री सन्मतिसागरजी ने शिष्य मुनि सुनीलसागर की प्राकृत सीखने की प्यास, ललक, लगन, निष्ठा, प्रज्ञा प्रतिभा व पात्रता को अच्छी तरह जाँचा-परखा व प्राकृत अध्ययन के लिए भरपूर आशीर्वाद दिए, अनुकूलताएँ प्रदान की। वे चाहते थे कि उनकी चहुंमुखी प्रतिभा का विकास हो व उसका स्वयं के साथ समाज को भी लाभ मिले व हमारी यह प्राचीन भाषा उनके मार्गदर्शन से पुनः फले-फूले। और इधर एकनिष्ठ साधक सुनीलसागरजी प्राकृत के विद्वानों, मनीषियों का सहयोग ले प्राकृत भाषा का ज्ञानार्जन कर प्राकृत भाषा के मर्मज्ञ बन गए। उसी की फलश्रुति उनका यह प्राकृत भाषा में लिखा श्रुत भंडार है, जो संपूर्ण साहित्य जगत व श्रमण परंपरा को प्राकृत भाषा के लिए गौरवान्वित कर रहा है।

तत्त्वार्थ सूत्र के संस्कृत सूत्रों को प्रथमबार प्राकृत भाषामय सूत्रों में लिपिबद्ध कर आपने अपनी प्रखर प्रज्ञा का परिचय दिया है। इन शिखर पुरुष की अध्यात्म में डूबकर की गई साहित्य सृजन साधना के फलस्वरूप आचार्य श्री की उपरोक्त कृतियाँ विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में तो सम्मिलित की जा रही हैं, विदेशी प्राकृताचार्य व स्कालर भी उनके साहित्य के अध्ययन के लिए उन्मुख हो रहे हैं। इस प्रकार इन आत्मनिष्ठ साधक ने अपनी प्राकृत साहित्य की अनुपम देन से समाज व संस्कृति का बहुत बड़ा उपकार किया है। उनकी प्रत्येक रचना सिद्धत्व प्राप्ति की किरणावलियों से आभा मंडित है।

आचार्य श्री द्वारा सन् 2003 से 2015 के बीच लिखी गई प्राकृत भाषा की रचनाएँ उनकी प्रतिनिधि रचना 'सुनील प्राकृत समग्र' में संचित है जिनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है :-

(1) थुदि संगहो (स्तुति संग्रह) : इसमें आपकी उसहजिण त्थुदि से लेकर वड्ढमाण-त्थुदि तक अनेक तीर्थंकरों की स्तुतियाँ, परमेट्ठी त्थुदि (पाँच परमेष्ठी की स्तुति) के अलावा अनेक स्तुतियाँ व रचनाएँ संग्रहित हैं।

आपने मूलतः 'शौरसेनी प्राकृत' भाषा में साहित्य सृजन किया है। साहित्य की प्रत्येक धारा, विद्या, व्याकरण व भाषा पर आपका अच्छा अधिकार है। आपने इन रचनाओं में छंद, अलंकार व नवरसों का प्रयोग किया है।

(2) णीदी संगहो (नीति संग्रह) : इस ग्रंथ में 161 अनुष्टुप छंदों में रचित प्राकृत भाषा के ग्रंथ में धम्म णीदि (धर्म नीति) के 60 पद व लोग णीदि (लोक व्यवहार) के 101 पद लिपिबद्ध हैं। धर्म नीति में जिनेंद्र भगवान की महिमा, पंच महाव्रतों, धर्म, ज्ञान आदि की महिमा, क्षमा, मार्दवादि दस धर्मों की महिमा आदि विषयों का वर्णन किया गया है। लोकनीति में दान व विवेक की महिमा, मित्र व शिष्य के लक्षण, चिंता से हानि, किसको कैसे जीते आदि कई ज्ञानोपयोगी व जीवनोपयोगी बातों का सूक्ष्म विवेचन है। कारिकाओं की भाषा सरल, ग्राह्य व मन को छू लेने वाली है। कवि हृदय संत द्वारा इस रचना का उद्देश्य उन्हीं के शब्दों में-

धम्मत्थकाम- पत्तत्थं, कल्लाणत्थं च मोक्खणं।
आइरिय-सुणीलेण, किदं णीदिअ संगहं।।1।।

(3) भावणासारो (भावनासार)- आचार्य श्री की इस कृति में जैन शास्त्रों में वर्णित वैराग्य वर्द्धिनी बारह भावनाओं का सुंदर प्रस्तुतिकरण है। उनकी एक-एक गाथा माला के अमूल्य मोती हैं। इस कृति में रस अलंकारों का वैभव भी देखने को मिलता है। इस ग्रंथ में 72 छंदों में से 71 अनुष्टुप छंद व 72वीं अंतिम गाथा छंद है। अन्वयार्थ, हिंदी अर्थ व व्याख्या के कारण यह ग्रंथ पठनीय, मननीय, चिंतनीय व ग्रहणीय है।

(4) भद्दबाहु-चरियं (भद्रबाहु चरित्र) : इस ग्रंथ में अंतिम व पंचम श्रुतकेवली भद्रबाहु स्वामी व चंद्रगुप्त का प्राकृत गद्य काव्य पूर्ण परिचय है। इसमें चंद्रगुप्त के 16 स्वप्नों से लेकर भद्रबाहु का संपूर्ण जीवनवृत्त व दक्षिण में समाधि तक का बड़ा रोचक, प्रेरणास्पद व भावपूर्ण भाषा में वर्णन है।

(5) अज्झप्पसारो (अध्यात्मसार) : इस ग्रंथ में स्वपर कल्याण के लिए रचित 102 गाथा छंदों में संपूर्ण अध्यात्म का अति संक्षेप में सारगर्भित निचोड़ प्रतिपादित किया गया है। इसमें अध्यात्म के गूढ़-गहन तत्वों का बड़ी रोचक व सरल भाषा में प्रस्तुतिकरण सर्वगम्य, सर्वग्राह्य व स्तुत्य है। कृतिकार की यह अनूठी व असाधारण कृति विलक्षण सृजनधर्मिता की द्योतक है जिसमें आचार्य कुंदकुंद के समयसार जैसी अनुभूतियों का समाकलन किया गया है। काव्य और शास्त्र दोनों दृष्टि से यह आचार्य श्री की श्रेष्ठतम रचना है।

विद्वानों का मानना है कि रस, अलंकार, अनुभूति व आत्मानुभव की तीव्र प्रेरणा देने वाला यह ग्रंथ कुंदकुंद की साहित्य शृंखला में सम्मिलित करने जैसा ग्रंथ है।

(6) णियप्पज्झाणसारो (निजात्म ध्यान सार) : प्राकृत भाषा में लिखा यह आचार्य श्री का लघुकाय मात्र 55 अनुष्टुप छंदों का ग्रंथ है। इसमें रोचक व सरल भाषा में ध्यान, ध्याता, ध्येय व ध्यान के फल का सुंदर विवेचन है।

(7) भावालोयणा (भावालोचना) : शौरसेनी प्राकृत भाषा में लिखी इस रचना में 25 गाथाएँ हैं जिसमें हमारे भावों की आलोचना है। आचार्य अमितगति के द्वात्रिंशतिका की शैली में लिखी यह कृति भावों को शुद्ध व परिमार्जित करने में सहयोगी है। यह रचना सामायिक व प्रतिक्रमण में भी पठनीय है।

(8) वयणसारो (वचनसार) : प्राकृत भाषा में 57 अनुष्टुप छंदों में लिखी यह वचनसार रचना नामानुकूल सारभूत वचनों का प्रस्तुतिकरण है। इसमें सफलता का सूत्र, लोक उन्नति का सूत्र, शांति का सूत्र जैसी अनेकानेक नीतिगत वचन गाथाओं के माध्यम से निरुपित किए गए हैं जो हमारे लिए कार्यसिद्धि में सहायक हैं।

(9) सम्मदि सदी (सन्मति शती) : प्राकृत भाषा में अपने गुरु आचार्य श्री सन्मति सागरजी के गुणों का बखान करती इस कृति में 101 अनुष्टुप छंद हैं। यह रचना पठनीय है।

(10) बारा भावणा (बारह भावना) : बसंततिलका के बारह छंदों में लिखी यह बारह भावना नित्य पाठोपयोगी है। इस छोटी सी रचना में आचार्य श्री ने गागर में सागर भर दिया है।

(11) प्राकृत बोध (व्याकरण) : ईसा की पहली से 12वीं सदी तक लिखा समग्र दिगम्बर जैन साहित्य प्राकृत भाषा में लिपिबद्ध है। हमारा प्राचीन दर्शन, इतिहास व साहित्य शौरसेनी प्राकृत, मागधी व अर्धमागधी प्राकृत में लिखा गया है। जिसे समझने-पढ़ने के लिए प्राकृत भाषा- व्याकरण का ज्ञान होना आवश्यक है। अतः आचार्य श्री ने 'प्राकृत बोध' नाम के इस ज्ञानोपयोगी प्राकृत व्याकरण ग्रंथ की रचना की। इस व्याकरण ग्रंथ में वर्ण विचार, स्वर-व्यंजन परिवर्तन, कृदन्त, समास, अव्यय, लिंग, विशेषण, पर्यायवाची शब्द आदि सारे भाषा बोध देने वालों व्याकरण प्रकरणों का विस्तार से उल्लेख है। प्राकृत प्रवेशार्थियों के लिए व प्राकृत ज्ञानार्जन करने वालों के लिए यह 'प्राकृत बोध' व्याकरण बहुत उपयोगी है।

इस कृति से स्पष्ट है कि आचार्य श्री का ध्यान मात्र धार्मिक-आध्यात्मिक ग्रंथों की प्राकृत भाषा में रचना पर ही केंद्रित नहीं रहा अपितु प्राकृत भाषा को सीखकर प्राकृत भाषा में लिखे जीवनोपयोगी सूत्रों को प्रकाश में लाने का भी रहा है।

(12) आचार्य श्री ने तत्त्वार्थसूत्र का भी संस्कृत से प्राकृत में अनुवाद किया है।

(13) णमो जिणिंदगोम्मटं- इसमें आठ अनुष्टुपों में भगवान बाहुबलि के प्रथम दर्शन पर स्तुति की गई। स्तुति को प्राकृत भाषा में लिखा गया है :

(14) 'भारदीत्थुदी'- जिनवाणी स्तुति- गेय व भावप्रवण प्रस्तुति है। इस जिनवाणी स्तुति को आपके प्रवचन पश्चात् व अन्य जगहों पर शास्त्र वाचन पश्चात भक्ति पूर्वक गाया जाता है।

इन रचनाओं में आचार्य श्री प्राकृत के प्रकांड विद्वान दृष्टिगत होते हैं। उन्होंने अपनी असाधारण प्रतिभा व विलक्षण मेधा शक्ति से प्राकृत भाषा के लिए अभूतपूर्व कार्य किए हैं। एक मृतप्रायः भाषा को पुनः जीवंत बनाने के लिए वे सदैव याद किए जाते रहेंगे। प्राकृत भाषा के लिए उनके द्वारा दिए जा रहे अवदानों के लिए श्रमण व श्रावक दोनों उनके सदैव ऋणी रहेंगे।

आचार्य श्री सुनीलसागरजी द्वारा विरचित कृतियाँ

1. इष्टोपदेश (व्याख्या)
2. विश्व का सूर्य (जीवन वृत्त)
3. पथिक (उपन्यास)
4. कालजयी कविताएँ (कविताएँ)
5. मेरी सम्मेदशिखर यात्रा (यात्रा वृत्त)
6. वसुनन्दी श्रावकाचार (व्याख्या)
7. दूसरा महावीर (जीवन वृत्त)
8. दो प्रवचन (प्रवचन)
9. अहिंसावतार (काव्य संग्रह)
10. जैनाचार विज्ञान (आलेख)
11. काशी दर्शन (यात्रा वृत्तांत)
12. मानवता के आठ सूत्र (निबंध)
13. बिना पूँछ का बंदर (कविताएँ)
14. संक्षिप्त जैन इतिहास (आलेख)
15. यात्रा के संस्मरण (यात्रा वृत्तांत)
16. ब्रह्मचर्य विज्ञान (आलेख)
17. धरती के देवता (वार्ता)
18. जैन धर्म जानिए (तीन भाषा में)
19. तत्त्वार्थ सूत्र (व्याख्या)
20. अध्यात्मसार शतक
21. सौ कविताएँ (कविता संग्रह)
22. आत्मोदय शतक
23. अनूठा तपस्वी (जीवन वृत्त)
24. भाव निर्झर (मराठी प्रवचन)
25. यात्रा-अन्तर्यात्रा (चिन्तन)
26. मेरी दक्षिण यात्रा (यात्रा वृत्त)
27. चिन्तन यात्रा (यात्रा वृत्त)
28. मौन तपस्वी (जीवन वृत्त)
29. अनुत्तर तपस्वी (जीवन वृत्त)
30. जो है सो है (कविताएँ)
31. धम्मो मंगलं (दशधर्म प्रवचन)

आचार्य श्री सुनीलसागरजी द्वारा विरचित प्राकृत कृतियाँ

1. भावालोयणा (प्राकृत)
2. णीदी संगहो (प्राकृत)
3. प्राकृत बोध (प्राकृत व्याकरण)
4. भद्दबाहुचरियं (प्राकृत)
5. वयणसारो (प्राकृत)
6. बाहुबली (प्राकृत कथा)
7. भावणासारो (प्राकृत)
8. थुदी संगहो (प्राकृत)
9. अज्झप्पसारो (प्राकृत)
10. णियप्पज्झाणसारो (प्राकृत)
11. सम्मदि-सदी (प्राकृत)
12. अनंतवीर्य (प्राकृत कथा)
13. बारा भावणा (प्राकृत)
14. णमो जिणिंदगोम्मटं (प्राकृत)
15. भारदीत्थुदी (प्राकृत)
16. तत्त्वार्थ सूत्र (संस्कृत से प्राकृत अनुवाद)

गति पथ-पदविहार

संसार की असारता व अनित्यता देखते-देखते जो थक जाते हैं वे ही साधु बन जाते हैं। जिनकी आत्माभिमुखी प्रवृत्ति होती है वे साधु कहलाते हैं। साधु साधना से संपन्न किंतु साधनों से विपन्न अपरिग्रही होते हैं। दिगम्बर जिन संतों का अभीष्ट लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति या शिवधाम प्राप्ति होता है जो मोह व राग-द्वेष जैसे विकारी भावों के तजे बिना कतिपय संभव नहीं। जिन शासन में दीक्षित दिगम्बर संत के लिए यात्रित रहना अनिवार्य है। वे एक स्थान पर अधिक दिनों तक नहीं रह सकते। चूँकि दिगम्बर जिन साधु के लिए वाहन उपयोग का सदासर्वथा त्याग होता है अतः नग्न बदन, नंगे पैर पद विहार करना उनकी चर्या का अभिन्न अंग बन जाता है। युवा मुनि श्री सुनीलसागरजी एक ऐसे ही दिगम्बर भेषी पद विहारी साधु हैं।

आपने अपनी 'यात्रा के संस्मरण' पुस्तक के प्रथम पृष्ठ पर पहली दो पंक्तियाँ लिखीं हैं-

पथिक सदा चलते रहो, लेना मत विश्राम।
सम्यक् चलने से मिले, निश्चित ही शिवधाम।

जो आपकी जीवन चर्या पर सटीक लागू होती है। आपकी जीवन यात्रा शिशु संदीप के रूप में तिगोड़ा से शुरू होकर किशुनगंज होते हुए सागर मोराजी गणेशप्रसाद वर्णी संस्कृत महाविद्यालय पहुँची। जहाँ आपको ऐसा सम्यक् पथ मिल गया जहाँ से आपको जीवन यात्रा के मौलिक लक्ष्य 'शिवधाम' का पता ठिकाना मिल गया और वहाँ से आपको उसकी प्राप्ति के लिए बरुआसागर सदी के महानतम महातपस्वी आचार्य श्री सन्मतिसागरजी के पास पहुँचा दिया उनसे दीक्षा ग्रहण कर आपने संयममय जीवन अंगीकार कर लिया और चल पड़े निर्वाण प्राप्ति की महायात्रा के अभियान पर।

अब मुमुक्षु मुनि श्री सुनीलसागरजी के लिए अंतरयात्रा के साथ-साथ बाह्य जगत की यात्रा को भी सम्यक् आयाम देना परम कर्तव्य बन गया। बरुआसागर से दिनांक 20 अप्रैल 1997 को प्रथम यात्रा .... के लिए, फिर द्वितीय........ फिर तृतीय........ इस प्रकार आज तक पद विहार करते-करते आप यात्रा पथ पर सतत प्रवहमान है, अपने संपूर्ण लक्ष्य की प्राप्ति के लिए। बाह्यजगत में चरण चक्रमण होता रहता है और अंतर्जगत में मन यात्रित है, सब गतियों में हो आया हूँ, जाने के लिए निकला पर कहीं नहीं जा पाया। भटकते-भटकते मुझे यह दुर्लभ मानव जीवन व दुर्लभ सम्यक पथ मिला है। अब से यह एक मुमुक्षु की यात्रा है, कहीं जाने के लिए नहीं, धोखा खाने के लिए नहीं अपितु स्वयं के पास आने के लिए, स्वयं को पाने के लिए मेरे लिए यह यात्रा आत्म परिष्करण के लिए बाह्य निमित्त है।

जैन परंपरा में संन्यास धारण करने के बाद संत एक स्थान पर रहकर संसारी लोगों की मोहमाया में न फँस जाय इसलिए उसके लिए किसी एक स्थान पर ठहरना वर्जित है और पद विहार उनके लिए चर्या बन गया। मुनि श्री सुनीलसागरजी ने सोचा अब तक मैं बहुत चला, चलता ही रहा, किंतु अब से मेरे चलने का उद्देश्य, अनंत शांति, अनंत सुख, अनंत शक्ति व अनंत ज्ञान जैसी महासत्ता को प्राप्त कर निराकुल हो, जीवन जीना है। अब तक मैंने वाहन विहार किया, नौका विहार किया, पद विहार किया किंतु आत्मविहार कर विचरण कर कर्मों का विहार नहीं कराया। अब मुझे पद विहर के साथ-साथ कर्मों को भी विहार करवाना है तभी मुझे अपने अभीष्ट लक्ष्य की प्राप्ति हो सकती है और मैं आत्मविहार कर आत्मानंद में विचरण कर सकूँगा।

तब से अब तक आचार्य श्री (मुनि अवस्था से) अपने 22 वर्ष के संयममय साधना काल में 20 हजार कि.मी. चल चुके हैं। इस चरण चक्रमण में आप बस्ती-बस्ती, गाँव-गाँव, नगर-नगर, डगर-डगर, पगडंडियों से राजपथ तक निर्जन, पथरीले, कंटकाकीर्ण, बीहड़, चट्टानी, पहाड़ी, ढलान वाले, रेगीस्तानी रास्तों से गुजरते विश्व कल्याण की राह

में दुर्वा की तरह बिछते रहे। सूरज के प्रचंड प्रहार से तपती धरती पर नग्न, झुलसा तन व फफोले पड़े खून रिसते नंगे पाँवों से शांत निराकुल मुद्रा में ग्रीष्म में चलते रहे। वहीं शीत ऋतु में भी अपने इस भेष में बर्फीली धरती पर बर्फीली तीर सी तीक्ष्ण चुभती हृदकंपी, रदकंपी, हड़कंपी ठंडी हवाओं का परिषह सहते चलते रहे। चातुर्मास स्थापना तक पद विहार में मूसलाधार बारिश में भीगते, तेज आँधी अंधड़ों, तूफानों के बीच, जंगली जानवरों, विषैले कीड़े-मकोड़ों से भरी धरती पर आप पद विहार करते रहे। विहार की उनकी परिषह जन्य पीड़ा (साधु) की हम वाहन विहारी सुविधा भोगी गृहस्थ कदापि नहीं समझ सकते, न ही लिख सकते, मात्र संकेत दे सकते हैं।

मुनिपद, आचार्य पद व फिर पट्टाचार्य पद पर रहते हुए उनकी पद यात्रा या जीवन यात्रा का एक ही उद्देश्य आत्म कल्याण करते हुए विश्व कल्याण करना है। हर कहीं वे समाज में संस्कारों का सींचन करते, अध्यात्म का शंखनाद करते, सांस्कृतिक पुनर्जागरण का संदेश देते, 'शव' होती मानवता में 'शिवत्व' का प्राणमंत्र फूँकते दिखाई देते हैं। 'दैत्याकार' रूप लेती भारत भूमि को पुनः 'देवभूमि' बनाने के लिए प्रयासरत हैं।

अनुभव रत्नों के पारखी आचार्य श्री के पास ज्ञान की गहराई में गोते लगाकर प्राप्त चिंतन के अमूल्य हीरे-जवाहरात है और तथा आत्मानुभूति के आनंद से भरे अनुपम अहसास हैं जिनके द्वारा वे हमारी हिलती-हिचकोले खाती आस्था, सन्निपाती श्रद्धा, संस्कार शून्य व मूल्यहीन होते जीवन तथा बर्फाती-पथराती संवेदनाओं को उष्मा-ऊर्जा दे देकर हमारे मृतप्राय प्राणों में स्पंदन, स्फूर्ति व चेतना का संचार कर रहे हैं। वे हमें जगा रहे हैं, उठा रहे हैं, मोह नींद में सोए पड़ों को झकझोरकर खड़े कर रहे हैं और 'आत्मभोर' के अरुण की अरुणिम छटा का दिग्दर्शन करा रहे हैं।

आचार्य श्री आहार-विहार की कठिन चर्या के कठिन साधना काल में भी मुनि धर्म का निर्वहन करते हुए निरंतर यथावत पठन-पाठन, आगम वाचन, स्वाध्याय, लेखन, प्रवचन, पंच कल्याणक प्रतिष्ठा, वेदी प्रतिष्ठा, महामंडल, विधान पूजन के कार्य संपादित करते-कराते चर्या पथ पर आरूढ़ है। उनके आशीर्वाद से हजारों लोगों के दुःख-दर्द दूर होते देखे जा रहे हैं। उनका मंगल विहार हो या मंगल वास, भक्तों व दीन-दुखियों की भीड़ उनके दर पर लगी रहती है। यही नहीं भव्य प्राणी अपने भव भवांतरों के जन्म जरा मृत्यु के रोग के निवारणार्थ उनके श्री चरणों में आ दीक्षित हो संयम की साधना कर रहे हैं। समाधिमरण व सल्लेखना लेकर मृत्यु को महोत्सव बना रहे हैं।

आचार्य श्री यात्रा पथ पर श्रमण संस्कृति के इतिहास के बिखरे पन्नों को समेट संवारकर संरक्षित सुरक्षित करने की प्रेरणा दे रहे हैं। देश के हर जाति, धर्म, वर्ग के लोगों को मूल्यपरक अहिंसक व शाकाहार जीवन शैली अपनाने के लिए प्रेरित कर लोगों का जीवन रूपांतरित कर रहे हैं।

आचार्य श्री सुनीलसागरजी का मंगल विहार तीन भागों में बंटा है। मुनि अवस्था में प्रारंभिक दस वर्षों तक 20 अप्रैल से 1997 से 26 जनवरी 2007 तक आचार्य गुरु के सान्निध्य में रहे। जनवरी 2007 से आचार्य पद ग्रहण करने के बाद अकेले- आत्मनिर्भर हो ईर्यापथ पर आगे बढ़ चुनौतियों को चुनौतते रहे। और उसके बाद पट्टाचार्य पद के निर्वहन की गुरुतम गुरुप्रदत्त जिम्मेदारियों को निर्वहन करते निभाते हुए दसों दिशाओं में अपनी सफलताओं की यशकीर्ति पताकाएँ फहराते संघर्षमय संयम पथ पर निराबाध आगे बढ़ रहे हैं।

आचार्य संघ के अनुशासन में अप्रैल 1997 से लेकर जनवरी 2007 तक मुनि अवस्था में विहार किया। विहार में आपने एक साथ आठ-आठ दिनों के अंतराय की परिषहजन्य पीड़ा भी समता भाव से सहन की। कई बार तो आपने अंतराय के बाद भी 20-30 कि.मी. की भर गर्मी में कठिन चढ़ाई वाली पदयात्रा की। सूखा कंठ, खून रिसते पैर फिर भी होंठों पर स्मिता लिए चलते रहे, सहते रहे और रात्रि विश्राम किसी खंडहरनुमा भवन या स्कूल में करते रहे। एक अकिंचन्य संत के कठिन पद विहार की यह मात्र एक झलक है। ऐसी दुरूहतम परिस्थितियों में विहार करते रहने के बावजूद भी उनकी 'साधुचर्या' यथावत चलती रही। सामायिक, प्रतिक्रमण, गुरुवैयावृत्ति, उपदेश (प्रवचन) वाचन,

स्वाध्याय, लेखन मार्ग में पड़ने वाले तीर्थों, ऐतिहासिक स्थलों का सूक्ष्म अवलोकन व यात्रा वृत्तांत लेखन जैसे कार्य वे अपनी श्रमशील साधना व संकल्पशील स्वभाव के कारण नियोजित रूप से करते रहे। त्वरित निर्णय लेने, अद्‌भुत समय नियोजन क्षमता, कुशल नेतृत्व व व्यवहार कुशलता ने युवा मुनि सुनीलसागरजी को अतिशीघ्र आचार्य संघ की अग्रिम पंक्ति में सबसे आगे लाकर खड़ा कर दिया। इस पद विहार में ही उनकी प्रतिभा व पात्रता में निखार आया और सबको उनकी पहचान का अवसर मिला।

यही कारण था कि आचार्य गुरु ने मुनि श्री को सन् 2001 में एक अन्य साधु के साथ उज्जैन चातुर्मास का अवसर प्रदान किया। पहली बार युवा संत को समझ आया कि अकेले विहार करना कितना कठिन होता है? पर आत्मबल बढ़ा। सोई आत्मशक्ति का स्फोटन होने लगा और वे फिर चाहें विहार में हों या चातुर्मास में, उनका सलीका, उनके सुलझे विचार, मृदु व्यवहार, मीठी वाणी, उदार हृदय, वाक् चातुर्य, अथाह ज्ञान व दृढ़ चर्या से वे शीघ्र ही जन-जन के चहेते बन लोगों के दिलोदिमाग में बस गए। जहाँ उन्होंने अपने प्रवचनों में धार्मिक, सांस्कृतिक व सामाजिक सुधारों का संदेश दिया वहीं उन्होंने नवजागरण का अभियान भी छेड़ा। इस प्रकार उन्होंने समाज पर अपने प्रभावोत्पादक व्यक्तित्व की अमिट छाप छोड़ी व लोगों की सोई चेतना जगाई।

उज्जैन चातुर्मास में मुनि श्री सुनीलसागरजी ने दिखा दिया कि व्यक्ति अपने चट्टानी इरादों, कठिन पुरुषार्थ व बुद्धि कौशल से समाज को नई दिशा दे उसकी दशा बदल सकता है। आज समाज को एक व्यवहारकुशल नेतृत्व की आवश्यकता है। उज्जैन के मुनि श्री के धर्म प्रभावक चातुर्मास से आचार्य गुरु बड़े प्रसन्न थे।

आचार्य श्री ने जब युवा संत में कुछ कर गुजरने, विषमता को समता में बदलने व लोक कल्याण कार्यों की अद्‌भुत क्षमता देखी तब उन्हें निमाड़ खरगोन (म.प्र.) में बलिप्रथा के नाम पर चल रही हिंसा को रोकने की जिम्मेदारी सौंपी और इन युवा संत ने लम्बी चलाई चलते रह, पद संचलन में गाँव-गाँव, बस्ती-बस्ती, घर-घर जाकर अहिंसा का शंखनाद किया। व्यक्तिशः सुधार का कड़ा श्रम शुरू किया। लगातार उपदेश और फिर उपचार। बिना एक पल आराम किए आपने अपने 'अहिंसा महाभियान' द्वारा लाखों बकरों को बलि के नाम पर कटने से रोका। लोगों को हिंसामुक्त व्यसनमुक्त किया। गुरुभक्त अशिक्षित ग्रामीण उन्हें भगवान की तरह पूजने लगे। जहाँ से गुजरते लोग कहते सुने जाते कि ये भगवान महावीर के शिष्य हैं। इस युग के हमारे लिए तो भगवान हैं।

इस प्रकार इस पद संचलन ने उनकी संचित आत्मशक्ति व आत्मविश्वास को हवा दे उर्जस्वित कर दिया। अब तो वे इतने सबल हो गए थे कि स्वयं खम ठोककर किसी भी विपरीत प्रवाह का पथ मोड़ने की ताकत रखते थे। अंततः यही कहा जा सकता है, इस पद संचलन के द्वारा ही उन्हें जगह-जगह का लोकजीवन व लोक संस्कृति देखने मिली व अपने आप को साबित करने का अवसर मिला। इसी प्रकार बागड़ में भी उन्हें अकेले रह धर्म प्रभावना करने का अवसर मिला। यहाँ पर भी आपने अपने व्यक्तित्व की विशिष्ट छाप समाज (जैन-अजैन) पर छोड़ी। अधिकांश समय गुरु संघानुशासन में रह आपने व्यक्तित्व का सर्वाङ्गीमुखी विकास किया।

लंबे समय से गुरु ने शिष्य की योग्यता, पात्रता व प्रभावोत्पादकता देखी, अकेले विहार में आत्मानुशासन देखा व इन सबसे ऊपर अध्यात्म ज्ञान की गहराई देखी और उन्हें आचार्य पद के योग्य पात्र समझा। आपने जनवरी 2007 में आचार्यपद प्रदान किया और संघ से अलग विहार करने का आदेश दिया।

आचार्य पद की मर्यादानुसार सन् 2007 से सन् 2010 तक आचार्य पद पर रहते लंबी पदयात्राएँ करते, जगह-जगह आपने लोगों में धार्मिक, सामाजिक व सांस्कृतिक चेतना जागृत की। जगह-जगह आपने लोगों को मद्य-मांस व तम्बाखू सेवन का त्याग करवाया। आपका मानना है कि प्रवचनों से जनमानस जागृत किया जा सकता है, लोगों को प्रेरित किया जा सकता है, लेकिन सामाजिक सुधार की दिशा में व्यक्तिशः ही प्रयत्न करना पड़ता है। एक-एक व्यक्ति

पर ध्यान केंद्रित कर उसमें सुधार करना पड़ता है, तब कहीं सफलता मिलती है। यह काम बड़ा जटिल व कठिन है पर सुधार तो तभी होगा, प्रवचनों से नहीं। अच्छे व्यक्तियों से ही अच्छे समाज और अच्छे राष्ट्र का निर्माण होता है। व्यक्तिशः सुधार की दिशा में आचार्य श्री सुनीलसागरजी हर कहीं अपनी कोशिश करते दिखाई देते रहे और आज भी प्रयत्नशील हैं इसीलिए आए दिन आत्मकल्याणेच्छु उनसे दीक्षित हो आत्म सुधार की दिशा में प्रयासरत हैं। आचार्य श्री थ्योरी व प्रेक्टिकल दोनों पर बराबर ध्यान देते हैं।

इस प्रकार इन 3-4 वर्षों में आचार्य पद पर आरूढ़ अंतर बाहर की यात्रा में उन्होंने स्वयं हर परिस्थिति का समताभाव से सामना करते हुए स्वयं को इतना उभारा-निखारा कि उनकी यशकीर्ति की सौरभ सुगंध दिशिदिश से होती हुई आचार्य गुरु तक पहुँच उनके (गुरुदेव के) मन मानस को भी सुरभित करती रही।

अब तक तो गुरु ने शिष्य को साथ रख संघानुशासन में रहने की उसकी विनय देख ली थी, अब आचार्यपद दे उसका आत्मानुशासन भी देख लिया। घड़े को अलावों में पकाकर अच्छी तरह ठोक बजाकर देख लिया और अंततः शिष्य ने यह साबित कर दिया था कि यह वह कुंभ है जिसमें धर्म, संस्कृति व परंपरा का पावन, निर्मल, शीतल नीर भरा जा सकता है और समाधि से पूर्व गुरु ने अंकलीकर परंपरा के चतुर्थ पट्टाचार्य पद का उत्तरदायित्व शिष्य की अनुपस्थिति में ही उसके कांधे पर डाल दिया। आज शिष्य को गुरु के उस 'भार-उभार' वाले गूढ़ सूत्र का रहस्य समझ में आया।

गुरु के लिए एक युवा आचार्य का अकेले (एक साधु के साथ) निष्काम, निस्पृही व निष्कलंक चर्यारत रह विहार करना एक असाधारण बात थी जिसे आचार्य श्री सुनीलसागरजी ने अपने आचरण से साधारण बना दिया था और इसी से प्रसन्न प्रभावित हो गुरु अपनी परंपरा की महान विरासत 23 दिसंबर 2010 को अपनी समाधि के एक दिन पूर्व (24 दिसंबर 2010) इन दिगम्बर बिना झोली के संत की अदृश्य झोली में डाल गए।

सन् 2010 (26 दिसंबर) से पट्टाचार्य पद सम्हालने के बाद वे गुरुदेव के विशाल संघ के नायक बन गए। वे चिंतनशील थे, दस वर्षों तक उन्होंने गुरुवर के सान्निध्य में इसी संघ के गुरुभाई- बहनों के साथ गुरुवर के साथ विहार किया था और आज वही संघ उनके अनुशासन में विहार कर रहा है। अब राह में और भव्य प्राणी उनसे जुड़ते व दीक्षित होते रहे और तब से अब तक आचार्य पद के कर्तव्य का निर्वहन करते हुए वे नियम धर्म की दृढ़ता वाली जीवंत मानव मूर्तियों का निर्माण करते आ रहे हैं। विहार में आपके आध्यात्मपगे उपदेशों से प्रेरित हो, संसार की नश्वरता अनित्यता से दुःखी जन आपकी शरण में आ आकर नियम ग्रहण कर रहे हैं। संसार तज संन्यासी- साधु बन रहे हैं। वृद्धों को भी आप दीक्षा दे देते हैं। आपके संघ के त्यागी व्रती उनकी वैयावृत्ति, सेवा सुश्रुषा करते धर्मसाधना कराते हैं, समाधि मरण कराते हैं।

पद संचलन करते हुए आप आज धर्म चेतना व सामाजिक चेतना के स्वयं सम्यक् तीर्थ बन गए हैं। आप विशाल साधु संघ के साथ संघ संचालन करते हैं व सबको (वृद्ध साधुओं को) साथ लेकर स्थिति/परिस्थिति के अनुसार पद संचलन कर रहे हैं।

आज भी उन्होंने सबके लिए वही आदत बनाए रखी है कभी भी कहीं भी विहार हो सकता है। एक दिगम्बर श्रमण का जीवन सुविधाओं के बल पर नहीं साधना के बल पर चलता है। संघ नायक के नाते आप संघ का संचालन सुचारू रूप से कर रहे हैं। भगवान महावीर के अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह व ब्रह्मचर्य के सिद्धांतों को जन-जन के जीवन में व घर-घर में प्रवेश कराते धरती पर ही सुख, शांति, समृद्धि का स्वर्ग बसाने का प्रयत्न कर रहे हैं। मरणोपरांत स्वर्ग दर्शन में आपका विश्वास तो है। आप लोगों को समझाते चलते हैं कि भगवान महावीर का दर्शन चिंतन आत्मसात कर लो फिर स्वर्ग व मुक्ति का परमानंद हमें हमारे जीवन में ही मिलने लगेगा।

निष्कर्ष रूप में हम यही कहेंगे कि युवा पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी की पदयात्रा एक दिगम्बराचार्य की पदयात्रा है। वह कोई अभियान न होकर महाभियान बन गई। संत जीवन का सफरनामा बन गई। डायरी में लिखा आपका यात्रा वर्णन जीवन यात्रा के पन्ने हो गए, जो स्फटिक सदृश आपके पावन पारदर्शी व्यक्तित्व के दिग्दर्शन कराते हैं। पद विहार में पथ में बस्ती-बस्ती, गाँव-गाँव, डगर-डगर, पगडंडी से राजपथ तक के पर्यावरण, परिवेश व राह में उन्मुक्त बिखरे प्राकृतिक सौंदर्य का बोध कराने के साथ जनमन की टोह देने वाला है।

कंकरीले, पथरीले, कंटकाकीर्ण, कठोर, उबड़-खाबड़ रास्तों की चलाई, कठोर पहाड़ियों की चढ़ाई चढ़ते जहाँ हमारी सांसें फूल जाती हैं, पैर घसीटने लगते जवाब दे जाते हैं, प्राण मुँह को आ जाता है, होंठों से आह निकल पड़ती है तब वही चलाई, पद संचलन जब ये आत्मान्वेषी दिगम्बर साधक नंगे पैरों से, हृदय में पर-दुःख कातरता लिए करते हैं, तब इनके चरणों में नतमस्तक राहगीरों के होंठों से वाह निकलती रहती है। राहों में श्रद्धा के पुष्प बिछते रहते हैं, आँखों से नेह बरसता रहता है, चरण पखारे जाते हैं, आरती उतारी जाती है। इन्हें देख जन-मन खुशियों से अभिभूत हो जाता है।

खुले बदन से शोणित की धार बहे या पद तलुओं से लहू की धार पर इन निर्मम निर्मोही संत की पदयात्रा कभी रुकती नहीं। आचार्य श्री का कहना है कि गन्तव्य तक पहुँचने के लिए खुद चलकर ही जाना पड़ता है, अपनी लड़ाई स्वयं लड़ना पड़ती है, हमें स्वस्थ रहने के लिए स्वयं व्यायाम करना पड़ता है, ज्ञानार्जन के लिए स्वयं अध्ययन करना पड़ता है अर्थात हमारे शारीरिक-मानसिक कष्ट कोई और अपने मन शरीर पर नहीं ले सकता। शिखर पर पहुँचने के लिए स्वयं चढ़ाई करनी पड़ती है।

उनका मानना है कि स्वयं व औरों को समझने का आसान तरीका पदयात्रा से बढ़कर और कोई नहीं। ज्ञानी व प्रज्ञ जनों को यह बाह्य 'पद यात्रा' ही साथ-साथ अंतर्यात्रा भी कराती रहती है। उनके मानस रथ पर सवार विचार व चिंतन भी सहयात्री बन साथ चलते यात्रित होते रहते हैं।

इस प्रकार गतिपथ में शूल व फूल इस प्रतिभा के दायें-बाएं बिखरते रहे हैं तथापि इन निष्काम साधक की निस्पृह लोकमंगल भावना लोक हृदय को स्पंदित करती रह उनका चरण चक्रमण निराबाध सतत चलता रहा है, चलता रहेगा।

पराई पीर को स्वकीय पीर समझ जनपथ पर करुणा व वात्सल्य की पुष्पवृष्टि करते, लोकहित के लिए आत्म विसर्जन करते मुक्ति आराधक, मुक्तिकामी संत श्री सतत पथ संचलन करते मुक्ति मंजिल की ओर बढ़ रहे हैं। उनका अंतिम कदम मुक्ति के सोपान पर ही जा रुके ऐसी हमारी मंगलमय कामनाएँ हैं।

प्रवचनों में प्रस्फुटित आचार्य श्री का जीवन दर्शन एवं चिन्तन

आचार्य श्री सिद्धहस्त व कुशल प्रवचनकार हैं। सत्यान्वेषी संत होने के कारण उनके अधिकांश प्रवचन चिरंतन सत्य को प्रकट करने वाली अभिव्यक्ति है। उनके प्रवचन उनके गूढ़-गहन ज्ञान, आत्मचिंतन, मनन, मंथन, आत्मचेतना व जीवनानुभव से संचित पूँजी कहे जा सकते हैं। ये अनुभव उनके नित्य चलते पथ पद संचलन से प्राप्त वरदान है। जब वे लोक जीवन की विह्वलताओं को देख भावविव्हल होकर बोलते हैं तब उनकी भाषा की कोमलता हमारे हृदय के मर्म को सहज ही स्पर्श कर लेती है। उनके हृदय से उठती संवेदनाओं की तरंगों से हर हृदय तरंगित हो जाता है। उनका विचारों का गुम्फन पुष्पमाला सा मोहक है। सम सामयिक मूल्यों के उद्घाटन तथा उन पर त्वरित टिप्पणी करने की महारत ने आपको लोकप्रियता के चरम पर पहुँचा दिया है।

आचार्य श्री अपने अध्यात्म की गहराई में डूबे सुविचारों व सशक्त भाषा/वाणी से सामाजिक विसंगतियों, विरूपताओं तथा कुविचारों की व्याधियों को मिटा देना चाहते हैं ताकि वैचारिक, चारित्रिक व नैतिक शुचिता, स्वच्छता वाले एक

स्वस्थ सुंदर समाज का निर्माण हो सके। उनके प्रवचन आदमी को आदमी बने रहने के लिए झिंझोड़ते हैं। लुप्त होते जीवन मूल्यों की पुनर्स्थापना के लिए प्रेरित करते हैं। श्रोताओं को आत्म साक्षात्कार कराने की तह तक ले जाने के लिए उन्मुख करते हैं।

उनके प्रवचनों में सांसारिक दुःखों से दुःखी मानव मन की टीस है, हृदय का दर्द है, बेचैन मनों की आकुलता-व्याकुलता है, लुप्तप्राय मानवता के प्रति करुणा है। सत्य, न्याय, नैतिकता व सदाचरण से समाज के चमन को गुलजार करने का आग्रह है, मनुहार है, निवेदन है, समझाइश है। हमारे भविष्य को सुखद व शांतिपूर्ण बनाने के लिए आचार्यश्री सुनीलसागरजी जैसे ही सजग, सावधान चिंतकों, युगदृष्टा दार्शनिक संतों व समाज सुधारकों की आवश्यकता है। पीड़ाओं से बिलबिलाती मानवता के गर्भ से अतीत में 'करुणा, दया, वात्सल्य', महावीर, गौतम, गाँधी, कबीर, विवेकानंद आदि के रूप में जन्म लेते रहे। इस कड़ी में शांतिदूत के रूप में पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी का नाम भी जुड़ा पाये तो आश्चर्य नहीं।

सांसारिक दुःख दर्द

आचार्य श्री सिर्फ आध्यात्मिक ही नहीं, जीवन सुधार के प्रत्येक क्षेत्र में उनकी वाणी हितकारी है। वे आकंठ डूबकर बोलते हैं। सांसारिक दुःखों की बातें जब वे अपने प्रवचनों में वेदनामयी आवाज में करते हैं तब उसमें हरे कांटे की नोंक की प्रखर संवेदनशीलता होती है जिसके सूक्ष्म हृदयभेदक तीखेपन से श्रोता सांसारिक दुःखों से छुटकारा पाने की छटपटाहट महसूस करते हैं। जब आचार्य श्री उन दुःखों से मुक्ति के उपाय बताते उनमें शिवसुख प्राप्ति की चाह जगाते हैं तब श्रोता इंद्रियातीत सुख की मिठास से भर आत्मानंद में विचरण करने लगता है। आचार्य श्री दुःखों को इस तरह बोधगम्य बना देते हैं कि सुनकर लोग संसार से विरक्त हो उनकी शरण में आ दीक्षा तक ले लेते हैं।

सम्मोहन की स्थिति तक पहुँचा देने वाले गुरुवर के प्रवचन सुन श्रोता अपने सांसारिक जीवन के सारे दुःख, दर्द, तनाव भूल जब प्रवचन सभा से बाहर निकलता है तब बिल्कुल तरोजाता होकर निकलता है, गंगा में डुबकी लगाकर लौटने जैसा। सद्यस्नान करने जैसा।

आचार्य श्री के प्रवचनों में सामाजिक सरोकारों व धार्मिक चेतना का घालमेल है। यदि समाज सुगठित, सुखी व समस्या रहित रहेगा तभी धर्म दिन दूना रात चौगुना फले-फूलेगा व सुरक्षित रहेगा, ऐसा आचार्य श्री का मानना है। अतः आचार्य श्री के प्रवचनों में जहाँ आत्म कल्याण का जिक्र होता है वहीं समाज के हित की फिक्र भी होती है। उनके प्रवचनों में देश, देश की सरहदों की सुरक्षा, सैनिकों की सुरक्षा की चिंता होती है वहीं एक आम नागरिक की भी चिंता है। आप अपने प्रवचनों में हमेशा कहा करते हैं जब तक देश शांत व सुरक्षित है तब तक हम सुरक्षित हैं। देश है तभी हम हैं। सैनिक का सैन्य धर्म संत की साधना जैसा होता है। देश की सरहदें सुरक्षित हैं, देश में शांति है तभी धर्म, संत कार्य कर सकेंगे व संत साधना कर सकेंगे। आचार्य श्री याद दिलाते रहते हैं कि हमने हमारी श्रमण संस्कृति के विलोप व संतों के दुखद अकाल का वह दौर भी देखा है जब लोग दिगम्बर संतों के दर्शन के लिए छटपटाते थे। संतों के अभाव में लोग धर्म व धार्मिकता से दूर हो गए थे। राष्ट्र के पीछे हम, हमारा धर्म, हमारी जाति है। अतः हमें संगठित होकर देश को आगे बढ़ाना है।

आचार्य श्री अपने प्रवचनों में हर कहीं समाज में बढ़ते- फैलते जा रहे हिंसा, हत्या, आतंकवाद, बलात्कार, व्यभिचार, आत्महत्या, कन्याभ्रूण हत्या, टूटते घर, बिखरते परिवार, ममता की छांह से दूर होता बचपन, गुमराह होता यौवन तथा वृद्धाश्रम का शिकार होता बुढ़ापा देखकर व्यथित, चिंतित हैं। मनुष्यता को बचाए रखने की पुरजोर कोशिश करते आपके प्रवचनों में आपके सकारात्मक सोच की अनुगूंज है।

जीवन व जगत की व्याख्या के साथ आपके प्रवचनों में मनुष्य पशु-पक्षी, प्रकृति, गाँव, शहर, बस्ती, समूचा विश्व समाहित है। पर्यावरण, पशु-पक्षियों से प्रेम रखने वाले आचार्य श्री का पदविहार उनके प्रवचनों को धार दे देकर उत्प्रेरित करता है। सूखती व रेतहीन होती नदियों, चहकती फुदकती चिड़ियाओं से छिनते जंगल व पेड़ों तथा विकास के नाम पर किसानों से छिनते खेत-खलिहानों, चरागाहों की चिंता उनके प्रवचनों में भावविह्वल शब्दों में अभिव्यक्त होती रहती है। स्थितिप्रज्ञ व वीतरागी भावभूमि होने के बावजूद भी आचार्य श्री का संवेदीमन थर्रा उठा है। आचार्य श्री चिंतित हैं कि जिस नर में नारायण बनने की अनंत संभावनाएँ हैं वह निम्न से निम्नतर होता जा रहा है, जिस कंकर में शंकर की तलाश है वह अपनी पाषाणी कठोरता छोड़ना नहीं चाहता। फिर भी आचार्य श्री हताश निराश नहीं है। उनके शाश्वत चिंतन के धरातल से उपजे विचार समाज में आशा व उत्साह का संवर्धन कर रहे हैं। समाज में नवोन्मेष जागृत कर आत्मचिंतन के लिए प्रेरित कर रहे हैं।

आचार्य श्री के तथ्य-कथ्य व सत्य की सार्थकता की पहचान कराते प्रवचन जन हृदय के लिए ग्राह्य है। लोग उनके प्रवचन सुनते हैं, गुनते हैं और आत्मसात कर सुंदर सृष्टि की रचना में योगदान देते हैं। आचार्य श्री के प्रवचन सार्वभौमिक, सार्वकालिक एवं सार्वजनिक है।

आचार्य श्री के प्रवचन उनके व्यक्तित्व, चरित्र, चिंतन व साधना का आइना है। वे मानव मात्र में संवेदना जगाने में सक्षम है। उनकी भाषा में प्रवाह, शब्द योजना में अनोखी सूझ, वाणी में विकलता तथा सत्य से साक्षात्कार कराने का अद्भुत साहस उनकी विशिष्ट विशेषता है। उनके विचार प्रखर, मुखर, प्रांजल व पारदर्शी है। हर कहीं उनके बहुमुखी एवं प्रयोगधर्मी, सुदीर्घ मनीषी व्यक्तित्व की छाप उनके प्रवचनों में छलक पड़ती है।

प्रवचनों में फूटते आपकी वाणी के मंजुल, मधुर, मुकुल निर्झर, वीरान पड़े जनजीवन के सूने मन में मुद् मांगल्य की कोमल कलिकाएँ खिलाते जंगल में मंगल कर रहे हैं। आपकी वीणा वाणी की झंकार हमारी सोई चेतना के तारों को झनझना इस मृण्मय में चिन्मय बनने की स्वर लहरियों से झंकृत कर रही है।

निःसंदेह आचार्य श्री कुशल प्रवचनकार हैं। वे विद्यार्थी जीवन से ही भाषण देने में निष्णात थे। इसी कारण वे अपनी वक्तृत्व शैली से श्रोताओं से सामंजस्य स्थापित कर श्रोताओं को रसमय स्थिति तक पहुँचा देते हैं। आप अपने अपरिमित ज्ञान भंडार, विषय पर पूर्ण अधिकार, भावों की अनुगामिनी प्रवाहमयी भाषा, कथन की स्पष्टता तथा दुरूह से दुरूह विषय को रसात्मक अभिव्यक्ति दे, सरल रूप में प्रस्तुत कर श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर देते हैं। आप अपने बहुआयामी ज्ञान तथा विशिष्ट व रोचक शैली द्वारा अपने प्रवचनों को स्पष्ट, सहज, सरल व बोध गम्य बना, श्रोताओं के मन मानस को झकझोर देते हैं। सत्पथ पर चलने के लिए प्रेरित करते हैं। उन्हीं के शब्दों में कहें तो ''संत के प्रवचन संसार के मार्ग को नहीं बताते हैं बल्कि संसार से मुक्ति का मार्ग बताते हैं और वे जिस मार्ग पर चल रहे हैं, उसी मार्ग पर चलने का उपदेश देते हैं।''

वे आगे कहते हैं कि ''साधु का मुख अमृत के झरने के समान हैं, वे जब बोलते हैं तो अमृत तुल्य वचन ही बोलते हैं।'' आचार्य श्री के ऐसे अमृत तुल्य वचनों को सुनने-गुनने व जीवन में उतारने को कौन लालायित न होगा?

आचार्य श्री का चिंतन बड़ा गहरा है। उनका कहना है कि हमारे जीवन में जितना महत्व वर्तमान का है उतना ही महत्व इतिहास/अतीत का भी है। किसी का जीवन कोरे कागज जैसा नहीं हो सकता। हम पुनर्जन्म को मानते हैं अतः हम कर्म सिद्धांत के आधार पर कह सकते हैं कि अतीत के भौतिक, मानसिक, सामाजिक, धार्मिक व सांस्कृतिक शुभ-अशुभ संस्कारों का हम पर प्रभाव होता है। अतीत के धागे में वर्तमान जीवन की घटनाएँ मोती की तरह पिरोई होती है। मोती बेसकीमती हो या सस्ते लेकिन धागा टूटने पर बिखर कर धूल में मिल जाते हैं अर्थात् हमारे अतीत के कु या सु संस्कारों का हमारे वर्तमान जीवन में बड़ा महत्व है। मनुष्य जीवन पेड़ की तरह है। जिस पेड़ की जड़ें जमीन में जितनी

गहरी होती हैं वे पेड़ बर्फीली व तीक्ष्ण ठंड हो या तन-मन झुलसा देने वाली लू-लपटों वाली प्रचंड गर्मी या बारिश की ओलों की मार बरसाती झड़ी हो या आंधी-अंधड़ों के बवंडर, वे सबसे खेल लेते हैं, भिड़ लेता है। जो जितना गहरा जड़ों से जुड़ा होता है वह उतना, घना, विशाल व ऊँचा उठा रहता है। जड़ें छोड़ने वाले समय के प्रभंजनों में जमींदोज होते देखे गए हैं। आचार्य श्री अपने प्रवचनों में जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी जड़ों से जुड़े रहने की बात करते हैं। इसी संदर्भ में वे अपने प्रवचनों में भावप्रवण हो बड़ी सुंदर बात कहते हैं- ''प्रभु का जो चरित्र है, वह हमारा भी बन जाए। जो उनका भूत था वह हमारा वर्तमान है और जो उनका वर्तमान है वह हमारा भविष्य बने।''

आचार्य श्री के जीवन की जीवंत प्रयोगशाला में हम देखेंगे तो पाएँगे कि आचार्य श्री स्वयं भी पारिवारिक जड़ों से जुड़े रहे तब अच्छे संस्कार पाए और इन्हीं संस्कारों की बदौलत उनका जुड़ाव धर्म से हो गया। उसी धर्म जिनागम की जड़ों से जुड़े रहने पर संतत्व प्राप्त कर मुक्ति की अभीष्ट राह चुन ली। संत जीवन में गुरु परंपरा से जुड़े रहे तो आज वे इतनी कम उम्र में अपनी विलक्षण प्रतिभा व योग्यता के बल 'अंकलीकर परंपरा' के 'चतुर्थ पट्टाचार्य' के 'महापद' पर सुशोभित हैं। प्रवचनों में फूटता उनका जीवन दर्शन उनके महान वास्तविक जीवन का दिग्दर्शन कराने वला आईना है।

ऋषभ से महावीर तक तो ठीक, उसके पश्चात धरसेन, पुष्पदंत, भूतबलि, कुंदकुंद, जिनसेन, समन्तभद्र, अकलंकदेव आदि जैसे कई आचार्यों के दर्शन, चिंतन व सिद्धांतों के सत्व की मजबूत नींव पर आज उनके जीवन का यह भव्य भवन टिका हुआ है। उनके प्रवचनों के माध्यम से ही उनके बहुमुखी व्यक्तित्व, विशाल दृष्टिकोण व गूढ़ गहन चिंतन का विस्फोटन होता रह उन्हें असाधारण व्यक्तित्व की कतार में आगे खड़ा कर दिया है। उनके अध्यात्म ज्ञान पगे प्रवचनों ने उन्हें विशिष्ट पहचान दी है। ये उनके हृदय को छू लेने वाले प्रवचन ही है जो वे एक होकर भी अनेकानेक लोगों के हृदय पर राज कर रहे हैं।

अंत में हम यही कहेंगे उनके युगबोध देने वाले प्रवचन युगीन समस्याओं, सामाजिक सरोकारों व सोते से जगाते समाज में नवोन्मेष भरने वाले तो है ही, साथ ही आध्यात्मिक एवं संयममय जीवन के कर्मक्षेत्र में अवतीर्ण होने की प्रेरणा से परिपूर्ण है।

आचार्य श्री एक महान चिंतक एवं प्रवचनकार

विश्व प्रेरणामूर्ति आचार्य श्री पदसंचलन द्वारा भारत दर्शन करते अपनी अध्यात्मपगी ओजस्वी पुण्यमयी अमृतवाणी की संबोधि में हमारे महान आचार्य प्रणीत आगम ग्रंथों की गाथाओं, सूत्रों, उदाहरणों, उद्धरणों, सूक्तियों व प्रेरक वचनों द्वारा अध्यात्म के रहस्यों के प्रकाशक की भूमिका निभा रहे हैं। आधुनिक दृष्टि से धर्म का प्रसार-प्रचार करते वे सतत धार्मिक, सांस्कृतिक व सामाजिक चेतना जागृत करते हुए, समाज को गौरवान्वित कर रहे हैं। वे समाज में समता, सौहार्द्रता, मैत्री, करुणा, निर्मलता, सदाशयता व संवेदनशीलता आदि जैसे मानवीय गुणों को जागृत कर, शिष्ट समाज रचना की दिशा में मानव जीवन को नया मोड़ दे रहे हैं। अपने प्रवचनों में किस शब्द व भाव पर कितना जोर देना है, कब कहाँ तथा कैसे हस्त व आँखों (बॉडी लेंग्वेज द्वारा) के संचालन की गहन जानकारी आचार्य श्री को है। अपनी बात प्रभावोत्पादक तरीके से श्रोताओं के हृदय में उतारने की कला में आचार्य श्री पारंगत हैं तभी तो उनकी वाणी श्रोताओं को दैवीय शांति प्रदान कर रही है।

आचाार्यश्री सामाजिक सरोकार रखने वाले अपने धर्मोपदेश से स्कूल-कॉलेज के किशोर, तरुणों व युवा विद्यार्थियों

को हमारी महान सांस्कृतिक विरासत से रूबरू कराते, सही मार्गदर्शन दे, भटकन भरी राहों पर बढ़ते उनके कदम रोक रहे हैं। यही नहीं वे, जेलों में भी जा जाकर अपने मंगल, प्रेरक व सहानुभूतिपूर्ण उद्बोधनों द्वारा कैदियों का जीवन रूपांतरित कर रहे हैं। उनके लिए जेलों में मानवोचित सुविधाएँ उपलब्ध करवाने तथा समाज तथा शासन को उनकी प्रतिभा का दोहन कर समाज की मूल धारा से जोड़ने की प्रेरणा दे रहे हैं। आचार्य श्री का मानना है कि समाज में रहने वालों की अपेक्षा कहीं अधिक समाज से कटे इन निर्वासित, उपेक्षित जीवन जीने वालों के लिए जीवन बोध की आवश्यकता है। आचार्य श्री अपने प्रवचनों में समझाते हैं कि अपराध से घृणा करो अपराधी से नहीं। अपराधी भी इसी समाज का आदमी है उसे अपराध की दुनिया से बाहर निकाल समाज की जड़ों से जोड़ना चाहिए।

आचार्य श्री अपने प्रवचनों के माध्यम से गिरते जीवन मूल्यों व नैतिकता को स्थापित करते तथा पथराती संवेदनशीलता को पिघलाने की जद्दोजहद दिखाई देते हैं। वे मशीनी होती मानव की जिंदगी में मानवीयता भरने की भरसक कोशिश कर रहे हैं। आचार्य श्री इस बात से काफी विचलित हैं कि हमारी महान संस्कृति की नींव जिस विश्वास पर टिकी है वह लोगों की धूर्त होती नीयत व धूल होते जीवन मूल्यों के कारण बड़े कठिन दौर से गुजर रही है। यह हमारे आदर्शों की अवहेलना का काल है। जहाँ हमारी इंसानियत मृतप्रायः होती जा रही है, मनुष्य विचारशून्य व चेतनाशून्य सा होता जा रहा है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में बढ़ते बाजारवाद के भूचाल से आदमी का अभ्यन्तर थरथरा रहा है। जीवन की भागमपेल में मनुष्य लगता है नैसर्गिक सांस लेना तक भूलता जा रहा है और कुकुरमुत्तों की तरह उग आए योग गुरु उन्हें लम्बी-गहरी सांस लेना सिखा रहे हैं। आचार्य श्री व्यक्ति और समाज की इस स्थिति, परिस्थिति को देख चिंतित हैं, व्यथित हैं। कल्याण मार्ग के प्रस्तोता आचार्य श्री का आज सबसे बड़ा कार्य अपने विचार, चिंतन, मनन व स्वाध्याय की साधना से किए ज्ञानार्जन को, अपने प्रवचनों के माध्यम से समाज तक ले जाना, समाज के हित के लिए धर्मोपदेश देना तथा लोगों की मनोभावनाओं को अपने बोधि-संबोधि पूर्ण प्रवचनों में व्यंजित करना हो गया है। यही कारण है कि उनके प्रेरक उद्बोधन, श्रोताओं के अंतर को आर्द्र कर देते हैं। सांसारिक दुःखों से त्रस्त, संतप्त, तनावों व विषाद से युक्त हर व्यक्ति यही सोचता है कि आचार्य श्री उसी के अंतर की व्यथा उकेर उसके लिए सुख व शांति का मार्ग प्रस्तुत कर रहे हैं। वे बार-बार, रोज-रोज यही समझाते हैं कि 'अप्पा सो परमप्पा', 'तेरा साई तुज्झ में' फिर बाहर की उलझनों में क्यों उलझता है? शांति की तलाश है तो अपने अंदर खोज। शांति की कस्तूरी कहीं और नहीं, तेरे भीतर ही है।''

चन्द शब्दों में कहें तो आचार्य श्री के प्रवचन उनके जीवनानुभवों, विचारों, त्वरित निर्णय लेने की क्षमता, विद्यार्थी जीवन में संपर्क में आए उनके सहृदय, संस्कारशील व उदारमना महान गुरु, तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी की दी गई शिक्षा-दीक्षा का निचोड़ है। किसी युग के महापुण्य निमित्त से ही पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी जैसे महान संत का सान्निध्य व उनके बोधि समाधि देने वाले दुर्लभ वचनामृत का लाभ किसी युग को प्राप्त होता है। ऐसे ये महापुरुष अपनी वृहद कार्य शृंखला से युग की छाती पर अमिट रेखा खींचते जीवन पथ पर अग्रसर हैं। युग आपका चिरऋणी है।

बोधिवर्धक अमृत कण
प्रवचनांश

आचार्य श्री के प्रवचन घर-परिवार-समाज की समस्याओं व ईर्ष्या-द्वेष के तीक्ष्य बाणों से बिंधे, छटपटाते, लहुलुहान आदमी को प्रेम, वात्सल्य व करुणा में सराबोर कर, जीवन बोध दे, उत्साह व आशा से तरबतर कर देने वाले हैं। उनकी जनकल्याणी भावनाओं से भरी वाणी इंसान, इंसानियत व इंसानियत की तरफदारी करती दिखाई देती है। जीवन मूल्यों

व आदर्शों के इस अवहेलना काल में वे इस धरती को पावन बनाना चाहते हैं, नया सबेरा लाना चाहते हैं। वे चाहते हैं यहाँ पुनः कजरी के गीत गूंजे। वैमनस्य के बकुलों की जगह सौहार्द्रता के पुष्प खिलें।

उनके प्रवचनों में उनका मंतव्य साफ-साफ स्पष्ट अभिव्यक्त होता है। उनकी भाषा सुगठित रहती है। विचार अर्थपूर्ण व ठोस होते हैं। कम से कम शब्दों में बेहतर और उत्तम बात कहने की कला में आप माहिर हैं। वे शब्दों को खूब तौल-मोल कर बोलते हैं और उनके आशयों को इस तरह समझाते हैं कि उनकी बातों की जन हृदय में गहरी पैठ हो जाती है। आप लोगों को पुरुषार्थ करने के लिए प्रेरित करते हैं व कहते हैं ''पुरुषार्थ से जीवन की बगिया महकेगी। कहने की अपेक्षा करना श्रेष्ठ है।'' बाल्यावस्था अभ्यास से, युवावस्था उद्यम से तथा वृद्धावस्था विवेक से की गई साधना से शोभा पाती है।

आप मृदुवाणी व कोमल वचनों को शांति प्राप्ति का मूलमंत्र मानते हैं। आप अक्सर लोगों को प्रवचनों में समझाते हैं कि ''यदि हम विरोध में विनोदी रहें, सद्‌गुणों में प्रमोदी रहें तथा क्रोध के अवसर पर भी शांत बने रहे तब सब तरफ शांति फैल जाएगी।''

आचार्य श्री अपने प्रवचनों के माध्यम से अज्ञानांधकार में भटकती मानवता के लिए अपने जीवन दीप से जितना अधिक से अधिक प्रकाश बिखेर सकते हैं, बिखेर रहे हैं। वे हमें जीवन जीने का परिपक्व दृष्टिकोण दे रहे हैं। वे कहते हैं।

''आत्मज्ञान के प्रकाश से संपन्न साधक के लिए स्वर्ण, शूरवीर योद्धा के लिए जीवन, इन्द्रिय विजयी योगी के लिए सुंदर स्त्री तथा वीतरागी निस्पृह साधक के लिए संपूर्ण जगत का सुख तृण के समान तुच्छ है।''

आचार्य श्री का दर्शन व चिंतन बहुत गहरा है। अपने प्रवचनों में सूत्र वाक्यों व दैनिक जीवन के साधनों के माध्यम से अपनी बड़ी-बड़ी बातें छोटे-छोटे वाक्यों में समझाकर हमारा कल्याण मार्ग प्रशस्त करने की कोशिश करते हैं। वे कहते हैं-

''दुनिया से बात करने के लिए फोन की आवश्यकता होती है और भगवान से बात करने के लिए 'मौन' की आवश्यकता होती है। फोन संसार से जोड़ता है और 'मौन' प्रभु से जोड़ता है।''

वे कितने सरल शब्दों में कितनी सुंदर बात कहते हैं। ज्ञात रहे आचार्य श्री अधिकांश वक्त मौन में रहते हैं। अष्टमी चौदस को उनका पूरा मौन रहता है। 'मौन' रहने की साधना आप विद्यार्थी जीवन से करते आ रहे हैं और इसी मौन साधना से अंतर की यात्रा करते अपने मुक्तिपथ को मजबूती दे रहे हैं।

इसी तरह आप अपने प्रवचनों में छोटे-छोटे वाक्यों में जीवन के बहुत बड़े-बड़े सूत्र समझा देते हैं- ''प्रदर्शन नहीं आत्मदर्शन करो।'' ''जैसे घर में झाडू लगाने से घर का कचरा बाहर निकल जाता है वैसे ही अपने आत्मा में ज्ञान की झाडू लगाएँगे तो पाप का कचरा बाहर निकल जाएगा।'' ''जो जितना निर्मल होगा वह उतना ही करुणामय व शांत होगा।'' ''जो जैसा चिंतना करता है, उसका वैसा ही आचरण बन जाता है।'' ''भीतर में जैसा भरा होता है, वैसा ही बाहर निकलता है।''

कहना न होगा आचार्य श्री बचपन से ही मुनि बनने की सोचते रहते थे, अतः उनका आचरण भी वैसा पवित्र होता गया और अंत में वे एक दिन जिन मुनि बन गए। आचार्य श्री के जीवन बोध देने वाले उपदेश उनके जीवनानुभवों से झरती अमृत बूंदें हैं। आप अपने प्रवचनों में लोगों को सामायिक करने की बात अक्सर कहा करते हैं। आप समझाते हैं-

''परमात्मा की यात्रा सामायिक से शुरू होती है और सामायिक से ही खत्म होती है। सामायिक में बैठना मानो भगवान की गोद में बैठना है। समता व शांति निर्मल जीवन की अनमोल शक्ति है, यह शक्ति धन-संपत्ति से प्राप्त नहीं होती है,

इसे पाने का रास्ता भगवान महावीर ने सामायिक बताया है। आत्मा से एकमेव होना सामायिक है। भगवान के गुणों से अपने गुण मिलाना सामायिक है। एकांत में, वन में, खाली मकान में, चैत्यालय में सामायिक करना चाहिए।''

आपके विचार बहुआयामी, आत्मपरिष्कार करने वाले, मनुष्य जीवन को सार्थक बनाने व मृत्यु को महोत्सव में परिवर्तित कर देने वाले हैं। आपके बोधि समाधि से प्रेरक उद्बोधनों को सुनकर व उनसे प्रेरित हो आए दिन मुमुक्षु आत्माएँ आपसे व्रत, नियम, संयम व दीक्षाएँ ले रही हैं। आपके प्रवचनों में निसृत जीवन के सफलता के कुछ सूत्र वाक्य इस प्रकार है।

-लक्ष्य बनाकर निरंतर चलने वाली पतली नदी भी जिस प्रकार एक दिन विशाल सागर का रूप ले लेती है। ठीक इसी प्रकार जिसकी दृष्टि व गति मुक्ति की ओर हो गई है वह एक न एक दिन विशाल केवलज्ञान रूपी सत्ता को प्राप्त कर मुक्त हो जाता है।

-समय प्रतिक्षण बदलता और दौड़ता रहता है। ऐसी स्थिति में सही मार्ग अपनाने से पीछे न रह कर आत्म ज्योति के महत्व को अपनाने का अभ्यास करते रहना चाहिए।

-पानी की तेजधारा जैसे बड़े-बड़े पाषाण खंडों को बहा ले जाती है ठीक इसी तरह मोह भी एक प्रबल धारा के समान है जिसमें बड़े-बड़े साधक भी बह जाते हैं। जिसका जीवन साफ-सुथरा है वही इस धारा को पार कर सकता है।

-प्राचीन मंदिरों में दरवाजे बहुत छोटे बनाए जाते थे। उसका कारण है कि त्रिलोकीनाथ के दरबार में झुककर जाना जरूरी है क्योंकि अहंकार को गलाए बिना भगवद् भक्ति का आनंद आ ही नहीं सकता। मन संसार बढ़ाने वाला है मार्दव (मृदुता) संसार परिभ्रमण का छेद करने वाला है। मान करना आत्मा का दुर्गुण है।

-मायाचारी के बारे में आप अपना चिंतन विनोद में प्रकट करते हुए कहते हैं कि ''कप भी पसंद है, टी भी पसंद है पर हमें कपटी होना पसंद नहीं।'' ''मायाचारी की उम्र कम होती है और जितनी भी होती है बेचैन किए रहती है। मोक्षमार्ग में बिगाड़ करने का काम कपट करता है।''

-इसी प्रकार क्रोध के बारे में आपके विचार देखिए- ''जिस प्रकार उबलते हुए पानी में अपना चेहरा साफ नहीं दिखता, क्रोध के आवेश में क्षमा का सद्भाव नहीं दिखता। अकड़े हुए मन में पुण्यता का अभाव दिखता है वैसे ही कपटयुक्त मन में धर्म का अभाव पाया जाता है।''

-आचार्य श्री इन संसार परिभ्रमण कराने वाले कषायों को शांत कराने वाला बहुत सुंदर उपाय बताते हुए कहते हैं- ''सरोवर के बीच बैठा व्यक्ति जिस तरह दावानल से घिरे रहने पर भी बच जाता है। ठीक उसी तरह भगवान के मंदिर में पहुँचने पर भक्तपुरुष बाहरी कषायों के दावानल से बच जाता है।'' इस प्रकार करुणानिधि आचार्यवर संसार परिभ्रमण के कारणों को बताते हुए उनसे बचने के उपाय भी बताकर हमारा संसार परिभ्रमण कम करना चाहते हैं। इसी तरह वे ''भाव किसी के लिए भी बिगाड़ो भव अपने ही बिगड़ने वाले हैं।'' बहुत कम शब्दों में हमारे विचार शुद्धि की बहुत बड़ी हितकर बात हमें समझाते हैं। वे अपनी हर बात के साथ कहते हैं कि यह मेरी नहीं भगवान महावीर की वाणी है और प्रभु व पूर्वाचार्यों के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करते रहते हैं।

आचार्य श्री का चिंतन समुद्र से भी अधिक गहरा, आकाश सी विस्तारता लिए हमारे आत्मतत्व के प्रति हमारी चेतना को प्राणवायु दे देकर जिलाए रखने वाला है। उनके प्रवचन हमारे जन्म से लेकर मृत्यु तक हमारे लिए शांति का मार्ग खोज देने वाले हैं।

उनके बहु आयामी प्रवचन जीवन व जगत के प्रत्येक क्षेत्र पर प्रकाश डालते हैं। सांसारिक जीवन के उदाहरण द्वारा वे परमात्म पद की प्राप्ति की बात बड़े सुंदर, सरल व सहज तरीके से समझाते हैं।

-जैसे दही मंथन के बिना नवनीत और घृत की उपलब्धि संभव नहीं, ठीक इसी तरह आत्ममंथन के बिना परमात्मपद प्राप्ति नहीं।''

आचार्य श्री के जीवन में गुरु का सर्वोच्च स्थान है अतः उनके प्रवचनामृत में गुरुमहिमा का निर्झर झरता रहता है। गुरु के प्रति उनके विचार, आस्था और श्रद्धा जब तब उनके मुखारबिंद से फूट पड़ती है।

-''गुरुवचन आपत्तियों में भी पथ प्रदर्शित करते हैं। गुरु के द्वारा दिए गए निर्देश दीपक की तरह हमारे पथ को आलोकित करते हैं। वास्तव में गुरु वही है जो हमारे अंतरंग में छाए हुए अंधकार को दूर कर प्रकाश प्रदान करते हैं।''

-''यह बात ठीक है कि आँखें हमारी हैं, दृष्टि हमारी है लेकिन उसका उपयोग कैसे करना है यह हमें गुरु ही सिखलाते हैं। यही तो गुरु की महिमा है। सच्चे गुरु आशावान नहीं पर आशा पर नियंत्रण रखने वाले होते हैं।''

-सच्चा शिष्य गुरु आज्ञा मिलने पर अहोभाग्य की अनुभूति करता है। शिष्य गुरु से दूसरों को क्या-क्या आदेश मिले हैं इसकी ओर ध्यान न देकर गुरु ने मुझे क्या आदेश दिए हैं इसका ध्यान रख उत्साहपूर्वक पूर्ण करने का प्रयत्न करना है। गुरु शिष्य पर शासन नहीं चलाते अपितु शिष्य उनके अनुशासन में चलता है।

आचार्य श्री गुरु को ही मोक्षमार्ग पर प्रवृत्त करने वाले बताते हुए कहते हैं-

-''यद्यपि बच्चा चलता अपने पैरों से ही है तथापि माता-पिता की अंगुली उसे सहायक होती है। इसी तरह शिष्य स्वयं मोक्षमार्ग में प्रवृत्ति करता है परंतु गुरु की अंगुली, गुरु का संकेत उसे आगे बढ़ने में सहायक होता है।''

-''भगवान की वाणी को हम तक पहुँचाने वाले वे गौतम गणधर गुरु ही थे। उन्हीं से गुरु परंपरा प्रारंभ हुई है गुरु पूर्णिमा के रूप में। गुरु छूटने पर मुक्ति हो सकती है पर गुरु भक्ति छूटने पर नहीं।''

-''आचार्य श्री निजात्मा को सर्वश्रेष्ठ मानते हैं। वे अपने प्रवचनों में समझाते हैं कि शरीर से श्रेष्ठ इंद्रियाँ हैं, इंद्रियों से श्रेष्ठ मन है, मन से श्रेष्ठ बोधि है और बोधि से श्रेष्ठ आत्मा है। अतः हमें अपनी आत्मा को निर्मल रखना चाहिए।''

सूक्ति सुधा

आचार्य श्री के प्रवचनों में झरती ये सूक्ति सुधा बूंदें हमारे सूखे जीवन को सुधासिक्त कर अमरत्व के पथ पर चलने के लिए प्रेरित करती है।

1. बसंत आता है तो प्रकृति मुस्कराती है। संत आता है तो संस्कृति मुस्कराती है।
2. सच्चे सम्यग्दृष्टि बनना है तो सम्यग्दृष्टियों की वाणी सुनना चाहिए।
3. जिसे आत्मा की फिकर लग गई उसे दुनिया की खबर नहीं रहती है।
4. निश्चय की आँख खुली और व्यवहार की आँख सर्वथा बंद रखना भी एकांतवाद है।
5. जिस दिशा में पुरुषार्थ करोगे वैसी उपलब्धि मिलनी है।
6. जिनके लिए मंदिर दूर लगता है उनके लिए नरक पास समझो।
7. सच्चे श्रावक धर्म का पालन कर अपनी आत्मा का कल्याण करते हैं।
8. सम्यक्त्व के साथ मरण कर नरक चले जाना, पर मिथ्यात्व के साथ स्वर्ग भी अच्छा नहीं है।
9. देव शास्त्र गुरु आराधना करने के साधन हैं न कि भीख माँगने के।
10. रत्नत्रय से बड़ी संपदा कोई नहीं है।
11. धर्म एक ऐसा माली है जो जीव रूपी बीज को परमात्मा बनाकर ही विश्राम लेता है।
12. जहाँ इच्छा खत्म होगी वहाँ शांति आ जाएगी।

13. जैसा चिंतन वैसा जीवन, जैसा दर्शन वैसा परिणमन।
14. अच्छे शब्द मन व रिश्तों को जोड़ देते हैं और बुरे शब्द जुड़े हुए रिश्ते तोड़ देते हैं।
15. पापों को धोने के लिए एकमात्र स्थान प्रभु व गुरु के चरण हैं।
16. धर्म को जिंदा रखना है तो धर्मियों को जिंदा रखना होगा।
17. पुण्य के उदय में जीवन महकता है व पाप के उदय में जीवन बहकता है।
18. जिसका मन पवित्र होता है उसका मुखमंडल भी पवित्र दिखता है।
19. प्रभु को नमन करोगे तो मोक्ष का वरण करोगे। सूरज संसार का अंधेरा मिटाता है जबकि प्रभु दर्शन मन के पापों का अंधेरा मिटाता है।
20. श्रेष्ठ गुरु, श्रेष्ठ जीवन व श्रेष्ठ कुल इन सबका मिलना बड़ा दुर्लभ है। जिन्हें मिल गया वे सौभाग्यशाली हैं।
21. जीभ जब पवित्र होती है तब जीवन भी पवित्र हो जाता है।
22. रत्नत्रय के धन से ऊँचा कोई धन नहीं है।
23. चिंतन से ही चरित्र का निर्माण होता है।
24. वाणी बाण का भी काम करती है, वीणा का भी।
25. जिसके अंदर शांति है वह शांति की धारा बहाएगा व जिसमें अशांति है वह उपद्रव फैलाएगा।
26. अच्छा मनुष्य बनना याने आधा भगवान बन जाना।
27. भागने से भाग्य नहीं बदलता, जागने से भाग्य बदलता है।
28. बातों से नहीं अपितु अपने आचार-विचार से व्यक्ति महान बनता है।
29. वीर शासन वह है जिसमें औरों पर नहीं अपने पर शासन होता है।
30. शरीर धुलता है पानी से, मन धुलता है जिनवाणी से।
31. न मुनि अटैची रखते हैं न किसी से अटैचमेंट।
32. संसारी को भोग का रस आता है, संयमी को योग का रस आता है।
33. जो संयमी की सेवा करता है उसके जीवन में भी एक दिन संयम जरूर आता है।

आचार्य श्री के अधरों से उनके प्रवचनों में ये वचनों के मुक्ताकण ऐसे झरते रहते हैं जैसे किसी पहाड़ी से स्वच्छ, शुभ्र, शीतल झरने का पानी झर-झर झरता, तन-मन व मानस को ठंडक पहुँचाता है। यद्यपि आचार्य श्री की बातों में आगम ग्रंथों, शास्त्रों व पुराणों की गूढ़, गहन, गंभीर बातें होती हैं, पर वे सहज व सरल भाषा में प्रकट हो सबको रुचिकर लगती है। उनके प्रवचन ज्ञान सभर होते हैं पर उनमें ज्ञान का भार और बोझिलता नहीं होती है अपितु वे सहज व सुगमता से अनुकरणीय है। उनके उपदेशों में कही गई आध्यात्म की विशिष्ट बातें, समझने व पालन करने में अति सरल होकर प्राकृतिक रूप से आत्मसात हो जाती। उसके लिए अलग से कोई प्रयत्न नहीं करना पड़ता है। उनके प्रवचन उनके अंतर का आईना है। वे अपनी सच्चाई व साफगोई के कारण जनप्रिय हैं और उनकी लोकप्रियता का ग्राफ दिन पर दिन ऊँचाइयाँ छूता जा रहा है। यदि आचार्य श्री के प्रवचनों में झरते जीवन को रूपांतरित करने वाले ये ज्ञान के मुक्तामाणक सहेजे संकलित किए जाए तो एक वृहद संकलन बन पड़ेगा। उनके हृदय की उदारता व विशालता कहो, जब भी उनके कंठ से ज्ञानामृत झरता है तब वे कहते हैं यह मेरी वाणी नहीं, यह जिनवाणी है। सच है ऐसे ही साधक वीर हिमाचल जैसे उतंग प्रभु के मुख से निकली गुरुवाणी को हिमोत्तुंग स्थान दिला सकते हैं।

आचार्य श्री के प्रवचनांश के इन अमृतज्ञान कणों से आचार्य श्री की मनसा जाहिर है कि दर्शन-ज्ञान, मूल्य-मर्यादा की तरह हमारा आचरण व सच्चरित्रता हमारी प्रगति के मूल कारण हैं। छल-कपट, क्रोध, कटुवचन हमारी प्रगति में

बाधक हैं। अपने आचरण से स्खलित होने के कारण हमारा/मनुष्य का आध्यात्मिक विकास अवरुद्ध हो रहा है, मनुष्य पशुधर्मी होता जा रहा है। यही मनुष्य के दुःख का कारण है। इस दुःख से निजात दिलाने की मनसा से ही आचार्य श्री अपने प्रवचनों के माध्यम से हमें चरित्र सुधार की सीख दे रहे हैं।

आचार्य श्री के विचारों को एक गूढ़ गहन चिंतक का चिंतन, परिपक्व दृष्टि व प्रौढ़ अभिव्यक्ति कहा जा सकता है। उनके प्रवचनों में सृष्टि के जीव मात्र के प्रति वेदना, जतन, पीड़ा, आँसू व करुणा के स्वर प्रकट होते दिखाई देते हैं। संत जीवन के 'स्वांत सुखाय' के क्षणों के स्वाध्याय, मनन, चिंतन, मंथन, साधना, अनुभव व सहज बोध से अनुप्राणित आपके विचार प्राणिमात्र के कल्याण के लिए आपके प्रवचनों में अभिव्यक्त होते रहते हैं। आप अपने साथ-साथ इन प्रवचनों के माध्यम से हमारे जीवन के हर दिन को 'आत्म जागरण' का पर्व बना देना चाहते हैं।

आचार्य श्री जैसे ज्ञानी संत अपने ज्ञानालोक से संपूर्ण लोक को आलोकित करना चाहते हैं अतः वे हमें इस ज्ञानालोक द्वारा 'मुक्ति सुख' की प्राप्ति की ओर उन्मुख कर रहे हैं जो हमारे जीवन का परम ध्येय है। निश्चित ही इन प्रवचनों के माध्यम से वे जन-जन के जीवन में आत्म बोधि, सुगति गमन व समाधिमरण की सर्वोच्च भावनाओं के बीजों का वपन कर रहे हैं। वे मानव मात्र के जीवन में आत्मोन्नति की फसलें लहलहाते देखना चाहते हैं। ऐसे महापुरुष जीवन समर में विजयी हो आगे बढ़ते जाते हैं व जन हृदय में वास करते हैं। यही कारण उनका आगमन लोगों के लिए 'आत्म जागरण का पर्व' उनका मंगलवास किसी भी स्थान के लिए 'उत्सव मेला' बन जाता है।

असाध्य वीणा

साधना और सृजन में गहरा संबंध है। जब पूर्ण शक्ति लगाकर कोई साधक किसी सृजन के सर्जन की साधना करता है, तभी वह समाज को अपना श्रेष्ठतम 'सृजन' दे सकता है। मैं यह बात यहाँ तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी एवं उनके शिष्य अंकलीकर परंपरा के चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी के संदर्भ में कहना चाहती हूँ। आचार्य श्री सन्मतिसागरजी मात्र व्रत उपवासों के कारण ही अनूठे तपस्वी नहीं कहलाए। यदि उनके जीवन के दर्पण में झाँककर देखें तो जीवन भर उनका हर कार्य 'तपःपूत' साधनामय रहा। आत्मदान की कीमत पर उन्होंने महान साधना सिद्ध की। तपस्वी सम्राट की इसी शक्ति साधना से सृजित सर्जन के रूप में अंकलीकर परंपरा के चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी अपने विराट, विशाल, उदार व असाधारण व्यक्तित्व को लिए हमारे सम्मुख खड़े हैं।

इस बात के स्पष्टीकरण के पूर्व मैं अपनी पढ़ी एक छोटी सी लेकिन बहुत प्यारी व प्रेरक प्रसिद्ध चीनी कथा जो जापान में भी बहुत प्रचलित है, इस संदर्भ में बताना चाहूँगी। प्राचीन समय में लुंगमेन की एक बहुत सँकरी घाटी जो होन्सन प्रांत के ड्रेगुन दर्रे में स्थित है, में एक विराट/विशाल किरी तरु हुआ करता था। इतना ऊँचा कि आसमान को छूता प्रतीत होता। इतना घना कि मीलों तक उसकी सघन छाया व्याप्त रहती। जड़ें इतनी गहरी कि पाताल फोड़ दे। कुल मिलाकर वह 'किरी' तरु अद्‌भुत विलक्षण व असाधारण था। इसी अद्‌भुत, बेमिसाल पेड़ की लकड़ी से एक बेमिसाल, प्रवीण, असाधारण शिल्पी ने डूबकर वर्षों साधना कर एक बेमिसाल, अद्‌भुत, दिव्य वीणा तराशी जिसके तारों पर दुनिया का श्रेष्ठतम संगीतज्ञ ही स्वर साध सकता था।

जब शिल्पी को कोई ऐसा स्वर साधक न मिला तब उम्र के अंतिम पड़ाव पर उसने अपनी विरासत के रूप में यह दिव्य वीणा अपनी धरोहर चीन के सम्राट को सौंप दी।

छूना तो दूर, वीणा को देखकर ही सम्राट का रोम-रोम पुलकित हो गया और उन्होंने इस अनूठी वीणा को अमूल्य

धरोहर के रूप में संभाल लिया। सम्राट ने देश देशान्तर के विशिष्ट संगीत साधकों को आमंत्रित किया ताकि वे उसके दरबार में आकर इस दिव्य वीणा की मधुर झंकार से उसे गुंजायमान कर दें। दुनिया के एक से बढ़कर एक स्वर साधक आए किन्तु वे इस दिव्य वीणा के अनम्य तारों को साधकर स्वर लहरी निकालने में असफल रहे। वे वीणा के अनम्य तारों को सुनम्य नहीं बना सके। लाख प्रयास करने के बावजूद भी वीणा से अप्रिय ध्वनि ही निकलती जिसका गीतों से कोई मेल नहीं होता। लगता वीणा किसी को भी साधक के रूप में स्वीकार करना नहीं चाहती थी और वह असाध्य वीणा के रूप में विश्व विख्यात हो गई। उसे कोई श्रेष्ठ वीणा वादक नहीं मिला।

पर आदमी कब हार मानता है। इस असाध्य वीणा की चर्चा विश्व प्रसिद्ध वीणा वादक राजकुमार पेईवोह तक पहुँची। वे चीन के सम्राट के दरबार में पहुँचे। उस वीणा की दिव्यता देख स्तब्ध रह गए। वीणा उनके नैन द्वार से हृदय में प्रवेश कर गई। उन्होंने बड़े दुलार, स्नेह, आदर व कोमलता से उस वीणा को सहलाया। शिल्पी का स्मरण करते हुए उसकी इस महान साधना के लिए उसे व उसकी वीणा को नमन किया। वीणा को नमन करते हुए अंगुलियों से कोमल स्पर्श करते हुए उसकी आँखें बंद हो गई। सर्वप्रथम उसने प्रकृति के गीत गाए। सारा वातावरण प्रकृति के रंग में रंग गया। एक साथ पहाड़, नदियाँ, झरने, सूर्योदय, चाँद-सितारे राज दरबार में उतर आए। पेड़ वर्णन में यकायक राज दरबार लुंगमेन की तंग घाटी बन गया जहाँ किरी पेड़ उग आया। जिसकी लकडी से यह असाध्य वीणा बनी थी। पेईवोह ने अचानक गीत बदला- जो प्रार्थना में परिवर्तित हो गया। तभी मंदिरों में घंटालों और आरती की आवाजें वातावरण को पवित्र कर रही थी तो कभी प्रार्थना व अजान में दरबार खो गया। सबको लगने लगा पवित्र लोबान की खुशबू उनके नथुनों में भर रही है कि अचानक उसने रण का राग छेड़ दिया। यकायक सारा दरबार उठ खड़ा हुआ। सबकी रगों में खून खौलने लगा, भृकुटियाँ तन गईं, मुट्ठियाँ भींच गईं। तलवारों की म्यानों तक हाथ जा पहुँचे, लगा पलभर में सब युद्ध के लिए दौड़ पड़ेंगे कि अचानक पेईवोह ने संगीत बंद कर दिया।

वीणा के संगीत में सुधबुध खोए दरबारियों को पेईवोह जिस लोक में ले गया था वे अभी तक उससे बाहर निकल नहीं पाए थे। पेईवोह की स्वर-सुर साधना ने उन्हें भाव समाधि के दिव्य क्षणों में पहुँचा दिया था। भाव समाधि से बाहर निकलकर जब राजा ने पेईवोह से वीणा से इतने सुंदर स्वर निकलने का रहस्य पूछा, तब पेईवोह का बड़ा सुंदर उत्तर था- ''महाराज! मुझसे पूर्व वीणा को साधने वाले साधक इसलिए विफल रहे क्योंकि उन्होंने अपने गीतों पर वीणा के तारों से रागिनी छेड़ना चाहा किंतु मैंने ऐसा नहीं किया। मैंने इस असाध्य, अद्‌भुत, असाधारण दिव्य वीणा को सम्मान दिया, नमन किया और स्वयं को वीणा के प्रति इतना समर्पित कर दिया कि फिर मुझे पता नहीं चला कि वीणा मुझमें खो गई या मैं वीणा में खो गया। मैं मैं नहीं रहा, वीणा में खो गया। मैं और वीणा एकाकार हो गए। बिना अहं के तिरोहित किये वीणा बज ही नहीं सकती थी।''

कहानी को विराम दे मैं स्पष्ट करना चाहूँगी कि यह कहानी उस असाध्य वीणा का प्रतीक है जो मेरी कृति के महानायक महाविज्ञ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी हैं। जी हाँ, और वह बेमिसाल, महासाधक, प्रवीण शिल्पी और कोई नहीं, हमारे महानायक के महागुरु अनूठे तपस्वी आचार्य श्री सन्मतिसागरजी अंकलीकर परंपरा के तृतीय पट्टाचार्य हैं। वे मात्र अपने द्वारा किये गये हजारों उपवासों के कारण अनूठे तपस्वी नहीं कहलाए अपितु उनकी रग-रग में तपःपूत भावनाएँ प्रस्फुटित होती रहती थीं। उपवासी रहकर भी वे पदविहार करते हुए विश्व कल्याण का वह हर कार्य सामान्य तरीके से करते रहे थे जिसे करने में सामान्य परिस्थितियों में भी बड़े-बड़ों के छक्के छूट जाते हैं। कहते हैं- भूखे पेट भजन न होई गोपाला, किन्तु वे तो भूखे प्यासे पद विहार करते, शिष्यों को दो-दो वक्त पढ़ाते, संघ का सुसंचालन करते, योग्य शिष्यों को जाँचते-परखते, तराशते तथा भगवान महावीर के दर्शन, चिन्तन व सिद्धान्तों को जन-जन तक पहुँचाने के लिए तैयार करते रहते। उनकी तपस्या की स्फुलिंगें कई-कई रूप में दीप्तिमान थीं।

इस बेमिसाल पारखी शिल्पी ने 'किरी तरु' के रूप में प्रथम दृष्ट्या ब्रह्मचारी संदीप को परख लिया। दीक्षा दे उसे नाम सुनीलसागर दे एक असाध्य वीणा को तराशने का काम शुरू कर दिया। किरी तरु की लकड़ी तो निर्जीव थी, किन्तु यहाँ तो उन्होंने जीवन्त काष्ठ एक चेतन आत्मा को तराशना शुरू किया था क्योंकि वे जानते थे काष्ठ ही भवसमुद्र तिराकर पार करा सकता है। उसमें लोहे का भी भार उठाने की क्षमता होती है। सन् 1997 से लेकर सन् 2007 दस वर्षों तक इन ज्ञानवृद्ध, चिन्तन वृद्ध, वयोवृद्ध तपस्वी साधक श्री सन्मतिसागरजी ने एक प्रवीण शिल्पी के रूप में बड़ी बारीकी से इस शिष्य रूपी वीणा को तराशा। 2007 में आचार्य पद व 2010 में पट्टाचार्य पद दे शिष्य रूपी इस असाध्य, अपनी तरह बेजोड़ बेमिसाल वीणा को जनता-जनार्दन के लोक दरबार में छोड़ इस दुनिया से अंतिम विदा ले ली।

वे जानते थे कि जिस विलक्षण वीणा को उन्होंने तराशा है उसे बजाने, स्वर साधना करने कोई 'पेईवोह राजकुमार' नहीं आएगा। वह काष्ठ निर्मित वीणा थी, अतः उसके लिए श्रेष्ठतम स्वर सुर साधक चाहिए था। पर यहाँ चेतन काष्ठ है जो स्वयं असाध्य वीणा है और स्वयं श्रेष्ठतम सुर साधक। चीनी लोक कथा का शिल्पी अपनी वीणा के सुर नहीं सुन सका पर इस अनूठे तपस्वी रूपी शिल्पी ने तो अपनी वीणा की झंकार 2007 से ही सुनना शुरू कर दी थी। उनकी यह असाध्य वीणा और उसके स्वर सुर साधक पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी हैं।

पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी अपने 'अहं' का विसर्जन कर महाश्रमण अपने महागुरु के प्रति शिष्य भाव से समर्पित, श्रद्धावनत, अपनी महान संस्कृति व परंपराओं के प्रति नत-नत हैं। आज शिष्य का महान समर्पण ही गुरु के उस महासृजन को सार्थक कर रहा है। जब इस असाध्य वीणा के तारों से आध्यात्म की झंकार फूटती है तब लोक दरबारी श्रोतागण बड़ी तन्मयता से सिद्धालय में सिद्धात्माओं के बीच खो जाते हैं। जब आचार्य श्री आत्मकल्याण की स्वर साधना करते हैं तब लोग आत्मकल्याण की भावनाओं में डूब जाते हैं। मुमुक्षुगण उनकी इन्हीं भावनाओं से प्रेरित होकर दीक्षा लेते रहे हैं, समाधिमरण करते रहे हैं।

जब वे हमारी महान अहिंसामयी संस्कृति व जीवन मूल्यों की बात छेड़ते हैं तब लगता है श्रमण परंपरा के आंगन में सत्य, अहिंसा, प्रेम, करुणा व शांति की रागिनी छिड़ गई है और श्रोताओं के मन आंगन में संवेदनाओं के बिरवे फूटने लगते हैं। जब वे संस्कारों का शंखनाद करते हैं तब समाज अपने भूले-बिसरे संस्कारों के प्रति सजग होने लगता है और उनमें सामाजिक चेतना फूट पड़ती है। आचार्य श्री को पहले ही चेतन वीणा के रूप में निरूपित किया जा चुका है जो उंगलियों के स्पर्श से नहीं अपितु विचार चिंतन की चेतना से झंकृत होती है। प्रकट होती है। जब उनके विचार चिन्तन के रूप में उनके श्रीमुख से उनका संकल्प, उनका सोच, उनका दृष्टिकोण, उनका जीवन दर्शन प्रकट होते हैं तब वे हमें सबसे अलग पायदान पर खड़े नजर आते हैं। उनकी विचार मीमांसा सार्वभौमिक, सार्वकालिक, सार्वजनिक व सर्वदेशीय है। उनका विचार चिन्तन बाहर से अन्दर तथा भौतिकता से आध्यात्मिकता की ओर ले जाता है। उनका विचार चिंतन हम जैसे जगत जंजाल में फँसे प्राणियों को हमारे परम ध्येय मोक्ष प्राप्ति के लिए सम्यक्दर्शन देने वाला है। जीवन की क्षणभंगुरता से दृष्टिबोध देने वाला है।

श्रेष्ठ विचारों में अपरिमित शक्ति है। ये हमारी संस्कृति के संवाहक हैं तभी तो हम 'वसुधैव कुटुम्बकम्' व 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' की भावनाओं को विश्व स्तर तक ले जा सके हैं। समग्र विश्व शांति की तलाश में भारत की ओर देख रहा है। हमारी इस वैचारिक विजय दुन्दुभि का नाद आज आचार्य श्री कर रहे हैं। वे विज्ञान के इन बढ़ते चरणों के साथ समन्वय कर मानव कल्याण व जीवमात्र के कल्याण का मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं।

जब उनकी वीणा वाणी का कौशल फूटता है तब उसमें से उनके गहन ज्ञान, गूढ़ चिन्तन, आत्मरस में पगा हुआ अध्यात्म का सत, गुरु द्वारा दी गई शिक्षा का निचोड़, अध्ययन व स्वाध्याय के हरसिंगारी फूल एक साथ झरने लगते हैं। जिस प्रकार राजकुमार पेईवोह ने राज दरबार में उपस्थित विविध मानसिकता वाले श्रोताओं को उस असाध्य वीणा

से निकले विविध मधुर संगीत में आकंठ डुबा दिया ठीक उसी प्रकार आज आचार्य श्री के ज्ञान व साधना की स्वर लहरियों का आस्वादन श्रोतागण अपने-अपने सांस्कृतिक संस्कारों व मनःस्थितियों के स्तर पर ग्रहण कर रहे हैं।

उस असाध्य वीणा के माध्यम से मैं बताना चाहूँगी कि गुरु आचार्य श्री सन्मतिसागरजी व शिष्य श्री सुनीलसागरजी ने जहाँ उत्तंग हिमालयी व्यक्तित्व का निर्माण किया है जहाँ गुरु का शिष्य के प्रति अथाह वात्सल्य, गुरु की पारखी नजरों तथा गुरु द्वारा शिष्य को ऊपर उठाने के लिए किये गये अथक प्रयासों व साधना का प्रतिफल है, वहीं शिष्य आ. श्री सुनीलसागरजी के रूप में जिस असाध्य वीणा की झंकार चहुँ दिशाओं में गुंजायमान हो रही है वह उनकी 'गुरु' अनूठे तपस्वी के प्रति की गई अनूठी भक्ति व समर्पण का निनाद है। उनका 'अहं' 'मैं' गुरु में विसर्जित हो गया। वे गुरुमय हैं। उनके लिए गुरु सर्वोच्च है। गुरु बिना वे स्वयं को अस्तित्वहीन मानते हैं। वे आज जो कुछ हैं, इसका श्रेय गुरु को है और गुरु ने अपनी गुरुता भरने के लिए ही इस 'महापात्र' का चयन किया, जिसमें गुरु की (उनकी नहीं, परंपरा की) गुरुता टिक सके।

इस प्रकार मैं यह कह तो नहीं सकती कि किरी तरु की लकड़ी की भाँति जिस बेमिसाल कुशलतम शिल्पी ने जिस असाध्य दिव्य वीणा का सृजन किया। तद्नुरूप मैं उन महान गुरुओं की श्रेष्ठता, उत्कृष्टता, विलक्षणता व विश्व कल्याण की भावना व उनकी अपूर्व साधना का सही रूपांकन कर सकी हूँ, उनके दर्शन, ज्ञान व चारित्र का वास्तविक मूल्यांकन कर पाई हूँ, उत्तर 'नहीं' ही होगा। कहाँ वे गगनमंडल के सूर्य से महाप्रतापी संत और कहाँ मैं धरती का रज कण, कहाँ वे असीम अथाह सागर और कहाँ मुझमें बूँद इतनी भी सामर्थ्य नहीं; फिर भी मैं अपनी लेखनी को धन्य मानती हूँ। नहीं से कुछ भला। निश्चित ही मैं उनकी दिव्यता को सिद्ध करने की पात्रता नहीं रखती तथापि जितनी मुझमें क्षमता, समझ, सोच व योग्यता थी, वहाँ तक ही पहुँच पाई हूँ।

अंत में पुनः-पुनः युग की ओर से नमन है उन युगान्तकारी सरस्वती के उन दिव्य साधक शिल्पी गुरु सन्मतिसागरजी को, जिन्होंने अपनी आत्म साधना के अमूल्य क्षणों में से समय निकाल एक ऐसा दिव्य 'चरित्र' गढ़ समाज को अर्पित किया जो अपने दिव्य चरित्र का आईना दिखाकर समाज का पथ प्रशस्त कर कल्याण मार्ग पर अग्रसर है। नमन है चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी को, जो अपने गुरु की दिव्य साधना की कसौटी पर उस असाध्य वीणा की तरह खरे उतरे हैं। जब उसकी झंकार झंकृत होती है, विशाल जनसमुदाय उसमें डूब गहरे उतरता चला जाता है।

आचार्य श्री सुनीलसागरजी के सान्निध्य में प्रतिष्ठा महोत्सव

- 24.1.2007 से 28.1.2007 श्री महावीर स्वामी पंचकल्याण प्रतिष्ठा महोत्सव आडूल (औरंगाबाद) (महा.)
- श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर, बसई मुंबई महाराष्ट्र 2011 मानस्तंभ प्रतिष्ठा, अमृतभाई परिवार द्वारा। प्रतिष्ठाचार्य- भट्टारक श्री धवलकीर्ति, अरिहंतगिरि
- श्री दिगम्बर जैन मंदिर अंधेरी मुंबई- 6 से 12 नवंबर 2011, पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव, प्रतिष्ठाचार्य पं. सुधीर मार्तंड केशरियाजी
- 21.2.2013 से 25.2.2013 तक श्री आदिनाथ पंचकल्याण प्रतिष्ठा महोत्सव. श्री रिखबचंद अजित कुमार कासलीवाल की फैक्टरी, कबनूर, इचलकरंजी (महा.) प्रतिष्ठाचार्य- पं. महीपालजी मुंबई
- 4.12.13 से 9.12.2013 तक श्री आदिनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव, अंकली गाँव, सांगली (महाराष्ट्र)
- 26.11.2015 से 30.11.2015 तक श्री महावीर भगवान रत्न प्रतिमा, पंचकल्याण प्रतिष्ठा महोत्सव, प्रतापगढ़

(राज.) प्रतिष्ठाचार्य- पं. प्रदीप, मधुर, पंचकल्याणक कर्ता- सज्जन देवी ज्ञानचंद, कीर्तिवीर, विश्वसेन, भरत मिंडा, प्रतापगढ़ निवासी, प्रवासी- मुम्बई

- 22.1.2016 से 26.1.2016 तक श्री नेमिनाथ/सम्मेदशिखर गिरनार प्रतिकृति पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव, बही पार्श्वनाथ मंदसौर (म.प्र.) प्रतिष्ठाचार्य- पं. विजय कुमार गाँधी
- 6.2.2015 से 11.2.2015 तक श्री सुपार्श्वनाथ/मानस्तंभ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव रीछा (राज.) प्रतिष्ठाचार्य- महावीर गींगला
- 13.2.2016 से 17.2.2016 तक श्री शांतिनाथ/मानस्तंभ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव, बमोत्तर प्रतापगढ़ (राज.) प्रतिष्ठाचार्य- श्री हँसमुखजी धरियावद
- 16.11.2016 से 18.11.2016 तक श्री बाहुबलि जिनबिम्ब प्रतिष्ठा महोत्सव, बाहुबलि कॉलोनी, बांसवाड़ा (राज.), प्रतिष्ठाचार्य- पं. कोमलचंद जैन, लोहारिया
- 4.12.2016 से 9.12.2016 तक श्री चंद्रप्रभ पंचकल्याण प्रतिष्ठा महोत्सव खमेरा (राज.) प्रतिष्ठाचार्य- हँसमुखजी धरियावद
- 21.12.2016 से 24.12.2016 आचार्य सन्मतिसागर गुरुबिम्ब प्रतिष्ठा महोत्सव, खमेरा (राज.), प्रतिष्ठाचार्य पं. महावीर गींगला
- 8.2.2017 से 13.2.2017 श्री मज्जिनेन्द्र त्रिमूर्ति पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव निठउआ (गामड़ी) (राज.), प्र. हसमुखजी
- 1.4.2017 से 5.4.2017 तक श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव, पीपलखूंट (घाटोल)
- 18.2.2017 से 23.2.2017 श्री आदिनाथ जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव धरियावद (राज.), प्र. हसमुखजी व पं. भागचंद जैन धरियावद
- 9.11.2018 से 14.11.2018 तक गाँधीनगर मानस्तंभ, जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव
- 5.5.2019 से 10.5.2019 तक श्री पार्श्वनाथ जिनबिम्ब प्रतिष्ठा महोत्सव, वागोल कुशलगढ़
- 2.6.2019 से 6.6.2019 तक श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव, भीलुड़ा (सागवाड़ा) राजस्थान
- 13.11.2019 से 18.11.2019 तक श्री संभवनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव, पाड़वा
- 20.11.2019 से 24.11.2019 तक श्री शांतिनाथ जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव, सागवाड़ा
- 25.11.2019 से 1.12.2019 तक श्री विमलनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव, गपुका, सागवाड़ा
- 4.12.2019 से 9.12.2019 तक श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव, मोहन कॉलोनी, बासवाड़ा
- 15.1.2020 से 20.1.2020 तक श्री मुनिसुव्रतनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव, बाँसवाड़ा
- 1.2.2020 से 7.2.2020 तक श्री आदिनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव, डेचा ओबरी (डूंगरपुर)

उपाधियाँ

1.	अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी	बनारस चातुर्मास, गुरुदेव द्वारा, 1999
2.	प्राकृताचार्य	भट्टारक चारुकीर्ति, श्रवणबेलगोला, 2009
3.	अर्वाचीन नेमीचंद	भट्टारक चारुकीर्ति, श्रवणबेलगोला, एवं विद्वतगणों
4.	सिद्धांत चक्रवर्ती	द्वारा 2009
5.	मौनप्रिय	नातेपुते समाज, सोलापुर (महाराष्ट्र), 2009
6.	उपसर्ग विजेता	गोरेगाँव, मुंबई (महा.) 2010
7.	राष्ट्रसंत	कुंजवन ट्रस्ट, उदगाँव (महा.) 24.12.2012
8.	सूरी आदिसन्मति रत्न	अंकली, सांगली (महा.) महावीर जयंती, 2013
9.	चारित्र भूषण	अंकलीकर तीर्थधाम पंचकल्याणक प्रतिष्ठा, 2013
10.	श्रुताचार्य	औरंगाबाद (महा.), महावीर जयंती, 2014
11.	अध्यात्म योगी	सूरत चातुर्मास, 5.10.2014
12.	वात्सल्य शिरोमणि	रीछा, पंचकल्याणक प्रतिष्ठा, 9.2.2015
13.	सरस्वती शिरोमणि	वीर जयंती, पारसोला (राज.), 2.4.2015
14.	सिद्धांत पारंगत	मुंगाणा (राज.), समाज द्वारा 2015
15.	त्रिभाषा कवि	आडुल, औरंगाबाद (महा.)
16.	प्राकृत ज्ञानकेशरी	उदगाँव, कुंजवन
17.	प्राकृत शिरोमणि	योगी नगर (मुंबई) विद्वानों द्वारा
18.	संयम भूषण	प्रतापगढ़ (राज.), भ. महावीर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा
19.	अभिनव कुंदकुंदाचार्य	प्रतापगढ़ चातुर्मास, विद्वानों द्वारा, 2015
20.	गुरु श्रेष्ठ	प्रतापगढ़, महावीर जयंती, 2016
21.	वर्तमान के वर्द्धमान	बांसवाड़ा समाज, 7.10.2016
22.	चर्या चक्रवर्ती	उदयपुर, 7.10.2017, राजस्थान के गृहमंत्री श्री गुलाबचंद कटारिया द्वारा
23.	राष्ट्र गौरव	गाँधीनगर, 2018, गुजरात के मुख्यमंत्री विजय रूपाणी द्वारा
24.	राष्ट्र संत	सागवाड़ा, 2019, राजस्थान के मुख्यमंत्री अशोक गेहलोत द्वारा
25.	धर्म साम्राज्य नायक	सागवाड़ा समाज, 2019

आचार्यश्री के सान्निध्य में विद्वत् गोष्ठियाँ

1. विद्वत् गोष्ठी, जनवरी 1998, टीकमगढ़
2. भारतीय संस्कृति व साहित्य में पार्श्वनाथ, अक्टूबर 1999, बनारस
3. आचार्य महावीरकीर्ति राष्ट्रीय विद्वत् गोष्ठी, मार्च 1999, पटना
4. श्रुत पंचमी महोत्सव, 2000, कानपुर

5. शिक्षा व संस्कृति पर विद्वत् गोष्ठी, सितंबर 2000, छतरपुर
6. श्रुत पंचमी महोत्सव, 2001, भोपाल
7. प्राकृत साहित्य पर विद्वत् गोष्ठी, 2003, उदयपुर
8. राष्ट्रीय विद्वत् गोष्ठी, 2005, मुंबई
9. श्रुत पंचमी महोत्सव व केशलोंच, 2006, पुणे
10. राष्ट्रीय विद्वत् गोष्ठी व आचार्य पदारोहण, जनवरी 2007, औरंगाबाद
11. प्राकृत भाषा, जैन गणित पर विद्वत् गोष्ठी, सितंबर 2008, सोलापुर
12. प्राकृत भाषा के विविध आयाम विद्वत् गोष्ठी, अप्रैल 2009, श्रवणबेलगोला
13. समयसार पर विद्वत् गोष्ठी, नवंबर 2009, नातेपुते
14. प्राकृत भाषा परिचर्चा, अगस्त 2010, मुंबई
15. आचार्य सन्मतिसागर राष्ट्रीय विद्वत् गोष्ठी, 2012, दहिसर, मुंबई
16. आचार्य आदिसागर अंकलीकर विद्वत् गोष्ठी, 2014, सूरत
17. जैन पत्रकार महासंघ का अधिवेशन, चुनाव नवंबर 2014, सूरत
18. आचार्य विमलसागर व्यक्तित्व कृतित्व विद्वत् गोष्ठी, 2015, प्रतापगढ़
19. विद्वत् परिषद अधिवेशन, 25 जनवरी 2016, बड़ी चौपाटी, मंदसौर
20. 'सुनील प्राकृत समग्र' राष्ट्रीय विद्वत् गोष्ठी, 16 से 19 नवंबर 2017, उदयपुर
21. प्राकृत भाषा के विविध आयाम, राष्ट्रीय विद्वत् गोष्ठी, गाँधीनगर (गुजरात)

आचार्यश्री के सान्निध्य में वाचना

षटखंडागम मूल	2008	सोलापुर
षटखंडागम अनुशीलन	2009	श्रवणबेलगोला
प्रवचनसार, अज्झप्पसारो	2009	नातेपुते
मूलाराधना, इष्टोपदेश	2010	मुंबई
समयसार, भावणासारो	2011	मुंबई
मूलाचार	2012	कुंजवन
मूलाचार, जीवकांड	2013	अंकली
सर्वार्थसिद्धि	2014	सूरत
वृहद् द्रव्य संग्रह	2014	बड़ौदा, पावागढ़
धवला पुस्तक-एक	2015	शीतकालीन वाचना, पारसोला
धवला पुस्तक-दो	2015	ग्रीष्मकालीन वाचना, मुंगाणा
पंचास्तिकाय नाटक समयसार	2015	प्रतापगढ़
धवला पुस्तक तीन	2016	शीतकालीन वाचना, मंदसौर
धवला पुस्तक- चार	2016	ग्रीष्मकालीन वाचना, पाड़वा

धवला पुस्तक- पाँच	2016	ग्रीष्मकालीन वाचना, सागवाड़ा
मूलाचार प्रदीप, न्यायदीपिका	2016	बांसवाड़ा
धवला पुस्तक- छः	2017	शीतकालीन वाचना, घाटोल
धवला पुस्तक- सात	2017	ग्रीष्मकालीन वाचना, प्रतापगढ़
धवला पुस्तक- आठ	2018	शीतकालीन वाचना, उदयपुर, से.11
भत्तीसंगहो, नाममाला	2018	ग्रीष्मकालीन स्वाध्याय, उदयपुर, से.4
धवला पुस्तक-9	2018	ग्रीष्मकालीन वाचना, ऋषभदेव (केसरियाजी)
धवला पुस्तक-10	2019	शीतकालीन वाचना, गिरनारजी

दिनचर्या

प्रातः 3.00 बजे	जागरण
प्रातः 3.15-5.00 बजे	स्वाध्याय, चिंतन-मनन, जाप्य, प्रतिक्रमण
प्रातः 5.00-6.00 बजे	सामायिक
प्रातः 6.00-7.00 बजे	अभिषेक, जिनदर्शन, निहार शुद्धि
प्रातः 7.00-8.30 बजे	स्तुति पाठ, मूलाचार, स्वाध्याय
प्रातः 8.30-10.00 बजे	सन्मतिसमवशरण में प्रवचन
प्रातः 10.20 बजे	आहार चर्या
दोप. 12.00-1.00 बजे	सामायिक
दोप. 1.00-3.00	निजी चिंतन, लेखन-मनन
सायं 3.00-4.30	स्वाध्याय
सायं 4.30-5.30	जनदर्शन
सायं 5.30 बजे	प्रतिक्रमण-भक्तियाँ
सायं 6.45 बजे	मंगल आरती
सायं 7.00-8.00 बजे	सामायिक
रात्रि 8.00-8.45 बजे	पूर्व रात्रिक स्वाध्याय
रात्रि 8.45 बजे से	वैयावृत्ति, अध्ययन, लेखन, विश्राम
विशेष	अष्टमी-चौदस (वाचना के अलावा) मौन

आचार्य सुनीलसागरजी के चातुर्मास एवं सन् विशेष में उपलब्धियाँ, विशिष्ट घटना

क्र.	वि.सं.	सन्	स्थान	साहित्य सृजन	यात्रा
1.	2054	1997	टीकमगढ़ (उ.प्र.)	भक्ति से मुक्ति, अमरत्व का अमृत, इष्टोपदेश टीका	सम्मेदशिखर आदि

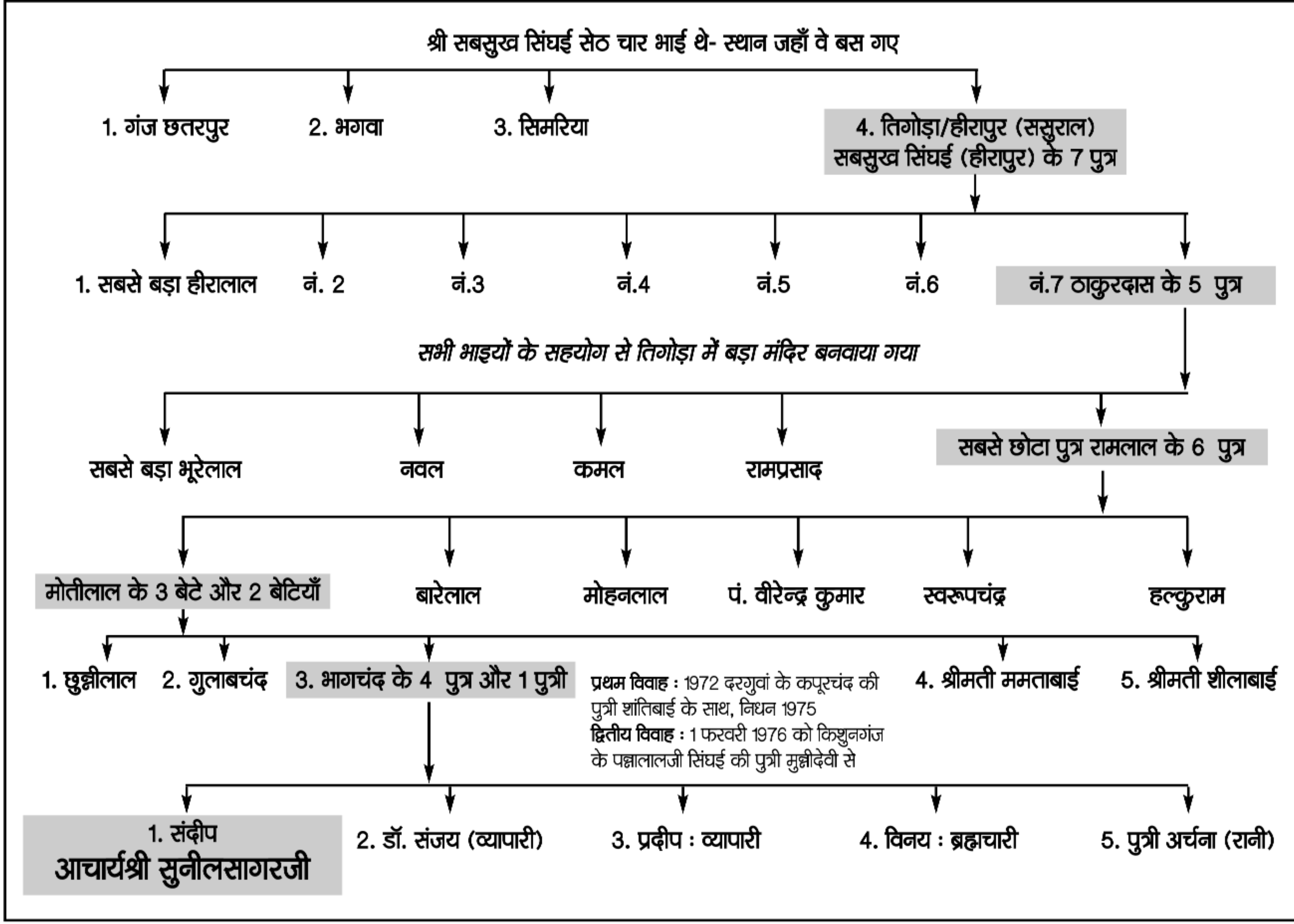
2.	2055	1998	चम्पापुर (बिहार)	चम्पापुर की चांदनी, मेरी सम्मेद शिखर यात्रा, विश्व का सूर्य	पावापुर, कुंडलपुर, राजगृही गुणावा, पटना, आरा, भागलपुर, मुंगेर आदि
3.	2056	1999	बनारस (उ.प्र.)	पथिक, काशीदर्शन, वसुनंदी श्रावकाचार, धरती के देवता	अयोध्या,रत्नपुरी, लखनऊ, कानपुर
4.	2057	2000	छतरपुर (म.प्र.)	जैनाचार विज्ञान, दूसरा महावीर	नैनागिरि, कुंडलपुर, दमोह सागर, भोपाल
5.	2058	2001	उज्जैन (म.प्र.)	संक्षिप्त जैन इतिहास	बड़वानी, बावनगजा, पावागढ़, संघ से अलग गुरु आज्ञा से। (दो साधु)
6.	2059	2002	नरवाली (राज.)	यात्रा के संस्मरण	पावागढ़, पारिया
7.	2060	2003	उदयपुर (राज.)	भावणासारो, ब्रह्मचर्य विज्ञान, णीदी संगहो	धरियावद, मुंगाणा पारसोला
8.	2061	2004	खमेरा (राज.)	स्तुतियों की रचना, प्राकृत बोध, तत्त्वार्थ सूत्र टीका	अरनोद, कुलथाना, आहू,धार, मांडव, रतलाम, गजपंथा, नाशिक
9.	2062	2005	मुंबई (महा.)	थुदी संगहो, अध्यात्म सार शतक, वसुनंदी श्रावकाचार	मुंबई भ्रमण, पूना, नीरा
10.	2063	2006	लासुर्णे (महा.)	आत्मोदय शतक	पैठण, कचनेर, औरंगाबाद

स्वतंत्र चातुर्मास

11.	2064	2007	अडूल	आचार्यपद प्राप्ति के बाद	जटवाड़ा, एलोरा, कुंथलगिरि
12.	2065	2008	सोलापुर (महा.)	अज्झप्पसारो,यात्रा-अंतर्यात्रा, भाव-निर्झर	बीजापुर, श्रवणबेलगोला दक्षिण यात्रा
13.	2066	2009	नातेपूते (महा.)	णियप्पज्झाणसारो, मेरी दक्षिण यात्रा	दहीगाँव, अकलूज, कुंडल, ऊदगाँव, कुंजवन, कुंभोज
14.	2067	2010	मुंबई, गोरेगाँव (महा.)	**पट्टाचार्य पद** चिंतन यात्रा	कुंजवन ऊदगाँव

15.	2068	2011	मुंबई योगीनगर, बोरीवली (महा.)	मौन तपस्वी, अनुत्तर तपस्वी, सन्मति युग (स्मृति ग्रंथ)	सन्मति महोत्सव, 11-12 स्वर्ण संयमोत्सव हीरक जन्मोत्सव
16.	2069	2012	कुंजवन ऊदगाँव		जयसिंगपुर, इचलकरंजी, शिरोल, हासूर
17.	2070	2013	अंकली गाँव		पंचकल्याण प्रतिष्ठा, दीक्षाएँ, पैठण, कचनेर, औरंगाबाद, मांगीतुंगी,महुआ
18.	2071	2014	सूरत (पार्लेपाइंट) (गुज.)		अंकलेश्वर, सजोद, पावागढ़, भरूच, बड़ोदरा, संतरामपुर
19.	2072	2015	प्रतापगढ़ (राज.)		शांतिनाथ, मंदसौर,बही पार्श्व. में पंचकल्याणक महोत्सव
20.	2073	2016	बांसवाड़ा (राज.), बाहुबलि कॉलोनी, सुमतिनाथ मंदिर	सुनील प्राकृत समग्र	खमेरा,गामड़ी, धरियावाद पंचकल्याणक, घाटोल वाचना, प्रतापगढ़, पीपलखूंट,पंचकल्याणक अणिंदा- पार्श्वनाथ
21.	2074	2017	उदयपुर दशाहूमड़ भवन		पंचकल्याणक, ऋषभदेव (केसरियाजी) ईडर, तारंगा, भिलोड़ा, पाल, विजयनगर, मेहसाणा, चिंतामणि पार्श्वनाथ टाकाटूंका
22.	2075	2018	गाँधीनगर (गुज.)	जैन धर्म जानिए महावीर की परछाई	पंचकल्याणक, अहमदाबाद गिरनारजी, शत्रुंजय, घोघा, भावनगर, वड़ोदरा, पावागढ़
23.	2076	2019	सागवाड़ा (राज.)		वागोल, भिलुड़ा, अंदेश्वर पार्श्वनाथ, डेचा, गोवाड़ी, चीतरी, आंतरी, वर्धा
24.	2077	2019	बगवास, प्रतापगढ़ (राज.)		पंचकल्याणक, बांसवाड़ा, ओबरी (डूंगरपुर)

वंश वृक्ष : ग्राम सिमरिया, जिला सागर (म.प्र.)



अंकलीकर परम्परा के दरख्तों तले

अंकलीकर परम्परा के प्रथम पट्टाचार्य आचार्य श्री आदिसागरजी अंकलीकर

मुनि दीक्षा कुंथलगिरि में जिनेन्द्र देव के सामने

↓

आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी (द्वितीय पट्टाचार्य)

↓

आचार्य श्री विमलसागरजी

↓ आचार्य श्री सन्मतिसागरजी (तृतीय पट्टाचार्य)

↓ आचार्य श्री विरागसागरजी

आचार्य श्री सन्मतिसागरजी (तृतीय पट्टाचार्य) →

- आचार्य श्री सुनीलसागरजी (चतुर्थ पट्टाचार्य) द्वारा दीक्षित साधु
- आचार्य श्री सुंदरसागरजी
- आचार्य श्री हेमसागरजी आदि 12 आचार्य

आचार्य श्री सुनीलसागरजी (चतुर्थ पट्टाचार्य) द्वारा दीक्षित साधु →

आचार्य श्री सुबलसागरजी	मुनिः 28	आर्यिकाः 18	ऐलक : 1	क्षुल्लक : 15	क्षुल्लिकाः22	कुल : 84

1. परम्परा के कुल पट्टाचार्य : 4 , 2. परम्परा के कुल आचार्य : 40
3. चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी के कुल आचार्य : 1, गणिनी आर्यिका माताजी : 1

आचार्य श्री सुनीलसागरजी संघ का परिचय

(1) मुनि श्री धर्मभूषणजी
पूर्व नाम : ओमप्रकाश जैन
जन्म स्थान : टुण्डला (फिरोजाबाद)
जन्म तिथि : 5.7.1947
मुनि दीक्षा : 9.9.1995/कुण (राज.)
दीक्षा गुरु : आचार्य ज्ञानभूषणजी

(2) मुनि श्री सुकुमालसागरजी
पूर्व नाम : रतनलालजी जैन
जन्म स्थान : बक्शीपुर (उ.प्र.)
जन्म तिथि : श्रावण सुदी पूर्णिमा वि.सं. 1999
मुनि दीक्षा : 27 सितंबर 2002/नरवाली (राज.)
दीक्षा गुरु : तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी

(3) मुनि श्री सुखसागरजी
पूर्व नाम : माणकलालजी जैन
जन्म स्थान : कुलथाना (राज.)
जन्म तिथि : अगहन वदी सप्तमी वि.सं. 1988
मुनि दीक्षा : 14 नवंबर 2003/उदयपुर (राज.)
दीक्षा गुरु : तपस्वी सम्राट आ. सन्मतिसागरजी

(4) मुनि श्री शुभमसागरजी
पूर्व नाम : बा.ब्र. सचेन्द्र कुमारजी
जन्म स्थान : रामटोरिया (छतरपुर), म.प्र.
जन्म तिथि : अश्विनी शुक्ल 3, सन् 1985
मुनि दीक्षा : 25.1.2007/औरंगाबाद (महाराष्ट्र)
दीक्षा गुरु : तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी

(5) मुनि श्री सहस्त्रारसागरजी
पूर्व नाम : धर्मचंद्रजी मिंडा
जन्म स्थान : प्रतापगढ़ (राज.)
जन्म तिथि : फाल्गुन सुदी 13, वि.सं. 1987
मुनि दीक्षा : ज्येष्ठ सुदी 5, सन् 2010
दीक्षा गुरु : तपस्वी सम्राट आ. सन्मतिसागरजी

(6) मुनि श्री सिद्धात्मसागरजी
पूर्व नाम : रसिकभाई कोटड़िया
जन्म स्थान : ग्राम वेरणा, हिम्मतनगर (गुजरात)
जन्म तिथि : 6.5.1948
मुनि दीक्षा : मोक्ष सप्तमी 25.7.2012/
कुंजवन (महाराष्ट्र)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(7) मुनि श्री सिद्धार्थसागरजी
पूर्व नाम : जयकुमार शाह
जन्म स्थान : गोरल (ईडर) गुज.
जन्म तिथि : 29.10.1949
मुनि दीक्षा : मोक्ष सप्तमी 25.7.2012/
कुंजवन (महा.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(8) मुनि श्री सम्बुद्धसागरजी
पूर्व नाम : बाल ब्र. शैलेन्द्र जैन
जन्म स्थान : खण्डवा (म.प्र.)
जन्म तिथि : 13.2.1975
मुनि दीक्षा : 12.3.2015/पारसोला (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(9) मुनि श्री श्रुतेशसागरजी
पूर्व नाम : बा.ब्र. नरेश कुमार जैन
जन्म स्थान : नोली, सलूम्बर (राज.)
जन्म तिथि : 10.1.1983
मुनि दीक्षा : 23.10.2015/प्रतापगढ़ (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(10) मुनि श्री सुश्रुतसागरजी
पूर्व नाम : बा.ब्र. अभिनव जैन
जन्म स्थान : खड़ैरी (दमोह), म.प्र.
जन्म तिथि : 31.10.1992
मुनि दीक्षा : 23.10.2015/प्रतापगढ़ (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(11) मुनि श्री श्रुतांशसागरजी
पूर्व नाम : माणकचंदजी जैन
जन्म स्थान : आगरा (उ.प्र.)
जन्म तिथि : 23.6.1943
मुनि दीक्षा : 23.10.2015/प्रतापगढ़ (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(12) मुनि श्री शुद्धसागरजी
पूर्व नाम : सुभाषचंद शाह
जन्म स्थान : चोपड़ा (महाराष्ट्र)
जन्म तिथि : 14.2.1949
मुनि दीक्षा : 7.12.2016
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(13) मुनि श्री समृद्धसागरजी
पूर्व नाम : नानालालजी नश्नावत
जन्म स्थान : लोहारिया
जन्म तिथि : 7.8.1944
मुनि दीक्षा : 7.12.2016/खमेरा (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(14) मुनि श्री सक्षमसागरजी
पूर्व नाम : महावीर डागरिया
जन्म स्थान : पारसोला (राज.)
जन्म तिथि : 15.12.1958
मुनि दीक्षा : अश्विन शुक्ला 11, सन् 2017/
उदयपुर (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(15) मुनि श्री सर्वार्थसागरजी
पूर्व नाम : सतीशचंद जैन
जन्म स्थान : दिल्ली
जन्म तिथि : 28 जून 1959
मुनि दीक्षा : अश्विन शुक्ला 11, सन् 2017/
उदयपुर (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(16) मुनि श्री सुधीन्द्रसागरजी
पूर्व नाम : श्रीपाल जैन
जन्म स्थान : चीबोड़ा, उदयपुर (राज.)
जन्म तिथि : 15.11.1965
मुनि दीक्षा : 20.4.2018/उदयपुर (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्त पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(17) मुनि श्री सुधीरसागरजी
पूर्व नाम : अशोक जमादार
जन्म स्थान : ललितपुर (उ.प्र.)
जन्म तिथि : 31.12.1946
मुनि दीक्षा : 20.4.2018/उदयपुर (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(18) मुनि श्री सुमंत्रसागरजी
पूर्व नाम : बा.ब्र. विशाल जैन
जन्म स्थान : भिण्ड (म.प्र.)
जन्म तिथि : 2 जुलाई 1992
मुनि दीक्षा : 9.11.2018/गाँधीनगर (गुजरात)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(19) मुनि श्री सुयत्नसागरजी
पूर्व नाम : बा.ब्र. विशाल डोटिया
जन्म स्थान : मुंबई (महाराष्ट्र)
जन्म तिथि : 16.1.1981
मुनि दीक्षा : 9.11.2018/गाँधीनगर (गुजरात)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(20) मुनि श्री सुध्यानसागरजी
पूर्व नाम : सतीश जैन
जन्म स्थान : पिपलगाँव (महा.)
जन्म तिथि : फाल्गुन सुदी 15, सन् 1952
क्षुल्लक दीक्षा : 20.4.2018/उदयपुर (राज.)
मुनिदीक्षा : 7.12.2019/बाँसवाड़ा (राज.)
नाम : मुनिश्री सुध्यानसागरजी महाराज
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(21) मुनि श्री सुज्ञेयसागरजी
पूर्व नाम : देवीलाल खेड़ावत
जन्म स्थान : जल्लारा (राज.)
जन्म तिथि : 11.11.1951
क्षुल्लक दीक्षा : 10.2.2019/गिरनारजी
क्षुल्लक : शैलेन्द्र सागरजी
मुनि दीक्षा : 7.12.2019/बाँसवाड़ा (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(22) मुनि श्री समर्थसागरजी
पूर्व नाम : सुखलाल जैन
जन्म स्थान : लोहारिया (राज.)
जन्म तिथि : 15.11.1949
ऐलक दीक्षा : 9.5.2019/वागोल, कुशलगढ़ (राज.)
नाम : ऐलकश्री समर्थसागरजी
मुनि दीक्षा : 7.12.2019/बाँसवाड़ा (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(23) मुनि श्री सुध्येयसागरजी
पूर्व नाम : ब्र. नागराज चंद्रप्पा
जन्म स्थान : वीरापुर (कर्नाटक)
जन्म तिथि : सन् 1964
मुनि दीक्षा : 7 दिसंबर 2019
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

आर्यिका

(1) आर्यिकाश्री सूत्रमति माताजी
पूर्व नाम : सुधा जैन
जन्म स्थान : केकड़ी (राज.)
जन्म तिथि : 1 जनवरी 1957
आर्यिका दीक्षा : 13 नवंबर 2008/
कचनेर (महाराष्ट्र)
दीक्षा गुरु : आचार्य श्री सिद्धांतसागरजी

(2) आर्यिकाश्री सुकालमति माताजी
पूर्व नाम : कंचनदेवी
जन्म स्थान : दिल्ली
जन्म तिथि : 1939
आर्यिका दीक्षा : वैशाख सुदी 10, सन् 2010/
कुंजवन (महाराष्ट्र)
दीक्षा गुरु : तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी

(3) आर्यिकाश्री श्रुतमति माताजी
पूर्व नाम : बा.ब्र. रसिका जैन बिरनाले
जन्म स्थान : गणेशवाड़ी (महाराष्ट्र)
जन्म तिथि : 3.2.1988
आर्यिका दीक्षा : 18.12.2011/
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(4) आर्यिकाश्री सुधर्ममति माताजी
पूर्व नाम : अनूप देवी गंगवाल
जन्म स्थान : जयपुर (राज.)
जन्म तिथि : सन् 1938
आर्यिका दीक्षा : श्रावण सुदी 6,
सन् 2010/कोल्हापुर (महाराष्ट्र)
दीक्षा गुरु : तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी

(5) आर्यिकाश्री आद्यमति माताजी
पूर्व नाम : ताराबाई जैन
जन्म स्थान : नाचनवेल
जन्म तिथि : सन् 1960
आर्यिका दीक्षा : 7.12.2013/अंकली (महाराष्ट्र)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(6) आर्यिकाश्री आर्षमति माताजी
पूर्व नाम : पुष्पा गोवाड़िया
जन्म स्थान : मंदसौर (म.प्र.)
जन्म तिथि : 10.11.1949
आर्यिका दीक्षा : 7.12.2013/अंकली (महाराष्ट्र)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(7) आर्यिकाश्री आराध्यमति माताजी
पूर्व नाम : बा.ब्र. कीर्ति दीदी
जन्म स्थान : आडूल (महाराष्ट्र)
जन्म तिथि : 8.12.1985
आर्यिका दीक्षा : 7.12.2013/अंकली (महाराष्ट्र)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(8) आर्यिकाश्री आकाशमति माताजी
पूर्व नाम : अनिता पाटिल
जन्म स्थान : अथनी (कर्नाटक)
जन्म तिथि : 15.6.1957
आर्यिका दीक्षा : 7.12.2013/अंकली (महाराष्ट्र)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(9) आर्यिकाश्री अद्वैतमति माताजी
पूर्व नाम : गायत्रीदेवी राणा
जन्म स्थान : नसीराबाद (राज.)
जन्म तिथि : 14.11.1950
आर्यिका दीक्षा : 9.2.2015/रीछा (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलासगरजी

(10) आर्यिकाश्री सुदृढ़मती माताजी
पूर्व नाम : बा.ब्र. निधि शाह
जन्म स्थान : हिम्मतनगर (गुजरात)
जन्म तिथि : 13.10.1984
आर्यिका दीक्षा : चैत्र शुक्ल 13, 2017
सन् 2017/प्रतापगढ़ (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(11) आर्यिकाश्री सुस्वरमति माताजी
पूर्व नाम : बा.ब्र. भूमि शाह
जन्म स्थान : बड़ौदा (गुजरात)
जन्म तिथि : 10.11.1991
आर्यिका दीक्षा : चैत्र शुक्ला 13, सन् 2017/
प्रतापगढ़ (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(12) आर्यिकाश्री सुविज्ञमति माताजी
पूर्व नाम : बा.ब्र. सारिका दीदी
जन्म स्थान : नरडाणा (महाराष्ट्र)
जन्म तिथि : 15.5.1982
आर्यिका दीक्षा : चैत्र शुक्ला 13, सन् 2017/
प्रतापगढ़ (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(13) आर्यिकाश्री सुप्रज्ञमति माताजी
पूर्व नाम : बा.ब्र. प्रियंका दीदी
जन्म स्थान : मुंगाणा (राज.)
जन्म तिथि : 18.10.1992
आर्यिका दीक्षा : चैत्र शुक्ला 13, सन् 2017/
प्रतापगढ़ (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(14) आर्यिकाश्री अनघमति माताजी
पूर्व नाम : सरोज बण्डी
जन्म स्थान : प्रतापगढ़ (राज.)
जन्म तिथि : 1 जनवरी 1956
आर्यिका दीक्षा : 1.10.2017/उदयपुर (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(15) आर्यिकाश्री अनर्घ्यमति माताजी
पूर्व नाम : उर्मिला जैन
जन्म स्थान : ईडर (गुजरात)
जन्म तिथि : 15.8.1942
आर्यिका दीक्षा : 1.10.2017/उदयपुर (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलागरजी

(16) आर्यिकाश्री शुद्धमति माताजी
पूर्व नाम : शांति जैन
जन्म स्थान : गोटेगाँव
जन्म तिथि : 10.8.1947
आर्यिका दीक्षा : 20.4.2018/उदयपुर (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

ऐलक

(1) ऐलक सुतत्वसागरजी

पूर्व नाम : गेहरीलाल चित्तौड़ा
जन्म स्थान : जावद (राज.)
जन्म तिथि : 7.5.1953
क्षुल्लक दीक्षा : 10.2.2019/गिरनारजी
क्षुल्लक नाम : क्षुल्लक शैलेष सागरजी
ऐलक दीक्षा : 7.12.2020/बाहुबली कॉलोनी, बांसवाड़ा (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

क्षुल्लक

(1) क्षुल्लक श्री विजयंत सागरजी
पूर्व नाम : वीरेन्द्र जैन
जन्म स्थान : गोरल (गुजरात)
जन्म तिथि : 24.4.1955
क्षुल्लक दीक्षा : 23.10.2015/प्रतापगढ़ (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(2) क्षुल्लक श्री जयंतसागरजी
पूर्व नाम : कैलाश झांझरी
जन्म स्थान : जयपुर (राज.)
जन्म तिथि : 24.11.1941
क्षुल्लक दीक्षा : 23.10.2015/प्रतापगढ़
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(3) क्षुल्लक श्री सुस्थिरसागरजी
पूर्व नाम : अरविन्द कुमार सिंघवी
जन्म स्थान : नरोड़ा (गुजरात)
जन्म तिथि : 29.9.1931
क्षुल्लक दीक्षा : 7.8.2016
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(4) क्षुल्लक श्री सुमित्रसागरजी
पूर्व नाम : बा.ब्र. सन्मति जैन
जन्म स्थान : बांसवाड़ा
जन्म तिथि : 11 नवंबर 1977
क्षुल्लक दीक्षा : 9.3.2017/मुंगाणा (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(5) क्षुल्लक श्री सुहृदसागरजी
पूर्व नाम : माणकचंदजी
जन्म स्थान : नरवाली (राज.)
जन्म तिथि : 1938
क्षुल्लक दीक्षा : चैत्र शुक्ला 13, सन् 2017/
प्रतापगढ़ (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(6) क्षुल्लक श्री सुखदसागरजी
पूर्व नाम : भागचंदजी सेठ
जन्म स्थान : तिगोड़ा (म.प्र.)
जन्म तिथि : 1951
क्षुल्लक दीक्षा : चैत्र शुक्ला 13, सन् 2017/
प्रतापगढ़ (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(7) क्षुल्लक श्री भट्टारक जिनसेन स्वामी
पूर्व नाम : बा.ब्र. सम्मेद जैन
जन्म स्थान : उदगाँव, कुंजवन (महा.)
जन्म तिथि : 14 अप्रैल 1998
शिक्षा गुरु : 7 प्रतिमा, आचार्यश्री सुनीलसागरजी
क्षुल्लक दीक्षा : 15.12.2018
पट्टाभिषेक : 25.1.2019/आचार्यश्री देवसेनजी

(8) क्षुल्लक श्री सत्वसागरजी
पूर्व नाम : कांतिलालजी धीरावत
जन्म स्थान : बाँसवाड़ा (राज.)
जन्म तिथि : 6.9.1939
प्रतिमा : सात प्रतिमा/आचार्यश्री सुनीलसागरजी
क्षुल्लक दीक्षा : 20.1.2020/बाँसवाड़ा (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(9) क्षुल्लक श्री समत्वसागरजी
पूर्व नाम : हेमंत गाँधी
जन्म स्थान : दलानी मुवाड़ी (गुजरात)
जन्म तिथि : 9.2.1952
क्षुल्लक दीक्षा : 02.07.2020/बगवास- प्रतापगढ़/
त्रिमूर्ति पंचबालयति तीर्थ
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(10) क्षुल्लक श्री सम्पूज्यसागरजी
पूर्व नाम : पारसमलजी टिमरूवा
जन्म स्थान : साकरोदा, उदयपुर (राज.)
जन्म तिथि : 29.9.1958
प्रतिमा : दो प्रतिमा/12 मार्च 2015
क्षुल्लक दीक्षा : 26.7.2020/बगवास (प्रतापगढ़)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(11) क्षुल्लक श्री संप्रज्ञसागरजी
पूर्व नाम : रोहित बेड़ा
जन्म स्थान : रीछा, डूंगरपुर (राज.)
जन्म तिथि : 30.9.2000
क्षुल्लक दीक्षा : 21.7.2020/बगवास, प्रतापगढ़ (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(12) क्षुल्लक श्री सम्विज्ञ सागरजी
पूर्व नाम : मनीष शाह
जन्म स्थान : इंदौर (म.प्र.)
जन्म तिथि : 7.3.1985
क्षुल्लक दीक्षा : 26.7.2020/बगवास (प्रतापगढ़)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

क्षुल्लिका

(1) क्षुल्लिका श्री संदेशमतिजी
पूर्व नाम : राजीबाई जैन
जन्म स्थान : खेरोड (राज.)
जन्म तिथि : सन् 1940
क्षुल्लिका दीक्षा : 19.1.2005/कुलथाना (राज.)
दीक्षा गुरु : तपस्वी सम्राट आचार्य सन्मतिसागरजी

(2) क्षुल्लिका श्री अमेयमतिजी
पूर्व नाम : मीना जैन
जन्म स्थान : बड़नगर (म.प्र.)
जन्म तिथि : 1935
क्षुल्लिका दीक्षा : 29.1.2012/मुंबई
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(3) क्षुल्लिका श्री अमलमतिजी
पूर्व नाम : ताराबहन दोशी
जन्म स्थान : नवा (गुजरात)
जन्म तिथि : 1942
क्षुल्लिका दीक्षा : 17.2.2012
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(4) क्षुल्लिका श्री अमोहमतिजी
पूर्व नाम : देवकी
जन्म स्थान : व्यवहारी (म.प्र.)
जन्म तिथि : 1945
क्षुल्लिका दीक्षा : 2.6.2014/मांगीतुंगी (महा.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(5) क्षुल्लिका श्री अभेदमतिजी
पूर्व नाम : सूरजदेवी
जन्म स्थान : मेन्दवास (राज.)
जन्म तिथि : 1942
क्षुल्लिका दीक्षा : 9.2.2015/रीछा (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(6) क्षुल्लिका श्री अटलमतिजी
पूर्व नाम : मंजुला
जन्म स्थान : कुशलगढ़ (राज.)
जन्म तिथि : 1.1.1945
क्षुल्लिका दीक्षा : 7.12.2016/खमेरा (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(7) क्षुल्लिका श्री अनुजमतिजी
पूर्व नाम : कमला दोशी
जन्म स्थान : मनासा
जन्म तिथि : 1934
क्षुल्लिका दीक्षा : 14.12.2016/खमेरा (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(8) क्षुल्लिका श्री अजेयमतिजी
पूर्व नाम : भारती दीदी
जन्म स्थान : पिंपलदरि (महा.)
जन्म तिथि : 1953
क्षुल्लिका दीक्षा : 9.4.2017/प्रतापगढ़ (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(9) क्षुल्लिका श्री शुद्धात्ममतिजी
पूर्व नाम : सरोज जैन
जन्म स्थान : चोपड़ा (महा.)
जन्म तिथि : 12.3.1959
क्षुल्लिका दीक्षा : 20.4.2018/उदयपुर (राज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(10) क्षुल्लिका श्री सज्ज्ञानमतिजी
पूर्व नाम : सज्जन देवी ज्ञानचंद मिंडा
जन्म स्थान : प्रतापगढ़ (राज.)
जन्म तिथि : 24.4.1936
क्षुल्लिका दीक्षा : 9.11.2018/गाँधीनगर (गुज.)
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(11) क्षुल्लिका श्री सुनेमिमतिजी
पूर्व नाम : मंगला जैन
जन्म स्थान : इंदौर (म.प्र.)
जन्म तिथि : 4.5.1968
क्षुल्लिका दीक्षा : 10.2.2019/गिरनारजी
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

(12) क्षुल्लिका श्री अमोघमतिजी
पूर्व नाम : उमा जैन
जन्म स्थान : जगाड़ी
क्षुल्लिका दीक्षा : 14.2.2013
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी
आर्यिका दीक्षा : आचार्य श्री देवनंदीजी से ग्रहण की

(13) क्षुल्लिका शर्मिष्ठमतिजी
क्षुल्लिका दीक्षा : 6.1.2019
दीक्षा गुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी
आर्यिका दीक्षा-समाधि : गणिनी आर्यिकाश्री शुभमतिजी के सान्निध्य में आर्यिका दीक्षा
समाधि : 9.1.2019/ गिरनारजी

(14) क्षुल्लिका अचलमतिजी
पूर्व नाम : सोहनदेवी इंदरमलजी गाँधी
जन्म स्थान : मनासा (मन्दसौर) म.प्र.
क्षुल्लिका दीक्षा : 4.4.2012
दीक्षागुरु : चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी

आचार्य श्री के निर्यापकत्व में समाधिस्थ साधक

(1) मुनि श्री समाधिसागरजी
पूर्व नाम : धन्यकुमार भोमाज
दीक्षा : 11 नवंबर 2007
समाधि : 2008/सोलापुर में चातुर्मास के बाद

(2) मुनि श्री सतसागरजी
पूर्व नाम : ज्ञानचंद मिंडा
जन्म : 18.12.1927
क्षु. दीक्षा : 30.3.2006
मुनि दीक्षा-समाधि : 10.7.2011/मुंबई (महाराष्ट्र)

(3) मुनि श्री सुभव्यसागरजी
जन्म : वैशाख वदी अमावस्या वि.सं. 1987
क्षुल्लक दीक्षा : आषाढ़ सु. 13, सन् 2008
मुनि दीक्षा : 8.8.2011/मुंबई
समाधि : 9.9.2013/इचलकरंजी

(4) मुनि श्री शुद्धात्मसागरजी
पूर्व नाम : ब्र. विनोद शाह
जन्म : तलोद
मुनि दीक्षा : मोक्ष सप्तमी 2012/कुंजवन
समाधि : 25 जुलाई 2013/अंकली (महा.)

(5) मुनि श्री सत्यम्सागरजी
जन्म : 18.3.1925
मुनि दीक्षा : श्रावण शुक्ला पूर्णिमा 2013
समाधि : उत्तम तप के दिन भाद्रपद माह 2013/
अंकली (महा.)

(6) मुनि श्री सुबुद्धसागरजी
जन्म : 2.4.1931
मुनि दीक्षा : 18.11.2010/कोल्हापुर
समाधि : 29.1.2015/
बही पार्श्वनाथ (म.प्र.)

(7) मुनि श्री सुदृढ़सागरजी
पूर्व नाम : झमकलालजी मुंगाणा
क्षुल्लक दीक्षा : 24.9.2016/सागवाड़ा
मुनि दीक्षा-समाधि : 29.9.2016/सागवाड़ा

(8) मुनि श्री शीलसागरजी
जन्म : 28.2.1937/घाटोल
क्षुल्लक दीक्षा : 27.10.1982/राणापुर (म.प्र.)
मुनि दीक्षा-समाधि : 25.9.2016/बांसवाड़ा

(9) मुनि श्री संभ्रान्तसागरजी
पूर्व नाम : नानालाल बोरा, डूंगरपुर
जन्म : 30.7.1929
क्षुल्लक दीक्षा : 1.10.2007/उदयपुर
मुनि दीक्षा-समाधि : 22.10.2017/उदयपुर

(10) मुनि श्री सुतपसागरजी
जन्म : 3 अगस्त 1942
क्षुल्लक दीक्षा : 21.2.2018/उदयपुर
मुनि दीक्षा-समाधि : 10.4.2018/उदयपुर

(11) मुनि श्री सार्थकसागरजी
पूर्व नाम : नाथूलाल नावड़िया, मुंबई
जन्म : 23.4.1950
क्षुल्लक दीक्षा : श्रावण कृष्ण 9 सन् 2018/गाँधीनगर
मुनि दीक्षा-समाधि : 27.10.2018/गाँधीनगर (गुजरात)

(1) आर्यिका अभिन्नमतिजी
जन्म : 1940/पारसोला
क्षुल्लिका दीक्षा : 11.2.2015/रीछा
आर्यिका दीक्षा-समाधि : 31.3.2015/पारसोला

(2) आर्यिका सम्यक्त्वमतिजी
जन्म : 1940/कुलथाना
क्षुल्लिका दीक्षा : 19.1.2005
आर्यिका दीक्षा-समाधि : 28.5.2016/सागवाड़ा

(3) आर्यिका दर्शनमतिजी
35 साल साधना की
समाधि : 3.10.2017/उदयपुर

(4) आर्यिकाश्री स्वास्थ्यमतिजी
जन्म : श्रावण शुक्ल सप्तमी
क्षुल्लिका दीक्षा : 12.8.2008
आर्यिका दीक्षा-समाधि : 26.9.2017/उदयपुर

(5) आर्यिकाश्री अमूर्तमतिजी
जन्म : 1936
क्षुल्लिका दीक्षा : 1.10.2019/उदयपुर
आर्यिका दीक्षा : 13.11.2017/उदयपुर
समाधि : 16.11.2017/उदयपुर

(6) आर्यिका संयममतिजी
जन्म : 15.7.1930
क्षुल्लिका दीक्षा : माघ सुदी 7, सन् 2005
आर्यिका दीक्षा : 15.8.2010
समाधि : 6.1.2018/उदयपुर

(1) क्षुल्लक सम्मेदसागरजी
जन्म : 1930
क्षुल्लक दीक्षा : 29 सितंबर 2016/बांसवाड़ा
समाधि : 4.10.2016/बांसवाड़ा

(1) क्षुल्लिका अचलमतिजी
जन्म : 11.6.1932/क्षुल्लिका दीक्षा : 4.4.2012
समाधि : 2019/उदयपुर

(2) क्षुल्लिका अंकलीमतिजी
क्षुल्लिका दीक्षा-समाधि : 2013/अंकली

(3) क्षुल्लिका सुप्रभामतिजी
क्षुल्लिका दीक्षा-समाधि : 27.1.2014/नातेपुते

(4) क्षुल्लिका सुजिनमतिजी
क्षुल्लिका दीक्षा : 8.2.2014/समाधि : 2014/नातेपुते

(5) क्षुल्लिका सुदृढ़मतिजी
क्षुल्लिका दीक्षा : 25.4.2014/एलोरा
समाधि : जून 2014/एलोरा

(6) क्षुल्लिका सुधन्यमतिजी
क्षुल्लिका दीक्षा : धनतेरस 2014
समाधि : कार्तिक कृष्ण अमावस्या 2014/सूरत

(7) क्षुल्लिका अदेहमतिजी
पूर्व नाम : रसना राकेश जैन
क्षुल्लिका दीक्षा : 4.11.2014
समाधि : 30.11.2014/कतारगाँव (सूरत)

(8) क्षुल्लिका अग्रजमतिजी
जन्म : 10.1.1942
क्षुल्लिका दीक्षा : 14.12.2016/खमेरा
समाधि : 1.1.2017/घाटोल

(9) क्षुल्लिका धैर्यश्रीमतिजी
समाधि : 25.11.2018/गिरनार

(10) क्षुल्लिका शर्मिष्ठामतिजी
मुंबई निवासी शर्मिष्ठाबेन की गिरनारजी
में 8.1.2018 को समाधि

(11) क्षुल्लिका अमलमतिजी
पूर्व नाम : तारा बहन रतीलाल दोशी
जन्म : 1942, नवा (गुजरात)
दीक्षा : 17.2.2012
समाधि : 13 सितंबर 2019, सागवाड़ा
गुरु : आचार्यश्री सुनीलसागरजी

(12) क्षुल्लिका अमेयमतिजी
पूर्व नाम : मीना/कैलाशचंद जैन
जन्म : 1935, बड़नगर (मध्यप्रदेश)
दीक्षा : 29.1.2012
समाधि : 15.9.2019, सागवाड़ा (राज.)
गुरु : आचार्यश्री सुनीलसागरजी

आचार्य श्री द्वारा प्रदत्त आचार्य पद

(1) आचार्य श्री सुबलसागरजी
पूर्व नाम : बा.ब्र. विवेक जैन
जन्म स्थान : भिण्ड (म.प्र.)
जन्म दिनांक : 14 सितंबर 1976
मुनि दीक्षा : 7.12.2010/कोल्हापुर
दीक्षा गुरु : तपस्वी सम्राट आ. सन्मतिसागरजी
आचार्य पद : 1.1.2018 उदयपुर में

आचार्य श्री द्वारा प्रदत्त गणिनी पद

(1) गणिनी आर्यिका श्री शुभमतिजी
पूर्व नाम : निधि दोषी
जन्म स्थान : लासुर्णे
जन्म दिनांक : 1976
आर्यिका दीक्षा : 21.5.2010
दीक्षा गुरु : तपस्वी सम्राट आ. श्री सन्मतिसागरजी
गणिनी पद : 26.12.12, आचार्यश्री द्वारा

संघस्थ ब्रह्मचारिणी बहनें

1. बा.ब्र. अमृता बहनजी (7 प्रतिमा), अड़ूल
2. बा.ब्र. श्वेता बहनजी (7 प्रतिमा), पारसोला
3. बा.ब्र. प्रियंका (मोना) बहनजी (7 प्रतिमा), अड़ूल
4. बा.ब्र. पूर्णिमा बहनजी (2 प्रतिमा), अड़ूल
5. बा.ब्र. सलोनी बहनजी (2 प्रतिमा), घाटोल
6. बा.ब्र. प्रज्ञा (हीना) बहनजी, मुम्बई
7. बा.ब्र. श्रेया बहनजी, संतरामपुर
8. बा.ब्र. आशा बहनजी, ईडर

संघस्थ ब्रह्मचारी भैयाजी

1. बा.ब्र. विजय भैयाजी (7 प्रतिमा), तिगौड़ा
2. बा.ब्र. अरविंदजी गाँधी, मुम्बई
3. बा.ब्र. शुभम भैयाजी, मुम्बई
4. बा.ब्र. उमंग भैयाजी, सागवाड़ा
5. बा.ब्र. परेश भैयाजी

प्रशस्ति गान

(1)

यहाँ किसी के जीवन की संध्या में सूरज उगता है।
और किसी का बचपन ही प्रभात संयम का बनता है।
बन 'सुनील' 'संदीप' सहस्त्रों बुझे दीप तुम जला रहे।
'मुन्नी' का इक लाल भाल लख पर तिलक बन तनता है।

(2)

बचपन में विरक्ति का बीज मृदा मन में जो वपन हुआ।
खाद पानी 'वर्णीशाला' का पा पाकर अंकुरित हुआ।
यौवन में नाजुक तना नभ की ऊँचाई छूने को।
जिन प्रव्रज्या पाने वह सन्मति द्वारे जा खड़ा हुआ।

(3)

वीर जयंति के शुभ दिन वीरत्व प्राप्ति पथ चरण रखे।
संयम शील तपस्या और त्याग मग बढ़े कभी न रुके।
दिन में सूरज और रातभर दीपक बन जलते रहते।
'मुक्ति पथ' के राही 'अग्निपथ' से डरकर नहीं रुके।

(4)

थे 'पात्र' तुम 'महापात्र' बन, परम्परा के 'पट्ट' बने।
ज्ञानार्जन कर आगम के, ज्ञानी ध्यानी उद्भट्ट बने।
निज-पर के कल्याण हेतु, तुम ज्ञान प्रकाश बिखेर रहे।
महावीर मार्ग के संचालक, इस युग के अकलंक बने।

(5)

धन्य धन्य 'सन्मति' सपूत हैं धरा धन्य तुमको पाकर।
जीवन धन्य किया 'रत्नत्रय' की आभा से चमकाकर।
समय शिला पर चरणांकित कर दिए 'सुनील' सुपथ देने।
सत्य अहिंसा शांति की सरि लहरा दी भू पर आकर।

(6)

संयम का पथ कठिन किंतु यह शिवसुख देने वाला है।
जन्म जरा मृत्यु के चिर दुःखों को हरने वाला है।

मुक्ति लक्ष्य के समरांगण में अंतिम क्षण तक डटे रहो।
यह विरक्ति का पथ मुक्ति मंजिल पहुँचाने वाला है।

(7)

शत शत शरद मिले तुमको जीवन शतदल यह खिला रहे।
उषा के प्रभात उत्सव से जीवन सारा भरा रहे।
'सुनील' तेरी वाणी की गंगा वसु कण-कण पावन करती।
अध्यात्म के पूर्णचन्द्र यों ही ज्ञानामृत झरा करे।

बूँद की व्यथा

करती है 'सरोज' वंदन गुरु तुमको बारम्बार।
चरण पकड़ कर अरज करे करना बेड़ा पार।।1।।
जग दुःखों से दुःखी जगत के तारण तरण जहाज।
'महाविज्ञ' इससे उस तट ना छूटे तेरा साथ।।2।।
'सुनील सिंधु' तेरी उदारता की ना कोई थाह।
हे! असीम रत्नत्रय निधि है तुझमें भरी अथाह।।3।।
सात समन्दर की मसि कर गुण गीत लिखे नहीं जाय।
कितने भी कारज करलूँ पर कथा कही नहीं जाय।।4।।
कथा करूँ पूरी कैसे? मिलता ना कोई उपाय।
कितने किये जतन पर कोई जतन न आया काम।।5।।
भरा 'कुम्भ' ना जतन रहे मेरे सारे निष्काम।
चरण चक्रमण में चिन्तन तेरा चलता अविराम।।6।।
जीवनगाथा लिखने का संकल्प हुआ ना पूर्ण।
क्षमा चाहती खेद सहित यह गाथा रही अपूर्ण।।7।।
तुम गतिशील दीनमति मेरी मुझमें तुममें फर्क।
मैं धरती की धूल और तुम धरा-गगन के अर्क।।8।।
'पीड़ा' से पीड़ित होकर के आयी तेरे द्वार।
'पीड़ा' है तेरे गुणों का पा ना पाई पार।।9।।
'पीर पराई' पीने वाले कर देना इक काम।
जग से जाते समय होठ पर हो 'सन्मति' का नाम।।10।।
अर्पित कथा अधूरी है सन् दो हजार उन्नीस।
मंगल का मंगल दिन रहा रही तारीख बावीस।।11।।
मंगल को मंगल करती 'मंगल गाथा' का लेख।
मंगलमूरति के मंगल कामों का यह आरेख।।12।।
जग पर गुरु के उपकारों का है इसमें उल्लेख।

पढ़े सुने जो उसकी बदले 'कथा' भाग की रेख।।13।।
'महा मांगलिक' करने वाले है तेरे सब काज।
गूंज रहे चहुँओर तेरे ही जयकारों के नाद।।14।।
मंगलमय जीवन हो तेरा मंगल पल-छिन-दिन।
बजती रहे तेरे संदेशों की जन मंगल की बीन।।15।।
अपने संग हजारों का पथ सुपथ किया तुमने।
नहीं किसी से बदले में कुछ कभी लिया तुमने।।16।।
चुन-चुन गुरु गुण पुष्पों से गूंथी है यह गुणमाल।
इसी बहाने गुरु सत्संग से हो गई यह मणिमाल।।17।।
'महाविज्ञ' जीवन बगिया से चुन लेना दो फूल।
'मुक्ति महाफल' मिल जाए मिट जाए भव के शूल।।18।।
सदा रहे गुरु आशीषों का छप्पर तेरे शीष।
मिलता रहे हमें भी तेरा गुरुवर शुभ आशीष।।19।।
जगमंगल करने वाले तेरे मंगल की चाह।
रुके कदम मुक्ति मंजिल पर है 'सरोज' की चाह।।20।।
सूरज चंदा से भी ऊँचा रहे 'सुनील' का नाम।
धर्म ध्वजा फहराने वाले आठों याम प्रणाम।।21।।

वंदन

जग सर के 'सरोज' नत-नत सब तेरा वंदन करते हैं।
'युगनायक' युगसर्जक तेरा, झुक अभिनंदन करते हैं।
युगों-युगों के बाद जनमता शांति सुपथ दर्शक कोई।
युग-युग ऐसे सुनील सिंधु युग उर चिरामृत रहते हैं।

परंपरा का वृक्ष

जिन गुरुओं का था अकाल, 'आदिसागर' अवतरित हुए।
परंपरा संवाहक बन 'महावीरकीर्ति' गुरु खड़े हुए।
परंपरा की डोर उन्होंने 'सन्मतिसागर' को सौंपी।
गुरु आदेश पा 'सुनील' 'सारथी' उस रथ के हैं बने हुए।।1।।
संयम के रथ में सवार होने मुमुक्षु कितने आते।
धर्म साधना गुरु निश्रा में, कर निहाल वे हो जाते।
परंपरा का वंश वृक्ष अति सघन सुदृढ़ होता जाए।
ऐसे 'श्रमण साधकों' से तरु, फल फूलों से लद जाते।।2।।
'अंकलीकर' की परंपरा पर, सधे हुए कदमों से चल।
पट्टाचार्य सुनील फहराते, दिग्दिगंत इसकी परचम।

‘पाना नहीं बदलना’ जीवन एक साधना इनकी है।
‘मन मन्दिर’ बन जाए सबका, कहते सच्चा यही धरम।।3।।
‘वीर’ नाम जपने से कोई नहीं ‘वीर’ बन जाता है।
कुन्द कुन्द रटने से कुन्द कुन्द का गुण नहीं आता है।
संयम त्याग तपस्या की पावक में जो कुंदन होते।
समयसार का सार आत्मसात ‘वह’ ही कर पाता है।।4।।
निज पर का जीवन निशिबासर समयसार से बना रहे।
कंटकमय पथ निष्कंट करने पाप-कषाय बुहार रहे।
‘महाव्रती’ ‘सुनील’ कितनों को बना रहे हैं ‘महाव्रती’।
पर पीड़ा में पिघल मोम से, उर की करुणा लुटा रहे।।5।।

महाविज्ञ

सन्मतिसागर ने दिया, तेरे कांधे भार।
भार वहन से आ रहा, कांधों पर उभार।।1।।
साथ संघ लेकर चले ‘सुनील’ हृदय उदार।
सबके हित में हित मेरा, ऐसा सरल विचार।।2।।
नर-नारी में भेद ना, रहा संघ सुविशाल।
सरस्वती का भर रहे, सब हिलमिल भंडार।।3।।
सबको लेकर चल रहे, बालक वृद्ध जवान।
फूल कली या अधखिली,इक ‘माँ’ की संतान।।4।।
फूल अनेकों से गूंथी, जाती है फूलमाल।
पुष्प माल पाकर हुआ, सारा विश्व खुशाल।।5।।
बंधे सूत्र में पुष्प जब, हृदय शोभते हार।
अलग सूत्र से जो हुए, सूखे या बेकार।।6।।
संघ शक्ति को देखकर, है समाज को नाज।
धर्मक्षेत्र में गूंजता, ‘सुनील संघ’ का नाद।।7।।
‘सुनील’ तव नेतृत्व को, सौ सौ बार प्रणाम।
अंकलीकर की परंपरा, का हो रहा है नाम।।8।।
बैठ स्वर्ग में देखकर, खुश है गुरुगण आज।
‘महाविज्ञ’ ‘सुनील’ के, हाथों ‘धर्म जहाज’।।9।।
‘सर्वोदय’ की भावना, उर सरिता की धार।
है ‘सरोज’ की चाह बस, बहे रुके न प्रवाह।।10।।

<u>लेखिका परिचय</u>

श्रीमती सरोज शाह



मध्यप्रदेश के आदिवासी अंचल झाबुआ जिले के रानापुर में 4 मार्च 1949 को माता श्रीमती चन्द्रकांता देवी एवं पिता श्री कांतिलालजी (श्रावक श्रेष्ठी) के घर जन्मी श्रीमती सरोज शाह (जैन) (धर्मपत्नी स्व. श्री गेन्दालालजी शाह, कुशलगढ़ राज.) निवासी इंदौर (म.प्र.) ने गद्य व पद्य विधा में कई कृतियाँ लिखी हैं। राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त लेखिका, धर्म, संस्कृति, शिक्षा व समाज सेवा के लिए समर्पित, कई पुरस्कारों व सम्मानों से सम्मानित, जैन समाज इंदौर की सशक्त हस्ताक्षर एवं मौन साधिका हैं। सारस्वत साधना की धनी श्रीमती सरोज शाह ऐसी प्रतिभावान व स्थापित साहित्यकार हैं जो अपने अथक प्रयत्नों से भगवान महावीर के दर्शन, चिंतन व सिद्धांतों को अपनी गद्य व पद्य रचनाओं के माध्यम से बड़ी रोचक व सहज ग्राह्य शैली में विगत कई वर्षों से लगातार प्रस्तुत करती आ रही हैं। संतों की जीवन गाथा लिखने में माहिर, आपकी रचनाओं को पाठकगण हाथोंहाथ लेते रहे हैं। विद्वत् गोष्ठियों में आपकी चर्चा व प्रशंसा लगातार होती रहती है। जैन दर्शन, चिन्तन व सिद्धांतों को जन-जन तक पहुँचाने और वर्तमान परिवेश में गिरते नैतिक, धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक जीवन मूल्यों की पुनर्स्थापना के लिए कई कृतियाँ लिखी हैं। गद्य व पद्य विधा में अब तक आपकी कई रचनाएँ व सैकड़ों गीत प्रकाशित हो चुके हैं।

साहित्य सृजन : कवि एवं लेखिका- साहित्य की प्रत्येक विधा पर सशक्त लेखन

गद्य विधा : लेख, निबंध, संस्मरण, कहानी, लघुकथा, पुस्तक समीक्षा, संपादन आदि। साधु-संतों, महापुरुषों का संपूर्ण जीवन वृत्त, स्क्रिप्ट लेखन, उपन्यास, नाटिका आदि।

प्रमुख गद्य रचनाएँ : एक और मुक्तिदूत, भारत गौरव राष्ट्र संत, शांतिदूत मुनिश्री पुलकसागरजी की जीवन गाथा के लिए 'माँ जिनवाणी सम्मान' सहित 'सहृदय सम्मान' से सम्मानित। अनासक्त योगी (मुनिश्री पुलकसागरजी)। आर्यिका माँ देवमती, महायोगी राजेन्द्र सूरि, प्रभात का प्रभाकर आचार्य श्री सुखमाल नंदीजी, आचार्य श्री शांतिसागरजी छाणी, उपाध्याय मुनिश्री गुप्तिसागरजी, शिखर पुरुष उपा. श्री गुप्तिसागरजी, आचार्य श्री आदिसागर अंकलीकर, सेतुबंध बाहुबली एवं चामुण्डराय, उपाध्याय मुनिश्री निजानंदसागरजी (जीवन वृत्त), 'महाविज्ञ' (दो संस्करण प्रकाशित) आचार्य आदिसागर अंकलीकर परंपरा के चतुर्थ पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी महाराज की वृहद रंगीन चित्रमय जीवन गाथा आदि अनेक रचनाएँ।

पद्य विधा : कविता, गीत, गजल, भजन, बाल गीत, देशप्रेम गीत, पूजा, आरती, खंड काव्य, महाकाव्य, नृत्य नाटिका (शास्त्रीय संगीत के लिए भी) पद्यानुवाद आदि

प्रमुख पद्य रचनाएँ : कालजयी महावीर- प्रतिनिधि रचना (अंतरराष्ट्रीय स्तर पर जैन धर्म की दस सर्वश्रेष्ठ पुस्तकों में चयनित, प्रशंसित), अंदेश्वर पार्श्वनाथ, आत्मालोचना एवं वंदना के स्वर, प्रज्ञा भक्ति (गीत), झंकार (गीत) आचार्य श्री पुष्पदंतसागरजी, ज्ञान नमन निर्झर (गद्य-पद्य विधा), आचार्य श्री आदिसागर (महाकाव्य), आचार्य श्री विद्यासागर विनयांजलि (151 पद), आचार्य श्री विद्यानंद काव्यांजलि, पथिक (खंड काव्य) दस से अधिक शतकाष्टक, माँ- खंड काव्य, नमन अर्घ- प्राकृताचार्य आचार्यश्री सुनीलसागरजी महाराज को अर्पित 500 भक्ति पद, पवन हठ राष्ट्रसंत श्री तरुणसागरजी आदि अनेक जैन आचार्यों, साधु-साध्वियों पर रचनाएँ।

अन्य : स्क्रिप्ट : ऋतु श्रृंगार, रस संसार, ऋषभ मुनिजी एवं ह्रींकारगिरि, गीत महावीरायण, माँ पद्मावती आदि।

हिन्दी पद्यानुवाद : पीयूष पयस्विनी, भक्तामर महास्तोत्र, कल्याणमंदिर स्तोत्र, बाहुबली स्तोत्र, पार्श्वनाथ स्तोत्र, शांत्याष्टक, दर्शन स्तुति, प्रश्नोत्तर रत्नमालिका, इष्टोपदेश, आत्मानुशासन, रत्नाकर पच्चीसी (गुजराती से), कई प्राकृत त्थुदी का हिन्दी पद्यानुवाद।

सम्मान-पुरस्कार : सम्मानों की श्रृंखला लंबी है, तथापि प्रमुख सम्मान इस प्रकार हैं :-

1. 'आचार्य आदिसागर अंकलीकर अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार 2019' : कृति महाविज्ञ- वृहद जीवन गाथा- चतुर्थ पट्टाचार्य आचार्यश्री सुनीलसागरजी। इसके अंतर्गत 'प्रथम गणिनी आर्यिका विजयमती त्यागी व्रती सेवा पुरस्कार' एवं 'साहित्योत्तमा' उपाधि से अलंकृत।

2 . अखिल भारतीय पुलक जनचेतना मंच एवं राष्ट्रीय महिला जागृति मंच द्वारा 'माँ जिनवाणी सम्मान'- बहुचर्चित कृति 'एक और मुक्तिदूत' जीवनगाथा आचार्य राष्ट्रसंत श्री पुलकसागरजी महाराज। इसी कृति के लिए 'सहृदय सम्मान' हूमड़ समाज स्वर्ण जयंती स्थापना इंदौर के अवसर पर। 'सर्वोच्च साहित्यिक सम्मान'- दिगम्बर जैन महासमिति इंदौर द्वारा षष्टम महावीर जयंती महोत्सव पर सन् 2014 में। 'साहित्य रत्न'- 1990 तपस्वी सम्राट अंकलीकर परम्परा के तृतीय पट्टाचार्य श्री सन्मतिसागरजी महाराज द्वारा। 'नारी रत्न' आचार्यश्री सुखमाल नंदीजी द्वारा।

3. 'महाविज्ञ' पट्टाचार्य श्री सुनीलसागरजी जीवनगाथा के लिए आचार्यश्री आदिसागर अंकलीकर अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार 2020

4. शिक्षिका होने के नाते शिक्षक दिवस पर सम्मानित

सम्प्रति : एफ-132, एम.आई.जी. कॉलोनी
इन्दौर (म.प्र.)
मो. 9425480974, 6355776321, 9537167039

पट्टाचार्य पदारोहण कुंजवन



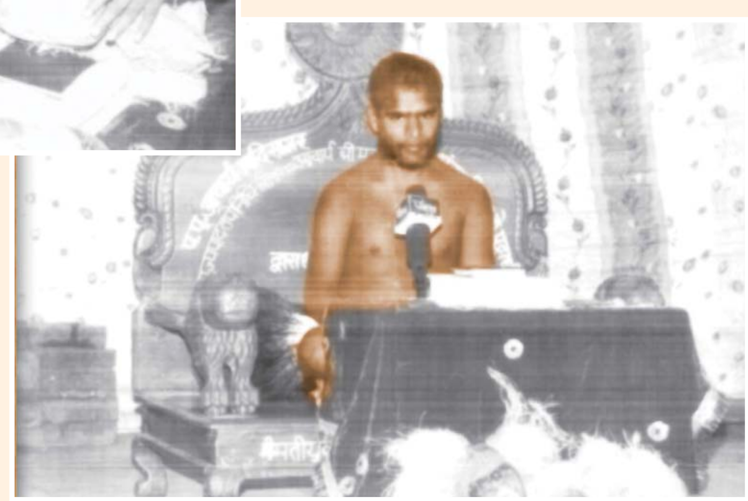
पट्टाचार्य के सिंहासन पर बैठने के लिए
आग्रह करते श्रावक श्रेष्ठी



गुरु सिंहासन को चतुर्थ पट्टाचार्य द्वारा नमन



सिंहासन पर बैठे हुए चतुर्थ पट्टाचार्य का समाज द्वारा पूजन



पट्टाचार्य पद प्राप्ति के बाद प्रथम उद्बोधन

पंचकल्याणक विधियाँ



पंचकल्याणक में आचार्यश्री सुनीलसागरजी का उद्‌बोधन



भगवान को दीक्षा देते हुए



भगवान के केशलोंच करते हुए



भगवान को पिच्छी देते हुए



अंगन्यास विधि



अंगन्यास विधि



सूरि मंत्र देते हुए





समवशरण में दीक्षा देते आचार्यश्री सुनीलसागरजी महाराज

अहिंसा पद यात्रा



अहिंसा रथ



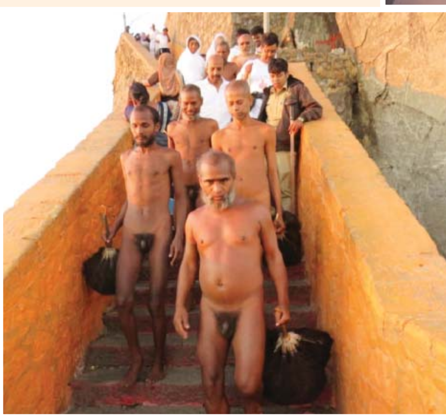
गिरनार में मंगल प्रवेश



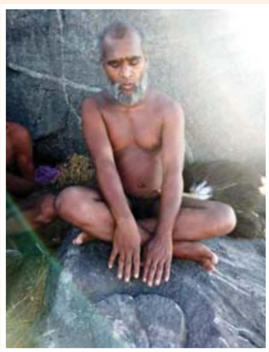
आचार्यश्री निर्मलसागरजी से मिलन



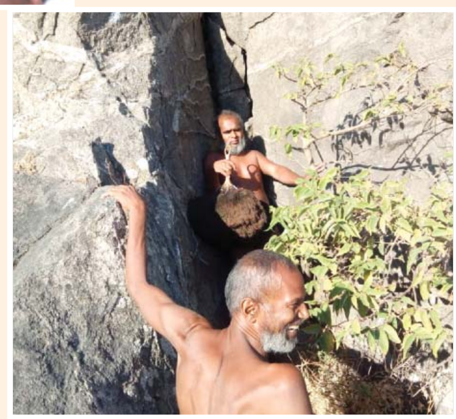
आचार्यश्री निर्मलसागरजी से चर्चा



गिरनार वंदना



चौथी टोंक पर प्रद्युम्न
स्वामी के चरण स्पर्श



चौथी टोंक के दुर्गम रास्तों से गुजरते हुए

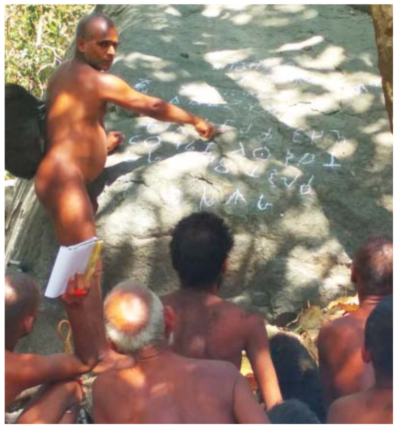


शेषावन में ध्यानस्थ आचार्यश्री



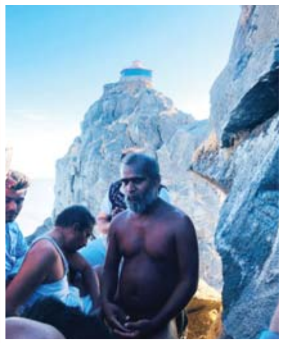
आचार्यश्री सुनीलसागरजी गिरनारजी की पाँचवीं टोंक दिखाते हुए

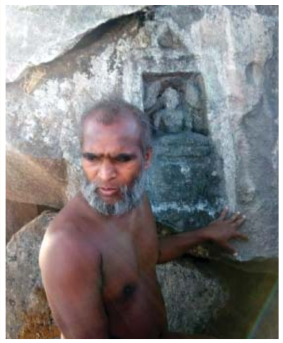
गिरनार यात्रा के दुर्लभ पल


शेषावन में शिला पर आचार्यश्री ब्राह्मीलिपि का अध्ययन कराते हुए


गिरनार में बंडी धर्मशाला के सामने संघस्थ मुनिराजों का केशलोच

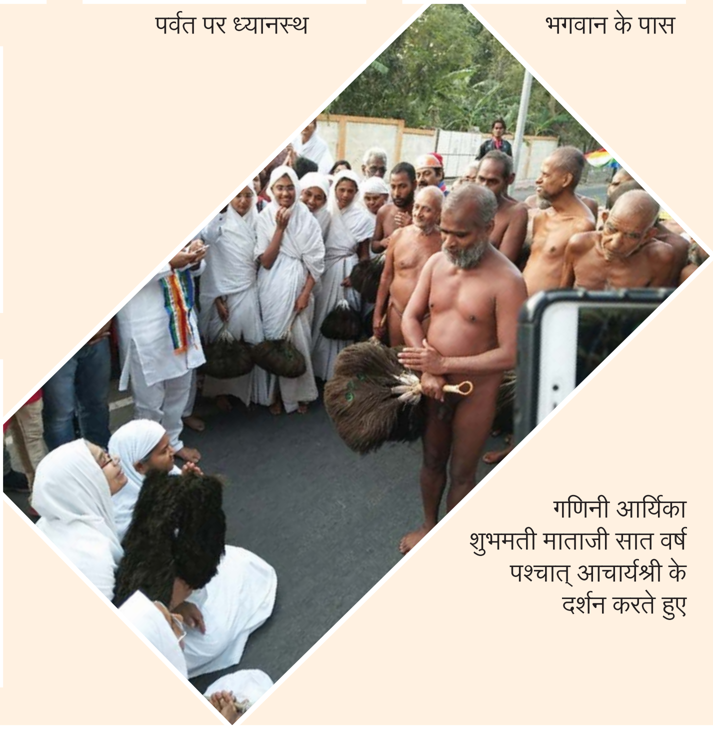

पहली टोंक पर दीक्षा देते हुए


पर्वत पर ध्यानस्थ


भगवान के पास


आचार्यश्री, मुक्तानंद स्वामी व गिरनार पार्षद के साथ चर्चारत


गिरनार पर्वत पर आचार्यश्री श्रावकों के साथ


गणिनी आर्यिका शुभमती माताजी सात वर्ष पश्चात् आचार्यश्री के दर्शन करते हुए

गिरनार एवं शत्रुंजय तीर्थ



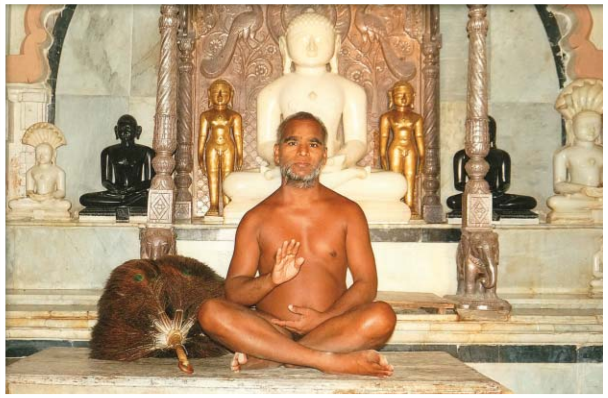
उमिया स्कूल बिछिया में स्कूली छात्रों को उद्बोधन



पुलिस दल के साथ आचार्यश्री ससंघ



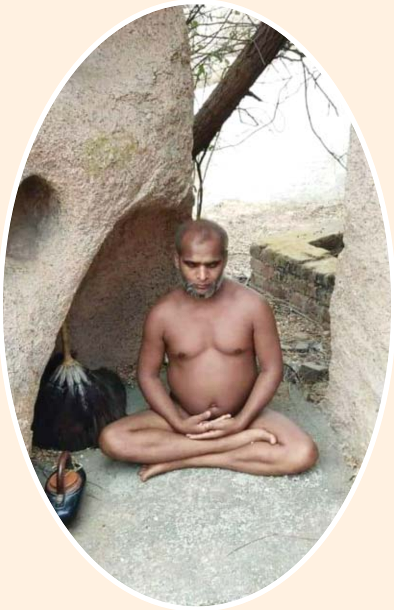
शत्रुंजय पहाड़ पर चढ़ते आचार्यश्री



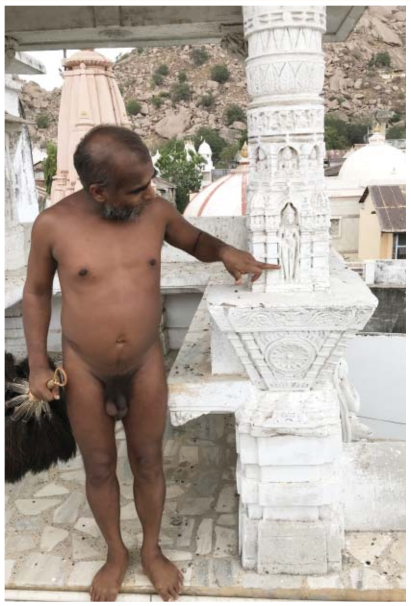
शत्रुंजय मंदिर में आचार्यश्री आशीर्वाद की मुद्रा में



गुजरात विहार कराते भक्त नमन, कमलेश, विजय



ईडर पहाड़ पर खंडहर में ध्यानस्थ



मंदिर के स्तंभ का अवलोकन करते आचार्यश्री

पावागढ़ तीर्थ की वंदना



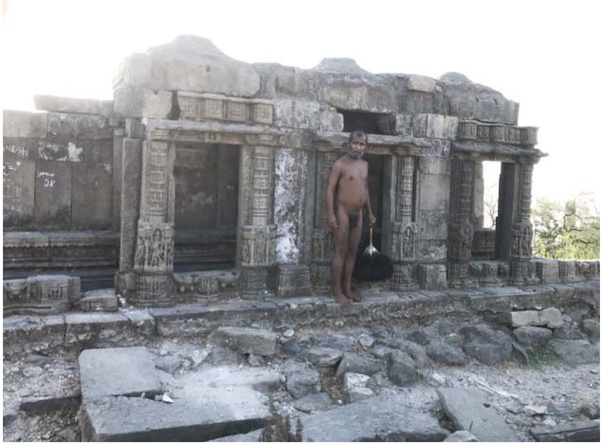
पहाड़ पर वंदना



मंदिर के बाहर



मंदिर परिक्रमा



इतिहास पर दृष्टिपात



संघस्थ साधुओं के संस्मरण सुनते हुए

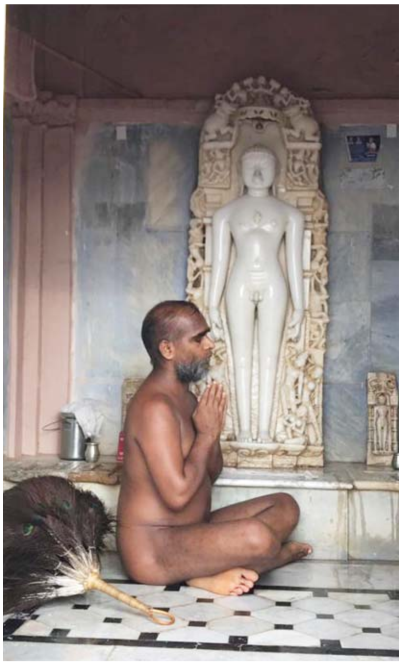


आचार्यश्री पर्वत पर ससंघ

तारंगा-सजोद-अंकलेश्वर यात्रा



तारंगाजी में चरण पादुका के पास आचार्यश्री ध्यानस्थ



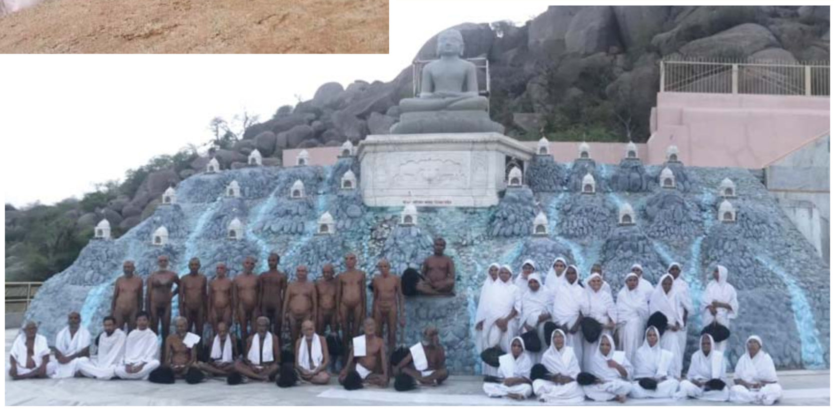
मंदिर में भगवान की वंदना



पहाड़ी पर मंदिर के बाहर आचार्यश्री ससंघ



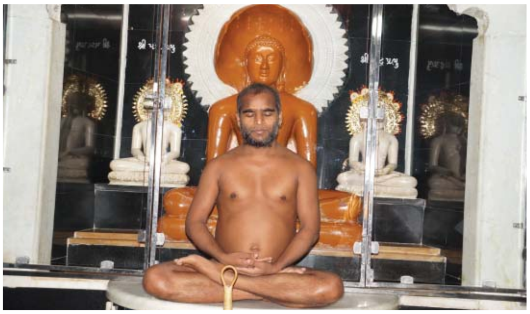
बन्दर को आशीर्वाद देते हुए



तारंगाजी में पहाड़ी पर ससंघ विराजित आचार्यश्री



सजोद में आचार्यश्री

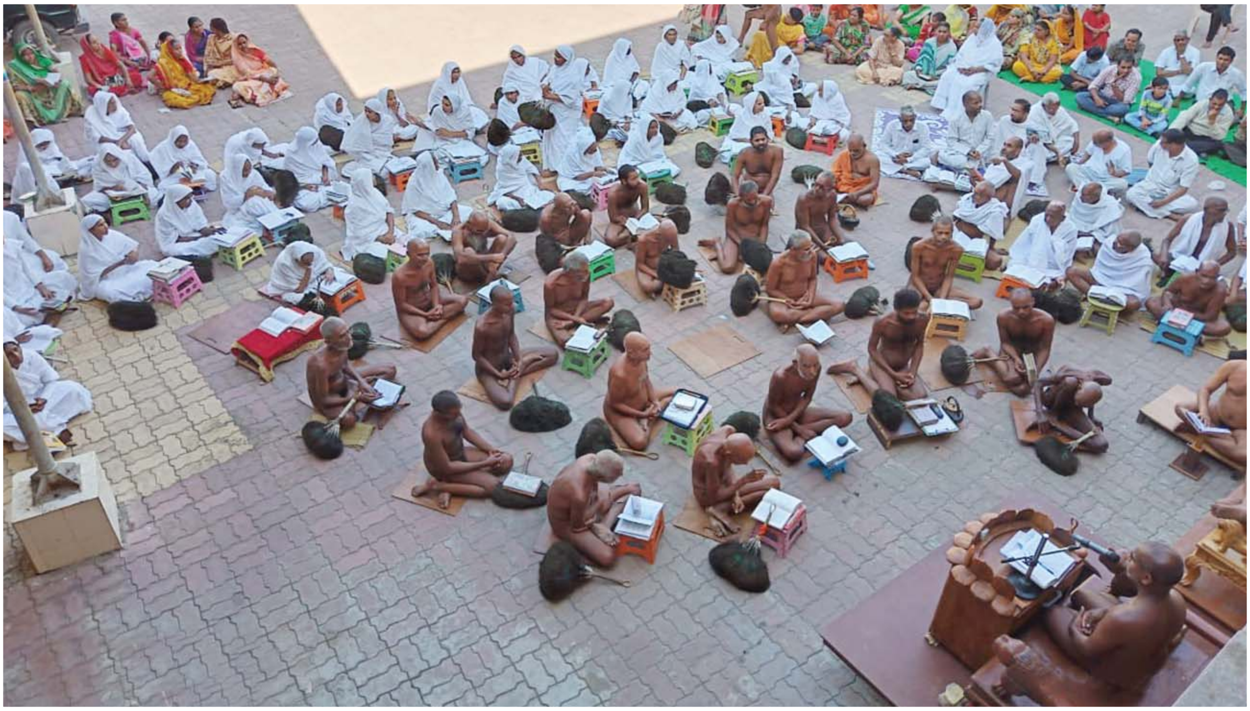


अंकलेश्वर मंदिर में ध्यान मग्न आचार्यश्री जहाँ षटखंडागम महाग्रंथ की रचना हुई



अणिंदा पार्श्वनाथ में आचार्यश्री

गिरनार में युग प्रतिक्रमण



गिरनारजी में आचार्यश्री सुनीलसागरजी चतुर्विध संघ के करीब 100 साधुओं को पंचवर्षीय युग प्रतिक्रमण कराते हुए



युग प्रतिक्रमण में आचार्यश्री सुनीलसागरजी के साथ आचार्यश्री निर्मलसागरजी



कोबा आश्रम में आचार्यश्री



प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्रजी मोदी के घर आचार्यश्री उनकी वयोवृद्धा माताजी को आशीर्वाद दे धर्म चर्चारत। साथ में हैं प्रधानमंत्री के भाई श्री प्रमोद मोदी।

तीर्थ दर्शन



मांगीतुंगी पर्वत पर आचार्यश्री





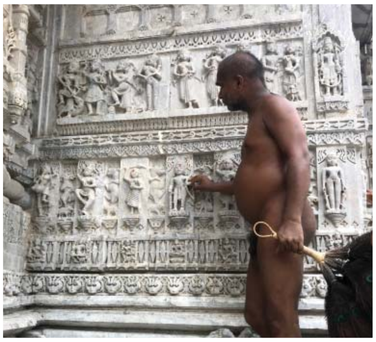
केसरियाजी ऋषभदेव की मूल प्रतिमा और उसका अभिषेक देखते हुए आचार्यश्री



अतिशय क्षेत्र अंदेश्वर पार्श्वनाथ, राजस्थान
(भूगर्भ से प्राप्त प्रतिमा)



पूरे भारत में एकमात्र कसौटी पाषाण पर अंकित ऋषिमंडल व यागमंडल के संयुक्त बीजाक्षर से मंडित यंत्र, आंतरी, जिला डूंगरपुर (राजस्थान)



केसरियाजी (राजस्थान)



योगीन्द्रगिरि, सागवाड़ा (राजस्थान)

आचार्यश्री द्वारा प्रदत्त दीक्षाएँ



प्रतापगढ़ में मुनि दीक्षा प्रदान करते आचार्यश्री (2015)



आचार्यश्री के गृहस्थ जीवन के पिता क्षुल्लकश्री सुखदसागरजी को प्रतापगढ़ में दीक्षा दी गई (2017)



अंकली में दीक्षा प्रदान करते हुए (2013)



प्रतापगढ़ में दीक्षा प्रदान करते हुए (2017)

आचार्यों का मिलन



मुंगाणा में आचार्यश्री पुष्पदंतसागरजी से मिलन



सागवाड़ा में आचार्यश्री कनकनंदीजी से मिलन



आचार्यश्री उदारसागरजी और डीआईजी अनिल जैन के साथ



आचार्यश्री वैराग्यनंदीजी के साथ बांसवाड़ा (राज.) में

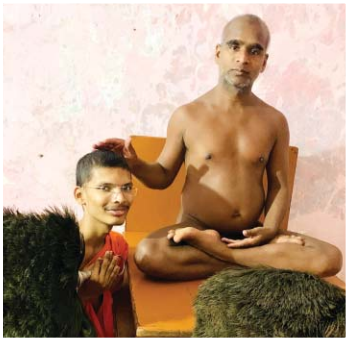


आचार्यश्री विभवसागरजी के साथ गिरनार में



अन्तर्मना मुनिश्री प्रसन्नसागरजी (आचार्य पुष्पदंतसागरजी के शिष्य) के साथ मिलन

आचार्यश्री का सान्निध्य



श्री जिनसेन स्वामीजी नांदिनी (महा.)



आचार्यश्री कृति भेंट करते हुए भट्टारकजी चारुकीर्ति स्वामी मूड़बिद्री



धर्माधिकारी पद्मविभूषण
डॉ. वीरेन्द्र हेगड़े
आचार्यश्री के परम भक्त



चारुकीर्तिजी स्वामी श्रवणबेलगोल, श्री देवेन्द्रकीर्तिजी स्वामी हुमचा,
श्री अकलंक स्वामीजी सौंदा स्वाति जैन मठ



बांसवाड़ा जेल में आचार्यश्री का पाद प्रक्षालन किया गया



आचार्यश्री सुनीलसागरजी से 'महाविज्ञ' के संबंध में चर्चा करती लेखिका सरोज शाह

आचार्यश्री का वात्सल्य





विहार में वृद्ध और अस्वस्थ साधुओं को आचार्यश्री सुनीलसागरजी का सहारा



संघ के साधु को समाधि कराते हुए आचार्यश्री



गुरु-शिष्य का विचार-विमर्श



आचार्यश्री भगवान को मुनि अवस्था में आहार कराने ले जाते हुए

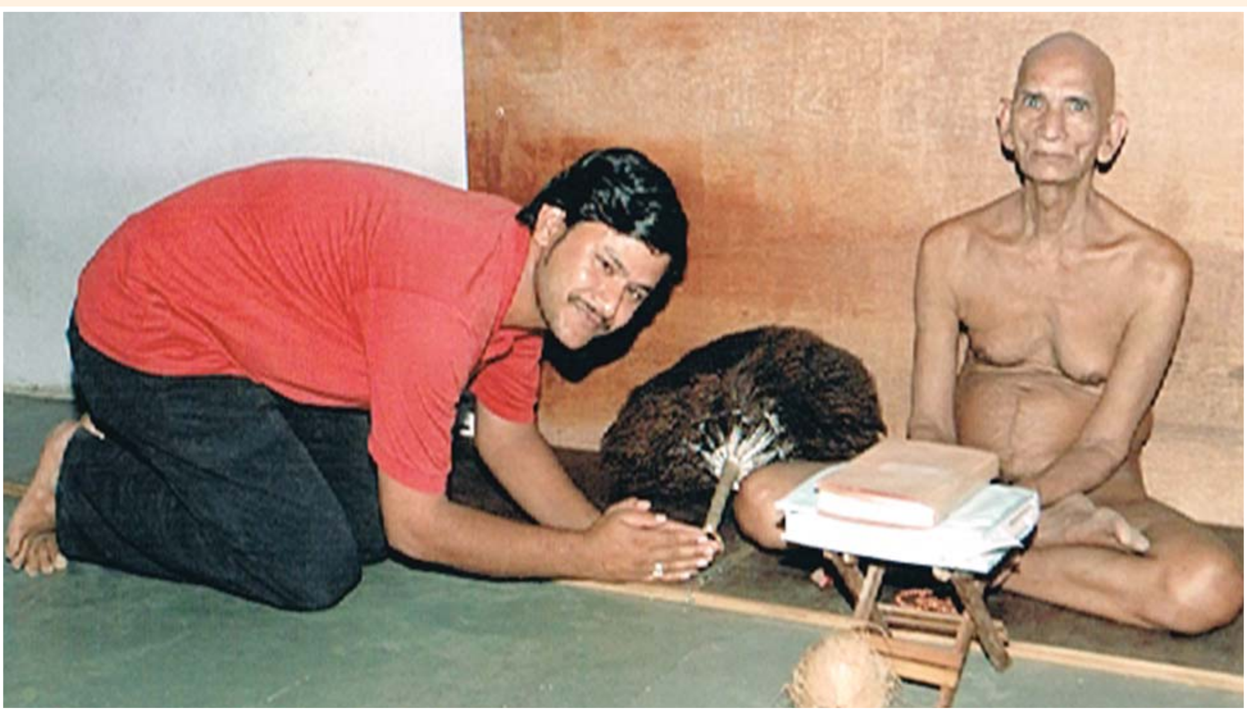


समवशरण में प्रवचन देते आचार्यश्री सुनीलसागरजी महाराज

संघ के परम भक्त



ब्र . मैना बाईजी : आचार्य गुरु सन्मतिसागरजी व शिष्य आचार्य श्री सुनीलसागरजी दोनों के संघ की परम भक्त



श्री नवराजजी शर्मा : गुरु और शिष्य दोनों के विश्वासपात्र परम भक्त सेवक

संघ सारथी



श्री अरविंद सुमेरमल, मदनलाल चूड़ीवाल
(कलकत्ता)



श्री कीर्तिवीर, विश्वसेन, भरत ज्ञानचंदजी मिंडा
प्रतापगढ़ (मुंबई)



श्री कमल शांतिलालजी कासलीवाल
(मुंबई)



श्री महेन्द्र बंडी (मुंबई)



श्री कल्याणमलजी तलवाड़िया



श्री जयंतीलाल रजावत (उदयपुर)



श्री यशवंत पचौरी (मुंगाणा)



श्री पारस भरत नाथूलालजी नावड़िया (मुंबई)

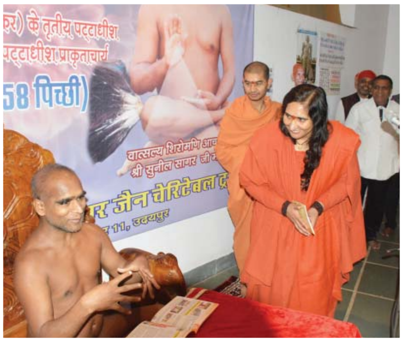


श्री अरविन्द गाँधी (मुंबई)



श्री कमल अजित कुमार, रिखबचंद कासलीवाल परिवार, इचलकरंजी, सेलम

धर्मगुरुओं के साथ


आचार्यश्री से धर्मचर्चा रत साध्वी ऋतुंभरा


श्वेतांबर संतों से धर्म चर्चा


बोहरा समाज को आशीर्वाद


साबरमती आश्रम में आचार्यश्री


महेश आश्रम के साधक

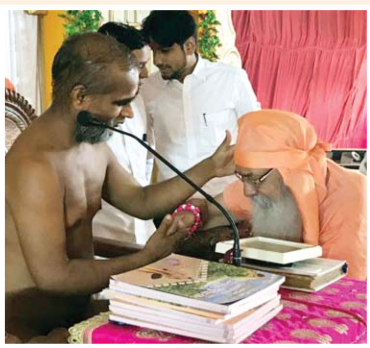

आचार्यश्री के साथ उत्तमस्वामीजी


ब्रह्माकुमारी ॐ शांति


श्वेताम्बर साध्वीजी


रमनदीप सिक्ख


सिख संत

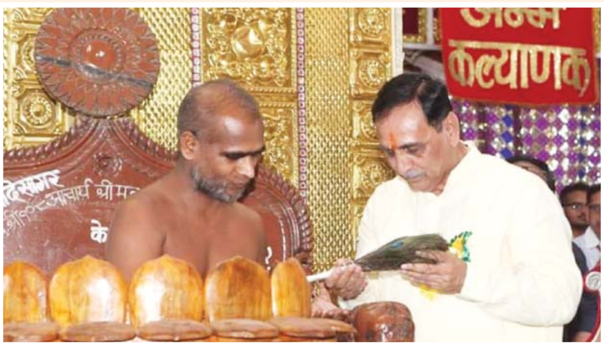

स्वामी ललितानंदजी


स्वामीनारायण मंदिर के श्री राम स्वामी के साथ

गणमान्य दर्शनार्थ पधारे


गृहमंत्री श्री अमितजी शाह आचार्यश्री की पुस्तक का विमोचन करते हुए


गुजरात के महामहिम राज्यपाल श्री ओ.पी. कोहली श्रीफल अर्पित करते हुए



आचार्यश्री गुजरात के मुख्यमंत्री श्री विजय रूपाणी को पिच्छी देते हुए


आचार्यश्री के मंगल प्रवेश पर अगवानी करते
सागवाड़ा सांसद श्री कनकमल कटारा


गुजरात के उपमुख्यमंत्री श्री नितिनभाई पटेल आचार्यश्री के दर्शन करते हुए


कुंजवन में आशीर्वाद लेते सांसद राजू शेट्टी और सुशील पाटिल


गुजरात के शिक्षामंत्री श्री भूपेन्द्र सिंह चूड़ासमा एवं गाँधीनगर के मेयर
प्रवीण पटेल अक्सर आचार्यश्री के दर्शनार्थ पधारते हैं


विधायक श्री हितु कनोड़िया एवं सुपर स्टार नरेश कनोड़िया गुजरात

गणमान्य दर्शनार्थ पधारे



राजस्थान के पूर्व गृहमंत्री श्री गुलाबचंदजी कटारिया



कुँवरजी बाबलिया मंत्री गुजरात सरकार



प्रधानमंत्री के भाई श्री प्रहलाद मोदी



राजस्थान हाईकोर्ट के जस्टिस श्री रामचंद्र झाला



उदयपुर के मेयर श्री चंद्रसिंह कोठारी



मुंबई हाईकोर्ट के जस्टिस श्री कैलाशचंद्र जी चांदीवाल



राजपूत नेता डी.डी. राणावत और नगर सभापति कमलेश दोशी



महाराष्ट के मंत्री श्री जयंत पाटिल आचार्यश्री से आशीर्वाद लेते हुए

गणमान्य दर्शनार्थ पधारे



एस.पी. श्री कालूरामजी रावत (राजस्थान)



गुजरात के आईपीएस अधिकारी



अभिनेत्री आरती नागपाल



अभिनेता मनोज जोशी



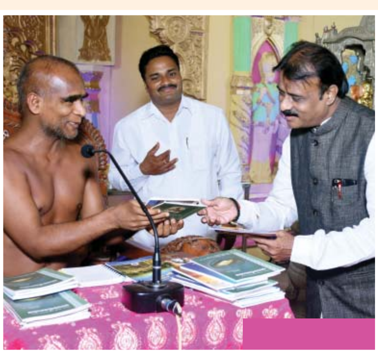
इंदौर के दिगंबर जैन समाज के प्रमुख समाजसेवी
श्री प्रदीपकुमारसिंह कासलीवाल, श्री हसमुखजी गाँधी



अश्विन बारोट (यूके)



बीबीसी लंदन की टीम आचार्यश्री पर डॉक्यूमेंट्री फिल्म बनाने के लिए आई



अहमदाबाद के पूर्व मेयर गौतमभाई शाह



गाँधीनगर की मेयर रीता पटेल



मंत्री श्री सुरेश पाटिल आचार्यश्री से आशीर्वाद लेते हुए

पशु-पक्षियों पर वात्सल्य













अंकलीधाम



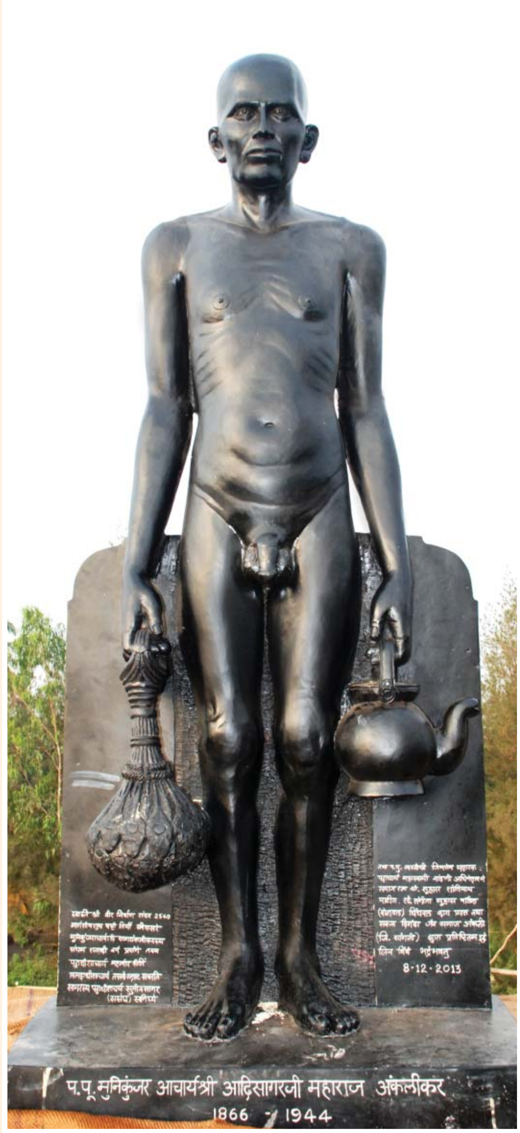
प्रथम पट्टाचार्य आचार्यश्री आदिसागरजी अंकलीकर की जन्मभूमि अंकलीधाम



श्री 1008 आदिनाथ दिगंबर जिन मंदिर अंकलीधाम



अंकलीकर तीर्थ अंकली



आचार्यश्री आदिसागरजी की खड़गासन प्रतिमा



अंकली के जिनालय में विराजित प्रतिमा के साथ गणमान्य टस्टी

स्वदेशी के हिमायती





राष्ट्रसंत अलंकरण



आचार्यश्री सुनीलसागरजी महाराज को राष्ट्रसंत अलंकरण से अलंकृत करते हुए
राजस्थान के माननीय मुख्यमंत्री श्री अशोकजी गेहलोत एवं अठारह हजार
हूमड़ समाज के अध्यक्ष दिनेशजी खोडनिया, सागवाड़ा (राज.)

हूमड़पुरम सागवाड़ा, जिला डूंगरपुर (राज.) में

बालिका छात्रावास का शिलान्यास



सागवाड़ा के हूमड़पुरम में बालिका छात्रावास का शिलान्यास करते आचार्यश्री सुनीलसागरजी महाराज, राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री अशोक गेहलोत, विधानसभा अध्यक्ष डॉ. सी.पी. जोशी, शिक्षामंत्री व अन्य जनप्रतिनिधि एवं समाजजन



राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री अशोक गेहलोत को रक्षा सूत्र बाँधा गया



आचार्यश्री सुनीलसागरजी महाराज के सान्निध्य में राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री अशोक गेहलोत को समाज द्वारा 'अहिंसा गौरव' की उपाधि से सम्मानित करते हुए दिनेशजी खोड़निया



सर्वधर्म सम्मेलन के लिए जाते आचार्यश्री सुनीलसागरजी साथ में हैं श्री अच्युतानंदजी, योगी प्रकाशनाथजी एवं अन्य



आचार्यश्री के दर्शनार्थ पधारे रामद्वारा के संत

आचार्यश्री सुनीलसगागरजी महाराज की जीवनगाथा कृति

'महाविज्ञ' का विमोचन





आचार्यश्री सुनीलसागरजी के 43वें अवतरण दिवस पर 6 अक्टूबर 2019 को हूमड़पुरम सागवाड़ा में आचार्यश्री की जीवन गाथा कृति 'महाविज्ञ' का विमोचन राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री अशोक गेहलोत विधानसभा अध्यक्ष डॉ. सी.पी. जोशी, शिक्षामंत्री व अन्य जनप्रतिनिधिगण ने किया। साथ में कृति की लेखिका सरोज शाह (इंदौर) भी मौजूद हैं



मुख्यमंत्री श्री अशोक गेहलोत के साथ कृति 'महाविज्ञ' की लेखिका सरोज शाह



विमोचन के पश्चात पुस्तक 'महाविज्ञ' का अवलोकन करते राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री गेहलोत एवं अन्य अतिथिगण







विमोचन के अवसर पर उमड़ा जनसैलाब

पुण्यार्जक





WAGAD

वोरा अशोक सोमेश्वरी जैन

वागड़ इंफ्राप्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड

बाँसवाड़ा (राजस्थान)

Email : admin@wagadinfra.com


आचार्यश्री सुनीलसागरजी ससंघ
मुनिश्री धर्मभूषणसागरजी
मुनिश्री आर्जवनंदीसागरजी
मुनिश्री सुकुमालसागरजी
मुनिश्री सुखसागरजी
मुनिश्री शुभमसागरजी
मुनिश्री सहस्त्रसारसागरजी
मुनिश्री सिद्धात्मसागरजी
मुनिश्री सिद्धार्थसागरजी
मुनिश्री सम्बुद्धसागरजी
मुनिश्री श्रुतेशसागरजी
मुनिश्री सुश्रुतसागरजी
मुनिश्री श्रुतांशसागरजी
मुनिश्री सुबुद्धसागरजी
मुनिश्री समृद्धसागरजी
मुनिश्री सक्षमसागरजी
मुनिश्री सर्वार्थसागरजी
मुनिश्री सुधीन्द्रसागरजी
मुनिश्री सुधीरसागरजी
मुनिश्री सुमंत्रसागरजी
मुनिश्री सुयत्नसागरजी
मुनिश्री समर्थसागरजी
मुनिश्री सुध्यानसागरजी
मुनिश्री सुज्ञेयसागरजी
मुनिश्री सुध्येयसागरजी
आर्यिका सूत्रमति माताजी
आर्यिका सुकालमति माताजी
आर्यिका श्रुतमति माताजी
आर्यिका सुधर्ममति माताजी
आर्यिका आद्यमति माताजी
आर्यिका आर्षमति माताजी
आर्यिका आराध्यमति माताजी
आर्यिका आकाशमति माताजी
आर्यिका अद्वैतमति माताजी
आर्यिका सुवृद्धमति माताजी
आर्यिका सुरस्मति माताजी
आर्यिका सुविज्ञमति माताजी
आर्यिका सुप्रज्ञमति माताजी
आर्यिका अनघमति माताजी
आर्यिका अनर्घ्यमती माताजी
आर्यिका शुद्धमति माताजी
ऐलकश्री सुतत्वसागरजी
क्षुल्लकश्री विजयंतसागरजी
क्षुल्लकश्री जयंतसागरजी
क्षुल्लकश्री सुस्थिरसागरजी
क्षुल्लकश्री सुमित्रसागरजी
क्षुल्लकश्री सुद्धवसागरजी
क्षुल्लकश्री सुखसागरजी
क्षुल्लकश्री भट्टारक जिनसेन स्वामी
क्षुल्लकश्री सत्वसागरजी
क्षुल्लकश्री समत्वसागरजी
क्षुल्लकश्री सम्पूज्यसागरजी
क्षुल्लकश्री संप्रज्ञसागरजी
क्षुल्लकश्री सम्विज्ञसागरजी
क्षुल्लिका संदेशमति माताजी
क्षुल्लिका अमोहमति माताजी
क्षुल्लिका अभेयमति माताजी
क्षुल्लिका अटलमति माताजी
क्षुल्लिका अजेयमति माताजी
क्षुल्लिका शुद्धात्ममति माताजी
क्षुल्लिका सज्ज्ञानमति माताजी
क्षुल्लिका सुनेमिमति माताजी



णमोकार मंत्र
𑀡𑀫𑁄𑀓𑀸𑀭 𑀫𑀁𑀢𑁆𑀭

The Ṇamokāra Mantra

णमो अरिहंताणं ।
𑀡𑀫𑁄 𑀅𑀭𑀺𑀳𑀁𑀢𑀸𑀡𑀁 𑁇
Ṇamo Arihaṃtāṇaṁ

णमो सिद्धाणं ।
𑀡𑀫𑁄 𑀲𑀺𑀤𑁆𑀥𑀸𑀡𑀁 𑁇
Ṇamo Siddhāṇaṁ

णमो आइरियाणं ।
𑀡𑀫𑁄 𑀆𑀇𑀭𑀺𑀬𑀸𑀡𑀁 𑁇
Ṇamo Ayariyāṇaṁ

णमो उवज्झायाणं ।
𑀡𑀫𑁄 𑀉𑀯𑀚𑁆𑀛𑀸𑀬𑀸𑀡𑀁 𑁇
Ṇamo Uvajjhāyāṇaṁ

णमो लोए सव्वसाहूणं ।
𑀡𑀫𑁄 𑀮𑁄𑀏 𑀲𑀯𑁆𑀯𑀲𑀸𑀳𑀽𑀡𑀁 𑁇
Ṇamo Loe savva sāhūṇaṁ

एसो पंच णमोयारो सव्वपावप्पणासणो
𑀏𑀲𑁄 𑀧𑀁𑀘 𑀡𑀫𑁄𑀬𑀸𑀭𑁄 𑀲𑀯𑁆𑀯𑀧𑀸𑀯𑀧𑁆𑀧𑀡𑀸𑀲𑀡𑁄
Ēso paṃca ṇamokkāro Savvapāvappanāsaṇo

मंगलाणं चं सव्वेसिं पढमं होइ मंगलं
𑀫𑀁𑀕𑀮𑀸𑀡𑀁 𑀘 𑀲𑀯𑁆𑀯𑁂𑀲𑀺𑀁 𑀧𑀠𑀫𑀁 𑀳𑁄𑀇 𑀫𑀁𑀕𑀮𑀁
Mangalāṇaṃ ca savvesiṃ padhamaṃ hoi maṃgalaṃ